कुछ पुरानी चिट्ठियां

जवाहरलाल नेहरू

कृपया यह ग्रन्थ नीचे निर्देशित तिथि के पूर्व अथवा उक्त तिथि तक वापस कर दें। विलम्ब से लौटाने पर प्रतिदिन दस पैसे विलम्ब शुल्क देना होगा।

6.1.82		

कुछ

पुरानी चिट्ठियां

जवाहरलाल नेहरू के संग्रह के महत्वपूर्ण पत्र

अधिकतर उनको मिले, कुछ उनके लिखे

१९७४

सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन

प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय
मंत्री, सस्ता साहित्य मण्डल
नई दिल्ली

पुनर्मुद्रण : १९७४
मूल्य
पन्द्रह रुपये 20
संशोधित मूल्य

मुद्रक
नेशनल प्रिंटिंग वर्क्स,
दिल्ली

प्रकाशकीय

संसार की सभी विकसित भाषाओं में पत्र-साहित्य को बड़ा महत्त्व दिया जाता है और उसके भंडार में वृद्धि करने के लिए बराबर गंभीर प्रयत्न होते रहते हैं। अनेक भाषाओं में ऐसे पत्र-संग्रह निकले हैं और निकल रहे हैं, जो पाठकों का मनोरंजन तो करते ही हैं, उनको प्रेरणा भी देते हैं।

सच बात यह है कि पत्रों की अपनी विशेषता होती है। वे दिल खोल-कर लिखे जाते हैं। उनमें लिखनेवाले का हृदय और व्यक्तित्व बड़ी सचाई के साथ बोलते हैं। बनावट अथवा सजावट की उनमें गुंजाइश नहीं होती। यही कारण है कि पाठकों के मन पर उनका सीधा और गहरा असर पड़ता है। पत्र-साहित्य की लोकप्रियता भी इसी वजह से है।

प्रस्तुत पुस्तक पत्र-साहित्य की एक अनमोल देन है। इसमें ३६८ चुने हुए पत्र हैं, जिनमें भारत के ही नहीं, अन्य अनेक देशों के बहुत-से व्यक्तित्वों की झांकी मिलती है। संसार की इतनी विभूतियों के पत्र एक जगह कम ही पाये जाते हैं। उससे भी बड़ी बात यह है कि सारे पत्र-लेखक किसी एक क्षेत्र के नहीं हैं,अलग-अलग क्षेत्रों के हैं। राष्ट्र-निर्माता, राजनेता, लेखक, कलाकार, समाज-सेवक आदि-आदि इस पुस्तक के पृष्ठों में समाये हुए हैं।

संग्रह के अधिकांश पत्र उन व्यक्तियों के लिखे हुए हैं, जो हमारी आजादी की लड़ाई के प्रमुख अंग थे अथवा जिनकी उस लड़ाई में विशेष दिलचस्पी थी। अंतिम छः पत्रों को छोड़कर शेष सब चिट्ठियां भारत के स्वतंत्र होने के पहले की तीन दशाब्दियों के बीच की लिखी हुई हैं। जैसा कि नेहरूजी ने अपनी भूमिका में लिखा है, इन पत्रों से वे बहुत-सी यादें ताजी हो जाती हैं, जो करीब-करीब भूलीं जा चुकी थीं। यादें ही क्यों, उस युग की आत्मा भी सामने आ जाती है, जबकि भारत आजादी के लिए अपनी पूरी ताकत से जूझ रहा था और अपने भविष्य का निर्माण कर रहा था। बड़े-बड़े नेता, बड़े-बड़े देशभक्त और बड़े-बड़े दिमागोंवाले लोग राष्ट्रीय आंदोलनों के उद्देश्यों, तरीकों और उन्हें अधिक-से-अधिक प्रभावशाली

बनाने के ढंगों पर चर्चा करते थे। सबका ध्येय एक था, पर उस ध्येय की प्राप्ति के मार्गों के संबंध में बहुतों में मतभेद था। उस मतभेद को व्यक्त करने की पूरी छूट थी। इस संग्रह के अनेक पत्रों में पाठक देखेंगे कि उस मतभेद को बड़ी सचाई के साथ प्रकट किया गया है। त्रिपुरी-कांग्रेस के पहले और बाद के महात्मा गांधी, नेहरूजी, सुभाषचंद्र बोस तथा शरत् बोस के पत्र इस बात की पुष्टि करते हैं।

आजादी से संबंधित बीसियों बातें हैं, जिनपर इस पुस्तक के पत्रों से प्रकाश पड़ता है। सन् १९३५ के गवर्नमेंट ऑव इंडिया एक्ट को लेकर लॉर्ड लोथियन और नेहरूजी के बीच जो पत्र-व्यवहार हुआ था, वह भी इसमें शामिल किया गया है।

इसी प्रकार के और भी बहुत-से प्रसंगों की बड़ी प्रामाणिक जानकारी इन चिट्ठियों से पाठकों को मिल जाती है।

इस संग्रह की ज्यादातर चिट्ठियां नेहरूजी को लिखी गई हैं। कहीं-कहीं संदर्भों को स्पष्ट करने के लिए उन्होंने कुछ अपने तथा कुछ दूसरे पत्र भी इसमें जोड़ दिये हैं।

इसमें कोई शक नहीं कि इन पत्रों का ऐतिहासिक महत्त्व है; लेकिन उनकी सबसे बड़ी विशेषता उस आत्मीयता में है, जो उन पत्रों में छलछलाती दिखाई देती है। पिता के वात्सल्य, बापू की भावना, साथियों के उद्गार, विदेशी मित्रों के प्रेम तथा नेहरूजी से मतभेद रखनेवाले व्यक्तियों की भी उनके प्रति हार्दिकता, इन सबने इस संग्रह को एक अमर कृति बना दिया है। महात्मा गांधी, पंडित मोतीलाल नेहरू, सरोजिनी नायडू, रवीन्द्रनाथ टैगोर प्रभृति के पत्र बार-बार पढ़े जायंगे, ऐसा हमारा विश्वास है।

लाला लाजपतराय, मोहम्मदअली जिन्ना, डा. अन्सारी, रोम्यां रोलां, ऐनी बेसेंट, सी. एफ. एन्ड्रूज, ब्रेल्सफोर्ड, डा. राजेन्द्रप्रसाद, आचार्य कृपालानी, एडवर्ड टामसन, सरदार पटेल, गोविन्दवल्लभ पंत, जनरलसिमो तथा मैडम च्यांगकाई शेक, मैडम सनयात सेन, जयप्रकाशनारायण, मौलाना अबुल कलाम आजाद, माउत्से तुंग, सर स्टैफर्ड क्रिप्स, जार्ज बर्नार्ड शा, सर तेज-बहादुर सप्रू आदि-आदि के पत्रों को भी पाठक इस संग्रह में पढ़ेंगे।

मूल पुस्तक अंग्रेजी में 'ए बंच ऑव ओल्ड लैटर्स' के नाम से प्रकाशित हुई

है। उसके दूसरे संस्करण में नेहरूजी ने एक पत्र गांधीजी का और एक अपना और जोड़ दिया था तथा कुछ टिप्पणियां भी। वे सब इस पुस्तक में शामिल कर दी गई हैं।

गांधीजी के कई पत्र[1] हिन्दी में लिखे गये थे, उन्हें मूल रूप में दिया गया है। शेष भारतीय लेखकों के पत्रों के अनुवाद में इस बात का ध्यान रक्खा गया है कि उनकी भाषा लेखक की भाषा से मिलती-जुलती रहे। अनुवाद के कठिन कार्य में हमें जिन बंधुओं का सहयोग मिला है, उनके हम आभारी हैं।

हमें विश्वास है कि हिन्दी-जगत् में इस पुस्तक का सर्वत्र आदर होगा और सभी वर्गों के पाठक इसे चाव से पढ़ेंगे।

—मंत्री

---

१. पत्र-संख्या ३३३, ३३८, ३४०, ३५८ तथा ३६१

भूमिका

इस किताब में कई तरह की मिली-जुली चिट्ठियां इकट्ठी की गई हैं। सारे पत्रों को एक जगह जुटाना और फिर प्रकाशन के लिए छांटना, आसान काम न था। यह किस हद तक ठीक बन पड़ा है, इसका फैसला करना मेरे लिए मुश्किल है। करीब-करीब सभी चिट्ठियां उस जमाने की हैं, जो अब बहुत दूर चला गया है और जिसे गजरे एक लम्बा अरसा हो गया है। बहुत थोड़ी को छोड़कर ये सभी चिट्ठियां हिन्दुस्तान की आजादी के पहले की लिखी हुई हैं और इनमें खास तौर पर हमारी मुल्की समस्याओं और उन्होंने हमपर किस तरह असर डाला, इसका जिक्र है । इनको पढ़ने पर पुरानी वहस-तलब बातें उभर आती हैं और करीब-करीब पूरी तरह से भूली हुई यादें दिमाग में आ जाती हैं। इनमें से ज्यादातर चिट्ठियां आजादी की हमारी लड़ाई और बीच के वक्फे के दरम्यान सन् १९२०, ३० और शुरू ४० के सालों में लिखी गई थीं, जब मैं जेल में नहीं था।

उस समय मेरे पास इतनी फुरसत या मौका न था कि मैं अपनी चिट्ठियों और कागजातों को तरतीब से रख पाता और उनका यूंही ढेर लगा दिया गया। बीच-बीच में पुलिस हम लोगों पर छापा मारती थी और जो काग़ज़ात उसके हाथ पड़ जाते थे, उन्हें अपने कब्जे में कर लेती थी। जेल में लम्बा अरसा बिताने के बाद लौटने पर मैं अक्सर देखता कि दीमकों और दूसरे कीड़ों ने मेरे बहुत-से कागजों की दावत उड़ा ली है। इसके बावजूद बहुत-से काग़ज़ात बच ही गये। सालों बाद मेरे दोस्तों ने इनको कुछ तरतीब देने में मदद की और हाल ही में जब मैं हिमालय की कुल्लू घाटी में कुछ दिन छुट्टी मनाने गया तो मैंने उस ढेर में से एक संग्रह तैयार कर डाला।

शुरू में मेरा मंशा यह था कि सिर्फ वे ही चिट्ठियां प्रकाशित हों, जो महात्मा गांधी ने मुझे लिखी थीं। आहिस्ता-आहिस्ता दूसरी और चिट्ठियां जुड़ती गई और कुछ मेरे लिखे पत्र भी देने पड़े, क्योंकि बिना उनके बहुत-से

संदर्भों को समझना मुश्किल हो जाता। इस किताब में चिट्ठियों को तारीख-वार रक्खा गया है, हालांकि बीच-बीच में, घटनाओं की सफाई के खयाल से, इस सिलसिले को बदल भी दिया गया है। कुछ फुटनोट और टिप्पणियां मैंने दे दी हैं, लेकिन मुझे डर है कि जो लोग उस जमाने में हिन्दुस्तान में घटी घटनाओं के सिलसिले को नहीं जानते, वे इन चिट्ठियों के बहुत-से संदर्भों को नहीं समझ पायेंगे।

इनमें से कुछ चिट्ठियां उन दोस्तों और साथियों की हैं, जो खुशकिस्मती से आज भी हमारे बीच मौजूद हैं। उन्होंने मेहरबानी करके उनके प्रकाशन की इजाजत दे दी है। लेकिन बहुत थोड़ी-सी चिट्ठियों के लिए छपने से पहले इजाजत लेना मुमकिन न हो सका। मुझे उम्मीद है कि इनके लिखने-वाले उस आजादी के लिए मुझे माफ करेंगे, जो मैं ले रहा हूं।

मैं अपने उन बहुत-से साथियों का आभार मानना चाहूंगा, जिन्होंने इस किताब के प्रकाशन के दौरान में कई मौकों पर मेरी मदद की। इस मदद के बिना मेरे लिए इस काम को उठाना या इसे पूरा करना मुमकिन न होता।

नई दिल्ली.

जवाहरलाल नेहरू

विषय-सूची

कुछ
पुरानी चिट्ठियां

जवाहरलाल नेहरू

१. सरोजिनी नायडू की ओर से

[यह पत्र मेरी बेटी इंदिरा (अब इंदिरा गांधी) के जन्म पर लिखा गया था।]

मद्रास,
१७ दिसम्बर १९१७

प्रिय जवाहर,

तुम्हारी खुशखबरी सुनने के बाद से मुझे पलभर भी समय नहीं मिला कि बैठकर तुम्हें और कमला को बधाई या अपनी नई भतीजी को आशीर्वाद भेजती। आज भी मैं हमेशा की तरह कामकाजभरे दिन में से आधा सेकिंड निकालकर ये दोनों काम करने बैठी हूं। मद्रास पागल हो उठा है—एकदम पागल!—और मुझे भी पागल कर देने पर उतारू है!

अगर तुम कलकत्ता आओ तो मैं ७ हंगरफोर्ड स्ट्रीट पर मिलूंगी, इसलिए मिलना न भूलना। मैं तुम्हें 'भारत की आत्मा' की एक प्रति भेज रही हूं, जो मांटेग्यू द्वारा की गई बमबारी का मेरा जवाब है।

सबको स्नेह और भारत की नई आत्मा को प्यार।

सस्नेह तुम्हारी,
सरोजिनी नायडू

२. बी. जी. हार्नीमन की ओर से

दि बांबे क्रॉनिकल,
(संपादकीय विभाग)
१ जुलाई १९१७

प्रिय जवाहरलाल,

आपके २९ तारीख के पत्र के लिए धन्यवाद। गांधीजी यहां से कुछ गलत-सा ही खयाल लेकर गये हैं। हम अपनी विरोध-सभा अगले शनिवार को कर रहे हैं। वह न की जाय, ऐसा तो हमने कभी इरादा ही नहीं किया; परन्तु गांधीजी का सुझाव यह था कि सभा की तारीख ऐसी हो कि उसके

तुरन्त बाद निष्क्रिय प्रतिरोध किया जा सके। हमने—यानी, इस बातचीत के समय जो लोग हाजिर थे, उनमें से बहुतों ने—यह मंजूर कर लिया। लेकिन गांधीजी ने हमसे कहा कि हमारे कुछ करने के पहले वह मालवीयजी से मिल लें, और तबतक हम रुके रहें। फिर उन्होंने इलाहाबाद से तार दिया कि मालवीयजी अभी शिमला से लौटे नहीं हैं। इसलिए हम अपनी योजना के अनुसार काम करने लगे। परन्तु मैं निष्क्रिय प्रतिरोध तो पूरे दिल से चाहता हूं। यह जरूरी है कि कुछ व्यावहारिक कदम उठाया जाय। हम निष्क्रिय प्रतिरोध का एक घोषणा-पत्र हस्ताक्षर के लिए लोगों के पास भेज रहे हैं, इसपर सबसे पहले दस्तखत मैंने ही किये हैं। हां, आप तो जानते हैं कि बुजुर्ग कांग्रेसियों के साथ हमारी कुछ मुश्किलें भी हैं, परन्तु हमने उन्हें काफी झकझोर दिया है और हम उन्हें खींचकर इतना आगे ले आये हैं कि जिसकी हमने कभी उम्मीद भी नहीं की थी।

मद्रास की यात्रा बड़ी कामयाब रही। जैसाकि आप जानते हैं, हमने कुछ ही दिन से 'न्यू इंडिया' फिर से चालू कर दिया। वह एक बहुत बड़ी जीत और दुश्मनों को एक करारी चोट थी। श्रीमती बेसेंट ने तो उसको फिर से जारी कर सकने की आशा ही छोड़ दी थी। मद्रास की सभा भी काफी अच्छी रही।

जे. डी. आर. के बारे में, मुझे खेद के साथ कहना पड़ रहा है कि यहां के मित्र अथवा उनमें से अधिकांश आपके द्वारा उठाये गए कदम के पक्ष में नहीं हैं; हालांकि स्वयं मैं तो अब भी समझता हूं कि वह अच्छा और सही, दोनों था। जिन्ना, जिन्हें शुरू-शुरू में रंगरूटों की भर्ती के आंदोलन का समर्थन करने के लिए बड़ी मुश्किल से राजी किया जा सका था, अब विरोध के रूप में इस बात पर अड़ गये हैं कि उसे छोड़ा न जाय, और मैं अकेला-सा पड़ गया दिखाई देता हूं।

आज सुना है कि मालवीयजी ने जिन्ना को तार द्वारा सुझाया है कि आगामी ८ तारीख को ऑल इंडिया कांग्रेस कमेटी और मुस्लिम लीग कौन्सिल की एक संयुक्त कान्फ्रेंस कर ली जाय। मैं समझता हूं कि अगर इन पुराने-पुराने नेताओं में कुछ जोश फूंका जा सके तो यह एक अच्छी बात होगी। अगर ऐसा हो जाय तो मैं आशा करता हूं कि इलाहाबाद से आप

सब आयेंगे। मैं मालवीयजी से मिलने और उनसे दिल खोलकर बात करने के लिए इतना उत्सुक था कि अगर वह यहां न आ रहे होते तो इसी काम के लिए मैं खुद इलाहाबाद आता। जहांतक श्री सुरेंद्रनाथ का सम्बन्ध है, अगर वह मेरे हाथ पड़ जायं तो मुझे विश्वास है कि मैं उन्हें संभाल सकता हूं। ग्यारह साल पहले जिस दिन मैं इस देश में आया, उसी दिन से मैं उन्हें जानता हूं और यह भी जानता हूं कि किस तरह उन्हें संभाला जा सकता है। लेकिन आजकल वह बुरे असर में हैं।

अगर कुछ प्रभाव डालना है तो दो बातें जरूरी हैं :

१. कौंसिल के सदस्यों के इस्तीफे (इस विचार के लिए भगवान इलाहाबाद को सलामत रखें!)।

२. यदि सरकार अपनी नीति नहीं बदलती है और एक निश्चित तारीख के पहले नजरबंदों को नहीं छोड़ देती है तो निष्क्रिय प्रतिरोध शुरू कर दिया जाय।

जहांतक बम्बई का संबंध है, इन दोनों कामों के लिए मुझसे जो बन पड़ेगा, मैं करूंगा। लेकिन एक अखिल भारतीय कान्फ्रेंस का करना जरूरी है।

'क्रॉनिकल' आपके पते पर जारी करने के लिए मैंने दफ्तर में कह दिया है। मैं तो समझ रहा था कि मैं पहले ही कभी का ऐसा कर चुका हूं।

सबके लिए आदर-सहित,

सप्रेम आपका,
बी. जी. हार्नीमन

[श्री हार्नीमन 'बांबे क्रॉनिकल' के लोकप्रिय और प्रभावशाली संपादक थे। पहले महायुद्ध के आखिरी सालों में और उसके बाद भी भारत के राष्ट्रीय आंदोलन में उन्होंने महत्त्वपूर्ण भाग अदा किया था।

जे. डी. आर. एक प्रकार के सुरक्षित सैनिक संगठन का सूचक है जो उस समय शिक्षित भारतीय नवयुवकों को प्रशिक्षण देने के लिए कायम किया गया था। हममें से कइयों ने इसमें शामिल होने का निश्चय किया और अपने आवेदन-पत्र भेज दिये। यह प्रथम महायुद्ध के समय की बात है। इसके कुछ समय बाद श्रीमती एनी बेसेण्ट को नजरबंद किया गया। इससे हमको

बड़ा आघात पहुंचा और विरोधस्वरूप हमने अपने आवेदन-पत्र वापस ले लिये ।]

३. मोतीलाल नेहरू की ओर से

[मेरे पिताजी ने पंजाब के मार्शल-लॉ से पैदा हुए नतीजों में गहरी और निजी दिलचस्पी ली । उन्हींके कहने से मार्शल-लॉ के फैसलों के खिलाफ इंग्लिस्तान की प्रिवी कौंसिल में कुछ अपीलें दायर हुईं । इनमें से एक अपील, जिसने उस समय बहुत ध्यान आकर्षित किया, अमृतसर के बग्गा और रतन-चंद की थी । यह पत्र और इसके बाद के कई पत्र मेरे पिताजी ने आरा (बिहार) से लिखे थे, जहां वह उस समय जमींदारी के एक बड़े मुकदमे की पैरवी कर रहे थे ।]

आरा,
२५ फरवरी १९२०

मेरे प्यारे जवाहर,

तुम्हें मेरे पिछले खत से मालूम हुआ होगा, मैं बग्गा की अपील पर प्रिवी कौंसिल के फैसले के लिए बिल्कुल तैयार नहीं था, ऐसी बात नहीं है । लेकिन उसके खारिज होने की खबर से मुझे धक्का लगा । अपील करने-वाले दूसरे लोगों ने दंगों में जो भी हिस्सा लिया हो, इसमें शक की जरा भी गुंजाइश नहीं कि बग्गा और रतनचंद उतने ही बेकसूर हैं, जितनी कि इंदू । पंजाब का हर आदमी—सरकारी या गैर-सरकारी—यह बात जानता है, फिर भी उन्हें फांसी लगेगी ! हमारे देश में नित्य होनेवाले अन्यायों में से यह तो लाखों में से एक मिसाल है । हम तो बस अपना फर्ज अदा कर सकते हैं और जो-जो उपाय हमारे लिए मुमकिन हैं, उन्हें कर सकते हैं । मैंने इस बारे में जो कुछ किया है, उसकी खबर मैं तुम्हें तार से दे चुका हूं, लेकिन इतना ही काफी नहीं है । आगे जो कदम उठाने हैं, उनके बारे में मेरे सुझाव ये हैं :

१. जगमोहन नाथ उनसब मुकदमों के, जिनमें अपीलें हुई हैं, अपील करने-वालों की एक पूरी फेहरिस्त तैयार करें । यह सूची टेकचन्द के पास भेज दी जाय, ताकि वह पता लगायें कि उनमें से कौन रिहा कर दिये गए हैं और कौन अभी जेल में हैं । टेकचन्द नेवाइल के पास समुद्री तार से उनसब लोगों

के नाम भेजें जो अब भी जेल में हैं और उनसे दरख्वास्त करें कि वह इनकी तरफ से रहम की अर्जी दे दें।

२. हिन्दुस्तानभर में खास-खास जगहों पर, पंजाब के हर शहर में, और अमृतसर के हर मुहल्ले में आम सभाएं की जायं, जिनमें इन मामलों में शाही ऐलान को लागू करने की मांग की जाय। इसके अलावा अमृतसर के जलसे यह भी तजवीज करें कि बग्गा और रतनचंद बेकसूर हैं।

यह कहना आसान है, पर करना मुश्किल है। लेकिन इसके लिए कोशिश होनी चाहिए। गांधीजी से सलाह-मशविरा करना चाहिए, लेकिन यह बहुत जल्दी होना चाहिए, क्योंकि वक्त थोड़ा है। कानून के आखिरी उपायों के हो चुकने पर फांसी फौरन दे दी जाती है, जैसा कि कटारपुर की फांसियों से साबित होता है।

३. अगर १ और २ में नाकामयाबी हुई तब क्या करना होगा? इस बाबत मेरे कुछ बहुत ही निश्चित विचार हैं; लेकिन जबतक १ और २ के नतीजों का पता न लगे, मैं उन्हें बताना नहीं चाहता।

मैं सोचता हूं कि तुम्हारी जिला कांफ्रेंस में मुझे मौजूद रहना चाहिए, चाहे हरिजी के बुलावे को छोड़ना ही क्यों न पड़े। असल में उन्हें मेरी जरूरत नहीं, और मुझे भी असल में उनका पैसा नहीं चाहिए—इस तरह बात बहुत-कुछ साफ है। मेरे पास सोचने और फैसला करने के लिए दो दिन का वक्त है।

तुम्हारा स्नेही,
पिता

४. मोतीलाल नेहरू की ओर से

[आरा से २७ फरवरी १९२० को मेरे नाम भेजे गये पिताजी के पत्र से]

जहांतक गांधीजी के राजनैतिक विचारों के प्रतिपादन करने की बात है, मैं उनके प्रति आदर रखते हुए भी उन विचारों को महज इसलिए मानने को तैयार नहीं हूं कि वे उनके विचार हैं। मैं दास को पहले ही सचेत कर चुका हूं कि हमें जोरदार खींचतान के लिए तैयार रहना चाहिए। गांधीजी शास्त्री से बातें करने दिल्ली जा रहे हैं। उनका मालवीय से लगातार ताल्लुक और

उनसे आम रजामंदी हमारे दल के लिए अच्छी निशानी नहीं है और न खुद गांधीजी के ही लिए वह बहुत शुभ बात है। अपनी लोकप्रियता पर हद से ज्यादा भरोसा करना ठीक नहीं । श्रीमती बेसेंट इसकी कीमत चुका रही हैं और दूसरों के साथ भी ऐसा ही हुआ है। मुझे बहुत दुःख होगा, अगर यही बात गांधीजी के साथ हुई। अपनी मौजूदा हालत में मुझे किसीके भी राजनैतिक विचारों से झगड़ा करने का अधिकार नहीं, फिर गांधीजी और मालवीयजी जैसे प्रतिष्ठित लोगों से तो झगड़ा करने की बात और भी कम है; लेकिन जिस ढंग से देश शक्ल अख्तियार कर रहा है, उसकी तरफ से मैं आंखें नहीं मूंद सकता। अधिकारियों या नरम दलवालों से समझौता करने की कोशिश का नतीजा बरबादी होगा, भले ही वह किसी के जरिये हो। जो हालत है उसके बारे में मेरी अपनी राय तो यह है।

५. मोतीलाल नेहरू की ओर से

आरा,
२९ फरवरी १९२०

मेरे प्यारे जवाहर,

हरकिशनलाल आज सवेरे आये हैं और ८ वजे रात की पैंसिजर से इलाहाबाद जा रहे हैं। तुम्हारा तार अभी मिला है, जिसमें तुमने लिखा है कि इंदिरा ठीक है और तुम कल सवेरे बम्बई जा रहे हो। मैंने तुम्हें तार दे दिया है कि हरकिशनलाल कल सवेरे पहुंच रहे हैं और कुछ घंटे ठहरेंगे। वह एक्सप्रेस से दिल्ली चले जायंगे। उन्हींके हाथ यह चिट्ठी भेज रहा हूं।

नाश्ते के वक्त पंजाब के मामलों और आमतौर से राजनैतिक हालत पर हरकिशनलाल, दास और मेरी देर तक बातचीत हुई है। हरकिशनलाल तुम्हें बतायेंगे कि हम किस नतीजे पर पहुंचे हैं। उन्हें 'इंडिपेंडेंट' का दफ्तर घुमाकर दिखा देना और वहां जो अव्यवस्था फैली हुई है, उसके बारे में उन्हें खुद राय बना लेने देना। उन्होंने लाहौर पहुंचते ही हमारे लिए आदमी भेजने का वादा किया है।

मालूम नहीं, तुम बम्बई कितने दिन ठहरोगे। मैं चाहूंगा कि जितनी जल्दी हो सके, लौट आओ। बम्बईवाले मुकदमे के मुद्दई को ब्यौरा भेजने के

बारे में तुमने कुछ किया ? अगर न किया हो तो खुद देखकर यह काम करा देना।

राजनीति में उनकी अपनी हालत क्या है. इसके बारे में गांधीजी एक महत्त्व का बयान देने जा रहे हैं। इस बारे में मैं तुम्हें पहले ही लिख चुका हूं। मैंने जो कुछ कहा है, दास उससे सहमत हैं। और बातों के साथ इस मामले में भी आज सवेरे हमारी बातें हुईं। यह करीब-करीब साफ है कि गांधीजी जो रुख लेने जा रहे हैं, वह कांग्रेस की तजवीजों से पूरी तरह मेल नहीं खाता। हमारी सिर्फ यह शिकायत है कि उन्होंने जहां शास्त्री और मालवीय को अपने विश्वास में लिया, हम लोगों को बिल्कुल अलग छोड़ दिया। फिर भी हमें देखना है कि आगे नई क्या बात आती है। इसके बाद हमारे तय करने का समय आवेगा कि हम उसपर चलें या नहीं। जब इस मसले पर मैंने तुम्हें पिछली बार लिखा था, तब मैं इसी नतीजे पर पहुंचा था। मैंने आज सवेरे दास से यही बात कही। और वह मुझसे सहमत हुए, लेकिन उन्होंने खासतौर से कहा कि मैं तुम्हें यह बता दूं कि शिकायतवाली बात उनकी उठाई हुई नहीं है, बल्कि उन्होंने वह मुझसे ली है। वह समझते हैं कि उनके पीठ-पीछे गांधीजी से उनकी बुराई की जा रही है, और इसीलिए वह चाहते हैं कि मैं खासतौर पर इसका जिक्र कर दूं।

तुम्हारा स्नेही,
पिता

६. एम. एल. ओक्स के नाम

[६ से १४ तक के पत्र मेरे निर्वासन के बारे में एक आज्ञा से संबंध रखते हैं, जो मुझपर मसूरी से तामील की गई थी। मुझे मिलनेवाली इस तरह की यह पहली आज्ञा थी।]

सेवाय होटल, मसूरी,
१४ मई १९२०

प्रिय श्री ओक्स,

आज सुबह आपसे जो बातचीत हुई उसपर, और सरकार ने मुझसे जो 'निश्चित वचन' चाहा है कि मैं मसूरी-स्थित अफगान प्रतिनिधियों से न मिलूं और न उनसे कोई पत्र-व्यवहार करूं, इस बाबत भी गौर से विचार

किया है। मुझे अफसोस है कि इस बारे में मैं अपना खयाल नहीं बदल सकता।

जैसाकि आप जानते हैं, मैं मसूरी अपनी माता, पत्नी और बहनों के साथ सिर्फ इसलिए आया हूं कि मेरी पत्नी की तन्दुरुस्ती ठीक नहीं है। मेरा इरादा था कि जबतक मेरे पिताजी को यहां आने की फुरसत नहीं मिलती, तबतक यहां ठहरता। अफगान प्रतिनिधियों से मुझे कुछ सरोकार नहीं है और यह एक संयोग है कि हम दोनों एक ही होटल में ठहरे हैं। सच तो यह है कि उनकी मौजूदगी ने मेरे लिए कुछ असुविधा पैदा की है, क्योंकि मैं उन कमरों को लेना चाहता था, जहां वे ठहरे हुए हैं। इस प्रतिनिधि-मंडल में मेरी दिलचस्पी जरूर है, जैसीकि हर समझदार आदमी को होनी चाहिए, लेकिन उनसे खासतौर से मिलने की कोशिश करने का न कोई मेरा इरादा रहा है और न है। हम लोग यहां पिछले सत्रह दिनों से रह रहे हैं और इस बीच मैंने प्रतिनिधि-मंडल के एक आदमी को दूर से भी नहीं देखा है। आप इस बात को खुद जानते हैं, जैसाकि आपने आज सवेरे मुझे बताया था। लेकिन हालांकि अफगानियों से मिलने का और उनसे पत्र-व्यवहार करने का मेरा कोई भी खयाल नहीं है, फिर भी सरकार के इशारे से अपने को किसी तरह बांधने का विचार मुझे सख्त नापसंद है, भले ही ऐसा करना मेरे लिए असुविधाजनक क्यों न साबित हो। यह दरअसल अन्तःकरण की बात है। मुझे भरोसा है कि आप मेरी हालत को समझेंगे। इसलिए यह कहते हुए मुझे दुःख है कि मैं आपकी इस मेहरबानी-भरी सलाह को मानने से लाचार हूं और सरकार को कोई वचन नहीं दे सकता।

अगर सरकार मुझपर कोई आज्ञा लागू करने का फैसला करती है तो इस समय तो मैं उसे मानने के लिए तैयार हूं। मेरे लिए यह बड़ी असुविधा की बात होगी कि मैं अपने घरवालों को यहां अकेला छोड़कर यकायक नीचे चला जाऊं। मेरी स्त्री की सेहत ऐसी है कि बड़ी सावधानी से देख-रेख की जरूरत है और मेरी मां तो एकदम अपाहिज हैं और दोनों को बिना देख-रेख के छोड़ना बहुत ही कठिन है। मेरे अचानक यहां से चले जाने से मेरे पिताजी की और मेरी योजनाएं बिलकुल उलट-पुलट हो जायंगी और इससे हमें बड़ी हैरानी और फिक्र होगी, लेकिन सरकार के बड़े मामलों में

आदमी की निजी सुविधाओं पर ध्यान नहीं दिया जा सकता, ऐसा मेरा खयाल है।

भवदीय,
जवाहरलाल नेहरू

श्री एम. एल. ओक्स,
पुलिस सुपरिंटेंडेंट,
हर्मिटेज लॉज, मसूरी।

७. जी. एफ. ऐडम्स के नाम

सेवाय होटल, मसूरी,
१५ मई १९२०

प्रिय श्री ऐडम्स,

मैंने फिरसे उस मामले पर पूरी तरह विचार कर लिया है और मुझे अफसोस है कि मैं, सरकार जो चाहती है, वह वचन नहीं दे सकता। ऐसी हालत में अगर सरकार मुझे हुक्म दे तो मैं मसूरी छोड़कर चले जाने के लिए तैयार हूं। पहले तो मेरी इच्छा हुई थी कि आपका सुझाव मानकर, सरकार के विना लिखित आज्ञा दिये ही, अपने-आप यहां से चला जाऊं; लेकिन फिर विचार करने पर मैं नहीं समझता कि ऐसा करना मेरे लिए मुनासिब होगा, इसलिए मैं जाब्ते के नोटिस की राह देखूंगा।

भवदीय,
जवाहरलाल नेहरू

श्री जी. एफ. ऐडम्स, आई. सी. एस.,
डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट,
मसूरी।

८. आदेश

चूंकि स्थानीय सरकार की राय में यह विश्वास करने के लिए तर्कसंगत कारण हैं कि इलाहाबाद के जवाहरलाल नेहरू ऐसा काम कर रहे हैं, या करनेवाले हैं, जो जनसुरक्षा के खिलाफ है, इसलिए संयुक्तप्रांत के लेफ्टिनेंट गवर्नर, भारत रक्षा कानून, १९१५ के नियम ३ द्वारा प्राप्त अधिकार का प्रयोग करते हुए यह आदेश देते हैं कि इलाहाबाद के कथित जवाहरलाल नेहरू संयुक्तप्रान्त के जिला देहरादून की हद के किसी क्षेत्र में न प्रवेश करेंगे, न ठहरेंगे, न रहेंगे, और कथित जवाहरलाल नेहरू को आगाह किया जाता है कि अगर वह जानबूझकर इस आदेश की अवज्ञा करेंगे तो भारत

रक्षा कानून, १९१५ के नियम ५ की उपधारा (१) के मातहत, जिसकी एक नकल इस आदेश के साथ नत्थी है, दंडित किये जा सकेंगे।

नैनीताल
मई, १९२०

एम. कीन,
मुख्य सचिव,
संयुक्त प्रांत सरकार

श्री जे. एल. नेहरू देहरादून जिला आज छोड़ देंगे।

सुपरिंटेंडेंट दून के आदेशानुसार।

एम. एल. ओक्स,
एस. पी. देहरादून
१६. ५. २०

९. मोतीलाल नेहरू की ओर से हारकोर्ट बटलर के नाम

बनारस,
१९ मई १९२०

प्रिय सर हारकोर्ट,

कल मैं अपने बेटे से मिला और उसने मुझे वे हालात बताये, जिनमें उसे स्थानीय सरकार के हुक्म से देहरादून जिले से निकाल दिया गया है। एम. एल. ओक्स को उसके लिखे खत की नकल साथ है। इसमें उसने अपनी हालत पूरे तौर पर साफ कर दी है और उससे जो वचन मांगा गया था, उसे देने से उसने इन्कार कर दिया है। इससे ज्यादा वह मुझे और कोई जानकारी न दे सका।

जो हुक्म उसे मिला, उसकी वजह से उसे घर की औरतों के लिए ठीक-ठीक इंतजाम किये बिना ही अचानक मसूरी छोड़नी पड़ी। औरतों में से दो (मेरी स्त्री और बहू) की सेहत अच्छी नहीं है। हवाबदली के लिए इनका फौरन पहाड़ जाना जरूरी हो जाने से शार्लविल् और सेवाय होटलों को माकूल कमरों के लिए तार दिये गए थे। इनमें से पहले में जैसी जगह चाहिए थी, नहीं मिल सकी। दूसरे ने हमारी जरूरत को काफी हद तक पूरी करने लायक जगह देने को कहा और वादा किया कि आगे चलकर जब वे कमरे, जो भारत सरकार ने ले रखे हैं, खाली होंगे तो हमारी जरूरतों को ज्यादा अच्छी तरह पूरी कर सकेंगे। जो कमरे हमें मिले, वे खासे खर्चे पर

लेने पड़े, क्योंकि पिछले तजुरबे ने हमें बता दिया था कि हवाबदली से ज्यादा फायदा तब मिल सकता है जबकि औरतें होटल में रहें और चौके-चूल्हे के झंझटों से दूर रहें।

इस साल की शुरुआत से मैं आरा में डुमरांव के मुकदमे में लगा हुआ हूं। जवाहरलाल हाईकोर्ट में अपने काम के साथ-साथ मेरा भी काम देख रहा था और यह कोई कम कुरबानी नहीं थी कि दोनों कामों को छोड़कर वह घर की औरतों के साथ पहाड़ पर गया। वह बन्दोबस्त करने में लगा हुआ था कि कुटुंब की शांति अचानक 'सरकारी वजहों' ने भंग कर दी। जिस दिन सुपरिंटेंडेंट पुलिस उससे पहली बार मिले, उसी दिन सवेरे उसने अपनी छोटी बहन को स्कूल में भरती कराया था और जब वह हुक्म पाने के बाद नीचे आ रहा था तो उसे रास्ते में मसूरी जाते हुए वे सवारी के घोड़े मिले, जिन्हें इलाहाबाद से उसके इस्तेमाल के लिए भेजा गया था।

ये हालात हैं, जिनमें "स्थानीय सरकार की राय में यह यकीन करने की मुनासिब वजहें हैं कि इलाहाबाद का जवाहरलाल नेहरू पब्लिक की सुरक्षा के खिलाफ काम कर रहा है या करनेवाला है।" पुलिस सुपरिंटेंडेंट की जो बातचीत जवाहरलाल से हुई, उससे यह जान पड़ता है कि 'मुनासिब वजहें' खत्म हो जातीं अगर जवाहरलाल ने नीचे गिरकर उस बात को न करने का 'पक्का वचन' दे दिया होता, जिसे करने का उसे ज़रा भी खयाल तक न था। मेरे यह कहने की जरूरत नहीं कि जो कुछ जवाहरलाल ने किया है उसे मैं पूरी तरह ठीक मानता हूं। दरअसल उसके लिए इसके अलावा कोई और रास्ता ही नहीं था। उसकी और मेरी सियासत को लोग अच्छी तरह जानते हैं। हम लोगों ने उसे कभी छिपाया नहीं है। हम जानते हैं कि वह ऐसी नहीं, जो सरकार को पसंद हो, और उसकी वजह से जो भी तकलीफें उठानी पड़ें, उठाने के लिए हम तैयार हैं। लेकिन जवाहरलाल पर जो इलज़ाम लगाया गया है, वह उन उसूलों के ठीक खिलाफ पड़ता है, जिन्हें हम मानते हैं और जिनके लिए हम तकलीफें उठाने के लिए तैयार हैं। हालांकि नौजवान जवाहरलाल को हिन्दुस्तान भर के लोग जानते हैं और मैं यकीन के साथ कह सकता हूं कि खुफिया पुलिस के लोगों को छोड़कर एक भी आदमी ऐसा नहीं मिलेगा, जो यह यकीन करे कि वह उस तरह की कोई छिपी साजिश

कर सकता है, जिसका उसपर शक किया गया है। आप खुद उससे देर तक बात कर चुके हैं और जैसा कि मैं जानता हूं, आदमी की आदत की कितनी ज्यादा और मुख्तलिफ जानकारी आपको है, मैं सहज ही यह नहीं मान सकता कि जिस धातु का वह बना है, उसपर आप ज़रा भी शक कर सकते हैं। इसलिए मेरा तो यही ख्याल है कि दो में एक बात हुई है: यह हुक्म या तो किसी गलती या भूल से जारी किया गया है या ऊपर के दबाव से। अगर इनमें से एक भी बात ठीक नहीं है तो मुझे इस दु:खभरे नतीजे पर पहुंचना पड़ेगा कि आपकी सरकार ने अबतक परेशान न करने की जो पालिसी रखी है, उसमें तबदीली हो रही है।

हम एक-दूसरे से ३० साल से वाकिफ हैं और मैंने यही अच्छा समझा कि अपने भावों को साफ-साफ और बिना छिपाये जाहिर कर दूं। मैं महज़ इतना ही ज़ानना चाहता हूं कि जो हुक्म जारी किया गया है क्या वह स्थानीय सरकार ने पूरी तरह गौर करके जारी किया था, और अगर ऐसा है तो उसकी बुनियाद क्या है? अगर आप मेहरबानी करके ऐसा करादें कि मुझे यह जानकारी दे दी जाय तो मैं आपका अहसानमंद होऊंगा।

मैं दो-एक दिन में बनारस से चल दूंगा और मेरा पता होगा—आरा (बिहार)।

भवदीय,
मोतीलाल नेहरू

माननीय सर हारकोर्ट बटलर,
लेफ्टीनेंट गवर्नर, संयुक्त प्रांत,
नैनीताल।

१०. सर हारकोर्ट बटलर की ओर से मोतीलाल नेहरू के नाम

लेफ्टिनेंट गवर्नर का कैंप
संयुक्त प्रान्त, इलाहाबाद,
२६ मई १९२०

प्रिय श्री मोतीलाल नेहरू,

आपका १९ मई का पत्र अभी-अभी यहां इलाहाबाद में मिला और मैं उसका उत्तर तुरन्त ही उसी खुलेपन से दे रहा हूं, जिससे कि आपने लिखा है।

मैं नीति में किसी तवदीली से बिल्कुल जानकार नहीं हूं, और मैं यह समझ ही नहीं सकता कि जो आश्वासन आपके बेटे से मांगा गया, उसमें गिरावट की कोई बात थी। जाहिर है कि इस मामले में हममें मतभेद है। परन्तु विश्वास कीजिये, मुझे इस बात का बड़ा खेद है कि आप, आपके पुत्र और विशेषकर आपके परिवार की महिलाओं को एक ऐसी सरकारी कार्रवाही से असुविधा हुई, जिसे आपके पुत्र ने भावना का मुद्दा बनाकर नहीं माना; लेकिन मुझे लगता है कि उसे दूसरी तरह से भी देखा जा सकता था और इससे उनमें विश्वास ही प्रकट होता। मुझे डर है कि यह पत्र आपको कोई वास्तविक संतोष नहीं दे सकेगा; लेकिन मैं उम्मीद करता हूं कि सार्वजनिक मामलों में हमारी जो भी राय हों, आप मेरी इस बात पर विश्वास करेंगे कि व्यक्तिगत जीवन में मुझे भरोसा है कि हमारे तीस साल के दोस्ती के संबंधों में किसी चीज से बाधा नहीं पड़ेगी।

भवदीय,
हारकोर्ट बटलर

माननीय पंडित मोतीलाल नेहरू,
आरा (बिहार)।

११. मोतीलाल नेहरू की ओर से

[हंटर-कमेटी वह कमेटी थी, जिसे पंजाब में फौजी कानून के समय की घटनाओं की जांच के लिए भारत सरकार ने नियुक्त किया था।]

आरा,
२७ मई १९२०

मेरे प्यारे जवाहर,

मैंने हंटर-कमेटी की रिपोर्ट का और सरकारी प्रस्तावों का एसोशिएटेड प्रेस द्वारा दिया गया सार ध्यान से पढ़ा। दोनों ही हैरत में डालनेवाले दस्तावेज हैं। हमें बेखबर होकर नहीं बैठना चाहिए। तुम्हारी बार-लाइब्रेरी को जो अचानक भलमनसाहत का दौरा आया है, उस सबकी झंझटों में मत पड़ो। अब वे उस आदमी का क्या बिगाड़ेंगे, जो कम-से-कम फिलहाल उसका मेम्बर नहीं रहा है। मुझे लगता है कि उस मेम्बर की जो हाल ही में किस्मत चमकी है, उसने नेकी से बहुत दूसरी किस्म की भावनाएं पैदा की हैं। जो हो, गांधीजी २९ तारीख को सवेरे आ रहे हैं। मालवीयजी बनारस में पहले

से मौजूद हैं। मैंने बी० चक्रवर्ती और हसन इमाम को तार दिया है कि पंजाब मेल से आयें, जो आरा से २९ तारीख को सवेरे गुजरेगी, और मैं उनके साथ हो लूंगा। अगर तुम अपनी दुसीटर गाड़ी पर तड़के ही चल पड़ो तो वक्त से बनारस पहुंचकर स्टेशन पर हमें मिल जाओगे। २९ और ३० को सवेरे ही सबसे जरूरी काम हमें निपटाने हैं।

मैंने खास-खास अखबारों को एक प्रेस-तार के रूप में अपना यह आदेश सभी सदस्यों को भेज दिया है कि वे जरूर आयें। दास मेरे साथ चलने की कोशिश में हैं, लेकिन हर हालत में मीटिंग में मौजूद रहेंगे, हालांकि यह उनके लिए बड़ा बेढंगा वक्त होगा। हम अपनी बहस कल खत्म कर रहे हैं और वह अपनी बहस शुरू करने के पहले कुछ छुट्टी की मांग करेंगे। हम लोगों ने राजी होने के लिए सांठ-गांठ कर रखी है।

अच्छा होगा कि तुम मेरे साथ चक्रवर्ती के यहां ठहरो, क्योंकि हम लोगों को ज्यादातर साथ ही रहना होगा। दास, चक्रवर्ती और हसन इमाम सभी हमारे साथ नहीं ठहर सकेंगे। मैंने श्रीमती ज्ञानेंद्र को लिख दिया है कि तुम और मैं उनके साथ ठहरेंगे और मैंने यह उम्मीद भी जाहिर की है कि अगर कोई दोस्त दूसरी जगह ठहरने का इंतजाम न कर सके, तो वे हमारे ही कमरे में ठहर जायंगे और वह इसका कोई खयाल नहीं करेंगी। यह महज पेशबंदी के लिए है।

अच्छा हो कि तुम अमृतसर-साजिश के मुकदमे की पूरी फाइल अपने साथ लेते आओ, लेकिन मुझे अंदेशा है कि १३ अप्रैल को जलियांवाला बाग में जो प्रस्ताव पास हुआ था, वह उसमें नहीं होगा। सभीकी निगाह उसपर पड़े बिना रह नहीं सकती थी। प्रिवी कौंसिल के लिए जो फाइल तैयार की गई थी और जो लीगल रिमैंबरेंसर से लाहौर में मुझे मिली थी उसे खोज लेना। उसमें सारी फाइलों के कागजात की सूची होनी चाहिए। मैं संतानम् को भी तार भेज रहा हूं कि कहीं फाइल उनके पास न हो। अगर हमें प्रस्ताव न मिल सके तो हमें जगतनारायण से कहना होगा कि वह एक सार्वजनिक बयान दें। यह मामला ऐसा तो नहीं कि जिसे निजी माना जाय। तुम्हारे भेजे विवरण जबसे मैंने पढ़े हैं मेरा खून खौल रहा है। अब हमें कांग्रेस का विशेष अधिवेशन करना चाहिए और इन शैतानों के खिलाफ तूफान खड़ा

कर देना चाहिए।

पूरी रिपोर्ट और कागजात अपने साथ लाना न भूलना।

तुम्हारा स्नेही,
पिता

१२. मोतीलाल नेहरू की ओर से

[आरा से ३ जून १९२० को मुझे भेजे गये पिताजी के पत्र का एक अंश]

तुम्हारे निकाले जाने के हुक्म को तोड़ने के खयाल की मैं बहुत जोरों से मुखालफत करता हूं। अगर ऐसा करना बिल्कुल जरूरी ही होता तो बेशक मैं यह सोचता ही नहीं कि नतीजा क्या होगा। लेकिन जैसा कि मैंने तुमसे कल कहा, अबतक तुम्हारा कदम इतना ठीक रहा कि इसको आगे बढ़ाने के लिए कुछ करना जरूरी नहीं है। लाजपतराय मुझसे पूरी तरह से सहमत हैं। ईमानदारी की बात यह है कि पिछले छः महीनों में हम सबने काफी तकलीफें उठाई हैं और अब कोई भड़कानेवाला काम करके मैं और मुसीबतें नहीं बुलाना चाहूंगा। इसके नतीजे—आम और निजी दोनों खयालों से—इतने साफ हैं कि उनपर बहस करना जरूरी नहीं है। इसका नतीजा कुटुंब को एकदम बिखेर देना होगा और सारे आम, निजी और धंधे से ताल्लुक रखनेवाले काम में उलट-पुलट करनी होगी। एक में से एक बात निकलेगी और कुछ ऐसा होकर ही रहेगा, जिससे लाचार होकर मैं तुम्हारे पीछे जेल पहुंचूं या कुछ ऐसी ही और बात हो। मैं बात यहींपर छोड़ देना चाहूंगा। अबतक हमारी ही जीत रही है, आगे क्या होता है, उसकी हमें राह देखनी चाहिए।

१३. मोतीलाल नेहरू की ओर से सर हारकोर्ट बटलर के नाम

कलकत्ता,
८ जून १९२०

प्रिय सर हारकोर्ट,

आपके २६ मई के खत की पहुंच देने में जो देर हुई, उसके लिए माफ करें। बनारस और इलाहाबाद की मीटिंगों के लिए जब मैं आरा से चल रहा था, तब मुझे वह खत मिला था और आरा लौटने के बाद फौरन ही मुझे

कलकत्ता जाना पड़ा।

मेरे और मेरे घरवालों के लिए आपने जो हमदर्दी दिखाई है, और जो यह भरोसा दिलाया है कि सार्वजनिक मामलों में भले ही हम एकराय न हों, उनसे हमारे आपसी ताल्लुकात पर कोई असर न पड़ेगा, उसके लिए मैं आपका अहसानमंद हूं। ताहम मुझे अफसोस है कि मैं यह नहीं मान सकता कि किसी भी भले आदमी से इस वचन की मांग कि वह किसी बाहरी ताकत के नुमाइंदों से कोई गुपचुप साजिश न करेगा, इस बात को जाहिर करती है कि उसकी सरकार का उसपर यकीन है।

आपको लिखने का मेरा मकसद सिर्फ यह था कि यह पता लगाऊं कि मेरे बेटे के खिलाफ जो कार्रवाही की गई, उसकी क्या कोई बुनियाद थी? थी तो क्या? और ऐसा करते हुए मैंने यह बताने की कोशिश की थी कि इस तरह की कार्रवाही से, मालूम होता है कि, आपकी सरकार की अबतक की पालिसी में कोई तबदीली हो रही है। जो जानकारी मुझे चाहिए थी, वह तो आपके खत से मिली नहीं, और जहांतक आपकी पालिसी का सवाल है, मैं देखता हूं कि आपको किसी तबदीली का पता ही नहीं है। इसलिए हुक्म मुनासिब है या नहीं, इस बारे में कुछ और कहना जरूरी नहीं है। यह बता देना मैं ठीक समझता हूं कि इसकी वजह से हम कैसी हालत में पड़ गये हैं।

औरतें मसूरी में अकेली हैं, उनके साथ घर का कोई मर्द नहीं है। उनमें से दो की सेहत बड़ी नाजुक है और जिस सख्त गर्मी से हम गुजर रहे हैं, उसमें उनको मैदान में वापस लाने का सवाल नहीं उठता। सिविल सर्जन उनकी देखभाल कर रहे हैं और बरसात शुरू होने तक सब ठीक रहा तो वे लौटकर इलाहाबाद आ जायंगी। लेकिन अगर दोनों बीमारों में से किसी की सेहत की वजह से जवाहरलाल की मसूरी में मौजूदगी जरूरी हुई तो जो हुक्म उसपर तामील हुआ है वह, उसकी फर्ज-अदायगी में या अपनी मां या स्त्री के पास पहुंचने की पूरी कोशिश करने में रुकावट न होगा। अपनी इज्जत को छोड़कर वह ऐसी शर्त, जो उससे चाही गई है, मंजूर नहीं कर सकता, और इस तरह उसके लिए अलावा इसके कोई चारा ही न रहेगा कि स्थानीय सरकार के हुक्म की परवा न करे और इस तरह चले, मानो

वह था ही नहीं। हुक्मउदूली करके भी वह अपनी मां या स्त्री के इतने नजदीक नहीं होगा, जितना कि वह उसे भंग किये बिना होगा; लेकिन उसे इस बात का सब्र होगा कि उसने अपना फर्ज अदा किया और यही चीज है जिसकी उसे परवा है। अगर ऐसा मौका आया तो वह आपको और देहरादून के सुपरिंटेंडेंट को पाबंदीवाले इलाके में अपने दाखिल होने के इरादे की वक्त रहते इत्तिला देगा, जिससे सरकारी लोगों को, कार्रवाई करने की जो सलाह मिले, वह कर सकें।

यह रास्ता है, जिसे जवाहरलाल ने मुझसे सभी पहलुओं पर अच्छी तरह बात करके अपनाना मंजूर किया है और मौजूदा हालात में मुझे इसके अलावा कोई दूसरा रास्ता मुमकिन भी नहीं दिखाई देता। जहांतक परेशानी या खर्चे का सवाल है वह झुक गया है; लेकिन मैं नहीं चाहूंगा और न मैं उससे उम्मीद करूंगा कि वह उसूल के सवाल पर झुके। सरकार की कार्रवाई की वजह से मसूरी की रिहाइश खत्म होने से औरतों को, भले ही उनकी सेहत का खतरा न हो, सबसे ज्यादा तकलीफ होगी, और जो इतना खर्च हम कर चुके हैं, उसका भी कोई फायदा न मिलेगा। यह सब हम बरदाश्त कर सकते हैं, लेकिन हम ऐसा हुक्म नहीं मान सकते जिसे, आपके लिए इज्जत रखते हुए भी, हम ग़लत और बेजा समझते हैं और जिसको न मानने के अलावा हमारे सामने कोई इज्जत का रास्ता नहीं रह जाता।

इलाहाबाद में रहते हुए मुझे लिखने का मौका नहीं मिल सका, लेकिन मुझे यकीन है कि ऊपर जो कुछ मैंने कहा है, वह जवाहरलाल के विचारों की उतनी ही नुमाइंदगी करता है, जितनी मेरी। लेकिन इसकी तसल्ली करने के लिए मैं इस खत को उसके पास भेज रहा हूं और उससे कह रहा हूं कि अगर वह राजी हो तो इलाहाबाद से उसे रवाना कर दे।

मुझे लगता है कि यहां आरावाले मुकदमे के कुछ गवाहों के साथ, जिनकी गवाहियां कमीशन पर हो रही हैं, करीब-करीब एक हफ्ता लग जायगा।

भवदीय,

मोतीलाल नेहरू

माननीय सर हारकोर्ट बटलर, के. सी. एस. आई.,
लेफ्टीनेंट गवर्नर, संयुक्त प्रांत।

३४. सर हारकोर्ट बटलर की ओर से मोतीलाल नेहरू के नाम

नैनीताल,
१५ जून १९२०

प्रिय श्री मोतीलाल नेहरू,

आपका ८ तारीख का पत्र मिला। औरतों की सेहत के बारे में आपने जो लिखा है, उसे देखते हुए मैंने दून के सुपरिंटेंडेंट को आदेश जारी कर दिये हैं कि वह उनकी देखभाल के लिए जवाहरलाल के मसूरी लौटने पर ऐतराज न करें।

भवदीय,
माननीय पंडित मोतीलाल नेहरू, हारकोर्ट बटलर
इलाहाबाद।

३५. मोतीलाल नेहरू की ओर से

जून १९२०

प्रिय सर हारकोर्ट,

आपके १५ जून के पत्र के लिए धन्यवाद, जिसमें आपने खबर दी है कि जवाहरलाल के मसूरी में आने पर पाबंदी लगानेवाले हुक्म को आपने वापस ले लिया। जो घटनाएं हुई हैं उन्हें देखते हुए यह ठीक ही वक्त पर हुआ है। १४ तारीख को मेरी पत्नी की हालत बहुत खराब हुई और १८ को सिविल सर्जन ने डा. डाउलर से सलाह करके यह जरूरी समझा कि मैं वहां मौजूद रहूं। खुशकिस्मती से जब कर्नल बेयर्ड का तार आया तो जवाहरलाल मेरे साथ आरा में था और हम दोनों १९ के सबेरे चलकर कल यहां पहुंचे।

होटल में रहनेवाले एक पारसी सज्जन की मेहरबानी और इनायत से, जिन्होंने अपने रहने के हमारे से ज्यादा अच्छे कमरों को हमारी सुविधा के लिए छोड़ दिया था, और मरीज के लिए दो ट्रेंड नर्सों का इंतजाम कर दिया था, उनकी देखभाल हमें ठीक होती मिली, हालांकि वह बहुत कमजोर हो गई थीं। आज डाक्टर आपस में सलाह-मशविरा करेंगे, जिसमें मेजर स्ट्रोथी स्मिथ भी शामिल होंगे, जो उसी गाड़ी से आये हैं, जिससे कि हम आये थे। आरा में मुझे अपना मुकदमा बड़ी नाजुक घड़ी में छोड़कर आना पड़ा और

मुझे जितनी जल्दी हो सके, लौट जाना है । यहां जवाहरलाल को देखभाल के लिए छोड़कर मैं कल लौटने की उम्मीद करता हूं ।

भवदीय,
मोतीलाल नेहरू

१६. मोतीलाल नेहरू की ओर से

[मेरे नाम आरा से १६ जून १९२० को लिखे गए पिताजी के पत्र का अंश]

मुझे उम्मीद है कि मालवीयजी से आम हालात पर तुम्हारी बात हुई होगी। मैं तुम्हारे इस खयाल से बिल्कुल एकराय हूं कि तुम्हारा पंजाब जाना एकदम ग़ैरज़रूरी है । वे कुछ मामले चुन लें और कानूनी राय लेने और अर्जीदावा तैयार करने के लिए उन्हें सारी गवाहियों के साथ पेश कर दें । दास, सरकार और मैं इसके बाद आपस में विचार करके सलाह देंगे ।

मैं समझता हूं कि मालवीयजी और मुझे अब कौंसिल के चुनावों के बारे में फैसला कर लेना चाहिए। मेरी समझ में उन्हें असेंबली में जाना चाहिए और मुझे स्थानीय कौंसिल में। हमें ताल्लुक रखनेवाले चुनाव-हलकों को बाकायदा इसकी खबर दे देनी चाहिए। मुझे कौन-सा खास हलका चुनना चाहिए, इसका मुझे ज़रा भी अंदाज नहीं है । अच्छा हो, तुम मालवीयजी से सारे मामले पर बातचीत कर लो। तुम्हारे लिए भी एक हलका तय हो जाना बहुत जरूरी है, क्योंकि तुम अपने ही किले में सिपहसालार के कमज़ोर होने की चाहे जो बात करो, मुझे यह यकीन नहीं कि वह ऐसा कमज़ोर है । अगर हम कांग्रेस के खास इजलास के हो जाने तक चुप बैठे रहें तो देरी हो जायगी। जहांतक मैं देख सकता हूं यह मुमकिन नहीं जान पड़ता कि कांग्रेस, कांग्रेस की हैसियत से, अपनेको असहयोग से बांधे। कांग्रेस इस काम के लिए एक बहुत बड़ा संगठन है । ज्यादा-से-ज्यादा जो हो सकता है, वह यह है कि वह इस उसूल की मंजूरी दे दे, और मेंबरों को अपनी-अपनी इच्छा के मुताबिक काम करने को छोड़ दे। लेकिन अगर हम यह तय करें कि कौंसिल में हम अपना योग न देंगे तो हम जब भी चाहें, उसके बाहर आ सकते हैं ।

१७. मोतीलाल नेहरू की ओर से

[इलाहाबाद से पिताजी द्वारा मुझे लिखे गये ५ जुलाई १९२० के पत्र का अंश]

मैं कुछ खत वगैरा साथ में भेज रहा हूं, जो मेरे यहां दो दिन ठहरने के बीच मिले हैं। मैंने इन सबको पढ़ लिया है। फतेहपुर के खत पर गहराई से गौर करने की जरूरत है। कल रात पुरुषोत्तम और कपिलदेव से मेरी देर तक बातचीत हुई, जिसके दौरान में पुरुषोत्तम ने इस बारे में उन्हें लिखे गये तुम्हारे खत का एक हिस्सा पढ़कर सुनाया। जहांतक तुम्हारे गांधीजी के कहे मुताबिक चलने की बात है, मुझे कुछ कहना नहीं है। यह एक तरह की भावुकता है, जो मेरी आदत के खिलाफ है। लेकिन जहांतक सवाल की अच्छाई-बुराई की बात है, मुझे पूरा भरोसा नहीं कि गांधीजी भी ठेठ अखीर तक अपने प्रोग्राम पर डटे रहेंगे। बात उन्हींपर छोड़ दी जाय तो वह जरूर ऐसा करेंगे। लेकिन यह एक ऐसा मामला है, जिसमें उन्हें दूसरों पर मुनहसिर करना पड़ता है, और ये दूसरे लोग देर-सबेर अलग हो जाते हैं। इसके बारे में तो कोई शक है ही नहीं। यह सवाल बड़ा मुश्किल है और मैं यह मान लेता हूं कि अभी मैं किसी पक्के नतीजे पर नहीं पहुंचा हूं। असहयोग के उसूल के साथ मेरी पूरी हमदर्दी है, लेकिन असल में इसकी शक्ल क्या रहेगी, इसका मुझे कोई पता नहीं। फिलहाल जो हालत है उससे मैं लाजपतराय से, खासकर पंजाब के बारे में, एकराय हूं; लेकिन मैं गांधीजी की इस बात से एकराय नहीं हूं कि सारे हिंदुस्तान में कौंसिलों का आमतौर से बायकाट हो। मैं तो यह सोचता हूं कि अगर हमारी जनता हमें चुनकर कौंसिलों में भेजे और तब हम उसमें बैठने से इन्कार करें या उसकी कार्रवाई में रुकावट डालें तो इससे असहयोग के उसूल को छोड़े बिना हमारे मकसद को बहुत ताकत मिलेगी। इस वक्त तो जो मैं कहना चाहता हूं, वह यह है कि हममें से किसीको आखिरी फैसला नहीं करना चाहिए, जबतक आगे के वाक-यात सामने न आ जायं।

१८. मोतीलाल नेहरू की ओर से

चेस्टनट लॉज, अल्मोड़ा,
३ जून १९२१

मेरे प्यारे जवाहर,

नगीने से लिखा हुआ तुम्हारा खत आज सवेरे मिला। आशा है, तुम्हारा दौरा सफल रहा होगा।

मेरी सेहत धीरे-धीरे सुधर रही है। यहां के मौसम का कोई ठिकाना नहीं। कोई-कोई दिन और रात बहुत गर्म होते हैं और कोई-कोई खासे ठंडे। यहां रहते मेरा यह पांचवां दिन है और मुझे कोई शिकायत नहीं। कम-से-कम पांच दिन और रहूं, तब कहीं ठीक-ठीक सुधार दिखाई देगा। यों दमा बहुत संभला हुआ है, लेकिन मैं अब भी टहलने नहीं जा सकता। घर से सड़क तक की थोड़ी-सी चढ़ाई मुझे भारी पड़ती है।

अली-भाइयों ने जो कदम बढ़ाया है, उसे मैं बिल्कुल पसंद नहीं करता। गांधीजी को इस मामले में मैंने जो खत लिखा है, उसकी नक़ल साथ भेज रहा हूं। राज ने मेरे लिए वह टाइप कर दी है। मैं अपने जी की बात आधी भी नहीं बता पाया हूं और मेरी चिट्ठी बेतरतीब है, फिर भी इससे पता चल जायगा कि मेरे मन में क्या विचार चल रहे हैं।

तुम्हारा स्नेही,
पिता

१९. मोतीलाल नेहरू की ओर महात्मा गांधी के नाम

चेस्टनट लॉज, अल्मोड़ा,
३ जून १९२१

प्रिय महात्माजी,

मैंने, अखबारों को दिये अली-भाइयों के बयान के बारे में ;परसों आपको लिखा था। ऐसा मैंने ३१ मई के 'इंडिपेंडेंट' में छपे एक संक्षिप्त विवरण की बुनियाद पर किया था। अभी-अभी मैंने पूरा बयान और उससे ताल्लुक रखनेवाले भारत सरकार के ऐलान को देखा और चैम्सफोर्ड क्लब में दी गई वाइसराय की तकरीर को भी पढ़ा है। बड़े अफसोस के साथ कहूंगा कि इन सबको पढ़कर मुझे कोई तसल्ली नहीं हुई है।

अली-भाइयों का बयान अपने-आपमें, और अगर उसे आगे-पीछे की घटनाओं के हवाले से न पढ़ा जाय तो, एक काफी मर्दानगी की चीज है। अगर तैश में आकर उन्होंने कुछ ऐसी बातें कह दी हैं, जिनसे उन्हें अब यह लगता है कि शायद वे हिंसा को भड़कायें, तो अफसोस जाहिर करके उन्होंने इज्जत के उसी रास्ते को अपनाया है, जो उन-जैसे जनता के खिदमतगार को अपनाना चाहिए था। आगे के लिए जो वचन उन्होंने दिया है उसे भी मैं वाजिब मान लेने के लिए तैयार होता, बशर्ते कि वह वचन अपने उन साथियों को दिया गया होता, जो उनके-जैसे न होकर हिंसा में किसी भी हालत में भी यकीन नहीं करते। लेकिन इस तरह के आम लफ्ज जैसे, "सार्वजनिक भरोसा और वादा उनसब लोगों के तईं, जिनके लिए जरूरी हो" आज की हालतों में किसीको भी इस शुबहे में नहीं रख सकते कि यह "भरोसा और वादा" किस खास जमात ने मांगा है और किसके कहने पर यह दिया गया है। वाइसराय की तकरीर ने अब उसे बिल्कुल साफ कर दिया है और हमारे सामने यह बात पक्के तौर पर आती है कि असहयोग-आंदोलन के नेता ने भारत सरकार से सुलह करली है और अली-भाइयों से खुलेआम माफी और वचन दिलवाकर उनपर मुकदमा चलाना रुकवा दिया है।

मामले को इस नज़र से देखते हुए, और मैं नहीं जानता कि और किस नजर से उसे देखा जा सकता है, पूरी तहरीक के बारे में विचार करने लायक बड़े संजीदा सवाल उठते हैं। दरअसल मुझे लगता है कि असहयोग का सारा उसूल ही छोड़ दिया गया है।

मैं उन लोगों में नहीं हूं जो सरकार के नाम से ही बिदकते हैं। न मैं उन लोगों में से हूं, जो यह समझते हैं कि आखिर में सरकार से समझौता करना ही अकेला ऐसा ज़रिया है जिससे हम अपने ऊपर होनेवाले जुल्मों को खत्म कर सकते हैं और स्वराज्य को कायम कर सकते हैं। मेरा भरोसा तो उस बात में है, जो आप बराबर सिखाते रहे हैं, यानी स्वराज्य हासिल करना एकदम हमारे ही हाथ में है। साथ ही मैं इस बात की संभावना को अलग नहीं करता, और जहांतक मैं जानता हूं, आप भी नहीं करते कि ठीक हालतों में सरकार से समझौता हो सकता है। लेकिन ऐसे समझौते का ताल्लुक सिर्फ उसूलों से हो सकता है, न कि आदमियों की सहूलियत और हिफाज़त से। साथ

काम करनेवालों में आप आदमी-आदमी के बीच फर्क नहीं कर सकते और छोटे-से-छोटा आदमी भी नेताओं के हाथों उसी हिफाज़त को पाने का हकदार है, जिसको कि बड़े-से-बड़ा आदमी। हमारे सैकड़ों नहीं तो बीसियों लोग अली-भाइयों से कहीं कम कड़ी बात कहने पर खुशी-खुशी जेल गये हैं, इनमें से कम-से-कम कुछ इसी तरह से माफी मांगकर या वचन देकर आसानी से बचाये जा सकते थे। लेकिन ऐसा करने की सलाह देने की किसीको नहीं सूझी, बल्कि नेताओं ने और सभी असहयोगी अखबारों ने उनके कदम की तारीफ की। एक मिसाल, जो खासकर औरों की बनिस्बत कहीं ज़ोर से इस वक्त मेरे मन में उठ रही है, वह हमीद अहमद की है, जिसे हाल ही में जिन्दगीभर के लिए कालेपानी और जायदाद की ज़ब्ती की सज़ा मिली है। मैं उस आदमी को निजी तौर पर जानता हूं। वह बड़ा ही सीधा-सादा है और अक्ल में औसत से भी कुछ कम है और कुछ अच्छा बोलनेवाला भी नहीं है। लेकिन उसने दूसरों की तकरीरें सुन और पढ़ रखी थीं और अपने ही ढंग से उनकी नकल करने की कोशिश करता था। ऐसा करने में शायद वह निशाने से बहक गया। लेकिन मुझे यकीन है कि दरअसल हिंसा का प्रचार करने का कभी उसका इरादा नहीं था। क्या कोई वजह है कि इस आदमी का बचाव न किया जाय? मुझे पता लगा है कि मुहम्मदअली ने ३० मई की अपनी बम्बई की तकरीर में उसकी बड़ी तारीफ की है। मैं नहीं कह सकता कि हमीद अहमद को एक ऐसे आदमी की इस तारीफ से क्या दिलासा मिलेगा, जिसने वैसे ही हालात में मांफी मांगकर और वचन देकर अपने को बचा लिया है। फिर न जाने कितने और लोग हैं, जो जेलों में सड़ रहे हैं, जिन्होंने कोई कसूर नहीं किया और कितने ही औरों को इसीके लिए छांट लिया गया है। क्या हमारे लिए इतना ही काफी होगा कि हम सुरक्षित स्थिति में रहते हुए इन लोगों को अपनी शुभकामनाएं भेजते रहें?

वाइसराय ने अपनी तकरीर में यह बात साफ करदी है कि आपने उनसे जो कई मुलाकातें कीं, उनका एक ही पक्का नतीजा रहा है और वह है अली-भाइयों का माफी मांगना और वचन देना। आपने अपनी बाद की तकरीर में यह बिल्कुल साफ कर दिया है कि हमारा आंदोलन बेरोक चलता रहना चाहिए। ऐसा जान पड़ता है कि इस तरह का कोई मसला तय नहीं

हुआ, जिसमें उसूल की बात हो, सिवा इसके कि हिंसा को कोई बढ़ावा न मिले और यह ऐसी बात थी कि जिसके लिए दोनों में से किसी ओर कोई समझौते की ज़रूरत नहीं थी। मैं यह नहीं कहता कि इस हालत में सरकार से बातचीत करने की कोई ज़रूरत नहीं थी, हालांकि इसकी हिमायत में भी बहुत-कुछ कहा जा सकता है। जब यह मालूम होगया था कि खेल तो आखिर तक खेला जायगा, तो आप और लार्ड रीडिंग जैसे इज़्ज़तदार प्रतिपक्षी के लिए यह बिलकुल मुनासिब होता कि खेल के कायदे तय करते, जिससे किसी तरफ से बेइमानी न हो। ये कायदे बेशक खेल में सभी हिस्सा लेनेवालों पर लागू होते, न कि कुछ इने-गिने अजीज लोगों पर। सबसे बड़ी ज़रूरत इस बात की थी कि कौन-कौन-से हथियार काम में लाये जायं, इसपर समझौता होजाय। कुछ स्थानीय सरकारें कहने को तो यह कह देती हैं कि वे प्रचार का जवाब प्रचार से दे रही हैं, पर दरअसल वे बुरे-से-बुरे ढंग से दमन कर रही हैं। इसी तरह के बहुत-से और मुद्दे मेरी राय में बातचीत के मुनासिब मुद्दे बन सकते थे, चाहे खास मुद्दे पर कोई समझौता न हुआ होता।

मैं उम्मीद करता हूं कि आप मुझे गलत न समझेंगे। अली-भाइयों की कुरबानी के लिए तारीफ में मैं किसीसे पीछे न रहूंगा, और इसे मैं अपनी बड़ी खुशकिस्मती मानता हूं कि मुझे उनकी खास दोस्ती हासिल हुई है। जो बात मेरे मन पर कुछ वक्त से वज़न डाल रही है, वह यह है कि हम लोग, जो अपने बहुत-से कार्यकर्ताओं के जेल जाने और दूसरी तकलीफों के भुगतने के लिए सीधे तौर पर ज़िम्मेदार हैं, खुद उन तकलीफों से बिलकुल बचे हुए हैं। मिसाल के लिए सरकार मुझे तकलीफ और दिमाग़ी परेशानी पहुंचाने के लिए इससे ज्यादा सज़ा का कोई तरीका नहीं निकाल सकती थी कि मेरे लिखे पर्चे बांटने पर वह बेकसूर लड़कों को जेल में डाले। मैं समझता हूं कि अब वह वक्त आगया है कि जब नेताओं को तकलीफ उठाने के मौकों का स्वागत करना चाहिए और बचाव के फुसलावों से बिल्कुल इन्कार कर देना चाहिए। मामले को इस निगाह से देखते हुए मैंने अली-भाइयों के काम पर ऐतराज़ किया है। निजी रूप में मैं उनसे प्यार करता हूं।

अब मैं बिल्कुल थक गया हूं। आपसे जल्द मिल पाता तो अच्छा होता। बातें करने के लिए इतना-कुछ है। यहां रहते मुझे चार दिन होगये हैं और

सेहत में कुछ सुधार हुआ है, लेकिन दमा बिल्कुल गया नहीं है और कमज़ोरी तो इतनी कभी नहीं जान पड़ी थी। बम्बई १४ तारीख की बैठक के लिए पहुंच पाऊंगा, इसमें बहुत शुबहा है।

आपका,
मोतीलाल नेहरू

२०. महात्मा गांधी की ओर से

[हिन्दुस्तान के असहयोग-आंदोलन में पहला सामूहिक जेल-यात्रा-काल दिसम्बर १९२१ में शुरू हुआ। दसियों हजार लोग कानून को खास तरीके से भंग करने के कारण कैदखाने भेज दिये गए। जब हमने सुना कि महात्मा गांधी ने इस आंदोलन को वापस लेने का अचानक हुक्म दे दिया है, तब हममें से ज्यादातर जेलखाने में थे। उनमें मेरे पिताजी भी शामिल थे। कारण यह बताया गया कि उत्तर प्रदेश के गोरखपुर ज़िले में चौरीचौरा के किसानों की एक उत्तेजित भीड़ ने एक पुलिस चौकी पर हमला करके उसे जला दिया और जो थोड़े-से पुलिसवाले वहां थे, उन्हें मार डाला। जेल में हम सबको बड़ा दुःख हुआ कि किसी गांव में लोगों के एक समूह के दुराचरण के कारण एक महान् आंदोलन इस तरह अचानक वापस ले लिया गया। महात्मा गांधी उस समय आज़ाद थे, यानी जेलखाने में नहीं थे। हमने जेलखाने से किसी तरह, जो कदम उन्होंने उठाया था उसपर, अपनी गहरी तकलीफ उनतक पहुंचा दी। यह पत्र गांधीजी ने उसी अवसर पर लिखा था। यह मेरी बहन सरूप (अब विजयालक्ष्मी पंडित) को मुलाकात में हमारे सामने जेल में पढ़कर सुनाने को दिया गया था।]

बारडोली,
१९ फरवरी १९२२

प्रिय जवाहरलाल,

मुझे मालूम हुआ है कि तुम सबको कार्य-समिति के प्रस्तावों पर भयंकर पीड़ा हुई है। मुझे तुमसे हमदर्दी है और पिताजी की बात सोचकर मेरा दिल टूटता है। उन्हें जो पीड़ा हुई होगी, उसकी मैं अपने मन में कल्पना कर सकता हूं। परन्तु मुझे यह भी महसूस होता है कि यह पत्र अनावश्यक है, क्योंकि मैं जानता हूं कि पहले आघात के बाद स्थिति सही

तौर पर समझ में आगई होगी। बेचारे देवदास की बचपन-भरी नासमझियों का हमारे दिमाग पर बहुत बोझा नहीं होना चाहिए। बिल्कुल संभव है कि उस गरीब लड़के के पैर उखड़ गये हों और उसका मानसिक संतुलन जाता रहा, परन्तु इससे इन्कार नहीं किया जा सकता कि असहयोग-आंदोलन से सहानुभूति रखनेवाली गुस्से से पागल भीड़ ने पुलिस के सिपाहियों की बहशियाना ढंग से हत्या की। इससे भी इन्कार नहीं किया जा सकता कि वह भीड़ राजनैतिक चेतना रखनेवाली भीड़ थी। ऐसी साफ़ चेतावनी पर ध्यान न देना बड़ा अपराध होता।

मैं बता दूं कि यह चरम सीमा थी। वाइसराय के नाम मेरी चिट्ठी शंकाओं से खाली नहीं थी, जैसाकि उसकी भाषा से ज़ाहिर है। मद्रास की करतूतों से भी मैं बहुत अशान्त हुआ था, लेकिन मैंने चेतावनी की आवाज़ को दबा दिया। मुझे कलकत्ता, इलाहाबाद और पंजाब से हिन्दुओं और मुसलमानों के पत्र मिले थे। यह सब गोरखपुर की घटना से पहले की बात है। उनका कहना था कि सारा दोष सरकारी पक्ष का ही नहीं है; हमारे लोग आक्रमण-कारी, हेकड़ और धमकानेवाले बनते जा रहे हैं, हाथ से निकले जा रहे हैं और उनका रवैया अहिंसक नहीं है। जहां फीरोज़पुर जिरके की घटना सर-कार के लिए अपयशकारी है वहां हम भी एकदम निर्दोष नहीं हैं। हकीम-जी ने बरेली के बाबत शिकायत की। मेरे पास झज्जर के बारे में कड़ी शिका-यतें हैं। शाहजहांपुर में भी टाउन हाल पर ज़बरदस्ती कब्ज़ा करने की कोशिश की गई। कन्नौज से भी खुद कांग्रेस के मंत्री ने तार दिया कि स्वयं-सेवक उद्दंड होगये हैं और हाईस्कूल पर धरना लगाकर सोलह वर्ष से छोटे लड़कों को स्कूल जाने से रोक रहे हैं। गोरखपुर में छत्तीस हज़ार स्वयंसेवक भरती किये गए, जिनमें से सौ भी कांग्रेस की प्रतिज्ञा का पालन नहीं करते। जमनालालजी मुझे बताते हैं कि कलकत्ता में घोर असंगठन है। स्वयंसेवक विदेशी कपड़े पहनते हैं और अहिंसा की प्रतिज्ञा से कतई बंधे हुए नहीं हैं। ये सब खबरें और दक्षिण से इससे भी ज्यादा खबरें मेरे पास थीं; तब चौरीचौरा के समाचारों ने बारूद में ज़बरदस्त चिनगारी का काम दिया और आग लग गई। मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूं कि अगर यह चीज़ मुल्तवी न कर दी जाती तो हम एक अहिंसक आन्दोलन के बजाय असल में हिंसक संग्राम को चलाते।

यह बेशक सच है कि देश के एक कोने से दूसरे कोने तक अहिंसा गुलाब के इत्र की खुशबू की तरह फैल रही है। परन्तु हिंसा की दुर्गंध भी अभी तक जबरदस्त है और इसकी उपेक्षा करना, उसे तुच्छ समझना, बुद्धिमानी नहीं है। हमारे इस तरह पीछे हटने से काम आगे बढ़ेगा। आन्दोलन अनजाने में सही रास्ते से हट गया था। अब हमने अपनी पतवार फिर संभाल ली है और सीधे आगे जा सकते हैं। घटनाओं को सही रूप में देखने के लिए तुम्हारी स्थिति जितनी प्रतिकूल है मेरी उतनी ही अनुकूल है।

दक्षिण अफ्रीका का मेरा अपना अनुभव बताऊं ? जेलों में हमारे पास तरह-तरह की खबरें पहुंचाई जाती थीं। अपने पहले अनुभव के दो-तीन दिनों में तो मैं इधर-उधर के समाचार सुनकर खुश होता रहा, लेकिन मैंने फौरन समझ लिया कि इस रिश्वतखोरी में मेरा दिलचस्पी लेना बिल्कुल व्यर्थ है। मैं कुछ कर नहीं सकता था। मेरे किसी सन्देश के भेजने से कोई लाभ नहीं था और मैं व्यर्थ अपनी आत्मा को कष्ट पहुंचाता था। मैंने अनुभव किया कि जेल में बैठकर आन्दोलन का पथ-प्रदर्शन करना मेरेलिए असंभव है। इसलिए मैं तो तबतक प्रतीक्षा ही करता रहा जबतक बाहरवालों से मुलाकात होकर खुलकर बातें नहीं हुईं। फिर भी मेरी बात सच मानों कि मैंने दिमागी दिलचस्पी ही ली; क्योंकि मैंने महसूस किया कि किसी बात का निर्णय करना मेरे अधिकार के बाहर है और मुझे मालूम होगया कि मैं बिल्कुल सही रास्ते पर हूं। मुझे याद है कि किस तरह हर बार मेरे जेल से छूटने के समय तक जो विचार बनते थे, वे रिहाई के बाद और रूबरू जानकारी मिलने पर तुरन्त बदल जाते थे। जो हो, जेल के वायुमंडल के कारण हमारे मन में सारी बातें नहीं रहतीं। इसलिए मैं चाहूंगा कि तुम बाहर की दुनिया को अपने खयाल से ही निकाल दो और यही समझ लो कि वह है ही नहीं। मैं जानता हूं कि यह काम बहुत ही कठिन है, परन्तु यदि कोई गंभीर अध्ययन शुरू कर दो और कोई शरीर-श्रम का काम हाथ में ले लो तो यह काम हो सकता है। सबसे बड़ी बात यह है कि तुम कुछ भी करो, मगर चर्खे से न उकताओ। तुम्हारे और मेरे पास बहुत-सी बातें करने और बहुत-सी मान्यताएं रखने पर अपने-आपसे अरुचि होने के कारण हो सकते हैं, मगर इस बात पर अफसोस करने का कभी कारण नहीं मिलेगा कि हमने चर्खे पर श्रद्धा केन्द्रित क्यों कर ली या

मातृभूमि के नाम पर हमने रोज इतना अच्छा सूत क्यों काता। तुम्हारे पास 'सांग सिलेशियल' है। मैं तुम्हें एडविन आर्नल्ड जैसा बेमिसाल अनुवाद तो नहीं दे सकता, मगर मूल संस्कृत का उल्था यों है, "शक्ति बेकार नहीं जाती, नष्ट तो होती ही नहीं। थोड़े-से धर्म से भी मनुष्य कई बार गिरने से बच जाता है।" इस धर्म का आशय कर्मयोग से है और हमारे युग का कर्म-योग चर्खा है। प्यारेलाल के मार्फत तुमने मुझे खून सुखानेवाली खुराक पिलाई है, उसके बाद तुम्हारा उत्साहवर्धक पत्र आना चाहिए।

तुम्हारा,
मो. क. गांधी

प्रिय सरूप,

अगर तुम्हारा खयाल हो कि उपरोक्त पत्र से लखनऊ के बंदियों को कुछ ढांढ़स मिल सकता है तो अगली मुलाकात में जवाहरलाल को पढ़कर सुना देना। वैसे भी मुझे जरूर बताना कि वहां के क्या हाल-चाल हैं। आशा है, तुम लोगों में से कोई दिल्ली आ रहा है। तुम्हारे नाम पिताजी के पत्रों में से एक रणजीत ने मेरे पढ़ने के लिए भेजा था।

तुम्हारा,
बापू

बारडोली
२०. २. १९२२

प्यारेलाल बताते हैं कि तुम्हारे नाम भेजे हुए पत्र देर से मिल सकते हैं। इसलिए यह पत्र दुर्गा के मार्फत भेजा जा रहा है।

[हममें से अधिकांश गांधीजी को 'बापू' कहकर पुकारते थे, जिसका अर्थ पिता होता है। दरअसल, भारत के बहुसंख्यक लोग उन्हें 'बापू' ही कहते थे।]

२१. सरोजनी नायडू की ओर से

ताजमहल होटल,
बम्बई,
३ जून १९२३

प्रिय जवाहर,

शाबाश! हम हिम्मत से तूफान का सामना करेंगे और इस सलाह पर

चलेंगे कि हमारा काम संग्राम और हमारी शांति विजय है। मेरे विचार से बकरीद के सवाल पर पूरे[1] सम्मेलन का सुझाव बिल्कुल ठीक है और उसके लिए जगह कई कारणों से नागपुर की बजाय इलाहाबाद ही ज्यादा मुनासिब है। मंशा यह है कि खिलाफ़त और कांग्रेस की कार्यकारिणी समितियों की संयुक्त बैठक हो सके।

नागपुर-सत्याग्रह का संगठन तो ठीक है, कमी सिर्फ यही है कि स्थानीय लोग उसमें हिस्सा नहीं ले रहे हैं। इस खयाल से जबलपुर-सत्याग्रह सचमुच ज्यादा खरा है, और छानबीन करने पर मुझे पता लगा कि जबलपुर को उन्हीं लोगों ने धोखा दिया, जिन्होंने उसे उकसाया था और उसके लिए पंद्रह हजार रुपये का अनुदान देकर जाब्ते से समर्थन किया था। जो हो, मैंने उनसे कहा है कि टाउन-हाल के मामले में सारे सत्याग्रह को २० तारीख तक रोक दें। उनकी इस धारणा को ध्यान में रखते हुए कि वे पुरानी कार्यकारिणी के समर्थन से काम कर रहे हैं सत्याग्रह फौरन बन्द करने का आदेश देना अन्याय होता।

बुजुर्गवार राजगोपालाचार्य का आचरण धक्का पहुंचानेवाला है और उसके साथ ही अचक सचाई से दूर है।

स्वराज पार्टी यहां खत्म-सी है और मैंने सुना है कि पटेल स्वराज पार्टी के उम्मीदवारों के खिलाफ कुछ औरों को खड़ा कर रहे हैं। सी. आर. दास दक्षिण में अपने भाषणों से स्थिति को खासा नाजुक बनाये दे रहे हैं।

जो हो, जबतक सुमेल का रत्न न मिल जाय, हम लोगों को समुद्र-मंथन करते ही रहना चाहिए। पर पहले बकरीद से तो निबट लें। इंशाअल्लाह वह जरूर पूरा होगा!

सप्रेम,
बहन सरोजिनी

---

[1] श्रीमती सरोजिनी नायडू के पत्रों की लिखावट को पढ़ना बड़ा कठिन है। जहां हम समझने में असफल रहे, वहां उनकी पुत्रियों—कुमारी पद्मजा नायडू और कुमारी लीलामणि नायडू की सहायता लेनी पड़ी। यहां 'पूरे' (Full) शब्द से बहुत अधिक अर्थ नहीं निकलता, पर हममें से किसीको भी इससे अधिक उपयुक्त शब्द नहीं सूझ सका।

[स्वराज पार्टी को देशबन्धु चित्तरंजन दास और पं. मोतीलाल नेहरू ने कौंसिल-प्रवेश के उद्देश्य से कांग्रेस के अन्तर्गत स्थापित किया था। इसके फलस्वरूप कौंसिल-प्रवेश के पक्षपातियों और विरोधियों में झगड़ा उठ खड़ा हुआ। कौंसिल-प्रवेश के पक्षपाती परिवर्तनवादी और उसके विरोधी अपरिवर्तनवादी कहलाये। श्री राजगोपालाचार्य अपरिवर्तनवादियों के नेता थे। इस नये घटनाक्रम के समय मैं जेल में था।]

२२. महादेव देसाई की ओर से

[महादेव देसाई गांधीजी के सेक्रेटरी और प्रिय शिष्य थे।]

देहन (सूरत होकर),
५ जुलाई १९२३

प्रिय जवाहरलाल,

मैं तो तुमसे मिलने की आशा लगाये हुए था और सोचता था कि तुम्हारे लम्बे और स्नेहपूर्ण पत्र का उत्तर दिल खोलकर बातें करके दूंगा। मगर ऐसा न होना था। २ तारीख को हृदय की धड़कन बन्द हो जाने से अचानक मेरे पिताजी चल बसे। मैं उस समय आश्रम में था। भाग्य में इतना भी संतोष नहीं बदा था कि उनकी अन्तिम घड़ियों में मैं उनके पास होता। तुम्हें तो एक विलक्षण सच्चे पिता का पुत्र होने का सौभाग्य प्राप्त है, इसलिए मेरे दुःख की कल्पना कर सकते हो। पिताजी के कारण पिछले छः-सात वर्षों में मेरे जो जी में आई, करता रहा। उन्होंने मुझे घर की झंझटों से बिल्कुल मुक्त रखा और जो मुझे अच्छा लगा, वही प्रेमपूर्वक करने दिया। मैं तो तुच्छ और निकम्मा हूं, मगर वह मुझे देख-देखकर जीते थे, जैसे पंडितजी तुम्हें देखकर जीते हैं; इसलिए मुझे भयंकर पीड़ा है कि मैंने उनके लिए कोई भी ऐसी बात नहीं की, जिसे कल्पना की खींचतान करके भी सेवा कहा जा सके। वह मेरेलिए घोर परिश्रम करते रहे और मैं उसके फल तो भोगता रहा, मगर उसका बदला कभी नहीं दे सका। प्रभु मुझे कैसे क्षमा करेगा? जब मुझें ये विचार सता रहे थे, तब मुझे पंडितजी का ध्यान आया और मैंने उन्हें कुछ पंक्तियां लिख दीं। अगर तुम समझो कि बीमारी में उन्हें इनसे कष्ट नहीं होगा तो जहां भी वह हों, उनके पास भेज देना।

मेरा जी ठिकाने नहीं है कि राजनीति की बात सोच सकूं। मगर मेरा खयाल है कि अगर तुम ऐसा प्रस्ताव पास करा सको, जिससे प्रान्तों को काम करने की स्वतंत्रता मिल जाय तो सारा झगड़ा खत्म हो जाय। पता नहीं, नागपुर के मामले में तुम क्या करोगे, लेकिन मुझे भरोसा है कि तुम मजबूत रवैया अपनाओगे।

बहुत-बहुत प्यार।

सप्रेम,
महादेव

२३. महादेव देसाई के नाम

अगस्त १९२३

प्रिय महादेव,

यह कुछ अजीब बात है कि जिन पत्रों को लिखने की हमारी सबसे ज्यादा इच्छा रहती है, वे अक्सर देर में लिखे जाते हैं। जाब्ते के नोट और कामकाजी चिट्ठियां तो चली जाती हैं, पर जिन चिट्ठियों को लिखने का हम सबसे ज्यादा विचार करते हैं, वे बिना लिखी रह जाती हैं। ६ या ७ अगस्त से, जबकि तुम्हारा मार्मिक पत्र मुझे नागपुर में मिला, मैं हर रोज तुम्हारे और उस पत्र के बारे में सोचता रहा हूं। खबर मुझे नागपुर स्टेशन पर गाड़ी से उतरते ही मिली। रामदास ने मुझे बताई। मेरा दिल तुम्हारे दुःख से दुखी हुआ, क्योंकि मैं अच्छी तरह समझता था कि तुम कैसी तकलीफ में होगे। हममें से कुछ, जिन्होंने भूलें की हैं या काफी कसूर किये हैं, दुनियादारी के मामले में मजबूत होगये हैं, लेकिन वे ही बातें तुम्हारे जैसे सीधे आदमी को ज्यादा मुश्किल मालूम होंगी और मैं तुम्हारी कसक और आत्मनिंदा की मनोदशा को अच्छी तरह समझ सकता हूं।

मुझे भी पिता के प्रेम की गहराइयों को अनुभव करने का सौभाग्य मिल रहा है और अनेक बार मैंने सोचा है कि क्या उस प्रेम और लालन-पालन का, जो जन्मदिन से मुझपर बरसाया गया है, मैं किसी भी रूप में कुछ बदला चुका सका हूं? मुझे इस सवाल का सामना अक्सर करना पड़ा है और हर बार मुझे अपने किये पर शरम आई है। कभी बड़े सवाल बीच में आ पड़े हैं और मैं परेशान और कशमकश में रहा हूं और क्या करना चाहिए, यह नहीं जान सका हूं। बापू ने, सत्याग्रह-सभा के पुराने दिनों में, जब मेरे मन का

संघर्ष सहने की सीमा को पार कर गया था, मुझे जो सलाह दी थी, वह मैं कभी नहीं भूलूंगा। उनके तसल्ली देनेवाले शब्दों ने मेरी दिक्कतें कम कीं और मुझे कुछ शांति मिली। तुम्हें मार्च १९१९ के वे दिन याद हैं, जब तुम और मैं पहली बार दिल्ली में प्रिंसिपल रुद्र के घर पर मिले थे? बापू, तुम, मैं और वह छोटा डाक्टर साथ-साथ इलाहाबाद गये और फिर एक या दो दिन बाद तुम लखनऊ या शायद बनारस चले गये थे। जो हो, 'बी.' के सुझाव पर मैं तुम्हारे साथ प्रतापगढ़ तक गया और रास्ते में वह और मैं बात करते रहे। यह मेरी उनके साथ पहली गंभीर और काफी लंबी चर्चा थी—चार बरस पहले। ये साल कितने लंबे लगते हैं!

तुम्हारे पिता से मिलने का मुझे सौभाग्य नहीं हुआ, लेकिन सिविल वार्ड के हमारे बगीचे में तुमने उनके बारे में मुझे बताया था। मैं भली-भांति इसकी कल्पना कर सकता हूं कि उन्हें अपने बेटे पर गर्व रहा होगा और इस बात पर पूरा-पूरा संतोष रहा होगा कि उनकी तकलीफों और मेहनत का कितना कीमती नतीजा निकला। तुम अपनेको बेकार दुखी कर रहे हो। अपने पिता से सेवा का जो पाठ तुमने सीखा, उसे तुम बाहर दुनिया में पहुंचा रहे हो और निश्चय ही अपनी निजी मिसाल से तुमने बहुतों पर असर डाला है। तुम्हारे पिता इसे बुरा नहीं मान सकते थे, और न यही पसंद करते कि तुम देश की व्यापक सेवा छोड़कर गृहस्थी के तंग दायरे में रहो।

मैं थका हूं और मेरा दिल बेचैन है। नागपुर मेरेलिए एक बहुत ही दुखभरा तजुरबा रहा है। मैं यहां कुछ समय के लिए भीड़-भाड़ से दूर रहकर घूमने के इरादे से आया था। लेकिन पिताजी के फिर से बीमार पड़ने की वजह से ऐसा न कर सका। अपनी आदत के खिलाफ मैंने खुद बुखार बुला लिया, लेकिन अब उससे मैंने छुटकारा पा लिया है।

जवाहरलाल

२४. मोतीलाल नेहरू की ओर से

[१९२३ में नाभा राज्य के अधिकारियों ने मुझे अचानक कैद कर लिया था और बाद में मुझपर बहुत-से इलजाम लगाये, जिनमें एक साजिश का भी था। मेरे पिताजी ने जब इसे सुना तो वह बड़े परेशान हुए, खासकर इसलिए कि बहुत-सी देशी रियासतें क़ायदे-कानूनों से बंधकर नहीं चलतीं

थीं। वह मुझसे जेल में मिले और मुझे रिहा कराने के लिए चिंतित थे। इससे मुझे तकलीफ हुई, क्योंकि मैं नहीं चाहता था कि वह सरकार से कोई रियायत चाहें।]

२८ सितम्बर १९२३

मेरे प्यारे जवाहर,

मुझे यह जानकर तकलीफ हुई कि मेरी कल की मुलाकात ने तुम्हें कोई राहत पहुंचाने की बनिस्वत तुम्हारी जेल की सुखी जिंदगी के ढर्रे को बिगाड़ दिया। बहुत बेचैनी से सोचने के बाद मैं इस नतीजे पर पहुंचा हूं कि फिर तुमसे मुलाकात करने में न तुम्हारा फायदा है, न मेरा। तुम्हारी गिरफ्तारी के बाद से जो कुछ मैंने किया है, उसके लिए मैं साफ दिल से ईश्वर और इन्सान के सामने खड़ा हो सकता हूं; लेकिन चूंकि तुम्हारा विचार कुछ और ही है, इसलिए अलग-अलग छोरों के मिलाने की कोशिश बेकार है।

मैंने कुछ बातें नोट की हैं और उन्हें कपिल के साथ भेज रहा हूं। उनमें कोई नई बात नहीं, लेकिन मैंने इसे अपना फर्ज समझा कि जो भी थोड़ा-बहुत कर सकता हूं, कर दूं, यह जानते हुए भी कि मेरे दिमाग की इस वक्त जो हालत हो रही है, उसमें बहुत काम की चीज नहीं बन पड़ेगी। अब कपिल जो भी खबर लायेंगे उससे तसल्ली करूंगा। फिलहाल मेरी समझ में नहीं आता कि मैं करूं तो क्या करूं और यहां कुछ दिन इंतजार ही करूंगा। मेरी बिल्कुल फिक्र न करना। जिस तरह तुम जेल में खुश हो, उसी तरह मैं जेल से बाहर खुश हूं।

सप्रेम तुम्हारा,
पिता

फिर से—

ऐसा कभी न समझना कि मैंने यह खत गुस्से में या रंज में लिखा है। करीब-करीब सारी रात सोच-विचार के बाद मैंने हालात को ठंडे दिमाग से और अमली ढंग से देखने की कोशिश की है। मैं चाहता हूं कि तुम यह खयाल न करो कि तुमने मुझे चोट पहुंचाई है, क्योंकि मैंने ईमानदारी से यकीन किया है कि हम दोनों वाकयात की वजह से ऐसी हालत में पड़ गये हैं, जिनपर हम दोनों में से किसीका काबू नहीं है।

२५. मौलाना मोहम्मदअली की ओर से

भुवाली, यू. पी.
७ नवम्बर १९२३

प्रिय जवाहर,

तुम्हारे १ नवम्बर के खत के लिए बहुत-बहुत शुक्रिया। जालन्धर, अमृतसर और खासतौर पर लाहौर में, जहां के 'नेताओं' में हद दरजे की दिमागी कोताई है, हमें तुम्हारी गैरमौजूदगी बहुत ज्यादा अखरी। ज़रा गौर तो करो कि 'असहयोगी लोग', जो इस बात पर जोर देते थे कि वकील अपनी वकालत छोड़ दें, अब इस बात पर झगड़ रहे हैं कि पंजाब का सहयोग मंत्री (जो इत्तफाक से मुसलमान है) हिन्दू और मुसलमानों में किस हिसाब से नौकरियों का बंटवारा करता है। सन्तानम् और कुछ थोड़े-से दूसरे लोगों को छोड़कर मुझे लाहौर के इन नेताओं में गांधीवाद की ज़रा भी झलक नहीं मिली, और इसी पंजाब की जिल्लत ने सारे हिन्दुस्तान की आंखें खोल दी हैं। वाकई पंजाब मेरे लिए एक कभी न सुलझनेवाली पहेली है। ऐसे लोग ही हैं, जो मौकों पर इतनी बहादुरी दिखाते हैं, जिनकी तादाद ब्रिटिश हिन्दुस्तानी फौज में सबसे ज्यादा है और जिनका पारा ज़रा-सी देर में चढ़ जाता है, अंग्रेजों की अपने ऊपर की गई बेहिसाब बेइज्जतियों को इतनी जल्दी भूल जायं, और परदेशी जालिमों के पैरों-तले रहना बर्दाश्त करें, बजाय इसके कि छोटी-छोटी बेकार बातों के लिए आपस में झगड़ना बंद करें। यह बात मेरी समझ से बिल्कुल बाहर है। हम लोगों ने वेंकटप्पैया को राजी कर लिया है कि सिखों के मसले को सुलझाने के लिए वह अमृतसर कांग्रेस वर्किंग कमेटी का इजलास करें। इसमें कोई शक नहीं कि पंजाब और यू. पी. के फिरकेवारान झगड़ों पर भी हम लोग चर्चा करेंगे। तुम्हारी मौजूदगी जरूरी है और अगर तुम फिर बीमार पड़े तो मैं तुम्हें माफ नहीं करूंगा। अपनी सेहत ठीक रखो और अमृतसर में ठीक फैसले करने में हमारी मदद करो। मैं वहां १२ तारीख को लखनऊ मेल से पहुंच जाऊंगा।

इलाहाबाद में रीडिंग के स्वागत के सिलसिले में अगर तुमने लिखकर असलियत से मुझे वाकिफ न कराया होता तो शायद 'लीडर' में छपे

जोशीले ब्यौरे को पढ़कर मुझे शक हो जाता कि कहीं इलाहाबाद के लोग तुम्हारे और पिता के तईं और उन ऊंचे मकसदों के तईं जो तुमने उनके सामने रखे हैं, वफादार नहीं रहे। लेकिन हम 'लीडर' को भी तो खूब जानते हैं! उसके वम्बई के खबर भेजनेवाले नें यह ऐलान करनें की हिमाकत की थी कि मेरे वम्बई पहुंचने पर मुश्किल से पचास आदमी स्टेशन पर मुझे लेने आये थे, जबकि वाकया यह है कि फोटोग्राफर और सिनेमावाले स्टेशन पर मौजूद थे और इतवार के 'वाम्बे क्रॉनिकल' ने जो तस्वीर छापी है, उसमें तुम शायद दो से तीन हजार तक लोग तो गिन ही सकते हो। मैं इतना जानता हूं कि मेरे और अम्मा के वास्ते जो गाड़ी खड़ी थी उसतक पहुंचने के लिए मुझे भीड़ चीरकर रास्ता बनाना पड़ा। खैर, हम लोग 'लीडर' और उसके 'मंसूवों' से वाकिफ हैं।

इन्दू, श्रीमती जवाहरलाल (कमलाजी), 'स्वरूप आपा' (श्रीमती स्वरूपरानी) और पिता को मेरा प्यार।

तुम्हारा,
मोहम्मदअली

२६. मौलाना मोहम्मदअली की ओर से

[मौलाना मोहम्मदअली मशहूर अली-भाइयों में से एक थे। अली-भाई हिन्दुस्तान में खिलाफत-आंदोलन के नेता थे। सन् १९२० के राष्ट्रीय आंदोलन और असहयोग में अली-भाइयों ने खास हिस्सा लिया। अली-भाइयों में मौलाना शौकत अली जेठे थे। आगे के पन्नों में उनका भी एक खत है। मौलाना शौकतअली ऊंचे कदवाले मोटे और भारी-भरकम आदमी थे। उनका जिक्र 'बड़े भाई' के नाम से किया जाता था।]

फेयरी विला,
भुवाली, यू. पी.
१९२३

प्रिय जवाहर,

अपनी रिहाई के बाद अपने ही सूबे की जो पहली सियासी कान्फ्रेंस हुई, उसमें शामिल न हो सकने की मजबूरी से मुझे कितना अफसोस है, यह मैं तुमसे बयान नहीं कर सकता, लेकिन मैं समझता हूं, मेरे बेजाप्ता तार से तुम्हें इत्मीनान होगया होगा कि अगर जरा भी मुमकिन होता तो मैं तुम्हारे

साथ ही होता। दिल्ली से लौटने पर मेरी तबीयत खराब रही। कई रोज़ तक बुखार रहा। नतीजा यह कि पहली अक्तूबर को अल्मोड़ा जाने का जो मेरा प्रोग्राम रखा गया था, वह मुझे छोड़ना पड़ा। अभी बीमारी से उठा ही था कि अल्मोड़े का एक मजबूत जत्था मुझे सिविल नाफरमानी के इस मजबूत किले में ले आया और मुझे पुराने दोस्त सर विलियम मैरिस (या मैलिस—दुश्मनी) के पीछे-पीछे एक नेमिसिस[१] की तरह वहां जाना पड़ा।

मेरे यहां से दिल्ली जाने के बाद मेरी लड़की का बुखार काफी उतर गया। उन दिनों यहां मौसम खुश्क और खुला था। औसतन तीसरे पहर को बुखार १००° और शाम को १०१° रहता था, लेकिन मेरे लौटने से एक-दो दिन पहले फिर यहां बारिश शुरू होगई। नतीजा यह हुआ कि आगे के दस दिनों तक बुखार धीरे-धीरे बढ़कर फिर १०३° पर पहुंच गया। लेकिन ५ तारीख से अमीना फिर बेहतर है। अब तीसरे पहर उसका बुखार १००° रहता है और शाम को १०१.४° हो जाता है। दरअसल मुझे उम्मीद है कि अक्तूबर में उसकी सेहत बहुत सुधर जायगी। मैं चाहूंगा कि अक्तूबर के पूरे महीने में उसके पास रहूं, ताकि इस मौसम में उसकी ठीक-ठीक देखभाल हो सके और इस तरह पूरा-पूरा फायदा उठाया जा सके। लेकिन शौक़त किसी दिन भी अब जेल से रिहा हो सकते हैं और उसकी वजह से मुझे लगातार घूमना होगा। मैं अब बम्बई जा रहा हूं। अगर शौक़त की रिहाई आखिरी दिन यानी ३१ अक्तूबर से पहले न हो सकी, तो मैं ७ नवम्बर से पहले लौटने की उम्मीद नहीं कर सकता। कुदरतन अमीना नहीं चाहती कि मैं उसे छोड़कर जाऊं। बड़ी मुश्किल से उसने मुझे १७ और १८ तारीख के लिए जालंधर जाने की इजाजत दी है। इस काम के लिए १५ तारीख को यहां से रवाना होने का मेरा इरादा था, लेकिन चूंकि मौलाना अब्दुल बारी ने, जिन्होंने बड़ी मेहरबानी से मुझे लखनऊ जाने से माफी दी थी और जो खुद यहां आना चाहते थे और दो बार जिनकी रवानगी मजबूरन रुक गई, अब भुवाली से १४ तारीख को लखनऊ जाना तय किया है। वहां से मैं १६ को जालन्धर चला जाऊंगा। १६ को पंजाब मेल में तुम भी मेरे साथ चलना। हमें बहुत-सी बातें करनी हैं और फैसले करने हैं।

---

१ गुनाहों की सज़ा देनेवाली एक यूनानी देवी

अपनी न टलनेवाली गैरमौजूदगी का मुझे बड़ा अफसोस है। मेहरबानी करके इसकी इत्तिला अपनी कान्फ्रेंस को दे देना। सच मानो, अगर मैं वहां आ सकता, तो आनाकानी न करता। उम्मीद है कि तुम्हारी कान्फ्रेंस यू. पी. के माथे से इस कालिख को जल्दी-से-जल्दी मिटा देगी कि वह बिखरा हुआ सूबा है।[1] सूबाई कांग्रेस की बैठक को काशी की पाक मिट्टी से मजबूत संगठन—नेशनल कांग्रेस के संगठन—का पैगाम भेजना चाहिए, ऐसे संगठन का पैगाम, जिसका मकसद हो यूरोप के पैरोंतले अनगिनत तकलीफ और बेइज्जती बर्दाश्त करती, गिरी और दबी इन्सानियत को मजबूत करना; और इस कान्फ्रेंस से हम सब लोग सचमुच 'शुद्ध' होकर जायं—सब तरह की तंगदिली, दकियानूसी और बेबरदाश्तगी से पाक होकर, ताकि हम अपने वतन को गुलामी की जंजीरों से आजाद कर सकें—उस गुलामी से जो सिर्फ बदन की ही गुलामी नहीं है, बल्कि जमीर की भी है। खुदाबंदताला तुम्हारी कोशिशों को कामयाब करे और अपनी रहमत से हम सबको फतह के लिए नया हौसला, मजबूती और इरादा बख्शे। अगर काशी में अब भी पुराने जमाने की रूहानियत का कुछ भी हिस्सा बाकी है तो हमें अपने सिपहसालार गांधीजी के काम को मजहबी लगन और फकीराना तरीके से फिर से शुरू कर देना चाहिए। सिर्फ इसी रास्ते पर चलने से हिंदुस्तान को, पूरब को, सच यह कि सारी इन्सानियत को, निजात मिल सकती है।

तुम सबको प्यार।

तुम्हारा,
मोहम्मदअली

२७. लाला लाजपतराय की ओर से

दी तिलक स्कूल ऑव पालिटिक्स,
लाहौर,
१९ नवम्बर १९२३

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारी चिट्ठी मिली। श्री तारकनाथ दास का खत मैंने पढ़ लिया। वह

---

[1] मौलाना ने यहां यू. पी.—यूनाइटेड प्रॉविन्सेज—के नाम पर व्यंग किया है। यूनाइटेड का मतलब संयुक्त—एक—होता है, जबकि वह सूबा अपनी फूट के लिए बदनाम था।

लौटा रहा हूं। उनके कुछ सुझाव अच्छे हैं और कांग्रेस के नेताओं को उनपर जरूर विचार करना चाहिए। मैं उम्मीद करता हूं कि कोकानाडा में या इससे पहले भी उनपर विचार करने का मौका मिलेगा। 'अकाली रक्षा समिति' के संबंध में तुम्हारे पिताजी ने अकाली नेताओं के साथ जो व्यवस्था की थी, उसके बारे में मुझे अभीतक कोई सूचना नहीं मिली और जबतक मुझे उनसे कोई खबर न मिले, तबतक मैं कोई कदम नहीं उठाना चाहता। मैं अपने में काफी ताकत महसूस नहीं कर रहा हूं, और मुमकिन है कि कुछ दिनों के लिए मैं यकायक गायब हो जाऊं। मैंने तुम्हारा प्रोग्राम नोट कर लिया है और उसमें मुझे कोई ऐतराज नहीं है। आशा है, तुम अपनी सेहत का ध्यान रखोगे। एक ऐसे आदमी की सलाह, जो खुद अपनी तन्दुरुस्ती का ध्यान नहीं रखता, तुमको अजीब-सी लगेगी।

सप्रेम तुम्हारा,
लाजपतराय

[तारकनाथ दास हमारे कांग्रेस-कार्य के बारे में अक्सर तरह-तरह के सुझाव देते रहते थे।

अकाली सिख उस समय गुरुद्वारों के बारे में आन्दोलन कर रहे थे और उनके अनेक नेता गिरफ्तार कर लिये गए थे। कांग्रेस उनकी पैरवी करने में मदद दे रही थी।]

२८. मौलाना शौकतअली की ओर से

सुलतान मैनशन,
डोंगरी, बम्बई
२९ नवम्बर १९२३

मेरे प्यारे जवाहर,

लो अपने हाथ से मैं ये चंद सतरें लिख रहा हूं। तुम्हारा बड़ा भइया चोरों और कसाइयों के हाथों में पड़ गया था, जिन्होंने उसके 'गोश्त की बोटियों' के लिए खास पसंदगी दिखाई। मेरा जख्म अभी तक ताजा है और मुझे चैन नहीं लेने देता। जहांतक आराम और चैन का सवाल है फिलहाल तो हमारे लिए वह मुमकिन नहीं, इसलिए कि अव्वल तो अजीज़ मुलाकातियों से मिलने से इन्कार नहीं किया जा सकता; फिर मेरे लिए

धंधे के सिलसिले में बहुत-सा काम करने को पड़ा था और इन सबसे ज्यादा मेरी दिमागी मसरूफियत है। ताहम अब मैं बेहतर महसूस कर रहा हूं और ४ तारीख को तुम्हारे पास इलाहाबाद पहुंचने की उम्मीद रखता हूं, इसलिए नहीं कि वहां मानपत्रों के जरिये इज्जत मिलेगी, जिसकी कि मैं कद्र करता हूं और इसलिए भी नहीं कि वहां के कारकून लोग मिलेंगे और उनसे साफ बातें होंगी, बल्कि इसलिए कि एक मर्तबा फिर तुमसे इतमीनान से बातें करने को मिलेंगी। मुझे पूरा यकीन है कि मुल्क को एक साफ, आगे ले जाने-वाली और बहादुराना पालिसी की जरूरत है और अल्लाह ने चाहा तो हम स्वराज्य लेकर रहेंगे और फिर अपने 'प्यारे नेता' को रहनुमाई के लिए अपने बीच पायंगे। या हजारों की तादाद में हम उनके पास जेल में पहुंचेंगे और वहीं जेल के भीतर अपनी कान्फ्रेंसें करेंगे। मेरे अंदर सस्ती शहादत की कोई तमन्ना नहीं है और जेल में रहने के बजाय मैं आजाद रहना पसन्द करता हूं। लेकिन मैं महज काम करने के लिए आजाद रहना चाहता हूं, न कि आवारागर्दी या ठाली बैठने के लिए। बाकी बातें मिलने पर होंगी। मां, कमलाबहन, स्वरूपबहन, छोटी इन्दू और नेहरू-खान्दान के तमाम लोगों को, जिनमें उमाबहन भी शामिल हैं, मेरा सलाम।

प्यार के साथ,

तुम्हारा,
शौकतअली

२९. मौलाना मोहम्मदअली की ओर से

[मौलाना मोहम्मदअली उस समय अखिल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष थे और मैं कांग्रेस के जनरल सेक्रेटरियों में से एक था।]

नेशनल मुस्लिम यूनीवर्सिटी,
अलीगढ़

निजी

१५ जनवरी १९२४

प्रिय जवाहर,

अभी-अभी तुम्हारा खत मिला। मैं फिर एक मर्तबा तुम्हारी बेजा नरमी के खिलाफ 'सख्ती के साथ अपनी नाराजगी' जाहिर करना चाहूंगा। प्यारे जवाहर, सिर्फ इसीलिए मुझे तुम्हारा सेक्रेटरी रहना पसन्द है कि चूंकि वर्किंग कमेटी के चंद मेंबर सेक्रेटरी की हैसियत से तुमपर एतबार नहीं

करते और वर्किंग कमेटी में तुम्हारी मौजूदगी को पसंद नहीं करते। क्या तुम समझते हो कि वे मुझे प्रेसिडेंट की हैसियत से पसंद करते हैं या एतवार करते हैं ? दिल्ली में मैंने तकलीफ के साथ उस चीज को महसूस किया, जिसे मेरे बहुत-से दोस्त चाहते थे कि मैं वह करूं। मेरी रहनुमाई को वे जिन लफ्जों में मंजूर करते हैं, वे बड़े ही चापलूसी से भरे थे, लेकिन उनका असली मंशा सिर्फ यह है कि वे मेरी रहनुमाई करना चाहते हैं। जब मैं रहनुमाई के तौर पर उनके सामने कुछ पेश करता हूं तो वे उससे कतराते हैं। सदर की हैसियत से मैं अपनी जिम्मेदारी से वरी नहीं हो सकता। जब मैंने तंग दलबन्दी से बचने के लिए तुम्हारी, किचलू और देशपांडे और वर्किंग कमेटी के कुछ दूसरे मेंबरों की पनाह ली तब मेरी हालत वैसी ही थी, जैसे कोई बेकस जीव बेरहमी से बचने के लिए पनाह खोजने को मजबूर हो। दरअसल हमारी वर्किंग कमिटी एकरायवाले लोगों की नहीं है और यकीनन वह किसी चीज को चुपचाप मंजूर नहीं करेगी। लेकिन फिर भी मैं समझता हूं कि वह काम करेगी और खास तौर पर तुम्हारे जैसे लोगों के जरिये, जिनके दलबन्दी से ऊपर होने पर मैं मुनहसिर कर सकता हूं। एक फारसी कहावत है—मन चे मी सरायम, व तम्बूरे मन चे मी सरायद।—यानी "मैं कौन-सा राग गा रहा हूं और मेरे तानपूरे से कौन-सा राग निकल रहा है।" हमारी मंडली भी ठीक इसी तरह का राग छेड़ देती है।

लेकिन और चारा ही क्या है ? बिना तुम्हारे बताये हुए मैं जानता हूं कि तुम्हें पिछली गलतियों के लिए आंसू बहाने की आदत नहीं है। इसलिए खुश रहना चाहिए और हमें अपना काम शुरू करना चाहिए। "क्या हम पस्तहिम्मत होगये हैं ?" नहीं।

मुझे अफसोस है कि ए. आई. सी. सी. का दफ्तर अभी तक नहीं पहुंचा है। उन्हें तार दो कि वे तैयार होकर चल पड़ें। मेरा खयाल है कि मेरी छुट्टी भी खत्म होगई है। मुझे सारे सूबों के साथ और अपनी कमेटी के हर मेंबर के साथ खतो-किताबत शुरू करनी चाहिए। अभी तक मेरे पास कोई अच्छा शार्टहैंड टाइपिस्ट नहीं है, जो बतौर मेरे निजी मददगार के काम कर सके। ऐसी हालत में तुम्हें दफ्तर से किसी ऐसे क्लर्क को मेरे पास भेजना होगा जिसे तुम बेहतरीन समझते हो। अगर वह काम का साबित

न हुआ तो हमें पता चल जायगा कि हम उसकी तनखा पर फिजूल पैसा ज़ाया कर रहे हैं और इस बहाने मुझे उसे अलग करने का मौका मिल जायगा। मेरे लिए एक होशियार स्टेनोग्राफर की तलाश में रहो।

जहांतक अर्जियों का सवाल है, अपने पास आई अर्जियों में से तुमने जो छांटीं उनपर मैं निगाह डाल लूं। हमारी सतह जरूरी तौर पर ऊंची होनी चाहिए। निकम्मे लोगों की एक फौज के बजाय थोड़े-से काबिल आदमी बेहतर हैं। मैं शेरवानी को तैयार करने की कोशिश कर रहा हूं कि वह सहायक सेक्रेटरियों में से एक जगह संभाल ले। लेकिन बेशक वह तुम्हारी ज़रूरत को पूरा नहीं कर सकेगा, यानी कांग्रेस के रोजमर्रा के काम को चलाने की पूरी जिम्मेदारी नहीं निबाह सकेगा। शेरवानी बहुत उम्दा आदमी है, जिसके सुपुर्द हम कांग्रेस की मेंबरी का डिपार्टमेंट कर सकते हैं। मेंबर बढ़ाने के लिए सूबों के साथ खतो-किताबत करने की फिक्र को अपने ऊपर लेने के साथ-साथ वह जब-तब सूबाई सेंटरों में जाकर देख सकता है कि आया वे इस काम को पूरा कर रहे हैं या नहीं।

मैं जानता हूं कि तुम ऐसे आदमी चाहते हो जो बहुत घूमें-फिरें नहीं, बल्कि एक जगह रहें; लेकिन कुछ ऐसे डिपार्टमेंट हैं, जहां असिस्टेंट सेक्रेटरी की हैसियत मरकज़ी कमेटी के एक इंस्पेक्टर जनरल या कमिश्नर की-सी बनानी होगी, जिसका काम होगा सुस्त सूबों को बढ़ावा देना।

तुमने अपनी सूबा कांग्रेस कमेटी के दिवालियेपन के बारे में जो-कुछ लिखा है हर सूबे की तकरीबन वही हालत है। मेंबरी के चंदे से हमें कुछ-न-कुछ आमदनी होनी चाहिए, चाहे वह कितनी ही थोड़ी क्यों न हो। हमें जोर देना चाहिए कि जल्दी-से-जल्दी मेंबरों की भरती की जाय। 'तिलक-स्वराज्य फंड' की उगाही भी फिर से चालू होनी ही चाहिए और यह काम मैं यू. पी. से शुरू करना चाहता हूं। मैं यू. पी. खिलाफत कमेटियों को भी लिख रहा हूं, जिसका मेरे कुछ मेहरबान दोस्तों ने मुझे सदर चुना है। मैं उन्हें लिख रहा हूं कि कांग्रेस कमेटियों से तय करके वे मुझे उस रकम के साथ बुलावे दें जो खिलाफत और कांग्रेस कमेटियां मुझे नजराने के तौर पर देना चाहती हैं। क्या तुम यू. पी. के एक छोटे दौरे में मेरे साथ शरीक हो सकते हो ? या दफ्तर के काम को ठीक से चलाने के लिए तुम्हारा इलाहाबाद

में रहना जरूरी है ? एक अच्छे हिन्दू साथी का दौरे पर मेरे साथ रहना निहायत जरूरी है। अगर तुम नहीं चल सकते तब कोई और नाम सुझाओ।

जहांतक वर्किंग कमेटी की बैठक का सवाल है, जनवरी के अखीर में कोई भी सुभीते की तारीख तय कर लो, क्योंकि उससे पहले बैठक बुलाना मुमकिन नहीं होगा, सिवा इसके कि महात्माजी की बीमारी की वजह से हमें पहले पूना जाना पड़े। क्यों न पूना में ही बैठक कर ली जाय।

मुझे तुम्हारा तार मिला, जिसमें तुमने लाजपतराय का तार शामिल किया है। पता नहीं वह हमें क्या समझते हैं जबकि वह यह कहते हैं कि हम महात्माजी की रिहाई के लिए सारे मुल्क की तरफ से मांग करवाने का इंतजाम करें। मैं समझता हूं कि हमारे दोस्त में सिविल नाफरमानी की जो भावना रही होगी उसे भी उन्होंने कामयावी के साथ निकाल फेंका है। जो सरकार महात्माजी को बीमारी की वजह से छोड़ती है, वह शायद उन्हें इससे कहीं ज्यादा खतरनाक बीमारी के वाद जेल में नहीं रखेगी। लेकिन गांधीजी की रिहाई की मांग हमें मालवीय और गौड़ जैसे लोगों पर छोड़नी होगी और लालाजी को, जो जाहिरा उसी गिरोह के मालूम होते हैं, खुल्लमखुल्ला उस गिरोह में शामिल हो जाना चाहिए। क्या यह मज़ाक नहीं मालूम पड़ता कि जो लोग सबसे ज्यादा गांधीजी की भावनाओं के खिलाफ थे वे ही सबसे ज्यादा बुलन्द आवाज में सरकार से उनकी रिहाई की मांग कर रहे हैं ? हमारी भी गांधीजी की रिहाई की मांग है, और वह लाज़मी तौर पर हमें मुल्क से करनी चाहिए।

इन्दू और तुम्हारी वहन को प्यार और तुम्हारी मां और बीवी को मेरी वंदगी।

तुम्हारा,

मोहम्मदअली

[तिलक स्वराज्य फंड गांधीजी की प्रेरणा पर, कांग्रेस द्वारा चलाये जानेवाले असहयोग-आन्दोलन के लिए धन की व्यवस्था करने के लिए, चालू किया गया था। यह अखिल भारतीय फंड था और उसमें १ करोड़ रुपया एकत्र करने का लक्ष्य रखा गया था। यह लक्ष्य पूरा कर लिया गया था। इस धन का ज्यादा हिस्सा तो प्रान्तीय कांग्रेस कमेटियों द्वारा या उनकी मारफत और कुछ केन्द्रीय संगठन द्वारा खर्च किया गया था।]

३०. मौलाना मोहम्मदअली की ओर से

[इस पत्र में उस विवाद का जिक्र है जो कुंभ-मेले के अवसर पर इलाहाबाद में उठ खड़ा हुआ था। सरकार ने उस जगह, जहां यह घटना हुई, रोक लगा दी थी। मेले में आये हुए हिन्दुओं की भारी भीड़ में इससे बड़ी बेचैनी फैल गई थी और दरअसल उनमें से कुछने सरकारी आदेश को भंग कर डाला। मुझे संयोगवश इसमें कूदना पड़ा। मैंने इस घटना का 'मेरी कहानी' में जिक्र किया है।]

जामिया मिल्लिया इसलामिया,
अलीगढ़
२१ जनवरी १९२४

प्रिय जवाहर,

यह समझकर कि अगर कोई सीधा तार भेजकर मझे इत्तला न दे मैं मालवीयजी के साथ तुम्हारी गिरफ्तारी के बारे में रोज सवेरे 'लीडर' के सफों को छान डालता था, लेकिन आज के 'लीडर' को देखकर मेरी दुविधा मिट गई; क्योंकि इससे मुझे मालूम होगया कि आखिरकार पंडितजी गवर्नर को सही रास्ते पर ले आये। वह न सिर्फ प्रयाग आया, बल्कि, गंगा-जमुना और तीसरी नजर न आनेवाली पाक नदी जो संगम पर उन दोनों के नीचे बहकर त्रिवेणी बनाती है, उनको अपने इंतजाम में लेने की तुम्हारी म्युनिसिपैलिटी की तजवीज पर तुमसे अच्छी तरह बातें करने के लिए तुम्हें गवर्नमेंट हाउस में ले गया। हालत का मेरा अंदाजा ठीक है न? या इस मुसीबत में पंडितजी के 'अजीबोगरीब साथ' का सिर्फ नया तजुरबा हासिल करने के लिए तुम अब भी जेल जाने पर आमादा हो? अगर कल के 'लीडर' में मुझे तुम्हारी गिरफ्तारी की खबर न मिली तो मैं तफसील के साथ तुम्हारे तीनों खतों का जवाब देना चाहूंगा। फिलहाल तो मैं तुम्हें सिर्फ यह इत्तला देना चाहता हूं कि मैं २४ तारीख की रात को दिल्ली जा रहा हूं। वहां से २५ की रात को एक्सप्रेस से कल्याण जाऊंगा और २७ को (वक्त के लिहाज से किसी गाड़ी से) अपने बापू को देखने पूना जाऊंगा। यह इसलिए कि १६ तारीख को मैंने पुछवाया था कि क्या मैं आ सकता हूं तो मझे बताया गया कि ठीक है। लेकिन बापू नहीं चाहते कि हममें से कोई

अपना काम छोड़कर उनसे मिलने जायं। बाद में अन्सारी और हकीमजी से भी कहा गया कि वे भी मेरे साथ आ सकते हैं, लेकिन किसी तरह का दिखावा नहीं होना चाहिए। किसी किस्म का कोई शोरगुल न हो, इसलिए बिना किसीको कुछ बताये हम लोगों ने जाने का इरादा किया; लेकिन डाक्टर की हैसियत से अन्सारी ने हमें फौरन जाने से रोका है। उन्हें डर है कि अगर बापू से मिलकर हम लोग अपने जज़बात न दबा सके तो उसका बापू पर अच्छा असर नहीं पड़ेगा और वह बेहद थक जायंगे। इसलिए हम लोगों ने बाद में जाने का फैसला किया है। अब हम २७ तारीख को पूना पहुंच रहे हैं। उस वक्त तक बापू में भी ताकत आ जायगी और क्योंकि २९ और ३० तारीख को मुझे बम्बई में हाजिर रहना है, इसलिए मैं काम छोड़कर भागने की बुराई से भी बच जाऊंगा। अब मैं यह जानने के लिए लिख रहा हूं कि क्या तुम भी इस 'तीन-मूरती' के साथ कल्याण स्टेशन पर या कहीं रास्ते में शामिल होकर २७ तारीख को बापू से भेंट करना चाहोगे? तार से खबर दो कि क्या तुम हमारे साथ शामिल हो सकते हो और कहां? लेकिन और किसीसे इसका जिक्र मत करना। मेरी मुराद दोस्तों से नहीं है और उनको भी और किसीसे नहीं कहना चाहिए।

बाकी कल।

तुम्हारा,
मोहम्मदअली

फिर से —

आजकल शास्त्री का भूत मुझपर सवार है। सब नरमदलियों पर लानत, हालांकि वे 'मजदूर दल' को उसकी जीत के लिए बधाई दे रहे हैं! शास्त्री की गलती से मेरा दो दिन का काम ज़ाया हुआ और अब जब मैंने अपने उन्हें भेजे तार का चार दिन तक इंतजार करने के बाद उनके जवाब में अपना बयान छपने को भेज दिया तो उन्होंने खत लिखकर माफी मांगी। मुझे अपने बयान को छपाने से रोकना पड़ा।

३१. मौलाना मोहम्मदअली की ओर से

माथेरान,
१५ जून १९२४

निजी

प्रिय जवाहर,

माफ करना, इधर तुम्हें कोई खत नहीं लिखा। तुम जानते ही हो कि

अपनी बेटी के इंतकाल के बाद मुझे कुछ छुट्टी की कितनी जरूरत थी। तुम शायद महसूस कर सको कि मैं कितनी लाचारी से छुट्टी नहीं ले सका। अप्रैल के शुरू में शौकत फिर से बीमार पड़ गये। उसके बाद जुहू में बातचीत का सिलसिला चला, और आखिर में मुझे उत्तरी हिन्दुस्तान का दौरा करना पड़ा, जिसमें २० मई को मैं माथेरान से रवाना हुआ और तीसरी जून को यहां लौटा। मैं छुट्टी कई बार में थोड़ी-थोड़ी करके ले पाया। हालांकि मैं नहीं चाहता था कि इस तरह कट-कटकर मुझे छुट्टी मिले। तुम्हारे ६५०।३०, ७५०।२५, ७५२।७२ और ७८६ नंबर के खत यहां तब पहुंचे जब मैं दिल्ली, लाहौर, अलीगढ़, रामपुर (सिर्फ रेलवे स्टेशन ही ब्रिटिश सरहद में है), नैनीताल और लखनऊ गया हुआ था। तुम्हारा ८२४।५३ नम्बर का खत तब मिला जब मैं सफर की थकान मिटा रहा था। अल्लाह का शुक्रिया! इन खतों के मजमूनों में कोई ऐसी बात न थी, जिसपर मैं तुम्हें कोई मशविरा दे सकता, इसलिए कांग्रेस के काम में दरअसल कोई हर्ज न हुआ होगा। (सदरों के आलस की वजह से काम में कोई हर्ज नहीं होता, क्योंकि वे समझदारी के साथ मेहनती और काम करनेवाला सेक्रेटरी चुन लेते हैं)। तुम्हारे पिछले खत नं० ८६२।४० में कोण्डा वेंकटा-पय्याजी के महाराष्ट्र के चुनाव के बारे में हुए फैसले का जिक्र है, हालांकि उसमें ऐसा कोई सुझाव नहीं है कि मुझे उस सिलसिले में कुछ करना है। इस फैसले से किसी अच्छाई की उम्मीद नहीं है, और तकदीर के लेखे की तरह अब आ पहुंचा है श्री माण्डलिक का पोस्टकार्ड, जिसने आखिर मेरे अन्दर काम करने की हलचल पैदा कर दी है। ए. आई. सी. सी. की मीटिंगों में नजीर देना काफी बुरी बात है, लेकिन पहले से ही वैसा करना और भी बुरा है। मैंने अलग से तुम्हें उसके बारे में लिखा है और श्री परांजपे और माण्डलिक को लिखे खतों की कापियां भी साथ में नत्थी कर दी हैं। मैं उम्मीद करता हूं कि तुम इससे रजामंद होंगे कि दफा १९ की आखिरी क़लम का ताल्लुक किसी खास सूबे के नुमाइन्दों से न होकर पूरी ए. आई. सी. सी. से है। मुमकिन है, मेरी नजीर से श्री मांडलिक खुश न हों और अगर किसी और वास्ते नहीं तो 'अमन' के वास्ते ही मैं उनके नुमाइन्दों को भी अहमदाबाद आकर हम लोगों के साथ बैठक में शरीक होने देता, लेकिन

अमन मेरी तकदीर में कहां बदा है ? इसलिए मैंने तय किया है कि कानून के मुताबिक ही अमल हो। अगर कोई सूबा वक्त रहते सही तरीके से अपने नुमाइन्दे न चुन सके और इस वजह से उसकी नुमाइन्दी न हो सके तो उसे दुनियाभर से शिकायत नहीं होनी चाहिए। अगर हम पुराने नुमाइंदों को ही बुलाते रहे तो नये नुमाइंदों को चुनने की न कोई प्रेरणा रह जायगी और न प्रोत्साहन। सूबे को जो कुछ भी शिकायत है वह जरूरी तौर पर सूबे की एक्जीक्यूटिव के खिलाफ है। मेरे पास अपनी ही इतनी काफी परेशानियां हैं कि मुझे दूसरों की परेशानियों के लिए दुखी होने का वक्त नहीं। फिर भी मुझे अंदेशा है कि श्री मांडलिक मुझे बख्शेंगे !

लेकिन जो परेशानी टाली नहीं जा सकती उसके लिए महात्माजी जिम्मेवार हैं। तुम उस बारे में बिल्कुल खामोश हो। शौकत को छोड़कर और कोई था नहीं, जो मेरी परेशानी बंटा सकता। अब बताओ, तुम उसपर क्या सोचते हो ? बापू के साथ जुहू में मेरी जो बातें हुईं मैं नहीं जानता कि उनका हिन्दू-मुस्लिम-तनाव पर कोई असर पड़ा या नहीं। शायद मुसलमानों की तरफ की उन्हें कतई कोई बात न मालूम होती, अगर मैं उन्हें न बताता, क्योंकि मैं नहीं समझता कि उनसे ज्यादा मुसलमानों ने खतो-किताबत की होगी। चूंकि निजी जानकारी की बिना पर मैं कोई बात नहीं कर सकता था, इसलिए मेरी बातचीत का मतलब सिर्फ यह सुझाव देना था कि इस मसले में मुसलमानों का भी एक पहलू है। ताहम मैं पक्की तौर पर कह सकता हूं कि जहांतक उनके 'पूजनीय भाई' पंडित मदनमोहन मालवीय के तर्जेअमल का ताल्लुक है, मैं उनपर कोई असर नहीं डाल सका। वह उन्हें हम सबके मुकाबले अच्छे दिखाई दिये और फिर भी शौकत और मुझपर यही असर रहा कि माननीय पंडितजी के बारे में बापू दूसरी ही राय रखते हैं। अगर बापू उन बातों पर यकीन करते हैं, जो वे पंडितजी के बारे में कहते हैं—और इसमें कोई शक नहीं कि वह यकीन करते हैं—तब कम-से-कम आनेवाले वक्त के बारे में तो मुझे नाउम्मीद ही होना पड़ेगा। इस मामले में मैंने तुम्हारे पिताजी से बहुत साफ-साफ बातें कीं। वह बहुत-कुछ मुझसे एकराय हैं कि मालवीयजी गांधीवाद को हराने के लिए कमर कसे हुए हैं, और चूंकि वह हिन्दू और मुसलमान, दोनों के नेता नहीं बन सकते, इसलिए

सिर्फ हिन्दुओं के ही नेता बनना चाहते हैं। हिन्दू-मुस्लिम-एके का ऊंचा उसूल उनके सामने नहीं है। मेरे प्यारे जवाहर, अल्लाह जानता है कि मुसलमानों में भी उनके अपने मालवीय हैं और उनके और मेरे बीच किसी तरह की कोई मुहब्बत नहीं है। लेकिन खुदा का शुक्र है कि उनका अपनी जमात पर वह असर नहीं, जो पंडितजी का अपनी कौम के बहुत-से लोगों पर है; क्योंकि न उनमें इतनी काबलियत है, न खुद-कुरबानी के लिए उनकी शोहरत है और न उन्होंने अपनी कौम की कोई खिदमत ही की है। अगर पंडितजी वही सबकुछ हैं, जो बापू उनके बारे में कहते हैं तो मैं नहीं जानता कि मैं तुम्हें और तुम्हारे प्यारे वालिद को किस दर्जे में रखूं। दरअसल मुझे तो तुम दोनों और मालवीयजी में जमीन आसमान का फर्क नज़र आता है। लेकिन हिन्दू-मुस्लिम तनाव मेरे लिए इस वक्त फिक्र का मामला नहीं है। मैं महसूस करता हूं कि जितनी मैंने पहले उम्मीद की थी, यह तनाव उतनी जल्दी दूर होने का नहीं है। लेकिन जिसकी मुझे सबसे ज्यादा फिक्र है वह है बापू का स्वराज्य पार्टीवालों पर 'बिजली की तरह टूट पड़ना'। मैं जानता था, ऐसा होनेवाला है, फिर भी उम्मीद करता था कि शायद न हो। तुम्हारे वालिद यह मंजूर तो करते हैं कि हमारे जैसे लोगों ने स्वराज्य पार्टीवालों के लिए आसानियां पैदा की हैं, लेकिन बहुत सकुचाते हुए और हिचकिचाते हुए वह हमारी मेहनत की तारीफ करते हैं। उनकी जैसी हालत के आदमी के लिए यह वाजिब है कि वह भारी मेहनत की कीमत महज़ मेहनत की नज़र से नहीं, बल्कि उसके नतीजों से आंकें, लेकिन यह तो तय है कि हम लोग इस 'बिजली' को गिरने से बचाने में बिल्कुल नाकामयाब रहे। इसकी खास वजह यह है कि यह बिजली आसमान से गिरी। जुहू में बापू से जो बहुत-सी मुलाकातें हम लोगों ने कीं, उनमें सबसे आखरी मुलाकात में बापू ने मुझसे और शौकत से कहा कि वह क्या करनेवाले हैं। मैंने आकर तुम्हें बताया, हालांकि उस वक्त मैं उम्मीद न होते हुए भी उम्मीद कर रहा था कि यह तो अभी बापू को सूझा है और हो सकता है कि वह अब भी अपना दिमाग बदल दें। फिर भी हमने उनके सामने यह सुझाव रक्खा था कि ब्रिटिश केबिनेट की मिसाल सही नहीं है और ए. आई. सी. सी. की हालत केबिनेट की बनिस्बत कामन्स-सभा से ज्यादा मिलती-जुलती है। सच तो

यह है कि इस तरह की सारी मिसालें गलत हैं, क्योंकि ए. आई. सी. सी. की हालत फेडरल जमात की तरह है। यह ठीक है कि कांग्रेस में और ए. आई. सी. सी. में नो-चेंजरों की तादाद बहुत है। लेकिन सारी सूबा कांग्रेस कमेटियों में उनकी अक्सरियत नहीं है और यह बात भी कुछ अजीब-सी है कि सूबों में जिनकी अक्सरियत हो उनसे उनके लिए इस्तीफा देने को कहा जाय, जिनकी अक्सरियत नहीं है। क्या मेरा यह खयाल ठीक नहीं है कि इस मामले में तुम भी बापू के साथ एकराय नहीं हो ? अगर तुम बता सको तो मुझे ज़रूर अपनी बात बताओ। बापू के सुझाव की अच्छाई या बुराई के अलावा उसका 'कानूनी' पहलू भी है। क्या ऐसा कानून है, जिससे स्वराजिस्टों को इस्तीफ़ा देने के लिए मजबूर किया जा सके ? क्या ए. आई. सी. सी. का ऐसा कोई रेज़ोल्यूशन है कि जिसकी रू से कोई मेंबर चरखा नहीं कातता हो या रुई नहीं धुनकता हो तो उसका ऐसा करना इस्तीफा देने के बराबर समझा जा सकता है ? मुझे लगता है कि बापू के सुझाव की अच्छाई-बुराई के बारे में मेरी कोई भी राय हो, लेकिन सदर के नाते मेरा पहला फर्ज़ उस सुझाव के कानूनी पहलू पर गौर करना है। तुम्हारी क्या राय है ? तुम्हारे विचार से कानूनी हालत क्या है ?

मैं इस मामले में बापू से एकराय हूं कि मौजूदा 'दिखावा' खत्म होना चाहिए। तामीरी प्रोग्राम के बारे में हमने लोगों के महज़ ज़बानी जमा-खर्च को बहुत काफ़ी वक्त तक बर्दाश्त किया है और मैं समझता हूं ऐसे बहुत-से कांग्रेसी हैं, जिनके दिल में इसके लिए दरअसल ज़रा भी इज्ज़त नहीं है, लेकिन वे अपनी राय सिर्फ अकेले में या दोस्तों में ही ज़ाहिर करते हैं। मैं समझता हूं कि जबतक लोग खुद करीब-करीब मज़हबी जज़्बात से इसको हाथ में नहीं लेते तबतक हम मुल्क को इसमें लगाने के लिए कैसे राज़ी कर सकते हैं ? (तुम्हें मेरे मज़हबीपन के लिए जो झुंझलाहट है, इसी वजह से मैंने 'करीब-करीब' लफ़्ज़ का इस्तेमाल किया है।) इसपर मेरा खयाल है कि बापू की दलील में कहीं-न-कहीं कोई नुक्स है। कम-से-कम मुझे ऐसा लगता है कि कुछ नो-चेंजरों के चेहरों पर, जो स्वराजिस्टों के खून के प्यासे थे, एक नापाक खुशी दिखाई देती है। स्वराजिस्टों के तई बापू की मलामत को कम कराके हमने जो-कुछ अच्छाई की थी, वह उनके हाल के इस बयान

से, जिसमें उन्होंने स्वराजिस्टों को निकाल बाहर करने का ऐलान किया है, खत्म होगई। सरकार को एक तरह की मदद देने की तरफ जो स्वराजिस्टों का झुकाव है उसे इस बयान से कितनी मदद मिली, यह में नहीं कह सकता। मैं जितनी उम्मीद कर सकता था उससे कहीं ज्यादा तुम्हारे वालिद ने अपने-को काबू में रखा है। लेकिन शायद उनका इस तरह काबू में रहना जनता के लिए और खास-तौर से सरकार के लिए है। मुझे तुम्हारी इस पेशीनगोई के सच साबित होने का अंदेशा है और वह हमसे और दूर हो जायंगे, और वह भी गहरे मुखालिफ जज़बात के साथ। जैसाकि मैंने हाल में (अनमने होकर) अपनी मुलाकात में कहा है, मुझे नो-चेंजरों के द्वारा किये जाने-वाले तामीरी प्रोग्राम की कामयाबी की कहीं ज्यादा फिक्र है, बजाय इसके कि स्वराज्य पार्टीवाले क्या करने में कामयाब नहीं होते। मैं ज़ानता हूं कि इस किस्म के काम के लिए जिस माहौल की जरूरत है उसे सबसे ज्यादा स्वराजिस्ट बिगाड़ते हैं, क्योंकि पढ़े-लिखे तबके अक्सर यही देखा करते हैं कि कौंसिलों में स्वराज्य पार्टी के लोग क्या करते हैं और उसका असर इंग्लैंड में और वहां की और यहां की सरकार पर क्या होता है? पढ़े-लिखे तबके के यही लोग आखिर जनता की रहनुमाई कर सकते हैं, लेकिन यह भी कोई अच्छी बात है कि हममें से जो लोग यह जानते हैं कि स्वराज्य पार्टीवालों के काम की तरफ़ टकटकी लगाये देखना बुरी बात है, वे भी इस तरह के मामलों में फ़िक्र करके अपना वक्त बरबाद करें। कम-से-कम हमें तो काम करना चाहिए और उन्हें बुरा-भला नहीं कहना चाहिए।

इन्हीं बातों की इस वक्त मुझे फिक्र है। मुसलमान होने की वजह से और वह भी एक साफ दिलवाला होने से, मेरी हालत बहुत नाजुक है। कांग्रेस का सदर होने की वजह से मैं बड़े-बड़े मसलों पर चुप रहकर वोट नहीं दे सकता, और—जैसाकि मैं पसंद करता—वोट देता ही नहीं, हालांकि छोटे-छोटे मसलों पर सदर अक्सर वोट नहीं देते। मुसलमान होने की वजह से मैं यह भी नहीं कर सकता, जैसा तुमने इलाहाबाद में किया है, कि इस्तीफा देकर छुट्टी पाऊं, क्योंकि अगर मैं ऐसा करता हूं तो मुझे डर है कि इसका 'हिन्दू-मुस्लिम एकता' पर ज़बर्दस्त असर पड़े बिना नहीं रहेगा। हालात ऐसे हैं कि जिन लोगों ने मेरे इस्तीफे की मांग की है, उन-

जैसे लोग मेरी बेइज़्ज़ती कर रहे हैं और दूसरे बहुत-से लोग मेरी लानत-मलामत कर रहे हैं, मैं एक इन्सान के तौर पर इतना भी नहीं कर सकता कि अपनी इज़्ज़त के बचाव पर ज़ोर दे सकूं। अबतक मैंने अपने जज़बात अपने तक ही महदूद रक्खे थे। इन जज़बात को दूसरों पर ज़ाहिर करने की मरज़ी न होने की वजह से ही इस खत के लिखने में इतनी देर हुई और अब जब मैंने इन्हें बिना सोचे-विचारे बेतरतीबी से ज़ाहिर कर दिया है तो मेरी 'क़रीब-क़रीब ख्वाहिश' यह है—जैसा जिन्ना कहेंगे—इस खत को फाड़कर रद्दी की टोकरी में डाल दो। लेकिन अपनी इस ख्वाहिश को मैं रोक रहा हूं। इसीलिए यह खत भेजा जा रहा है।

यह तो बताओ कि तुम अहमदाबाद किस रास्ते से जाओगे? २४ की रात या २५ को सबेरे तुम मेरे साथ दिल्ली के रास्ते से क्यों नहीं चलते?

इन्दू को प्यार और श्रीमती जवाहरलाल और अपनी बहन को सलाम।

तुम्हारा,
मोहम्मदअली

फिर से—

... जैसे मुझे कांग्रेस की ही क्या कम फिक्रें थीं और खिलाफत की भी (जिसके बारे में मौलाना अबुल कलाम आजाद ने, बिना यह कहे हुए कि उनकी मन्शा मुझसे है, अखबारों में मुझपर हमला किया है), बेचारी बूढ़ी अम्मा फिर बीमार होगई हैं।

३२. महात्मा गांधी की ओर से

[मैंने गांधीजी को अपने पत्र में लिखा था कि मुझे अपने पिताजी पर आर्थिक भार बनकर रहना दुखदायी मालूम होता है और इसलिए मैं अपने ही पैरों पर खड़ा होना चाहता हूं। कठिनाई यह थी कि मैं कांग्रेस का पूरा समय देनेवाला कार्यकर्त्ता था। मेरे पिताजी ने जब यह सुना तो उन्हें बड़ी परेशानी हुई। इस पत्र में जिन 'हसरत' का जिक्र है वह 'हसरत मोहानी' थे। वह उर्दू के कवि थे और उन्होंने क्रान्तिकारी तथा राष्ट्रीय राजनीति में बड़ा बहादुराना भाग लिया था।]

१५ सितम्बर १९२४

प्रिय जवाहरलाल,

दिल को छूनेवाला तुम्हारा निजी पत्र मिला। मैं जानता हूं कि इन सब चीजों का तुम बहादुरी से सामना करोगे। अभी तो पिताजी चिढ़े हुए हैं और मैं बिल्कुल नहीं चाहता कि तुम या मैं उनकी झुंझलाहट बढ़ाने का ज़रा भी मौक़ा दें। संभव हो तो उनसे जी खोलकर बातें कर लो और ऐसा कोई काम न करो, जिससे वह नाराज़ हों। उन्हें दुखी देखकर मुझे दुःख होता है। उनकी झुंझलाहट उनके दुःख की अचूक निशानी है। हसरत आज यहां आये थे। उनसे पता चला कि हर कांग्रेसी के कातने-संबंधी मेरे प्रस्ताव से भी उन्हें अशांति होती है। मुझे ऐसा महसूस होता है कि कांग्रेस से हट जाऊं और चुपचाप तीनों काम करने लगूं। उनमें जितने भी सच्चे स्त्री-पुरुष हमें मिल सकते हैं उन सबके खपने की गुंजायश है। लेकिन इससे भी लोगों को अशांति होती है। पूना के स्वराज्यवादियों से मेरी लम्बी बातचीत हुई। वे कातने को भी राज़ी नहीं और मेरे कांग्रेस छोड़ देने से भी सहमत नहीं। उनकी समझ में यह नहीं आता कि ज्योंही मैं अपना स्व-रूप छोड़ दूंगा, मेरा कोई उपयोग नहीं रह जायगा। यह भद्दी स्थिति है, मगर मैं निराश नहीं हूं। मेरा ईश्वर पर विश्वास है। मैं तो इतना ही जानता हूं कि इस घड़ी मेरा क्या धर्म है, इससे आगे का मुझे मालूम ही नहीं। फिर मैं क्यों चिन्ता करूं?

क्या तुम्हारे लिए कुछ रुपये का बन्दोबस्त करूं? तुम कुछ कमाई का काम हाथ में क्यों न ले लो? आखिर तो तुम्हें अपने ही पसीने की कमाई पर गुज़र करनी होगी, भले ही तुम पिताजी के घर में रहो। कुछ समाचार-पत्रों के सम्वाददाता बनोगे? या अध्यापकी करोगे?

सप्रेम तुम्हारा,
मो. क. गांधी

३३. महात्मा गांधी की ओर से

[मेरे खयाल से यह पत्र गांधीजी के तीन सप्ताह के उपवास की घोषणा करने पर लिखा गया था]

१९ सितम्बर १९२४

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हें स्तब्ध नहीं होना चाहिए, बल्कि खुशी मनाओ कि ईश्वर मुझे अपना कर्तव्य-पालन करने का बल और आदेश दे रहा है। मैं और कुछ कर ही नहीं सकता था। असहयोग के प्रवर्तक की हैसियत से मेरे कंधों पर भारी ज़िम्मेदारी है। लखनऊ और कानपुर में क्या छाप पड़ी, यह मुझे जरूर लिख भेजो। मुझे यह प्याला पूरा पी लेने दो। मुझे पूर्ण आन्तरिक शांति है।

सस्नेह तुम्हारा,
मो. क. गांधी

३४. महात्मा गांधी की ओर से

१६ नवम्बर १९२४

प्रिय जवाहरलाल,

यह पंक्ति इस मंगल-कामना के साथ लिख रहा हूं कि मातृभूमि की सेवा और आत्म-दर्शन के हेतु यह शुभ दिन बार-बार आता रहे।

संभव हो तो पिताजी को लेकर जरूर आना।

सस्नेह तुम्हारा,
मो. क. गांधी

३५. महात्मा गांधी की ओर से

[मेरी पत्नी ने एक पुत्र को जन्म दिया। वह कोई हफ्तेभर में चल बसा। यह तार उसी अवसर पर दिया गया था।]

तार
साबरमती
२८ नवम्बर १९२४

नेहरू, इलाहाबाद

बालक की मृत्यु से दुःख हुआ। ईश्वरेच्छा बलीयसी।

गांधी

३६. महात्मा गांधी की ओर से

२५ अप्रैल १९२५

प्रिय जवाहरलाल,

मैं तीथल में हूं। यह जगह कुछ-कुछ जूहू जैसी है। यहां मैं बंगाल की

अग्नि-परीक्षा के लिए तैयार होने को चार दिन से आराम ले रहा हूं। मैं यहां अपना पत्र-व्यवहार निपटाने की कोशिश कर रहा हूं। उसमें तुम्हारा वह खत भी है, जिसमें 'ईश्वर और कांग्रेस' शीर्षक लेख का जिक्र है। तुम्हारी कठिनाइयों में मेरी सहानुभूति तुम्हारे साथ है। चूंकि सच्चा धर्म जीवन में और संसार में सबसे बड़ी चीज है, इसलिए इसीका सबसे अधिक दुरुपयोग किया गया है, और जिन लोगों ने इन शोषकों और शोषण को तो देखा और वास्तविकता को नहीं देख पाये, उन्हें स्वाभाविक रूप में इस वस्तु से ही अरुचि होगई। पर धर्म तो आखिर प्रत्येक व्यक्ति की वस्तु है और वह भी हृदय की वस्तु है, फिर चाहे उसे किसी भी नाम से पुकारो। जो चीज मनुष्य को घोर ज्वालाओं के बीच अधिक-से-अधिक सान्त्वना देती है वही ईश्वर है। कुछ भी हो, तुम सही रास्ते पर हो। बुद्धि ही एकमात्र कसौटी हो तो भी मुझे परवा नहीं, हालांकि उससे अक्सर मनुष्य गुमराह हो जाता है और ऐसी गलतियां कर बैठता है जो लगभग अंधविश्वास के निकट पहुंच जाती हैं। गोरक्षा मेरे लिए केवल गाय को बचाने से कहीं बड़ी चीज है। गाय तो प्राणिमात्र का सिर्फ प्रतीक है। गोरक्षा का अर्थ है दुर्बलों, असहायों गूंगों और बहरों की रक्षा। फिर तो मनुष्य सारी सृष्टि का प्रभु और स्वामी न रहकर सेवक बन जाता है। मेरी दृष्टि में गाय दया का जीता-जागता उपदेश है। फिर भी हम तो गोरक्षा के साथ निरी खिलवाड़ करते हैं, परन्तु हमें शीघ्र ही वस्तु-स्थिति के साथ जूझना पड़ेगा।

आशा है, मेरे पिछले सब पत्र तुम्हें मिल गये होंगे। डा. सत्यपाल का मुझे एक दुःखभरा पत्र मिला है। काश तुम, कुछ ही दिन के लिए सही, पंजाब जा सको। तुम्हारे जाने से उनका उत्साह बढ़ेगा। मैं चाहता हूं कि पिताजी दो महीने किसी शान्त और ठंडे स्थान पर रहें, और तुम हफ्ते-दस दिन के लिए अलमोड़ा क्यों नहीं चले जाते, ताकि काम के साथ-साथ ठंडी हवा में भी सांस ले सको?

सस्नेह तुम्हारा,
बापू

३७. सरोजिनी नायडू की ओर से

दि गोल्डन थ्रेशोल्ड,
हैदराबाद (दक्षिण)
११ मई १९२५

प्यारे जवाहर,

मैं यह पत्र 'दि गोल्डन थ्रेशोल्ड' से अपनी नक्काशीदार काली लकड़ी की कोच पर बैठी लिख रही हूं। घर के चतुष्पाद स्वामी रास तफारी, पावो नूरमी, निकोलो पिसानो और डिकडिक महजोंग बड़ी शान से मेरे चारों ओर लेटे हैं; बाग में लाल अंगारे-सी दहकती गुलमोहर और सुर्ख गुलाबों के बीच प्यारी-प्यारी चिड़ियां गीत गा रही हैं। आज शाम सैर के लिए हम लोग उस्मान सागर जानेवाले हैं, इसलिए मीना किताबें, जूते और सुगम वर्ग पहेलियों के लिए कोश अपने सामान के साथ बांधने में लगी है। पद्मजा नई फिएट गाड़ी को लेकर मगन है, जो अभी-अभी बम्बई से आई है। गोविंद देर से मिलनेवाले बैंगन के भुरते और फालसे के शरबत का लंच खाते-खाते मन-ही-मन प्रार्थना कर रहा है कि हे महाप्रभु, पहाड़ियों और सागर के बीच मेरी छुट्टी को नष्ट न होने देना!

संक्षेप में, म घर पर हूं और १९२१ के बाद, पहली छुट्टी मना रही हूं—सचमुच की छुट्टी, जिसमें बाहरी चिन्ताओं, जिम्मेदारियों और कर्तव्यों के प्रत्येक नाग को इस स्वर्ग में घुसने की मनाही है। बेहयाई के साथ, पर हिम्मत करके, मैं कुछ हफ्तों के लिए अपने मोरचे से भाग आई हूं, क्योंकि मेरी आत्मा को आवश्यकता थी और वह पुकार रही थी सौंदर्य के लिए फूलते वृक्षों के लिए, नीड़ बनाती हुई चिड़ियों के लिए, गीत लिखनेवाले कवियों के लिए, शिशुओं और श्वानों के लिए तथा पुराने मित्रों के लिए और रचनात्मक कार्यक्रम से तनिक विश्राम लेने के लिए और तथाकथित राजनीति के प्राणघातक कार्यक्रम से बचाव के लिए। मैं उचित समय पर कर्तव्यों और दायित्वों को संम्हालने के लिए लौट आऊंगी, किन्तु इस बीच, मेरी इच्छा है कि तुम भी इस आह्लाद में—हैदराबाद में मीरआलम पर नौका बिहार, इधर-उधर मटर-गश्ती और भारत के वास्तविक समस्तवर्गीय समाज से भेंट करने के आह्लाद में—साझीदार बनो। कहने की आवश्यकता

नहीं कि 'दि गोल्डन थ्रेशोल्ड' में मेरे माता-पिता की पीढ़ी—लगभग प्रागैतिहासिक पीढ़ी—से लगाकर फर्श पर बैठने और अपनी केक बिल्ली के साथ खाने तथा अपने कपड़ों पर शरबत फैलानेवाली नन्हीं-से-नन्हीं पीढ़ी तक, इस समाज की चार पीढ़ियां जमा हुआ करती हैं। तुम भी क्यों नहीं हड़ताल करते और यहां छिपने आ जाते? मैं शुऐब से भी हड़ताल करने को कहूंगी, पर तुम्हारे दूसरे साथी लकीर के बाहर हैं। भगवान बचायें!

मैं कलकत्ता में कार्यकारिणी में सम्मिलित नहीं हो रही हूं। मैं हफ्तों से बीमार हूं और मुझे शरीर से भी अधिक मन के लिए वातावरण और काम में परिवर्तन की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त देशबन्धु[1] द्वारा पैदा हुई 'वर्तमान परिस्थिति' के अतिरिक्त बैठक के किसी भी अन्य कार्यक्रम में मेरी सूझ की विशेष आवश्यकता नहीं जान पड़ती।

आशा है, पापाजी और प्यारी मामा सानंद हैं, कमला फिर से बिल्कुल तन्दुरुस्त है और इंदू अभी तक अटलांटा जैसी है—क्षिप्र-चरणा, नयनों में उषा का आलोक लिये।

पद्मजा सबको, विशेषकर 'सुलोचना बेटी' को प्यार भेजती है। लीलामणि फिर ऑक्सफोर्ड के वातावरण में डूब गई है और बहुत प्रसन्न है।

फिर मिलेंगे। तुम सबके लिए मैं अपना पुनः प्राप्त जीवनोल्लास भेजती हूं।

तुम्हारी प्यारी बहन,
सरोजिनी

३८. महात्मा गांधी की ओर से

[गांधीजी ने अपने दायें हाथ को आराम देने की खातिर बायें हाथ से लिखने का अभ्यास कर लिया था। जाहिर है कि यह पत्र उन्होंने अपने बायें हाथ से लिखा था। 'यं. इं.' से मतलब गांधीजी द्वारा सम्पादित अंग्रेजी साप्ताहिक 'यंग इंडिया' से है।]

३० सितम्बर १९२५

प्रिय जवाहर,

हम विचित्र समय में रह रहे हैं। सीतलासहाय अपना बचाव कर सकते

---

[1] देशबन्धु चित्तरंजनदास

हैं। आगे की घटनाओं से मुझे परिचित रखना। वह क्या हैं ? वकील हैं ? उनका कभी क्रान्तिकारी प्रवृत्तियों से कोई संबंध रहा है ?

कांग्रेस की बात यह है कि उसे जितना सादा बना दिया जाय उतना अच्छा है, ताकि जो कार्यकर्ता अब रह गये हैं, वे उसे संभाल सकें। मैं जानता हूं, तुम्हारा बोझा अब बढ़ेगा। परन्तु तुम्हें अपने स्वास्थ्य को किसी भी तरह खतरे में नहीं डालना चाहिए। मुझे तुम्हारी तन्दुरुस्ती की चिन्ता है। तुम्हें बार-बार बुखार आना मुझे बिल्कुल पसन्द नहीं है। काश तुम खुद और कमला थोड़ी छुट्टी ले लो !

पिताजी का मेरे पास खत आया है। बेशक जहांतक उनकी मान्यता है, उतनी दूर जाना मैं हरगिज नहीं चाहता था। मैं पिताजी को आर्थिक सहायता देने के लिए किसीसे कहने की बात सोचता तक नहीं। मगर किसी मित्र या मित्रों से, जो तुम्हारी सार्वजनिक सेवाओं के बदले में तुम्हारी मदद करना अपना सौभाग्य समझें, कहने में मुझे कोई संकोच नहीं होगा। मैं तो आग्रह करूंगा कि अगर तुम्हारी जो स्थिति है और रहेगी उसके कारण तुम्हारी आवश्यकताएं असाधारण न हों तो तुम्हें सार्वजनिक कोष से लेना चाहिए। मेरा अपना तो दृढ़ मत है कि कोई व्यवसाय करके या तुम्हारी सेवा सुरक्षित रखने के लिए किसी मित्र को तुम्हारे लिए रुपया जुटा देने देकर तुम सामान्य कोष की वृद्धि करोगे। तुरन्त कोई जल्दी नहीं है, मगर इधर-उधर परेशान न होकर किसी अंतिम निश्चय पर पहुंच जाओ। तुम कोई व्यवसाय करने का फैसला करो तो भी मुझे परवा नहीं होगी। मुझे तो तुम्हारी मानसिक शान्ति चाहिए। मैं जानता हूं कि किसी व्यवसाय के प्रबंधक की हैसियत से भी तुम देश की सेवा ही करोगे। मुझे विश्वास है, जबतक तुम्हारे किसी भी निश्चय से तुम्हें पूर्ण शान्ति मिलती होगी तबतक पिताजी को कोई परवा नहीं होगी।

सस्नेह तुम्हारा,

बापू

मैं समझता हूं मुझे दायां हाथ तो यं. इं. के लिए ही सुरक्षित रखना चाहिए।

३९. एम. ए. अन्सारी की ओर से

फतेहपुरी, दिल्ली
११ अक्तूबर १९२५

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारे खत के लिए मैं तुम्हारा बहुत शुक्रगुजार हूं। लम्बे आराम और तबदीली के बाद अब मैं फिर अपनेको बहुत बेहतर पा रहा हूं। लेकिन तुम्हें यह सुनकर तकलीफ होगी कि एक लम्बे अरसे तक मैं दिल के दौरे से बीमार रहा और अब मुझे भारी चेतावनी दे दी गई है कि मैं हर तरह के तनाव से बचूं और अमन की और बंधी हुई जिंदगी विताऊं। इसलिए मजबूर होकर मैं अपने कामों पर बन्दिश लगा रहा हूं। मैं सिर्फ तालीम के कामों तक ही अपने को महदूद रखूंगा। तुम जानते हो कि मेरे यूरोप जाने से पहले महात्माजी और हकीमजी ने मुझे नेशनल मुस्लिम यूनिवर्सिटी के सेक्रेटरी का काम मंजूर करने पर जोर दिया था। इस काम में बड़ी भारी जिम्मेदारियां सिर पर आती हैं, जिन्हें मैं तभी पूरा कर सकूंगा जब मैं अपना पूरे-का-पूरा बचा वक्त इसमें लगाऊं। इसलिए मैंने यह तय कर लिया है कि आगे सिवा नेशनल मुस्लिम यूनिवर्सिटी के काम के और हर तरह के पब्लिक कामों से मैं अपनेको अलग रक्खूंगा।

बहरहाल पटना के फैसले के मुताबिक कुदरतन कांग्रेस का सब काम स्वराजिस्टों के सुपुर्द किया जायगा। इसलिए मुझे इसमें कोई अड़चन न होगी कि चरखा-संघ का मामूली मेंबर रहते हुए मैं अपनी ताकत मुल्क की तालीम के काम में लगाऊं।

जहांतक बीच-बचाव का सवाल है, मैं तुम्हारे बताये तरीके से काम करूंगा। मैं मि. भार्गव को और अजमेर-मेरवाड़ा सूबा कांग्रेस कमेटी के सेक्रेटरी को लिख रहा हूं कि वे अपने मामले के पूरे बयान मुझे भेज दें। उन बयानों को पढ़कर और उनकी नकलें दूसरी पार्टी को भेजकर, जैसाकि तुमने सुझाव दिया है, मैं उनसे कुछ सवाल करूंगा और बाद में अपना फैसला देने से पहले उनसे कहूंगा कि वे मुझसे मिलें।

तुम्हारा,
एम. ए. अन्सारी

[राष्ट्रीय मुस्लिम यूनिवर्सिटी असहयोग-आन्दोलन के अन्तर्गत अलीगढ़ में स्थापित की गई थी। इसमें अलीगढ़ यूनिवर्सिटी से असहयोग करनेवाले लड़के शामिल हुए थे। मुस्लिम यूनिवर्सिटी का सही नाम जामिया मिलिया इस्लामिया था। यह अलग-अलग रूपों में चलती रही और अब दिल्ली के निकट कायम है।]

४०. महात्मा गांधी की ओर से

तार

अहमदाबाद

१ दिसम्बर १९२५

जवाहरलाल नेहरू, आनंद भवन, इलाहाबाद

उपवास टूटा। हालत बिल्कुल ठीक है। आशा है, कमला बराबर प्रगति कर रही होगी। सरूप यहां है।

गांधी

४१. महात्मा गांधी की ओर से

[मैं अपनी पत्नी को उनके इलाज के लिए १९२६ के शुरू में यूरोप ले गया था।]

२१ जनवरी १९२६

प्रिय जवाहर,

मुझे खुशी है कि तुम कमला को अपने साथ ले जा रहे हो। हां, दोनों नहीं आ सको तो जाने से पहले कम-से-कम तुम्हें तो यहां आना चाहिए। देशबन्धु-स्मारक के बारे में जमनालालजी के नाम तुम्हारा पत्र काफी होगा। चर्खा-संघ के मंत्री तो तुम रहोगे ही, परन्तु यदि कोई सहायक चाहिए तो शंकर-लाल के पास होना चाहिए। नकशा तैयार न करने के लिए मैं तुम्हें दोष नहीं दे सकता। तुमने अपना समय व्यर्थ नहीं गंवाया है। तुम्हारे पास यूरोप में काम आने लायक कपड़े होने चाहिए।

सस्नेह तुम्हारा,

बापू

४२. महात्मा गांधी की ओर से

आश्रम, साबरमती

५ मार्च १९२६

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा पहली तारीख का पत्र मिला। हालांकि तुम तो डा. मेहता के

नाम पत्र छोड़ ही गये हो, फिर भी दुगुनी निश्चिन्तता कर लेने के लिए मैंने भी उन्हें लिखा है। आशा है, जहाज पर कमला का स्वास्थ्य वहुत अच्छा रहा होगा। तुम सबको समुद्र-यात्रा से लाभ हुआ? अधिक लिखने के लिए समय नहीं है।

सस्नेह तुम्हारा,
मो. क. गांधी

४३. महात्मा गांधी की ओर से

आश्रम, साबरमती,
२३ अप्रैल १९२६

प्रिय जवाहरलाल,

मैं हर सप्ताह तुम्हें लिखने का विचार करता रहा और हर वार असफल रहा। लेकिन यह सप्ताह मैं योंही नहीं गुजर जाने दूंगा। तुम्हारे बारे में ताजा समाचार मुझे पिताजी से मिले जब वह प्रतिसहयोगवादियों के साथ यहां आये थे। तुमने, जो समझौता हुआ वह देख लिया होगा।

हिन्दू और मुसलमान दिन-ब-दिन एक-दूसरे से दूर होते जा रहे हैं, परन्तु इस चीज से मुझे अशांति नहीं होती। किसी भी कारण से सही, मुझे महसूस होता है कि यह अलगाव इसीलिए बढ़ रहा है कि आगे चलकर वे सब और भी नजदीक आयें।

मैं आशा करता हूं कि कमला को लाभ हो रहा है।

सस्नेह तुम्हारा,
बापू

[प्रति-सहयोगवादियों का एक गुट था, जिसमें प्रमुख कांग्रेसी और दूसरे लोग थे। मुख्य तौर पर यह महाराष्ट्र में था। एम. आर. जयकर और एन. सी. केलकर नेताओं में से थे।]

४४. रोम्यां रोलां की ओर से

विलनेव् (वो) विला ओल्गा
११ मई १९२६

प्रिय महाशय जवाहरलाल नेहरू,

मुझे आपका और अपने संत-मित्र गांधी का पत्र पाकर प्रसन्नता हुई है। आपके नाम से हम परिचित हैं। कुछ ही दिन पहले हमने आपका नाम 'हिन्दुस्तान टाइम्स' में प्रकाशित एक भाषण में पढ़ा था।

मुझे और मेरी बहन को आपसे मिलकर बड़ी खुशी होगी। क्या आपके और श्रीमती नेहरू के लिए यह संभव होगा कि आप अगले सप्ताह दोपहर-बाद यहां पधारें, हमारे साथ विला ओल्गा में चाय पीयें और कुछ घंटे साथ बितायें ? मैं अनुरोध करता हूं कि आप मुझे बतायें कि बुधवार १९ मई तथा शनिवार २२ मई के बीच कौन-सा दिन आपके लिए सबसे सुभीते का होगा ? जो दिन आपने चुना हो, यदि उस दिन मौसम अच्छा न रहे तो आप सवेरे ही हमें केवल तार कर दें कि आपका आना किसी दूसरे दिन होगा।

मैं आशा करता हूं कि श्रीमती नेहरू शीघ्र ही स्विट्जरलैंड की जल-वायु में अपनेको स्वस्थ अनुभव करने लगेंगी। क्या आपकी नन्हीं बेटी जो जेनेवा के अंतर्राष्ट्रीय स्कूल में पढ़ती है वहीं है ? उसकी अध्यापिका कुमारी हारटख हमारी बहुत अच्छी मित्र हैं। वह बहुत भली तथा कर्तव्य-परायण महिला हैं। आप निश्चित मानिये कि आपकी पुत्री उनसे अधिक अच्छे, ज्ञानवान और स्नेहशील हाथों में नहीं हो सकती।

प्रिय श्री नेहरू, मेरा मैत्रीपूर्ण प्यार स्वीकार कीजिये।

रोम्यां रोलां

फिर से—

विला ओल्गा होटल बाइरन के करीब (थोड़ा ऊपर) है। यदि आप नाव द्वारा आवें तो यह विलनेव के घाट से दस मिनट का रास्ता है। यदि रेल द्वारा आवें तो आप तेरिते के स्टेशन पर उतरें और वहां से वैवे विलनेव की बिजली की ट्राम पकड़ें (विलनेव की ओर जानेवाली), जो स्टेशन के सामने से गुजरती है और आप ट्राम को होटल बाइरन के पड़ाव पर रुकवायें।

४५. सरोजिनी नायडू की ओर से

बम्बई,
१५ अक्तूबर १९२६

प्यारे जवाहर,

आज सवेरे मुझे पापाजी का तार मिला कि भूल से कल की डाक से वह तुममें से किसीको समय से नहीं लिख सके और मैं तुम्हें लिखकर यह सूचित कर दूं कि उनको आराम है और उनका स्वास्थ्य तेजी से सुधर रहा है।

शेष सब ठीक हैं। पापाजी शिमला जाने के पहले मसूरी में लंबे आराम करने के बाद आश्चर्यजनक रूप से स्वस्थ थे। उसके बाद शारीरिक से भी अधिक मानसिक कारणों से—उलझी हुई राजनैतिक स्थिति, आंतरिक झगड़े, जिन लोगों पर उन्होंने भरोसा किया था और जिनके साथ काम किया था उन्हींके नितांत अयोग्य और फूट पैदा करनेवाले चक्र-कुचक्र और फिर दौरे की थकान आदि के कारण—वह पस्त होने लगे। पर मुझे लगता है, पिछले तेज बुखार के बाद अब सचमुच उनकी तबीयत सुधरने लगी है। चुनावों को लेकर वह बेकार ही परेशान हैं। मेरे विचार से कुल मिलाकर उनके दल के लिए परिस्थिति इतनी निराशाजनक नहीं है, जैसाकि अंदेशा था। अगले कुछ सप्ताह निकल जायं और बिल्कुल बनावटी तौर पर पैदा किये गए और जानबूझकर जिंदा रखे गए साम्प्रदायिक, आन्तरिक, व्यक्तिगत तथा तरह-तरह के तनाव कुछ ढीले पड़ें तो मुझे खुशी होगी।

तुम्हारे बारे में मुझे तरह-तरह की अच्छी अफवाहें—तुम्हारे फिर से प्राप्त जीवनोल्लास के संबंध में प्रफुल्लित करनेवाली—सुनाई पड़ी हैं। मुझे बड़ी प्रसन्नता है कि भारतीय जीवन की नीरस भयंकरताओं से तुम्हें लंबी छुट्टी मिल सकी। तुम्हारे लिए यूरोप तुम्हारी नवीन अभिव्यक्ति और आत्मा की व्याधियों से वास्तविक स्वास्थ्य लाभ का साधन सिद्ध हुआ होगा। आशा है, कमला का स्वास्थ्य सुधर रहा होगा। मुझे आश्चर्य है कि उसे स्विस जलवायु और स्विस लोग पसंद आये होंगे? स्विट्जरलैंड मुझे बहुत प्रिय नहीं है, यद्यपि मैं पतझड़ के पुष्पों से आवृत हरे-भरे पठारों की पूजा करती हूं। इन्दू अब तो स्विस लहजे में धड़ाधड़ फ्रेंच बोलने लगी होगी? बिट्टी, मुझे आशा है, अपनी छुट्टियां आनंद से बिता रही होगी! मैंने सुना कि सरूप और रंजीत का समय बहुत अच्छा कटा। काश मैं भी समुन्दर पार होती! मेरा समय तो बड़ी परेशानी में व्यतीत हुआ है—दौरा करते हुए, और झगड़े निबटाते हुए। इस समय मैं कुछ-कुछ बीमार हूं। पद्मजा आनंद से है, पर लीलामणि का एक बड़ा आपरेशन हुआ था और अब वह स्वास्थ्य लाभ कर रही है। हेदाजी हाजी बड़े उकताकर लौटे हैं। मौलाना सऊद के विरुद्ध बहुत-कुछ कह-सुन रहे हैं। शुएब भी बहुत प्रसन्न नहीं हैं। वह बम्बई में कुछ धंधा करने की बात गंभीरता से सोच रहे हैं। अन्सारी तो इन सारे

महीनों में राजा-महाराजाओं की धाय का काम करते रहे हैं। उन्हें देखते ही लगता है कि बेहद ऊबे हुए हैं। वह लगभग बंदी-से हैं, और उस बंदी जीवन में उनके मात्र संगी-साथी हैं थर्मामीटर, गरारे की दवाइयां और पट्टियां।

उमर की मृत्यु ने बम्बई को मेरे लिए भीषण दुःस्वप्न जैसा बना दिया है—बेचारा उमर, शाहाना तबीयतवाला उमर ! पता नहीं, उसकी दुखी आत्मा को शांति मिली या नहीं। तुम्हें वह कितना प्यार करता था !

मुझे पता नहीं कि तुम मेरी इस घसीट को पढ़ सकोगे ? मेरी कलाई दर्द से जकड़ी है। इकबाल के शब्दों में सचमुच मैं "सर-आ-पा दर्द हूं।"

नमस्कार, प्यारे जवाहर। मुझे इस बात से कितनी खुशी है कि तुम हिन्दुस्तान से बाहर हो और तुम्हारी आत्मा को अपने यौवन और गौरव और चिरंतन सौंदर्य के स्वप्न को फिर से सजीव करने का अवसर मिल सका है। मां और बेटी को मेरा प्यार।

तुम्हारी प्यारी बहन,
सरोजिनी

['हेदाजी हाजी' से मतलब शायद प्रमुख मुसलमानों के उस डेपुटेशन से है जो उस समय हेजाज गया था। मेरा खयाल है कि मौलाना शौकलअली और मि. शुएब कुरेशी उसमें शामिल थे।

'उमर' से मतलब उमर सोमानी से है। वह बम्बई के एक बड़े उद्योगपति थे। उन्होंने बम्बई में पहले होम रूल आन्दोलन में और बाद में कांग्रेस में महत्वपूर्ण भाग लिया था। उन्होंने बहुत सारी दौलत कमाई और उसे सट्टे में खो दिया।]

४६. मोतीलाल नेहरू की ओर से

आनंद भवन, इलाहाबाद
२ दिसम्बर १९२६

मेरे प्यारे जवाहर,

कह नहीं सकता, मैंने कितनी डाकें छोड़ीं, लेकिन तीन से ज्यादा जरूर होनी चाहिए। मैं चुनाव का दौरा पूरा करके कल ही इलाहाबाद वापस आया

हूं। इस खत के पाने से कहीं पहले तुम्हें नतीजों का पता लग चुका होगा। मद्रास और बंगाल में हमारा बहुमत तो नहीं हो सका है, फिर भी हमारी ताकत रहेगी। बिहार में वोटों की गिनती पूरी नहीं हुई है, लेकिन इस सूबे के मद्रास और बंगाल से पीछे रहने की उम्मीद नहीं है। बंबई और सी. पी. में नतीजे अच्छे नहीं रहे, लेकिन यू. पी. में तो नतीजा भयंकर रहा। पंजाब से कोई खास उम्मीद न थी और मुमकिन है, असेंबली की सभी जगहों में हमारी हार होगी—लाजपतराय के झूठों की बदौलत। असम के छोटे-से सूबे ने खूब किया है और बर्मा ने असेंबली में अपना दो का कोटा पूरा कर दिया है। मुमकिन है, असेंबली में हमारी ताकत पिछले तीन सालों के मुकाबले कुछ ज्यादा रहे। लेकिन यू. पी. कौंसिल में तो करारी हार ही होनेवाली है। पिछली मरतबा ही कुछ खास अच्छी हालत नहीं थी और इस मरतबा तो और भी बुरी हालत रहेगी। अपने ही सूबे में कोई भी ठिकाने के काम करनेवाले मेरी मदद के लिए नहीं थे, और मुझे अपना बहुत-सा वक्त दूसरे सूबों को देना पड़ा; लेकिन अगर मैं अपना पूरा वक्त यू. पी. को ही देता, तो भी ज्यादा अच्छे नतीजे की मुझे उम्मीद नहीं थी। जिस तरह का प्रचार मालवीय-लाला-दल ने मेरे खिलाफ कर रक्खा था, उसका जवाब देना मेरे बस के बाहर था। खुले तौर पर तो मुझे हिन्दू-विरोधी और मसलमानों का हिमायती कहकर गिराया जा रहा था, और चुपके-चुपके करीब-करीब हर वोटर से कहा जाता था कि मैं गाय का गोश्त खानेवाला हूं और मुसलमानों से मिलकर खुले आम गो-कशी को हमेशा के लिए कानूनी कराने की कोशिश में हूं। शामजी ने इस प्रचार में यह कहकर खासी मदद दी कि मैंने ही असेम्बली में उनके 'गोरक्षा बिल' पर बहस नहीं होने दी थी। वह फैजाबाद डिवीजन से असेम्बली के लिए खड़े हुए थे और दो दूसरे उम्मीदवारों में एक स्वराज्य पार्टी का था और दूसरे अमेठी के दद्दनसाहब थे। स्वराजी उम्मीदवार एक मशहूर और असरवाले वकील थे, लेकिन जीत दद्दनसाहब के पैसों की हुई। शामजी को मालवीय पैसा दे रहे थे, लेकिन उनके दल के उम्मीदवार दद्दन की जीत हुई। शामजी की तो जमानत जब्त हुई, लेकिन स्वराजी और दद्दन के बीच बराबर की दौड़ चली। सोचने की बात है कि दद्दन जैसा निकम्मा आदमी एक काबिल और सबके चाहे जानेवाले आदमी को हरा दे!

जैसा तुमने सुना होगा, पिछले दिनों बेचारी बऊआजी चल बसीं। इसके बाद शामजी ने यह घिनौना नारा अपनाया—"माई मेरी मर गई, गाई मेरी माई है।"

फिरकेवारान नफरत और वोटरों को गहरी रिश्वत देने का बोलबाला था। मेरी दिलचस्पी पूरी तरह से हट गई है और अब मैं संजीदगी के साथ पब्लिक कामों की जिन्दगी से छुट्टी लेने की सोच रहा हूं। यही फिक्र है कि वक्त कैसे काटूंगा। मैं गोहाटी-कांग्रेस का इंतजार कर रहा हूं और इस बीच चुप हूं। मालवीय-लाला-दल बिड़ला के पैसों की ताकत पाकर कांग्रेस पर कब्जा कर लेने की जी-तोड़ कोशिश में है, मुमकिन है वे कामयाब हो जायंगे, क्योंकि हमारी तरफ से कोई जवाबी कोशिश मुमकिन नहीं। कांग्रेस के बाद शायद मैं एक पब्लिक ऐलान करूं और उसके साथ असेम्बली की अपनी मेंबरी से इस्तीफा दे दूंगा, हालांकि मैं अब भी देश के सबसे बड़े दल का नेता माना जाता हूं। असेम्बली या कौंसिलों में अपनी जो मौजूदा तादाद है, और जिस तरह के लोग हममें हैं, उनके रहते हम लोग कुछ नहीं कर सकते। मुझे डर है कि जल्दी ही हमारे दल के लोग फटकर और जगह जा मिलेंगे, लेकिन उसे छोड़ भी दिया जाय तो भी कुछ हासिल कर सकना नामुमकिन है। जहांतक मुल्क में काम का सवाल है, मुझे ऐसा कुछ नहीं दिखाई पड़ता, जिससे मैं कामयाबी की उम्मीद रखकर कर सकूं। हिंदू-मुस्लिम-एके के लिए मेरी नेशनल यूनियन जरूर है, लेकिन मौजूदा फिरकेवाराना तनाव की हालत में मेरी आवाज नक्कारखाने में तूती की आवाज होगी। गांधीजी से मैं सलाह लूंगा, लेकिन, जैसा तुम जानते हो, उनके शौकों में मैं एक हद से ज्यादा दिलचस्पी नहीं ले सकता। हमारे एक दूसरे से दूर होनेकी वजह से तुम मुझे मुश्किल से ही सलाह दे सकते हो, लेकिन तुम्हारे खयाल जानकर मुझे खुशी होगी। मैं जानता हूं, तुमसे राय मांगना ठीक नहीं है, क्योंकि तुम हिन्दुस्तान की मौजूदा सियासत से करीब नौ माह से भी ज्यादा अलग रहे हो, लेकिन तुम्हारे सुझाव कि मैं किस काम में अपने वक्त को लगाऊं काम के होंगे।

चनावों ने मुझे बिल्कुल थका दिया है, लेकिन फिर भी मेरे लिए चैन नहीं। काशीपुर में सूबे की कान्फ्रेंस होने को है। उसके बाद ५ से ९ दिसम्बर

तक अभी सूबा कमेटी की हुड़दंगे की बैठक है, और आखिर में कांग्रेस है। सभी जलसों में परेशानी की ही उम्मीद है, लेकिन इन्हें मुझे पार लगाना है, और नहीं तो महज्ञ इसलिए कि यह अंदाज लगे कि कितनी सड़ांद आ चुकी है। मैं गोहाटी कलकत्ता से सुन्दरबन होते हुए नदी के रास्ते जाने की सोच रहा हूं। इतने मुश्किल के दिनों के बाद नदी पर करीब एक हफ्ता बिताने में मुझे कुछ राहत मिलेगी। तन्दुरुस्ती कुछ गिर गई है और एक्जीमा बुरी तरह उभर आया है और कहीं-कहीं रिसता है, जिसकी वजह खून की कमी और शायद गंदा पानी और धूल हैं। यों अच्छा हूं।

पिछली डाक से घर में किसीके पास तुम्हारा खत नहीं आया। नैन कहती है, शायद तुम जर्मनी गये हो। तुम्हारे पिछले खतों से मालूम हुआ था कि तुम मन्टना चले गये हो और इससे कमला की तबीयत में कुछ सुधार हुआ है। असली चीज तो टैम्परेचर है, और यह कि वह कम-से-कम एक महीने तक ठीक रहे। और बातों में सुधार को मैं बहुत अहमियत नहीं देता। मुझे उम्मीद है कि मन्टना में कुछ हफ्ते और रहने से मन-चाहा नतीजा निकलेगा।

तुम्हारा स्नेही,
पिता

४७. मोतीलाल नेहरू की ओर से

पी. एस. खरोटी, सुन्दरबन
१५ दिसम्बर १९२६

मेरे प्यारे जवाहर,

यह खत सुन्दरबन के बीचोंबीच से लिख रहा हूं। मेरे साथ चलनेवाले सभी लोग रह गये और उपाध्याय और हरी को छोड़कर मैं करीब-करीब अकेला हूं। स्वामी सत्यदेव अपने दो चेलों के साथ दूसरे दर्जे में हैं। वह कलकत्ता में ही मेरे साथ चिपके थे, लेकिन समझदार इतने हैं कि जबतक बातचीत के लिए खास तौर पर बुलाया न जाय, अपनेको दूर ही रखते हैं। दूसरे मुसाफिरों के न होने की वजह से पहले दर्जे के डेक का इस्तेमाल उन्हें कर लेने दिया जाता है।

जिस किसीने भी इसे सुन्दरबन का नाम दिया हो, बिल्कुल ठीक ही

दिया है । हिन्दुस्तान में नदी का सफर इससे सुहावना नहीं हो सकता और बड़ी खुशी है कि मैंने ऐसा सोचा। घने जंगल को छोटे-बड़े सभी नाप के टुकड़ों में काटनेवाले पानी के रास्ते में से हम धीरे-धीरे (घंटे में कोई ८ मील या इससे कम) अगनबोट में गुजर रहे हैं। मीलों तक कोई आबादी नहीं, लेकिन शेर से लेकर हिरन तक सभी जंगली जानवर भरे पड़े हैं। एक ही मलाल है कि मैं साथ में राइफल नहीं लाया। सेरंग (जो ७० रुपये महीने पर बोट की कमान पर है) कहता है कि मेरे पास बंदूक होती तो तयशुदा रास्ते से थोड़ा इधर-उधर ले जाकर भी जी भरकर शिकार करा सकता था। रास्ते से बिना बहके हुए भी इक्का-दुक्का शिकार हो सकता है। नदी का रास्ता इतना पतला है कि बस अगनबोट के गुजरने की ही गुंजाइश है और फिर कहीं अचानक इतना खुल जाता है कि मीलों तक हर तरफ पानी की शानदार चादर बिछी हुई दिखाई पड़ती है। पानी के इस लंबे-चौड़े फैलाव का पूरा या कुछ हिस्सा पार करके बोट फिर अचानक अनगिनत पतली धाराओं में से एक में दाखिल होती है और आगे चलकर फिर एक धरती से घिरे समुद्र में आ पहुंचती है। किनारों पर तरह-तरह के छोटे-बड़े जंगली पेड़ों की कतारें हैं और इनके बीच में बड़े-बड़े और छोटे-छोटे दोनों तरह के ताड़ के पेड़ काफी छितरे हुए हैं। सारा नजारा बड़ा मनमोहक है और उसे मैं घंटों देखता रहता हूं, और जो दूरबीन तुमने भेजी है उसकी मदद से, बोट की पुलिया पर से, जंगल को काटनेवाली छोटी धाराओं के घुमाव-फिराव के पीछे, जहांतक पहुंच पाती है, नजर दौड़ाता रहता हूं।

वक्त की पाबंदी इन नदी के बोटों की खासियत नहीं और हम लोग २२ से २४ तक किसी दिन गोहाटी पहुंच सकते हैं। उम्मीद यही कर रहा हूं कि और भी देर न लग जाय क्योंकि २४ को सब्जेक्ट कमेटी की बैठक शुरू होगी। लेकिन आज रात खुलना पहुंच जाने पर इस सफर का सबसे दिलचस्प हिस्सा खत्म हो जायगा, क्योंकि उसके बाद हम सुन्दरबन पार कर चुके होंगे और जिसे तहजीब कहा जाता है वहां पहुंच चुके होंगे। दो या तीन दिन बाद हम गोवा लैंडो पहुंचेंगे और इस बीच ऐसे नगरों को पार करेंगे, जिनकी गाइड में बड़ी तारीफ की गई है। गोवा लैंडो से कुछ मील ऊपर गंगामाता को हम बिदाई देंगे और पिता ब्रह्मपुत्र के इलाकों में से घुसेंगे,

और इसकी, जैसाकि गोहाटी से आगे थोड़े-से सफर का हमारा पहला तजुर्बा है, अपनी अलग ही खूबसूरती हम देखेंगे।

अभी ही मैं लौटती हुई ताकत को महसूस करने लगा हूं, और अगर कोई खास बात न हुई तो मैं उम्मीद कर रहा हूं कि सफर के पूरा होते-होते बिल्कुल ठीक हो जाऊंगा।

यह खत खुलना से भेजा जायगा। आज कलकत्ता से डाक जायगी। बंगाल की जो नई रेलें हैं उनमें से किसी लाइन का एक छोर खुलना में है और अंदेशा है कि कहीं यह खत एक हफ्ते तक रुका न रहे। फिर भी अच्छा यही है कि इसे डाक में डाल दिया जाय, क्योंकि कोई नहीं कह सकता कि अगली डाक निकलने के दिन तक क्या होगा।

तुम्हारा २३ नवम्बर का खत इलाहाबाद में मेरे वहां से रवाना होने के कुछ समय बाद पहुंचा था। रंजीत ने उसे मेरे पास भेज दिया और कलकत्ता रवाना होने से ठीक पहले वह मुझे मिला। जब तुमने खत लिखा तब तुम मन्टना पहुंच गये थे। लेकिन तुमने यह नहीं लिखा कि जर्मनी वगैरा से वापसी पर तुमने कमला को कैसा पाया। उम्मीद है, अगली डाक से खुश-खबरी मिलेगी।

प्यारी नन्हीं इंदू को मेरी ओर से वर्षगांठ के मौके का तोहफा न मिल सका, क्योंकि मैं चुनावों में घिरा रहा और दूसरों में इतनी सूझ नहीं थी। मुझे बड़ा अफसोस है।

जब मैंने लिखा कि नैन की तंदुरुस्ती उतनी ठीक नहीं लग रही थी जितनी कि यू ोप की लंबी सफर के बाद उसे लगनी चाहिए थी, तब मुझे यह नहीं मालूम था कि उसके घर के नम्बर में बढ़ती होनेवाली है। वह बिल्कुल ठीक है।

अपने २३ नवम्बर के खत में तुमने लिखा है कि तुम्हारे पास इतने पैसे हैं कि १५ अक्तूबर तक काम चला सकोगे। अभी मैंने जमनालाल का पत्र, जो मेरे पास है, देखा। इसमें लिखा है कि ११ नवम्बर को तुम्हारे पास ३०० पौंड भेजे ग े हैं। यह तुम्हें मिल गये होंगे और इसके बारे में मैं फिक्र नहीं कर रहा हूं।

अपने आगे के प्रोग्राम के बारे में अभी तक मैं कुछ तय नहीं कर पाया हूं।

लेकिन अपना पिछला खत भेजने के बाद उसपर सोचने का मौका ही नहीं मिला। गोहाटी के बाद मैं किसी मजबूत फैसले पर पहुंचने की उम्मीद करता हूं। इस बीच जो भी विचार इस नदी के सफर के बीच, जिसका एक हफ्ता बाक़ी है, उठेंगे, मैं तुम्हें लिखूंगा।

सबको प्यार।

तुम्हारा स्नेही,
पिता

४८. मोतीलाल नेहरू की ओर से

असम मेल,
३० दिसम्बर १९२६

मेरे प्यारे जवाहर,

गोहाटी से लौटते हुए ये चंद सतरें तुम्हें उस ट्रेन में लिख रहा हूं, जिसमें सबके-सब सदर, पिछले सदर और बहुत-से मेंबर चल रहे हैं। गाड़ी बहुत हिल रही है और ठसाठस भरी हुई है। हिन्दुस्तान की यह सबसे आराम की गाड़ी समझी जाती है, क्योंकि यह गलियारेवाली गाड़ी है, लेकिन गलियारे में जगह-जगह अखबारी खबर भेजनेवाले जमे हुए हैं, और हम लोग अपनी-अपनी जगहों में भी महफूज नहीं हैं। लंबे खत के लिए तुम्हें दूसरी डाक का इंतजार करना होगा। इस बीच इतना बता देना काफी है कि गोहाटी-कांग्रेस उम्मीद से ज्यादा कामयाब रही। हम सभी लोग प्रतिक्रियावादिता के खिलाफ मजबूत रहे, और जो हम लोगों ने चाहा, वह बड़ी कसरत राय से मंजूर हुआ।

श्रद्धानन्द की हत्या ने फिरकेवाराना कड़वाहट को बढ़ा दिया है और कई जगहों से बदले की खुली धमकियां आ रही हैं। एक ही दिशा, जहां से असली खतरा है, बंगाल के क्रांतिकारी हैं। बदकिस्मती से उनमें बहुत काफी हद तक फिरकापरस्ती का दाग़ लग गया है।

तुम्हारे पिछले दो खतों से यह जानकर खुशी हुई कि कमला की तबीयत बराबर सुधर रही है।

दलित राष्ट्रों की लीग में शामिल होने के लिए कांग्रेस की तरफ से तुम अकेले नुमाइंदे चुने गये हो। और कोई भी ऐसा नहीं था, जो इतने कम वक्त में खबर पाकर वहां शामिल हो सकता। तुम्हारा खर्चा कांग्रेस देगी।

रंगास्वामी ने तुम्हें समुद्री तार भेज रक्खा है और ज्ञाव्ते का खत भी तुम्हारे और लीग के मंत्री के नाम इसी डाक से भेज रहे हैं।

वाकी दूसरे खत में।

तुम्हारा स्नेही,
पिता

[स्वामी श्रद्धानन्द आर्य समाज के बहुत बड़े नेता थे और उन्होंने असहयोग आन्दोलन और संबंधित आन्दोलनों में प्रमुख भाग लिया था। उनका बड़ा सम्मान था। एक मुस्लिम धर्मान्ध ने उनकी दिल्ली में हत्या कर डाली। लोगों में इसकी तीव्र प्रतिक्रिया हुई।

फरवरी १९२७ में दलित राष्ट्र संघ की एक कांग्रेस ब्रुसेल्स, बेल्जियम में हुई थी। उस समय मैं अपनी पत्नी की बीमारी के कारण यूरोप में था। कांग्रेस के प्रतिनिधि के नाते मैं इस कांग्रेस में शामिल हुआ। इसके बारे में मैंने अपनी 'मेरी कहानी' में लिखा है।]

४९. महात्मा गांधी की ओर से

नंदी पर्वत (मैसूर राज्य)
२५ मई १९२७

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा पत्र तब मिला जब मैं रोग-शय्या पर था और बहुत पत्र-व्यवहार नहीं कर सकता था। अभी मैं अच्छा हो रहा हूं और हल्का-हल्का काम ही कर पाता हूं। मगर मेरी प्रगति बराबर जारी है।

अब तुम्हें वहां लम्बा समय होगया, मगर मैं जानता हूं कि तुमने उसे बेकार नहीं खोया है। फिर भी मुझे आशा है कि जब तुम लौटोगे तबतक कमला पूरी तरह स्वस्थ हो जायगी। अगर उसके स्वास्थ्य के लिए ज्यादा दिन रहना जरू ी हुआ तो मैं मान लेता हूं कि तुम वहां रह जाओगे।

दलित राष्ट्र सम्मेलन की कार्रवाइयों के बारे में मैंने तुम्हारा सार्वजनिक विवरण और तुम्हारा निजी गुप्त विवरण भी खूब ध्यान लगाकर पढ़ा। खुद मुझे तो इस संघ से बहुत आशा नहीं है, क्योंकि और कुछ कारण न भी हो तो यह तो है ही कि उसकी स्वतंत्र प्रवृत्ति का दारोमदार उन्हीं सत्ताओं के सद्भाव पर है, जो दलित राष्ट्रों के शोषण में हिस्सेदार हैं और मेरा खयाल है कि यूरोपियन राष्ट्रों के जो सदस्य इस संघ में शरीक हुए वे अन्त तक

गरमी क़ायम नहीं रख सकेंगे। कारण, जिसे वे अपने स्वार्थ की हानि समझेंगे उसमें वे अपनेको अनुकल नहीं बना सकेंगे। इधर यह खतरा है कि हमारे लोग अपनी भीतरी शक्ति का विकास करके मुक्ति प्राप्त करने के बजाय उसके लिए फिर बाहरी शक्तियों की ओर देखने और बाहरी मदद ढूंढ़ने लगेंगे। मगर यह तो कोरी दिमागी राय है। मैं यूरोप की घटनाओं का ध्यान-पूर्वक अवलोकन बिल्कुल नहीं कर रहा हूं। तुम मौके पर हो और तुम्हें वहां के वायुमंडल में वास्तविक सुधार दिखाई दे सकता है, जो मुझे बिल्कुल दिखाई नहीं देता।

तुम्हारे आगामी कांग्रेस के अध्यक्ष चुने जाने की कुछ चर्चा है। मेरा इस बारे में पिताजी से पत्र-व्यवहार हो रहा है। हिन्दू-मुस्लिम प्रश्न पर महा-समिति के सर्वसम्मत प्रस्ताव के बावजूद यहां भविष्य बिल्कुल उज्ज्वल नहीं है। पता नहीं कि सिर फोड़ने का सिलसिला किसी भी तरह रोका जायगा या नहीं। आम लोगों पर हमारा काबू नहीं रहा और मुझे ऐसा दिखाई देता है कि अगर तुम अध्यक्ष बन गये तो आम लोगों की दृष्टि से तुम कम-से-कम सालभर के लिए तो खो जाओगे। फिर भी इसका यह अर्थ नहीं कि कांग्रेस के काम की उपेक्षा करनी है। किसी-न-किसीको तो उसे करना ही है। मगर बहुत लोग हैं जो इस काम को करने के लिए रज़ा-मंद और उत्सुक हैं, उनकी नीयत मिलीजुली या स्वार्थपूर्ण भी हो सकती है; परन्तु वे कांग्रेस की गाड़ी किसी-न-किसी तरह चलाते रहेंगे। संस्था सदा उनकी मर्ज़ी पर उनके हाथ में रहेगी, जिनमें सामूहिक कार्य करने के गुण होंगे और जिनका आम लोगों पर काबू हो जायगा। तब प्रश्न यह है कि तुम्हारी सेवाओं का सर्वोत्तम उपयोग कैसे किया जा सकता है ? तुम्हारा अपना जो विचार हो, वह तुम्हें करना चाहिए। मुझे मालूम है कि तुम में अनासक्त विचार करने की क्षमता है और तुम दादाभाई या मैक्स्विनी की तरह बिल्कुल निःस्वार्थ होकर कहोगे कि 'यह ताज मेरे सिर पर रख दो।' और मुझे कोई सन्देह नहीं कि वह रख दिया जायगा। स्वयं मुझे मार्ग इतना स्पष्ट दिखाई नहीं देता कि मैं वह ताज जबर्दस्ती तुम्हारे सिर पर रख दूं और उसे पहनने को तुम्हें समझाऊं। पिताजी ने अगर पहले ही न लिख दिया हो तो इसी डाक से तुम्हें लिखेंगे। इस पत्र की एक नकल उनके पास

भिजवा रहा हूं।

अच्छा हो, तुम भी अपनी इच्छा समुद्री तार द्वारा भेज दो। जुलाई के अंत तक मेरे बंगलौर में रहने की संभावना है। इसलिए तुम अपना तार सीधा बंगलौर भेज सकते हो या बिल्कुल पक्की बात करनी हो तो आश्रम के पते पर भेज दो। मैं जहां भी होऊंगा वहीं वह तार दोहरा दिया जायगा।

तुम सबको प्यार।

तुम्हारा,
मो. क. गांधी

५०. महात्मा गांधी की ओर से

[मैं दिसम्बर १९२७ में यूरोप से लौटा और सीधा राष्ट्रीय महासभा के मद्रास अधिवेशन में चला गया। मेरे कहने पर कुछ प्रस्ताव पास किये गए थे। यह पत्र गांधीजी ने इसलिए लिखा था कि इस अधिवेशन में मेरी कुछ प्रवृत्तियां उन्हें पसन्द नहीं आईं।]

सत्याग्रह-आश्रम, साबरमती,
४ जनवरी १९२८

असंशोधित

प्रिय जवाहरलाल,

मेरा खयाल है, तुम्हें मुझसे इतना अधिक प्रेम है कि मैं जो कुछ लिखने जा रहा हूं उसका तुम बुरा नहीं मानोगे। जो हो, मुझे तो तुमसे इतना ज्यादा प्रेम है कि जब मुझे लिखने की जरूरत महसूस हो तब मैं अपनी कलम को रोक नहीं सकता।

तुम बहुत ही तेज जा रहे हो। तुम्हें सोचने और परिस्थिति के अनुकूल बनने को समय लेना चाहिए था। तुमने जो प्रस्ताव तैयार किये और पास कराये उनमें से अधिकांश के लिए एक साल की देर की जा सकती थी। 'गणतंत्री सेना' (Republican army) में तुम्हारा कूद पड़ना जल्द-बाजी का कदम था। परन्तु मुझे तुम्हारे इन कामों की इतनी परवा नहीं, जितनी तुम्हारे शरारतियों और हुल्लड़बाजों को प्रोत्साहन देने की है। पता नहीं, तुम अब भी विशुद्ध अहिंसा में विश्वास रखते हो या नहीं। परन्तु तुमने अपने विचार बदल दिये हों तो भी तुम यह नहीं सोच सकते कि अनधि-

कृत और अनियंत्रित हिंसा से देश का उद्धार होनेवाला है। अगर अपने यूरोपीय अनुभवों के प्रकाश में देश के ध्यानपूर्वक अवलोकन से तुम्हें विश्वास होगया हो कि प्रचलित तौर-तरीके गलत हैं तो बेशक अपने ही विचारों पर अमल करो, मगर मेहरबानी करके कोई अनुशासन-बद्ध दल बना लो। कान-पुर का अनुभव तुम्हें मालूम है। प्रत्येक संग्राम में ऐसे मनुष्यों की टोलियां चाहिए जो अनुशासन मानें। तुम अपने अस्त्रों के बारे में लापरवाह होकर इस तत्व की उपेक्षा कर रहे हो।

अब तुम राष्ट्रीय महासभा के कार्यवाहक मंत्री हो। ऐसी सूरत में मैं तुम्हें सलाह दे सकता हूं कि तुम्हारा कर्तव्य है कि केन्द्रीय प्रस्ताव अर्थात एकता पर और साइमन-कमीशन के बहिष्कार के महत्वपूर्ण परन्तु गौण प्रस्ताव पर अपनी सारी शक्ति लगा दो। एकता के प्रस्ताव को संगठन करने और समझाने-बुझाने के तुम्हारे तमाम बड़े गुणों के उपयोग की जरूरत है। मेरे पास अपनी बातों का विस्तार करने के लिए समय नहीं है, परन्तु बुद्धिमान् के लिए इशारा काफी होना चाहिए।

आशा है, कमला का स्वास्थ्य यूरोप की तरह ही अच्छा होगा।

सप्रेम तुम्हारा,
बापू

५१. महात्मा गांधी की ओर से

आश्रम, साबरमती,
१७ जनवरी १९२८

प्रिय जवाहरलाल,

मुझे बोलकर लिखवाकर समय बचाना और अपने दुखते हुए कंधे को आराम देना होगा। रविवार को मैंने तुम्हें फेनर ब्रॉकवे के बारे में लिखा था। आशा है, तुम्हें वह पत्र ठीक समय पर मिल गया होगा।

तुम्हें मालूम है कि जिन लेखों की तुमने आलोचना की है उन्हें, सिवा कथित 'अखिल भारतीय प्रदर्शिनी' वाले लेख के, मैंने इसीलिए लिखा था कि तुम उल्लिखित कार्य-विवरण में मुख्य हिस्सेदार थे। मुझे एक प्रकार की सुरक्षा महसूस होती थी कि तुम्हारे-मेरे बीच के सम्बन्धों को देखते हुए मेरे लेखों को उसी भावना से समझा जायगा, जिससे वे लिखे जाते थे। फिर

भी मैं देखता हूं कि यह तो सब तरफ़ भूल-ही-भूल हुई। मुझे इसकी परवा नहीं। कारण, यह स्पष्ट है कि ये लेख ही तुम्हें उस आत्म-दमन से मुक्त कर सकते थे, जिसके नीचे तुम इतने वर्षों से दबे जा रहे थे। यद्यपि मुझे तुम्हारे-मेरे बीच का दृष्टि-भेद कुछ-कुछ दिखाई देने लगा था, फिर भी मुझे तनिक भी कल्पना नहीं थी कि ये मतभेद इतने भयंकर हो जायंगे। जहां तुम देश की खातिर और इस विश्वास में कि मेरे साथ और मेरे नीचे अपनी इच्छा के विरुद्ध भी काम करके तुम राष्ट्र की सेवा करोगे और आंच आये बिना निकल आओगे, तुम अपने-आपको बहादुरी के साथ दबा रहे थे, वहां तुम इस अस्वाभाविक आत्मदमन के भार के नीचे दबकर कुढ़ते रहे। और जबतक तुम उस स्थिति में रहे, तुम उन्हीं चीजों की उपेक्षा करते रहे, जो अब तुम्हें मेरी गंभीर त्रुटियां दिखाई देती हैं। मैं 'यंग इंडिया' के पृष्ठों से तुम्हें दिखा सकता हूं कि इतने ही ज़ोरदार लेख मैंने महासमिति की कार्रवाइयों के बाबत तब लिखे थे जब मैं कांग्रेस का सक्रिय पथ-प्रदर्शन कर रहा था। जब कभी महासमिति की बैठकों में ग़ैर-जिम्मेदारी और जल्दबाजी की बातें या कार्रवाई होती थीं तब भी मैं इसी तरह बोला हूं। मगर जबतक तुम मूर्च्छित अवस्था में थे तबतक ये चीजें आज की तरह नहीं खटकीं और इसलिए तुम्हारे पत्र की असंगतियां बताना मुझे बेकार मालूम होता है। इस समय मुझे तो भावी कार्रवाई की ही चिन्ता है।

अगर मुझसे कोई स्वतंत्रता चाहिए तो मैं उस नम्रतापूर्ण अचूक वफादारी से तुम्हें पूरी स्वतंत्रता देता हूं, जो तुमसे मुझे इन तमाम वर्षों में मिली है और जिसकी मैं तुम्हारी हालत का ज्ञान प्राप्त हो जाने के कारण अब और भी क़द्र करता हूं। मुझे बिल्कुल साफ़ दिखाई देता है कि तुम्हें मेरे और मेरे विचारों के विरुद्ध खुली लड़ाई करनी चाहिए। कारण, यदि मैं गलती पर हूं तो मैं स्पष्ट ही देश की वह हानि कर रहा हूं, जिसकी क्षति-पूर्ति नहीं हो सकती और उसे जान लेने के बाद तुम्हारा धर्म है कि मेरे खिलाफ़ बग़ावत में उठ खड़े हो; अथवा यदि तुम्हें अपने निर्णयों के ठीक होने में कोई शंका है तो मैं खुशी से तुम्हारे साथ निजी रूप में उनकी चर्चा करने को तैयार हूं। तुम्हारे और मेरे बीच मतभेद इतने विशाल और मौलिक हैं कि हमारे लिए कोई मिलन की जगह दिखाई नहीं देती। मैं तुमसे अपना यह

दुःख नहीं छिपा सकता कि मैं तुम्हारे जैसा बहादुर, वफादार, योग्य और ईमानदार साथी खोऊं; परन्तु कार्य की सिद्धि के लिए साथीपन को कुर्बान करना पड़ता है। इनसब विचारों से कार्य को श्रेष्ठ मानना चाहिए। लेकिन साथीपन के इस बिछोह से—अगर बिछोह होना ही है—हमारी व्यक्तिगत घनिष्ठता में कोई अन्तर नहीं पड़ेगा। हम लम्बे अर्से से एक ही परिवार के सदस्य बन चुके हैं और राजनैतिक मतभेदों के होते हुए भी हम वैसे ही बने रहेंगे। मुझे कई लोगों के साथ ऐसे सम्बन्ध रखने का सौभाग्य प्राप्त है। उदाहरण के लिए शास्त्री को ही ले लो। उनके मेरे राजनैतिक दृष्टिकोण में जमीन आसमान का फर्क है, मगर उनके मेरे बीच जो स्नेह-सम्बन्ध राजनैतिक मतभेदों का भान होने से पहले ही पैदा हो चुका था, वह बना हुआ है और कई अग्नि-परीक्षाएं पार करके भी जीवित रह गया है।

तुम्हारी पताका फहरे, इसका एक शानदार तरीका सुझाऊं। मुझे प्रकाशन के लिए एक पत्र लिखो, जिसमें तुम्हारे मतभेद प्रकट किये गए हों। मैं उसे 'यंग इंडिया' में छाप दूंगा और उसका संक्षिप्त उत्तर लिख दूंगा। तुम्हारा पहला पत्र मैंने पढ़ने और जवाब देने के बाद फाड़ दिया था। दूसरा रख लिया है और अगर तुम और कोई खत लिखने की तकलीफ नहीं उठाना चाहते तो जो चिट्ठी मेरे सामने है उसीको छापने के लिए तैयार हूं। मुझे पता नहीं, इसमें कोई बुरा लगनेवाला अंश है। लेकिन कोई हुआ तो, विश्वास रखो, मैं ऐसे हर अंश को निकाल दूंगा। मैं उस पत्र को एक स्पष्ट और प्रामाणिक दस्तावेज मानता हूं।

सप्रेम तुम्हारा,
बापू

५२. मोतीलाल नेहरू की ओर से महात्मा गांधी के नाम

११ जुलाई १९२८

प्रिय महात्माजी,

आखिरकार अब मैं यह कह सकता हूं कि कमेटी की रिपोर्ट के बारे में एक किस्म से एकराय हो पाई है। न तो यह पक्की है, और न खरी ही, लेकिन कुछ होगया है, जिसकी हिमायत हम सर्व-दल-सम्मेलन और आमतौर पर मुल्क में कर सकते हैं। आखिरी दौर में जो कार्रवाइयां हो रही हैं, उनकी

नकल भेज रहा हूं, जिससे आपको मालूम हो सकेगा कि किस तरह हम लोगों ने वहस के मुद्दों को निबटाया है। सभी मेम्बर अपने-अपने घर चले गये हैं और जवाहर और मुझे रिपोर्ट तैयार करने का काम सौंप गये हैं और अब हम उसपर जुटे हैं।

आपने अख़बारों में देखा होगा कि कनाडियन डेलीगेशन की मेंबरी से मैंने अपना इस्तीफा भेज दिया है, क्योंकि मैंने महसूस किया कि सर्वदल-सम्मेलन के जरिये हमारी रिपोर्ट के मंजूर किये जाने की जो भी गुंजाइश है वह मेरे देश से बाहर रहने से कम हो जायगी।

अब ताजपोशी का सवाल आता है। मेरे मन में यह बात साफ है कि आज के नायक वल्लभभाई हैं और उनकी खिदमतों को मंजूरी देने के लिए कम-से-कम जो हम कर सकते हैं वह यह है कि ताज उन्हींको दें। वह राजी न हों तो, मेरी समझ में, हालात को देखते हुए, दूसरा सबसे अच्छा चुनाव जवाहर का होगा। यह सही है कि उसने हमारे बहुत-से नाजुक मिजाज़ लोगों को अपनी साफगोई से डरा दिया है। लेकिन अब वक्त आगया है, जबकि ज्यादा फुरती रखनेवाले और मज़बूत कार्यकर्ताओं को मुल्क के सियासी कामों को अपने तरीके से चलाने का मौका मिलना चाहिए। मैं मानता हूं कि इस दर्जे में और उस दर्जे में, जिसमें कि आप और मैं हूं, फ़र्क़ की बातें हैं लेकिन कोई वजह नहीं कि अपने ख़यालों को हम उनपर लादते रहें; हमारी पीढ़ी तो अब तेज़ी से ख़त्म हो रही है। जल्दी या देर से लड़ाई को जवाहर जैसे लोग ही चालू रख सकेंगे। जितनी जल्दी शुरू करें उतना ही अच्छा है।

जहांतक मेरी बात है, मैं महसूस करता हूं कि अपने में जो भरोसा मुझे रहा है, उसे मैं बहुत-कुछ खो चुका हूं और मेरी ताक़त करीब-करीब ख़त्म हो-गई है। अहमियत ताज की उतनी नहीं होती, जितनी कि ताज के पीछे की ताक़त की होती है, और वह ताकत जिसपर मैं भरोसा कर सकता हूं, मुझे नहीं दिखाई देती। बेशक आपकी बात दूसरी है। आपके ज़ोर देने पर मैंने अपने ख़याल आपके सामने रख दिये हैं। फैसला करना आपके हाथ में है।

आपका,

मोतीलाल नेहरू

[इस पत्र में जिस कमेटी का जिक्र है, उसे सर्वदल सम्मेलन ने भारत के लिए संविधान का ढांचा तैयार करने को नियुक्त किया था, विशेषकर सांप्रदायिक समस्याओं आदि के संबंध में। उसकी रिपोर्ट को 'नेहरू-रिपोर्ट' कहा गया, कारण, पं. मोतीलाल नेहरू उस कमेटी के अध्यक्ष थे।]

५३. जे. एम. सेन गुप्ता की ओर से मोतीलाल नेहरू के नाम

[श्री जतीन्द्र मोहन सेन गुप्ता बंगाल में कांग्रेस के एक प्रमुख नेता थे और कांग्रेस का आगामी अधिवेशन कलकत्ता में ही होनेवाला था।]

१०/४, एलगिन रोड, कलकत्ता,
१७ जुलाई १९२८

प्रिय पंडितजी,

कल महात्माजी का मुझे तार मिला है, जिसमें लिखा है कि कांग्रेस के अगले अधिवेशन के सभापति-पद को आप स्वीकार करना नहीं चाहते। इस खबर से मेरे दिल को बड़ी चोट पहुंची। मैंने तुरंत अपने तमाम मित्रों को इकट्ठा किया और उनसे सलाह-मशविरा किया। हम सबने एकराय होकर महात्माजी को तार द्वारा आग्रहभरा जवाब भेजा है कि वह आप पर जोर डालें और आपकी स्वीकृति प्राप्त करें।

हमारे लिए यह समय संकोच और झिझक का नहीं है। हम आपको ही सभापति बनायेंगे। देश में और बाहर जो राजनैतिक संकट है उसमें आपको आकर हमारा नेतृत्व करना ही होगा। अधिकांश प्रान्तों ने हमारे पास सूचना भेजी है कि वे आपको ही चाहते हैं। चार या पांच ने तो केवल एक ही नाम भेजा है, यानी आपका, यद्यपि इस पहली छंटनी में और नाम भी वे जोड़ सकते थे।

बंगाल तो एकराय से आपको ही चाहता है, क्योंकि हमारा काम आपके बिना नहीं चल सकता। मैं एक पिता की भावनाओं को अच्छी तरह समझ सकता हूं, जबकि उसका लड़का भी सामने मैदान में हो, लेकिन हममें से अधिकांश तो आपके लड़कों जैसे ही हैं। इसलिए इतने आग्रह के लिए आप हमें क्षमा करें। आपकी अनिच्छा का कारण जो भी कुछ हो, हमें निराश न कीजिये। इससे अधिक जोर से अपनी बात और किस तरह आपके सामने पेश कर सकता हूं।

आज ही मैंने महात्माजी को एक लंबा पत्र लिखा है। उसकी नकल आपको भेज रहा हूं। कृपाकर लिखें कि सब ठीक है।

आपका,
जे. एम. सेन गुप्ता

५४. सुभाषचंद्र बोस की ओर से मोतीलाल नेहरू के नाम

१ वुडबर्न पार्क, कलकत्ता
१८ जुलाई १९२८

प्रिय पंडितजी,

मैंने कल सुबह कांग्रेस की अध्यक्षता के बारे में आपको एक तार भेजा था। कल रात मुझे उसका उत्तर मिला। मैं नहीं कह सकता कि अगर किसी कारण से आप कांग्रेस के अध्यक्ष-पद को नामंजूर करते हैं तो सारे बंगाल को कितनी अधिक निराशा होगी। स्वराज्य पार्टी के काम और उसकी नीति के साथ आपका जो गहरा संबंध रहा है, और बातों के अलावा इसकी वजह से भी आपका नाम इस प्रांत में सब लोग स्वीकार करते हैं। मैं दूसरे प्रांतों का जिक्र नहीं करूंगा, किन्तु मुझे लगभग पूरा भरोसा है कि जब आखिरी नामजदगी होगी, तो सारा देश सर्वसम्मति से आपका समर्थन करेगा।

आज देश की जैसी हालत है, और सन् १९२९ का साल हमारे देश के इतिहास में इतना अधिक महत्वपूर्ण होनेवाला है, कि हमारी निगाह आपके अलावा और किसी व्यक्ति पर नहीं ठहरती, जो अवसर के योग्य साबित होसके। हमने कुछ दूसरे नामों के सुझाव भी सुने हैं, और हालात दूसरे होते तो उनपर विचार किया जा सकता था; किन्तु जब विभिन्न पार्टियों को नजदीक लाने और एक सर्वसम्मत संविधान बनाने की गंभीर कोशिशें हो रही हैं, तो दूसरे नामों के सुझावों को मंजूर नहीं किया जा सकता। यह कहना अतिशयोक्तिपूर्ण न होगा कि अगर किसी वजह से आप अध्यक्ष-पद स्वीकार नहीं करते हैं तो उसका इस प्रांत पर इतना बुरा असर पड़ेगा कि कांग्रेस-अधिवेशन की सफलता ही खतरे में पड़ जायगी। इस समय, जबकि हम गंभीर संकट में से गुजर रहे हैं, क्या हम यह आशा नहीं कर सकते कि आप देश की पुकार का मुनासिब उत्तर देंगे ?

आपका,
सुभाषचन्द्र बोस

फ़िर से—

जिला बोर्डों के मतदाताओं की तादाद के बारे में आपका तार मिला। मैं उनकी संख्या मालूम करने की कोशिश कर रहा हूं, किन्तु मैं सफल हो सकूंगा, इस बारे में मुझे संदेह ही है। विभिन्न जिलों में मतदाता-सूचियां प्राप्त करने के बाद आंकड़ों को इकट्ठा करने में काफी समय लग जायगा।

सुभाष

५५. मोतीलाल नेहरू की ओर से एम. जे. सेन गुप्ता और सुभाष-चंद्र बोस के नाम

आनंद भवन, इलाहाबाद
१९ जुलाई १९२८

अभी आपका खत मिला और मैंने तार के जरिये वादा किया है कि फ़ौरन जवाब दूंगा। मुझे डर है, आप लोगों ने मामले को एकदम गलत समझा है। जैसा मैंने अपने तार में लिखा है, बाप और बेटे की भावना का कोई सवाल ही नहीं है, और न बेटे को बाप के लिए हट जाने के लिए राजी करने की जरूरत ही है। बाप और बेटे, दोनों के सामने जो सवाल वज़न रखता है वह यह है कि देश की सेवा किस तरह सबसे अच्छी तरह हो सकती है। जवाहर की ज़रा भी यह इच्छा नहीं थी कि महात्माजी जिसे ताज कहते हैं, उसे पहने। उसे कांग्रेस के सदर की कुर्सी पर बिठाने का मेरा विचार पुराना है और इसका कोई भी ताल्लुक इस बात से नहीं कि वह मेरा लड़का है। मैंने यह विचार पिछले साल डा. अन्सारी के चुनाव से पहले महात्मा-जी को बता दिया था। डा. अन्सारी खुद जवाहर के मद्रास-कांग्रेस के सदर होने के हक में थे, लेकिन जवाहर ने ज़ोर से इस इज्जत को मंजूर करने से इन्कार कर दिया।

फिर, आनेवाली कलकत्ता-कांग्रेस की सदारत के बारे में मुझे महात्माजी का एक खत पिछले महीने में मेरी कमेटी की बैठकों के दरमियान खाली वक्त में मिला, जिसमें मुझे यह खबर दी गई थी कि सेन गुप्ता का एक खत उन्हें मिला है, जिसमें सदारत के लिए मेरा नाम सुझाया गया है। महात्माजी ने लिखा था कि अगर वह कमेटी, जिसका मैं सदर हूं, कोई ठोस चीज़ पेश

कर सके तो अच्छा यह होगा कि मैं ही ताज पहनूं। मैंने उन्हें जवाब दिया कि कमेटी का एकराय होकर किसी फैसले पर पहुंचना मुमकिन नहीं। और जबतक फैसला न हो पावे तबतक मुझे लगता है कि मुल्क में मेरेलिए कोई काम ही नहीं है। मामला यहीं रुका रहा, और ८ जुलाई को जाकर कमेटी एक तरह के आम समझौते पर पहुंची। तब मैंने महात्माजी को फिर लिखा। उसकी कोई नक़ल मेरे पास होती तो मैं उसे आपके पास भेज देता। लेकिन अब याददाश्त से उसकी बात दुहराने की कोशिश करूंगा। जो कुछ मैंने लिखा था वह यह था कि वल्लभभाई पटेल आज के नायक हैं और सबसे पहले उन्हींको चुनना चाहिए। वह राजी न हों तो दूसरा सबसे अच्छा चुनाव जवाहरलाल होगा। जो वजह मैंने बताई थी, वह यह थी कि मेरे ढंग के लोगों का वक्त अब नहीं रहा है और अब वक्त आगया है कि देश के कामों की रहनुमाई ज्यादा नौजवान लोगों के हाथों में दी जाय। हम लोग हमेशा नहीं बने रहेंगे और देर-अबेर नौजवानों को ही काम सम्हालना होगा। बेहतर होगा कि वे यह काम हमारे जीते-जी शुरू कर दें, बजाय इसके कि वे हमारे जाने तक रुके रहें। जहांतक मेरी बात है, मैंने कहा था कि मैं तो अब बीत चुका हूं और मैं अपनेको जिम्मेदारी के लायक नहीं समझता। जवाहर के नाम की सिफारिश करने की मेरी वजह यह थी कि नौजवानों में वह एक ऐसा आदमी है, जोकि ज्यादातर लोगों का विश्वास पा सकता है। तबसे यह बात सच भी साबित हो रही है और वह इस बात से साफ है कि उसका और मेरा नाम इस बारे में करीब-करीब साथ लिया जा रहा है। महात्माजी ने मुझे तार दिया कि वह मुझसे एकराय हैं और जवाहर के नाम की 'यंग इंडिया' में सिफारिश कर रहे हैं। मुझे पूरा यक़ीन था कि जवाहर फौरन अलग हो जायगा और इसीलिए मैंने उसे मसूरी में यह कड़ा आदेश भेजने की सावधानी बरती कि बिना मुझसे पूछे वह कुछ भी छपाने का पागलपन न करे। यही पूरी कहानी है। मैंने आपके खतों की नक़लें अपने इस जवाब की नक़ल के साथ महात्माजी के पास भेज दी हैं और मामला उनके ऊपर छोड़ दिया है।

मेरे और जवाहर के मुकाबले का सवाल बिल्कुल नहीं है। सारा सवाल यह है कि हालात की मांग क्या है। जबकि मैं जानता हूं कि जो कुछ

आप कहते हैं उसमें वहुत वजन है, मेरी अपनी राय यह है कि आज का मौका देश में एक आगे बढ़नेवाले मजबूत दल की मांग करता है, जो कि पूरे तौर पर हर जोखिम को उठाकर आगे बढ़ने के लिए तैयार हो और इसी दल के हाथ आंदोलन की बागडोर हो। मुकम्मल आजादी से चुपचाप उतरकर औपनिवेशिक दर्जे को मंजूर करना कांग्रेस की हँसी कराना होगा। मैं दुनिया को जो दिखाना चाहता हूं, और जिसे मैं हकीक़त मानता हूं, वह यह है कि देश अब आगे किसी तरह की बेतुकी बातें बर्दाश्त करने के लिए तैयार नहीं है, और अगर सब दलों की कम-से-कम मांग फौरन नहीं मानी जाती, तो जो लोग यह मांग कर रहे हैं वे सभी मजबूत दल के साथ हो जायंगे। मुझे यकीन है कि देश के रुख को देखते हुए अगली कांग्रेस में तथाकथित सर्वसम्मत विधान को पास कराना आसान न होगा और अगर यह पास हुआ, जोकि मुमकिन है, तो यह ज्यादातर इस वजह से होगा कि कौन उसकी ताईद कर रहे हैं, न कि नौजवान-दल की समझी-बूझी राय की वजह से।

जो हो, बाप-बेटे दोनों ही मुल्क की खिदमत के लिए तैयार हैं, और उनके लिए इस बात से कोई फर्क नहीं पड़ता कि सदर की कुर्सी पर कौन बैठता है। सारा सवाल यह है कि मुल्क के लिए सबसे अच्छी बात क्या है।

मुझे यकीन है कि इस सारी खतो-किताबत के सामने होने से महात्मा-जी ठीक फैसला कर सकेंगे और मैं उनके फैसले को मानने के लिए पूरी तरह राजी हूं।

मोतीलाल नेहरू

५६. मोतीलाल नेहरू की ओर से महात्मा गांधी के नाम

आनंद भवन, इलाहाबाद
१९ जुलाई १९२८

प्रिय महात्माजी,

साथ की खतो-किताबत अपने-आपमें साफ है। जवाहर कमला और इंदू का इंतजाम करने मसूरी गया है, लेकिन सेन गुप्ता के नाम मेरे खत की नकल से आपको यह सब पता लगेगा कि उसे कुछ न बोलने का कड़ा हुक्म है। सेन गुप्ता का आपसे किया गया इसरार कि आप जवाहर से कहें

कि वह अलग होजाय, मुझे पसंद है। मेरा खयाल है कि ऐसा करने से रोकने के लिए उसे काफी समझाना होगा।

मैं कमिटी की रिपोर्ट तैयार करने में जुटा हुआ हूं। मेरेलिए जवाहर लम्बे-चौड़े नोट छोड़ गया है और जब मैं रिपोर्ट लिखता हूं तो कदम-कदम पर ऐसे मुद्दे उठते हैं, जो न उसके दिमाग में आये थे, न मेरे। यह कमिटी के फैसलों की लापरवाही से लिखी जुबान की वजह से है। वे फैसले लंबी बैठकों के अखीर में लिखे गये थे, जबकि हर आदमी इतना थका हुआ था कि जुबान की परवा नहीं कर सकता था। मुझे बार-बार मेंबरों से पूछना पड़ता है (जो सभी अपने-अपने घर जा चुके हैं), जिससे उनका मतलब ठीक मालूम कर सकूं, या ज्यादा सही यह कहना होगा कि जिससे उनसे अपना मतलब मनवा सकूं, जैसाकि वे अबतक बिना किसी हिचकिचाहट के करते आये हैं। मैं अपनी आखिरी पूछताछ के जवाबों की इंतजारी में हूं और जैसे ही वे मिल जायंगे, रिपोर्ट का मसविदा मेम्बरों के पास भज दिया जायगा।

बारडोली में या उसके आस-पास जो घटनाएं हो रही हैं, उन्हें मैं फिक्र के साथ देख रहा हूं। लेकिन फिलहाल समझ नहीं पा रहा हूं कि मैं उनके लिए किस तरह अपकोने फायदेमन्द बना सकता हूं।

साथ की खतो-किताबत पर और उन दूसरी खबरों पर, जो आपको मिली हों, गौर करके 'ताज' के बारे में अपना फैसला तार से भेजने की मेहरबानी कीजिये।

आपका,
मोतीलाल नेहरू

५७. मोतीलाल नेहरू की ओर से एनी बेसेंट के नाम

इलाहाबाद,
३० सितम्बर १९२८

प्रिय डा. बेसेन्ट,

असेम्बली का थोड़े दिनों का और पुरजोश इजलास खत्म होगया है और सर्वदल-सम्मेलन ने हम लोगों को जो काम सौंपा है, उसपर पूरी-पूरी तवज्जो देने के लिए मैं इलाहाबाद आगया हूं।

शिमला में मिले आपके तार बहुत हौसला बढ़ानेवाले थे। आपने इससे पहले ही शानदार काम कर लिया है और मुझे कोई भी शुबहा नहीं कि उसे आप आगे भी उतनी ही कामयाबी से करती रहेंगी, जितनी कि आपने अबतक हासिल की है। सूबाई सर्वदल-सम्मेलन का खयाल बहुत अच्छा है और दूसरे सूबे भी इसकी नकल करें, इसके लिए मैं कदम उठा रहा हूं। चूंकि सर तेजबहादुर सप्रू कान्फ्रेंस में शामिल होंगे, मैंने मद्रास आने का फैसला आगे के लिए रख छोड़ा है। मैंने अभी अपना प्रोग्राम तय नहीं किया है, क्योंकि मुझे बहुत-कुछ शुरुआत के काम निबटाने हैं, जिनमें एक बड़ा काम सूबों में काम चालू करने के लिए काफी पैसा इकट्ठा करना है।

जैसा आपको याद होगा, हम लोगों ने अपने उसी वक्त के खर्चों के लिए, जिसका अंदाजा २५,०००) था, लखनऊ में जरूरती चंदे की एक फहरिस्त शुरू की थी। इस रकम का बहुत कम हिस्सा चंदे में मिला है और शिमला में कमिटी की पिछली बैठक में फिर से अंदाजा लगाने पर यह पता लगा कि अगले तीन महीनों में सभी सूबों में जोरदार प्रोपेगण्डा करने के लिए एक लाख से कम रुपयों की जरूरत न पड़ेगी। इस रकम का एक बड़ा हिस्सा बम्बई और कलकत्ता से मिलने की उम्मीद की जाती है और जल्दी ही मुझे इन दोनों जगहों पर जाना है। इसके बाद, उम्मीद है, मैं मद्रास जाऊंगा, जहां इन दोनों में से किसी भी जगह से आसानी से पहुंचा जा सकता है।

पंजाब और बंगाल के सूबों में और जगहों से ज्यादा कोशिश की जरूरत है, क्योंकि यहीं हिन्दू-मुस्लिम सवाल सबसे तेज़ है। मुझे यह कहते हुए खुशी होती है कि मद्रास के नमूने पर पंजाब में बनी सूबा कमेटी ने बड़ी खूबी से हालत को सम्हाल रखा है और शफी के खयालों के कुछ जिद्दी लोगों को छोड़कर ज्यादातर मुसलमानों ने पहले से ही अपनेको लखनऊ की तजवीजों के हक़ में होने का ऐलान कर दिया है। मौलाना अबुल कलाम आज़ाद ने, जोकि शिमला की बैठक में मौजूद थे, बंगाल में और भी अच्छे नतीजों के बारे में भरोसा दिलाया है और मुझे इसमें शुबहा नहीं कि काफी पैसा मिला तो उन्हें कामयाबी हासिल होगी।

दूसरे सूबों के मुसलमान, जहां कि उनकी तादाद बुरी तरह थोड़ी है, पंजाब और बंगाल के अकसरियत रखनेवाले मुसलमानों के खयाली हक़ों के लिए अबतक लड़ते रहे हैं। इसका सबसे जोरदार जवाब यही होगा कि पंजाब और बंगाल के मुसलमानों ने लखनऊ की तजवीजों को मंजूर कर लिया है और उन्हें दूसरे सूबों की हिमायत की जरूरत नहीं। मुझे उम्मीद है कि यह जवाब उन्हें अगले पखवारे के भीतर मिल जायगा। इसके बाद बाकी हिन्दुस्तान में हिन्दू-मुस्लिम-सवाल को हल करने के लिए जो करना है, वह, मैं उम्मीद करता हूं, कम तादादवालों को जहां-तहां कुछ टुकड़े फेंककर हो सकेगा। मद्रास के मुसलमानों ने बहुत अच्छा सुझाव दिया है और मैं समझता हूं कि हमारी कमिटी को पंजाब और बंगाल को छोड़कर और सूबों के बारे में उसपर चलना चाहिए। सुझाव यह है कि कम तादाद वालों की नुमाइंदगी के बारे में कड़े कायदे बनाने के बजाय, जैसाकि हमने अपनी रिपोर्ट में किया है, हर सूबे को यह छूट होनी चाहिए कि कम तादादवालों और ज्यादा तादादवालों के बीच ऐसा समझौता करलें जो उन खास सूबों की हालात के मुताबिक सबसे ज्यादा ठीक हो। मद्रास के मुसलमानों ने मान लिया है कि ज्यादा तादादवाले हिंदुओं से जो वह पा सकेंगे उसे मंजूर कर लेंगे। मैं मानता हूं कि और सूबे हिन्दू-मुस्लिम सवाल को इतनी आसानी से नहीं निबटा पायंगे। फिर भी मेरी समझ में मद्रास के सुझाव के मुताबिक चलने में सर्वसम्मत हल की ज्यादा उम्मीद है, बजाय इसके कि सभी सूबों पर एक-सा कानून लागू किया जाय। हमारे काम के हिन्दू-मुस्लिम सवाल पर, जिसके बारे में मेरे दोस्त सर तेजबहादुर सप्रू ने मुझसे अपनी भारी परेशानी जाहिर की है, मुझे इतना ही कहना है।

दूसरी जमात, जिससे हमारा ताल्लुक आयेगा, वह है मुकम्मल आजादी चाहनेवालों की जमात, जिसकी तादाद जवाहर की मेहरबानी से तेजी से बढ़ती जा रही है। मुझे इस जमात से कोई डर नहीं, जबतक कि उसका नेता एक ऐसा ईमानदार मुल्क-परस्त है, जो हमेशा तस्वीर के दूसरे पहलू को देखने के लिए तैयार रहता है, जैसाकि इस वाकये से साफ है कि मुकम्मल आजादी के लिए अपने जबर्दस्त प्रोपैगेंडा के बावजूद

जवाहर सर्वदलीय फैसलों को पूरी तरह कामयाब बनाने के लिए कोई कसर नहीं उठा रख रहा है। बनावटी आज़ादीवालों से, जिनके नेता आपके शहर के महान श्रीनिवास आयंगर हैं, डरने की वजह और भी कम है। सच्ची आज़ादी चाहनेवालों से हमारा समझौता हो जाय तो नक़्क़ालों से निबट लेना आसान होगा और वह इस तरह कि उन्हें अपने-आपसे कुढ़ने के लिए अलग छोड़ दिया जाय। जो सच्ची आज़ादी चाहनेवाले हैं, उनसे तसल्लीबख्श समझौता कर सकने की मैं जल्दी उम्मीद कर रहा हूं और आपको यह खुशखबरी दो-एक दिन में दे सकने की उम्मीद करता हूं।

फिर जो लोग बच रहते हैं वे प्रतिक्रियावादी हैं। उनके लिए हम कोई गुंजाइश नहीं छोड़ेंगे। सरकार के लिए इनसे पेश आना बहुत कठिन होगा और साइमन्स को भी इनकी बे-सिर-पैर की मांगों को मंजूर करना और अमल में लाना नामुमकिन जान पड़ेगा। फिर भी खतरा यह है कि नौकरशाही इस जमात के जरिये हमारे मामले को बिगाड़ने की कोशिश करेगी; इसलिए नहीं कि वे ठीक रास्ते पर हैं और हम ग़लत रास्ते पर, बल्कि ऐसी जमात होनेभर से यह साबित करने की कोशिश की जायगी कि मुल्क में हमारा साथ देनेवाले लोग काफी तादाद में नहीं हैं। इसका जवाब महज इस तरह दिया जा सकता है कि हर ज़िले में हम बहुत-सी सभाएं करें और यह दिखायें कि ये प्रतिक्रियावादी मुल्क में मुट्ठी-भर हैं और उन्हें लोगों के किसी भी बड़े तबक़े की नुमाइंदगी करने का हक़ नहीं है। इसी काम के लिए हमें आदमियों, पैसों और हथियारों की ज़रूरत है। आपने अपनी हथियारों की फैक्टरी पहले से ही इस शक्ल में शुरू कर दी है कि आपके सूबे की ज़बानों में पैम्फलेट और दस्ती इश्तहार निकलते रहें। पंजाब में लाला लाजपतराय दूसरी और बंगाल में मौलाना अबुल कलाम आजाद तीसरी फैक्टरी खोल रहे हैं। इसमें शक नहीं कि जैसे-जैसे पैसा इकट्ठा होता जायगा, और भी फैक्टरियां खुलती जायंगी।

यहांतक मैंने आम हालत का, जैसाकि मैंने उसे देखा है और जिस तरह से मैं उसे निबटाने का खयाल कर रहा हूं, आपको एक अंदाज कराने की कोशिश की है। मद्रास के बारे में मुझे कुछ सुझाव देने हैं। मुझे ऐसा लगता है कि सूबे में पांच लोगों की पांच जमातों का इंतज़ाम करना है। एक काफ़ी

बड़ा तवक़ा उन लोगों का है, जिनपर अड्यारों का सीधा असर है। दूसरा उतना ही बड़ा तवक़ा कांग्रेस के असर में है। तीसरा बड़ा तवक़ा ग़ैर-ब्राह्मणों का है। चौथा दलित जातियों का और पांचवां मुसलमानों का। इन सभीतक पहुंच सकने के लिए यह ज़रूरी होगा कि हर तवक़े में से एक या दो मुखिया लोगों को कमिटी में ले लिया जाय और उन्हें अपने-अपने तवक़े के लोगों में काम करने की जिम्मेदारी सौंपी जाय। मैं समझता हूं कि ग़ैर-ब्राह्मण और दलित-वर्ग के लोग आसानी से मिल जायंगे, जो आपके या कांग्रेस के पीछे चलनेवालों के साथ काम करने के लिए तैयार हों, लेकिन यह अक्लमंदी होगी कि कुछ असरवाले मुसलमानों को अपने मज़हब के लोगों के बीच काम करने के लिए रखा जाय। कांग्रेसी और मुसलमान काम करनेवालों के लिए कोई अलग-अलग संगठन होना चाहिए। शिमला में श्री ए. रंगास्वामी आयंगर और सैयद मुरतज़ा साहब बहादुर से लंबी बातचीत के बाद मैं इस नतीजे पर पहुंचा हूं कि आपकी आम कमिटी में रहने के अलावा उन्हें अलग से रुपये मिलने चाहिए, जो कांग्रेसी और मुसलमान कार्यकर्ताओं पर खर्च किये जा सकें। फिलहाल श्री रंगास्वामी आयंगर को १००० और सैयद मुरतज़ा साहब को ५०० रुपये देना काफ़ी होगा। दोनों ही बड़े इज्ज़तदार आदमी हैं और इस बात का भरोसा किया जा सकता है कि रुपये वे ठीक तरह से खर्च करेंगे। इस सिलसिले में मुझे श्री याक़ूब हसन का खयाल आया था, लेकिन मालूम हुआ कि वह बड़े सुस्त आदमी हैं। फिर भी सैयद मुरतजा साहब ने यह बात मान ली है कि उन्हें वह इस बात पर राज़ी करेंगे कि मुसलिम सब-कमेटी के सदर या मेंबर के तौर पर उनके नाम का ऐलान कर दिया जाय। मेरा खयाल है कि इतना काफ़ी होगा।

मेहरबानी करके लिखियेगा कि यह सुझाव आपको पसंद है या नहीं और क्या आपको ऊपर लिखी रकमें दे सकने का सुभीता होगा? लखनऊ में आपने ५००० की रक़म, जिसे दो क़िस्तों में देने का वादा किया था, मुझे डर है कि, आपने जो काम हाथ में ले रक्खा है, उसको देखते काफ़ी नहीं होगी। इसलिए और चंदा करने की ज़रूरत होगी, जो या तो पब्लिक से मांगा जा सकता है, या कुछ चुने हुए लोगों से, जैसा भी आप

मुनासिब समझें। मद्रास को अपना काम आप चला लेना चाहिए, लेकिन फिर भी अगर आप समझती हैं कि बाहर से रुपया लाने की ज़रूरत है, तो मैं बम्बई से लाने की कोशिश करूंगा। इस बीच मेहरबानी करके १००० रुपये श्री रामास्वामी आयंगर को और ५०० रुपये सैयद मुरतज़ा साहब को दे दें। शुरू में तो यह खयाल था कि चंदे मरक़जी फंड में दिये जायं और यह फंड सूबों को उनकी ज़रूरतों के मुताबिक वक़्त-वक़्त पर पैसा देता रहे। यही आम क़ायदा है, जिसपर मैं चल रहा हूं; लेकिन मदरास के मामले में इसकी पाबंदी ग़ैर-ज़रूरी होगी, क्योंकि इससे काफी देरी हो जाने का अंदेशा है। इतना काफ़ी होगा कि आपका दफ़्तर जवाहरलाल को वक़्त-वक़्त पर इस बात की खबर देता रहे कि कुल कितना रुपया मिला है और कितना खर्च हुआ है, जिससे वह पूरा हिसाब तैयार कर सके।

आपको याद होगा कि लखनऊ की कांफ्रेंस ने कई सवाल हमारी कमिटी के सामने रक्खे हैं और हमसे यह भी कहा गया है कि हम एक ऐसे बिल का मसविदा तैयार करावें, जिसमें हमारी सभी सिफारिशें आगई हों और जो सर्वदल-सम्मेलन के सामने रक्खा जा सके। कमिटी की पिछली बैठक में, जो शिमला में हुई थी, सर तेजबहादुर सप्रू, पंडित हृदयनाथ कुंजरू, सी० विजय राघवाचार्य (इस नाम के लिये जाने पर सप्रू के चेहरे पर छाई परेशानी का मैं अंदाज कर सकता हूं, लेकिन यह ज़रूरी था), सर अली इमाम और मुझे लेकर एक सब-कमेटी बनी थी, जिसे यह काम सौंपा गया था कि लखनऊ-कांफ्रेंस के जरिये भेजे गए सवालों पर कमिटी की रिपोर्ट का मसविदा तैयार करे और बुनियादी रिपोर्ट लखनऊ की तजवीज़ों और उस रिपोर्ट की सिफारिशों को शामिल करते हुए, जिसे हमें कांफ्रेंस में पेश करना है, एक बिल का मसविदा भी तैयार करे। इससे आगे की बैठक के लिए, जो दिल्ली या इलाहाबाद में नवंबर के पहले हफ़्ते में होगी, आसानी होगी। खयाल यह है कि पार्लमेंटरी मसविदा तैयार करनेवाले के लिए शुरू-शुरू का काम निबटा दिया जाय, जिससे उसे कम-से-कम परेशानी हो और हमें कम-से-कम फीस देनी पड़े। क्या मेहरबानी करके आप मुझे यह लिखेंगी कि आपके कामनवेल्थ ऑव् इंडिया बिल का मसविदा किसने तैयार किया था और उसने क्या फ़ीस ली थी ?

ऑल इंडिया कन्वेंशन की तारीख फिलहाल कलकत्ता में १७ दिसम्बर को रक्खी गई है। यह बड़ी अहम बैठक होगी और मैं उम्मीद करता हूं कि आप इसमें शरीक होंगी।

शिमला की बैठक की कार्रवाई की एक नकल आपके पास दो-एक दिन में भेजी जायगी।

हम लोगों ने जो काम उठा रक्खा है, उसके बारे में आप अपने सुझाव देंगी तो मैं एहसानमन्द होऊंगा।

मेहरबानी करके यह खत सर तेजबहादुर सप्रू को दिखा दीजियेगा। मेरा ख़याल है जब यह खत पहुंचेगा वह मद्रास में होंगे। मैं उन्हें एक छोटा-सा खत भेज रहा हूं और लिख रहा हूं कि ब्यौरे की बातें इस खत से मालूम करें।

आपका,
मोतीलाल नेहरू

डा. ऐनी बेसेंट,
अड्यार, मद्रास।

५८. मोतीलाल नेहरू की ओर से मोहम्मदअली जिन्ना के नाम

२२ नवंबर १९२८

प्रिय जिन्ना,

आनेवाले कन्वेंशनों की तारीखों के सवाल पर सोचने और अपनी कमिटी और कांग्रेस की इस्तक़बालिया कमेटी के मेंबरों से सलाह-मशविरा करने में मुझे इतना वक़्त लग गया है। दोनों ही इस तजवीज़ के कड़े मुखालिफ़ हैं कि कन्वेंशन कांग्रेस के बाद की जाय और इसके बारे में जो संजीदा वजहें उन्होंने दी हैं, उनसे मैं एकराय हूं। इसलिए मुझे एक तरक़ीब सूझी है, जिससे कांग्रेस और मुस्लिम लीग दोनों के एतराज मिट जायंगे। कन्वेंशन लीग से चार दिन पहले शुरू होगी और २७-२८ तक, जबकि लीग का इजलास होगा, जारी रहेगी। अगर ज़रूरी हुआ तो २८ को सवेरे भी हो सकेगी। इस तरह लीग अपने नुमाइंदों को पूरे हक़ देकर कन्वेंशन के आखिरी इजलास में भेज सकेगी और इस्तकबालिया कमेटी की यह मांग भी कि कन्वेंशन २९, ३०, ३१ को कांग्रेस की बैठकों से पहले हो जाय, पूरी हो सकेगी। बहुत-सी ऐसी बातें हैं, जिनमें बहस की कोई गुंजाइश नहीं और वे २२, २३, २४ को कन्वेंशन में तय की जा सकेंगी, लेकिन मुस्लिम लीग को यह हक़

होगा कि आखिरी इजलास में कोई भी सवाल फिर से उठा सके। इस बीच, सालाना जलसे में कौंसिल को कन्वेंशन के लिए नुमाइंदे भेजने का जो हक़ दिया था, उसपर, मुझे उम्मीद है कि अमल होगा और शुरू से ही नुमाइंदे उसमें शरीक होंगे। यह ज़रूरी नहीं कि कन्वेंशन के पहले इजलास में (२२ से २४ तक) अगर वे किसी चीज़ से अपनेको न बांधना चाहें तो बेशक न बांधें। मैं उम्मीद करता हूं कि इस इंतज़ाम से आपको और इससे ताल्लुक़ रखनेवाले सभी लोगों को तसल्ली होगी।

इसीके मुताबिक़ मैं अख़बारों को ज़रूरी खबरें भेज रहा हूं।

आपका,
मोतीलाल नेहरू

५९. महात्मा गांधी की ओर से

[मेरा खयाल है कि यह पत्र लखनऊ की उस घटना के बाद लिखा गया था, जिसमें हम बहुत लोगों ने साइमन-कमीशन के वहां पहुंचने पर शांत रूप में विरोधी प्रदर्शन किया था। हमपर पुलिस के डंडों और लाठियों की सख़्त मार पड़ी थी।]

वर्धा
३ दिसंबर १९२८

प्रिय जवाहर,

तुम्हें मेरा प्यार। सब काम बहादुरी से किया गया। तुम्हें इससे भी अधिक वीरता के काम करने हैं। भगवान तुम्हें दीर्घायु करे और भारत को गुलामी के जुए से छुड़ाने में तुम्हें अपना विशेष अस्त्र बनाये।

तुम्हारा,
बापू

६०. नरेन्द्रदव की ओर से

[इस पत्र में जिस लीग का ज़िक्र है वह 'इंडिपेंडेंस फॉर इंडिया लीग' है। वह राष्ट्रीय कांग्रेस पर यह ज़ोर डालने के लिए स्थापित की गई थी कि वह अपना उद्देश्य 'स्वतन्त्रता' बना ले। नरेन्द्रदेव कांग्रेस के एक प्रमुख नेता थे। आगे चलकर भारत में जब समाजवादी दल की स्थापना हुई तो

उसके संस्थापकों में एक वह थे ।]

बनारस,
९ फरवरी १९२९

प्रिय जवाहरलालजी,

आपकी भेजी पांडुलिपि मिली । मैं उसे पढ़ रहा हूं और उसके विषय में शीघ्र ही अपनी राय आपको भेजूंगा । आपके प्रश्नों के उत्तर भी देने का प्रयत्न करूंगा ।

लीग के विषय में मैं मुक्त भाव से आपके आगे स्वीकार करता हूं कि मेरी वर्तमान भावना यह है कि उसके सामने उज्ज्वल भविष्य दिखाई नहीं देता । हमारे बीच ऐसे ईमानदार लोगों के संगठन की कमी है, जो निष्ठावान् हों और जिनकी आर्थिक कार्यक्रम में जीवित श्रद्धा हो । हम सब सामान्यतया विश्वास कर सकते हैं कि नये आधार पर हमारे समाज की पुनर्रचना होनी आवश्यक है । लेकिन जबतक हमें उन सामाजिक और आर्थिक सिद्धान्तों की स्पष्ट कल्पना नहीं होगी, जिनके आधार पर समाज की नव-रचना हो सकेगी और जबतक हमें यह निश्चित पता नहीं होगा कि देश की वर्तमान परिस्थिति में हमें कितनी सफलता मिल सकती है, हम किसी परिणाम की प्राप्ति की आशा नहीं कर सकते । हममें से बहुत-से लोगों के विचार अस्पष्ट और अनिश्चित हैं और वे यही नहीं जानते कि आगे किस प्रकार बढ़ें । इसका परिणाम यह हो रहा है कि हम अपने निश्चयों में दृढ़ नहीं हो पाते और इस कारण हमारे कार्य में सचाई का अभाव है । मेरा विचार है कि अपने चारों ओर हमें जो कार्य-विमुखता दिखाई देती है, वह बौद्धिक निष्ठा के अभाव के कारण है । इसलिए मेरे विचार से मुख्य काम हमारे सामने यह है कि हम अपने आदमियों को बौद्धिक खुराक देकर उनके विचारों को मज़बूत बनायें । इसके लिए यदि आवश्यक कोष मिल सके तो लीग को एक साप्ताहिक पत्र प्रारंभ करना चाहिए । इसके अतिरिक्त उसकी अपनी एक पुस्तकों की दुकान भी हो, जहां ऐसा साहित्य मिल सके । लीग को जगह-जगह स्वाध्याय-मंडल भी खोलने चाहिए और भारतीय भाषाओं में सस्ता साहित्य निकालना चाहिए । मेरे विचार से यही काम सबसे अधिक महत्वपूर्ण है, जिसपर इस वर्ष हमारा ध्यान

केन्द्रित होना चाहिए, क्योंकि मेरी विनम्र सम्मति में इसके बिना मज़बूत बुनियाद नहीं रखी जा सकती। इस समय लीग में मुश्किल से मुट्ठीभर ऐसे लोग होंगे, जिनके इस विषय में कोई निश्चित और सुलझे हुए विचार हों और जो संतोषजनक योग्यता रखते हों। मेरा आपसे अनुरोध है कि इस बात पर आप लीग का ध्यान केन्द्रित करें।

अभी तक हम कोई भी काम ऐसा नहीं कर सके हैं, जिससे हमारा अस्तित्व सिद्ध हो। लीग की प्रमुख विशेषता यह है कि उसके उद्देश्यों में नये आधार पर समाज का निर्माण करना है। लीग केवल राजनैतिक स्वतंत्रता से सन्तुष्ट नहीं है। स्वभावतः लोग यह जानना चाहते हैं कि नया आधार क्या होगा और इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए लीग किन साधनों का उपयोग करेगी? कलकत्ता में चारों ओर से मुझपर अनेक प्रश्नों की बौछार हुई। लोगों की सामान्य धारणा यह जान पड़ती है कि लीग ने जो आशाएं दिलाई थीं, उन्हें वह पूरा नहीं कर रही है। कुछ लोगों का खयाल है कि लीग की स्थापना का एकमात्र उद्देश्य कांग्रेस में स्वतंत्रता के प्रश्न पर तगड़ा मोर्चा लेना था और चूंकि वह हेतु सिद्ध हो चुका है, इसलिए वे कहते हैं कि अब एक दिन भी लीग के जीवित रहने का प्रयोजन नहीं है। दूसरे वे लोग हैं, जो स्वतंत्रता के ध्येय को तो स्वीकार करते हैं, परन्तु उन्हें आदर्शों और उद्देश्यों से विशेष सरोकार नहीं है और वे तात्कालिक कार्य के लिए कोई सजीव कार्यक्रम चाहते हैं। कांग्रेस के रचनात्मक कार्यक्रम उन्हें नीरस और बंधे-बंधाये लगते हैं और चूंकि हम देश के सामने और कोई अच्छा कार्यक्रम नहीं रख पाये हैं, इसलिए स्वाभाविक रूप से लीग में शामिल होने का उत्साह उन्हें अनुभव नहीं होता। हमारे अपने प्रतिनिधि भी उदासीन हैं। बार-बार स्मरण-पत्र भेजने पर भी उनमें से बहुतों की ओर से उत्तर नहीं आया। कुछ मित्र तो पत्र की पहुंच तक नहीं भेजते।

आप तो जानते हैं कि जब मैंने मंत्री का पद स्वीकार किया, उस समय यह बिल्कुल स्पष्ट कर दिया था कि विद्यापीठ के मेरे वर्तमान दायित्वों से मुझे इतना समय नहीं मिलेगा कि मैं देश के भ्रमण के लिए जा सकूं। मैं तो यहां से केवल पत्र-व्यवहार ही कर सकूंगा। परन्तु यदि पत्रों का कोई उत्तर ही नहीं देता है तो मैं क्या करूं?

ऐसी अवस्था में यदि हम स्थिति को नहीं सुधारते तो हम काम के आगे बढ़ने की आशा नहीं कर सकते।

यदि संभव हो तो लीग को कोई आर्थिक कार्यक्रम लेना चाहिए। मैं नहीं सोचता कि प्रान्तीय लीगों को अपने-अपने कार्यक्रम पृथक् रूप से बनाने चाहिए। इसका विघातक परिणाम होगा। यदि ऐसी स्वतंत्रता दी गई तो— जैसाकि आप कहते हैं—संभव है, उनके कार्यक्रम आपस में टकरावेंगे। इससे बड़ी गड़बड़ी पैदा हो जायगी। लीग का केवल एक ही कार्यक्रम हो और उसे एक स्वर से ही बोलना चाहिए।

मेरा विचार है कि आपका यह सुझाव स्वीकार होना चाहिए कि प्रत्येक प्रांत अपनी सिफारिशें केन्द्रीय समिति के पास भेजे। उस हालत में आपने कार्यक्रम का जो मसविदा तैयार किया है, उसको हमारी समिति चर्चा का आधार बना सकती है।

यदि केन्द्रीय कौंसिल को कोई आर्थिक कार्यक्रम बनाने के लिए राज़ी किया जा सके और वह देश को कोई योजना दे सके तो बड़ा अच्छा हो। जो हो, मैंने ऊपर जिस कार्य की रूप-रेखा बताई है, उसे प्रान्तीय लीगें अपने हाथ में ले सकती हैं। इसके लिए केन्द्र की इजाज़त की भी ज़रूरत नहीं होनी चाहिए।

प्रान्तीय कमेटी की अगली बैठक लखनऊ में इसी महीने की २४ तारीख़ को हो रही है। आपके पास औपचारिक सूचना शीघ्र ही पहुंचेगी।

सप्रेम आपका,

नरेन्द्र देव

६१. महात्मा गांधी की ओर से

रेल से,

२९ जुलाई १९२९

प्रिय जवाहरलाल,

इन्दू के नाम तुम्हारे पत्र बहुत अच्छे हैं और प्रकाशित होने चाहिए। काश तुम उन्हें हिन्दी में लिख सकते! जैसे भी हैं, उन्हें साथ-साथ हिन्दी में भी छपवाना चाहिए।

तुम्हारा विषय-निरूपण बिल्कुल पुराने ढंग का है। मानव का आदि

अब एक विवादपूर्ण विषय है। धर्म का आदि और भी विवादास्पद मामला है। परन्तु इन मतभेदों से तुम्हारे पत्रों का मूल्य घट नहीं जाता। उनका महत्व तुम्हारे निर्णयों की सचाई में नहीं, परन्तु निरूपण के ढंग में और इस तथ्य में है कि तुमने इन्दू के हृदय तक पहुंचने और उसकी ज्ञान की आंखें खोलने की कोशिश अपनी बाह्य प्रवृत्तियों के बीच में की है।

जो घड़ी मैं ले आया हूं उसके बारे में कमला से झगड़ना नहीं चाहता था। इस भेंट की तह में जो प्रेम है, उसका मैं सामना नहीं कर सका। मगर घड़ी फिर भी इन्दू के लिए धरोहर के रूप में रक्खी जायगी। इतने सारे छोटे-छोटे शैतानों से घिरा रहकर मैं सजावट की इस चीज को सुरक्षित नही रख सकता। इसलिए मुझे यह जानकर खुशी होगी कि इन्दू को उसकी प्यारी घड़ी वापस मिल जाने पर कमला राजी हो जायगी।

कांग्रेस के 'ताज' पर मेरा लेख पहले ही लिखा जा चुका है। वह यं. इं. के अगले अंक में निकलेगा।

सप्रेम तुम्हारा,
बापू

६२. सरोजिनी नायडू की ओर से

[यह पत्र मेरे कांग्रेस के अध्यक्ष चुने जाने पर लिखा गया था।]

लखनऊ
२९ सितंबर १९२९

मेरे प्यारे जवाहर,

मैं कल्पना नहीं कर सकती कि समूचे भारत में कल तुम्हारे पिता से अधिक गर्व का अनुभव करनेवाला और कोई हृदय होगा अथवा तुम्हारी अपेक्षा अधिक भार अनुभव करनेवाला कोई दूसरा हृदय। मेरी स्थिति विचित्र थी, मैं समान मात्रा में उनके गर्व और तुम्हारी वेदना दोनों का अनुभव करती रही। मैं रात को बहुत देर तक जागकर अपने उन शब्दों की सार्थकता के बारे में सोचती रही, जो मैं अक्सर तुम्हारे बारे में कहा करती थी कि तुम्हारे भाग्य में एक शानदार शहादत बदी है। चुनाव के बाद जब तुम्हारा भव्य अभिनंदन किया जा रहा था तो तुम्हारे चेहरे को देखते-देखते मुझे लगा, मानो मैं एक साथ ही राजतिलक और सूली का दृश्य देख

रही हूं। वास्तव में कुछ परिस्थितियों और कुछ अवस्थाओं में ये दोनों एक-दूसरे से अभिन्न हैं और लगभग पर्यायवाची हैं। ये दोनों आज तुम्हारे लिए विशेष रूप से एक ही हैं, क्योंकि अपनी आत्मिक क्रिया और प्रतिक्रिया में तुम बहुत ही संवेदनशील और परिष्कृत हो और आक्रांता एवं भारी-भरकम स्वर के पीछे अपनी गरीबी को छिपाने के लिए राह खोजती दुर्बलता के जो अनिवार्य परिणाम हैं—दुर्बलता, असत्य, प्रपंच, विश्वासघात—उनकी कुरूपता का मुकाबला करने में तुम उन पुरुषों और स्त्रियों की अपेक्षा सैकड़ों गुनी तीव्रता से क्लेश अनुभव करोगे, जो कि उतने कोमल-तंतुओं, स्पष्ट दृष्टि एवं ग्राह्य-शक्ति से संपन्न नहीं हैं। फिर भी तुम्हारी निर्मल सचाई और स्वाधीनता के लिए तुम्हारे प्रेम में मेरा अटल विश्वास है और यद्यपि तुमने मुझसे कहा था कि ऐसे भारयुक्त पद की परेशानी में अपने विचारों और आदर्शों को कार्यान्वित करने योग्य न तो तुम्हें अपने भीतर शक्ति जान पड़ती है और न पर्याप्त समर्थन ही, फिर भी मुझे लगता है, यह स्थिति तुम्हारे लिए चुनौती भी है और एक सम्मान भी। और यह ऐसी चुनौती है, जो तुम्हारे समस्त उच्च और श्रेष्ठ गुणों को कार्य-शक्ति, साहस, दूर-दृष्टि और विवेक का रूप दे देगी। मुझे अपने इस विश्वास के लिए कोई भय नहीं।

तुम्हारे इस बड़े भारी और प्रायः डरावने कर्तव्य में मुझसे तुम्हारी जो भी सहायता या जो भी सेवा हो सके, उसके लिए, तुम जानते हो, तुम्हारे कहने भर की देर है। . . . कोई ठोस मदद मैं चाहे न कर सकूं, पर कम-से-कम पूरी-पूरी सहानुभूति और स्नेह तो मैं तुम्हें दे ही सकती हूं। . . . और यद्यपि, जैसा खलील जिब्रान का कहना है, "एक आदमी के स्वप्नों के पंख दूसरे के काम नहीं आते", तो भी मेरा विश्वास है कि अपनी आत्मा की अजेय निष्ठा दूसरे के भीतर ऐसी ज्योति जाग्रत कर देती है, जिससे संसार जगमगा उठता है। . . .

तुम्हारी प्यारी बहन,
सरोजिनी नायडू

६३. महात्मा गांधी के नाम

[यह पत्र दिल्ली में होनेवाले एक सम्मेलन के बाद, जिसे 'नेताओं का

सम्मेलन' का नाम दिया गया, लिखा गया था। इस सम्मेलन ने उपस्थित लोगों के हस्ताक्षर से एक वक्तव्य भी प्रकाशित किया था। इसपर आखिरकार मैंने भी दस्तखत किये थे, अगर्चे बड़ी हिचकिचाहट के साथ। सुभाष बोस ने इसपर हस्ताक्षर नहीं किये। लेकिन हस्ताक्षर कर देने के बाद मुझे दुःख हुआ और मैंने यह पत्र लिखा। उस समय मैं कांग्रेस का प्रधान मंत्री था और उसके आगामी अधिवेशन का सभापति चुना जा सकता था।]

आॅल इंडिया कांग्रेस कमेटी,
५२, हीवट रोड, इलाहाबाद
४ नवंबर १९२९

प्रिय बापू,

मैंने दो रोज अच्छी तरह से विचार किया है। मेरा खयाल है, अब मैं स्थिति पर दो दिन पहले की बनिस्वत कुछ ज्यादा ठंडे दिमाग से विचार क़र सकता हूं, लेकिन मेरा दिमागी बुखार अभी दूर नहीं हुआ है। अनुशासन की बिना पर आपने मुझसे जो अपील की है, उसे मैं दर-गुजर नहीं कर सकता था। मैं खुद अनुशासन का कायल हूं। फिर भी मेरा खयाल है कि अनुशासन की ज़्यादती भी हो सकती है। परसों शाम को मेरे अंदर कुछ ऐसी बातें उठीं, जिनको मैं एकसूत्र में नहीं बांध सकता। प्रधान मंत्री होने के नाते कांग्रेस के तईं मेरी वफादारी होनी चाहिए और उसके अनुशासन में मुझे रहना चाहिए। मेरी और हैसियतें और वफादारियां भी हैं। मैं इंडियन ट्रेड यूनियन कांग्रेस का सदर हूं और 'इंडिपेंडेंस फॉर इंडिया लीग' का सेक्रेटरी हूं और युवक-आंदोलन से मेरा गहरा ताल्लुक है। इन दूसरी जमातों के तईं, जिनसे मेरा ताल्लुक है, अपनी वफादारी के लिए मैं क्या करूं? मैं इस बात को पहले से ज़्यादा अब महसूस करता हूं कि कई घोड़ों पर एक साथ सवारी करना काफी मुश्किल है। जब जिम्मेदारियों और वफादारियों की आपस में टकराहट हो तो इसके अलावा कोई क्या कर सकता है कि अपनी सहज प्रवृत्ति और बुद्धि पर भरोसा करे?

इसलिए सभी बाहरी लगावों और वफ़ादारियों से अलग रहकर मैंने हालत पर ग़ौर किया है और मेरा यह यकीन ज़्यादा मज़बूत होता गया है कि परसों मैंने जो किया, वह ग़लत किया। मैं बयान की अच्छाइयों या

उसकी पालिसी के बारे में कुछ न कहूंगा। मुझे डर है कि उस मसले पर हमारा बुनियादी मतभेद है और यह मुमकिन नहीं कि मैं आपकी राय बदल दूं। मैं सिर्फ़ इतना ही कहूंगा कि मेरा यकीन है कि वह बयान नुकसानदेह है और मज़दूर सरकार के ऐलान का बिल्कुल नाकाफी जवाब है। मेरे खयाल से कुछ प्रतिष्ठित लोगों को खुश करने और अपने साथ बनाये रखने की कोशिश में हमने अपने दल के बहुत-से उन दूसरे लोगों को परेशान किया है और करीब-करीब उन्हें दल से बाहर किया है, जिनको साथ रखना कहीं अच्छा था। मेरा खयाल है कि हम लोग एक खतरनाक जाल में उलझ गये हैं, जिससे निकल सकना आसान नहीं, और मैं समझता हूं कि हमने दुनिया को यह दिखला दिया है कि अगर्चे हम लोग बातें तो ऊंची करते हैं, लेकिन सौदेबाज़ी छोटी-मोटी चीज़ों के लिए कर रहे हैं।

मैं नहीं जानता कि ब्रिटिश सरकार अब क्या करेगी। मुमकिन है, वह आपकी शर्तों को नहीं मानेगी। मुझे उम्मीद यही है कि वह नहीं मानेगी। लेकिन मुझे इसमें ज़रा भी शक नहीं कि ज्यादातर हस्ताक्षर करने-वाले—निश्चय ही आपको छोड़कर—उन शर्तों में ब्रिटिश सरकार जो भी रद्दो-बदल सुझावेगी, उसे मंजूर कर लेंगे। हर हालत में मुझे यह जान पड़ता है कि कांग्रेस के भीतर मेरी हालत रोज़-बरोज़ ज्यादा मुश्किल होती जायगी। मैंने कांग्रेस की सदारत बड़े शक-शुबहा के साथ मंजूर की थी, लेकिन इस उम्मीद से कि अगले साल हम एक निश्चित मसले को लेकर लड़ लेंगे। उस मसले पर पहले से ही बादल छा गये हैं और इस पद को मंजूर करने की जो एकमात्र वजह थी, वह अब नहीं रह गई है। इन 'नेताओं के सम्मेलनों' से मुझे क्या सरोकार? मैं अपनेको अनधिकार चेष्टा करनेवाला समझने लगा हूं और इससे मुझे परेशानी है। मैं अपनी बात खुलकर इसलिए नहीं कह पाता कि सम्मेलन के बिगड़ने का मुझे डर है। मैं अपनेको दबाता हूं और यह दबाना कभी-कभी मेरे लिए भारी पड़ता है और मैं भभक उठता हूं और ऐसी चीज़ें भी कह जाता हूं, जिनको कहने का मेरा कोई मतलब नहीं होता है।

मैं महसूस करता हूं कि मुझे ए. आई. सी. सी. के मंत्री के पद से इस्तीफ़ा दे देना चाहिए। मैंने पिताजी के पास एक ज़ाब्ते का खत भेज दिया

हैं, जिसकी नकल साथ में भेज रहा हूं।

सभापति का सवाल इससे कहीं ज्यादा मुश्किल है। मैं नहीं समझता कि इस ऐन मौके पर मैं क्या कर सकता हूं। मुझे इस बात का यकीन हो गया है कि मेरा चुनाव ग़लत था। इस अवसर पर और इस साल के लिए सिर्फ आपको ही चुना जाना चाहिए था। अगर कांग्रेस की पालिसी वही हैं, जिसे मालवीयजी की पालिसी कह सकें तो मैं सभापति नहीं रह सकता। अब भी अगर आप राज़ी हों तो बिना ए. आई. सी. सी. की बैठक बुलाये एक रास्ता निकल सकता है। ए. आई. सी. सी. के मेंबरों के नाम एक गश्ती चिट्ठी भेजी जा सकती है कि आप सदर बनने के लिए रज़ामंद हैं। मैं उनसे माफी मांग लूंगा। यह सिर्फ जाब्ते की कार्रवाई होगी, क्योंकि सभी या करीब-करीब सभी मेंबर आपके फैसले को खुशी से मान लेंगे।

एक दूसरा रास्ता यह है कि मैं यह ऐलान कर दूं कि मौजूदा हालतों में और इस खयाल से कि इस वक्त दूसरा सदर चुनने में दिक्कत होगी, अभी सदारत न छोड़ूं, लेकिन कांग्रेस के फौरन बाद छोड़ दूं। मैं चेयरमैन के तौर पर काम करूंगा और मेरी कोई भी परवा किये बिना कांग्रेस जसा चाहे फैसला कर सकती है।

अगर मैं अपने जिस्म की और दिमागी तंदुरुस्ती बनाये रखना चाहता हूं तो इन दो में से एक रास्ता मेरी समझ में जरूरी है।

जैसाकि मैंने दिल्ली से आपको लिखा था, मैं कोई पब्लिक बयान नहीं निकाल रहा हूं। दूसरे लोग क्या कहते हैं या क्या नहीं, इसकी मुझे ज्यादा फ़िक्र नहीं है। लेकिन खुद मुझे शांति होनी चाहिए।

सप्रेम आपका,
जवाहरलाल

फिर से—

इस खत की एक नकल मैं पिताजी के पास भेज रहा हूं। इस खत को लिखकर मैं कुछ हल्कापन महसूस कर रहा हूं। मुझे डर है कि इससे आपको कुछ परेशानी होगी। ऐसा मैं करना नहीं चाहता। आधा मन कर रहा है कि इसे आपके पास न भेजूं, बल्कि आपके यहां आने का इंतजार करूं। दस दिन और बीतने पर जरूरी तौर पर मेरी उत्तेजना कम हो जायगी और मेरी

निगाह ज्यादा साफ हो जायगी। लेकिन यह अच्छा है कि आप जान लें कि मेरा दिमाग़ किस तरह काम कर रहा है।

६४. महात्मा गांधी की ओर से

अलीगढ़,
४ नवम्बर १९२९

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा पत्र अभी मिला। मैं तुम्हें कैसे सान्त्वना दूं ? दूसरों से तुम्हारी हालत सुनकर मैंने अपने मन में कहा, "क्या मैंने तुमपर बेजा दबाव डालने का अपराध किया है ?" मैंने सदा यह माना है कि तुमपर बेजा दबाव पड़ नहीं सकता। मैंने सदा तुम्हारे प्रतिरोध का सम्मान किया है। वह हमेशा सम्मानपूर्ण रहा है। इसी विश्वास पर मैंने अपना दावा आगे बढ़ाया। इस घटना से सबक लेना चाहिए। मेरा सुझाव जब भी तुम्हारे दिल या दिमाग को न जंचे तभी अड़ जाओ। ऐसे अड़ने से मेरा प्रेम तुम्हारे प्रति घटेगा नहीं।

मगर तुम उदास क्यों होते हो ? आशा है, तुम्हें लोकमत का डर नहीं है। तुमने कोई बेजा बात नहीं की है, तो उदासी क्यों ? स्वाधीनता का आदर्श अधिक स्वतंत्रता से टकराता नहीं। इस समय कार्यकारी अधिकारी की और अगले साल के लिए अध्यक्ष की हैसियत से, तुम अपने अधिकांश साथियों की सामूहिक कारंवाई से अपने-आपको अलग नहीं रख सकते थे। मेरी राय में तुम्हारा हस्ताक्षर करना तर्क-संगत, बुद्धिमत्ता-पूर्ण और अन्यथा भी ठीक था। इसलिए मैं आशा करता हूं कि तुम्हारी उदासी दूर हो जायगी और तुम्हा ी अचूक प्रसन्नता वापस आ जायगी।

बयान तुम जरूर दे सकते हो, मगर इस बारे में जल्दी करने की जरा भी जरूरत नहीं है।

अभी-अभी जो दो समुद्री तार मिले हैं उनकी नकलें साथ में हैं। इन्हें पिताजी को भी दिखा देना।

अगर मुझसे चर्चा करने की जी में हो तो जहां चाहो मुझे पकड़ लेने में संकोच न करना।

आशा है, जब मैं इलाहाबाद पहुंचूंगा तब कमला को स्वस्थ और प्रसन्न पाऊंगा।

हो सके तो तार देना कि उदासी मिट गई है।

सप्रेम तुम्हारा,
बापू

६५. एम. ए. अन्सारी की ओर से

लखनऊ,
७ नवम्बर १९२९

प्रिय जवाहर,

दिल्ली से रवाना होने के पहले जब तुम मेरे यहां आये थे उस वक्त मैं तुमसे कुछ बातें करना चाहता था। तुम्हें याद होगा कि मैंने खोजते हुए तुम्हें सेन गुप्ता के कमरे में पाया और मैंने तुम्हें एक बयान के बारे में बताया था, जिसका मसविदा पास के कमरे में तैयार किया जा रहा था। लेकिन चूंकि मैंने तुम्हें बातचीत में मशगूल पाया, इसलिए तुम्हें छेड़ना मुनासिब नहीं समझा।

शुएब, खालिक, महमूद, तसद्दुक़ और दूसरे सब दोस्त, जो कान्फ्रेंस में मौजूद थे और जो अपनी आंखों के सामने धीरे-धीरे आनेवाले मसलों को देख रहे थे, सबके दिलों में तुम्हारे ऊंचे दर्जे के और हिम्मत-भरे बर्ताव के लिए हद दरजे की कद्र थी। उसी वक्त हमें यह भी मालूम हुआ (हमने बहुत से लोगों को आपस में मशविरा करते देखा) कि लोग अपना निजी मतलब सीधा करने के लिए, तुम्हारे उठाये गए कदम का तभी-के-तभी फायदा उठा लेनेवाले हैं, लेकिन मैं जानता हूं कि इन छोटी-छोटी बातों का तुमपर या तुम्हारे कामों में से किसीपर कोई असर नहीं पड़ेगा। ताहम मैं सुभाष के अलावा और कई लोगों के इस्तीफों का इंतज़ार कर रहा हूं। बहरहाल सवाल का यह महज़ ज़ाती पहलू है।

मैंने पंडितजी और महात्माजी के नाम तुम्हारे खत देखे। मैं तुमसे यह ज़रूर कहना चाहूंगा कि उन्हें पढ़कर मेरे मन में बड़ी बेचैनी है। मेरा खयाल है कि वर्किंग कमेटी और सैक्रेटरीशिप से तुम्हारा इस्तीफ़ा कुछ वक़्त से पहले और जल्दबाज़ी में दिया गया है। मैं यह भी सोचता हूं कि कांग्रेस

की सदारत के बारे में तुम्हारे सुझावों के पीछे भी वे ही जज्बात हैं। कांग्रेस में जो खयाल फैला हुआ है उससे तुम एकराय नहीं हो। इसी वजह से तुम सोचते हो कि कांग्रेस की सदारत से तुम्हें इस्तीफ़ा देना पड़ेगा। लेकिन मेरा अपना यकीन है कि यह बात बहुत मुमकिन है कि तुम्हें इस्तीफ़ा न देना पड़े और कांग्रेस तुम्हारे खयालों को अपनाले।

अपने दिल्ली के बयान और कामन्स-सभा की बहस के बाद हम पक्के तौर पर यह जान सकने की हालत में होंगे कि आया हमा ी बात मंजूर हुई या नामंजूर। मंजूर होने से उसके नामंजूर होने के मौके ज्यादा हैं। उस सूरत में हमारी हालत ज्यादा मज़बूत होगी और लाहौर में जो भी कदम उठाया जायगा उसके पीछे पूरी कांग्रेस की ठोस ताकत होगी। इसलिए मैं समझता हूं कि सबसे अच्छी पालिसी यही है कि 'इंतज़ार करो और देखो', जसी कि पंडितजी की भी सलाह है। वर्किंग कमिटी की बैठक के पहले तुम्हें किसी तरह का कदम नहीं उठाना चाहिए।

पंडितजी के साथ इलाहाबाद जाने का बहुत बड़ा लालच है, लेकिन अपने मरीज़ों की इच्छाओं के डर से मैं चुपचाप चोर की तरह दिल्ली से रवाना हुआ था। मुझे वापस जाना चाहिए और इलाहाबाद में वर्किंग कमेटी की ब क में शरीक होने के लिए फिर दिल्ली से चलने के पहले मुझे कम-से-कम वहां एक हफ्ते काम करना चाहिए।

माजी को आदाब और कमला, सरूप, बेटी और इन्दू को प्यार।

तुम्हारा,
एम. ए. अंसारी

६६. महात्मा गांधी की ओर से

वृन्दावन
८ नवम्बर १९२९

प्रिय जवाहर,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हें मेरा तार मिल गया होगा। तुम्हें अभी इस्तीफा नहीं देना चाहिए। अपनी बात पर बहस करने का मेरे पास समय नहीं है। मैं इतना ही जानता हूं कि इससे राष्ट्रीय कार्य पर असर पड़ेगा। कोई जल्दी नहीं और किसी उसूल को खतरा नहीं। ताज की बात यह है कि उसे और

कोई नहीं पहन सकता। वह कभी फूलों का ताज नहीं होनेवाला है। अब तो कांटे-ही-कांटे हैं। मैं उसे पहनने को अपने-आपको राजी कर सकता तो मैं लखनऊ में ही पहन लेता। मुझे मजबूर होकर पहनना पड़ेगा, इसके लिए इस प्रकार की स्थिति मेरे ध्यान में नहीं थी। उन स्थितियों में से एक तुम्हारी गिरफ्तारी होने और दमन बढ़ जाने की थी। लेकिन ये सब बातें जब हम मिलें तब शान्त और अनासक्त चर्चा के लिए रख छोड़ें।

तबतक ईश्वर तुम्हें शान्ति दे। बापू

६७. सरोजिनी नायडू की ओर से

ताजमहल होटल, बंबई
२० नवम्बर १९२९

प्रिय जवाहरलाल,

इसे कहते हैं मुसीबत में दोस्ती निभाना। मैं, और पद्मजा यात्रा की तैयारी में हैं और हम दोनों के ही जरूरत से ज्यादा लोकप्रिय होने के कारण हर क्षण तरह-तरह के स्त्री-पुरुष हमारे ऊपर हल्ला बोलते रहते हैं। पद्मजा अपनी पहली यात्रा और घरेलू दासता से पहली बार छुटकारे की कल्पना से बेहद उत्तेजित है। आशा करती हूं कि इस यात्रा से उसकी तंदुरुस्ती और उमंगों को नया मोड़ मिलेगा। मुझे तो एकदम अचानक ही, लगभग दो बार पलक झपकते-झपकते यह तय करना पड़ा कि मैं अफ्रीका जाऊं या नहीं। पर वे लोग मुसीबत में हैं और उनकी मदद की पुकार निहायत ज़रूरी थी—और पद्मजा की अफ्रीका जाने की लालसा भी एक अर्ध-चेतन प्रभाव था, जिसने मेरा निश्चय पक्का किया।

बिदा, प्रिय जवाहरलाल! मैं २१ दिसम्बर को तुम्हारी कांग्रेस के समय तक लौट आऊंगी। मेहरबानी करके इसका खयाल रखना कि अध्यक्ष पापा ६ दिसम्बर तक बेटी अध्यक्ष के नाम एक तार कांग्रेस के उद्घाटन में पढ़ने के लिए एक संदेश के साथ नैरोबी भेजना न भूलें।

फिर मिलेंगे। पद्मजा का और मेरा आनंद भवन में सभीके लिए प्यार।

तुम्हारी बहन,
सरोजिनी

६८. ऐनी बेसेन्ट की ओर से

दी थियोसाफीकल सोसायटी
अडयार, मद्रास
२९ नवम्बर १९२९

प्रिय पंडितजी,

आपने बड़ा अच्छा किया कि मेरे भाषण के समय जो पर्चे बांटे गये, उसपर खेद प्रकट किया। विश्वास रक्खें, पर्चे बांटने से मुझे कोई दुःख नहीं हुआ। नौजवानों को सार्वजनिक कामों में सक्रिय दिलचस्पी लेते हुए देखकर मुझे हमेशा बड़ी खुशी होती है, भले ही वे मुझसे सहमत हों या न हों। फिर अब मैं इतनी वृद्ध राजनीतिज्ञ होगई हूं कि लोग क्या कहते हैं, इसकी तरफ मैं ध्यान भी नहीं देती।

स्नेहपूर्वक आपकी,
ऐनी बेसेंट

६९. वीरेन्द्र चट्टोपाध्याय की ओर से

[वीरेन्द्र चट्टोपाध्याय सरोजिनी नायडू के भाई थे। वह प्रथम महायुद्ध से भी पहले ऑक्सफोर्ड चले गये थे। तबसे वह कभी भी स्वदेश नहीं लौटे। यूरोप में उनका कई वामपक्षी आंदोलनों से संबंध रहा।]

साम्राज्यवाद-विरोधी और राष्ट्रीय स्वतंत्रता-पोषक संघ
इंटरनेशनल सेक्रेटेरिएट,
२४ फ्रेडरिक स्ट्रास, बर्लिन, एस. डब्ल्यू. ४८
४ दिसम्बर १९२९

प्रिय जवाहर,

७ नवम्बंर (रूसी-क्रांति का जयन्ती-दिवस) का लिखा आपका खानगी पत्र मिला। पढ़कर बड़ा दुख हुआ। अपने प्रश्नों के बारे में हमेशा क्रांतिकारी दृष्टिकोण से (मुझे आशा है कि लगातार) सोचने की मेरी आदत है और इसी दृष्टिकोण से अपनी मित्रता के दौरान में अपने विचार बहुत ही स्पष्टता के साथ कहने का मैंने हमेशा अपना दायित्व माना है। इस पत्र से पहले मैं आपको एक समुद्री तार भेज चुका हूं। उसमें इस समाचार पर अचरज प्रकट करके मैंने अपनी यही राय कुछ मीठे शब्दों में आपपर ज़ाहिर

की है। मैंने यह इसलिए किया कि 'टाइम्स' की रिपोर्ट पर मैं विश्वास नहीं कर सका। परन्तु मुझे बहुत खेद के साथ कहना पड़ता है कि आपका पत्र और हिंदुतस्तान के समाचारपत्र इस रिपोर्ट को सत्य सावित करते हैं कि आपने दिल्ली में लुटिया डुबो दी। देशद्रोहियों के सामने, जो कि अपने-अपने वर्ग के हितों के लिए काम कर रहे हैं, झुकने के लिए आप कोई भी कारण उपस्थित करें, मेरी समझ में नहीं आता कि आपने तत्काल त्यागपत्र क्यों नहीं दिया। इससे देश में आपकी स्थिति वड़ी मजबूत हो जाती। तमाम युवक, किसान और मज़दूर भी आपके साथ हो जाते और इससे कांग्रेस के समझौता-पसंद लोगों को आप बड़ी आसानी से हरा सकते थे। 'पीपुल' में ब्रिटिश राजनीति की सफलता के बारे में जो दृष्टिकोण व्यक्त किया गया है, उससे मैं पूरी तरह सहमत हूं। जनता के महत्वपूर्ण हितों की अपेक्षा कांग्रेस की एकता को अधिक महत्व देने की कल्पना करना बुनियादी राजनैतिक भूल है। इस समय आप देश के युवकों के असंदिग्ध नेता हैं और मज़दूर-वर्ग भी आप ही पर विश्वास करता है। ऐसी स्थिति में पहुंचने पर आप इस क्षणिक अकथनीय दुर्बलता और मानसिक उलझन में पड़े दिखाई देते हैं और आपने अपने अनुयायियों को अधर में छोड़ दिया है।

यह एक विचित्र पहेली है कि ट्रेड यूनियन कांग्रेस के अध्यक्ष की हैसियत से आपने जो किया, वह बिल्कुल संतोषजनक था। साथ ही दिल्ली के घोषणा-पत्र पर आप कैसे दस्तखत कर सके, यह समझना और भी मुश्किल हो जाता है। यह तथ्य कि हिंदुस्तान के ज्यादातर मजदूर साम्राज्यवाद को उखाड़ फेंकने और पूर्ण स्वाधीनता के पक्ष में हैं, इस बात का प्रमाण है कि दिल्ली में आपने जो कदम उठाया वह गलत था। एक तरफ तो आप कांग्रेस की कार्यकारिणी के बहुमत के साथ औपनिवेशिक स्वराज्य की मांग का समर्थन करते हैं और दूसरी तरफ बहुसंख्यक मजदूरों की पूर्ण स्वाधीनतावाली मांग का अनुमोदन करते हैं। यह एक बेमेल बात है। इसे दूर करने के लिए कोई कदम उठाना चाहिए। अन्तर्राष्ट्रीय दुनिया में आपकी स्थिति बड़ी विषम हो जायगी, जबतक कि आप, बड़े नेताओं ने प्रायः जो किया, वह न करें, यानी सार्वजनिक रूप से अपनी भूल मान लें और सही रास्ते पर चलें। यदि आप आज ऐसा करते हैं, अर्थात् अपने हस्ताक्षर वापस ले लेते हैं और कांग्रेस

के अध्यक्ष की अपनी स्थिति को उस झूठी एकता के ध्वस्त करने के लिए एक अवसर बना लेते हैं, जोकि बड़ी खतरनाक साबित हो रही है; कांग्रेस के सारे तंत्र को नरमदल और औपनिवेशिक स्वराज्यवाद के विरुद्ध दृढ़ता के साथ संघर्ष करने के लिए अपने नियंत्रण में कर लेते हैं, तो अपनी खोई हुई प्रतिष्ठा को आप बहुत-कुछ फिर से प्राप्त कर लेते हैं। कृपया मेरी इन आलोचनाओं से यह न समझें कि मैं आपका मित्र नहीं रहा, बल्कि यह मानें कि मेरी ये आलोचनाएं भारतीय किसानों और मजदूरों के प्रति मेरी गहरी निष्ठा से उत्पन्न हुई हैं। केवल इसी प्रकाश में हम अपने कामों की सही जांच कर सकते हैं, और इस कसौटी के अनुसार मुझे यह कहने के लिए लाचार होना पड़ता है कि दिल्ली के घोषणा-पत्र पर आपके हस्ताक्षर स्वाधीनता-संग्राम में भारतीय जनता के प्रति विश्वासघात के समान हैं।

हालांकि यह पत्र मैं लीग के कागज पर लिख रहा हूं, परन्तु यह पूर्णतया निजी है।

मुझे आशा है कि आप अब अखिल भारतीय साम्राज्यवाद-विरोधी संघ को उन आधारों पर स्थापित करने की आवश्यकता को महसूस करते हैं, जो आधार मैंने दो वर्ष पूर्व आपको सुझाये थे। राष्ट्रीय महासभा भारतीय जनता का प्रतिनिधित्व नहीं करती। लेकिन उन संगठनों में से वह एक है, जो कि कम-बढ़ साम्राज्यवाद-विरोधी पार्ट अदा करते हैं। एक ऐसे संगठन का होना आवश्यक है जो कि इनसब संगठनों को एक सूत में पिरो सके, उनके प्रयत्नों को जोड़ सके और एक साम्राज्यवाद-विरोधी न्यूनतम कार्यक्रम के अनुसार इनकी नीतियों का निर्धारण कर सके तथा अंतिम संघर्ष के लिए सारे देश को संगठित कर सके। भारत में ऐसे किसी साम्राज्यवाद-विरोधी संघ की आवश्यकता की ओर ध्यान दिलाते हुए हमने हिन्दुस्तान के अपने सारे संगठनों को निमंत्रण-पत्र पहले से ही भेज दिये हैं। हम आशा करते हैं कि हमारे द्वारा भेजे गए पत्र की एक प्रति आपको मिली होगी। लेकिन इस पत्र के साथ मैं एक और प्रति भेज रहा हूं। मुझे नहीं मालूम कि दिसम्बर के अंत में एक साम्राज्यवाद-विरोधी सम्मेलन लाहौर में बुलाने के विषय में, जैसी कि हमारी योजना थी, कोई कदम उठाया गया है या नहीं? इस विषय में एक-दो सप्ताह में आपको और अधिक सूचनाएं भेजी जायंगी।

मैं हृदय से आशा करता हूं कि इस वर्ष के अंत में भारत से जो समाचार मिलेगा, वह उतना ही उत्साहवर्धक होगा, जितना कि ट्रेड यूनियन कांग्रेस के विषय में 'टाइम्स' में प्रकाशित हुआ था।

कमला और कृष्णा के लिए मेरी शुभकामनाएं।

आपका,

वी. चट्टोपाध्याय

७०. मोतीलाल नेहरू की ओर से एम. ए. अन्सारी के नाम

१७ फरवरी १९३०

प्रिय अन्सारी,

मैं अहमदाबाद से आज सवेरे चला हूं और यह खत रेल में बोलकर लिखवा रहा हूं। चूंकि मैं दिल्ली जा रहा हूं, जहां देर-सवेर आपसे मुलाकात होने की उम्मीद है, इसलिए जो कुछ मुझे कहना है उसे आमतौर पर जबानी बातचीत के लिए उठा रखना चाहिए था। पता नहीं क्यों, हमारे कांग्रेसियों के छोटे-से दल में चीजें इस तरह नहीं हो रही हैं, जैसीकि आमतौर पर होनी चाहिए और मैंने यह जरूरी समझा कि मुझे जो चंद बातें कहनी हैं, उन्हें कागज पर लिखवा दूं, जिससे उस बारे में कोई गलती न हो।

शुरू में ही आपको यकीन दिलाना चाहूंगा कि मकसद के तईं आपकी वफादारी में और मेरे तईं आपकी निजी इज्जत और मोहब्बत में मुझे पूरा भरोसा है। यह पहला मौका नहीं है जबकि अवाम के सवालों पर मेरी आपसे मुख्तलिफ राय रही हो और बदकिस्मती से इस मौके पर, मैं महसूस करता हूं, जैसाकि पहले करता रहा हूं कि यह मुखालफत दोनों तरफ से फर्ज के गहरे जज्बात में से उठकर आ रही है।

गांधीजी के नाम भेजे गए आपके खत को मैंने बहुत ग़ौर से पढ़ा है, और फिर से पढ़ा है। हालांकि हिंदू-मुसलिम एके को जो अहमियत आप दे रहे हैं, उसे मैं पूरी तरह मंजूर करता हूं, तो भी अफसोस के साथ कहना पड़ता है कि मैं आपके साथ इन दो बातों में से किसीमें भी एकराय नहीं हो सकता कि किन वजहों से हमें अबतक हिंदू-मुस्लिम एके को हासिल करने में कामयाबी नहीं मिली है और आगे किस तरफ कोशिश होनी चाहिए। आप और मैं दोनों ही इस एके को ठोस बुनियाद देने की कोशिश करते आ

रहे हैं, लेकिन मानना पड़ेगा कि इसमें हम लोग बुरी तरह नाकामयाब रहे हैं। पिछले तजुर्बे और बहुत-कुछ गौर करने के बाद मैं इस नतीजे पर पहुंचा हूं कि जिस तरह हम लोग काम करते रहे हैं, वह बुनियादी तौर पर गलत था। यह सचाई साथ-साथ काम करते हुए हमारे दिमाग में वक्त-वक्त पर आती रही है और हमने कदम पलटने की कोशिश की है, जैसाकि हम लोगों ने लाहौर में मोहल्लों के चौधरियों की सभा करके किया था। लेकिन हमने पाया कि हम एक बुरे चक्कर में पड़ गये हैं, जिससे उस हालत में बच पाना नामुमकिन है। इन सारे सालों में हम गलत इजलासों में अपनी फरियाद पहुंचाते रहे हैं। हम कयामत तक ऐसा करते रहें तो भी हमें कोई मदद नहीं मिलने की। अगर किसी आदमी का, चाहे वह कितना ही बड़ा आदमी क्यों न हो, एक जगह पर फीके स्वागत और उसी आदमी के दूसरी जगह पर पुरज़ोर स्वागत पर किसी अहम राष्ट्रीय मसले के हल का दारोमदार हो, तो अच्छा हो, हम उसे दूर से ही सलाम कर दें।

सर तेजबहादुर सप्रू अब वही भूल कर रहे हैं और असल में हमने इस बात को जहां छोड़ा था उन्होंने वहींसे उसे उठाया है। मुझे ज़रा भी शुबहा नहीं कि जल्द ही उनकी गलतफहमी दूर हो जायगी। लेकिन उनके रास्ते में मैं अड़चन नहीं बनना चाहता और हमने यह तय किया है कि बिना किसी नुक्ताचीनी के उन्हें बढ़ने दें, जबतक कि वह थककर मैदान न छोड़दें और मुझे यकीन है कि इसके लिए कुछ दिनों नहीं तो कुछ हफ्तों से ज्यादा इंतजार नहीं करना पड़ेगा।

इस खत में सिर्फ अपने इरादे बता देने से ज्यादा कुछ कहना मेरे लिए मुश्किल है। अब मेरा पक्का यकीन है कि हिन्दू-मुस्लिम एकता नसीहत देकर नहीं हो सकती। हमें उसे ऐसे ढंग से लाना है कि हिन्दू और मुसलमान इस बात को जानें भी नहीं कि वे एकता के लिए कोशिश कर रहे हैं। यह सिर्फ इक्तसादी बुनियाद पर हो सकता है और हकतलफ़ी करनेवाले के खिलाफ आज़ादी की लड़ाई लड़ते हुए। अगर एक फिरका जीने के हक के लिए, जो दोनों के लिए एक-सा हो, लड़ रहा हो, तो यह सोचना नामुमकिन है कि जल्दी या देर में दूसरा फिरका भी कामयाबी या नाकामयाबी के नतीजों को महसूस नहीं करेगा। और यह सोचना उतना ही नामुमकिन है कि उन

नतीजों को महसूस करने पर वह जी-जान से उस जद्दोजहद में नहीं कूद पड़ेगा। उस बड़े दिमागवाले ने, बहुत ज्यादा खिल्ली उड़ाये जाने और ग़लतबयानी के बीच भी, नमक के कानूनों को तोड़ने में एक ऐसी बुनियाद को ढूंढ़ निकाला है। यह चीज़ उनके अपने ही पसंद के अलफ़ाज़ों में 'यकीन न करने लायक सीधी' है। ताज्जुब तो सिर्फ यह है कि इससे पहले किसी दूसरे को यह बात कभी सूझी तक नहीं। इस मौके पर यह कहना मुमकिन नहीं कि ऐसी सीधी बात भी लोगों के खयाल को उकसावेगी या नहीं, लेकिन अगर ऐसा होता है तो हिन्दुओं और मुसलमानों दोनों के लिए यह ज़रूर ही एक बड़ी कामयाबी होगी। अगर उससे ऐसा नहीं होता तो हमारे लिए कोई उम्मीद नहीं और हिन्दू-मुस्लिम-एके की और कानूनी और फिरकेवाराना हकों की बात करना ही फिजूल है।

आप कहते हैं कि मुल्क सिविल नाफरमानी के लिए तैयार नहीं है। अगर ऐसा है तो कब और कैसे उसे आप इसके लिए तैयार करेंगे ? क्या आपको यकीन है कि दोनों फिरकों के नेता कहलानेवालों के मौजूदा गुस्से को देखते हुए किसी फारमूले तक पहुंचना मुमकिन है ? अगर मुमकिन भी हो, जिसका मुझे पक्के तौर पर शुबहा है, तो महज यह कागज़ी फारमूला सरकार के खिलाफ जद्दोजहद में हमें कहांतक आगे ले जायगा ? इसके लिए तो एक हिन्दुस्तानी नरमदलवाले के हौसले की जरूरत है, जो एक तयशुदा 'नहीं' को साफ़ 'हां' करके पढ़ सकता है, यह यकीन करके कि जैसे ही यह फारमूला तय हुआ कि सरकार घुटने टेक देगी। मेरी अब पक्की राय बन गई है कि आपसी रियायतों की बुनियाद पर बने कितने भी फारमूले, जबकि रियायतें करनेवालों को रियायतें करने का कोई हक भी न हो, हमें हिंदू-मुस्लिम-एके के उससे ज़्यादा पास नहीं ले जा सकते, जितने कि मौजूदा हालत में हैं।

आपने पिछले कुछ सालों के वाकयात पर नज़र दौड़ाई है। मि. जिन्ना के साथ मैंने कुछ बेरुखी का सलूक किया, इस बारे में मुझे कुछ नहीं कहना है। मि. जिन्ना ने उस मौके पर जो कुछ कहा उससे मेरा हौसला ठंडा पड़ गया और मैं उन्हें खुश करने के लिए बनावटी गर्मी अपने में पैदा नहीं कर सकता था।

आपने अपनी निजी हालत की सफाई भी दी है और उन वजहों की भी, जिनसे आपने काम करने का यह ढंग अपनाया। आपके नज़रिये को देखते हुए कोई भी समझदार आदमी आपके काम के लिए आपको ग़लत नहीं ठहरा सकता।

आखीर में आपने १९२० के हालात का आज के हालात से खुलासे-वार मुकाबला किया हैं। किसी मुल्क की तवारीख में दस सालों के फासले से होनेवाली दो घटनाएं हू-ब-हू एक-सी नहीं हो सकती हैं ! आपने जो कुछ मुद्दे बताये हैं, उनसे मुझे हैरत होती है, जैसे यह कि लोगों का मज़-दूर दल की सरकार की नेकनीयती में और वाइसराय की ईमानदारी में यकीन और यह कि कलकत्ता की तजवीज़ के लिए जितना हो सकता उतना सरकार का हाथ बढ़ाना। लेकिन इस बारे में सिर्फ़ इतना कहना ही ज़रूरी है कि मैं आपके खुलासे से एकराय नहीं हूं। इसके बरखिलाफ मैं समझता हूं कि हमारे सामने सवाल यह है कि 'या तो अभी या कभी नहीं।'

मैं उम्मीद करता हूं कि आप यह तो मानेंगे कि आनेवाली जद्दोजहद में गांधीजी के साथ अपनी किस्मत जोड़ देने का मेरे और अपनों के लिए क्या मतलब हैं। अगर मेरा यह गहरा यकीन न होता कि ज्यादा-से-ज्यादा कोशिश और कुरबानी का वक्त आगया है तो मैं इस उम्र में, अपनी जिस्मानी कमज़ोरियों और कुनबे के तईं ज़िम्मेदारियों के साथ वह जोखिम न उठाता, जो उठा रहा हूं। मैं मुल्क की आवाज सुनता हूं और उसपर चल रहा हूं।

आपका,

मोतीलाल नेहरू

७१. महात्मा गांधी की ओर से

[राष्ट्रीय कांग्रेस का लाहौर-अधिवेशन दिसंबर १९२९ के अंतिम दिनों और १९३० के शुरू में हुआ था। उसमें स्वाधीनता का निश्चय किया गया था। २६ जनवरी १९३० को भारतभर में दूर-दूर तक 'स्वाधीनता दिवस' मनाया गया था। इसके थोड़े अर्से के बाद, जो नमक-सत्याग्रह के नाम से मशहूर हुआ, गांधीजी ने उसका निश्चय किया। वह साबरमती-आश्रम से साथियों की एक टोली लेकर समुद्र-तट पर डांडी की ओर चल

पड़े। अगले तीन पत्र उन्होंने समुद्र की ओर इसी कूच के दिनों में लिखे थे। वह और उनके साथी अप्रैल के शुरू में डांडी में गिरफ्तार किये गए थे।]

११ मार्च १९३०

प्रिय जवाहरलाल,

अब रात के १० बजने को हैं। यहां ज़ोर की अफ़वाह फैली हुई है कि मैं रात में ही पकड़ लिया जाऊंगा। मैंने तुम्हें खास तौर पर तार इसलिए नहीं दिया कि सम्वाददाता लोग अपनी खबरें मंजूरी के लिए पेश करते हैं और सभी पूरी गति से काम कर रहे हैं। तार देने लायक कोई खास बात थी भी नहीं।

घटनाएं असाधारण रूप में ठीक हो रही हैं। स्वयंसेवकों के नाम धड़ाधड़ आ रहे हैं। टोली कूच करती ही रहेगी, भले ही मैं पकड़ लिया जाऊं। मैं गिरफ़्तार न हुआ तो मेरी तरफ़ से तारों की आशा रख सकते हो, नहीं तो मैं हिदायत छोड़े जा रहा हूं।

मेरे पास कोई खास बात कहने को मालूम नहीं होती। मैं काफ़ी लिख गया हूं। आज शाम को रेती[1] पर प्रार्थना के लिए जमा हुई विशाल भीड़ को मैंने अंतिम संदेश दे दिया था।

भगवान तुम्हारी रक्षा करे और भार वहन करने की तुम्हें शक्ति दे!

तुम सबको प्यार,

बापू

७२. महात्मा गांधी की ओर से

१३ मार्च १९३०

प्रिय जवाहरलाल,

आशा है, तुम्हें मेरा पत्र मिल गया होगा, जो आखिरी हो सकता था। मेरी होनेवाली गिरफ़्तारी की जो खबर मुझे दी गई थी, वह बिल्कुल विश्वस्त बताई गई थी। परन्तु हम दूसरी मंज़िल पर सुरक्षित पहुंच गये हैं। तीसरी आज रात को शुरू करेंगे। मैं तुम्हें कार्यक्रम भेज रहा हूं। सभी साथियों का आग्रह है कि मुझे कार्य-समिति के लिए अहमदाबाद नहीं जाना

[1] साबरमती नदी की

चाहिए। इस सुझाव में काफी बल है। इसलिए कार्य-समिति उस जगह आ जाय, जहां उस दिन हम हों या तुम अकेले आ सकते हो। यह भावना कि हम लड़ाई को पूर्ण किये बिना स्वेच्छा से वापस नहीं लौटेंगे, अच्छी तरह पोषित की जा रही हैं। मेरे वापस जाने से इसमें कुछ बट्टा लग जायगा। जमनालालजी ने मुझे बताया कि उन्होंने इस बारे में तुम्हें लिखा था। आशा है, कमला का स्वास्थ्य अच्छा है। मैंने कल कह दिया था कि तुम्हें पूरे तार भेजे जायं।

सप्रेम तुम्हारा,
बापू

७३. मोतीलाल नेहरू की ओर से एम. ए. अन्सारी के नाम

शाहीबाग, अहमदाबाद
२० मार्च १९३०

प्रिय अन्सारी,

यहां रेलगाड़ी से उतरते ही मुझे आपका खत दिया गया। जवाहर के नाम महात्माजी का एक खत मिला, जिसे उन्होंने खास आदमी के हाथ भेजा था और जिससे पता लगा कि अगर वह फ़ौरन मोटर से न चल पड़ा, जो उसके लिए खड़ी हुई थी, तो उसके लिए कल की ए. आई. सी. सी. की बैठक के पहले महात्माजी से मिलना नामुमकिन होगा। आगरा से अहमदाबाद तक तीसरे दर्जे की ठसाठसभरी गाड़ी में सफर करते हुए बेचारा रात में एक झपकी भी नहीं ले पाया था। लेकिन जैसा महात्माजी ने चाहा था, वह फौरन चल पड़ा। २ बजे रात तक मोटर पर चलकर एक बाढ़ से चढ़ी नदी को पार करना था, जिसका कि किसी दूसरे वक्त पर पार करना मुमकिन न होता। अगर सब ठीक चले तो उसे महात्माजी के पास उनके प्रार्थना के वक्त तक, जो आप जानते हैं, ४ बजे होती है, पहुंच जाना था। आज शाम ६ बजे तक उसे यहां वापस आ जाना है।

मेरेलिए ज़ाहिरा तौर पर यह कवायद नामुमकिन थी, इसलिए मुझे यहीं रुक जाना पड़ा। अब मेरा प्रोग्राम यह है कि कल ए. आई. सी. सी. की बैठक, जरूरत हुई तो रात देर तक खत्म करके दूसरे दिन सवेरे की गाड़ी से भड़ोच जाऊं। वहां एक मोटर महात्माजी के दिन के पड़ाव तक ले जाने

के लिए मेरे इंतजार में होगी। मैं उम्मीद करता हूं कि ५ बजे शाम, दूसरे पड़ाव के लिए उनकी रवानगी से पहले, मैं २ घंटे उनके साथ रह लूंगा। उसके बाद मेरे सामने तीन रास्ते होंगे। एक रास्ता होगा किसी मुनासिब गाड़ी से सूरत, भड़ोंच या बड़ौदा पहुंचूं। रेलवे स्टेशन और महात्माजी के पड़ाव के बीच सड़क से कितना फासला है और सड़क कैसी है, इसका यहां लोगों को पता नहीं, लेकिन दो ही गाड़ियां ठीक पड़ सकती हैं, यानी फ्रंटियर मेल और बंबई-दिल्ली एक्सप्रेस। फ्रंटियर मेल पकड़ने के लिए भड़ोंच का सवाल नहीं उठता, क्योंकि यह गाड़ी वहां ठहरती नहीं। एक्सप्रेस ही एक मुनासिब गाड़ी हो सकती है, जिससे—उसे मैं जहां भी पकड़ सकूं—रतलाम पहुंच सकता हूं और वहां से जावरा पहुंच सकता हूं। तो फिलहाल यह प्रोग्राम समझिये कि मैं २३ को सवेरे ६ बजे रतलाम पहुंचूंगा, दिनभर आपके साथ जावरा में बिताऊंगा और आधी रात फ्रंटियर मेल से इलाहाबाद के लिए चल दूंगा। मैं कह नहीं सकता कि यह इंतजाम चल पायेगा, लेकिन आप चूंकि दो दिन पहले खबर चाहते हैं तो आपको इस बात के लिए तैयार रहना चाहिए कि जावरा से भेजी गई मोटर रतलाम से मेरे बिना ही वापस लौटे। तार भेजने से कोई खास फायदा नहीं जान पड़ता, फिर भी मैं तार भेज दूंगा, जिससे आपको वक्त पर मिल ही जाय।

साहबजादा के न्यौते के लिए अहसानमंद हूं। जो कुछ मैंने ऊपर लिखा है, उससे यह जान सकेंगे कि उसे मंजूर करने के लिए मैं कितना ख्वाहिशमंद हूं। लेकिन कब क्या हो, कह नहीं सकता और हो सकता है कि उनसे फिर मुलाकात का मौका ही न मिल पावे। उससे मुझे बड़ी मायूसी होगी।

डा० एम. ए. अंसारी

आपका,
मोतीलाल नेहरू

७४. एम. ए. अन्सारी की ओर से

जावरा स्टेट
३० मार्च १९३०

प्रिय जवाहर,

साथ का खत मैंने महात्माजी को भेज दिया है। मैं समझता हूं कि

तुम और महात्माजी ही ऐसे दो आदमी हो, जिनका पंडितजी पर असर है। मुझे डर है कि पंडितजी को मेरी सलाह शायद सही नहीं लगेगी, हालांकि उनकी जिस्मानी हालत को देखते हुए ही मैंने यह सलाह दी है। उन्हें यह खयाल हो सकता है कि बदकिस्मती से आज मैं तहरीक में उनके साथ नहीं हूं। फिर भी मैं यह जरूरी समझता हूं कि तुम्हें उनकी मौजूदा हालत से वाकिफ करा दूं ताकि तुम, जहांतक मुमकिन हो, उन्हें जरूरी आराम के लिए, जिसकी उन्हें बहुत ज्यादा जरूरत है, राजी कर सको।

तुम्हारा,
एम. ए. अन्सारी

७५. एम. ए. अन्सारी की ओर से महात्मा गांधी के नाम

जावरा स्टेट
३० मार्च १९३०

प्रिय महात्माजी,

जिस दिन पंडितजी मेरे पास यहां आये, उसके दूसरे दिन २५ तारीख को मैं आपको खत लिखने का इरादा कर रहा था, लेकिन यकायक भोपाल से बुलावा आगया और मुझे बेगम-मां के इलाज के लिए जाना पड़ा, जो कुछ अरसे से बीमार थीं। इस बार मुझे पंडितजी की तंदुरुस्ती बहुत ही गैर-तसल्लीबख्श हालत में दिखाई दी। इधर हाल में लगातार फिकरें और थकान का बोझ उन्हें उठाना पड़ा है। फिर वह आपके पास गये और रास्ते में धूल फांकनी पड़ी, जिससे फिर उन्हें दमे का दौरा हो आया। उनका दिल तो पहले से ही अपनी जगह से फैला हुआ है। इस दमे के दौरे से उनके दिल पर और ज्यादा दबाव पड़ा। वह मुश्किल से चल पाते हैं। वह मामूली-सी हरकत भी करते हैं तो उनकी सांस उखड़ने लगती है। आप जानते हैं, उनका ब्लड-प्रैशर भी कभी-कभी बहुत बढ़ जाता है। उनकी दिमागी और जिस्मानी कमजोरी बहुत बढ़ गई है और तंदुरुस्ती बहुत गिर गई है। उनकी उम्र ऐसी है कि फिर से ताकत बटोरने का दम अब उनमें नहीं रहा, लेकिन काम करने से उन्होंने अपनेको रोका नहीं है और आगे भी काम करने पर कमर कसे हुए हैं। मेरा फर्ज है कि उनकी तंदुरुस्ती के बारे में असली हालत से आपको आगाह कर दूं और आपसे कहूं कि आप अपने असर को इस्तेमाल

करके उन्हें आराम करने के लिए कहें और यह भी कहें कि उन्हें हर तरह की जिस्मानी थकान से बचना चाहिए। मैं गौर से आपकी हलचलों के बारे में पढ़ता हूं और अल्लाह से आपके लिए दुआ मांगता हूं।

आपका,
एम. ए. अन्सारी

७६. महात्मा गांधी की ओर से

३१ मार्च, १९३०

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। मैंने तार नहीं दिया, क्योंकि मैं नहीं समझता कि डांडी में कोई पठान हैं, और होंगे तो हम उनसे निपट लेंगे। सरहद से अच्छे और सच्चे मित्रों के आने से भी पेच पैदा होंगे। मुझे डांडी पहुंचने दिया गया तो वहां पेचीदगियां बचाकर अकेला यही प्रश्न उपस्थित करना चाहता हूं। सचमुच गुजरात में घटनाएं बहुत अच्छा रूप धारण कर रही हैं।

मुझे आश्चर्य है कि रायबरेली में इन लोगों ने अभी से इतनी गिरफ़्तारियां कर ली हैं। मेरे खयाल से फिलहाल नमक-कर पर ही अपना ध्यान सीमित करके तुम ठीक कर रहे हो। अगले पखवाड़े में हमें पता चल जायगा कि हम और क्या कर सकते हैं या करना चाहिए।

मेरी तरफ़ से और कोई समाचार न मिले तो एक साथ सब जगह आन्दोलन शुरू कर देने के लिए ६ अप्रैल का दिन समझ लो।

अब रात के दस बजनेवाले हैं। इसलिए राम-राम।

बापू

७७. महादेव देसाई की ओर से

[यह पत्र नमक-सत्याग्रह के छिड़ने के थोड़े दिन बाद ही लिखा गया था।]

आश्रम, साबरमती
७ अप्रैल १९३०

प्रियवर जवाहरलाल,

किताब के दूसरे भाग के लिए बहुत आभारी हूं। परन्तु पता नहीं, इसे पढ़ने का समय कब मिलेगा। शायद जेल में मिले, यदि जल्दी वहां पहुंचने का सौभाग्य प्राप्त होजाय। वास्तव में मैं बिल्कुल आशावान हूं।

हमने अहमदाबाद में गैरकानूनी नमक की बिक्री के साथ ६ अप्रैल से काम शुरू किया और १३ तारीख तक करते रहेंगे। हमारे चार उत्तम कार्यकर्ता तो चले गये। वीरमगाम में हमने चुंगी के घेरे पर धावा किया और मणिलाल कोठारी तथा अहमदाबाद के हमारे (कुछ) कार्यकर्ता चले गये हैं। धोलेरा से, जो इस जिले का दूसरा सिरा है, अमृतलाल सेठ गये हैं। खेड़ा में दरबार गोपालदास को दफा ११७ में दो वर्ष तीन महीने की जंगली सजा दी गई है। शायद यह भारतभर में लागू की जाय। उनके साथ पांच और गये हैं। भड़ोच में डॉ. चन्दूलाल का मुकदमा कल होगा। सूरत में रामदास को और बहुतों के साथ तिलक लगा है।

तुम प्रमाणपत्र दोगे कि हमने अच्छी कारगुजारी दिखाई है। ईश्वर ने चाहा तो हम ऐसा ही करते रहेंगे। जब एक महीने पहले वल्लभभाई पकड़ गये तब मुझे अपने पर बहुत भरोसा नहीं था, लेकिन जिस प्रकार जनता सहयोग दे रही है उससे मैं आत्म-विश्वास से भर गया हूं। मैं रोज ऐसी सभाओं में भाषण दे रहा हूं, जिनमें जीवन में पहले कभी नहीं बोला था। उन सबमें आदर्श व्यवस्था और शान्ति होती है। दस-पंद्रह हजार आदमी हर रोज ६-३० बजे इकट्ठे होते हैं और अंधेरा होने से पहले बिखर जाते हैं और यह सब एक ऐसे आदमी को सुनने के लिए, जो किसी तरह भी वक्ता नहीं कहला सकता। स्वयंसेवक बड़ी संख्या में आ रहे हैं। दो दिन पहले वे पांच सौ थे, आज एक हजार से ऊपर हैं। स्त्रियां भरती तो हो रही थीं, परन्तु कल कम-से-कम ५० नई भरती हुईं और सब-की-सब जोश से भरी हुई थीं। यही हाल रहा, जैसाकि जरूर रहेगा, तो मेरे दिन भी गिनती के ही रह गये हैं। परन्तु कार्य संभालने के लिए काफी लोग हैं। अभी तो मेरा समय आश्रम और प्रान्तीय समिति, 'यंग इंडिया' और 'नवजीवन' में बंटा हुआ है—आश्रम का तो नाममात्र का मुखिया हूं, मगर कोई काम नहीं करता और प्रान्तीय समिति का मंत्री, अध्यक्ष, युद्ध-मंत्री और सबकुछ एक साथ हूं और दोनों पत्रों का मुझे सम्पादन भी जैसा बन पड़ता है करना होता है, मगर जबतक बापू बाहर हैं तबतक यह बायें हाथ का खेल है। मुझे जिलों का दौरा भी करना पड़ता है। यह सब जो काम मैं कर लेता हूं उसका दिखावा करने को यह सब नहीं लिख रहा हूं,

मगर यह बताने को लिख रहा हूं कि मामूली आदमी पर भी जब आ पड़ती है तब वह कितना काम कर गुजरता है। भगवान किसीपर सहन करने लायक बोझे से ज्यादा कभी नहीं डालता।

अलग डाक से तुम्हें उस नमक की एक चुटकी भेज रहा हूं जो बापू ने ६ अप्रैल को डांडी में तैयार किया था। इसे या तो यादगार के तौर पर रख लेना या नीलाम कर देना। लेकिन उसकी कीमत पर पहली बोली एक हजार रुपये से कम नहीं लगनी चाहिए। मेरे पास तो छोटी-सी पुड़िया है। वह ५०१ रुपये में खरीदी गई थी। यह पत्र मैं कृष्णा के पते से भेज रहा हूं, क्योंकि कहीं पुलिस तुम्हारे पत्र खोल न लेती हो और यह अमूल्य नमक जब्त न कर ले।

सप्रेम तुम्हारा,
महादेव

७८. मोतीलाल नेहरू की ओर से शिवप्रसाद गुप्त के नाम

[मेरे पिताजी ने यह पत्र यू. पी. के एक प्रमुख कांग्रेसी शिवप्रसाद गुप्त को तब लिखा था जबकि उन्होंने मेरे पिताजी के एक मुकदमे में वकालत करने जाने पर ऐतराज किया था।]

इलाहाबाद,
१ जून १९३०

प्रिय शिवप्रसादजी,

आपका ज्येष्ठ ५, १९८६ का खत मिला। यह सुनकर मुझे अफसोस हुआ है कि मेरे कांग्रेस के सदर के तौर पर काम करते हुए कचहरी में जिसे आप 'परदेसी इजलास' कहते हैं, पैरवी करने के लिए हाजिर होने पर आपको परेशानी हुई। मैं आपको यकीन दिलाता हूं कि इससे मुझे जरा भी परेशानी नहीं हुई है, बल्कि अगर मैं हाजिर न हुआ होता, जैसाकि मैं कर रहा हूं, तो मैं खुद अपनी निगाह में गिर गया होता।

जहांतक "इस नाजुक हालत में कांग्रेस की इज्जत या शान" का सवाल है, वह खत्म हो जाती, अगर कांग्रेस का सदर रहते हुए मुकदमे की खास हालत में मैंने इसके अलावा कोई दूसरी बात की होती।

मुकदमे में इज्जत के साथ लड़ने के सभी मुमकिन और कानूनी

तरीकों को कर लेने के बाद मैंने अपने ज़मीर की इजलास में अपनेको पेश किया और इज्जत के साथ बरी होने के बावजूद मैंने अदालत में हर रोज की हाजिरी के लिए अपने ऊपर १०००)रु० का जुर्माना किया है। जो दस दिन मैंने आगरे में गुजारे, उनमें ज्यादातर कांग्रेस का काम ही रहा, और उससे कांग्रेस के तेजी से कम होते हुए खजाने में १०,०००) रु० की बढ़ोतरी हुई। ऐसा होना ही चाहिए था और इसमें फ़िक्र करने की कोई वजह नहीं।

बाबू शिवप्रसाद गुप्त आपका,
बनारस। मोतीलाल नेहरू

७९. मोतीलाल नेहरू की ओर से कृष्णा नेहरू के नाम

[सेंट्रल जेल, नैनी, से ३० जुलाई १९३० को अपनी पुत्री कृष्णा के नाम भेजे गए एक पत्र का अंश।]

सबसे कह देना कि मैं अब बिल्कुल ठीक हूं। ८ या ९ दिन मेरी तबीयत ठीक नहीं थी। बीच-बीच में बुखार आ जाता था और कोई चीज खाने की रुचि नहीं होती थी। लेकिन अब यह सब दूर होगया है और धीरे-धीरे ताकत आ रही है। कुछ दुबला जरूर होगया हूं, लेकिन वह कोई ऐसी बात नहीं है। तुम सब लोगों से अगले शनीचर को मिलने की उम्मीद करता हूं और मेरी तंदुरुस्ती तुम्हें वैसी ही मिलेगी जैसी कि तुमने पिछली बार देखी थी।

आनन्दभवन से या ९ नं० कानपुर रोड से (मैं कह नहीं सकता इनमें से कहां से आता है) आनेवाला खाना अच्छा है और वह यहांपर बने खाने के मुकाबले कहीं ज्यादा मुआफिक बैठता है। खाना यहां कुछ ही दिन और भेजने की जरूरत होगी। उसके बाद मैं अपनी पुरानी आदत डालूंगा, यानी कुकर में अपनी मर्जी की चीजें भरकर पका लिया करूंगा। हमेशा की तरह मैं नये खाने ईजाद करूंगा, जिनमें से कुछ तो मेरी मर्जी के मुताबिक उतरेंगे।

मैं समझता हूं, मुझे कुछ इस तरह की दिलचस्पी की जरूरत है। होता यह है कि मेरे लिए सभी चीजें आ जाती हैं और मुझे खाने, सोने और पढ़ने के सिवा कुछ और करना ही नहीं पड़ता। मेरी देखभाल करने में हरी

जवाहर से सबक सीख लेता तो अच्छा था। सवेरे की चाय से लेकर रात के सोने तक मुझे ज़रूरत की सब चीज़ें अपनी-अपनी जगह पर मिल जाती हैं। ज़रा-ज़रा-सी बात पर पूरी तवज्जो दी जाती है और मुझे कोई चीज मांगनी नहीं पड़ती, जैसाकि आनन्दभवन में अक्सर करना पड़ता था और जिसके लिए काफी चीखना-चिल्लाना पड़ता था। महमूद कभी-कभी मदद कर देते हैं, लेकिन खास बोझ तो जवाहर पर ही पड़ता है। मैं अपनी काहिली और जवाहर का इतना वक्त के लेने के लिए, जिसका दूसरी तरह और अच्छा इस्तेमाल हो सकता था, अपनी मलामत करता हूं। लेकिन वह मेरी सब जरूरतों को पहले सोच लेता है और मेरे लिए कुछ करने को रह ही नहीं जाता। काश बहुत-से ऐसे पिता होते, जिन्हें अपने बेटों पर ऐसा ही फख्र होता!

'पायोनियर' में जितनी खबरें निकलती हैं, उतने से मैं तुम्हारी हलचलों को जान लेता हूं। इस अखबार में बहुत थोड़ी खबरें होती हैं। लेकिन जो कुछ इसमें छप जाता है उससे हम बाकी का कयास कर सकते हैं। तुम सब लोगों ने बहुत शानदार काम किया है और मैं उम्मीद करता हूं कि इसी लगन और जोश से काम जारी रखोगे। जवाहर और मैं दोनों ही तुम सबपर, जिसमें छोटे बच्चे भी शामिल हैं, फख्र करते हैं।

८०. मोतीलाल नेहरू की ओर से

[१९३० की पिछली छमाही में मेरे पिताजी अपनी कड़ी बीमारी की वजह से जेल से रिहा कर दिये गए। इस बीमारी से वह फिर अच्छे नहीं हुए और दो-तीन महीने बाद ही चल बसे। एक तजवीज थी कि वह समुद्र-यात्रा पर जायं, लेकिन उनकी हालत इतनी तेजी से गिरी कि यह यात्रा न हो पाई। अपनी बीमारी के बावजूद उनकी दिलचस्पी राष्ट्रीय आन्दोलन में बराबर बनी रही। मैं इस बीच जेल में था।]

आनंदभवन,
इलाहाबाद
११ नवंबर १९३०

मेरे प्यारे जवाहर,

तुम्हें बिल्कुल ताजा खबर देने के लिए यह खत लिख रहा हूं। बेटी

और शम्मी आज तीसरे पहर मलाका जेल में अचानक गिरफ्तार कर ली गईं, जहां वे कमला, नैन[1], इंदू और तुम्हारी मां के साथ दो-तीन दिन पहले गिरफ्तार हुए सुन्दरलाल, मंजरअली और दूसरे लोगों के मुकदमे को देखने गई थीं। नैन फौरन मुझे खबर देने के लिए लौट आई। मैं उस वक्त विस्तर पर था और बैठा खांस रहा था। मेरे जाने में कुछ नहीं रखा था, लेकिन मैं जाना भी चाहता तो जिस्म से बेकार था। मैंने नैन को मुकदमे की कार्रवाई देखने के लिए वापस भेज दिया। लेकिन उसके पहुंचने से पहले मुकदमा खत्म हो चुका था। बेटी, शम्मी और सभी और पहले से गिरफ्तार लोगों को दफा १८८ (सरकारी अधिकारी द्वारा कानून की रू से जारी हुक्म की उदूली) के मातहत ५० रु० जुरमान की या जुरमाना न देने की हालत में एक महीने की सादा कैद की सजा सुना दी गई। अब वे सभी मलाका-जेल में एक-दूसरे के साथ का मजा ले रहे हैं। कपड़े, खाना वगैरा उनके लिए भेजा जा रहा है। जहांतक मुझे पता चला है, बेटी और शम्मी ने सिर्फ यह किया था कि जब सब सड़क पर बैठकर गाना गा रहे थे तो गाने के बोल पहले वे बोलती थीं।

कमला और नैन अभी बरी हैं—कबतक के लिए, यह कहना नामुमकिन है। अच्छा होता वे जल्दी करते, जिसमें मैं जान सकता कि घर वगैरा के लिए मुझे क्या इंतजाम करना होगा। कल सवेरे फिर सुंदरलाल के मुकदमे की दफा १२४-ए के मातहत सुनवाई होगी। बहुत मुमकिन है, कल और भी ज्यादा गिरफ्तारियां हों। इस तरह इलाहाबाद में आर्मिस्टिस दिन मनाया गया।

वल्लभभाई और महादेव यहां दो दिन रहे, ज्यादातर बिस्तर पर। उनके यहां आने के बाद ही उन्हें मलेरिया ने दबोच लिया। आज ही वे बंबई लौट गये हैं।

मेरी हालत दिन-ब-दिन गिरती जा रही है। अब थूक में कभी-कभी ही खून आने की बात नहीं रह गई। पिछले तीन दिनों से मुंह से बराबर खून के थक्के थूक रहा हूं। इलाहाबाद में जो भी इलाज हो सकता था किया गया, लेकिन कोई कारगर नहीं हुआ। आखिरकार कल सवेरे मैंने बेटी और

[1] विजयालक्ष्मी पंडित

मदन अटल को साथ लेकर कलकत्ता जाने का फैसला किया है और मेजर ओबेराय को फोन किया है कि वह तुम्हें मुझसे १९ ता. के बदले, जिस दिन मुलाकात होनी है, १५ को ही मिल लेने दें। मैंने इस बारे में ज़ाब्ते का खत भी भेज दिया है। उन्होंने इसके लिए राज़ी होने की मेहरबानी कर दी है और हम लोग, यानी जितने भी उस वक्त जेल जाने से रह गये हैं, तुमसे १५ को १० बजे मिलेंगे। मैं १६ या १७ को कलकत्ता चला जाऊंगा। डा. जीवराज मेहता को कलकत्ता में किसी मेडिकल असोसिएशन की बैठक में शरीक होना है और वह मुझसे वहीं मिलेंगे। मेरी समझ में बेटी की जगह और किसीको ले जाना ज़रूरी नहीं है। मदन ने अभी तक जवाब नहीं दिया है, लेकिन वह राज़ी हो जाय तो और किसीको साथ ले जाने की ज़रूरत न होगी। इस बीच कमला गिरफ्तार होगई तो मैं इंदू को साथ ले जाना चाहूंगा, क्योंकि कमला और बेटी दोनों के न रहने पर वह अकेली रह जायगी। मेहरबानी करके मुझे लिखना कि यह इंतजाम तुम्हें ठीक लगता है, क्योंकि समुंदरी सफर के लिए इंदू की तैयारी करनी होगी।

मैंने २ ता. को सिंगापुर के सफर के बारे में ज़रूरी जानकारी के लिए थामस् कुक को कलकत्ता लिखा था। कल तक कोई जवाब नहीं आया और फौरन जवाब देने के लिए उन्हें मैंने तार दिया। आज जवाब आया कि उन्हें मेरा कोई खत नहीं मिला। खत उपाध्याय ने रेलगाड़ी में छोड़ा था। कानून और इंतज़ाम की हिफाज़त करनेवालों ने शायद समझा होगा कि मैं देश छोड़कर भाग रहा हूं या कोई संगीन जुर्म करने जा रहा हूं और खत को उसकी मंजिल पर नहीं पहुंचने दिया। कल फिर कोशिश करूंगा और खुफियावालों के लिए भी उसमें एक नोट जोड़ दूंगा।

१२ नवंबर १९३०

पिछली रात इस खबर से खत लिखने में बड़ी बाधा पड़ी कि कुछ लोग चुपचाप बेटी और शम्मी के जुर्माने अदा करने की जालसाज़ी कर रहे हैं। बाद में बताया गया कि बेटी का जुर्माना अदा कर दिया गया है और वह रिहा होनेवाली है। यह बहुत परेशान करनेवाली खबर थी और मैंने एक बयान फौरन प्रेस में भेजा। वह आज सुबह निकला है और मैं उसकी एक

कतरन भेज रहा हूं। लेकिन इस बीच शरारत तो हो चुकी थी, और वह महामूर्ख जिसका नाम गोपी कुंजरू है, बेटी और शम्मी को लेकर, आधी रात के करीब, जब मैं सोने जा चुका था, कार पर आया। मुझे यह बात आज सवेरे ही मालूम हुई। गोपी ने लड़कियों को बताया कि वह उस आदमी का वकील है, जिसने कि जुर्माना अदा किया है और वह उसका नाम नहीं खोल सकता। उन लोगों ने मेरा बयान आज सवेरे पढ़ा होगा और अपने बारे में, शायद मेरे बारे में भी, अपनी राय बदल दी होगी। जब इस तरह की और गिरफ्तारियां होंगी, उस वक्त मैं उम्मीद करता हूं कि यह बयान फायदेमंद होगा और लोग फिर ऐसी दरियादिली दिखाने से पहले दो बार सोच लेंगे।

अब बेटी वापस आगई है, तो पहले का तय इंतजाम चलेगा और वह मेरे साथ कलकत्ता और सिंगापुर जायगी। इंदू अब अपनी पढ़ाई में लग रही है और मैं उसमें कोई अड़चन नहीं डालना चाहूंगा, जबतक वह खुद मेरे साथ चलने को ख्वाहिशमंद न हो।

हिन्दू पंचांग के मुताबिक कल तुम्हारी सालगिरह है और ग्रेगरी के पंचांग से परसों। मुझे यह सुझाव दिया गया कि मैं तुमसे कल या परसों मिलूं। मैंने इस राय को यों पसंद नहीं किया कि कलकत्ता जाने के करीब ही मैं तुमसे मिलना चाहता हूं। मैंने १६ को मिलना पसंद किया होता, लेकिन वह सारे हिंदुस्तान के लिए 'जवाहर-दिन' है और लड़कियां काम में लगी रहेंगी। मैंने १७ को पंजाब-मेल से जाना तय किया है।

तुमने कलकत्ता से जो किताबें चाही थीं, उनके लिए आर्डर बहुत पहले से गया हुआ है, लेकिन वे अभी नहीं आईं। बीच में चिट्ठी शायद कहीं रोक ली गई। मेरे जाने से पहले किताबें न आईं तो मैं उन्हें भिजवा दूंगा। बाकी मिलने पर। रंजीत को प्यार।

सप्रेम तुम्हारा,
पिता

अख़बारी बयान

कुमारी कृष्णा नेहरू—अनजाने आदमी ने जुरमाना दिया।
पंडित मोतीलाल नेहरू का बयान

पंडित मोतीलाल नेहरू अपने बयान में कहते हैं :

"मैंने अभी सुना है कि किसी अनजाने आदमी ने ५० रुपये का जुर्माना भर दिया, जोकि मेरी लड़की कृष्णा पर आज तीसरे पहर अचानक गिरफ्तारी के बाद मुकदमे में हुआ था। अगर मुझे मिली खबर ठीक है तो इस अनजाने आदमी ने मेरी, मेरी लड़की और मुल्क की इतनी ज़बरदस्त कुसेवा की है, जितनी कि सोची भी नहीं जा सकती। उसका नाम बहुत वक्त तक छिपा नहीं रह सकता। अगर मेरे मुल्क के लोगों को मेरा और जो कुछ खिदमत मैं कर सका हूं, उसका कुछ भी लिहाज है तो मैं उम्मीद करता हूं कि वह इस आदमी को मेरा और मुल्क का सबसे बड़ा दुश्मन समझेंगे और उसके साथ वैसा ही सलूक करेंगे।"

८१. मोतीलाल नेहरू की ओर से सुभाषचन्द्र बोस के नाम

इलाहाबाद,
१४ नवम्बर १९३०

प्रिय सुभाष,

डाक और तार दोनों ही का बिल्कुल भरोसा न होने की वजह से एक खास आदमी के हाथ यह खत तुम्हें यह खबर करने के लिए लिख रहा हूं कि मैंने सोमवार १७ तारीख को पंजाब मेल से कलकत्ता आने का पक्के तौर पर इरादा कर लिया है। मेरे साथ मेरी छोटी लड़की कृष्णा होगी, जो मेरी देखभाल करेगी, और एक डाक्टर दोस्त रहेंगे, जो, अगर सर नीलरतन सरकार ने सिंगापुर तक का समुद्री-सफर करने की सलाह दी, जिसका सुझाव मुझे दिया गया है तो, उनकी हिदायत पूरी करते रहेंगे।

मुझे मुंह से काफी खून आ रहा है और पब्लिक स्वागत का बोझ उठाना मुमकिन नहीं हो सकता। मेहरबानी करके ध्यान रखना कि ऐसा कोई स्वागत न हो और सिर्फ इने-गिने—छः से ज्यादा नहीं—निजी दोस्त ही स्टेशन पर मुझसे मिलें।

इसी वजह से मैं कार्यकर्त्ताओं से लंबी चर्चा या मशविरा न कर सकूंगा, लेकिन जरूरी होने पर उनमें से एक-दो खास लोगों से बातचीत करने में मुझे खुशी होगी।

मुझे शायद कलकत्ता एक हफ्ते ठहरना पड़े, जिसमें मैं सर नीलरतन सरकार के या जिन किन्हीं दूसरे डाक्टरों को वह बुलाना चाहें उनकी तरफ से तय किये इलाज की मियाद पूरी कर सकूं। कुदरतन मैं इस पूरे वक्त किसी शान्त जगह पर रहना चाहूंगा। क्या मेहरबानी करके मेरी टोली के ठहरने का तुम मुनासिब इंतजाम कर दोगे ? मैंने खुद कोई इंतजाम नहीं किया हैं।

श्री सुभाषचंद्र बोस,
१ वुडबर्न पार्क, कलकत्ता।

तुम्हारा,
मोतीलाल नहरू

८२. मोतीलाल नेहरू की ओर से

इलाहाबाद
२० जनवरी १९३१

मेरे प्यारे जवाहर,

कमला का यह खत, जो साथ में भेज रहा हूं, कल शाम आया था और आज सवेरे इसे तुम्हारे पास चला जाना चाहिए था। लेकिन हमारा खत तैयार नहीं था। उसके अपने खत से पता चलता है, और दूसरे जरियों से भी मुझे मालूम हुआ है कि उसकी बहुत अच्छी तरह देखभाल हो रही है। राज काफी तकलीफ उठा रहा है। लखनऊ में हमारी पहली मुलाकात २५ को होगी। पता नहीं क्यों, इतनी देर में हो रही हैं। मुझे डर है कि उससे मिलने की खुशी से मुझे अपनेको महरूम रखना पड़ेगा, क्योंकि मैं उम्मीद नहीं करता कि २४ तक मैं सफर करने लायक हो सकूंगा। तुम्हारी मां, बेटी और इंदू जायगी।

कल तक कमोबेश मैं ठीक चल रहा था, जबकि कंपकंपी हुई और सारी रात एक झपकी भी नहीं आई। टेंपरेचर भी नार्मल से कुछ ऊपर ही रहा और खून भी बे-हिसाब गिरा। इसका नतीजा यह हुआ कि आज बहुत थकान लग रही है। लेकिन मैं उम्मीद करता हूं कि रात बेहतर बीतेगी। यह एक तसल्ली की बात है कि मेरा वजन ठीक चल रहा है और आज ११९ पौंड है।

कविराज बाबू दो दिन के लिए बनारस चले गये हैं। कल शाम को वह लौटेंगे जबकि आगे के इलाज का सिलसिला पक्का होगा। मैं ठीक नहीं कह सकता कि किसका इलाज होगा। बहुत-कुछ कविराज बाबू की जांच पर मुनहसिर होगा।

उन्होंने सलाह दी है कि दिन का ज्यादा हिस्सा नदी पर बिताऊं, लेकिन रात में घर पर सोया करूं। मालवीयजी बनारस से मेरे लिए एक बजरा भेजने की कोशिश में हैं।

इंदू बहुत खुश है। उसने लकड़ी के पुराने घर को, जिसमें हिरन रक्खा जाता था, समर हाउस के ढंग पर बना लिया है और बेटी और वह दोपहर में थोड़ा वक्त साथ-साथ वहीं बिताती हैं।

तुम्हारे बाग से विलायती मटर के बढ़िया फूल मिले हैं। मैं उन्हें जतन से रख रहा हूं। अभी तक मुरझाने के कोई आसार उनमें नही दिखाई देते।

तुम दोनों को प्यार।

तुम्हारा,
पिता

८३. रॉबर्ट ओ. मेनेल की ओर से

वोडन लॉं, केनले, सरे
९ फरवरी १९३१

प्रिय मित्र,

इस सारे सप्ताह आपका इतना ध्यान आता रहा है कि अब पत्र लिखे बिना रहा नहीं जाता। आप मुझे जानते नहीं, लेकिन अदालत के सामने आपने जो बयान दिया था, वह मैंने पढ़ा है। उससे अनायास ही मैं आपकी तरफ खिच गया हूं और मेरे मन में आपके लिए गहरे आदर और स्नेह की भावना उत्पन्न होगई है।

आपकी गहरी क्षति के प्रति मैं अपनी हार्दिक सहानुभूति व्यक्त करना चाहता हूं। मुझे इस बात की बड़ी आशा थी कि आपके पिता यहां के लोगों के मन में सच्चा परिवर्तन और भारत को सचमुच स्वतंत्र देखने के लिए जीवित रहेंगे। इसमें कोई संदेह नहीं कि यहां की जनता के मत में बड़ा परिवर्तन हुआ है, लेकिन लोग अब भी ताकत को अपने हाथों से जाने देने के लिए तैयार नहीं हैं।

अगले कुछ दिनों, हफ्तों या महीनों में क्या होनेवाला है यह जान सकना तो किसीके लिए सम्भव नहीं है, लेकिन मैं विश्वास दिला सकता हूं कि यहां ऐसे लोगों की संख्या, जो भारत के निवासियों के प्रति विश्वास की नई भावना और स्नेह बढ़ाने के लिए अपना सारा प्रभाव और नैतिक बल लगा रहे हैं, आपके अनुमान से कहीं अधिक है।

कान्फ्रेंस में जो सिद्धांत स्वीकार किये गए हैं उनसे निस्संदेह इस बात का संकेत मिलता है कि हम लोग सचमुच आगे बढ़े हैं। अगर सत्ता हिन्दुस्तानियों के हाथों में दे दी गई तो यह एक उल्लेखनीय बात होगी और तब आपके लिए यह ध्यान रखना आसान हो जायगा कि जो नई सरकार बने वह पहले की ही तरह पूंजीवादी नौकरशाही न होकर जनता की इच्छा पर आधारित सरकार हो।

आपके मौन साहस और स्वयंसेवकों के निष्ठापूर्ण आत्म-बलिदान को देखकर मैं अभिमान और हर्ष से कितना रोमांचित हो उठता हूं, यह मैं आपको कैसे बताऊं? युद्ध-जैसे घृणित कार्य के साथ सरोकार रखने से इन्कार कर देने के कारण लड़ाई के दिनों में मैं स्वयं पांच बार कोर्ट मार्शल किया गया था और सत्ताईस महीने कैद में रहा था। इसलिए मैं सोचता हूं कि मैं आपकी भावनाओं को समझ सकता हूं। मैं आपको बहुत-कुछ लिखना चाहता हूं, लेकिन जानता हूं कि उन्हें पढ़ने के लिए आपके पास समय नहीं होगा। मुझे पूरी आशा है कि आपकी सरकार विदेशी कपड़े के आयात और नशीली चीजों तथा दवाइयों की बिक्री पर नियंत्रण रखने के मामले को काफी महत्व देगी, क्योंकि इसमें उस जनता का हित है, जिसका जीवन ये चीजें बरबाद कर देती हैं।

मुझे उम्मीद है कि दूसरे लोग भी आपके पास 'टाइम्स' की कतरनें भेजेंगे। लेकिन इस खयाल से कि कभी वे न भेजें, मैं ये कतरनें इस पत्र के साथ भेज रहा हूं।

अपने शोक में मेरी प्रेमपूर्ण हार्दिक सहानुभूति तथा अपने शानदार निश्चय के लिए मेरी गहरी कृतज्ञता और सराहना स्वीकार कीजिये।

आपका,

रॉबर्ट ओ. मेनेल

पंडित जवाहरलाल नेहरू

८४. रोजर बाल्डविन की ओर से

[जिस समय यह पत्र लिखा गया, रोजर बाल्डविन अमरीकी नागरिक स्वतन्त्रता संघ के संचालक थे और तबसे चले आ रहे हैं। मैं उनसे सबसे पहले फरवरी, १९२७ में ब्रुसेल्स की साम्राज्यवाद-विरोधी कांग्रेस में मिला था।]

१३ फरवरी १९३१

प्रिय जवाहरलाल नेहरू,

उस दिन आपको पत्र भेजने के बाद मैंने आपके पिताजी की मृत्यु का दुखद समाचार पढ़ा, जो हमारे यहां अखबारों में व्यापक रूप से प्रकाशित हुआ था। आपसे और आपके परिवार से मेरी हार्दिक सहानुभूति है। मैं आपके पिताजी के व्यक्तिगत और सार्वजनिक दोनों ही प्रकार के महान गुणों का असीम प्रशंसक हूं। उनसे मिलकर मुझे बड़ी प्रेरणा मिली थी और उसके बाद से मुझे यह पढ़कर बड़ी खुशी होती रही है कि अपने ध्येय के प्रति उनमें कितनी दृढ़ता और अटूट निष्ठा थी। आप बहुत-सी बातों में भाग्यशाली हैं और ऐसे पिता का पुत्र होना भी आपके लिए कम सौभाग्य की बात नहीं है।

आपका,
रोजर बाल्डविन

८५. रोजर बाल्डविन की ओर से

१००, फ़िफ्थ एवेन्यू,
न्यूयार्क सिटी
२९ अप्रैल १९३१

प्रिय जवाहरलाल,

आपको पत्र लिखने में मुझे बहुत दिनों तक झिझक होती रही, क्योंकि यहां के अखबारों में प्रकाशित विस्तृत और निष्पक्ष विवरणों के बावजूद भारत की स्थिति मेरी ठीक-ठीक समझ में नहीं आई है। मैं आपके और अपने मित्रों से बातचीत करता रहा हूं और अमरीकी सम्पादकों की टिप्पणियां भी पढ़ता रहा हूं। इन बातों से मैं इस नतीजे पर पहुंचा हूं कि आपका स्वतंत्रता का सारा-का-सारा आन्दोलन तेजी के साथ एक भयानक पतन

की ओर बढ़ रहा है, जैसाकि आपने स्वयं यहां प्रकाशित एक भेंट में कहा है। गांधीजी का एक पूरे देश की जनता का व्यक्तिगत रूप से प्रतिनिधित्व करना, साथ-ही-साथ उन्हें अपनी समझ से काम करने का व्यापक अधिकार मिलना और समझौते के लिए उनका हर समय तैयार रहना—इन सब बातों को देखकर इतनी दूर से ऐसा लगता है जैसे पेरिस में कोई दूसरा विलसन हो। गांधी चाहे कितने भी दृढ़ क्यों न हों, खतरा बहुत है और जिस बात के लिए आप सब लोगों ने इतना संघर्ष किया है उसके लिए संकट उपस्थित होने की संभावना है। इसके अलावा अंग्रेजों में वह क्षमता है जिसके बूते पर वे दुष्टतापूर्ण उद्देश्यों को भी नैतिक भाषा के आवरण में छिपा देते हैं और अच्छे-से-अच्छे विचारोंवाले तथा अधिक-से-अधिक साहसी लोगों को भी फुसला लेते हैं, दबा लेते हैं और मूर्ख बना देते हैं। बल के सिवा किसी और चीज़ के डर से अंग्रेज अपना साम्राज्य छोड़ देंगे, इसकी कल्पना मैं नहीं करता। मैं समझता हूं कि आपकी अहिंसक क्रांति की शक्ति के डर से भी वे ऐसा नहीं करेंगे। केवल एक ही चीज़ है, जो आपको आपकी वांछित वस्तु दिला सकती है और वह है सम्पूर्ण लक्ष्य की प्राप्ति से कम किसी भी वस्तु को स्वीकार करने से इंकार कर देना और उसे प्राप्त करने के लिए लगातार प्रयत्न करते रहना।

यह सब मैं इसलिए कह रहा हूं कि वामपक्षियों में व्यापक रूप से यही भावना फैली हुई है। वे साम्यवादियों की इस आलोचना को स्वीकार नहीं करते कि पूरा-का-पूरा आन्दोलन इस तथ्य से प्रेरित है कि भारतीय पूंजीवादी अपनी सम्पत्ति की रक्षा करने के लिए अपनेको अंग्रेजों के हाथों बेच देना चाहते हैं। फिर भी आप मुझसे इस बात में सहमत होंगे कि अगर किसानों और मजदूरों का शोषण ज्यों-का-त्यों चलता रहे तो फिर स्वतन्त्रता के कोई माने नहीं। स्वामियों को बदल देने से अधिक-से-अधिक यह हो सकता है कि सामाजिक क्रान्ति आसान बन जाय। बस। और हो सकता है कि राजनैतिक क्रान्ति के साथ-साथ कृषि और उद्योग की उन्नति का भी एक दूर तक असर करनेवाला कार्यक्रम चल सके। मैं जानता हूं कि इस बारे में आपका क्या मत है।

मैं जिस मत को व्यक्त करता हूं उसे अब अमरीका में बहुत कम सम-

र्थन मिलता है। सभी अखबार, यहांतक कि स्वतंत्रता का समर्थन करने-वाले उदार पत्र भी, अब सामूहिक रूप से मिस्टर गांधी के पक्ष में होगये हैं। न तो उन्होंने उस संधि की कोई आलोचना की है, जो अविश्वसनीय है, न भारतवर्ष के भाग्य की डोर को अकेले एक व्यक्ति के हाथों में सौंप देने की खतरनाक योजना को ही उन्होंने बुरा बताया है। लेकिन अगर ठीक से प्रयत्न किया जाय तो हम इससे विपरीत मत के लिए भी कुछ समर्थन प्राप्त कर सकते हैं। हम रैज़मी को मिस्टर गांधी से मिलने के लिए लंदन भेजना चाहते हैं और मजदूर-दल के अपने दोस्तों के पास दर्जनों चिट्ठियां और तार भेजकर यह दबाव डालना चाहते हैं कि वे भारतवर्ष की पूरी मांगें स्वीकार कर लें। अगर गांधी दृढ़ रहे और घर लौटकर आपने उनपर दबाव डाला तो शायद हम लोग यहां से भी उनपर कुछ जोरदार प्रभाव डाल सकें। हमें तार से सूचित कीजिये कि हम आपसे इस सहायता की आशा करें या न करें और हमारा यह सब करना आपकी और वामपक्ष के दूसरे लोगों की इच्छा के अनुकूल होगा या नहीं।

हिंदुस्तान की राष्ट्रीय महासभा का समर्थन करने के कारण मैं अभी-अभी साम्राज्यवाद-विरोधी लीग से निकाल बाहर किया गया हूं। खैर, उसका तो कोई महत्व नहीं है, लेकिन यह बहुत जरूरी है कि कांग्रेस सम-झौता न करके अपनी साम्राज्य-विरोधी नीति बनाये रखे, जिससे कि पूर्व के सारे साम्राज्यवादी देशों में इसी प्रकार की क्रान्ति को प्रोत्साहन मिले।

शुभकामनाओं सहित,

आपका,
रोजर बाल्डविन

८६. ई. स्टॉग्डन की ओर से

दी विकारेज, हरो,
३१ मई १९३१

प्रिय नेहरू,

क्या आप वही प्रिय नेहरू हैं, जो सन् १९०६ में हैरो में हेडमास्टर के घर रहते थे? अगर वही हैं तो मैं आपके पिता की मृत्यु पर आपको सहानु-भूति का पत्र लिखना चाहूंगा। पिता की मृत्यु एक भयानक हानि होती है।

मेरे पिता भी हैरो में मास्टर थे और वहुत ही होशियार थे। उनकी मृत्यु ८० साल की उम्र में हुई थी, और मैं कभी भी उस शोक को भुला नहीं पाया हूं। मुझे तो सिर्फ एक बात का संतोष है कि मैं उन्हें इतनी अच्छी तरह से समझता और प्यार करता था कि मुझे लगता है कि एक प्रकार से वह अब भी मेरे साथ हैं।

अगर आप कभी इंग्लैंड आयें तो मुझसे मिलने और पुराने दोस्तों से बातचीत करने के लिए यहां आना न भूलें। हैरो में मैं हमेशा कितना खुश रहता था। मैंने अब स्कूल छोड़ दिया है और मैं केवल एक पादरी की हैसियत से शहर के लोगों को नेक बनाये रखने की चेष्टा कर रहा हूं।

शुभकामनाओं के साथ,

आपका,

ई. स्टॉग्डन

८७. महात्मा गांधी की ओर से

बोरसद

२८ जून १९३१

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा पत्र और पोस्टकार्ड मिले। खुशी है कि रायबरेली में धारा १४४ का नोटिस वापस ले लिया गया। बेशक इसका कारण मुख्य सचिव के नाम तुम्हारा स्पष्ट पत्र था। जबतक तुम कार्य-समिति के लिए बम्बई पहुंचोगे तबतक समिति को निश्चित मार्ग-दर्शन के लिए तैयार रहना चाहिए।

मुझे बिल्कुल यकीन होगया है कि हमारा मामला सम्पूर्ण बनाने के लिए जरूरी है कि तुम गवर्नर को मिलने के लिए कहो। यह मुलाकात मांगते हुए तुम उनसे कहो कि तुम इस कोशिश में कोई कसर बाकी नहीं रखना चाहते कि प्रान्त के सर्वोच्च अधिकारी के सामने स्पष्ट स्थिति रख दी जाय। शायद गवर्नर से तुम कुछ भी लेकर नहीं आओगे, लेकिन उनसे मिलने और समझौते का पालन कराने का प्रयत्न करके तुम अवश्य ही हमारी स्थिति को पहले से मजबूत बनाओगे। उनसे मिलने का प्रस्ताव करके और वे प्रस्ताव मंजूर कर लें तो उनसे मिलकर हम कुछ खोयेंगे नहीं।

उन्नाव जिले की घटनाओं के बारे में मैंने 'यंग इंडिया' में जो लिखा है

वह तुमने देखा होगा। तुमने और दूसरे लोगों ने जो सामग्री भेजी है उसके आधार पर मैं फिर लिखनेवाला हूं।

यह दुर्भाग्य की बात हुई कि कार्य-समिति को स्थगित करना पड़ा। वहां के मौजूदा हालात में वल्लभभाई का इलाहाबाद जाने के लिए घोर विरोध था। मेरा भी यही खयाल है कि कानपुर और उत्तर प्रदेश की अन्य उत्तेजना को देखते हुए फिलहाल इलाहाबाद को छोड़ देना ही बेहतर था।

पंडित जवाहरलाल नेहरू, बापू
आनंदभवन,
इलाहाबाद

[इस पत्र में जिस 'समझौते' का जिक्र है, वह उत्तर प्रदेश किसान स्थिति से संबंध रखता है। मेरा खयाल है, गांधीजी ने खास तौर पर उस समझौते का जिक्र किया है जो उनके गोलमेज-सम्मेलन में भाग लेने के लिए इंग्लैंड जाने से पहले लार्ड विलिंगडन के साथ हुआ था।]

८८. महात्मा गांधी की ओर से

बोरसद
१ जुलाई १९३१

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा २७ जून का पत्र बारडोली होकर भेजा हुआ मिला। शायद तुम्हें मालूम नहीं था कि बम्बई से मैं बोरसद लौट आया था, क्योंकि वल्लभ-भाई के और मेरेलिए हमारा काम बांट लेना जरूरी होगया है। सतत मौजूद और जागरूक रहकर खतरा टाला जा रहा है। मगर बोरसद में किसी भी दिन विस्फोट हो सकता है। मुझे दक्षिण अफ्रीका में समझौतों का पालन कराने का कठिन अनुभव हो चुका है। वहां तो यह भी हुआ कि अपनी तरफ से सौ फीसदी अमल कराने में बेचारा सिर फोड़ दिया गया और फिर सरकार से काम-चलाऊ अमल कराने में मुझे अपनेको गिरफ्तार करा लेना पड़ा। लेकिन मेरा खयाल था कि समझौतों का पालन कराने के बारे में सबकुछ भूल गया हूं। किन्तु अब मैं पुरानी स्मृतियां फिर से ताजा कर रहा हूं और बहुत से वे ही अनुभव फिर हो रहे हैं। परन्तु मुझे बड़ा सन्तोष यह

है कि युद्ध हो या समझौता, हम वफादार सेवक बने रहें तो राष्ट्र अवश्य आगे बढ़ेगा।

मुख्य सचिव के नाम तुम्हारे सारे पत्र मुझे अच्छे लगे। मुझे जरूर आशा है कि गवर्नर तुमसे मिलना मंजूर करेंगे।

तुम्हारे विरुद्ध यहां एक शिकायत है। टाइप किया हुआ काग़ज़ रख लेना और उसके बारे में लिखो तो उसे लौटा देना या अपने साथ लेते आना और जब हम मिलें तब इसके बारे में सब बातें मुझे बता देना।

बापू

८९. सरोजिनी नायडू की ओर से

दि गोल्डन थ्रेशोल्ड,
हैदराबाद (दक्षिण)
७ सितम्बर १९३१

मेरे प्यारे जवाहर,

मेरी अंतिम सूची साथ है। मैं स्वीकार करती हूं कि श्री मेनन की सूची को, जोकि बहुत ही अपर्याप्त है, देखकर मुझे अचरज हुआ। पर मैंने सोचा कि शायद लोग या तो पीछे हट गये, या उन्होंने चंदा नहीं दिया होगा, इसीलिए उन्हें मत देने का अधिकार नहीं रहा। यह सूची अच्छी है। इसमें चार नाम और जोड़ सकती तो अच्छा होता, पर वह संभव नहीं।

तुम्हारी भाषावाली पुस्तिका तो चमत्कारी है। बेहद असंतुष्ट लोगों में भी उसने संतोष की जो चमक पैदा की वह देखने की चीज थी। बूढ़े मौलवी अब्दुल हक, जिनकी राय की उर्दू के साहित्यिक क्षेत्रों में बड़ी कीमत है और जिन्हें मैंने एक प्रति भेजी थी, उसके बाद राजेनबाबू से मिले थे और उनके पास से संतोष से दमकता हुआ चेहरा लेकर लौटे थे। यह उस दूसरे समझौते की दिशा में अच्छा और बहुत ही जरूरी कदम है, जिसका वक्त आगया है और जो जल्दी ही पूरा होगा। मुझे एक दर्जन प्रतियां और भेज दो (वी. पी. द्वारा, अगर तुम्हारा दफ्तर आग्रह करे और पैसा कमाने पर ही तुला हो)। मैं कुछ प्रतियां पंजाब तथा अन्य स्थानों में उन लोगों के पास भेजना चाहती हूं जिनसे इस विषय में मेरी बातचीत हुई है।

मैं बहुत तकलीफ में हूं, इसलिए अपने सोफे पर लौट जाना चाहती हूं।

मेरा पैर किसी रहस्यपूर्ण दर्द से करीब-करीब बेकार-सा होगया है, जिसका कोई इलाज नहीं दिखाई पड़ता ।

बेबे भी बहुत ठीक नहीं है, पर यह मौसम के कारण थोड़े दिनों के लिए ही है। सीलन और बेहद परिश्रम का उसपर असर पड़ा है। इंदू को मैं लिख रही हूं।

सप्रेम,
सरोजिनी

फिर से—

मेरे पास सी. एल. यू. के लिए थोड़ा-सा रुपया और है।

[सी. एल. यू. से संकेत सिविल लिबर्टीज यूनियन—नागरिक स्वाधीनता संघ—की ओर है, जो मेरे सुझाव पर शुरू की गई थी और जिसकी सरोजिनी नायडू अध्यक्षा थीं।]

९०. रोजर बाल्डविन की ओर से

२४ सितम्बर १९३१

प्रिय जवाहरलाल,

आपने मेरे पास जेनेवा में तार भेजने की जो कृपा की थी उसके लिए, पता नहीं, मैंने आपको धन्यवाद भेजा या नहीं। आपके सुझाव पर मैंने पेरिस जाकर ट्रेन पकड़ी और वहां से मैं बोलोन पहुंचा, क्योंकि मैं अब भी अंग्रेजों की 'ब्लेक लिस्ट' पर हूं और गांधी से मिलने के लिए इंग्लैंड नहीं जा सकता था। सौभाग्य से प्लेटफार्म पर मिसेज नायडू ने मुझे पहचान लिया और वह मुझे अपने डिब्बे में ले गईं, नहीं तो मैं ऐसी गाड़ी में कैसे ठहर सकता था, जो कि खास तौर से जहाजी यात्रियों के लिए सुरक्षित की गई थी।

मैंने सब लोगों से कहा कि अमरीका में आंदोलन लगातार चलता रहना चाहिए, खास तौर से अब जबकि ब्रिटेन पर वाल-स्ट्रीट के बैंकरों का प्रभुत्व होगया है और मैकडोनल्ड 'टोरी' बन गये हैं। मैंने यह बात तय करा ली है कि अगर कान्फ्रेंस असफल रही तो मिसेज नायडू भेजी जायंगी और मुझे उम्मीद है कि वह जरूर असफल रहेंगी बशर्ते कि गांधी ने मेरे अनुमान से अधिक समझौते की भावना न दिखलाई। मैं स्पष्ट कह देना चाहता हूं कि मुझे वहां का वातावरण बिल्कुल पसन्द नहीं आया। न तो लोगों के विचार स्पष्ट हैं, न उनमें एकता है और न उनमें संकल्प की पर्याप्त दृढ़ता है।

सब-के-सब गांधी में इतने केन्द्रित हैं कि यह बात खतरे से खाली नहीं मानी जा सकती। मैं गांधी के सारे निर्देशों के बारे में जानता हूं और उनकी सहन-शक्ति तथा सूझ-बूझ की प्रशंसा भी करता हूं।

लेकिन !

मुझे समझौते की कोई चिन्ता नहीं है, लेकिन मैं तो अमरीका में वही काम करूंगा जो मुझे स्पष्ट रूप से समझ में आ रहा है और इस विश्वास पर करूंगा कि वहां के लोगों को स्वतंत्रता केवल सार रूप में स्वीकार्य होगी। इसका मतलब यह है कि सेना, अर्थव्यवस्था और विदेशी सम्बन्ध को वे अपने अधिकार में रखना चाहेंगे। गांधी ने मुझे यह बात स्पष्ट रूप से बता दी थी कि वह इसीको आधार मानकर काम करेंगे और उन्होंने हमें इसी आधार पर आगे बढ़ने के लिए अपनी सहमति भी दी थी। चार्ली एंड्रूज ने भी सहमति दी थी और मुझे बड़ा आश्चर्य है कि ब्रिटेन की स्थिति में अन्तर होने से अमरीका के महाजनों पर जो असर पड़ेगा उसे और साथ-ही-साथ भारत की राजनैतिक क्रान्ति में जो आर्थिक समस्याएं निहित हैं, उन्हें भी जितनी अच्छी तरह से वह समझते हैं उतना पार्टी का कोई भी दूसरा आदमी नहीं समझता।

मुझे आशा है कि हमारे वर्तमान आंदोलन के बुर्जुआ रूप के बारे में कम्युनिस्टों का जो खयाल है वह बिल्कुल गलत है। फिर भी मैं जानता हूं कि इसका असली रूप तबतक स्पष्ट नहीं होगा, जबतक समय यह सिद्ध न कर दे कि जमींदार और उद्योगपति इसपर कितना नियंत्रण रखते हैं। निश्चय ही हम लोग यहां अमरीका में भारत में सामाजिक क्रान्ति की चर्चा के बारे में खुल्लमखुल्ला बातें नहीं कर सकते। हम तो '१७७६ की स्पिरिट' अर्थात् राजनैतिक स्वतंत्रता की भावना से आगे नहीं बढ़े हैं। लेकिन मैं आपको अपने मन की बात बता दूं, सामाजिक क्रान्ति में ही सब बातों का मर्म है। धान भी ऐसा ही सोचते हैं।

तार भेजने के लिए आपको एक बार फिर धन्यवाद भेजता हूं और साथ ही यह विश्वास दिलाता हूं कि एक दिन के सम्मेलन में जो कुछ भी किया जा सकता है वह किया गया और जो कुछ भी अमरीका में किया जा सकेगा वह किया जायगा।

आपको और आपके परिवार को हार्दिक अभिनन्दन।

रोजर बाल्डविन

९१. मेरी खानसाहब की ओर से

[मेरी खानसाहब खान अब्दुल गफ़्फ़ार खा के भाई और पश्चिमोत्तर सीमा प्रान्त की जनता के मशहूर नेता डाक्टर खानसाहब की धर्मपत्नी थीं। श्रीमती खानसाहब एक अंग्रेज महिला थीं।]

३, मिच्नी रोड, पेशावर
१ अक्तूबर १९३१

प्रिय जवाहरलाल,

मैं सचमुच अपना फर्ज समझती हूं कि आपको लिखूं। खान तो खत लिखने से बेहद घबराते हैं। उनका बहुत-से नेक लोगों से सिर्फ खत न लिखने की वजह से ताल्लुक छूट गया। वह कभी बैठकर खत शुरू कर ही नहीं सकते। सच तो यह है कि वह कभी घर पर ही नहीं रहते। वह बड़े तड़के घर से निकल जाते हैं और बहुत रात गये लौटते हैं, थककर चूर और किसी भी काम के लिए बेकार, यहांतक कि गपशप भी नहीं कर सकते। जहांतक आपको खत लिखने का ताल्लुक है, वह हर वक्त कहते हैं कि लिखेंगे, मगर बस कहकर रह जाते हैं। उनके नाम आपके लिखे बहुत-से खत उनके बैग में पड़े हैं। एक १९२१ का खत है, जो आपने चलती रेलगाड़ी में बैठकर लिखा है। जब आपका फोटो मिला तो उन्होंने एकदम मुझसे कहना शुरू किया कि वह ज्वाब में आपको क्या-क्या लिखेंगे। इसपर मैंने कहा—आओ और इसी वक्त शुरू कर दो। और वह कहने लगे—नहीं, अभी नहीं, मुझे बहुत जरूरी काम करने हैं, और मैं मन को जमा नहीं सकता। मैं जल्दी ही लौटूंगा और आज ही याद करके चिट्ठी लिखूंगा। लेकिन वह अपने इरादे पर अमल न कर सके। जॉन ने भी एक साल पहले लिखा था कि क्या ये सचमुच मेरे वालिद हैं? ये तो मुझे कभी खत ही नहीं लिखते! मैं बहुत जोर डालूंगी कि वह आज सुबह आये हुए आपके खतों का जवाब दें। उन्हें मैंने खोलकर उनके पास भेज दिया है। मैं उम्मीद करती हूं कि किसी दिन हम लोग आपके यहां आयेंगे या फिर आप हमारे यहां आयेंगे।

आपकी बीवी को मेरा प्यार।

आपकी,
मेरी खानसाहब

९२. महादेव देसाई की ओर से

[यह पत्र तब लिखा गया था जब गांधीजी गोलमेज-परिषद् में लंदन गये थे ।]

८८ नाइट्स ब्रिज,
लंदन, एस. डब्ल्यू. १,
२३ अक्तूबर १९३१

प्रिय जवाहरभाई,

हवाई डाक का दिन तो आ पहुंचा, मगर मैं सदा की भांति ही परेशानी की हालत में हूं । मताधिकार-समिति में जब बापू ने ज़ोरदार भाषण दिया तो छोटा-सा तूफ़ान आगया । उन्होंने कहा, "बार-बार सम्राट् के अधीन और ऐसी ही दूसरी बातें सुन-सुनकर मैं तंग आगया हूं । कांग्रेस ने इस तरह सोचना बहुत पहले ही छोड़ दिया है और इस मनोवृत्ति को जितनी जल्दी तिलांजलि दे दी जाय उतना ही अच्छा है ।" लार्ड सैंकी ने बापू को इस स्पष्टवादिता और निर्भयता के लिए बधाई दी और मेरे खयाल से सच्चे दिल से दी । लेकिन मेरा अनुमान है कि २७ तारीख के बाद तक कोई आशा नहीं रखा जा सकती । मुसलमानों के साथ बातचीत वन्द है और जबतक वे नहीं चाहेंगे, बापू चलकर उनसे बात नहीं करेंगे । दत्त (डा. एस. के. दत्त) ने हमें एक किस्सा सुनाया, जिससे तुम्हारा भी ज़रूर मनोरंजन होगा । वह उस दिन एक अंग्रेज मित्र, कैम्बेल रोड्स के यहां जिन्ना के साथ खाना खा रहे थे । जिन्ना ने शैम्पेन की तीसरी बोतल चढ़ा ली थी, तब अल्पसंख्यकों के प्रश्न पर चर्चा हो रही थी । श्री रोड्स ने कहा, "आप लोग कोई परस्पर स्वीकृत हल देकर सरकार को झुकने के लिए विवश क्यों नहीं कर देते ?" जिन्ना ने शैम्पेन के सौम्य (!) प्रभाव में उत्तर दिया, "आप यहीं तो भूलकर रहे हैं। जबतक हमें यह पता न चले कि हमें क्या मिलनेवाला है तबतक कोई भी आपसी समझौता असंभव है ।" यह तो वही चीज हुई जो बापू कहते रहे हैं और जिससे मुसलमान इन्कार करते रहे हैं . (हां, यह उदाहरण ऐसा है, जिससे शराबबन्दी के विरोधियों को प्रबल युक्ति मिल जायगी ।)

लॉर्ड इरविन बापू से मिले थे (या बापू उनसे मिले थे) । उनका आग्रह

था कि जबतक वह अनुमति न दें, बापू को जाने का विचार नहीं करना चाहिए। उनका कहना है कि स्थिति निराशाजनक नहीं है और कम-से-कम चुनावों के खत्म होते ही निराशाजनक नहीं रहेगी। हर हालत में वह तो पूरी कोशिश करके दूसरों के गले यह बात उतारेंगे ही कि कांग्रेस की अधिकांश मांगें स्वीकार करने लायक हैं। अगर अनुदार दल चुनाव जीत गया (और यह बिल्कुल संभव है) तो इरविन मंत्रिमंडल के सदस्य हो सकते हैं। परन्तु बापू इन संयोगों को आधार न बनाकर हर जगह और हर मौके पर अपने मन की बात कह डालते हैं। चैथम भवन की सभा बहुत सफल रही। यह अनुदार दल का अड्डा है, हालांकि सभापति लोथियन थे। और यद्यपि यूसुफ़ अली और कर्नल गिडनी ने बहुत-सी ऊलजलूल बातें कहीं, परन्तु बापू पूरी रंगत में थे और उन्होंने बहुतों के मन जीत लिये। इतिहासकार जी. पी. गूच को तुम जानते हो। उन्होंने कहा कि चैथम भवन में उन्होंने इतनी बड़ी सभा नहीं देखी थी और उसका बहुत लोगों पर जबर्दस्त असर हुआ। मैंने यह सब सामग्री सदानंद के मार्फत तार से भिजवा दी। तुमने देखी होगी। चैथम भवन का उल्लेख मैं नहीं कर सका, क्योंकि उनकी कार्रवाई बन्द कमरे में हुई मानी जाती है।

वे पादरियों और लाटपादरियों को काफी समय दे रहे हैं। पता नहीं, तुम इसपर क्या खयाल करोगे। मगर मुझे विश्वास है कि इससे उन्हें सच्ची और अच्छी शिक्षा मिलेगी और वे भी उसे भूलेंगे नहीं। संसद को (या मंत्रि-मंडल को, मैं भूल रहा हूं किसको?) एक प्रार्थना-पत्र देने का विचार गंभीरतापूर्वक किया जा रहा है, जिसमें भारत के साथ दोनों पक्षों के लिए सम्मानपूर्ण समझौता करने की मांग की जाय। और लोगों के साथ उसपर दोनों लाट-पादरियों के भी हस्ताक्षर होंगे।

बापू ने तुम्हारा तार होर के पास भेज दिया था। उन्होंने अभी तक उत्तर नहीं दिया है। मेकडोनाल्ड के नाम के पत्र और उनके जवाब की नकलें तुम्हारे पास भेजना मैं भूल गया था। उसमें बहुत-कुछ तो नहीं था, परन्तु नकलें कराकर इस पत्र के साथ भेजने की कोशिश करूंगा। बापू ने शुएब को भोपाल के लिए लिखा गया एक पत्र उस दिन दिया था। उसमें यह बताया था कि संघीय अर्थ-व्यवस्था के बारे में रियासतों को क्या सामान्य सिद्धान्त

मान लेने चाहिए। इसपर दो दिन तक चर्चा हुई, परन्तु कुछ भी परिणाम न निकला । एक 'खानगी' नाट्यशाला में मैंने एक खेल देखा। तुम्हें आघात तो नहीं लगेगा ? खैर, मुझे तो पता नहीं था कि खानगी नाट्यशाला क्या बला होती है। यह एक अप्रमाणित खेल था। मुझे जरा भी परवा तो नहीं करनी चाहिए थी, परन्तु सारे दृश्य (लगभग १०) निर्विवाद रूप से शयनकक्ष के दृश्य थे और इतने भद्दे थे कि देखकर जी उकता रहा था। फिर भी मैं मानता हूं कि कला विलक्षण थी। लेकिन जो वस्तु मुझे पसन्द आई वह थी 'वैरेट्स ऑव विमपौल स्ट्रीट'। यह 'क्रानिकल' वालों का खेल था जिसके बारे में मैंने उन्हें लिखा था। इसकी कल्पना और कला दोनों सुन्दर थीं। खेल, सामान और हर चीज सूक्ष्म रूप में भी विशुद्ध थी। हां, मैं विशुद्ध शब्द का प्रयोग जान-बूझकर कर रहा हूं। मैं सोच सकता हूं कि एक 'खानगी नाट्यशाला' विशुद्ध हो सकती है। इसलिए मैं 'बैरेट्स में एक बार फिर गया ! साथ की कतरन से तुम्हें बड़ा आनन्द आयेगा। एक गरीब देश के प्रतिनिधि के सचिव यह सब धंधे कर रहे हैं !

आज रात को हम ईटन जा रहे हैं और वहां से ऑक्सफोर्ड जायंगे। इस यात्रा की बाट मैं बहुत दिन से देख रहा था।

स्नेहाधीन,
महादेव

हां, सप्रू-मंडली की भी थोड़ी-सी बात सुन लो। वह बापू से भरूचा की तरह यह जानना चाहते हैं कि सेना के सम्पूर्ण नियंत्रण से उनका क्या अभिप्राय है ! "महात्माजी, गृह-युद्ध छिड़ जाय तो आप तो कह देंगे, 'अरे कोई परवा की बात नहीं, यदि थोड़ा-सा खून बह जाय।' परन्तु मैं तो गृह-युद्ध को बरदाश्त नहीं कर सकता। मैं तो जरूर फौज को बुलाऊंगा और वह भी ब्रिटिश फौज को ?"

क्या तुम इस पत्र की नकल अन्सारी को भेज दोगे ? मेरे पास उनका बढ़िया खत आया है। कृपा करके उन्हें बता दो कि उनका पत्र मुझे मिल गया था और यह पत्र मैं उन्हें भी बताना चाहता हूं।

महादेव

९३. महात्मा गांधी की ओर से

[मैं इलाहाबाद से बम्बई गांधीजी से उनके गोलमेज-सम्मेलन से लौटने पर मिलने के लिए जा रहा था कि गिरफ्तार कर लिया गया। शेरवानी भी मेरे साथ थे। उन्हें भी गिरफ्तार कर लिया गया। उसी समय के आस-पास कुछ प्रान्तों में अनेक आर्डिनेंस जारी हुए। खान अब्दुल गफ्फार खां और दूसरों को सीमा प्रान्त में गिरफ्तार कर लिया गया। इस सबका मकसद यह था कि गांधीजी के लौटने के पहले ही हमारे आन्दोलन को कुचल दिया जाय।]

२८ दिसम्बर १९३१

प्रिय जवाहर,

इन्दू ने तुम्हारा पत्र मुझे दिया। कुछ भी हो, तुम्हारी गिरफ्तारी से मुझे आश्चर्य नहीं हुआ। मैं अभी तक कमला के पास नहीं जा सका हूं। आज रात को जा सकता हूं, कल तो जरूर ही। तुम्हें यह जानकर प्रसन्नता होगी कि इन्दू के नाम तुम्हारी दूसरी पत्र-माला मैंने पढ़ ली है। मुझे कुछ सुझाव देने थे, परन्तु यह तो शायद तभी होगा जब हम अपने-अपने स्वरूप में होंगे।

इस बीच तुम्हें और शेरवानी को प्यार।

बापू

९४. महात्मा गांधी की ओर से

२९ जनवरी १९३२

प्रिय जवाहर,

तुम्हारा पत्र पाकर हर्ष हुआ। हम बेचारे बाहरवालों से ईर्ष्या करने का तुम्हारे लिए कोई कारण नहीं। परन्तु हमें तुमसे इस बात की ईर्ष्या अवश्य है कि तुम्हें तो सारा गौरव प्राप्त हो रहा है और हम बाहरवालों के भाग्य में बेगार लिखी है। परन्तु हम बदला लेने का षड़यन्त्र रच रहे हैं। आशा है, तुम्हें कुछ अखबार दिये जाते होंगे। मैं जो कुछ कर रहा हूं, उसमें तुम सदा मेरे मन में बसे रहते हो।

उस दिन कमला से मिला था। उसे बहुत अधिक विश्राम की आवश्यकता है। मैं उससे एक बार फिर मिलने की कोशिश करूंगा और आग्रह करूंगा

कि जबतक वह पूरी तरह अच्छी न होजाय अपना कमरा न छोड़े। आशा है कि डाक्टर महमूद के बारे में की गई कार्रवाई से तुम सहमत होगे। मुझे विश्वास है कि आनन्दभवन पर लगाया गया कर चुकाने का वचन पूरा किया जायगा।

तुम दोनों को प्यार।

बापू

ईश्वर ने और सरकार ने चाहा तो कल आश्रम जाऊंगा और दो-तीन दिन में लौट आऊंगा।

९५. देहरादून जिला-जेल के सुपरिंटेंडेंट के नाम

[यह पत्र-व्यवहार जेल की एक घटना को लेकर हुआ था। जेल में हमारी यह नीति रही थी कि अगर जेल के कायदों को अपमानजनक या दूसरी तरह से अनुचित न समझा जाय तो उनका पालन किया जाय। फिर भी समय-समय पर कुछ घटनाएं घटती रहीं। एक मर्तबा जबकि मैं नैनी सेंट्रल जेल में था, हम लोगों में से कुछने विरोध-स्वरूप पूरे तीन दिन (बहत्तर घंटों) का उपवास किया। आमतौर पर जेल में मुलाकात करने की हमें इजाजत थी। किसी समय ये मुलाकातें तीन महीने में एक मर्तबा होतीं, बाद में हर महीने, और जिस वक्त यह पत्र-व्यवहार हुआ मुझे हर पखवारे मुलाकात की इजाजत थी। चूंकि मैं देहरादून जेल में था, मेरी मां और पत्नी को मिलने के लिए इलाहाबाद से दूर का सफर करके आना पड़ा। उनके देहरादून आने पर उनसे कहा गया कि वे मुझसे मुलाकात नहीं कर सकतीं। इस घटना के फलस्वरूप मैंने कई महीने तक मुलाकात करना छोड़ दिया। उस वक्त मैं कमोबेश तनहाई में था और मेरा कोई साथी नहीं था।]

जिला जेल, देहरादून,
२२ जून १९३२

सुपरिंटेंडेंट
जिला जेल, देहरादून,

प्रिय महोदय,

आपने आज खबर दी है कि आपके पास ऊपर के अधिकारियों की यह इत्तिला आई है कि मैं एक महीने तक अपनी पत्नी और मां से मुलाकात नहीं कर सकता। मैं समझता हूं कि जेल के कायदे-कानून के मुताबिक मुलाकातें

उन नियमों के खिलाफ कोई कसूर करने पर सजा के तौर पर बंद की जाती हैं। बड़ी मेहरबानी होगी, अगर आप स्थानीय सरकार या इंस्पेक्टर जनरल या जिस किसीने आपको इत्तिला भेजी है, उससे यह मालूम कर लें कि मैंने कौन-सा कसूर किया है, जिसके लिए मुझे यह सजा दी गई है। स्थानीय सरकार ने बिना मुझे खबर किये ऐसी सूचनाएं निकालकर काफी अभद्रता का काम किया है। जेल के कानून-कायदों को, अगर वे भद्र और मुनासिब हैं तो, मानने की हमारी आदत रही है। फिर भी, अगर सरकार इस ढंग से बर्ताव करती है जिसमें शिष्टता और भद्रता की कमी है तो हमारे लिए अपने मौजूदा रुख को जारी रखना मुश्किल होगा।

यह साफ नहीं है कि एक महीने के लिए सारी मुलाकातें बन्द कर दी गई हैं या यह पाबंदी मेरी पत्नी और मां की मुलाकातों पर ही है। जो हो, यह मेरे लिए बेसूद है। अगर दूसरों से मिलने की छूट हो भी तो भी वैसी किसी मुलाकात का मैं फायदा नहीं उठाऊंगा।

जैसाकि आप जानते हैं, मेरी मां और पत्नी मुझसे मिलने के लिए देहरादून से खास तौर पर आई हैं और अगली मुलाकात के दिन का यहां इंतजार कर रही हैं। आपकी मिली इस नई इत्तिला से उनका प्रोग्राम बिलकुल बिगड़ जायगा और उनका यहां रहना किसी काम का नहीं होगा। लेकिन मेरा अंदाज है कि जो सरकारें नीति के ऊंचे मामलों में दखल रखती हैं, वे शिष्टता और भद्रता के मामूली नियमों की कोई परवा नहीं करतीं।

भवदीय,
जवाहरलाल नेहरू

प्रेषक : लेफ्टीनेंट कर्नल जी. हालरॉयड, आई. एम. एस.
ऑफ़ीशियेटिंग इंस्पेक्टर जनरल ऑफ प्रिजन्स, यू. पी.

प्राप्तकर्ता : सुपरिंटेंडेंट
जिला जेल, देहरादून,

लखनऊ,
८ जुलाई १९३२

विषय : 'ए' वर्ग के बंदी पं० ज्वोहरलाल नेहरू का प्रार्थना-पत्र
उनका प्रत्यंकन सं० ८१८/४६ दिनांक २३-६-३२

प्रार्थी को सूचना दी जा सकती है कि २७ मई १९३२ को उनकी

मां, पत्नी और पुत्री ने श्री आर. एस. पंडित से इलाहाबाद जिला जेल में भेंट की।

उनकी पत्नी ने एक पत्र श्री आर. एस. पंडित को दिया। जेलर बिना सुपरिंटेंडेंट की आज्ञा से ऐसा नहीं करने दे सकता था। इसपर उनकी मां ने जेलर के प्रति अपमानजनक भाषा का प्रयोग किया और अभद्रता दिखाई।

इन कारणों से सरकार ने आज्ञा निकाली है कि श्रीमती ज्वाहरलाल नेहरू और श्रीमती मोतीलाल नेहरू को प्रार्थी से एक मास तक भेंट करने की इजाजत नहीं होगी।

(हस्ताक्षर)...
लेफ्टीनेंट कर्नल, आई. एम. एस.
ऑफ़ीशियेटिंग इंस्पेक्टर जनरल ऑव प्रिजन्स, यू. पी.

९६. सुपरिंटेंडेंट, ज़िला जेल, देहरादून के नाम

सुपरिंटेंडेंट, देहरादून जेल
ज़िला जेल, देहरादून ११ जुलाई १९३२

प्रिय महोदय,

आपने आज मेरे २२ जून के खत का जवाब, जो कि आफीशियेटिंग इंस्पेक्टर-जनरल ऑव प्रिजन्स के नाम भेजा गया था, मुझे दिखाने की मेहरबानी की। उसमें मुझे खबर दी गई है कि इलाहाबाद ज़िला जेल में श्री आर. एस. पंडित से २७ मई को मुलाकात के दौरान में मेरी पत्नी ने श्री पंडित को एक खत दिया और चूंकि जेलर ने इसकी इजाजत नहीं दी, मेरी मां ने "जेलर के प्रति अपमानजनक भाषा का प्रयोग किया और अभद्रता दिखाई।"

चूंकि जो कुछ हुआ उसका यह गलत बयान है और मुद्दों को तोड़-मरोड़कर बताया गया है, और इसके अलावा, चूंकि सरकार की ओर से उठाये गए कदम से बड़े-बड़े मुद्दे पैदा होते हैं, मैं इस बारे में आपको फिर लिख रहा हूं और आप इस खत को सरकार के पास भेज देंगे तो बड़ी मेहरबानी होगी।

२७ मई को मुलाकात के दौरान में श्री पंडित को उनकी तीन लड़कियों

के बारे में, जोकि तीन, पांच और आठ साल की हैं और जो कि पूना के एक स्कूल में पढ़ रही हैं, खबर दी गई थी। यह खबर स्कूल से मिली एक रिपोर्ट या खत में थी। मेरी लड़की के पास, जो उसी स्कूल में पढ़ती है और जो उस वक्त छुट्टी मनाने इलाहाबाद आई हुई थी, यह खत या रिपोर्ट थी और उसने इसे श्री पंडित को पढ़कर सुनाया, और बाद में उसे श्री पंडित को खुद देखने के लिए दे दिया। जेलर ने इसपर ऐतराज किया और आमतौर पर अभद्रता दिखाई, खासतौर पर श्री पंडित के प्रति। श्री पंडित की जो बेइज्जती की गई, उसके अलावा यह मेरी मां और पत्नी की भी बेइज्जती थी। मेरी मां तो उनसे शायद ही कुछ बोली हों।

तीन दिन बाद, ३० मई को, बरेली ज़िला जेल में अपनी मां, पत्नी और बेटी से मेरी हमेशा की तरह पखवारेवाली मुलाकात हुई। उस वक्त मुझे इस घटना की खबर मिली। यह जानकर मुझे ताज्जुब हुआ कि मेरी मां के प्रति ऐसी अभद्रता से व्यवहार हुआ और मैं आशा करता था कि जेल के अधिकारी जो कुछ बीती उसपर अफसोस जाहिर करेंगे। ऐसा करने के बजाय, अब मैं देखता हूं कि सरकार ने मेरी मां और स्त्री को ही दंड देना तय किया है। मेरा अन्दाज है कि उनका यह फैसला जेलर के किसी बयान की बिना पर है, जो उसने उन्हें दिया है। जहांतक मैं जानता हूं, मेरी मां या पत्नी से इस बारे में कुछ भी पूछताछ नहीं की गई कि वास्तव में क्या बात हुई। बिना कोई और जांच किये या सच बात जानने की कोशिश किये सरकार ने मेरी मां और पत्नी को बेइज्जत करने में कोई संकोच नहीं किया, और वह भी इस ढंग से किया गया कि सभी संबंधित व्यक्तियों को अधिक-से-अधिक असुविधा हो।

हो सकता है कि जेल के कायदों के मुताबिक किसीको उसके बच्चों की स्कूल की रिपोर्ट दिखाना भी अपराध हो। चाहे यह कोई बड़ा अपराध न भी हो तो भी उसे किसी नये आर्डिनेंस द्वारा ऐसा बनाया जा सकता है। इसलिए अगर सरकार इसे भी दंडित करने योग्य अपराध मानती है तो मुझे कोई गिला नहीं। न मुझे इस बात का कोई मलाल होगा कि मेरी मुलाकातें एक महीने के या एक साल के लिए बंद कर दी जायं। मैं जेल में अपनी सेहत सुधारने या मौज करने के लिए नहीं आया हूं।

लेकिन कुछ बातें हैं, जिनके बारे में मैं चुप नहीं रह सकता। मैं अपनी मां के प्रति अपमान या अभद्रता को बर्दाश्त नहीं कर सकता। मैंने गहरे खेद के साथ यह देखा है कि सरकार ने मेरी मां के प्रति वह भद्रता नहीं दिखाई है, जिसकी कि मैं उससे हर हालत में उम्मीद करता था। इंस्पेक्टर जनरल के लिए यह कहना कि मेरी मां ने "जेलर के प्रति अपमानजनक भाषा का प्रयोग किया और अभद्रता दिखाई" यह जाहिर करता है कि उनमें अजीब तरह से समझ की कमी है, वह हिन्दुस्तानी समाज को नहीं जानते और न वह भली भाषा का प्रयोग जानते हैं।

सरकार ने जो कार्रवाई की है और उसे जिस ढंग से किया है, उससे जाहिर है कि मुझसे जो जेल में भेंट करना चाहते हैं, उनका सरकार के अधिकारियों द्वारा या स्वयं सरकार द्वारा हमेशा अपमान हो सकता है। किसी हालत में भी मैं इस बात की ज़रा भी जोखिम नहीं उठाना चाहता कि मेरी मां या पत्नी की आगे फिर बेइज्जती हो। ऐसी हालत में मेरे लिए एक ही रास्ता रह गया है, और वह यह कि जबतक मैं यह न महसूस करूं कि इस तरह की मुलाकातें इज्जत के साथ होंगी और मुलाकातियों के प्रति किसी अभद्रता का डर नहीं होगा, तबतक मैं कोई मुलाकात ही न करूं। इसलिए मैं अपने घरवालों को खबर कर रहा हूं कि आगे वे मुझसे मुलाकात के लिए आने की तकलीफ न करें, एक महीने की सजा खत्म हो जाने पर भी न आवें।

यदि आफीशियटिंग इंस्पेक्टर-जनरल आगे मेरे नाम के हिज्जे ठीक लिखने की तकलीफ गवारा करें तो मुझे खुशी होगी।

भवदीय,
जवाहरलाल नेहरू

९७. महात्मा गांधी की ओर से

यरवदा सेंट्रल जेल
पूना,
३१ दिसम्बर १९३२

प्रिय जवाहरलाल,

सरूप उस दिन अस्पृश्यता-सम्बन्धी अपनी योजना पर चर्चा करने मेरे

पास आई थी। उसने कहा कि तुम्हारी सलाह सीलोन में आराम लेने की है। मैं इसे अनावश्यक समझता हूं। वह थोड़ा काम करने लायक़ जरूर है और कुछ अस्पृश्यता का काम करने को बिल्कुल रजामंद है। मेरे ख़याल से जबतक वह काम करना चाहती है करने देना चाहिए।

उसने मुझे बताया कि तुमने कुछ दांत और निकलवा दिये हैं। उधर वह अपने बाल सफेद करने पर तुली है। मुझे तो आंखों देखनेवालों ने बताया है कि वैसे तुम्हारा स्वास्थ्य बिल्कुल ठीक रहता है। मालूम होता है कि तुम अब भी मिलने आनेवालों से मुलाक़ातें नहीं कर रहे हो। मैं चाहता हूं कि यदि सम्भव हो तो तुम मुलाकातें करो। इससे उन्हें संतोष मिलेगा।

छगनलाल जोशी के आ मिलने से हमारी चार की सुखद टोली बन गई है। मुझे पता नहीं कि तुम हरिजन-कार्य में दिलचस्पी ले रहे हो या नहीं। शास्त्रियों के साथ अच्छा समय बीत रहा है। शास्त्रों का अक्षर-ज्ञान मेरा पहले से अच्छा होगया है, परन्तु सच्चे धर्म का ज्ञान वे मुझे थोड़ा ही दे सकते हैं।

हम सबकी तरफ से प्यार।

बापू

९८. महात्मा गांधी की ओर से

यरवदा सेंट्रल जेल

पूना,

१५ फरवरी १९३३

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारे सुन्दर पत्र के उत्तर में अच्छा पत्र लिखने की आशा से मैं तुम्हें लिखना टालता गया। पर अब अधिक देर नहीं कर सकता। ोज काम बढ़ रहा है। इसलिए मुझे अभी जैसा भी लिखा जा सके लिखना होगा। पता नहीं तुम्हें 'हरिजन' जैसा निर्दोष पत्र भी दिया जाता है या नहीं। मैं तो इस आशा से भेज रहा हूं कि तुम्हें मिलता होगा। यदि मिलता हो तो मुझे अपनी राय लिखो। सनातनियों के विरुद्ध लड़ाई दिन-दिन दिलचस्प होती जा रही है, साथ ही अधिकाधिक कठिन भी। एक अच्छी बात यह है कि वे दीर्घकालीन मानसिक आलस्य से जाग उठे हैं। मुझपर जिन गालियों की बौछार ये कर रहे हैं वे अजीब ताजगी लानेवाली हैं। दुनियाभर की

बुराइयां और भ्रष्टाचार मुझमें मौजूद हैं। मगर तूफान ठंडा हो जायगा, क्योंकि मैं अहिंसा की—अप्रतिशोध की रामबाण दवा का प्रयोग कर रहा हूं। मैं गालियों की जितनी उपेक्षा करता हूं उतनी ही वे भयंकर होती जा रही हैं। परन्तु यह तो दीपक के आस-पास पतंग का मृत्यु-नृत्य है। बेचारे राजगोपालाचार्य और देवदास की भी अच्छी खबर ली जा रही है। लक्ष्मी की सगाई को बीच में घसीटकर उस बारे में गन्दे आरोप गढ़े जा रहे हैं। अस्पृश्यता का समर्थन इस तरह होता है! घरू मुलाकात के तौर पर इन्दू और अस्पृश्यता के बारे में सरूप और कृष्णा मुझसे उस दिन मिली थीं। इन्दू का स्वास्थ्य बहुत अच्छा था और वह बिल्कुल प्रसन्न दिखाई देती थी। सरूप अस्पृश्यता-निवारण के लिए काठियावाड़ और गुजरात में थोड़े दिन का दौरा कर रही है और कृष्णा इलाहाबाद जानेवाली थी। देवदास दिल्ली में है और राजाजी की, जो कि अस्पृश्यता-निवारण के लिए कानून बनवाने में असेंबली के मेंबरों से सम्पर्क कर रहे हैं, मदद कर रहा है। हमारा समय पूरी तरह अस्पृश्यता के काम में लग रहा है। सरदार वल्लभभाई बाहर जानेवाले पत्रों की बढ़ती हुई संख्या के लिए सारे लिफाफे बनाकर देते हैं। वे समाचार-पत्रों को परिश्रम से पढ़ते हैं और अस्पृश्यता के विषय में और न जाने कहां-कहां की छोटी-छोटी बातों की जानकारी खोद-खोदकर निकाल लाते हैं। विनोद के भी वह अटूट भंडार हैं। मुआयने का दिन उनके लिए वैसा ही होता है जैसा और कोई दिन। वह कभी कोई मांग नहीं करते। मेरा कोई भी दिन ऐसा नहीं जाता जब मैं कोई-न-कोई मांग न रखूं। पता नहीं, हम दोनों में से कौन अधिक सुखी है। मुंह फुलाये बिना मैं अपनी हार को सहन कर लूं तो मैं भी उनकी तरह सुखी क्यों नहीं हो सकता!

तुम्हारे एकान्त और तुम्हारे अध्ययन से हम सबको ईर्ष्या होती है। यह सच है कि हमारे भार हमारे अपने ही या यों कहो कि मेरे ही ओढ़े हुए हैं। मैंने वल्लभभाई की संस्कृत के अच्छे पंडित बनने की सारी आशा चूर-चूर कर दी है। वह हरिजन-कार्य की उत्तेजना के बीच में अपने अध्ययन पर ध्यान नहीं जमा सकते। बंगाल के फुटबाल के खिलाड़ी जैसे अपने खेल का मजा लूटते हैं वैसे ही वल्लभभाई चटपटी आलोचना का आनन्द लेते हैं। महादेव तो, जैसा शौकत ने वर्णन किया था, टोली के हमाल बने हुए हैं। कोई

भी काम उनके लिए अधिक या उनसे परे नहीं है। छगनलाल जोशी अभी पैर जमाने में लगे हुए हैं। लेकिन मजे में हैं। बसन्त आ रहा है, उनपर भी बहार आये बिना नहीं रह सकती। वैसे हमें छांट-छांटकर रखा गया है। हम खेल के नियमों का पालन करते हैं और वर्णाश्रम-धर्म के नियमों का कठोर पालन करनेवाला एक खासा भद्र परिवार बने हुए हैं। इससे डाक्टर अंबेडकर और मेरी मिली-भगत बनकर सनातनियों के लिए नई सनसनी का सामान मुहैय्या हो जायगा। मेरी परेशानी बढ़ जायगी, परन्तु विश्वास रखो कि वह मेरी मोल ली हुई नहीं होगी। अब मेरे पास इतना ही कहने का स्थान और समय रह गया है कि हम सबको आशा है कि तुम्हारी चतुर्मुखी प्रगति बराबर जारी होगी।

हम सबकी ओर से प्यार।

बापू

[सनातनियों से आशय कट्टर हिन्दुओं से है जो गांधीजी के छुआछूत-निवारण-आन्दोलन का विरोध कर रहे थे।

उसी समय गांधीजी के पुत्र देवदास का संबंध श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य की पुत्री लक्ष्मी के साथ होना तय हुआ था। यह संबंध दो भिन्न जातियों में हो रहा था, इसलिए कुछ कट्टर हिन्दू उसकी निन्दा कर रहे थे।]

९९. महात्मा गांधी की ओर से

यरवदा सेंट्रल जेल
पूना,
२ मई १९३३

प्रिय जवाहरलाल,

जब मैं आनेवाले उपवास से जूझ रहा था, तब मानो तुम सशरीर मेरे सामने थे। लेकिन कोई लाभ नहीं। काश मुझे अनुभव हो सकता कि तुमने उपवास की नितान्त आवश्यकता को समझ लिया है! हरिजन-आन्दोलन मेरे बौद्धिक प्रयत्न के लिए बहुत बड़ी चीज है। सारे संसार में इतनी बुरी चीज कोई नहीं है। फिर भी मैं धर्म को और इसलिए हिन्दुत्व को छोड़ नहीं सकता। यदि हिन्दूधर्म से मैं निराश हो जाऊं तो मेरा जीवन मेरे लिए भार बन जायगा। मैं हिन्दुत्व के द्वारा ईसाई, इस्लाम और कई दूसरे धर्मों से

प्रेम करता हूं। इसे छीन लिया जाय तो मेरे पास रह ही क्या जाता है? लेकिन मैं इसे छुआछूत और ऊंच-नीच की मान्यता के रहते हुए सहन भी नहीं कर सकता। सौभाग्य से हिन्दूधर्म में बुराई का रामवाण इलाज भी है। मैंने उसी इलाज का प्रयोग किया है। सम्भव हो तो मैं तुम्हें यह महसूस करवाना चाहता हूं कि यदि मैं उपवास के बाद बच रहूं तो अच्छा ही है और यदि जीवित रहने की कोशिश के बावजूद यह शरीर नष्ट हो जाता है तो भी क्या बुराई है? आखिर यह है ही क्या—एक झट से टूट जानेवाली चिमनी से भी अधिक नाशवान है। उस कांच के गोले को फिर भी दस हजार वर्ष तक ज्यों-का-त्यों रखा जा सकता है, परन्तु इस शरीर को एक मिनिट के लिए भी जैसे-का-तैसा नहीं रख सकते। और मृत्यु से अवश्य ही प्रयत्न-मात्र का अन्त नहीं हो जाता। ठीक ढंग से सामना किया जाय तो मौत इसी उदात्त प्रयत्न का आरम्भ भी हो सकता है। परन्तु यह सत्य तुम्हें स्वयं-स्फूर्ति से दिखाई न देता हो तो मैं दलीलों से तुम्हें कायल नहीं करना चाहता। मैं जानता हूं कि तुम्हारी स्वीकृति मेरे साथ न भी हुई तो भी अग्नि-परीक्षा के इस सारे दौरान में तुम्हारा बहुमूल्य स्नेह मेरे साथ रहेगा।

तुम्हारा पत्र मिल गया था, जिसका उत्तर मैंने सोचा था फुरसत से दूंगा, परन्तु ईश्वर की इच्छा और ही कुछ थी! कृष्णा से मेरी बातें हुई थीं। मेरा खयाल है कि सरूप के काठियावाड़ के काम के बारे में मैंने तुम्हें लिखा था। कमला ने तो मुझे अपना पता तक नहीं भेजा। बहुत दिनों से उसका कोई पत्र नहीं आया है। जब तुम उससे मिलो, उसे और इन्दू को मेरा प्यार पहुंचा देना। कमला को उपवास की चिन्ता नहीं करनी चाहिए। हो सके तो मुझे तार देना।

हम सबकी ओर से प्यार।

बापू

१००. महात्मा गांधी की ओर से

२२ जुलाई १९३३

प्रिय जवाहरलाल,

मैंने तुम्हें लिखने की कई बार इच्छा की, परन्तु मजबूर था। नई प्राप्त होनेवाली रत्ती-रत्तीभर शक्ति सामने रखे हुए आवश्यक कार्य को निपटाने में लगाता रहा।

माताजी और कमला के साथ बहुत अच्छा समय बीता। सरूप और रनजीत से अधिक नहीं मिल सका।

माताजी को कृष्णा की चिन्ता है। उसके भविष्य के बारे में उन्होंने मुझसे लम्बी बातचीत की। इस मामले में तुम्हारे पास मेरे लिए कोई सुझाव हो तो बताओ। अलबत्ता मेरी गति-विधियां अनिश्चित हैं। परन्तु इसकी परवा नहीं।

देवदास और लक्ष्मी को मैंने पूना में छोड़ा था। अब वे यहां आनेवाले हैं। बहुत करके देवदास अभी दिल्ली में बस जायगा। महादेव, बा और प्रभावती मेरे साथ हैं। खयाल है कि वे सब शीघ्र ही बिखर जा ंगे।

उपवास से पहले की शक्ति फिर से प्राप्त करने में मन्द गति रही है। परन्तु मेरी दशा धीरे-धीरे सुधर रही है। सप्रेम,

बापू

१०१. महात्मा गांधी की ओर से

[यह पत्र मेरी छोटी बहन कृष्णा के राजा हठीसिंग के साथ विवाह के अवसर पर मेरे पास भेजा गया था।]

१८ अक्तूबर १९३३

प्रिय जवाहरलाल,

साथ में दो मालाएं हैं। ये वर-वधू के लिए आज मेरे खासतौर पर काते हुए सूत से बनाई गई हैं। इनके साथ मेरे शुभ आशीर्वाद जुड़े हुए हैं। मेरी तरफ से उनके गले में डाल देना। आशा है, ये तुम्हारे पास समय पर पहुंचे जायंगी।

मुझे इस बात का जरूर दुःख है कि श्रीमती हठीसिंग ने इस संस्कार के विरुद्ध राय दी है, परन्तु मेरा खयाल है कि इन मामलों में मैं पिछड़ा हुआ हूं। दीपक के बारे में मैंने तुम्हारा कहना समझ लिया। मैं सरला-देवी को जितना कोमल ढंग से लिख सकता हूं, लिखूंगा।

तुम सबको प्यार।

बापू

जब सब काम निपट जाय तब मैं चाहता हूं कि तुम मुझे तार से बताओ कि माताजी ने यह सब श्रम सहन कर लिया है।

१०२. महात्मा गांधी की ओर से

सेगांव, वर्धा

प्रिय जवाहरलाल, १० अगस्त १९३४

खानसाहब को बम्बई की बैठकों में आने के लिए साधारण सूचना मिल गई है। उनकी इच्छा आने की नहीं है और मैं उन्हें दबाना नहीं चाहता। बम्बई में उन्हें सभाओं और समारोहों में शरीक होने को कहा जायगा और बोलने का अनुरोध किया जायगा। मैं नहीं चाहता कि अभी वह ऐसा करें। मैं यह चाहता हूं कि वह यह साल मेरे साथ बितायें। दूसरे, बीमारी के हमलों को रोकने की भी उनमें बहुत शक्ति नहीं है। इसलिए उन्हें सम्मिलित होने से माफ कर दोगे ?

सस्नेह,
बापू

[खानसाहब से यहां मतलब खान अब्दुल गफ्फार खां से है।]

१०३. महात्मा गांधी के नाम

[अपनी पत्नी की कड़ी बीमारी के कारण मैं अचानक जेल से रिहा कर दिया गया था। यह रिहाई थोड़े समय की थी और दरअसल दस दिन के भीतर ही मैं फिर जेल में पहुंचा दिया गया। अपनी रिहाई के ठीक बाद मैंने यह खत गांधीजी को लिखा था।]

आनंदभवन, इलाहाबाद
१३ अगस्त १९३४

प्रिय बापू,

···छः महीने बिल्कुल अकेले रहने और कुछ भी न करने के बाद पिछले २७ घंटों की चिंता, उत्तेजना और भाग-दौड़ में मैं खो-सा गया हूं। मैं बहुत थकान महसूस कर रहा हूं। आधी रात-गये मैं यह पत्र आपको लिख रहा हूं। सारे दिन लोगों की भीड़ आती रही है। मौका मिला तो आपको फिर लिखूंगा, लेकिन कई महीने तक ऐसा कर भी सकूंगा, इसमें मुझे शक है। इसलिए मैं थोड़े में बताना चाहूंगा कि पिछले कोई पांच महीनों में कांग्रेस के जो बड़े फैसले हुए हैं, उनके प्रति मेरी क्या प्रतिक्रिया रही है। मेरी जान-

कारी के जरिये स्वभावतः बहुत सीमित रहे हैं, लेकिन मैं समझता हूं कि वे इतने काफी हैं कि मैं घटनाओं की आम धारा का बहुत-कुछ सही अंदाज कर सकता हूं।

जब मैंने सुना कि आपने सत्याग्रह-आंदोलन बन्द कर दिया है, तो मुझे दुःख हुआ। पहले छोटा-सा ऐलान मुझे मिला। उसके बहुत बाद मैंने आपका बयान पढ़ा और उससे मुझे इतना जबरदस्त धक्का लगा, जितना शायद पहले कभी नहीं लगा होगा। सत्याग्रह-आंदोलन को बंद कर देने से मैं अपने मन को तैयार कर सकता था, लेकिन ऐसा करने के जो कारण आपने बताये और आगे के काम के लिए जो सुझाव आपने दिये, उसने मुझे हैरत में डाल दिया। मैंने अचानक और जोरों से महसूस किया, मानों मेरे भीतर की कोई चीज टूट गई, ऐसा कोई बंधन टूट गया, जिसकी मेरे लिए बड़ी कीमत थी। मैंने अपनेको इस लंबी-चौड़ी दुनिया में भयानक रूप से अकेला महसूस किया। मैंने लगभग बचपन से ही अपनेको हमेशा कुछ अकेला ही अनुभव किया है। लेकिन कुछ लगाव मुझे ताकत देते रहे हैं, कुछ मजबूत सहारे मुझे थामे रहे हैं। वह अकेलापन कभी गया तो नहीं, लेकिन कम होगया था। पर अब मैंने अपनेको बिल्कुल अकेला समझा, ऐसा जैसे किसी रेगिस्तानी टापू पर पटक दिया गया हूं।

लोगों में हालात के मुताबिक अपनेको ढालने की जबरदस्त ताकत होती है और मैंने भी कुछ हद तक नये हालात के मुताबिक अपनेको बना लिया। इस बारे में मेरी भावनाओं की तेजी जो बहुत-कुछ जिस्मानी दर्द बन गई थी, ठंडी पड़ गई। उसकी धार मोथरी होगई। लेकिन धक्के-पर-धक्के लगने और एक के बाद एक घटनाओं के होने से वह तेज होगई और मेरे मन और भावनाओं को उसने चैन और आराम न लेने दिया। फिर मुझे आध्यात्मिक अकेलापन महसूस हुआ, मानों मैं न सिर्फ अपने सामने से गुजरती भीड़ से, बल्कि जिन्हें मैं अपना प्यारा और नजदीकी साथी मानता था, उनसे भी बिल्कुल अजनबी हूं, और उनके साथ मेरा कोई मेल नहीं है। इस बार का मेरा जेल में रहना मेरे तंतुओं के लिए जितना ज्यादा तकलीफ देनेवाला रहा, उतना पहले किसी बार का जेल जाना नहीं हुआ था। मैं करीब-करीब यह चाहने लगा कि सभी अखबार मुझसे दूर रक्खे जायं, जिससे कि मैं इन

बार-बार लगनेवाले धक्कों से बच सकूं।

शरीर से मैं ठीक ही रहा। जेल में मैं हमेशा ऐसा ही रहता हूं। मेरे शरीर ने मेरा अच्छा साथ दिया है और वह बहुत दुर्व्यवहार और बोझ सह सकता है और यह सोचने की ढिठाई करके कि शायद मैं उस भूमि के लिए, जिससे कि मेरा भाग्य बंधा हुआ है, अब भी कुछ खास काम कर सकूं, मैं अपने जिस्म की हमेशा अच्छी तरह देखभाल करता रहा हूं।

लेकिन मैंने अक्सर यह सोचा है कि गोल सूराख में मैं चौकोर खूंटी के जैसा तो कहीं नहीं हूं, या घमंड के बुदबुदे के मानिंद तो मैं नहीं हूं, जो मेरा तिरस्कार करते समुद्र में जहां-तहां उठ रहे थे। लेकिन घमंड और गर्व की ज़ीत हुई और उस बौद्धिक यंत्र ने, जो मेरे भीतर चलता रहता है, हार मानने से इन्कार कर दिया। अगर वे आदर्श, जिन्होंने मुझे काम करने को उकसाया और तूफानी मौसम में भी उमंग में रक्खा, ठीक थे—और उनके ठीक होने का यकीन मुझमें हमेशा बढ़ता रहा है—तो उनकी जरूर जीत होगी, चाहे हमारी पीढ़ी उस जीत को देखने के लिए जिंदा न रहे।

लेकिन इस साल के इन लंबे और थकानेवाले महीनों में उन आदर्शों का क्या हुआ, जबकि मैं एक मौन और दूर के दर्शक की तरह अपनी लाचारी पर बेचैन था? रुकावटों का आना और थोड़े समय की हार सभी बड़े संघर्षों में काफी आम बातें हैं। उनसे दुःख तो होता है, लेकिन आदमी जल्दी ही संभल जाता है। अगर उन आदर्शों की रोशनी को मद्धिम पड़ने से बचाया जाय और उसूलों का लंगर मजबूत रहे तो संभाल जल्दी हो जाती है। लेकिन जो मैंने देखा वह रुकावट और हार नहीं थी, बल्कि आध्यात्मिक हार थी, जो कि सबसे अधिक भयंकर है। ऐसा न समझिये कि मेरा इशारा कौंसिल में प्रवेश के सवाल की ओर है। उसे मैं बहुत महत्व नहीं देता। किन्हीं हालात में इन व्यवस्थापिका सभाओं में खुद जाने की कल्पना कर सकता हूं। लेकिन मैं चाहे व्यवस्थापिका सभा में प्रवेश करके काम करूं चाहे बाहर से, मैं सिर्फ एक क्रांतिकारी के तौर पर काम कर सकता हूं, जिसका मतलब ऐसे इन्सान से है, जो कि बुनियादी और क्रांतिकारी परिवर्तन चाहता है, वह चाहे राजनैतिक हो या सामाजिक, क्योंकि मुझे विश्वास होगया है कि किन्हीं और तरह की तब्दीलियों से हिन्दुस्तान और दुनिया को न शांति मिल सकती

है, न संतोष ।

ऐसा मैंने सोचा । जाहिर है कि जो नेता बाहर काम कर रहे थे वे कुछ और ही ढंग से सोचते थे । उन्होंने ऐसे जमाने की भाषा बोलना शुरू किया, जो बीत चुका था और जो असहयोग और सत्याग्रह के हमपर चढ़े नशे से पहले का था । कभी-कभी वे उन्हीं शब्दों और मुहावरों का इस्ते-माल करते थे, लेकिन वे बेजान और बेमानी होते थे । कांग्रेस के मुखिया अचानक वे ही लोग बन बैठे, जिन्होंने हमारे आगे रोढ़े अटकाये थे, हमें रोका था, संघर्ष से दूर रक्खा था, बल्कि हमारी बड़ी जरूरत के वक्त विरोधी दल के साथ सहयोग किया था । अब हमारे स्वतंत्रता के मंदिर के वे बड़े पुजारी बन बैठे, और बहुत-सें बहादुर सिपाही, जिन्होंने युद्ध की गर्मी और धूल में बोझ को कंधा लगाया था, मंदिर के अहाते में घुस भी नहीं पाते । वे और उन-जैसे लोग अछूत और पास न आने लायक होगये थे और अगर वे अपनी आवाज बुलंद करते और उन नये पुजारियों की टीका-टिप्पणी करते तो चीखकर उन्हें बैठा दिया जाता और कहा जाता कि वे लक्ष्य के प्रति विद्रोही हैं, क्योंकि वे मंदिर के पवित्र अहाते की एकरसता को भंग करते हैं ।

और इस तरह भारतीय स्वतंत्रता का झंडा बड़े आडंबर और घटाटोप के साथ उन्हें सौंप दिया गया, जिन्होंने दरअसल दुश्मन के कहने पर, उसे तब नीचे झुकाया था, जबकि हमारी राष्ट्रीय लड़ाई बड़े जोरों पर थी; उन लोगों को, जिन्होंने घर की छतों पर चढ़कर यह ऐलान किया था कि वे राजनीति से नाता तोड़ बैठे हैं—क्योंकि राजनीति उस समय खतरे से खाली नहीं थी—लेकिन जो कूदकर आगे की पंक्ति में आ गये थे, क्योंकि अब राजनीति में खतरा नहीं था ।

और उनके सामने आदर्श क्या थे, जबकि वे कांग्रेस और राष्ट्र की ओर से बोल रहे थे ? आदर्श के नाम पर उनके यहां एक बड़ी ही बेहिसाब हालत थी, जिसमें असली मुद्दों से कतराना होता, कांग्रेस के राजनैतिक मकसदों तक को, जहांतक उनकी हिम्मत पड़ती, नरम करना होता, हरेक निहित स्वार्थ के प्रति कोमल चिंता प्रकट करना होता, स्वतंत्रता के माने हुए बहुत-से दुश्मनों के आगे झुकना होता, लेकिन कांग्रेसी फौज के जान कुरबान करनेवाले

अगुआ सिपाहियों के सामने दिलेरी और मर्दानगी दिखाना होता। क्या कांग्रेस तेजी से गिरकर कलकत्ता कार्पोरेशन के पिछले कई सालों के शर्मनाक नजारे का एक बड़ा रूप नहीं बनती जा रही है? बंगाल-कांग्रेस का शक्तिशाली भाग क्या आज 'श्री नलिनी रंजन सरकार संवर्धन समाज' नहीं कहा जा सकता ? और यह वही सज्जन हैं, जो सरकारी कर्मचारियों, गृह-सदस्यों और इसी तरह के लोगों को दावतें देकर प्रसन्न हुआ करते थे, जबकि हममें से बहुत-से जेलों में थे और सविनय अवज्ञा-आंदोलन धूमधाम से चलता हुआ समझा जाता था। क्या दूसरे भाग को कुछ वैसे ही ऊंचे मकसद के संवर्धन के लिए एक वैसा ही समाज नहीं माना जा सकता ? लेकिन दोष बंगाल तक सीमित नहीं है। करीब-करीब सभी जगह ऐसी ही दृष्टि है। कांग्रेस ऊपर से नीचे तक दलबंदी में पड़ गई है और मौका-परस्ती का बोल-बाला है।

इस परिस्थिति की सीधी जिम्मेदारी वर्किंग कमिटी पर नहीं है। फिर भी वर्किंग कमिटी को यह जिम्मेदारी उठानी चाहिए। नेताओं और उनकी नीति के आधार पर ही अनुयायी अपना कार्यक्रम बनाते हैं। अनुयायियों पर दोष डालना न मुनासिब है, न ठीक है। हरेक भाषा में कोई-न-कोई कहावत है, जिसमें काम करनेवाले अपने औजारों को दोष देते हैं। वर्किंग कमिटी ने जान-बूझकर हमारे आदर्शों और ध्येयों की परिभाषा को गोलमोल रखने को बढ़ावा दिया है और इसका नतीजा यही नहीं होगा कि गड़बड़ फैले, बल्कि यह भी कि प्रतिक्रिया के अवसरों पर गिरावट होगी, और ढोल पीटनेवाले और प्रतिक्रियावादी आगे आवेंगे ।

मेरा इशारा खास तौर पर राजनैतिक लक्ष्यों की ओर है, जो कि कांग्रेस का खास क्षेत्र है। मैं समझता हूं कि बहुत पहले ही कांग्रेस को सामाजिक और आर्थिक मुद्दों पर साफ-साफ गौर करना चाहिए था, लेकिन मैं यह भी मानता हूं कि इन मुद्दों की शिक्षा के लिए समय की जरूरत है और हो सकता है कि कुल मिलाकर कांग्रेस फिलहाल उतनी आगे न जा सके, जितनी मैं चाहूंगा कि वह जाय। लेकिन ऐसा जान पड़ता है कि वर्किंग कमिटी किसी विषय को जानती हो, चाहे न जानती हो, वह हमेशा उन लोगों पर इलजाम लगाने और निकाल बाहर करने के लिए तैयार रहती है, जिन्होंने इन विषयों का खास अध्ययन किया है और जो अपने कुछ विचार रखते हैं। उन विचारों

को समझने की कोई कोशिश नहीं की जाती, जिनके बारे में यह कुख्यात है कि ये आज की दुनिया के कुछ सबसे योग्य और सबसे ज्यादा त्यागी लोगों के विचार हैं। ये विचार सही हों या गलत, लेकिन इसके पहले कि वर्किंग कमिटी उनकी निंदा करे, उसे कम-से-कम उन्हें समझ तो लेना चाहिए। एक सधे-सधाये तर्क का उत्तर भावुकताभरी अपीलों से नहीं दिया जा सकता, न इस तरह के हल्के इजहार से कि हिन्दुस्तान में हालात कुछ दूसरी किस्म के हैं और जो आर्थिक नियम दूसरी जगह लागू होते हैं, वे हमने यहां चालू नहीं किये हैं। वर्किंग कमिटी की इस बारे की तजवीज में समाजवाद की मोटी बातों की इतनी अचरजभरी गैर-जानकारी दिखाई दी कि उसे पढ़कर दुःख हुआ और यह जानकर भी कि उसे हिंदुस्तान से बाहर भी लोग पढ़ेंगे। ऐसा जान पड़ता है कि कमिटी की सबसे बड़ी इच्छा यह रही है कि निहित स्वार्थों को, जैसे भी हो, आश्वासन दिलाये, ऐसा करने में भले ही उसका बयान बकवास ही क्यों न जान पड़े।

समाजवाद विषय के व्यवहार का एक अजीब ढंग यह है कि इस शब्द को, जिसका कि अंग्रेजी भाषा में एक निश्चित अर्थ है, एक बिल्कुल ही दूसरा अर्थ दिया जाय। यदि लोग शब्दों को अपने-अपने अलग अर्थ देने लगे तो विचारों के आदान-प्रदान में मदद नहीं मिलती। कोई अपनेको इंजन-चालक कहे और फिर यह जोड़ दे कि उसका इंजन लकड़ी का है और उसे बैल खींचते हैं तो वह इंजन-चालक शब्द का दुरुपयोग करता है।

यह खत उम्मीद से ज्यादा लंबा होगया है और अब रात भी काफी होगई है। शायद मैंने जो कुछ लिखा है, एक उलझे हुए ढंग से और बेतरतीबी से लिखा है, क्योंकि मेरा दिमाग थका हुआ है। फिर भी उससे मेरे मन की एक तस्वीर मिलेगी। पिछले कुछ महीने मेरे लिए बड़ी तकलीफ के रहे हैं और मैं समझता हूं कि बहुत-से और लोगों के लिए भी वे वैसे ही रहे होंगे। कभी-कभी मैंने महसूस किया है कि आज की दुनिया में, और शायद पुराने जमाने की दुनिया में भी, यह अक्सर पसंद किया गया है कि कुछ लोगों के दिलों को तोड़ना, औरों की जेबों को छूने की बनिस्बत अच्छा है। दिलों, दिमागों, जिस्मों, इन्सानी इन्साफ और इज्जत के मुकाबले में दरअसल जेबों की ज्यादा कीमत और कद्र रही है।

एक और विषय है, जिसका मैं जिक्र करना चाहूंगा। वह है स्वराज-भवन-ट्रस्ट। मालूम हुआ है कि वर्किंग कमिटी ने हाल में स्वराज भवन की देख-भाल के सवाल पर विचार किया था और इस नतीजे पर पहुंची थी कि यह उसकी जिम्मेदारी नहीं है। उसने पहले, करीब तीन साल हुए, इसके लिए एक ग्रांट देना मंजूर किया था, पर वह अभी तक मिली नहीं है, हालांकि उसकी बिना पर खर्चे तो होगये। अब फिर से नई ग्रांट मंजूर हुई है। यह शायद कुछ महीनों के लिए काफी होगी। भविष्य के लिए, वर्किंग कमिटी जाहिरा तौर पर चिंतित रही है कि मकान और साथ की जमीन पर होनेवाले खर्च का बोझ उसे न उठाना पड़े। यह बोझ १०० रुपये महीने का है, जिसमें टैक्स वगैरा शामिल हैं। मैं समझता हूं कि ट्रस्टियों को भी इस बोझ से कुछ डर हो रहा था और उन्होंने सुझाव दिया कि मकान के कुछ हिस्से को मामूली तौर पर किराये पर उठा दिया जाय, जिसमें कि उसकी देख-रेख और सार-संभाल का खर्च निकाला जा सके। एक दूसरा सुझाव यह था कि इस काम के लिए जमीन का कुछ हिस्सा बेच दिया जाय। इन सुझावों की बात सुनकर मुझे हैरत हुई, क्योंकि इनमें से कुछ मुझे ट्रस्ट की शर्तों के खिलाफ लगे और उसकी भावना के तो सभी खिलाफ थे। ट्रस्ट के एक मेंबर की हैसियत से मेरा इस विषय में एक ही मत है, बल्कि मैं कहना चाहूंगा कि ट्रस्ट-जायदाद के इस दुरुपयोग के खिलाफ मुझे सख्त ऐतराज है। मेरे पिता की इच्छाओं के इस तरह निरादर की कल्पना ही मुझे बर्दाश्त नहीं है। ट्रस्ट न केवल उनकी इच्छाओं की नुमाइंदगी करता है, बल्कि एक तरह से उनके यादगार की भी, और उनकी इच्छाएं और उनकी यादगार मुझे सौ रुपये महीने से ज्यादा प्यारी हैं। इसलिए मैं वर्किंग कमिटी और ट्रस्टियों को यह यकीन दिलाना चाहूंगा कि इस जायदाद की देख-रेख के लिए जितने धन की जरूरत है उसकी चिंता उन्हें करने की जरूरत नहीं। वर्किंग कमिटी ने जो रकम कुछ महीनों के लिए मंजूर की है उसके खत्म होते ही मैं उसकी देख-रेख की जिम्मेदारी अपने ऊपर ले लूंगा और वर्किंग कमिटी को आगे ग्रांट देने की जरूरत न होगी। मैं ट्रस्टियों से यह अनुरोध करूंगा कि इस बारे में वे मेरी भावनाओं का आदर करेंगे और जायदाद के न टुकड़े करेंगे और न उसे किराये पर उठावेंगे। मैं स्वराज-भवन जायदाद की देख-रेख तबतक करूंगा जबतक

कि वह किसी सत्कार्य के उपयोग में नहीं आती।

मेरे पास आंकड़े नहीं हैं, लेकिन मेरा यकीन है कि इस समय तक भी स्वराज-भवन, किसी मायने में, वर्किंग कमिटी पर पैसे के खयाल से बोझ नहीं रहा है। जो ग्रांट उसके लिए दी गई है, वह ए. आई. सी. सी. के आफिस के लिए काम में आनेवाली जगह के वाजिब किराये से किसी कदर भी ज्यादा न होगी। यह किराया छोटे और सस्ते मकान में दफ्तर के चले जाने से कम हो सकता था। साथ ही यह भी है कि पहले मद्रास में एक मकान के सिर्फ ऊपरी तल्ले के लिए ए. आई. सी. सी. ने १५०) रुपये महीना किराया दिया है।

शायद इस खत के कुछ अंशों से आपको तकलीफ पहुंचे, लेकिन आप यह भी न पसंद करते कि मैं अपने दिल की बात आपसे छिपाऊं।

सप्रेम आपका,
जवाहर

[स्वराज्य भवन ट्रस्ट का निर्माण मैंने अपने पिताजी की इच्छानुसार किया था, जिनका कुछ वर्ष पहले देहान्त होगया था। ट्रस्ट हमारे इलाहाबाद के कौटुम्बिक घर के लिए था।]

१०४. महात्मा गांधी की ओर से

१७ अगस्त १९३४

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा भावपूर्ण और मर्मस्पर्शी पत्र मिला। उसका उत्तर मेरी सामर्थ्य से कहीं अधिक लम्बा होना चाहिए।

मुझे सरकार से अधिक शराफत की आशा थी। किन्तु तुम्हारे मौजूद रहने ने कमला के लिए और साथ ही मामा के लिए जो काम किया वह किसी दवा या डाक्टर से नहीं हो सकता था। मुझे आशा है कि तुम जितने थोड़े-से दिनों की अपेक्षा कर रहे हो, उनसे अधिक ठहरने दिये जाओगे।

तुम्हारे गहरे दुःख को मैं समझता हूं। अपनी भावनाओं को पूरी तरह और आजादी के साथ प्रकट करके तुमने बिल्कुल ठीक किया है, परन्तु मुझे पूरा विश्वास है कि हमारे सामान्य दृष्टिकोण से लिखित बात को अधिक गहराई से अध्ययन करने पर तुम्हें पता चल जायगा कि तुमने जो इतना सारा

दुःख और निराशा का अनुभव किया है उसके लिए काफी कारण नहीं है। मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूं कि तुमने मुझमें अपना साथी खोया नहीं है। मैं वही हूं जैसा तुम मुझे १९१७ में और उसके बाद से जानते हो। मुझमें वही लगन है जोकि सामान्य लक्ष्य के लिए तुमने मुझमें पाई थी। मुझे देश के लिए पूरे अर्थ में सम्पूर्ण स्वाधीनता चाहिए और प्रत्येक प्रस्ताव, जिससे तुम्हें पीड़ा हुई है, उसी लक्ष्य को ध्यान में रखकर तैयार किया गया है। इन प्रस्तावों के लिए और उनकी सारी कल्पना के लिए पूरी जिम्मेदारी मेरी है।

लेकिन मेरा विचार है कि मुझे समय की आवश्यकता को पहचान लेने की अटकल आती है। ये प्रस्ताव उसीका परिणाम हैं। अलबत्ता तरीके या साधन पर हमारे जोर देने में अन्तर है। मेरेलिए साधन उतने ही महत्वपूर्ण हैं, जितना लक्ष्य, बल्कि एक तरह से साधन अधिक महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि उनपर तो हम कुछ नियन्त्रण रख सकते हैं। अगर साधनों पर हमारा काबू न रहे तो लक्ष्य पर वह कहां से रह जायगा!

'विचारहीन बातों' के बारे में प्रस्ताव को निर्विकार होकर जरूर पढ़ो। समाजवाद के विषय में उसमें एक भी शब्द नहीं है। समाजवादियों का अधिक-से-अधिक लिहाज रखा गया है, क्योंकि उनमें से कुछके साथ मेरा घनिष्ठ परिचय है। क्या मुझे उनका त्याग मालूम नहीं है?

मगर मैंने देखा है कि वे सब-के-सब जल्दी में हैं। क्यों न हों? बात इतनी ही है कि यदि मैं उनकी तरह तेज नहीं चल सकता तो मुझे उनसे कहना पड़ता है कि ठहरो और मुझे अपने साथ ले चलो। अक्षरशः मेरा यही रवैया है। मैंने शब्दकोश में समाजवाद का अर्थ देखा है। परिभाषा पढ़ने से पहले जहां मैं था उससे आगे नहीं पहुंच सका। तुम बताओ, पूरा अर्थ जानने के लिए मुझे क्या पढ़ना चाहिए? मैंने मसानी की दी हुई पुस्तकों में से एक पुस्तक पढ़ी है और अब मैं अपना सारा फालतू समय नरेन्द्रदेव की सिफारिश की हुई पुस्तक पढ़ने में लगा रहा हूं।

तुम कार्य-समिति के सदस्यों के साथ कठोरता कर रहे हो। वे जैसे भी हैं, हमारे साथी हैं। आखिर तो हमारी एक स्वतन्त्र संस्था है। यदि वे विश्वास-पात्र नहीं हैं तो उन्हें हटा देना चाहिए। परन्तु जो कष्ट कुछ दूसरे लोग सह चुके हैं, उन्हें वे न सह सकें तो इसके लिए उन्हें दोष देना अनुचित है।

विस्फोट के बाद हम रचना चाहते हैं। कदाचित् हमारा मिलना न हो, इसलिए अब मुझे ठीक-ठीक बता दो कि तुम मुझसे क्या कराना चाहते हो। और तुम्हारे ख्याल से तुम्हारे विचारों का सबसे अच्छा प्रतिनिधि कौन होगा।

दुःख की बात यह है कि मैं तो उपस्थित नहीं था। वल्लभभाई थे। तुम्हारे रवैये से क्रोध प्रकट होता है। तुम्हें ट्रस्टियों पर विश्वास रखना चाहिए कि वे अपना फर्ज अदा करेंगे। मैं नहीं समझता कि कोई बेजा बात हुई। मैं इतना व्यस्त था कि उसपर एकाग्रता से ध्यान नहीं दे सका। अब मैं क़ागज़ात और हर चीज का अध्ययन करूंगा।

बेशक तुम्हारी भावनाओं का आदर दूसरे ट्रस्टी पूरी तरह करेंगे। यह आश्वासन देने के बाद मैं तुमसे कहूंगा कि इस मामले को इस प्रकार व्यक्तिगत न समझो जैसा तुमने समझा है। यह तुम्हारे उदार स्वभाव के अधिक योग्य होगा कि पिताजी की स्मृति के लिए जितना लिहाज तुमको है उतना ही अपने साथी ट्रस्टियों को होने का श्रेय दे सको। पिताजी की स्मृति का संरक्षक राष्ट्र को बना दो और तुम राष्ट्र के एक अंग बन जाओ।

आशा है, इन्दू अच्छी तरह होगी और उसे अपना नया जीवन पसन्द होगा। कृष्णा का क्या हाल है ?

सस्नेह,

बापू

१०५. महात्मा गान्धी की ओर से

वर्धा

२२ नवम्बर १९३४

प्रिय जवाहरलाल,

कुछ दिन हुए मैंने तुम्हें पत्र भेजा था, जिसमें केवल तुम्हारे स्वास्थ्य के समाचार पूछे थे। माताजी कल यहां आई थीं। कहती थीं कि तुम्हें कमला के लिफाफे में भेजे हुए पत्रों के सिवा और पत्र नहीं मिलते। मैं जानना चाहता हूं कि तुम्हारे पत्र-व्यवहार के लिए क्या नियम हैं ? लिखो, तुम्हारे क्या हाल-चाल हैं और तुम अपना समय किस तरह बिता रहे हो।

सस्नेह,

बापू

१०६. रवीन्द्रनाथ टैगोर की ओर से

[मेरी पत्नी का स्वास्थ्य तेजी से बिगड़ने के कारण उन्हें इलाज के लिए यूरोप भेजने का निश्चय किया गया। मैं उस समय अल्मोड़ा जेल में था और वहीं रहा, यद्यपि उनको विदाई देने के लिए एक दिन को भुवाली सैनेटोरियम जाने की अनुमति मुझे मिल गई थी। मेरी बेटी इंदिरा, जो उन दिनों शांतिनिकेतन में थी, अपनी मां के साथ यूरोप गई थी।]

'उत्तरायण'
शांतिनिकेतन, बंगाल
२० अप्रैल १९३५

प्रिय जवाहरलाल,

हमने भरे हुए हृदय से इंदिरा को विदा किया। इस स्थान के लिए कितनी उपयोगिता थी उसकी! मैंने बड़े ही ध्यान से उसे देखा है और तुमने जिस ढंग से उसका लालन-पालन किया है, उसकी मैं सराहना करता हूं। उसके समस्त शिक्षक एक स्वर में उसकी प्रशंसा करते हैं और मैं जानता हूं कि छात्रों में वह बहुत ही लोकप्रिय है। मुझे आशा है, परिस्थिति सुधरेगी और वह शीघ्र ही यहां लौटकर अपनी पढ़ा-लिखाई में लग सकेगी।

तुम्हारी पत्नी की बीमारी की कल्पना करके मुझे कितनी वेदना होती है, मैं तुम्हें बता नहीं सकता। लेकिन मुझे विश्वास है कि समुद्र का प्रवास और यूरोप की चिकित्सा से उन्हें बहुत लाभ पहुंचेगा और वह शीघ्र अपने पूर्व स्वास्थ्य को प्राप्त कर लेंगी।

शुभाशीर्वाद सहित,

तुम्हारा,
रवीन्द्रनाथ टैगोर

१०७. महात्मा गान्धी की ओर से

[यह पत्र और बाद के कुछ पत्र मेरे पास जर्मनी में भेजे गए थे। मेरी पत्नी का स्वास्थ्य बिगड़ जाने के कारण मुझे अल्मोड़ा जिला जेल से अचानक रिहा कर दिया गया था। वह उस समय जर्मनी में ब्लैक फोरेस्ट के सैनेटोरियम में थीं। रिहाई के तुरन्त बाद मैं उनके पास चला गया था।]

वर्धा
३ अक्तूबर १९३५

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारे पत्र घड़ी की-सी नियमितता से आते हैं और एक देन जैसे लगते हैं। मैं देखता हूं कि कमला बड़ी बहादुरी से प्रयत्न कर रही है। इसका फल मिलेगा। प्राकृतिक चिकित्सा के लिए मेरा पक्षपात तुम्हें मालूम है। स्वयं जर्मनी में अनेक प्राकृतिक चिकित्सालय हैं। सम्भव है, कमला का मामला उस मंजिल से गुजर गया हो। परन्तु कौन जाने कब क्या होता है। मुझे ऐसे मामले मालूम हैं जो चीर-फाड़ के काबिल बताये जाते थे, लेकिन प्राकृतिक चिकित्सा से अच्छे होगये। जैसा भी है, मैं अपना अनुभव तुम्हें लिख रहा हूं। अगले वर्ष के लिए ताज पहनने के बारे में तुम्हारा पत्र हर्षदायक था। तुम्हारी स्वीकृति पाकर मुझे प्रसन्नता हुई। मुझे विश्वास है कि इससे बहुत-सी कठिनाईयां हल हो जायंगी और देश के लिए यही सबसे ज्यादा सही चीज हो सकती थी।

लाहौर में तुम्हारी अध्यक्षता लखनऊ की अध्यक्षता से बिल्कुल भिन्न वस्तु थी। मेरी राय में लाहौर में हर बात में रास्ता साफ था। लखनऊ में किसी भी बात में ऐसा नहीं होगा। परन्तु मेरे खयाल से उस परिस्थिति का सामना जितनी अच्छी तरह तुम कर सकोगे और कोई नहीं कर सकेगा। भगवान तुम्हें यह भार उठाने की पूरी शक्ति दे।

मैं तुम्हारे अध्यायों को अधिक-से-अधिक तेजी के साथ पढ़ रहा हूं। वे मेरे लिए बड़े दिलचस्प हैं। इससे अधिक अभी नहीं कहूंगा।

इस पत्र के साथ तुम सबके लिए हम सबका प्रेम।

बापू

१०८. सुभाषचंद्र बोस की ओर से

रेस्ट लागेरंड, हफ्गास्टाइन्
४ अक्तूबर १९३५

प्रिय जवाहर,

तुम्हारे २ और ३ तारीख के पत्र मिले।

[illegible] सर्जन की रिपोर्ट पढ़कर मुझे बड़ी खुशी हुई। मैं यही आशा करता

हूं कि उनका चिकित्सा-विज्ञान रोगी की इतनी मदद कर सकेगा कि वह अपनी फेफड़ों की शिकायत पर काबू प्राप्त कर सके। मैं नहीं जानता कि तुमने श्रीमती नेहरू को किसी दूसरी जगह हटाने की संभावना के बारे में उनकी राय पूछी है अथवा नहीं। अगर मैं तुम्हारी परेशानी में कुछ भी काम आ सकूं तो मुझे उम्मीद है कि तुम मुझे बुला भेजने में संकोच न करोगे।

तुमने मेरी पुस्तक में जो गलती बताई है, उसके लिए मैं आभार प्रकट करता हूं। जैसाकि तुम कहते हो, उसमें तथ्य की और भी गलतियां हो सकती हैं, किन्तु मेरी उम्मीद यही है कि ये गलतियां ज्यादा गंभीर नहीं हैं। बदकिस्मती से मुझे ज्यादातर अपनी याददाश्त से काम चलाना पड़ा और खासकर तारीखों के बारे में मुझे ज्यादा दिक्कत रही। उस समय का न तो कोई साहित्य मुझे मिल पाया और न कोई ऐसा व्यक्ति मेरी पहुंच के भीतर था जिसकी मदद मैं ले सकता। पंडित मोतीलालजी की मृत्यु की ठीक तारीख याद करने के लिए मैंने अपने दिमाग पर काफी समय तक जोर डाला, किन्तु मैं नाकामयाब ही रहा। पुस्तक में तुम छापे की अशुद्धियां (मुद्रक के भूतकी) देखोगे जो कि प्रूफ ठीक तरह से न देखे जाने के कारण हुई हैं। सिर्फ एक ही बार मैं प्रूफ पढ़ पाया और वह भी बड़ी जल्दी में, कारण मुझे जल्दी ही भारत के लिए रवाना होना था। इसके अलावा, पुस्तक काम के भारी दबाव के बीच लिखी गई और उस समय मेरी तबीयत भी कुछ ज्यादा अच्छी न थी। तुम्हारे द्वारा बताई हुई गलतियों को मैं सावधानी के साथ नोट कर लूंगा, ताकि अगले संस्करण में उनको दुरुस्त किया जा सके।

मैं इसके साथ उस पत्र की नकल भेज रहा हूं जो मैंने 'मैंचेस्टर गार्जियन' को भेजा था। यह पहली अक्तूबर को प्रकाशित हुआ है।

तुम्हें अबतक यह खबर मिल चुकी होगी कि अबीसीनिया में लड़ाई शुरू हो गई है। सवाल सिर्फ यही है कि क्या यह लड़ाई इटली और इंग्लैण्ड की लड़ाई का रूप ले लेगी?

तुम्हारा,
सुभाष

१०९. रवींद्रनाथ टैगोर की ओर से

शांतिनिकेतन
९ अक्तूबर १९३५

प्रिय जवाहरलाल,

हम लोग वड़ी व्यग्रतापूर्वक समाचार-पत्रों में तुम्हारी पत्नी की बीमारी के समाचार देखते रहे हैं और हालत में कुछ सुधार होने के संकेतों के अनुकूल लक्षणों की प्रतीक्षा करते रहे हैं। मेरी हार्दिक आशा है कि उन्होंने अपने जीवन के संपूर्ण उतार-चढ़ावों में जिस अपूर्व मानसिक शक्ति का परिचय दिया है वह उनकी सहायक होगी। उन्हें मेरी मंगलकामनाएं सूचित कर दें।

हर बार जाड़ों में विश्वभारती मुझे झकझोरकर अपने साधनों की अल्पता की याद दिला देती है, क्योंकि इसी मौसम में मुझे धन-संग्रह के लिए वाहर जाने का प्रयत्न करना पड़ता है। लोगों का मनोरंजन करने के वहाने या ऐसे लोगों की उदारता को जगाने की चेष्टा द्वारा, जो किसी प्रकार भी उदार नहीं हैं, यह भीख मांगना—मेरे लिए अत्यन्त ही अप्रिय परीक्षा की भांति है। मैं कोई शिकायत किये बिना ही अपमान और व्यर्थता के इस कांटों के ताज को स्वीकार करके एक प्रकार की शहादत के भाव से प्रसन्न होने का प्रयत्न करता हूं। सान्त्वना के लिए क्या मुझे यह नहीं सोचना चाहिए कि अपने जीवन और निजी स्वाधीनता से भी प्यारे लक्ष्य के लिए तुम स्वयं क्या-क्या नहीं सहन कर रहे हो? पर एक सवाल प्रायः मुझे परेशान करता रहता है कि मेरे लिए उपयोगी क्या यह है कि कृपण संरक्षकों की मेज से दया के टुकड़ों को परिश्रमपूर्वक बीनने में अपनी शक्ति चुका दूं, या यह कि निराशाएं जमा करने के अपमान से अलग रहकर अपने मन की ताजगी बनाये रक्खूं। पर शायद यह अप्रिय कार्य से बचने का मेरा बहाना-भर है। मैंने महात्माजी से सहयोग की मांग की थी, जो उन्होंने कृपापूर्वक स्वीकार कर ली है। निस्संदेह उनके प्रताप के सहारे कहीं अधिक सफलता की संभावना है, जिसकी अपने बल-बूतें तो मैं कभी आशा ही नहीं कर सकता। तुमसे यह कहना न भूल जाऊं कि सर तेजबहादुर ने भी मुझे सहयोग का वचन दिया है।

प्रिय इंदिरा को मेरा स्नेह-स्मरण कहना। आशा करता हूं कि कभी-न-

कभी उसे फिर से हमारे आश्रम में आने और उन कुछेक महीनों की स्मृति को नया करने का अवसर मिलेगा, जो उसने यहां बिताये थे और हमें सुखी किया था।

स्नेहसहित,

तुम्हारा,
रवीन्द्रनाथ टैगोर

११०. ई. स्टॉग्डन की ओर से

दी विकारेज,
हैरो
५ नवम्बर १९३५

प्रिय नेहरू,

क्या यह सम्भव है कि आप शनिवार को एक बजे यहां आकर हम लोगों के साथ दोपहर को भोजन करें? आपसे फिर से मिलकर हमें बड़ी खुशी होगी और मैं आपको आपका उस समय का फोटो दिखाऊंगा जब आप हैरो में एक विद्यार्थी थे। तब आप बड़े सुन्दर लगते थे। मेरा निवास बिलयार्ड के ऊपरवाली पहाड़ी की चोटी पर है और मेरी पत्नी को आपसे मिलकर बड़ी खुशी होगी।

आपका,
ई. स्टॉग्डन

अब मैं यहां का पादरी हूं, स्कूल का मास्टर नहीं।

१११. हेरल्ड. जे. लास्की की ओर से

निजी और गोपनीय

दी लंदन स्कूल ऑव इकोनोमिक्स
एंड पोलिटिकल साइंस,
लंदन, डब्लू. सी.,
६ नवम्बर १९३५

प्रिय नेहरू,

मुझे पता चला है कि आपपर इस बात का जोर डाला गया है कि आप हैलीफैक्स से मिलकर भारत की स्थिति पर विचार-विनिमय करें। मुझे उम्मीद है कि आप ऐसा तबतक नहीं करेंगे जबतक कि वह

आपसे इसके लिए खास तौर से लिखकर प्रार्थना न करें, वरना इससे बड़ी आसानी से जबर्दस्त गलतफहमी फैल सकती है, जो कि अत्यन्त हानिकारक होगी ।

हार्दिक भावनाओं सहित,

आपका,
हेरल्ड जे. लास्की

११२. सी. एफ. एन्ड्रूज की ओर से

पेमब्रोक कॉलेज,
केम्ब्रिज
६ नवंबर १९३५

प्रिय जवाहरलाल,

मैंने आपकी दोनों किताबों के कुछ शीर्षक चुनकर यहां-वहां से पढ़ना आरम्भ किया, लेकिन अब ऐसा लगता है कि आपने जो कुछ भी लिखा है उसके प्रति न्याय करने के लिए मुझे आपकी पुस्तकें ठीक तरह से पूरी-पूरी पढ़ लेनी चाहिए और उसके बाद कुछ अच्छे अंश चुनकर 'ऐलेन एण्ड अनविन' के सामने सुझाव की तरह रखने चाहिए। मैं सचमुच समझता हूं कि ऐसा ही होना चाहिए। एडिनबरा जाते और आते समय मुझे इसके लिए आसानी से समय मिल जायगा। कहने का मतलब यह कि मुझे रेल में कुल मिलाकर करीब-करीब दो पूरे दिन मिल जायंगे।

दोपहर बाद से ही मैं इन दो जिल्दों को देख रहा हूं और समझता हूं कि इनमें से कुछ खास हिस्सों को पसन्द करके चुन लेना बहुत ही मुश्किल काम होगा और इनके लिए कोई उपयुक्त नाम ढूंढ़ना तो और भी अधिक कठिन होगा। 'ऐलेन एण्ड अनविन' को आपने आत्मकथा की जो सामग्री दी है उसमें पता नहीं आजकल के भारतीय इतिहास के बारे में आपके विचार कहांतक आ पाये हैं। देर-सवेर 'ऐलेन एण्ड अनविन' वाले जरूर मुझसे सलाह लेंगे और तब मुझे आपकी उस पांडुलिपि को पढ़ने का अवसर मिलेगा। मैं जानता हूं कि आप भी यही चाहेंगे कि मैं उसे पढ़ूं। चुनने का यह काम अन्त में आपको ही दिया जायगा और यह सबसे ज्यादा जरूरी है कि आप स्वयं अनुभव करें कि जो कुछ भी अंतिम रूप से चुना जाय उसमें आप

अपनेको ठीक-ठीक अभिव्यक्त कर पाये हों। वह आपका अपना चुनाव होगा, मैं तो सिर्फ सुझाव दे सकता हूं।

भारतवर्ष के लिए यह पुस्तक बहुत ही मूल्यवान होगी। जैसाकि मुझे खयाल है, मैंने आपसे पूना में मिलने पर कहा था कि प्रमुख व्यक्तियों में से अकेले आप ही इस बात को सहज भाव से जानते दिखाई देते हैं कि पश्चिम-वाले किस बात को समझ सकते हैं और किस बात का वे आसानी से अनुसरण कर सकते हैं। बापू के लेखों को बार-बार संक्षिप्त करने और समझाने की ज़रूरत पड़ी और शुरू-शुरू में रोम्यां रोलां जैसा प्रथम कोटि का प्रतिभाशाली व्यक्ति ही उनके विचारों को ठीक तरह से स्पष्ट कर सका। इसके बाद मेरे लिए आगे बढ़ना आसान था। लेकिन बापू को समझना हमेशा मुश्किल है। गुरुदेव भी जब पद्य से हटकर गद्य लिखने लगते हैं तब उन्हें समझना कठिन हो जाता है। इस समय डा. सीतारामैया कांग्रेस की रजत-जयन्ती के लिए 'कांग्रेस का इतिहास'[1] लिख रहे हैं, लेकिन अंग्रेजी पाठकों के लिए उसे समझना बिल्कुल असम्भव है। डा. सीतारामैया यह मानकर चले हैं कि पढ़ने-वालों को भारतीय शब्दों के मूल अर्थ का पूरा-पूरा ज्ञान है और उन्होंने बहुत ही विस्तार के साथ लिखा है। इसके विपरीत जैसे ही मैंने 'जेल की खिड़की से' पढ़ा, मुझे यह स्पष्ट होगया कि इसे यूरोप में लोग बहुत आसानी से समझ जायंगे। मैंने एक नज़र में ही देख लिया है कि इन दो पुस्तकों में बहुत काफी सामग्री है, बशर्ते कि उसे सिलसिलेवार ढंग से चुनकर रखा जाय।

मुझे भय है कि बेडनवाइलर लौटने पर आपको कड़ी मेहनत करनी पड़ेगी। लेकिन ऐसा फौरन ही न कीजियेगा, क्योंकि इन दिनों इंग्लैंड में आपकी काफी शक्ति लग चुकी होगी और इस तरह के चयन-कार्य के लिए यह ज़रूरी है कि आप अच्छी-से-अच्छी मानसिक स्थिति में हों।

मैं लिखता ही चला गया हूं, लेकिन इससे आपको यह मालूम हो जायगा कि इस मामले में मुझे कितनी गहरी दिलचस्पी है और मैं इसे कितना जरूरी समझता हूं। एडिनबरा लौटते ही मैं आपको बेडनवाइलर के पते पर

---

[1] यह पुस्तक हिन्दी में 'सस्ता साहित्य मंडल' द्वारा प्रकाशित हुई है।

पत्र भेजूंगा। केम्ब्रिज में आपके साथ न हो सकने के कारण बड़ी निराशा हुई है। कुछ नवयुवक अर्थशास्त्री हैं, जिनसे मैं आपको खास तौर से मिलाना चाहता था, लेकिन जब आप यहां फिर आयेंगे तबतक यह और भी स्पष्ट हो जायगा कि इन नवयुवकों में कौन सबसे अधिक मिलने योग्य हैं।

आपका,
चार्ली

[इसमें जिन पुस्तकों का जिक्र है, वे संभवतः मेरे निबंधों और फुटकर रचनाओं के दो संग्रह थे और उन्हींमें से कुछ अंश छांटने की बात थी।]

११३. सी. एफ. एन्ड्रूज की ओर से

पेमब्रोक कॉलेज
केम्ब्रिज
७ नवंबर १९३५

प्रिय जवाहरलाल,

आपकी 'विश्व-इतिहास की झलक'[1] को पढ़ते-पढ़ते मेरे मन में एक बहुत बड़ा विचार आया और उसे मैं आपके सामने रख देना चाहता हूं।

(अ) जिन दो संस्कृतियों ने पशु-बल को स्वभावतः बहुत ही नीचा स्थान दिया है और उसे असांस्कृतिक तथा भद्दा माना है, उन दोनों को ही—अर्थात् भारत और चीन को—कष्ट भोगना पड़ा है। उनके साथ छल किया गया है और उनका दमन किया गया है, क्योंकि उन दोनों में कोई बुनियादी कमज़ोरी मौजूद रही है।

(ब) जिन दो संस्कृतियों ने पशु-बल को खुल्लमखुल्ला मान्यता दी है उन्हें भी अर्थात यूरोप और इस्लाम को भी—दूसरे रूप में कष्ट भोगना पड़ा है और जब कभी शांतिप्रिय संस्कृतियों में कोई कमज़ोरी आई है तभी वे उनपर विजय पाने में सफल हुई हैं।

तो क्या कोई ऐसी शान्तिप्रिय संस्कृति हो सकती है, जो अपेक्षाकृत अधिक पाशविक लोगों द्वारा दबाई जाकर भी कष्ट का अनुभव न करे? मुझे इसमें शंका है।

---

१. हिन्दी में 'सस्ता साहित्य मंडल' द्वारा प्रकाशित।

शायद आपने इस विषय पर कहीं कुछ विचार प्रकट किया हो। कितना अच्छा होता, यदि इस वार मैं आपसे विचार-विनिमय करने के लिए केम्ब्रिज रुका होता। सवाल स्वयं में शायद बहुत ही सामांन्य है। 'हरिजन' में मैंने बापू का उत्तर पढ़ा है, लेकिन मैं व्यक्ति की दृष्टि से नहीं, बल्कि वैज्ञानिक ढंग से एक पूरी संस्कृति की बात सोच रहा हूं, इससे कम किसी बात की नहीं। क्या मुसोलिनी का यह कहना ठीक है कि शांतिवादी सिद्धान्त से नैतिक निर्बलता का जन्म होता है ?

आपका,

चार्ली

फौरन ही उत्तर देने की चिंता न कीजियेगा, लेकिन जब कभी बाद में लिखें तव यह जरूर वतायें कि इस बारे में आप क्या सोचते हैं ?

११४. लार्ड लोथियन की ओर से

[लार्ड लोथियन ब्रिटेन के राजनैतिक क्षेत्र में एक प्रमुख व्यक्ति थे। वह इस बात के लिए उत्सुक थे कि ब्रिटिश पार्लमेंट द्वारा स्वीकृत सन् १९३५ के संविधान को हम मंजूर करलें और कार्यान्वित करें। इस संविधान ने भारत को प्रान्तीय स्वायत्तता प्रदान की थी।]

८८ सेंट जेम्स स्ट्रीट
लन्दन, एस. डब्लू-१
८ नवंबर १९३५

प्रिय पंडित जवाहरलाल नेहरू,

मेरे मित्र एडवर्ड टामसन से पता चला कि अव आप इंग्लैंड में हैं। क्या यह सम्भव होगा कि मैं आपसे मिलने आऊं या भारत लौटने से पहले आप मेरे साथ चाय पियें ? पिछले कई साल से मैं आपके लेख पढ़ता रहा हूं और मेरी बड़ी इच्छा है कि भारत की स्थिति के बारे में आपसे बातचीत करूं। दुर्भाग्य से इन दिनों मैं आम चुनावों के काम में आकंठ डूबा हुआ हूं। आज रात में कार्नवाल जा रहा हूं। रविवार की सुबह लन्दन से गुजरूंगा, पर मैं यहां मंगल के तीसरे पहर तथा बुधवार को सुबह होऊंगा। क्या इन दिनों में से किसी दिन आपसे मिलना हो सकेगा या आप एक रात के लिए

इंग्लैंड के इस अति सुन्दर ऐलिजवेथन भवन, ब्लिकलिंग हॉल, नारफ़ॉक आना पसन्द करेंगे ? वहांपर मैं खाली रहूंगा, सिर्फ देहाती जिलों में हर शाम एक चुनाव-भाषण के लिए ही जाऊंगा। उस सुन्दर वातावरण में आप शांति से आराम कर सकेंगे। तेजवहादुर सप्रू यहांपर हमेशा मेरे पास आकर ठहरते हैं। नार्विच से यह जगह पन्द्रह मील दूर है। मैं आपको लेने के लिए एक कार नार्विच भेज ूंगा। दुर्भाग्य से कल मेरा दफ्तर बन्द रहेगा, लेकिन व्हाइट हॉल २२५१ पर भेजा सन्देश रविचार को सुवह मुझे मिल जायगा या आपको मेरा सेक्रेटरी १७ वाटरलू प्लेस पर सोमवार को सुबह दस बजे के बाद बराबर मिलेगा।

आपका,
लोथियन

पण्डित जवाहरलाल नेहरू
माउंट रायल
मार्बल आर्च, डब्ल्यू-२

११५. एफ़. लेस्नी की ओर से

[प्रोफेसर लेस्नी चेकोस्लोवाकिया की राजधानी प्राग् में पौर्वात्य संस्था के अध्यक्ष थे। वह एक बहुत बड़े भाषा-पंडित और भारतीय विद्याओं के ज्ञाता थे।]

इन्डो-चेकोस्लोवाक सोसाइटी ऑव
दी ओरियन्टल इंस्टीट्यूट,
प्राग् ३, व्लास्का १९,
चेकोस्लोवाकिया, प्राग्
१९ नवम्बर १९३५

प्रिय महोदय,

आपने अपनी पुस्तक 'विश्व-इतिहास की झलक' की जो प्रति मेरे पास कृपापूर्वक भेजी है, उसके लिए मैं आपको हार्दिक धन्यवाद देता हूं। इससे पहले ही मुझे श्री नम्बियार की प्रति को पढ़ने का अवसर मिला था, जिसके लिए मैं उनका कृतज्ञ हूं। इस प्रकार अब इस पुस्तक का अध्ययन मैंने पूरा कर लिया है। विश्व-इतिहास की मुख्य धाराओं की

आपकी व्यापक ग्रहणशीलता और उनके प्रति आपके स्वयं के दृष्टिकोण से मैं विशेष रूप से प्रभावित हुआ हूं। इसके अतिरिक्त आपके पत्रों में एक बहुत ही गहरा व्यक्तिगत पुट है। मुझे आपको दो और पुस्तकों के लिए भी धन्यवाद देना है, विशेष रूप से 'पिता के पत्र पुत्री के नाम' के लिए। यह पुस्तक सचमुच ही निराली है।

आपने इंडियन नेशनल कांग्रेस के सेक्रेटरी श्री कृपालानी से मेरे पास कुछ और भी पुस्तकें भेजने का अनुरोध किया है और इस बारे में मुझे उन महानुभाव से एक बड़ा ही सौजन्यभरा पत्र मिला है।

मुझे पक्का विश्वास है कि आपकी बहुमूल्य सहायता से हमारी सोसाइटी अपना उद्देश्य प्राप्त करने में—अर्थात् आपके महान देश के साथ संबंध बनाने में—सफल होगी।

वास्तव में मुझे यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई है कि श्रीमती नेहरू का स्वास्थ्य अब काफी सुधर गया है और वह अब हर तरह के खतरे से बाहर हैं। कृपया उन्हें मेरा हार्दिक अभिवादन दीजिये।

आपकी लड़की इन्दिरा को मैं अलग डाक से अपने प्राग् के संबंध में एक पुस्तक भेज रहा हूं। शायद ये चित्र आपको निकट भविष्य में यहां पधारने की प्रेरणा दे सकें। हम आपको और आपके परिवार को अपने सुन्दर देश में देखकर बहुत ही प्रसन्न होंगे।

पुनः धन्यवाद और सादर अभिवादन।

सदव आपका सप्रेम,

एफ. लेस्नी

श्री जवाहरलाल नेहरू

११६. एडवर्ड टामसन की ओर से

[एडवर्ड टामसन ने एक प्रोफेसर की हैसियत से भारत में, मुख्यतः बंगाल में, लम्बे समय तक काम किया था। उन्होंने प्रथम महायुद्ध में सेवा की। उन्होंने भारतीय इतिहास पर अनेक पुस्तकें लिखी हैं और कुछ कविताएं और उपन्यास भी लिखे हैं। वह बंगला के अच्छे विद्वान थे। वह ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी में प्राध्यापक बन गये थे।]

लन्दन
२६ नवम्बर १९३५

प्रिय नेहरू (हमें शिष्टाचार की जरूरत नहीं),

एक महीने में मैं हिंदुस्तान जा रहा हूं, पर अप्रैल के आखिर तक लौट आऊंगा।

आपकी पत्नी बीमार हैं और आप अपनी किताब के लिए इधर-उधर घूम-फिर नहीं सकते। इसलिए आप समझें कि मैं किसी प्रकाशक की मदद करूं तो खुशी से अपनी पांडुलिपि आगामी अप्रैल में मुझे भेज दीजिये। मैं मदद कर सकता हूं और करूंगा। यह अलग बात है कि हममें मतैक्य नहीं है, पर आपने यह अधिकार पा लिया है कि आपकी बात पूरी-पूरी और सच्चाई के साथ सुनी जाय। जब समालोचना का समय आयेगा मैं तब भी सहायक हो सकूंगा।

मुझे आप थके हुए लगे। मैं खुद भी थका हुआ हूं, फिर मेरा स्वास्थ्य भी गिरा हुआ है, इसलिए मैं आपसे सहानुभूति रख सकता हूं। मैं ब्रिटेन और हिंदुस्तान के बीच दोस्ती चाहता हूं। इससे भी ज्यादा मैं यहां और हिंदुस्तान में एक उचित सामाजिक व्यवस्था का हामी हूं। मैं आशा करता हूं कि आप अपनी आत्मकथा और दूसरी पुस्तक में सामाजिक और आर्थिक प्रश्नों पर जरूर लिखेंगे। आप चाहें तो मेरा उपयोग भी कर सकते हैं। जो कुछ भी मैं कर सकता हूं, आपके लिए तैयार हूं। आशा है कि श्रीमती नेहरू जल्दी ही स्वास्थ्य लाभ करेंगी।

मैं एस. सी. बी. के लिए जो कुछ कर सकता था, बार-बार करता रहा हूं, लेकिन उच्च क्षेत्रों में लोग मुझे अधिक नहीं जानते।

आपका,
एडवर्ड टामसन

[एस. सी. बी. से मतलब सुभाषचन्द्र बोस से है। जिस पाण्डुलिपि का जिक्र है, वह शायद मेरी आत्मकथा की पाण्डुलिपि थी।]

११७. रिचर्ड बी. ग्रेग की ओर से

[रिचर्ड बी. ग्रेग एक अमरीकी हैं। उन्होंने अमरीका में औद्योगिक

व्यवसायों में भाग लिया था और बाद में वह गांधीजी की ओर बहुत अधिक आकर्षित हुए। वह भारत आये और कुछ समय गांधीजी के साथ रहे। उन्होंने खादी का अर्थशास्त्र आदि विषयों पर पुस्तकें लिखी हैं।]

ईलियट स्ट्रीट, साउथ नैटिक,
मसाचुसेट्स, यू. एस. ए.
३ दिसम्बर १९३५

प्रिय नेहरू,

१४ नवम्बर के पत्र और २० नवम्बर के पोस्टकार्ड के लिए धन्यवाद। मुझे खुशी है कि दोनों पुस्तकें आपको ठीक से मिल गईं।

मैं आपकी इस बात से सहमत हूं कि अगर अहिंसात्मक प्रतिरोध के साथ-साथ आर्थिक और सामाजिक क्रान्ति या सुधार का कोई कार्यक्रम न होगा तो अकेला अहिंसात्मक प्रतिरोध उन परिवर्तनों को ला सकने के लिए काफी नहीं होगा, जिनकी एक स्वस्थ समाज की रचना के लिए आवश्यकता होती है। गांधीजी के कार्यक्रम में जो एक बात मुझे पसन्द है वह यह है कि उसके साथ-साथ उसका आर्थिक अंग भी है, जिसकी सहायता से हर आदमी प्रति-दिन थोड़ा-थोड़ा काम कर सकता है। माना कि खद्दर और ग्राम-उद्योगों के कार्यक्रम अधूरे हैं, किन्तु उनमें अच्छी बात यह है कि वे अहिंसा के सिद्धान्त से मेल खाते हैं और उनसे किसानों की आर्थिक स्थिति पर निश्चित रूप से प्रभाव पड़ता है। अहिंसक प्रतिरोध के साथ-साथ सामाजिक और आर्थिक परिवर्तनों के इस मसले पर मैं काफी सोच-विचार करता रहा हूं और मेरा यह विश्वास है कि कार्यक्रम के इस दूसरे रचनात्मक आर्थिक अंग को और भी पूरी तरह से विकसित करना चाहिए।

अपने सामने एक स्पष्टतः सामाजिक लक्ष्य रखने के बारे में और उस लक्ष्य की प्राप्ति के साधनों के सम्बन्ध में आपके और गांधीजी के बीच जो पत्र-व्यवहार हुआ है उसे मैंने बड़ी दिलचस्पी से पढ़ा है। एक प्रतीक के रूप में और लोगों की शक्तियों को केन्द्रित करने तथा उन्हें प्रेरणा देने के साधन के रूप में भावी समाज की कोई रूपरेखा बना लेना मैं उपयोगी समझता हूं। लेकिन दो बातों की मुझे चिन्ता है। एक तो यह कि मानवीय मामले इतने जटिल होते हैं कि आगे के लिए ठीक-ठीक भविष्यवाणी कर सकना असम्भव

हो जाता है। यह निश्चित है कि भावी समाज के लिए हम चाहे कितनी भी पूर्ण योजना क्यों न बनावें वह कभी उस रूप में पूरी नहीं हो सकती, जिस रूप में हम उसे बनाते हैं। यह बात आज के सभी देशों के लिए सही है और उनमें रूस भी शामिल है। मैं समझता हूं कि यही बात हमेशा सही रहेगी। अगर हम मूल रूपरेखा पर बहुत कड़ाई के साथ चिपके रहने की कोशिश करेंगे तो हम प्रभावहीन बन जायंगे। हमें लचीला होना चाहिए और परिस्थितियां जैसे-जैसे बढ़ती और बदलती जायं उसीके अनुसार हमें उनका सामना करना चाहिए।

मेरी दूसरी शंका यह है कि यदि हमने भावी आदर्श राज्य के ब्यौरों को निश्चित करने में बहुत अधिक समय और मेहनत लगाई तो उसका हम पर वही प्रभाव पड़ेगा, जो ईसाइयों पर प्रभु के साम्राज्य की स्थापना के सिद्धान्त का पड़ा है। आज की वास्तविकता और आदर्श में जो अन्तर है वह आदर्श की प्राप्ति को इतने दूर भविष्य तक के लिए टाल देता है कि लोग उसे एक कोरे आदर्श के रूप में देखने लगते हैं और कोई ऐसी वस्तु नहीं मानते जिसे प्राप्त करने के लिए उन्हें बहुत बड़े त्याग करने की आवश्यकता है। निष्क्रियता और ढोंग के लिए यह एक बहाना बन जाता है। इसीलिए गांधी का साधन पर जोर देना मुझे बुद्धिमत्तापूर्ण लगता है। यदि साधन को इतना विकसित किया जाय कि उसमें अहिंसक प्रतिरोध के पूरक के रूप में प्रतिदिन की आर्थिक और सामाजिक चेष्टाएं भी शामिल हो जायं और यदि कार्यक्रम का प्रत्येक अंग दूसरे अंगों को क्रियान्वित करने की तैयारी तथा अनुशासन का काम दे तो क्या यह सम्भव नहीं कि हम ऐसे प्रतीक बना लें जो मानव की शक्ति को जागृत करने, केन्द्रित करने, कायम रखने और एक-दूसरे तक पहुंचाने में सफल हो सकें और जो भावी आदर्श समाजवादी राष्ट्र की रूपरेखा की ही भांति प्रभावशील होते हुए भी उसके उन दो खतरों से खाली हों, जिनकी मैंने ऊपर चर्चा की है?

आपके पत्र से मैं यह समझा कि जनसमुदाय के बारे में नेबूर का जो निराशावादी दृष्टिकोण है उससे आप सहमत हैं। अगर बात ऐसी है तो मैं ठीक-ठीक समझ नहीं पा रहा हूं कि आप और वह समाजवादी कैसे हो सकते हैं। समाजवाद में जनसाधारण से निश्चय ही एक ऊंचे और दृढ़ नैतिक व्यवहार

की अपेक्षा रखी जाती है। यह बात और है कि आप उसे अल्पसंख्यकों के हिंसात्मक कार्यों से स्थापित करना और कायम रखना चाहें। अगर समाजवाद इस तरह स्थापित किया और कायम रखा जाय तो उन अल्पसंख्यकों को आर्थिक उत्पादन के साधनों पर नियंत्रण रखना होगा। उस दशा में मैं उन्हें शासकवर्ग मानूंगा। उनके हिंसात्मक कार्यों से विरोध भड़केगा और उस हालत में फिर वही स्थिति आ जायगी जो सामान्यतः शासकवर्ग की हुआ करती है। इस स्थिति को हटाने के लिए (कम-से-कम कम्यूनिस्ट सिद्धान्त के अनुसार) और फिर से स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिए जनता को हिंसात्मक विप्लव करना होगा।

मुझे यह जानकर बड़ी खुशी हुई है कि आपकी पत्नी की हालत सुधर रही है। आशा है, यह सुधार लगातार चलता रहेगा। अलग डाक से मैं आपके पास अपने एक पैमफ्लेट की प्रति भेज रहा हूं, जिसे पता नहीं आपने देखा है या नहीं। इसका शीर्षक प्रकाशक ने लगाया था। मुझे दुःख है कि उस शीर्षक से गांधीजी के कार्यक्रम और समाजवाद में पारस्परिक विरोध का भान होता है। मैंने दोनों की आलोचना नहीं, तुलना करनी चाही है।

शुभ कामनाओं सहित,

आपका,

रिचर्ड बी. ग्रेग

फिर से—

मेरे मन में एक और शंका है। वह यह कि जनता को भावी समाज की विस्तृत रूपरेखा का ज्ञान कराने के लिए बहुत अधिक परिश्रम करना या जोर देना उचित ह या नहीं—वह रूपरेखा चाहे समाजवादी हो या किसी और ढंग की। किसी विशेष प्रकार का राजनैतिक या आर्थिक संगठन स्वयं में साध्य नहीं होता, बल्कि साध्य का एक साधन-मात्र होता ह। यह साध्य होता है जनता के लिए एक सम्पूर्ण और संतोषजनक जीवन की व्यवस्था। अगर किसी विशेष ढंग के राजनैतिक और आर्थिक संगठन पर अधिक बल दिया जाता रहे और उस ढंग के विस्तार के बारे में वर्षों तक प्रचार और शिक्षा देने का काम चलता रहे तो क्या वह स्वयं में साध्य नहीं मान लिया जायगा? वह एक ऐसा सिद्धान्त होगा जो अपने में इतनी शक्ति और इतने अधिकार

समेट लेगा और जो लोगों की दृष्टि में इतना महत्व प्राप्त कर लेगा कि लोग मानव-जीवन को अधिक समृद्धिशाली जीवन का साधन न मानकर उस साध्य का साधन मानने को तैयार हो जायंगे। उस भावी समाज की रूपरेखा भी अमरीका के संविधान की तरह लिखित रूप ग्रहण कर लेगी और कठोर बन जायगी, जिसमें भावी परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तन करने की क्षमता नहीं होगी। मैं समझता हूं कि इस दृष्टि से ब्रिटेन का अनलिखा संविधान अमरीका के लिखित संविधान से अधिक उपयोगी है। एक विशेष लिखित रूप ग्रहण करके पत्थर की तरह अपरिवर्तनीय बनने की बजाय वह लचीला और परिवर्तनशील है। यह तो सच है कि परिवर्तन अक्सर किसी-न-किसी बहाने से किया जाता है, फिर भी परिवर्तन किया जरूर जाता है। मैं समझता हूं कि समाजवादी आदर्श के सम्बन्ध में यदि लोग एक बार सामान्य रूप से एकमत हो जायं तो अधिक बुद्धिमानी इस बात में होगी कि जनता को मुख्य रूप से उन तरीकों को समझाने की चेष्टा की जाय, जिनसे वे शक्ति प्राप्त कर सकें। जब वे एक बार शक्ति प्राप्त कर लेंगे तब जो भी राजनैतिक या आर्थिक संविधान सबसे अधिक वांछनीय प्रतीत होंगे उन्हें ही वे ग्रहण कर लेंगे। यह सब मेरे मस्तिष्क में अभी प्रस्ताव रूप में ही है। यदि आपके पास समय हो और आप इनपर टीका करना पसन्द करें तो मैं आपकी इस सहायता के लिए कृतज्ञ रहूंगा।

आर. बी. ग्रेग

११८. लार्ड लोथियन की ओर से

ब्लिकलिंग हॉल,
ए्ल्स्हम, नारफॉक
६ दिसंबर १९३५

प्रिय श्री जवाहरलाल नेहरू,

मुझे पूर्ण आशा है कि आपके भारत लौटने से पहले हम लोगों के लिए बातचीत करना संभव होगा। दुर्भाग्य से मुझे जल्दी-से-जल्दी जनवरी में अमरीका जाना है। इसलिए मैं सोचता हूं कि क्या साल के शुरू में आपके इंग्लैंड में रहने का कोई अवसर हो सकता है? अगर ऐसा हो तो मैं सुझाव

दूंगा कि आप कुमारी अगाथा हैरीसन के साथ कुछ समय के लिए यहां आइये। इंग्लैंड भर में इस जगह पर बहुत सुन्दर मकान और बाग हैं और हम लन्दन के व्यस्त जीवन से दूर भी रहेंगे। कल मैं लॉर्ड हैलीफैक्स से मिला था। उन्होंने मुझसे कहा था कि अगर आप आ रहे हों तो उन्हें भी यार्कशायर से ब्लिकलिंग आकर रात बिताने में प्रसन्नता होगी।

मुझे पूर्ण आशा है कि हम लोग मिल सकेंगे। मुझे इसमें कोई शक नहीं कि भारत में घटी हाल की घटनाओं और आम राजनैतिक सवालों पर हमारे विचारों में बहुत-कुछ मतभेद होगा, लेकिन अच्छा या बुरा, भारत और इंग्लैंड के भाग्य अब भी काफी जुड़े हुए हैं और मेरा खयाल है कि इंग्लैंड के हम कुछ लोगों के लिए, जो भारत के मामलों में दिलचस्पी रखते हैं, यह बहुत महत्वपूर्ण है कि भारत के कुछ युवक नेताओं से, जो उस देश के भावी मानस और नीति का निर्धारण करें, हम व्यक्तिगत रूप से परिचित हों और मैं समझता हूं कि आपके लिए भी हम कुछ लोगों को जानना कम महत्वपूर्ण नहीं होगा। मुझे इसमें कोई शक नहीं कि आज मानव-मानव के बीच एक बड़ी महत्वपूर्ण दैवी शक्ति कार्य कर रही है। पुरानी अन्तर्राष्ट्रीय परम्परा और पुरानी आर्थिक प्रणाली टूटती जा रही है। जैसाकि हमेशा होता आया है, क्रान्तिकारी युगों में बहुत कम लोग नई विश्व-व्यवस्था को एक अंश से अधिक देख पाते हैं अथवा वहांतक पहुंचने का ठीक मार्ग ही जानते हैं। इससे समझौते पर पहुंचना बड़ा मुश्किल हो जाता है, प्रगति बड़ी मंद पड़ जाती है और दुखदायी संघर्ष बने रहते हैं। मैत्रीपूर्ण और व्यक्तिगत सम्पर्कों से भले ही तात्कालिक समझौता न हो सके, किन्तु इनसे आगे चलकर मतैक्य हो जाने की सम्भावना पैदा हो जाती है।

इसलिए मैं बहुत आशा करता हूं कि उस समय आपका इंग्लैंड आना सम्भव हो सकेगा। मेरी इच्छा है कि जहांतक संभव हो मैं अपने प्रस्थान को ४ जनवरी से आगे न टालूं, क्योंकि फिर १० दिन तक कोई अच्छा जहाज नहीं है। मैं तो यह चाहता हूं कि आप पहली जनवरी को यहां पहुंच जायं और लार्ड हैलीफैक्स को गुरुवार दूसरी तारीख की रात्रि को ठहरने के लिए बुला लिया जाय। तभी हम लोग शुक्रवार के तीसरे पहर लन्दन लौट सकेंगे और मैं अगले दिन अपना जहाज पकड़ सकूंगा। मुझे इसमें और भी खुशी

होगी, यदि आप और कुमारी हैरीसन तया अन्य लोग सप्ताह के अन्त तक ठहर सकें। मुझे उम्मीद है कि आप अपनी पुत्री को भी साथ ला सकेंगे। लेकिन मैं सोचता हूं कि वह बाहर होगी। कृपया अपने निर्णयों से मुझे जल्दी-से-जल्दी सूचित कीजिये, ताकि मैं अपनी योजना बना सकूं।

आपका,
लोथियन

श्री जवाहरलाल नेहरू,
पांशियों एहरहार्ड
बेडनवाइलर, जर्मनी

फिर से—

कृपया उत्तर १७ वाटरलू प्लेस, लन्दन, एस. डब्ल्यू १ पर दीजिये।

११९. लार्ड लोथियन के नाम

पांशियों ऐहरहार्ड,
बेडनवाइलर
९ दिसंबर १९३५

प्रिय लार्ड लोथियन,

आपका ६ तारीख का खत मुझे आज ही मिला है। समझ में नहीं आता कि हवाई-डाक के खत भी क्यों इतनी देर में पहुंचते हैं। जो हो, मैं जवाब भेज रहा हूं।

आपसे मिलने की मुझे बहुत उत्सुकता है, और आपके जो कई लेख मुझे देखने को मिले हैं, उनमें मेरी बड़ी दिलचस्पी रही है। अक्सर किसी सवाल पर आपके नज़रिये या जिस नतीजे पर आप पहुंचे हैं, उससे मैं एक-राय नहीं हो सका हूं; लेकिन उन्होंने मुझे हमेशा विचार करने के लिए उकसाया है और कभी-कभी मैं कुछ अंशों में सहमत भी रहा हूं। ऐसे लोगों से, जो विचार के नये रास्ते खोलते हैं और आदमी को दुनिया के छोटे-से कोने से, जिसमें औसत आदमी का दिमाग बंधा रहता है, कुछ ज्यादा देखने में मदद करते हैं, मिलकर हमेशा खुशी होती है। जैसाकि आप कहते हैं, थोड़े ही लोग इस छोटे-से कोने से बाहर देख पाते हैं, और आज की तकलीफ देनेवाली कशमकश ने तो इस तंग नजरिये को और भी बुरा बना दिया है। यह कभी भी बदकिस्मती की बात होती, लेकिन क्रांति के इस ज़माने में तो

यह और भी बदकिस्मती की बात बन गई है। मेरी समझ में भले इरादे के लोगों के आपसी और दोस्ती के ताल्लुकों से ही ये कशमकश दूर नहीं हो सकतीं। ज़ाहिर है, ये कशमकश गहरी हैं और मुझे लगता है, अच्छे-से-अच्छे लोग भी, जबकि प्राकृतिक शक्तियां एक-दूसरे के खिलाफ काम कर रही हों, बड़ा ही महत्वहीन पार्ट अदा कर बैठते हैं। जहांतक बन पड़े, हम इन संघर्षों की बुनियादी वजहों को समझने की कोशिश कर सकते हैं, और फिर उनको दूर करने की। लेकिन उन्हें अपने पूर्वाग्रहों और दलीय हितों से अलग हटकर देखना बहुत कठिन है। हम चाहे जितनी मीठी मुसकानें भरें, वे भीतर पैठे हुए पूर्वाग्रहों और उनसे पैदा हुए दुनिया के जुदे-जुदे नज़रियों को मिटा नहीं सकते। फिर भी दोस्ती के संपर्क बढ़ाने की कोशिश होनी चाहिए, क्योंकि इनके बिना, संसार जितना नीरस है, उससे भी ज़्यादा नीरस हो जायगा। निश्चय ही उनसे कुछ हद तक एक ऐसे वातावरण को बनाने में मदद मिलती है, जिससे आगे समझौता मुमकिन हो। ये सम्पर्क लोगों और दलों के बीच की कड़वाहट कम करते हैं। ये आदमी के क्षितिज को बड़ा बनाते हैं; और मिलने लायक आदमियों से मुलाकात करना ज़िंदगी की खास खुशियों में से एक है।

वास्तव में इस सबकी कीमत है और इसलिए मैं ऐसे ताल्लुकात बढ़ाने के हक़ में हूं। निजी तौर से, जहांतक मेरा ताल्लुक है, मेरे विश्वास मजबूत होते हुए भी मैं एक विद्यार्थी की नज़र से जिंदगी और उसके मसलों को देखने से महरूम नहीं हूं। दकियानूसी उसूलों से मुझे झुंझलाहट होती है, भले ही ये धार्मिक हों, या राजनैतिक या आर्थिक, और मेरा मन हमेशा ऐसे रास्तों की खोज करता रहता है, जिनपर मैं चल सकूं। मैं उन रास्तों को बंद करने की कोशिश नहीं करता। इससे मैं निजी ताल्लुकात का और भी स्वागत करता हूं। किताबों से मदद मिलती है, और बहुत सालों से मुझे उनसे बराबर ढांढस मिला; लेकिन पुस्तकों, विचारों और कामों के पीछे जो लोग हैं, उनसे निजी संबंध आना बड़ी अहमियत रखता है। किताबों में वह बात नहीं है।

मैं आपसे मिलना पसन्द करता। आपके दोस्ताना और सुखद खत ने मेरी मिलने की इच्छा को और भी बढ़ा दिया है। मैं इंग्लिस्तान के सुन्दर

घरों और देहातों को पसंद करता हूं और आपने जो क्लिकलिंग का बढ़ा-चढ़ा बयान किया है, वह मुझे सचमुच खींचता है, लेकिन दरअसल मैं वहां के आदमी को देखना चाहता हूं, वहां के घर को नहीं। मैं लार्ड हैलिफैक्स से भी मिलना पसन्द करता, हालांकि मैं आपसे इस बात को मंजूर करता हूं कि उन लोगों से, जिनका सरकारी तौर पर पिछले बुरे सपनोंवाले बरसों में भारत सरकार से ताल्लुक रहा है, मिलने में मुझे झिझक होती है। यह वक्त हमारे लिए बड़ा भयानक रहा है और मेरे लिए यह समझना मुश्किल है कि कोई संवेदनशील आदमी इसे बर्दाश्त कैसे कर सका, उसे मंजूरी देने की बात तो दूर रही। हिंदुस्तान में जो-कुछ सबसे अच्छा है उसे दबाने और कुचलने की बात की ओर मेरा उतना इशारा नहीं है, बल्कि जिस ढंग से ऐसा हुआ है, उसकी तरफ है। इसमें एक ऐसा भद्दापन और भौंड़ापन था और है कि मैं उसको सोच भी नहीं सकता था। और अचरज की बात तो यह है कि इंग्लिस्तान में शायद ही कोई ऐसा हो, जो यह महसूस करता हो या जिसे इसका अंदाज हो कि हिंदुस्तान के दिल और दिमाग़ पर कैसी गुज़र रही है।

मैं समझता हूं कि आखिरकार यह सब बीत जायगा। लेकिन इस असर डालनेवाली पृष्ठभूमि में निजी ताल्लुक के रूप में सोचना कुछ मुश्किल है। ऐसे आदमी से, जो तुम्हारा गला घोटना चाहता हो, हाथ मिलाना आसान नहीं होता है। बावजूद इसके, मुझे यकीन है कि वह वक्त आयगा जब हम लोग हाथ मिलावेंगे, और उस वक्त को जल्दी-से-जल्दी बुलाने की जिम्मेदारी हमपर है।

आपकी तजवीज से मैं बड़े लालच में पड़ गया हूं कि जनवरी के शुरू में मैं इंग्लिस्तान का सफर करूं, खास तौर पर आपसे मिलने के लिए। यह आपकी बड़ी भलमनसाहत है कि मुझसे मिलने की खातिर आपने अपने जाने को कुछ दिन टालने की बात लिखी है। लेकिन मेरी सारी इच्छा के बावजूद मुझे लगता है कि ऐसा करने के लिए मुझे अपने बहुत-से इन्तजाम, जोकि मैं पहले से ही कर चुका हूं, बदलने होंगे। सबसे बड़ा कारण तो मेरी पत्नी है। मैंने उस वक्त के आसपास उसके साथ रहने का खास तौर से वादा कर रक्खा था, क्योंकि हमारी बेटी भी उस समय हमारे साथ होगी। यूरोप

के कुछ हिस्सों से कई दोस्त भी आनेवाले हैं। इसके अलावा अगर मैं इंग्लिस्तान जनवरी के शुरू में जाऊं तो उसी महीने, बाद में फिर जाना नहीं हो सकता, जैसाकि मैंने इरादा किया था, और इससे वहां बहुत-से दोस्तों को मायूसी होगी। हिंदुस्तान मैं फरवरी के शुरू में चला जाऊंगा।

इसलिए आपके अमरीका जाने से पहले आपसे मिलने का इरादा मुझे अफसोस के साथ छोड़ना पड़ रहा है। मेरे लिए यह बड़ी ही मायूसी की बात ह। हो सकता है कि मैं यूरोप फिर गरमी के आखिर तक आऊं। अगर आया तो आपको जरूर खोज निकालूंगा।

मिस अगाथा हेरिसन ने लिखा है कि मैं मि. अलेक्स फ्रेजर से आपके घर पर मिल सकता था। उनसे न मिल सकना एक और अफसोस की वजह होगी। मैं पश्चिमी अफ्रीका के उनके बेजोड़ कालेज के बढ़िया काम को बड़ी ही दिलचस्पी से, हालांकि अस्पष्टता और फासले से, देखता रहा हूं।

आपका,

जवाहरलाल नहरू

लार्ड लोथियन,
१७ वाटरलू प्लेस, लंदन, एस. डब्ल्यू–१

१२०. रफी अहमद किदवई की ओर से

लखनऊ

९ दिसम्बर १९३५

प्रिय जवाहरलालजी,

आपका १५ नवम्बर का खत २८ को मसौली पहुंचा और मेरे २ दिसम्बर को वहां पहुंचने पर वह मुझे मिला। 'हवाई डाक से' के लेबुल पर 'रद्द किया गया' का निशान लगा था।

मुझे यह जानकर अफसोस हुआ कि कमलाजी की तंदुरुस्ती को फिर झटका लग गया। हम लोग बेचैनी से उनके जल्दी तंदुरुस्त होने की राह देख रहे हैं। हमें उम्मीद है कि वह जल्दी ही काफी ठीक हो जायंगी, जिससे आप जल्दी हिन्दुस्तान लौट सकें।

आज मैं इंतहा दर्जे की घबराहट की हालत में हूं और मुझे इस परेशानी में डालने के लिए मैं आपपर इलजाम लगाता हूं। सन १९२५-२७ के अपने

बुरे तजुर्बे के बाद मैंने यह फैसला कर लिया था कि मैं सूबा कांग्रेस कमेटी की एक्जीक्यूटिव से अपनेको अलहदा रखूंगा, लेकिन सन १९३१ में मेरे लगातार इन्कार करने के बावजूद आपने मुझे उसमें घसीट लिया। मैंने आपको मुखालफ़त के मुमकिन जरियों की तरफ से आगाह कर दिया था, और जिसका मुझे डर था वही हो रहा है। आज मैं अपनेको बेहद हैरानी की हालत में पाता हूं। अगर मैं इस्तीफा देकर अलग हटने की कोशिश करूं तो मुझपर दूसरी मुसीबत पैदा करने का इलज़ाम लगाया जायगा। लेकिन अगर मैं काम करता रहता हूं तो मुझे जलील करने के लिए हर मौक़े को इस्तेमाल किया जाता है, चाहे इससे हमारे संगठन का डिसिप्लिन ही क्यों न टूटता हो।

मैं आपको तफसीलें देकर परेशान नहीं करना चाहता। अगर किसी दिन आप यह सुनें कि मैंने कोई बेवकूफी का कदम उठा लिया है तो आप उसके लिए मेरी उस नाउम्मीदी की हालत को कसूरवार ठहरायेंगे, जिधर मुझे ढकेला जा रहा है।

आपका,
रफी

१२१. राजेन्द्रप्रसाद की ओर से

कैंप, वर्धा
१९ दिसम्बर १९३५

प्रिय जवाहरलालजी,

कुछ दिन पहले, जबकि मैं दक्षिण भारत की यात्रा पर था, आपका पत्र मिल गया था। १३ तारीख को मैं यहां पहुंचा और बापू तथा महादेव-भाई के नाम भेजे आपके कुछ पत्र पढ़े। आसार ऐसे नजर आ रहे हैं कि अगली कांग्रेस के अध्यक्ष आप ही चुने जायंगे। मुझे मालूम है कि आपके और वल्लभ-भाई, जमनालालजी तथा मुझ-जैसे आदमियों के दृष्टिकोण में कुछ अंतर है। अन्तर बुनियादी ढंग का है। मैं यह समझता हूं कि यह अंतर वर्षों से रहा है और फिर भी हम लोग साथ-साथ काम कर सके हैं। अब जबकि बापू एक प्रकार से अलग होगये हैं और पूछने पर ही अपनी सलाह देते हैं, यह संभव है कि ये अंतर कुछ और भी उभर आवें। परन्तु मेरा विश्वास है कि जबतक

हमारे कार्यक्रम और काम के तरीकों में क्रांतिकारी परिवर्तन नहीं होता, तबतक यह संभव बना रहेगा कि हम सब मिलकर साथ-साथ काम करते रहें। निस्संदेह वर्तमान स्थिति से आप असंतुष्ट हैं। हममें से भी तो कोई उनसे संतुष्ट नहीं है। परन्तु ये कठिनाइयां मौजूदा परिस्थितियों से ही पैदा हुई हैं और हमें दिखाई देता है कि गति को बढ़ाना अथवा आमूल परिवर्तन करना संभव नहीं है। संघर्षों में हमें ऐसी परिस्थितियों का सामना करना ही पड़ता है और हमें चाहे कितना ही रोष और झुंझलाहट हो, हमें कड़वी घूंट पीनी पड़ती ह और अनुकूल समय के आने तक काम करते ही रहना पड़ता है। ऐसे संकटों में से एक में से हम गुजर रहे हैं। हतोत्साहित होने का कोई कारण मुझे दिखाई नहीं देता। स्वाधीनता की भावना कुचली नहीं है और न हारने तथा लाचारी से झुक जाने की भावना जैसी कोई चीज है। मैं नहीं विश्वास करता कि हममें से कोई भी असहयोग से पूर्व की मनोदशा में पहुंच गया है। मैं नहीं मानता कि हम १९२३-२८ के जमाने में पहुंच गये हैं। हम १९२८-२९ की मन:स्थिति में हैं और मुझे संदेह नहीं कि बहुत जल्दी अच्छे दिन आनेवाले हैं। अपनी शक्ति और समझ के अनुसार हम बहुत अच्छी तरह आगे बढ़ रहे हैं, और इससे अधिक और कोई कुछ कर नहीं सकता। जो हो, आपको अपनी इच्छानुसार काम करने की स्वतंत्रता है, अपनी पसंद की कार्यसमिति भी नियुक्त करने की। आप विश्वास रक्खें कि हममें से कोई भी आपके काम में अड़चनें नहीं डालेगा और यदि कहीं हम मदद नहीं कर पाये तो बाधा तो कदापि नहीं बनेंगे।

मेरे लिए यह संभव नहीं है कि मैं आपको एक पत्र में वह कार्यक्रम पूरी तरह से समझाकर बता दूं, जिसे कार्यान्वित करने का हम यत्न कर रहे हैं। वह निरुद्देश्य नहीं है और न वह समय काटने के लिए है, परन्तु यदि आपको वह नहीं जंचता है और यदि कोई उससे अधिक अच्छा कार्यक्रम पेश किया जा सकता है तो कोई भी आंखें मूंदकर इस पुराने कार्यक्रम से चिपके रहनेवाला नहीं है। वस्तुस्थिति जैसी है, उससे अधिक हमने उसे जटिल नहीं बनाया है और आप निश्चय ही ऐसी स्लेट पर लिख सकते हैं, जिसे हमने ख़राब नहीं किया है।

कुछ लोगों ने अपना यह गलत और अनुचित खयाल बना रखा है कि

कार्यसमिति नये संविधान के अंतर्गत पद-ग्रहण के अतिरिक्त और कुछ सोच ही नहीं रही है। सच तो यह है कि हमने इस मामले को कोई महत्व ही नहीं दिया है। इसके विपरीत दूसरे लोग हैं, जो हमारे पीछे पड़कर कोई निर्णय कराने के लिए प्रयत्नशील हैं। पहला प्रयास गत अप्रैल में जबलपुर में किया गया था और हमें लगा कि इस प्रश्न पर कोई निर्णय करने के लिए अभी बहुत जल्दी है। हम उसी निर्णय पर दृढ़ रहे। मद्रास में उसीका समर्थन किया गया। लखनऊ में इस सवाल को लेना ही होगा। किसी भी तरह वह कठिनाइयों से खाली नहीं है।

जैसाकि मुझे लगता है, इस प्रश्न पर पद-ग्रहण करने या न करने की दृष्टि से सोचना ठीक नहीं है। जहांतक मेरा अनुमान है, कोई भी व्यक्ति पदों के लिए पद स्वीकार करना नहीं चाहता। जिस तरह सरकार चाहती है उस तरह तो कोई भी संविधान पर अमल करना नहीं चाहता। हमारे सामने प्रश्न बिल्कुल भिन्न है। इस संविधान का हम क्या करें? क्या हम इसकी एकदम उपेक्षा करके अपनी राह पर चलते रहें? क्या ऐसा करना संभव है? क्या इस संविधान को हम अपने हाथ में ले लें और इसका अपनी इच्छानुसार उस हद तक उपभोग करें, जितना कि किया जा सकता है? क्या हमें उसमें प्रविष्ट होकर लड़ना चाहिए या बाहर से? और किस तरह? वास्तव में सवाल एक ऐसे निश्चयात्मक कार्यक्रम को तैयार करने का है जो कि इस संविधान को लागू करने से उत्पन्न हुई परिस्थिति का वर्तमान वातावरण के प्रकाश में मुकाबला कर सके। सवाल परिवर्तनवादी या अपरिवर्तनवादी, सहयोगी या विरोधी के पूर्व-कल्पित विचारों के आधार पर कोई जवाब देने का नहीं है। कुछ कीचड़ भी उछाला गया है। यह तो अनिवार्य है। हमें तो देश की भलाई की दृष्टि से और हमारे निर्णय का असर हमारे महान् उद्देश्यों पर क्या होगा, इस दृष्टि से विचार करना चाहिए।

देशी राज्यों के बारे में तो हमें ऐसा लगता है कि मद्रास में जो कुछ कहा गया था उससे अधिक हम कुछ नहीं कर सकते। बहुत विचार करने के बाद यह निर्णय जान-बूझकर किया गया था और अगर हमारे और दूसरों के बीच खाई है तो उसे स्वीकार करना ही होगा। विदेशी प्रचार के प्रश्न पर भी बहुत-कुछ ऐसी ही स्थिति है। साधनों की कठिनाई के अतिरिक्त हम नहीं

जानते कि आया वहां कुछ सक्रिय रूप से किया जा सकता है। आप जैसे मित्रों द्वारा स्थापित संपर्कों के जरिये हम विदेशी मामलों की जानकारी रखें और उन मित्रों की मदद से स्थिति की प्रामाणिक जानकारी यहां लोगों को दें, जैसाकि हम कर रहे हैं। इससे अधिक कुछ करना संभव नहीं। यहां की परिस्थिति की वास्तविकताओं को हम भली-भांति जानते हैं और यह आशा नहीं कर सकते कि उनकी विदेशी राष्ट्रों पर कोई छाप पड़ेगी। यदि हम शक्तिशाली और संगठित होते तो अपनी समस्याओं से परेशान उन देशों को वाध्य कर सकते थे कि वे हमारी उपेक्षा न करें।

घरेलू ढंग का एक और सवाल संविधान को दुहराने का है। उसपर आपकी लिखी टिप्पणी मैं पढ़ गया हूं। आपके कुछ सुझाव मुझे अच्छे लगे। इन सवपर विचार करने के लिए हमने एक उपसमिति बना दी है। कांग्रेस से पूर्व हम अपनी रिपोर्ट दे देंगे। यदि आप और कोई सुझाव देना चाहें तो कृपया हमें दे दें।

एक नाजुक सवाल पैदा होगया है। आप देखेंगे कि संविधान के अन्तर्गत किसी भी चुनी हुई समिति अथवा किसी पद के लिए वही व्यक्ति चुना जा सकेगा जो छः महीने तक कांग्रेस का सदस्य रहा हो, आदतन् खादी पहनता हो और कुछ निर्दिष्ट शरीर-श्रम करता हो। संविधान के वर्तमान रूप में इसका कोई अपवाद नहीं रखा गया और उन व्यक्तियों को भी छूट नहीं दी गई, जो भूतकाल में उसके अध्यक्ष रह चुके हैं, या जेल में रहे हैं या अन्य किसी प्रकार इन शर्तों को पूरी नहीं कर सके हैं। संविधान की इन शर्तों के अनुसार आप और सुभाषबाबू भी प्रतिनिधि या पदाधिकारी नहीं चुने जा सकते। स्वयं डाक्टर अन्सारी भी सदस्यता-फार्म पर भूल से निश्चित अवधि के अन्दर दस्तखत नहीं कर सके और यह प्रश्न निर्णय के लिए मेरे सामने आया है और मैंने अभी तक उसपर कोई निर्णय नहीं दिया है। इस विषय में कार्य-समिति के सदस्यों के पास उनकी मंजूरी के लिए मैं एक नया नियम प्रसारित कर रहा हूं। उसे इस चिट्ठी के साथ आपके पास भी भेज रहा हूं।

यह बड़े दुःख की बात है कि कांग्रेस में इकट्ठे होने से पहले हम लोग मिल नहीं सकते और विचार-विनिमय नहीं कर सकते। यह भी दुर्भाग्य

की बात है कि मौजूदा हालात की स्वयं जानकारी प्राप्त करने के लिए आपके पास इतना कम समय होगा। फरवरी के तीसरे हफ्ते से पहले आपके लौटने की कोई संभावना नहीं और कांग्रेस मार्च में होगी। अभी मैंने उसकी तारीख तय नहीं की है, मार्च के पहले हफ्ते से आगे बढ़ाने में कठिनाइयां हैं। आशा है, यह आपको अनुकूल होगी। प्रतिनिधियों के चुनाव के लिए अंतिम दिन हमने जनवरी की ७ तारीख रक्खी है और अध्यक्ष के चुनाव की तारीख २५ जनवरी है। यह सभी प्रान्तों में एक साथ होगा।

अध्यक्ष के चुनाव के परिणामों की घोषणा करने के लिए जनवरी के अन्त में कार्य-समिति की एक बैठक करनी होगी। मैं तो चाहूंगा कि इसमें कार्यक्रम के मसविदे पर भी विचार कर लें, जिसे कार्यकारिणी आगामी कांग्रेस के लिए तैयार करेगी। लेकिन, लगता है, आपकी अनुपस्थिति में ऐसा करना संभव नहीं होगा। इसलिए जब आप बतावेंगे उस समय इस काम के लिए एक बैठक फिर बुला लूंगा। जितनी भी जल्दी यह हो, अच्छा है। इस बीच, यदि संभव हो तो, आप अपने सुझाव मेरे पास भेज दें, ताकि उनपर विचार करने के लिए हमें कुछ समय मिल जाय।

बापू को अभी तक हाई ब्लडप्रैशर है। तीन दिन पहले डा. गिल्डर और जीवराज मेहता ने उनकी जांच की थी। उन्होंने दो महीने तक पूरे आराम की सलाह दी है। मैं आशा करता हूं कि कमलाजी के स्वास्थ्य में धीरे-धीरे प्रगति हो रही होगी और आपकी अनुपस्थिति का उनपर बहुत अधिक श्रम नहीं पड़ेगा।

सप्रेम आपका,
राजेन्द्रप्रसाद

१२२. लॉर्ड लोथियन की ओर से

सैमूरहाऊस,
१७-वाटरलू प्लेस
लन्दन, एस. डब्ल्यू-१
३१ दिसंबर १९३५

निजी

प्रिय श्री नेहरू,

आपके पत्र के लिए बहुत-बहुत धन्यवाद। मुझे दुःख है कि फिलहाल

मुलाकात संभव दिखाई नहीं देती। लेकिन मैं आशा करता हूं कि आगे चलकर अवसर आयगा। इस बीच हिंदुस्तान और ब्रिटेन के बारे में अपने दिमाग में उठ रहे कुछ विचार लिखने का साहस कर रहा हूं, बशर्ते कि आप उन्हें पढ़ना पसन्द करें।

हम इस समय मानव-इतिहास के एक महान् रचनात्मक युग में हैं। एक ओर हम बराबरी के स्वशासित राज्यों में कानून के शासन की स्थापना द्वारा धीरे-धीरे उन आदर्शों के आधार पर, जिनका प्रतिनिधित्व लीग ऑव नेशन्स करती है, युद्ध का अन्त करने के लिए आगे बढ़ रहे हैं, युद्ध का ही नहीं बल्कि उससे भी ज्यादा बुरी चीजों—घृणा, भय, आशंका, अज्ञान, गरीबी और बेरोजगारी—का भी खात्मा करने पर तुले हुए हैं, जो प्रभुता-संपन्न राज्यों की वर्तमान स्वेच्छाचारिता से उत्पन्न या पोषित हुई हैं; दूसरी तरफ उन आदर्शों की प्राप्ति की ओर बढ़ रहे हैं, जिनका प्रतिनिधित्व समाजवाद शब्द करता है—समाजवाद यानी एक ऐसी प्रणाली, जिसके द्वारा जमीन और उसके फलों की प्राप्ति का लाभ समाज के सब सदस्यों के लिए, समाज के लिए की गई उनकी सेवा के अनुपात में होगा, न कि आकस्मिक संपत्ति-स्वामित्व के अनुसार। दोनों ही स्थितियों में लक्ष्य की प्राप्ति, मुमकिन है, एक ओर लीग ऑव नेशन्स के घोषणा-पत्र से बहुत भिन्न उपायों से होगी या दूसरी ओर उत्पादन और वितरण के विश्वव्यापी राष्ट्रीयकरण तथा राज्य द्वारा उनके प्रबन्ध के जरिये होगी। इन लक्ष्यों की प्राप्ति में दशाब्दियां, शायद शताब्दियां, लग जायं; क्योंकि सफलता तभी होगी जब विचार और चरित्र में घुसी गहरी प्रवृत्तियों में भारी परिवर्तन आ जायगा तथा जिम्मेदारियों को उठाने की नई क्षमता पैदा हो जायगी। तब जाकर नये कानून और नया तंत्र अस्तित्व में लाया जा सकता है। पर अन्त में ये आदर्श प्राप्त जरूर होंगे, क्योंकि यह विचार-दृष्टि बहुत काफी लोगों के मस्तिष्क में आ चुकी है, हालांकि बहुत कम, शायद ही किसीने अभी तक साधनों को समझा हो।

वर्तमान में भारत और ब्रिटेन को अलग-अलग पार्ट अदा करने हैं। ब्रिटेन पुराने साम्राज्यवाद को छोड़ रहा है तथा व्यापक राष्ट्रीय आत्म-निर्णय में निहित अराजकता की नये युद्धों में परिणति या साम्राज्यवाद के

नये रूप में प्रकटीकरण की रोकथाम के लिए सक्रिय रूप से प्रयत्नशील है। वैयक्तिक स्वतन्त्रता और प्रोत्साहन की उदार परम्परा के साथ समाजवाद का ताल-मेल बैठाने की व्यावहारिक समस्या के समाधान की ओर भी यह शीघ्र कदम उठायेगा। हिंदुस्तान पर अपने स्वयं के शासन का भार सम्हालने और बिना अपनी एकता को भंग किये फौरन जरूरी सामाजिक और आर्थिक सुधारों के लिए कानून बनाने की भारी जिम्मेदारी है, और वह भी यूरोप के हालात को नजर में रखते हुए, जहां धार्मिक और राष्ट्रवादी लड़ाइयों से भारी अराजकता छा गई, जो मौजूदा सभ्यता की गिरावट का खास कारण रही है।

आप मुझसे पूछेंगे कि जो संविधान पास हुआ है, उसके अन्तर्गत अपने उद्देश्यों की पूर्ति करना हिंदुस्तान के लिए कैसे सम्भव है ? बेशक, यह त्रुटि-पूर्ण है—विशेषकर आपके दृष्टिकोण से—फिर भी मैं आपसे इस बात पर विचार करने का निवेदन करूंगा कि संविधान तथा इसमें समाहित विकासों के अतिरिक्त उनकी पूर्ति क्या भारत के लिए किसी और प्रकार से संभव है ?

दुर्भाग्य से राजनीति में हममें से कोई भी बिल्कुल नये सिरे से कुछ कर नहीं सकता। हमें हमेशा इतिहास से निकले तथ्यों को लेकर ही आगे बढ़ना पड़ता है। किसी भी समय आदर्शवाद और वास्तविकता में सामंजस्य स्थापित करना किस हद तक संभव है, इसीका निश्चय करना राजनीतिज्ञ का काम है। हिन्दुस्तान की जनता की दिल दहलानेवाली गरीबी और उस गरीबी के परिणामों तथा उसे शीघ्र दूर करने की कठिनाई के बावजूद ऐसा लगता है कि हिन्दुस्तान के सामने एकमात्र सबसे बड़ा खतरा यदि कोई है तो वह है उसकी शासनिक अथवा वैधानिक एकता के टूट जाने का। इससे भी बड़ा एकमात्र खतरा होगा ब्रिटेन या किसी दूसरी विदेशी ताकत को मंजूर कर लेना। भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन की शक्ति तथा ग्रेट ब्रिटेन द्वारा कट्टरपंथियों की परवा न करते हुए पिछले अगस्त में पारित संविधान विधेयक के अन्तर्गत सत्ता की अंतिम कुंजी सौंपने के निर्णय के कारण, मेरा विश्वास है, कि यह दूसरा जोखम खत्म होगया है, बशर्ते कि स्वशासित समाज के तौर पर अपनी आंतरिक एकता बनाये रखने में वह असफल न हो जाय।

संविधान की ऐसी व्याख्या करने के अपने तर्क मैंने भारतीय 'ट्वंटिएथ सेंचुरी' में लिखे अपने लेख में प्रस्तुत किये हैं, (उसकी एक प्रति साथ में भेजने का साहस कर रहा हूं) यहां उनको दोहराऊंगा नहीं। लेकिन पहला खतरा बना रह जाता है। यदि बाकी दुनिया का अनुभव झूठा नहीं हो जाता तो हिंदुस्तान में राजनैतिक वर्गों के हाथ में शासन की बागडोर जाने और शिक्षा तथा प्रेस का प्रभाव बढ़ने के साथ-साथ धर्म, जाति और भाषा को अधिकाधिक राजनैतिक महत्व और शक्ति प्राप्त होगी और उसका परिणाम अधिकाधिक हानिकर होता जायगा। आज हिंदुस्तान में जनता पर धर्म का सबसे अधिक शक्तिशाली प्रभाव है, जैसीकि यूरोप में भी पुनर्जागरण और सुधार के कारण मध्ययुगीन कैथोलिक चर्च और होली रोमन एम्पायर के कमजोर होने पर स्थिति थी और वह तबतक बनी रही जबतक कि विज्ञान, शिक्षा और फ्रांस की जनक्रांति-संबंधी विचारों ने नई राजनैतिक तथा आर्थिक निष्ठाओं का निर्माण कर धर्म की सर्वोच्च राजनैतिक शक्ति को गिरा नहीं दिया।

सौ वर्ष तक अधिकांशतः केथौलिकवाद और प्रोटेस्टेंटवाद के आपसी संघर्षों के आधार पर होनेवाले युद्धों में यूरोप खून से लथपथ रहा है (जर्मनी की आबादी ३,००,००,००० से घटकर ५०,००,००० रह गई थी)। फिर राजतन्त्रों की, जिनका स्थान सम्राट और पोप ने ले लिया था, लड़ाइयों में और इसके बाद जाति और भाषा के नाम पर राष्ट्रवाद की लड़ाइयों में वह उसी प्रकार खून से सराबोर रहा। इन सबने मिलकर अब इसकी पुरानी एकता को बिल्कुल नष्ट कर दिया है और इन सबने टैरिफ, शस्त्रीकरण और युद्ध की अराजकता को जन्म दिया है, जो यूरोप के नैतिक ह्रास और पतन का मूल कारण है। इन शक्तियों की सक्रियता का अन्तिम चरण आयरलैंड में दिखाई दिया है, जहां औपनिवेशिक होमरूल देने को ब्रिटेन के बाध्य होने पर भी जातिवाद का संबल पाकर धर्म ने स्काट प्रोटेस्टेंट अलस्टर को सेल्टिक रोमन केथोलिक आयरलैण्ड से राजनैतिक सम्बन्ध-विच्छेद करने को विवश कर दिया।

आप कह सकते हैं कि मैं आर्थिक पहलू—मार्क्सवादी सिद्धान्त—की उपेक्षा कर रहा हूं। मैं ऐसा नहीं मानता। मार्क्स ने इतिहास की भौतिकवादी

अथवा आर्थिक व्याख्या के पक्ष पर जरूरत से ज्यादा बल दिया है। वर्तमान धार्मिक, राजनैतिक और सामाजिक चिन्तन पर अर्थशास्त्र का बड़ा प्रभाव है और कुछ हद तक उसे नियंत्रित भी करता है, लेकिन अनिवार्यतः उसका स्थान दूसरा है। पूंजीवाद परिग्रह की प्रेरणा देता है, लेकिन साथ-ही-साथ वह जीवन-स्तर को भी बहुत ऊंचा उठाता है। वह अन्तर्राष्ट्रीय अराजकता की बुराइयों को बढ़ाता है, लेकिन वह उसे जन्म नहीं देता है। जो हो, मेरे खयाल से इसमें कोई शक नहीं कि व्यावहारिक राजनीति में राजनैतिक पहलू का पहला स्थान है। हां, रूस की स्थिति इसका बिल्कुल अपवाद है, जहां बाहरी युद्ध में पराजय तथा असाधारण रूप से संचालित क्रांतिकारी आन्दोलन द्वारा खोखली जारशाही का पतन हुआ, जिसके फलस्वरूप जीवन के प्रायः सभी पहलुओं पर दलीय अधिनायकवाद की स्थापना हुई और वह भी ऐसे तरीकों से, जिनका पता मानवता को तबतक नहीं था और ऐसे देश में, जहां वस्तुतः कोई मध्यम वर्ग नहीं था। ऐसी स्थिति को छोड़कर लोग पहले धर्म, जाति अथवा भाषा पर आधारित राजनैतिक लक्ष्यों की ओर झुकते हैं, तब कहीं उनका ध्यान जागरूक आर्थिक उद्देश्यों की ओर जा पाता है। रूसी क्रांति के बाद से यूरोप का यही इतिहास रहा और मैं समझता हूं इस बात को अब वामपक्षी भी स्वीकार करते हैं कि गणतन्त्री और वैधानिक मार्ग का स्थान जब क्रांतिकारी पद्धति लेती है, तब आर्थिक लक्ष्यों का इन अन्य लक्ष्यों के स्थान पर आना शुरू हो जाता है, पर विजय फासिज्म की होती है, कम्युनिज्म की नहीं।

यदि हिंदुस्तान ने वैधानिक मार्ग को अस्वीकार कर लिया, तो मुझे लगता है, हिंदुस्तान के लिए यह प्रायः जरूरी हो जायगा कि वह यूरोप का अनुकरण करे और वहां धार्मिक लड़ाइयां शुरू हो जायं, क्योंकि राजनैतिक उद्देश्यों के लिए उकसाये जाने पर, मेरे खयाल में, वहां की आम जनता अब भी मजहबी भावनाओं के प्रति झुकेगी। इन लड़ाइयों के बाद भारत अखण्ड नहीं रह पायगा, बल्कि यूरोप की तरह कई अधिनायकवादी राज्यों में बंट जायगा। जाति और भाषा की खाइयां बनी रहेंगी और वे एक-दूसरे के खिलाफ़ सैनिक और आर्थिक दोनों प्रकार से मोर्चा बनाये रहेंगे। उनका आन्तरिक विकास बिल्कुल बेजान हो जायगा, अथवा उनपर फिर किसी विदेशी

साम्राज्यवादी ताकत का प्रभुत्व स्थापित हो जायगा, जैसाकि चीन में हो रहा है। कभी-कभी यह कहा जाता है—एक बार महात्माजी ने मुझसे कहा था—कि संकट का मार्ग आगे बढ़ाने का सबसे अच्छा रास्ता हो सकता है। कभी-कभी यह सच भी हो सकता है। लेकिन, मेरा विश्वास है कि ऐसा बहुत ही कम होता है। यदि होता भी है, तो ऐसी अवस्था में जबकि कोई दूसरी आशा नहीं रह जाती। यह बिल्कुल ठीक है कि यदि भारतीय सरकार खत्म हो जाय और अनिवार्यतः प्रतिद्वन्द्वी सेनाएं सामने आने लगें और वहां वही होने लगे, जो चीन में हो रहा है—हालांकि, धर्म, जाति और भाषा में अधिक अन्तर के कारण भारत की स्थिति और भी बुरी रहेगी—तो कुछ सामाजिक और आर्थिक बुराइयां खत्म होजायं। लेकिन लड़ाइयों का यह सभय उन बुनियादी परम्पराओं, सभ्य तरीकों और आदतों को नष्ट कर देता है—जैसाकि महायुद्ध ने किया—जिनके बिना किसी सभ्य जीवन का, चाहे वह समाजवादी हो, चाहे व्यक्तिवादी, निर्माण नहीं हो सकता और जो उसी स्थिति में पनप सकता है, जब सामाजिक अथवा राजनैतिक प्रगति का संघर्ष वैधानिक ढांचे के माध्यम से चले, लड़ाइयों के माध्यम से नहीं।

मेरे विचार से जनतंत्री दुनिया ने जिस महानतम राजनैतिक व्यक्ति को ऊपर उठाया वह है अब्राहम लिंकन। आम जनता के प्रति उसके मन में बड़ी हमदर्दी थी। पर उसने देखा कि अमरीका में सबसे बड़ी समस्या दासता की नहीं, बल्कि संघ की रक्षा की है। अगर संघ खत्म हुआ तो न केवल गुलामी बनी रहेगी, बल्कि यूरोप की तरह अमरीका स्वयं राष्ट्रीय राज्यों में बंट जायगा जो यूरोप के भिन्न-भिन्न जातीय और भाषाई तत्व ग्रहण करेंगे और टैरिफ और शस्त्रीकरण द्वारा अलग होकर उनमें निराशा व गरीबी छा जायगी और बार-बार लड़ाइयां होंगी, जिनसे मुनरो-सिद्धान्त तथा १७८७ से जनतंत्र में चलनेवाला वह महान् परीक्षण समाप्त हो जायगा। इसीलिए उसने गुलामी की समस्या पर संघर्ष करने से इन्कार कर दिया और संघर्ष का सारा बल संघ की रक्षा पर केन्द्रित कर दिया, यह देखकर कि यदि संघ सुरक्षित रहा तो न केवल इन घातक बुराइयों से ही बचा जा सकेगा, बल्कि खुद गुलामी भी अनिवार्यतः समाप्त हो जायगी।

मैं अनुभव करता हूं कि हिंदुस्तान के लिए सबसे बड़ा प्रश्न और आज

दुनिया के सामने प्रस्तुत सबसे बड़े प्रश्नों में एक प्रश्न यही है कि हिंदुस्तान अपनी मुक्ति के लिए बुनियादी तौर पर जनतंत्री और वैधानिक संघ के रूप में काम करेगा अथवा वह संकट का रास्ता अपनायेगा। यदि उसने पहले रास्ते पर चलने का फैसला किया तो उसकी संस्थाओं में निहित भावना ही धीरे-धीरे भारतीय रियासतों को वैधानिक राजतन्त्रों में बदल देगी, हिंदुस्तानी देश-भक्ति और जन-भावना के बल पर साम्प्रदायिकता, जातिवाद और भाषाई तत्वों को दबा देगी और उसे अपने शासन का पूरा भार सम्हालने के योग्य बना देगी और इस प्रकार उपयुक्त वैयक्तिक स्वतन्त्रता के साथ समाजवाद के मेल को संभव बना दे ी। लेकिन यदि भारत ने अपनी वैधानिक एकता को खो दिया तो वह सबकुछ खो देगा। वह गड्ढे में गिर जायगा, राष्ट्र के रूप में अपना अस्तित्व तथा अपने भाग्य का नियंत्रण स्वयं करने की अपनी क्षमता खो देगा। शासन के बिना न तो स्वशासन ही रह सकता है और न समाजवाद ही।

लेकिन आप फिर पूछेंगे कि साम्प्रदायिकता पर आधारित ऐसे संविधान द्वारा, जिसमें बचाव के बहुत सारे साधन ब्रिटेन के हाथ में रहेंगे और जहां प्रत्येक निहित स्वार्थ और सम्पत्ति-अधिकार को अधिक सुरक्षित कर दिया गया है, हिंदुस्तान के लिए वास्तविक आन्तरिक एकता स्थापित करना, अपने शासन का भार सम्हालना और अपनी शान्ति और सच्ची उन्नति के लिए आवश्यक सामाजिक और आर्थिक सुधार करना कैसे संभव हो सकता है? इसपर मेरे दो जवाब हैं। पहला, जबतक कांग्रेस इस स्थिति में नहीं हो जाती कि सम्पूर्ण प्रशासनिक शक्ति प्राप्त कर मनचाहे ढंग पर संविधान तैयार करवा सके और उसकी स्थिति ऐसी नहीं हो जाती कि वह उसका उपयोग कर अपने प्रति सभी विरोधों को दबा सके और बलात् समानता लागू कर सके, तबतक मैं नहीं समझता कि बुनियादी तौर पर कोई भिन्न संविधान संभव है। कांग्रेस की मुख्य शक्ति का स्रोत क्या है, इसका निर्णय मेरी अपेक्षा आप ज्यादा अच्छी तरह कर सकते हैं। कांग्रेस को वह शक्ति इस बात से प्राप्त होती है कि विदेशी शासन से आजादी पाने के लिए वह एक केन्द्रीय संगठन है और राष्ट्रवाद के विदेश-विरोधी रूप का इस्तेमाल कर रही है, अथवा यदि ब्रिटिश राज्य एकाएक खत्म हो जाय, तो क्या

कांग्रेस को मुसलमानों, नरेशों, सम्पत्तिधारी वर्ग और जन-साधारण का इतना समर्थन प्राप्त हो सकेगा कि वह वैधानिक ढंग से सारे हिंदुस्तान का शासन चला सके? मेरा स्वयं का निश्चित रूप से यह विचार है कि सबकी सहमति से कांग्रेस किसी भी समय सम्पूर्ण हिंदुस्तान के लिए उदार संविधान कायम नहीं कर सकती। यदि बना सकती तो कम-से-कम बुनियादी तौर पर (अगर विस्तार से नहीं) उसे नरेशों और सम्पत्तिधारी वर्ग को वही रियायतें देनी पड़तीं, जिनका समावेश मौजूदा संविधान में किया गया है और यदि वह शक्ति द्वारा शासन का अधिकार सम्हालने की कोशिश करती तो उसे गृह-युद्ध का सामना करना पड़ता और बाध्य होकर पुलिस-सैनिक अधिनायकवाद को कायम करने की कोशिश करनी पड़ती और वे तमाम हिंसात्मक दमन के तरीके अपनाने पड़ते (जिसे आप स्वयं भुगत चुके हैं), जो सब प्रकार की निरंकुशता में शामिल हैं, अथवा उसे भारत की एकता बनाये रखने का प्रयास ही छोड़ देना पड़ता। इसलिए मैं नहीं समझता कि जहांतक व्यावहारिक राजनीति का सवाल है, मौजूदा संविधान का अपनी मुख्य रूप-रेखाओं में कोई दूसरा विकल्प भी होता।

मेरा दूसरा जवाब यह है कि इस संविधान में बेहद विकास का अवसर मौजूद है और उनसब त्रुटियों के बावजूद, जो उसमें दिखाई पड़ेंगी यही वह सबसे अच्छा प्राप्य मार्ग है, जिसपर चलकर भारत शासन और सामाजिक तथा आर्थिक सुधार के लिए अपना अनुभव और ताकत बढ़ा सकता है। सारे हिंदुस्तान का शासन और प्रतिरक्षा का भार सम्हालने के लिए आवश्यक सशक्त और विवेकशील राजनैतिक दलों और वैधानिक वृत्तियों का हिंदुस्तान में जितनी जल्दी विकास होगा, 'स्टेट्यूट ऑव वेस्टमिंस्टर' के अनुसार, उतनी ही जल्दी भारत स्वाधीनता प्राप्त करेगा, ऐसा सोचने के पीछे जो तर्क हैं, उन्हें मैं यहां नहीं दोहराऊंगा। 'ट्वंटियथ सेंचुरी' वाले मेरे लेख में इनकी विशद चर्चा की जा चुकी है। मैं यहां इतना ही और कहूंगा कि ब्रिटेन ने जो बचाव अपने हाथ में रखे हैं, भारत जैसे विशाल और विविधतापूर्ण देश में शासन को विश्रृंखलित होने से बचाने में जहां बहुत ही महत्वपूर्ण साबित होंगे, वहां वे विश्वविद्यालयों और लोकप्रिय समाचारपत्रों से भरे देश में बहुत-से निर्वाचित विधान-मंडलों के प्रति उत्तर-

दायी मंत्रिमंडलों को सत्ता-हस्तान्तरण की मांग करनेवाले राजनैतिक मत और संगठन का सम्भवतः प्रतिरोध भी नहीं कर सकेंगे, बशर्ते कि उन मन्त्रिमंडलों और विधान-मंडलों में शासन के प्राथमिक कार्यों का संचालन करने की उचित योग्यता हो। वे (बचाव) इसमें थोड़ी देर कर सकते हैं, पर इसे रोक नहीं सकते। उत्तरदायी सरकार का पूरा इतिहास इसे हर जगह साबित करता है।

इसके अतिरिक्त संविधान म उन राजनैतिक दलों के विकास का पूरा अवसर विद्यमान है, जिनका संबंध राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक सुधार से है और यही वे क्रियात्मक तत्व हैं, जो वैधानिक यन्त्र को जिन्दगी और ताकत देते हैं। यह संविधान ऐसी पार्टियों को एक उपयुक्त लोकप्रिय आधार देता है, जिसपर वे अपना कार्य आरम्भ कर सकती हैं, क्योंकि इसके अन्तर्गत ४० फीसदी से भी ज्यादा वयस्क पुरुषों को मतदान का अधिकार मिलेगा।

फिर, खुद संविधान में वैधानिक साधनों द्वारा बेहद विकास की संभावनाएं भरी हैं। उत्तरदायी शासन-प्रणाली के अन्तर्गत सबसे अधिक बुनियादी परिवर्तन, कम-से-कम जहांतक शक्ति और उत्तरदायित्व को नये हाथों में सौंपने का संबंध है, संविधान की धाराओं में नहीं, बल्कि परम्पराओं और व्यवहार में हेर-फेर द्वारा ही होता है। उदाहरण के लिए इस देश में संसद् के प्रभुत्व और समुद्रपार देशों में डोमिनियन स्टेटस की स्थापना उस व्यवहार द्वारा हुई है, जिसमें 'परामर्श' ने धीरे-धीरे आदेश का रूप ले लिया है। यही नहीं, जिस प्रणाली के अन्तर्गत संविधान में परिवर्तन यहां संसद् द्वारा ही किया जा सकता है, राष्ट्रीय आत्मगौरव के लिए आपत्तिजनक होते हुए भी उससे कुछ व्यावहारिक लाभ हैं। सभी संविधानों के साथ जो एक कठिनाई रही है वह है उस उपाय की व्यवस्था करने की, जिसके अनुसार उनमें मामूली दलगत राजनीति के कारण नहीं, बल्कि वास्तविक राष्ट्रीय मांग होने पर ही, हेर-फेर किया जा सके। जो संविधान दलगत कार्रवाई द्वारा आसानी से बदला जा सकता है, उसका अन्त विशृंखलता अथवा अधिनायकवाद में हो सकता है, और जो संविधान बहुत ज्यादा कड़े होते हैं, उनसे वास्तविक सामाजिक और आर्थिक प्रगति में रुकावट

पड़ती है। जिस प्रणाली ने डोमिनियन स्टेटस को विकास का अवसर दिया है, उसने इस मसले को व्यवहारतः अच्छी तरह हल किया है, क्योंकि इसके माने यह हैं कि हेर-फेर तो आसानी से हो सकते हैं, पर सिर्फ उसी हालत में जबकि उनपर लगभग राष्ट्रीय सहमति जैसी चीज प्राप्त हो, केवल दलीय जीत के कारण नहीं।

इसीलिए मैं इस तथ्य को बहुत अधिक महत्व देता हूं कि जैसाकि अमरीका में १७८७ में हुआ, भारत एक ऐसे लिखित संविधान की बुनियाद पर स्वशासित जीवन के मार्ग पर अग्रसर किया जा रहा है, जो उसकी विकासशील जरूरतों की पूर्ति के लिए आसानी से (लेकिन बहुत आसानी से नहीं) मोड़ा जा सकता है। संविधानों का मजाक बनाना अब फैशन बन गया है। यह इस कारण कि एक विश्व-संविधान के अभाव में—जो आज की सबसे बड़ी आवश्यकता है—अन्तर्राज्य अराजकता ने बेरोजगारी, लड़ाई और अधिनायकवाद को जन्म दिया है, जिस वजह से एक देश के बाद दूसरे देश में वैधानिक शासन का गठन असम्भव होगया है। यह बिल्कुल जरूरी है कि भारत अपनी एकता को खोकर अराजकता और लड़ाई के इस भंवर में न फंसने पाये।

अतः मैं समझता हूं, आज भारत में अत्यधिक महत्वपूर्ण आवश्यकता इस बात की नहीं है कि संविधान का रूप क्या हो, बल्कि इसकी है कि वह अपने में एक उपयुक्त, रचनात्मक, सृजनात्मक दलीय जीवन का विकास करे—कम-से-कम दो दल ऐसे हों, जिन्हें भारत के सभी हिस्सों और वर्गों का पर्याप्त समर्थन प्राप्त हो, ताकि वे भारतीय शासन का भार सम्हालने में समर्थ हो सकें। प्रत्येक दल के अन्दर आदर्शवाद और प्रतिक्रिया, भ्रष्टाचार और सचाई, जन-भावना और अन्य छोटी-मोटी बातों के बीच के संघर्ष और दलों के बीच की लड़ाई (वैधानिक होने के कारण इनकी भयानकता कम नहीं होती) और उनपर मतदाताओं के निर्णय द्वारा ही किसी राष्ट्र का राजनैतिक विकास और सामाजिक तथा आर्थिक सुधार की तैयारी होती है। शासन-भार सम्हालने तथा अपने आश्वासनों और आदर्शों का पालन करने से प्राप्त अनुशासन रखनेवाले दलों द्वारा सामूहिक चिन्तन के इस सम्मिश्रण से ही साम्प्रदायिकता और पृथक् निर्वाचन-क्षेत्रों का अन्त, राज्यों

की प्रतिनिधि-संस्थाओं का उन्नयन, सच्चे मानों में भारतीय सेना का विकास, ब्रिटेन और भारत के आर्थिक संबंधों का समीकरण, जनता का जीवन-स्तर उठाने, निहित स्वार्थों को चुनौती तथा केवल वोट लेने के प्रलोभन का प्रतिरोध करने की शक्ति का प्रादुर्भाव होगा। अन्तिम भविष्य के संबंध में किसीके विचार चाहे जो कुछ भी हों, आज सर्वाधिक महत्वपूर्ण चीज यह है कि भारत के युवक, पुरुष और स्त्रियां, यह रचनात्मक व्यावहारिक अनुभव प्राप्त करें जो, ३०,०००,००० लोगों के निर्वाचन-क्षेत्र को सम्हालने और लगभग बारह विधान-मंडलों के लिए २,००० सदस्यों का चुनाव करने से प्राप्त होगा। ये सदस्य भारतीय शासन के अधिकांश भाग के लिए और सामाजिक तथा सामान्य सुधार, दोनों की योजना की रूपरेखा तैयार करने के लिए और भारतीय शासन की अन्य जिम्मेदारियां सम्हालने के लिए उत्तरदायी होंगे। यह जिम्मेदारी वे व्यवहार में तथ्य, आलोचना तथा परिणाम के अनुशासन में बंधकर निभायेंगे, सिद्धान्त के आधार पर नहीं। यही अन्य सभी बातों की आवश्यक बुनियाद है।

अन्त में, एक शब्द और कहना चाहूंगा। बहुत मुमकिन है, आप यह उत्तर देंगे कि इन सारी बातों में इतिहास के मार्क्सवादी अथवा आर्थिक निदान की उपेक्षा कर दी गई है। आप शायद यह भी कहेंगे कि वैधानिक साधनों द्वारा समाजवाद की स्थापना सम्भव नहीं है और वह सर्वहारा-वर्ग के जागरण की बुनियाद पर क्रान्तिकारी अधिनायकवाद द्वारा ही लाया जा सकता है। खत अभी ही काफी लम्बा होगया है और अब इसके अन्त में मैं इस समाजवादी-व्यक्तिवादी विवाद में नहीं पड़ूंगा। मैं केवल इतना ही कहूंगा कि मेरे विचार में इस देश के बहु-संख्यक समाजवादी विचारक इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि जनतन्त्री राज्यतन्त्र द्वारा समाजवादी सिद्धान्त को आगे बढ़ाना सम्भव है और उनके लक्ष्य की पूर्ति का यह सर्वोत्तम साधन है। यह दो दृष्टियों से अच्छा है। एक तो यह कि इससे उदार युग के लाभ बने रहते हैं और दूसरे, यह उस फासिज्म को रोकता है, जो आज कम्युनिज्म के आगे-आगे चल रहा है और इस विचार के समर्थन में मैं अपने तर्क न प्रस्तुत कर एक छोटी-सी पुस्तिका 'माडर्न ट्रेण्ड्स इन सोशलिज्म' का हवाला दूंगा। यह पुस्तिका कई युवक समाजवादियों ने मिलकर लिखी है और यह

मुझे वड़ी दिलचस्प लगी है। इसका सम्पादन मेरे एक मित्र जी. ई. जी. कैटलिन ने किया है।

अन्त में, इतना लम्वा पत्र लिखने के लिए मैं माफी चाहूंगा। लेकिन विगत कई वर्षों तक काम करते रहने के बाद भविष्य के संबंध में मेरे जो वुनियादी विचार वने हैं, उन्हें कल के हिंदुस्तान के एक नेता के सामने रखना मैं उचित ही समझता हूं। कांग्रेस को अव संकटापन्न और वैधानिक रास्तों में से एक का चुनाव करना है और मैं यह अनुभव करता हूं कि यूरोपीय अनुभव को देखते हुए पहले मार्ग के विरुद्ध और दूसरे मार्ग के पक्ष में मुझे जो कुछ तर्क-संगत लगता है कम-से-कम उसे आपके सामने रख देना चाहिए।

अन्त में, एक बार मैं फिर दोहराऊंगा कि मुझे इस बात का सख्त अफ़सोस है कि आपके भारत लौटने से पूर्व मैं आपसे मिल न सकूंगा। मुझे आशा है कि बाद में हम शायद मिल सकें। मुझे इस बात की बड़ी उम्मीद है कि आपकी पत्नी निरन्तर स्वास्थ्य लाभ कर रही हैं।

श्री जवाहरलाल नेहरू, भवदीय,
पांशियों एहरहार्ड, बेडनवाइलर लोथियन

[नम्बियार श्री ए. सी. नम्बियार हैं, जो उस समय एक पत्रकार थे और बाद में जर्मनी में हमारे राजदूत रहे।]

१२३. मदलेन रोलां की ओर से

विला लिओनेत,
विलनेव (वो)
१२ जनवरी १९३६

प्रिय श्री नेहरू,

काफी समय हुआ, गांधीजी के बारे में मुझे कोई सीधा समाचार नहीं मिला, लेकिन 'हरिजन' के दिसंवर अंक में और आज के लोजान के एक पत्र में मैंने पढ़ा कि वह अब अति परिश्रम करने तथा स्नायुओं की उत्तेज़ना के कारण बहुत ही अस्वस्थ हैं। मैं कृतज्ञ होऊंगी यदि आप मुझे वे ताजे विवरण दे सकें, जो कि आपको हिंदुस्तान से मिले हैं।

इसके अलावा मैं आपका ध्यान उस भर्त्सना-योग्य आंदोलन की ओर आकर्षित करना चाहती हूं जो कि गांधीजी पर सोमेंद्रनाथ टैगोर की पुस्तक को लेकर यूरोप के कुछ समाजवादी और साम्यवादी क्षेत्रों में चल रहा है। पिछले सप्ताह जनेवा के एक समाजवादी पत्र 'द्रुआ दे पेप्ल'ने इस पुस्तक पर एक पूरा लेख ही प्रकाशित किया है और गांधीजी के विरुद्ध लगाये गए इन आरोपों का कि वे पूंजीपतियों के हाथ बिक गये हैं और जनता के प्रति विश्वासघाती हैं, आदि-आदि, समर्थन किया है। इस प्रकार के आक्रमण को हजारों ईमानदार पश्चिमी देशवासी, जो कि अपने समाचार-पत्रों की घोषणाओं पर आंख मूंदकर विश्वास करते हैं, पढ़ते हैं और मान लेते हैं।

गांधीजी के सारे विचारों को स्वीकार न करने, उन्हें अपर्याप्त अथवा खतरनाक मानकर उनका विरोध करने का हर किसी सच्चे व्यक्ति को अधिकार है; लेकिन गलत तथ्य, तोड़-मोड़कर दिये गए उद्धरण और मनमानी दुराग्रहपूर्ण बातें कहना मन में विद्रोह पैदा करते हैं, और चूंकि यह बात एक भारतीय द्वारा आई है, इसलिए उसका दोष भारत पर आता है।

हिंदुस्तान के सच्चे दोस्तों के नाम में, ऐतिहासिक सत्य के नाम में—मैं यह नहीं कहूंगी कि गांधीजी के प्रति मित्रता के नाम में, क्योंकि वह पहले व्यक्ति होंगे, जो कि घोषणा करेंगे कि मित्रता के लिए सत्य की बलि कभी नहीं देनी चाहिए—मैं आपसे अनुरोध करती हूं कि आप कृपया उन मुख्य आरोपों का खंडन, भले ही चंद पंक्तियों में, अवश्य करें, जिनका उल्लेख पुस्तक में किया गया है और जो गांधीजी के चरित्र की दुष्टतापूर्ण नासमझी पर आधारित हैं।

प्रिय श्री नेहरू, आप मुझे क्षमा करें, मैं जानती हूं कि अपने देश के लिए आपके सामने बहुत-से कठिन काम करने को हैं, लेकिन क्या उनमें से एक काम यह नहीं है कि दुराग्रहियों से उस व्यक्ति की नेकनामी को बिगड़ने से बचाया जाय, जिसने कि हिंदुस्तान में अपनी आंतरिक शक्ति के प्रति चेतना उत्पन्न की है और अपने विश्वास की बुनियाद पर अपना समूचा जीवन देश की सेवा में समर्पित कर दिया है, और जिसने एक देवदूत के हृदय से दलित वर्ग के पक्ष का समर्थन किया है?

स्वाभाविक रूप से मैं आपकी सेवा में प्रस्तुत हूं कि यदि आप मुझे कोई लेख भेजें तो मैं उसका फ्रेंच में अनुवाद कर दूंगी और अपने भाई की मदद से फ्रेंच पत्र-पत्रिकाओं अथवा समाचार-पत्रों में प्रकाशित करवाने का प्रयत्न करूंगी।

मुझे आशा है कि श्रीमती नेहरू के स्वास्थ्य में बराबर सुधार हो रहा है और शायद हम लोग इसी वसंत में स्विट्ज़रलैंड में मिलेंगे। कृपया उनतक हमारी मंगलकामनाएं पहुंचा दें और अपनी बेटी को हमारा स्मरण करा दें।

सप्रेम आपकी,
मदलेन रोलां

१२४. लॉर्ड लोथियन के नाम

बेडनवाइलर
१७ जनवरी १९३६

प्रिय लॉर्ड लोथियन,

मैंने आपका लम्बा पत्र कई बार और 'ट्वेंटिएथ सेंचुरी' में आपका लेख भी पढ़ लिया। मैं आपको फिर धन्यवाद देता हूं कि आपने उन विषयों पर, जिनमें हम सबकी इतनी गहरी दिलचस्पी है और जो हमपर इतना ज्यादा असर डालते हैं पूरी तरह मुझे लिखने का कष्ट किया। मुझे आपको जवाब देने में कुछ मुश्किल हो रही है, क्योंकि आपने इतना विस्तृत क्षेत्र समेट लिया है कि उसका पूरा उत्तर दिया जाय तो उसमें दुनिया की अधिकांश बड़ी समस्याएं आ जानी चाहिए। यह मेरे बस का काम नहीं है। मगर मैं कुछ पहलुओं पर विचार करने की कोशिश करूंगा। लेकिन बहुत दलील-बाजी से काम नहीं लूंगा और इससे शायद आपको कुछ अंदाज हो जायगा कि मेरा मन किस तरह काम कर रहा है।

मैं आपसे पूरी तरह सहमत हूं कि हम मानव-इतिहास के एक अत्यन्त सृजनात्मक और बदलते युग के बीच में हैं। ऐसा मालूम होता है कि हम एक युग को खत्म करके दूसरे में प्रवेश करनेवाले हैं। मैं इस बात में भी सहमत हूं कि जो आदर्श बहुत ही बुद्धिशाली और भावनाशील मनुष्यों को प्रेरित कर रहे हैं वे ये हैं: द्वेष, भय और संघर्ष से भरे हुए प्रभुता-संपन्न राज्यों की वर्तमान अराजकता को समाप्त करना; और समाजवादी आदर्श,

जिसका लक्ष्य "ऐसी प्रणाली है जिसके द्वारा जमीन और उसके फलों की प्राप्ति का लाभ समाज के सब सदस्यों के लिए, समाज के लिए की गई उनकी सेवा के अनुपात में होगा, न कि आकस्मिक संपत्ति-स्वामित्व के अनुसार ।" आप कहते हैं कि राष्ट्रसंघ पहले आदर्श का प्रतिनिधि है। मेरे खयाल से यह जहांतक एक व्यापक भावना को व्यक्त करता है सही है। किन्तु वास्तविक व्यवहार में वह उस ढंग से काम नहीं करता और उसमें कुछ ऐसी बड़ी शक्तियों की नीति प्रकट होती है, जिनका अपनी विशेष स्थिति या निरंकुश प्रभुता को छोड़ने का कोई इरादा नहीं है और जो संघ का उपयोग संसार को अपने ही लिए सुरक्षित बनाने की खातिर करने का प्रयत्न करते हैं।

एक और सवाल उठता है। यदि संघ की पीठ पर जो लोग हैं वे ईमानदारी से प्रभुता-संपन्न राज्यों की अराजकता को खत्म करना चाहें या लोकमत के कारण उस दिशा में धकेल दिये जायं तो भी क्या वे समाज-व्यवस्था को बुनियादी तौर पर बदले विना या दूसरे शब्दों में समाजवाद को स्वीकार किये विना अपने उद्देश्य में सफल हो सकते हैं? बेशक उन्हें अपना साम्राज्यवाद तो छोड़ना होगा। संघ आज मौजूदा पूंजीवादी प्रणाली से आगे नहीं देखता। सच तो यह है कि वह साम्राज्यवाद की समाप्ति की भी कल्पना नहीं करता। असल में उसका आधार वर्तमान स्थिति पर है और उसका मुख्य कार्य उस स्थिति को बनाये रखना है। इसलिए व्यवहार में वह वास्तव में उसी आदर्श की पूर्ति में एक रुकावट है, जिसका अनेक लोग इसको प्रतिनिधि समझते हैं। यदि यह सच है, जैसा मैं समझता हूं कि है, कि साम्राज्यवाद और प्रभुता-संपन्न राज्यों की अराजकता पूंजीवाद के मौजूदा दौर की अनिवार्य घटनाएं हैं तो इससे यह नतीजा निकलता है कि आप दूसरे से भी मुक्त हुए बिना पहले से मुक्त नहीं हो सकते। इस तरह व्यवहार में संघ का उसके माने हुए आदर्शों के साथ कोई वास्ता नहीं है और वह उन आदर्शों की पूर्ति के मार्ग में कठिनाइयां भी उपस्थित करता है; लेकिन उसके आदर्श भी ऐसे हैं कि वे अन्धी गली में ले जाते हैं। यह अचरज की बात नहीं है कि वह बहुत बार व्यर्थ की परस्पर-विरोधी बातों में फंस जाता है। वर्तमान स्थिति कायम रखने के आधार पर तो वह आगे बढ़ ही नहीं सकता,

क्योंकि साम्राज्यवादी और सामाजिक दोनों पहलुओं में उपद्रव की जड़ यह वर्तमान स्थिति ही है। यह ठीक और मनासिव है कि लीग ऐबिसीनिया में इटली के आक्रमण की निंदा करे और उसे दवा देने की कोशिश करे। परन्तु वही प्रणाली, जिसकी वह रक्षा करता है और जिसे स्थायी बनाना चाहता है हमें उस हमले की ओर अनिवार्य रूप से ले जाती है। मुसोलिनी के इस व्यंग्य का किसी साम्राज्यवादी के पास कोई उचित उत्तर नहीं है कि वह वही कर रहा है जो दूसरी साम्राज्यवादी शक्तियां पहले कर चुकी हैं और अब कर रही हैं, अगर्चे उसके जैसे खास तौर पर जंगली ढंग से नहीं कर रही हैं। यह कुछ तर्क-हीन-सा मालूम होता है कि पूर्वी अफ्रीका में इटली की बमबारी की तो निन्दा की जाय और भारत की उत्तर-पश्चिम सीमा में अंग्रेजों की बमबारी के बारे में शानदार खामोशी रखी जाय।

आप खुद इस राय के हैं कि उद्देश्य की सिद्धि संघ की नियमावली के तरीकों से नहीं होगी। इसलिए संघ से बहुत आशा नहीं रखी जा सकती, सिवा इसके कि वह विश्व-व्यवस्था और शान्ति के पक्ष में एक अनिश्चित और व्यापक भावना को व्यक्त करता है। कभी-कभी वह उस भावना को गतिमान करने और संघर्ष को स्थगित करने में सहायता देता है।

आपने जिन दो आदर्शों का जिक्र किया है वे एक-दूसरे से मिलते-जुलते हैं और मेरा यह खयाल नहीं है कि उन्हें अलग किया जा सकता है। सच तो यह है कि समाजवाद के दूसरे आदर्शों में पहला शामिल है और यह कहा जा सकता है कि असली विश्व-व्यवस्था और शान्ति तभी आयगी जब विश्व-व्यापी पैमाने पर समाजवाद स्थापित हो जायगा। जैसा आप कहते हैं, यह पूरी तरह सच है कि वास्तविक समाजवाद में राय बनाने की गहरी आदतों की और चरित्र की गहरी काया-पलट होती है और इसमें समय लगना अनिवार्य है। माफिक हालात में और संबंधित लोगों की बड़ी संख्या के सद्भाव से ये तब्दीलियां एक पीढ़ी के भीतर की जा सकती हैं। परन्तु जैसे हालात हैं उनमें उस सद्भाव के बजाय हमारे सामने भयंकर विरोध और दुर्भाव है और इसलिए संभव है कि वह काल बहुत लम्बा होजाय। हमारे सामने विचार करने के लिए खास सवाल यह है कि वह वातावरण और परिस्थिति कैसे पैदा की जाय जिसमें ये गहरे परिवर्तन संभव हो सकते हैं। सही दिशा में

असली कदम यही होगा। वर्तमान परिस्थिति में वायुमंडल हमारे खिलाफ हैं और संघर्ष पैदा करनेवाले हमारे आपसी द्वेष, स्वार्थ और परिग्रह को कम करने के बजाय, दरअसल इनसब बुरी बातों को यह वायुमंडल प्रोत्साहन देता है। यह सच है कि इस गंभीर प्रतिकूलता के होते हुए भी कुछ प्रगति की जाती है और कम-से-कम हममें से कुछ अपनी पुरानी आदतों और रायों को चुनौती देने लगते हैं। परन्तु यह प्रक्रिया बहुत धीमी है और विपरीत वृत्तियों के बढ़ने से वह लगभग मटियामेट हो जाती है।

पूंजीवाद ने परिग्रह को और इन गहरी प्रेरणाओं को, जिनसे हम छुटकारा पाना चाहते हैं, उत्तेजन दिया। शुरू-शुरू में उसने बहुत भलाई भी की और उत्पादन बढ़ाकर रहन-सहन की सतह बहुत ऊंची कर दी। और तरीकों से भी उसने उपयोगी काम किया और उससे पहले की स्थिति में अवश्य सुधार हुआ। परन्तु मालूम होता है अब उसकी उपयोगिता नहीं रही और आज वह समाजवादी दिशा में सब तरह की प्रगति को न सिर्फ रोकता है, बल्कि हममें अनेक बुरी आदतों और वृत्तियों को बढ़ावा देता है। मेरी समझ में नहीं आता कि जिस समाज का आधार परिग्रह हो और जिसमें प्रमुख प्रेरणा लाभ के हेतु की हो उसमें हम समाजवादी ढंग पर कैसे आगे बढ़ सकते हैं? इस प्रकार इस परिग्रही समाज की बुनियाद को बदलना और लाभ के हेतु को जहांतक हो सके मिटाना जरूरी हो जाता है, ताकि नई और ज्यादा अच्छी आदतों और सोचने के तरीकों का विकास किया जा सके। इसमें पूंजीवादी प्रणाली का सम्पूर्ण परिवर्तन हो जाता है।

जैसा आप कहते हैं, यह सच है कि पूंजीवादी व्यवस्था ने अन्तर्राष्ट्रीय अराजकता पैदा नहीं की, वह तो महज उसकी वारिस है। भूतकाल में उसने राज्य के भीतर सचमुच गृहयुद्ध को मिटाया या कम किया है। परन्तु उसने वर्ग-संघर्ष को तेज किया है और वह इस हद तक बढ़ गया है कि भविष्य में गृहयुद्ध का खतरा पैदा होगया है। अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में उसने अधिक बड़े पैमाने पर अराजकता को स्थायी बना दिया है और छोटी-छोटी स्थानीय लड़ाइयों के बजाय उसने विशाल और भयंकर राष्ट्रीय संघर्ष पैदा कर दिये हैं। इस तरह हालांकि वह इस अराजकता को पैदा नहीं करता, फिर भी वह अनिवार्य रूप से उसको बढ़ाता है और जबतक वह अपना खात्मा नहीं

कर लेता तबतक उस अराजकता को खत्म नहीं कर सकता। उसने आधुनिक साम्राज्यवादों को पैदा किया है, जो न सिर्फ धरती के बड़े भागों और लाखों लोगों को कुचलते और उनका शोषण करते हैं, बल्कि एक-दूसरे के साथ लगातार संघर्ष में भी आते रहते हैं।

हो सकता है कि मार्क्स इतिहास के भौतिक अथवा आर्थिक अर्थ को समझाने में अतिशयोक्ति करता है। शायद उसने ऐसा इसी कारण किया कि उस पक्ष की बहुत-कुछ उपेक्षा की गई थी या कम-से-कम उस वक्त तक वह पक्ष बहुत कम बताया गया था। परन्तु मार्क्स ने घटनाओं के निर्माण पर दूसरे तत्वों के असर से कभी इन्कार नहीं किया। सबसे ज्यादा जोर एक अर्थात् आर्थिक तत्व पर दिया। यह जोर ज़रा जरूरत से ज्यादा दिया गया तो इससे बहुत फर्क नहीं पड़ता। मेरे खयाल से यह तथ्य तो बाकी रहता ही है कि इतिहास का उनका अर्थ ही ऐसा अर्थ है जिससे कुछ हद तक इतिहास समझ में आता है और उसे अर्थ प्राप्त होता है। उससे हमें वर्तमान को समझने में सहायता मिलती है और यह बिल्कुल मार्के की बात है कि उसकी कितनी भविष्यवाणियां सच निकली हैं।

समाजवाद कैसे आयगा ? आप कहते हैं कि वह उत्पादन और वितरण के साधनों के विश्वव्यापी राष्ट्रीयकरण से नहीं आयगा। क्या उससे लाभ और परिग्रह का हेतु समाप्त नहीं हो जायगा ? और उसके बजाय सामुदायिक और सहकारी हेतु स्थापित नहीं हो जायगा ? और क्या उससे वर्तमान से भिन्न आधार पर एक नई सभ्यता का निर्माण नहीं हो जायगा ? मुमकिन है बहुत-कुछ निजी पहलू की ताकत बाकी रहेगी। कुछ मामलों में, जैसे सांस्कृतिक आदि में, रहनी भी चाहिए। परन्तु तमाम महत्वपूर्ण बातों में भौतिक अर्थ में उत्पादन और वितरण के साधनों का राष्ट्रीयकरण अनिवार्य दिखाई देता है। इसमें समझौते हो सकते हैं, परन्तु साथ-साथ दो विपरीत और संघर्षमयी प्रक्रियाएं नहीं चल सकतीं। चुनाव तो करना ही होगा और जिसका लक्ष्य समाजवाद है उसके लिए एक ही चुनाव हो सकता है।

मेरे खयाल से सिद्धान्त रूप में लोकतंत्री उपायों से समाजवाद कायम करना मुमकिन है, बशर्ते कि पूरी लोकतंत्री प्रक्रिया उपलब्ध हो। फिर भी व्यवहार में बहुत बड़ी कठिनाइयां होने की संभावना है, क्योंकि समाजवाद के

विरोधी जब अपनी सत्ता को खतरे में देखेंगे तब वे लोकतंत्री उपाय को अस्वीकार कर देंगे। लोकतंत्र की अस्वीकृति समाजवादी पक्ष की तरफ से न आती है, न आनी चाहिए, परन्तु दूसरी ओर से होनी चाहिए। वह तो जरूर फासिस्टवाद है। उससे कैसे बचा जाय? लोकतंत्री प्रणाली को अनेक विजयें प्राप्त हुई हैं, परन्तु मैं नहीं जानता कि उसे अभी तक राज्य या समाजवाद की बुनियादी रचना के बारे में संघर्ष मिटाने में कामयाबी मिली है। जब यह सवाल उठता है तब जो मंडली या वर्ग राज्यसत्ता का नियंत्रण करता " वह स्वेच्छा से उसे छोड़ नहीं देता, इसीलिए कि बहुमत उसकी मांग करता है। हमने युद्ध के बाद के यूरोप में और स्वयं लोकतंत्र के ह्रास में इसके काफी उदाहरण देखे हैं। जाहिर है कि कोई समाजवादी कायापलट बहुत बड़े बहुमत के सद्भाव या कम-से-कम निष्क्रिय स्वीकृति के बिना नहीं किया जा सकता।

ब्रिटेन और भारत की बात पर आयें तो मुझे आपके पत्र में बहुत-सी बातें ऐसी मालूम होती हैं जिनके लिए मेरे खयाल से बहुत कम औचित्य है। चूंकि मैं आपके पूर्व पक्ष की बहुत-सी बातों से सहमत नहीं हूं, इसलिए मैं आपके कुछ नतीजों से भी असहमत हूं। आप कहते हैं कि "ब्रिटेन पुराने साम्राज्यवाद को छोड़ रहा है" और ऐसा रास्ता ढूढ़ने की कोशिश में लगा हुआ जिससे "व्यापक राष्ट्रीय आत्म-निर्णय में निहित अराजकता को नये युद्धों में परिणति या साम्राज्यवाद के नये रूप में प्रकटीकरण" से ोका जा सके। मेरी समझ में यह बात बिल्कुल नहीं आती कि ब्रिटेन यह काम कर रहा है। मुझे पुराने साम्राज्यवाद को छोड़ने की बात कहीं दिखाई नहीं देती, बल्कि उससे चिपटे रहने और उसे मजबूत करने के बार-बार और जोरदार प्रयत्न दिखाई देते हैं, हालांकि कुछ बातों में जनता के सामने नया तमाशा रखा जाता है। अवश्य ही ब्रिटेन नई लड़ाइयां नहीं चाहता। वह एक संतुष्ट सत्ता है और उसका पेट जरूरत से ज्यादा भरा हुआ है। उसके पास जो कुछ है उसे वह खतरे में क्यों डाले? वह जैसी स्थिति है उसे कायम रखना चाहता है और उसमें उसका खूब फायदा है। उसे नये साम्राज्यवाद नापसंद हैं, क्योंकि उनका उसके पुराने साम्राज्यवाद से संघर्ष होता है। उसे खुद साम्राज्यवाद से कोई अरुचि नहीं है।

आपने भारत में संवैधानिक रास्ते का भी जिक्र किया है। यह संवैधानिक रास्ता दरअसल क्या है ? जहां कोई लोकतंत्री संविधान हो वहां मैं संवैधानिक प्रवृत्तियों को समझ सकता हूं, लेकिन जहां कोई ऐसी चीज नहीं है वहां संवैधानिक उपायों का कोई अर्थ नहीं है । तब संवैधानिक शब्द का अर्थ महज कानूनी होता है और कानूनी का मतलब सिर्फ इतना होता है कि एक ऐसी स्वेच्छाचारी कार्यकारिणी व्यवस्था की इच्छाओं के अनुसार काम किया जाय जो कानून बना सकती है और लोकमत की परवा किये बगैर हुक्मनामे और फरमान जारी कर सकती है। जर्मनी या इटली में आज क्या संवैधानिक प्रणाली है ? भारत में १९वीं सदी में अथवा २०वीं सदी के प्रारम्भ में या अब भी यह प्रणाली कहां है ? तब भी (या अब भी) ऐसे संवैधानिक उपकरणों के द्वारा, जिनपर भारत के लोगों का काफी असर पड़ सकता हो, भारत में परिवर्तन लाने की कोई संभावना नहीं थी। लोग या तो भीख मांग सकते थे या विद्रोह कर सकते थे। सिर्फ इसी बात से कि भारत के अधिकांश लोगों के लिए अपनी मर्जी को कारगर बनाना असंभव है, जाहिर होता है कि उनके लिए कोई संवैधानिक मार्ग खुला हुआ नहीं है। वे या तो किसी ऐसी चीज को, जिसे सख्त नापसंद करते हैं, मान सकते हैं या कथित संवैधानिक उपायों के सिवा कोई और उपाय अपना सकते हैं। विशेष परिस्थिति में ऐसे उपाय बुद्धिमत्तापूर्ण अथवा बुद्धिमत्तारहित हो सकते हैं, परन्तु उनके संवैधानिक या असंवैधानिक होने का सवाल नहीं उठता।

मैं मानता हूं कि हममें से ज्यादातर लोग अपने विशेष राष्ट्रीय पक्षपात से मुक्त नहीं हो सकते और हमें अक्सर अपनी ही आंखों का शहतीर दिखाई नहीं देता। मैं अच्छी तरह समझता हूं कि मैं भी इसका शिकार जरूर हूं, खास तौर से जब मैं ब्रिटेन और भारत के संबंध का विचार करता हूं। आप उसके लिए गुंजाइश रखिये। फिर भी मैं इतना अवश्य कहूंगा कि मुझे सबसे ज्यादा अचरज इस बात पर होता है कि अंग्रेज लोग किस तरह अपने भौतिक स्वार्थों को अपने नैतिक जोश के साथ मिला देते हैं, कैसे वे यह अटल धारणा रखकर चलते हैं कि वे सदा संसार का भला करते रहे हैं और वे निहायत ऊंचे मकसद से काम करते हैं और उपद्रव, संघर्ष और कठिनाई दूसरों के दुराग्रह और दुष्टता से होती हैं। आप जानते हैं कि इस धारणा को सब लोग

स्वीकार नहीं करते और यूरोप, अमरीका और एशिया में उसका मजाक उड़ाया जाता है। भारत में खास तौर पर, हमें क्षमा किया जाय, यदि हम ब्रिटिश राज के पिछले और मौजूदा अनुभव के बाद उसे बिल्कुल अस्वीकार करते हैं। भारत में जो कुछ हुआ है और हो रहा है उसे देखते हुए वहां लोकतंत्र और संविधान की बातें करना मुझे इन शब्दों के अर्थ का बिल्कुल तोड़-मरोड़ करना मालूम होता है। इतिहास में शासक-सत्ताओं और शासक-वर्गों ने खुशी से राज्य त्याग नहीं किया है और यदि इतिहास की शिक्षा काफी नहीं थी तो हम भारतवालों को तो इस ठोस हकीकत का काफी तजुर्बा भी हो चुका है।

मेरे खयाल से यह सही है कि ब्रिटिश शासक-वर्ग परिस्थिति के अनुकूल बन जाने की एक हद तक वृत्ति रखता है, परन्तु जब उसकी सत्ता के आधार को ही चुनौती दी जाती है तब ऊपरी मेलमिलाप की गुंजाइश नहीं होती। किसीके लिए यह कल्पना करना कि ब्रिटिश सरकार या संसद भारतीय स्वतंत्रता के कृपालु संरक्षक हैं और उसके विकास का नियंत्रण परोपकार भाव से कर रहे हैं, मुझे एक निहायत गैरमामूली खामखयाली मालूम होती है। मैं मानता हूं कि बहुत-से अंग्रेज ऐसे हैं जिनका भारत और उसके लोगों के प्रति सद्भाव है और वे चाहते हैं कि भारत स्वतंत्र होजाय। परन्तु नीति-निर्माण में उनका महत्व नहीं है और वे भी या उनमें से अधिकांश इस तरह सोचते हैं कि भारत की आजादी का ब्रिटिश इच्छाओं और हितों के साथ जोड़-तोड़ बैठ जाय। हमसे कहा जाता है कि जैसे-जैसे हम योग्यता का परिचय देंगे, अधिक स्वतंत्रता और ज्यादा जिम्मेदारी हमारे पास आ जायगी और उसकी कसौटी यह है कि हमारा अंग्रेजों की योजनाओं के साथ कहांतक मेल खाता है। इंग्लैंड के हमारे उपदेशकों और हितैषियों को कभी-कभी यह कहने की जी में आती है कि जरा ईसप की कहानियों को फिर से जान लीजिये और खास तौर पर भेड़िये और मेमने का किस्सा दुबारा पढ़ लीजिये।

यह बिल्कुल सच है कि अधिकांश और बातों की तरह राजनीति में हम कोरी स्लेट पर लिखना शुरू नहीं कर सकते। यह भी सच है कि जीवन अक्सर इतना पेचीदा होता है कि उसमें मानव-तर्क नहीं चलता। हमें जैसी स्थिति होती है उसे स्वीकार करना पड़ता है, चाहे वह हमें पसन्द हो या न हो और

उसके साथ अपने आदर्शवाद का मेल बिठाना पड़ता है, परन्तु हमें चलना चाहिए सही दिशा में। आपके कथनानुसार इसका अर्थ यह है कि सबसे पहले भारत की एकता की रक्षा की जाय और फिर सम्प्रदायवाद को मिटाया जाय; स्थापित स्वार्थों का नियंत्रण और फिर धीरे-धीरे निवारण किया जाय और लोगों के रहन-सहन की सतह ऊंची की जाय। सच्ची भारतीय सेना का विकास किया जाय और लोकतंत्री राज्य में आवश्यक रचनात्मक व्यावहारिक कार्य की भारत के नौजवानों को तालीम दी जाय। इन-सब बातों से परे समाजवादी आदर्श है और सामान्य पृष्ठभूमि ऐसी होनी चाहिए कि इस आदर्श पर सचमुच अमल करने के लिए जिन गहरी वृत्तियों और आदतों की जरूरत है, उनका विकास किया जा सके।

मेरा खयाल है कि हममें से अधिकांश इस बयान से तो सहमत होंगे, हालांकि हम उसे दूसरी भाषा में रख सकते हैं और कुछ उसमें जोड़ सकते हैं या कुछ मुद्दों पर अधिक जोर दे सकते हैं। मैं आपसे इस बात में भी सहमत हूं कि राजनैतिक दौर सबसे पहले आता है। सच तो यह है कि उस दौर के बिना और कोई दौर होता ही नहीं। उसके साथ सामाजिक परिवर्तन हो सकते हैं या उसके बाद जल्दी ही हो सकते हैं। मैं खुद तो राजनैतिक लोकतंत्र को स्वीकार करने के लिए सिर्फ इस आशा से पूरी तरह तैयार हूं कि उससे सामाजिक लोकतंत्र आ जायगा। राजनैतिक लोकतंत्र लक्ष्य पर पहुंचने का रास्ता मात्र है, अंतिम उद्देश्य नहीं है। उसके लिए सच्ची मांग आर्थिक परिवर्तनों की इच्छा से होती है। यह इच्छा कभी-कभी अज्ञात होती है। यदि ये परिवर्तन जल्दी ही नहीं होते तो राजनैतिक रचना स्थिर नहीं हो सकती है। मेरा यह विचार होता है कि भारत की आज जैसी परिस्थिति है, उसमें आर्थिक परिवर्तन की बड़ी जरूरत है और अत्यावश्यक राजनैतिक परि-वर्तन के साथ-साथ अथवा बाद में अनिवार्य रूप से ठोस आर्थिक परिवर्तन होंगे। जो हो, राजनैतिक परिवर्तन ऐसा होना चाहिए, जिससे इन सामाजिक परिवर्तनों के लिए सुभीता होजाय। यदि वह इनके लिए रुकावट बन जाता है तो वह कोई मुनासिब अथवा करने लायक तब्दीली नहीं होगी।

मैं ऐसे किसी जिम्मेदार हिन्दुस्तानी को नहीं जानता जो हिन्दुस्तान की एकता के सिवा और किसी निगाह से सोचता हो। हमारे राजनैतिक

विश्वास का यह जरूरी अंग है और हम जो कुछ करते हैं उसका यही लक्ष्य है। मैं सहमत हूं कि वह एकता संघीय एकता हो सकती है, परन्तु अवश्य ही उसका अर्थ नये कानून के संघ जैसी कोई चीज नहीं है। वह एकता किसी सामान्य जुए के मातहत गुलामी की एकता भी नहीं है। यह मुमकिन है कि अव्यवस्था-काल के कारण फूट पैदा होजाय और भारत में अलग-अलग राज्य बन जायं, परन्तु यह खतरा मुझे बहुत अवास्तविक दिखाई देता है। देशभर में एकता की वृत्ति अत्यधिक प्रबल है।

आपके मतानुसार फूट फैलानेवाले तत्व धर्म, नस्ल और भाषा हैं। नस्ल का महत्व मेरी समझ में नहीं आता। भारत में नस्ल धर्म के साथ गुंथ गई और उसने कुछ-कुछ जाति का रूप धारण कर लिया। हिन्दू और मुसलमान अलग-अलग नस्लें नहीं हैं; असल में वे नस्लों का एक ही मेल हैं। इस तरह हालांकि विविध रूप में नस्लें हैं तो भी एक-दूसरे में मिली हुई हैं और सब मिलकर नस्ल और संस्कृति की दृष्टि से एक निश्चित इकाई बन जाती हैं। भारत की कथित सैकड़ों भाषाएं हमारे आलोचकों के लिए एक प्रिय विषय है। परन्तु आम तौर पर उन लोगों का किसी एक भी भाषा से परिचय नहीं होता। हकीकत यह है कि भारत भाषा की दृष्टि से अनोखे ढंग से और अच्छी तरह से गुंथा हुआ है और लोक-शिक्षा के अभाव के कारण ही बहुत-सी बोलियां पैदा हो गई हैं। भारत की दस बड़ी जबानें हैं, जो थोड़े-से छोटे-छोटे प्रदेशों को छोड़कर सारे देश में फैली हुई हैं। इनके दो वर्ग हैं—आर्य और द्रविड़ और दोनों के बीच में संस्कृत की सामान्य पृष्ठभूमि है। मेरा खयाल है कि आप जानते हैं कि आर्य भाषाओं में हिन्दुस्तानी और उसकी विविध बोलियां बारह करोड़ लोगों की भाषा है और वह फैल रही है। दूसरी आर्य भाषाओं बंगाला, गुजराती और मराठी का उसके साथ बहुत गहरा संबंध है। मुझे विश्वास है कि भारत एकता के रास्ते में हमें और कठिनाइयों का सामना भले ही करना पड़े, परन्तु भाषा का सवाल हमारे लिए बड़ी कठिनाई नहीं होगी।

आप भारत में धर्म की स्थिति की तुलना जागृति और सुधार के समय की यूरोप की स्थिति से करते हैं। यह सच है कि भारत के लोगों का जीवन के संबंध में एक निश्चित धार्मिक दृष्टिकोण है, जिसकी तुलना मध्यकालीन

यूरोप के दृष्टिकोण सें की जा सकती है। फिर भी आपकी तुलना सतह से नीचे नहीं जाती। भारत के लम्बे इतिहास के सारे क्रम में कभी ऐसे धार्मिक झगड़े नहीं हुए, जिनके कारण यूरोप में खून की नदियां बह गईं। भारतीय धर्म, संस्कृति और तत्वज्ञान की सारी पृष्ठभूमि सहिष्णुता और दूसरे धर्म के प्रोत्साहन तक की पृष्ठभूमि थी। जब इस्लाम आया तो कुछ संघर्ष पैदा हुआ, परन्तु वह भी धार्मिक से राजनैतिक कहीं अधिक था, हालांकि जोर हमेशा धार्मिक पहलू पर दिया जाता है। वह संघर्ष विजेताओं और विजितों में था। हाल की घटनाओं के बावजूद मैं आसानी से कल्पना नहीं कर सकता कि किसी बड़े पैमाने पर भारत में धार्मिक संघर्ष होगा। आजकल का सम्प्रदायवाद असल में राजनैतिक, आर्थिक और मध्यम वर्ग का है। मेरा खयाल है (परन्तु मैं निजी जानकारी के विना ऐसा कह रहा हूं) कि अल्स्टर में आज धार्मिक कटुता जितनी गहरी पैठी हुई है उतनी भारत में कहीं नहीं है। यह एक ऐसी हकीकत है, जिसे हमें कभी नहीं भूलना चाहिए कि भारत में साम्प्रदायिकता बाद में पैदा हुई घटना है, जो हमारे देखते-देखते बढ़ी है। इससे उसका महत्व कम नहीं हो जाता और हम उसकी उपेक्षा भी नहीं कर सकते, क्योंकि इस समय वह हमारे रास्ते में एक जबरदस्त रुकावट है और हमारी भावी प्रगति में बाधा डाल सकती है। फिर भी मेरे खयाल से उसको बढ़ा-चढ़ाकर कहा जाता है और उसपर जरूरत से ज्यादा जोर दिया जाता है। बुनियादी तौर पर उसका असर आम लोगों पर नहीं होता, हालांकि कभी-कभी उनके विकार भड़क उठते हैं। सामाजिक प्रश्नों के सामने आने पर वह अवश्य ही पीछे चला जायगा। उग्र साम्प्रदायिक लोगों की साम्प्रदायिक मांगों की जांच कीजिये तो आपको पता चलेगा कि उनमें से किसी एक का भी जरा-सा भी संबंध जनसाधारण से नहीं है। सब गुटों के साम्प्रदायिक नेताओं को सामाजिक और आर्थिक प्रश्नों का भयंकर भय है और यह मजेदार बात है कि सामाजिक प्रगति के विरोध में वे सब एक हो जाते हैं।

हिंदुस्तान में ब्रिटिश राज ने देश की राजनैतिक एकता पैदा करने में अनिवार्य रूप से सहायता दी है। सामान्य पराधीनता के होने से ही उससे पीछा छुड़ाने की सामान्य इच्छा होना अनिवार्य था। यह याद रखना चाहिए—

हालांकि इस तथ्य को काफी अच्छी तरह अनुभव नहीं किया जाता—कि सारे इतिहास में भारत में सांस्कृतिक और भौगोलिक एकता की बिल्कुल असाधारण समझ रही है और परिवहन और संचार के आधुनिक हालात में राजनैतिक एकता की इच्छा जरूर बढ़ेगी। किन्तु सारे ब्रिटिश-काल में शासन-सत्ता की तरफ से, कुछ जान-बूझकर और कुछ अनजाने, इस एकता को मिटाने का प्रयत्न रहा है। अवश्य ही यह आशा तो रखी ही जाती थी, क्योंकि तमाम साम्राज्यों और शासक-मंडलियों की सदा यही नीति रही है। उन्नीसवीं शताब्दी के दौरान में भारत में ऊंचे अफसरों ने खुलकर जिस तरह अपनी राय जाहिर की है उसे पढ़कर दिलचस्पी होती है। उस समय समस्या बहुत तेज़ नहीं हुई थी, लेकिन राष्ट्रीय आंदोलन के बढ़ने के साथ-साथ और पिछले तीस वर्ष में वह तीव्र होगई। ब्रिटिश सरकार की प्रतिक्रिया यह हुई कि इस फूट को पैदा करने और संभव हो तो चिरस्थायी बनाने के लिए नये-नये तरीके निकाले जायं। जाहिर है कि कोई यह नहीं कह सकता कि हिंदुस्तान में फूट की जन्मजात वृत्ति नहीं थी और राजनैतिक सत्ता निकट आते हुए देखकर यह वृत्ति बढ़ने की संभावना थी। इस वृत्ति को हल्का करने की नीति भी अपनाई जा सकती थी और तेज करने की भी। सरकार ने दूसरी नीति अपनाई और देश में फूट फैलानेवाली हरेक प्रवृत्ति को हर तरह से प्रोत्साहन दिया गया। लोगों के ऐतिहासिक विकास को रोकना न उनके लिए संभव था, न और किसीके लिए। परन्तु वे रास्ते में रुकावटें खड़ी कर सकते हैं, और उन्होंने की हैं। इनमें से सबसे ताजा और महत्वपूर्ण वे बाधाएं हैं जो नये कानून में रखी गई हैं। आप इस कानून की तारीफ इसलिए करते हैं कि वह भारत की एकता का प्रतीक है। हकीकत इससे बिल्कुल उल्टी है। वह अधिक फूट का (यदि इसका मुकाबला न किया गया तो) पहला कदम है। वह भारत को धार्मिक और बहुत-से और दायरों में बांट देता है, उसके बड़े-बड़े हिस्सों को सामन्ती अड्डे बनाकर रखता है, जिन्हें कोई छू नहीं सकता, मगर जो दूसरे हिस्सों पर असर डाल सकते हैं और यह कानून सामाजिक और आर्थिक मुद्दों पर अच्छे राजनैतिक दलों का विकास रोक देता है। आप तो इसे "आज के भारत में सबसे महत्वपूर्ण जरूरत" मानते हैं।

सामाजिक मुद्दों पर ब्रिटिश सरकार की नीति भी उतनी ही मार्के की है।

किसी भी किस्म के समाजवाद या स्थापित स्वार्थों के नियंत्रण अथवा निवारण को तो फूटी आंख से भी नहीं देखा जाता, उलटे जान-बूझकर बहुत-से स्थापित स्वार्थों की रक्षा की गई है। नये-नये स्थापित स्वार्थ पैदा किये गए हैं और भारत में राजनैतिक, सामाजिक और धार्मिक प्रतिक्रियावादियों का हमेशा पक्ष लिया गया है। और यह नया कानून इस नीति का ही परिणाम है और पहले कभी स्थापित स्वार्थों, दकियानूसी और प्रतिक्रियावादियों की इतनी शक्ति नहीं हुई थी, जितनी नये संघीय भारत में होगी। यह कानून के बल से उस सामाजिक प्रगति का दरवाजा बन्द कर देता है जो आपके खयाल से हमारा लक्ष्य होना चाहिए। वह इन विदेशी और भारतीय स्थापित स्वार्थों की रक्षा करता है और उनकी जड़ें मजबूत करता है। छोटे-छोटे सामाजिक सुधार के उपाय भी उपलब्ध नहीं हैं, क्योंकि राज्य के आर्थिक साधनों का बहुत बड़ा हिस्सा स्थापित स्वार्थों की रक्षा के लिए रहन और सुरक्षित रख दिया गया है।

आजकल हर देश को प्रतिक्रिया और बुराई की शक्तियों के खिलाफ डटकर लड़ना पड़ता है। भारत इस नियम का अपवाद नहीं है। स्थिति का दुःखद पहलू यह है कि ब्रिटिश जनता अनजाने अपनी संसद और अपने कर्मचारियों के जरिये आज भारत में बुराई की ताकतों के पक्ष में पूरी तरह खड़ी है। जो चीज वह अपने देश में क्षणभर भी बर्दाश्त नहीं करेगी, उसे भारत में प्रोत्साहन दिया जाता है। आपने अब्राहम लिंकन के बड़े नाम का जिक्र किया है और मुझे याद दिलाया है कि वह संघ को कितना महत्व देते थे। शायद आपका यह खयाल है कि कांग्रेस के आन्दोलन को दबाने की कोशिश में ब्रिटिश सरकार का यही पवित्र हेतु है कि फूट फैलानेवाली शक्तियों के मुकाबले में भारत की एकता को कायम रखा जाय। मैं बिल्कुल नहीं समझ सकता कि उस आंदोलन से भारत की एकता को कैसे खतरा है। सच पूछा जाय तो मेरा यह विचार है कि उस आंदोलन या उसके जैसे ही किसी आंदोलन से देश में अनन्य एकता पैदा हो सकती है और ब्रिटिश सरकार की प्रवृतियां हमें उल्टी दिशा में धकेलती हैं। परन्तु इसके अलावा क्या आप यह नहीं समझते कि लिंकन की तुलना किसी पराधीन देश में स्वतंत्रता-आन्दोलन को कुचलने के किसी साम्राज्यवादी सत्ता के प्रयत्न के साथ करना बहुत खींचतान

करना नहीं है ?

आप लोगों में से बुरी और खुदगर्जी की आदतें और वृत्तियां मिटाना चाहते हैं। क्या आपका यह विचार है कि भारत में अंग्रेज लोग इस दिशा में सहायक हो रहे हैं ? प्रतिगामी तत्वों का समर्थन करने के अलावा ब्रिटिश-शासन की पृष्ठभूमि विचार करने योग्य है। अवश्य ही उसका आधार व्यापक हिंसा के उग्र स्वरूप पर है और उसका एकमात्र बल भय है। वह उन साधारण स्वतंत्रताओं का दमन करता है जो किसी प्रजा के विकास के लिए आवश्यक मानी जाती हैं; वह साहसी, बहादुर और तेज तबीयत लोगों को कुचलता है और डरपोक,अवसरवादी और समय-साधक,दब्बू और गुंडे तत्वों को प्रोत्साहन देता है। वह अपने चारों ओर जासूसों, गुप्तचरों और भड़काकर अपराध करानेवाले लोगों की एक विशाल सेना रखता है । क्या ऐसे ही वायुमंडल में वांछनीय गुण विकास करते हैं ? या लोकतंत्री संस्थाएं फूलती-फलती हैं ?

आप मुझसे पूछते हैं कि क्या कभी कांग्रेस सारे भारत के लिए रजामन्दी से कोई उदार संविधान स्थापित कर सकती है, अगर वह बुनियादी बातों में सम्प्रदायवाद, सामन्तवाद और पूंजीवाद को इसी प्रकार की रियायतें न दे ? इसमें यह बात मान ली गई है कि मौजूदा कानून रजामन्दी से कोई उदार संविधान स्थापित कर रहा है। यदि यह संविधान उदार है तो मेरे लिए यह कल्पना करना कठिन है कि अनुदार संविधान कैसा हो सकता है। रही बात रज़ामन्दी की, सो मुझे शंका है कि जितना विरोध और जितनी नाराज़ी नये कानून से हिन्दुस्तान में हुई है उतनी ब्रिटिश सरकार के और किसी काम से हुई हो। प्रसंगवश, जरूरी रजामन्दी हासिल करने के जो उपाय किये गए, उनमें देशभर म अत्यन्त भयंकर दमन भी हुआ और अब भी इस कानून को अमल में लाने की भूमिका के तौर पर सब प्रकार की स्वतंत्रता को दबा देने के लिए अखिल भारतीय और प्रांतीय कानून पास किये गए हैं। ऐसी परिस्थिति में रजामन्दी की बात करना निहायत गैरमामूली बात मालूम होती है। इसके बारे में इंग्लैंड में आश्चर्यजनक गलतफहमी है । यदि समस्या का सामना करना है तो प्रमुख तथ्यों की उपेक्षा नहीं की जा सकती ।

यह सही है कि सरकार राजाओं और विभिन्न अल्पसंख्यक गुटों के

साथ कुछ इंतजाम कर लेने में कामयाब हुई है, लेकिन ये गुट भी बहुत असंतुष्ट हैं। उनके प्रतिनिधित्व पर असर डालनेवाली छोटी-मोटी व्यवस्थाओं की बात दूसरी है। मुख्य अल्पसंख्यक जाति मुसलमानों को लीजिये। कोई नहीं कह सकता कि गोलमेज-परिषद् के अमीर, सामन्ती और दूसरे कठपुतली मुस्लिम सदस्य मुस्लिम जनता के नुमायन्दे थे। आपको यह जानकर आश्चर्य हो सकता है कि अब भी कांग्रेस को काफी मुस्लिम समर्थन प्राप्त है।

क्या कांग्रेस इससे बेहतर कर सकती थी? मुझे कोई संदेह नहीं कि जिस राष्ट्रीय आन्दोलन का प्रतीक और मुख्य अलमबरदार कांग्रेस है वह निश्चित रूप से बेहतर व्यवस्था कर सकती थी। कांग्रेस बेशक मध्यम वर्ग की संस्था है (काश वह अधिक समाजवादी होती) और इसलिए सम्पत्ति का प्रश्न इस स्थिति में किसी तीव्र रूप में खड़ा न होता। साम्प्रदायिक सवाल का सामना करना पड़ता है और मेरा खयाल है कि कम-से-कम फिलहाल बहुत-कुछ रजामन्दी के साथ हल कर लिया जाता। शायद शुरू में सम्प्रदायवाद की कुछ मात्रा रह जाती, परन्तु वह नये कानून में जितनी मात्रा में है उससे कहीं कम होती। इससे अधिक महत्वपूर्ण बात यह होती कि जमीन की समस्या निपटा ली जाती और ऐसे हालात पैदा कर लिये जाते, जिनसे निकट भविष्य में साम्प्रदायिकता खत्म हो जाती और सामाजिक ढंग पर प्रगति होती। वास्तविक कठिनाइयां दो हैं—ब्रिटिश सरकार और सिटी ऑव लंदन के स्थापित स्वार्थ और राजा लोग। पहली कठिनाई मामले का मर्म है,और सब बातें वास्तव में गौण हैं। हालात को देखते हुए राजा लोग काफी हद तक नई परिस्थिति के अनुकूल बन जाते और कांग्रेस जैसी आज बनी हुई है, उन्हें काफी छूट देती। लोकमत का दबाव,जिसमें उनकी अपनी प्रजा का दबाव शामिल है, उनके लिए इतना ज्यादा होता कि वे प्रतिकार नहीं कर सकते थे। शायद शुरू में देशी राज्यों के साथ कोई अस्थायी प्रबंध कर लिया जाता, जिससे इस लोकमत का हालात के बनाने में हाथ मान लिया जाता। अगर यह मान लिया जाय कि राजाओं की खालिस निरंकुशता का समर्थन करने के लिए ब्रिटिश सरकार मौजूद नहीं है तो कोई शक नहीं कि रियासतें धीरे-धीरे रास्ते पर आ जायंगी। गृहयुद्ध का कोई प्रश्न पैदा होना जरूरी नहीं है।

मैं जो कुछ चाहता हूं उससे ये सब बातें बहुत दूर होतीं, परन्तु सही दिशा में यह कम-से-कम एक निश्चित राजनैतिक और लोकतंत्री कदम होता। जाहिर है कि कोई संविधान या राजनैतिक इमारत बनाने में सब संबंधित लोगों को रजामन्द कर लेना असंभव होता है। अधिक-से-अधिक लोगों की सहमति प्राप्त करने की कोशिश की जाती है और दूसरे लोग जो सहमत नहीं होते वे या तो लोकतंत्री प्रणाली के अनुसार रास्ते पर आ जाते हैं या उन्हें दबाकर ठीक किया जाता है। ब्रिटिश सरकार ने, निरंकुश और एकाधिकारवादी परम्परा के अनुसार और अपने ही हितों को कायम रखने पर तुली होने के कारण, राजाओं और कुछ अन्य प्रतिगामी तत्वों की रजामन्दी हासिल करने की कोशिश की और लोगों के विशाल बहुमत को दबाया। कांग्रेस निश्चित रूप से दूसरी ही तरह काम करती।

बेशक ये सारी बातें बिना तथ्य की और हवाई हैं, क्योंकि इनमें मुख्य तत्व ब्रिटिश सरकार और ब्रिटिश आर्थिक हितों की उपेक्षा की गई है।

एक और विचार है, जो ध्यान देने योग्य है। महात्मा गांधी के नेतृत्व में कांग्रेस ने अहिंसा पर और विरोधी को दबाने के बजाय उसका हृदय-परिवर्तन करने पर बड़ा जोर दिया है। इस सिद्धान्त के आध्यात्मिक पहलू और अंतिम रूप में इसके कारगर होने-न-होने की बात को छोड़ भी दें तो इसमें कोई शक नहीं हो सकता कि उसने गृहयुद्ध के खिलाफ और हिंदुस्तान के विभिन्न समूहों के हृदय जीत लेने के पक्ष में एक जबरदस्त भावना पैदा कर दी है। भारत की एकता कायम रखने और विरोध को हल्का कर देने में यह चीज हमारे लिए बड़ी कीमती है।

लोग असहयोग और सविनय-अवज्ञा-आंदोलनों की इस दृष्टि से चर्चा करते हैं कि यह वैधानिक कार्रवाई है या नहीं। मैंने इस पहलू का जिक्र पहले किया है। आपको बताऊं कि मुझपर इनका हमेशा क्या असर हुआ है। अवश्य ही इन आंदोलनों ने ब्रिटिश सरकार पर जबरदस्त दबाव डाला और सरकारी तंत्र को हिला दिया। परन्तु उनका मेरे खयाल से असली महत्व इस बात में था कि हमारे अपने लोगों पर और विशेषतः ग्रामीण जनसाधारण पर क्या असर पड़ा। दरिद्रता और लम्बे अर्से तक निरंकुश शासन में रहने के कारण डर और दबाव का जो अनिवार्य वातावरण पैदा हुआ उससे वे

बिल्कुल साहसहीन और पतित होगये। उनमें नागरिकता के लिए आवश्यक कोई भी गुण नहीं रहा। उनको छोटे-से-छोटे कर्मचारी, कर वसूल करनेवाला, पुलिस का सिपाही, जमींदार का गुमाश्ता थप्पड़ लगाता था और रोव गांठता था। उनमें हिम्मत की एकदम कमी थी और अत्याचार का प्रतिकार करने या मिलकर कार्रवाई करने की कोई क्षमता नहीं रह गई थी। वे दब्बू होगये थे और एक-दूसरे की चुगली खाते थे और जब जीना दूभर हो जाता था तो मरकर बचने की कोशिश करते थे। यह सब बड़ी दुःखद स्थिति थी। फिर भी उन्हें इसके लिए दोष नहीं दिया जा सकता था। वे सर्वशक्तिमान परिस्थिति के शिकार थे। असहयोग उन्हें इस दलदल से वाहर निकाल लाया और उससे उन्हें स्वाभिमान और स्वावलम्बन प्राप्त हुआ। उनमें मिलकर काम करने की आदत पैदा हुई। वे साहस दिखाने लगे और आसानी से अन्यायपूर्ण अत्याचार के आगे दबना उन्होंने बन्द कर दिया। उनका दृष्टिकोण व्यापक हुआ और वे सारे हिंदुस्तान की दृष्टि से कुछ-कुछ सोचने लगे। वे बाजारों और मिलने की जगहों पर (गंवारू ढंग से ही सही) राजनैतिक और आर्थिक प्रश्नों की चर्चा करने लगे। इसी प्रकार मध्यमवर्ग पर भी प्रभाव पड़ा, परन्तु आम लोगों में जो परिवर्तन हुआ वह बहुत ही अर्थपूर्ण था। यह एक उल्लेखनीय कायापलट थी और इसका श्रेय गांधीजी के नेतृत्व में कांग्रेस को मिलना चाहिए। संविधान और सरकार की रचना से यह कहीं अधिक महत्वपूर्ण वस्तु थी। यही बुनियाद थी, जिसपर कोई स्थिर रचना या संविधान का निर्माण किया जा सकता था।

अवश्य ही इन सब चीजों से भारतीय जीवन में कायापलट हुई। आम तौर पर दूसरे मुल्कों में ऐसी तब्दीलियों में बड़े पैमाने पर द्वेष और हिंसा हुई है। परन्तु भारत में महात्मा गांधी की कृपा से ये चीजें मुकाबले में बहुत थोड़ी हुई हैं। हममें युद्ध के अनेक गुण उसकी भयंकर बुराइयों के बगैर पैदा होगये और भारत की वास्तविक अनन्य एकता पहले से कहीं ज्यादा निकट आगई। धार्मिक और साम्प्रदायिक मतभेद भी कम होगये। आप जानते हैं कि ग्रामीण भारत अर्थात् ८५ फीसदी हिन्दुस्तान से संबंधित सबसे महत्वपूर्ण सवाल जमीन का सवाल है। किसी और देश में ऐसा कोई उल्कापात होता और साथ ही भयंकर आर्थिक मन्दी होती तो वहां किसान विद्रोही हो जाते। यह

असाधारण बात है कि हिन्दुस्तान उनसे बच गया। इसका कारण सरकारी दमन नहीं था, बल्कि गांधीजी की शिक्षा और कांग्रेस का संदेश था।

इस प्रकार कांग्रेस ने देश की तमाम सजीव शक्तियों को मुक्त किया और बुरी और फूट पैदा करनेवाली वृत्तियों को दबाया। यह काम उसने शान्तिपूर्ण, अनुशासनबद्ध और यथासंभव सभ्य ढंग से किया, हालांकि ऐसे सामूहिक प्रदर्शन में जोखम तो अनिवार्य रूप से थी। सरकार पर क्या प्रतिक्रिया हुई? और आप इसे अच्छी तरह से जानते हैं, उन सजीव और प्राणवान शक्तियों को कुचलने की कोशिश की गई और बुराई और फूट फैलानेवाली वृत्तियों को प्रोत्साहन दिया गया और यह सब अत्यन्त असभ्य तरीके पर किया गया। पिछले छः वर्षों में ब्रिटिश सरकार ने हिन्दुस्तान में खालिस फासिस्ट ढंग से काम किया है। फर्क इतना-सा ही रहा कि फासिस्ट देशों की तरह उसने इस तथ्य पर खुला गर्व नहीं किया। यह पत्र भयंकर रूप से लम्बा होगया है और अब मैं नये संविधान कानून का ब्यौरेवार विचार नहीं करना चाहता। इसकी जरूरत भी नहीं है, क्योंकि उस कानून का विश्लेषण और आलोचना हिन्दुस्तान में बहुत लोगों ने की है। उनके तरह-तरह के मत हैं, लेकिन एक बात में सब सहमत हैं कि यह कानून उन्हें बिल्कुल पसंद नहीं है। अभी हाल ही में हिन्दुस्तानी नरम दल के नेताओं में से एक बहुत ही मशहूर नेता ने खानगी में नये संविधान को "हमारी तमाम राष्ट्रीय आकांक्षाओं के अत्यन्त जहरीले विरोध का सार" बताया है। क्या यह मार्के की बात नहीं है कि हमारे नरम राजनीतिज्ञ भी इस तरह सोचें और फिर भी भारतीय आकांक्षाओं के प्रति आपकी इतनी उदार सहानुभूति होते हुए आप उस कानून को पसंद करें और कहें कि "उससे हिन्दुस्तान में सत्ता का किला हिन्दुस्तानियों के हाथ में चला जाता है।" क्या हमारे विचार करने के तरीकों में इतनी गहरी खाई है? ऐसा क्यों है? यह राजनीति या अर्थशास्त्र की अपेक्षा मनोविज्ञान की समस्या अधिक बन जाती है।

आखिर तो मनोवैज्ञानिक पहलू बहुत महत्वपूर्ण है। क्या इंग्लैण्ड में इस बात को अनुभव किया जाता है कि भारत के लिए पिछले कुछ बरस कैसे रहे हैं? किस प्रकार मानव-गौरव और शिष्टता को कुचलने के प्रयत्न ने और शरीर से भी अधिक आत्मा पर जो आघात हुए हैं उन्होंने हिंदुस्तानी जनता पर

एक स्थायी असर छोड़ा है। मैंने पहले कभी इतनी अच्छी तरह अनुभव नहीं किया कि कैसे सत्ता के अत्याचारी प्रयोग से, जो उसका प्रयोग करते हैं और जो उस प्रयोग से कष्ट उठाते हैं, उन दोनों का पतन होता है। हम, जो कुछ शिष्ट और सम्मानपूर्ण है उस सबको भूले विना, इसको कैसे भूल सकते हैं ? हम उसे कैसे भूल सकते हैं जब वह रोजमर्रा होता है ? क्या स्वतंत्रता और सत्ता का किला हस्तान्तरित करने की यही भूमिका है ?

अत्याचार की प्रतिक्रिया लोगों पर अलग-अलग होती है। कुछ हिम्मत छोड़कर बैठ जाते हैं, कुछ और मजबूत होते हैं। और-और जगह की तरह भारत में भी दोनों तरहके लोग हैं। हममें-से बहुत-से अपने साथियों को, जो कैद-खाने में या दूसरी तरह के कष्ट भोगते हैं, नहीं छोड़ सकते, चाहे नतीजा हमारे अपने लिए कुछ भी हो। हममें से बहुत-से लोग गांधीजी का अपमान सहन नहीं कर सकते, चाहे हम उनसे सहमत हों या न हों, क्योंकि गांधी हिंदुस्तान के सम्मान का प्रतिनिधि है। कोई समझदार आदमी संघर्ष, कष्ट और विनाश का मार्ग पसन्द नहीं करता। भारत के राष्ट्रीय आन्दोलन ने इस मार्ग से बचने की भरसक कोशिश की। अलबत्ता वह अपने अस्तित्व के आधार को तो छोड़ नहीं सकता था। परन्तु ब्रिटिश सरकार जरूर उसी रास्ते पर चली है और उसने शान्तिपूर्ण हल को ज्यादा-से-ज्यादा कठिन बना दिया है। अगर वह कल्पना करती है कि वह इसी दिशा में चलती रहकर कामयाब हो जायगी तो मालूम होता है कि उसने इतिहास के सबक को और भारत के लोगों की मौजूदा आदत को बहुत गलत समझा है। यदि विनाश से बचना है तो ब्रिटिश सरकार को अपने कदम पीछे हटाने पड़ेंगे।

इतने लम्बे खत के लिए माफ कीजिये।

आपका,

जवाहरलाल नेहरू

दि मार्किस ऑव लोथियन,
सेमूर हाउस,
१७ वाटरलू प्लेस.
लंदन, एस. डब्ल्यू-१

१२५. बरट्रैन्ड रसेल की ओर से

टेलीग्राफ हाउस
हार्टिंग, पीटर्सफ़ील्ड
३० जनवरी १९३६

प्रिय श्री नेहरू,

मुझे बड़ा दुख है कि जब आप इंग्लैंड आयेंगे तब मैं आपसे नहीं मिल पाऊंगा। मेरी पत्नी बीमार हैं और डाक्टर ने उन्हें किसी गरम जगह ले जाने का आदेश दिया है। लेकिन उन्हें यात्रा के योग्य स्वस्थ बनाने में बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ा है। इसकी वजह से मैं अबतक यहीं बंधा रहा और अब मैं विदेश जा रहा हूं। जैसाकि आप जानते हैं, मुझे आपके कार्य से और विशेष रूप से हिंदुस्तान के राष्ट्रीय आन्दोलन को समाजवाद से सम्बद्ध करने के प्रयत्न से पूरी सहानुभूति है। मुझे आशा है कि आपकी यात्रा उपयोगी सिद्ध होगी, यद्यपि सरकारी दृष्टिकोण से यह समय बहुत अनुकूल नहीं है।

मंगलकामनाओं सहित, आपका,
बरट्रैन्ड रसेल

१२६. एम. ए. अन्सारी की ओर से

दारुस्सलाम, दरियागंज,
दिल्ली
११ फरवरी १९३६

प्रिय जवाहर,

तुम्हारे बहुत उम्दा और दिलचस्प खत के लिए बहुत-बहुत शुक्रिया। तुम ठीक कहते हो कि खत एक बहुत ज्यादा निजी और दिली दोस्ती की चीज है। तस्वीरी पोस्टकार्ड से उसका कोई मुकाबला नहीं किया जा सकता। मेरा सुझाव सिर्फ यही था कि जब तुम्हारे लिए अपनी खतो-किताबत को निपटाना नामुमकिन होगया तो तुम्हारा बोझ हल्का हो। लेकिन फिर तुम तुम कहां रह जाओगे, अगर तुम अपने फर्जों को बहादुरी के साथ पूरा न करो, आया वे फर्ज़ अवाम के हों या निजी। मैंने खुद सादा डाक से

विलायत में अपने दोस्तों से खतो-किताबत बंद कर दी है। दो-तीन हफ्ते की घिसी-पिटी खबरें लिखकर जाने देना मुझे वक्त की बरबादी लगती है, जबकि तुम सिर्फ एक हफ्ते पुरानी खबरें दे सकते हो। जवाब में भी ऐसा ही होगा। मुझे उम्मीद है, लोजान पहुंचकर कमला की तंदुरुस्ती बेहतर हो रही है। पता नहीं, कमला लोजान में किस सैनेटोरियम में ठहरी होगी? मुझे लोजान बहुत पसन्द है। क्या ही खूबसूरत शहर है और कैसा बीचों-बीच बसा हुआ है। वहां से आप चुटकी बजाते लेसिन या मन्टना पहुंच सकते हैं। मैं कमला की सेहत की बेहतरी की खबर सुनने के लिए बहुत बेताब हूं। तुम अबतक लोजान लौट आये होगे, जिससे वह बेहद खुश हो गई होगी।

लेकिन मुझे हैरानी हो रही है कि अब जब तुम कांग्रेस के सदर चुन लिये गये हो, तुम क्या करोगे? कमला अभी इतनी कमजोर है कि उसे हिंदुस्तान वापस लाने का सवाल ही नहीं उठता। तुम वहां आधे मार्च से ज्यादा ठहर नहीं सकते। ऐसी सूरत में जब तुम कमला को वहां छोड़कर हिंदुस्तान लौटोगे तो उसकी सेहत पर बहुत खराब असर पड़ेगा। मैं नहीं समझता कि तंदुरुस्ती की मौजूदा हालत में तुम कैसे उसे ज्यादा देर तक छोड़कर रह सकते हो? तुमसे साफ-साफ कह दूं कि जो लोग इस साल तुम्हें कांग्रेस का सदर चुनने के लिए जिम्मेवार हैं वे तुम्हारी घरेलू दिक्कतों के नुक्ते निगाह से और अवाम के नजरिये से तुम्हारे तईं बहुत ही नासमझ और बेरहम हैं। मैं नहीं समझता कि मौजूदा हालत में तुम्हारी असर रखनेवाली शख्सियत भी तुम्हारी सालभर की सदारत के दौरान में कोई खास बात करके दिखा सकेगी! अगर साल के आखिर में कुछ हासिल न हुआ तो महज यह बात कि हमारे सबसे अच्छे आदमियों में से एक कुछ करने में नाकामयाब रहा, एक बहुत बड़ी मायूसी पैदा कर देगी। मैं महसूस करता हूं कि मौजूदा कैफियत में असेम्बलियों का प्रोग्राम (जो हालांकि आजादी या आजादी का जुज भी पास लाने में कोई खास कारआमद साबित न होगा) कम-से-कम जद्दो-जहद से थके हुए लोगों को कुछ आराम का मौका दे देता और आगे आने-वाले वक्त में आगे बढ़ने के लिए बहुत-कुछ शुरुआत का काम कर सकता है। हालांकि बिगड़ी हुई सेहत ने मुझे भाग-दौड़ की सियासत से छुट्टी लेने पर मजबूर कर दिया है, फिर भी तुम्हारे लौटने पर मैं तुमसे साफ-साफ

और तफसील से चर्चा करना चाहूंगा।

मुझे यह कहते हुए बड़ी खुशी है कि महात्माजी अब बेहतर हैं। लेकिन मुझे यह बताया गया कि इस बार उनकी तंदुरुस्ती बहुत खराब होगई थी। मुझे यह बताते भी खुशी होती है कि मेरी तंदुरुस्ती बेहतर है, लेकिन मैं बाल-बाल ही बचा हूं, मुझे और ज्यादा होशियार रहना होगा। ज़ोहरा अपने इम्तहान के नतीजे का इंतजार कर रही है। मुझे उम्मीद है, इस बार वह कामयाब हो जायगी। मैं ठीक से नहीं कह सकता कि इसके बाद वह क्या करेगी। कभी-कभी वह कहती है कि हिंदुस्तान में ही किसी कालिज में भर्ती होकर बी. ए. की तैयारी करेगी, लेकिन कभी-कभी कैम्ब्रिज जाना चाहती है। मैं मामला पूरी तौर पर उसीके ऊपर छोड़ दूंगा। वह तुम्हें, कमला और इन्दू को अपना प्यार और बंदगी भेजती है।

तुम सबको प्यार।

तुम्हारा,
एम. ए. अन्सारी

फिर से—

मैंने सादा डाक से तुम्हें अपनी किताब 'रीजनरेशन इन मैन' भेजी है। मुझे उम्मीद है, तुम्हें पसन्द आयेगी।

१२७. मदलेन रोलां की ओर से

विलनॆव (वो)
१७ फरवरी १९३६

प्रिय श्री नेहरू,

मेरे भाई की वर्षगांठ पर आपकी भेजी गई शुभकामनाओं के लिए मेरे भाई आपको हार्दिक धन्यवाद देते हैं और वह इस बात पर खेद भी प्रकट करते हैं कि आपके प्रस्थान से पहले आपसे मिलना हमारे लिए संभव नहीं है। लेकिन हम अच्छी तरह से जानते हैं कि इससे पहले जो कुछ दिन रह गये हैं उन्हें आप हमारे परिवार को नहीं दे सकते हैं।

मुझे यह जानकर खुशी हुई कि श्रीमती नेहरू पहले से अच्छी हैं।

मैं आशा करती हूं, अगले महीने उनसे मिलने के लिए डाक्टर मुझे अनुमति दे देंगे। इसके अतिरिक्त मैं क्लिनिक को फोन करके पहले मालूम कर लूंगी कि उन्हें मिलने में कब सुभीता रहेगा।

मैं 'सैंटिनेल' का वह अंक भेज रही हूं, जिसमें गांधी पर आपका लेख प्रकाशित हुआ है। 'वांद्रेदी' के पास आपका लेख पहले से ही था, इसलिए उसमें वह नहीं छप सका, लेकिन मैंने उसे 'यूरोप' को भेज दिया है। पत्र की व्यवस्था में परिवर्तन हो जाने के कारण मुझे अबतक उसके बारे में कोई सूचना नहीं मिली, लेकिन श्री राजाराव से, जो वहां से आ रहे हैं, मैंने अनुरोध किया है कि वह इस मामले को अपने हाथ में लें।

मैंने कुमारी इंदिरा से कहा था कि वह कांग्रेस के अध्यक्ष-पद के लिए आपके नये चुनाव पर आपको हमारी बधाई दें। हिंदुस्तान की दृष्टि से हमें इस बात पर बड़ी प्रसन्नता है। आपके लिए हमारी शुभ कामनाएं।

सप्रेम,

मदलेन रोलां

वहां के हमारे सब मित्रों को हमारी ओर से अभिवादन देने की कृपा कीजिये।

१२८. एलेन विल्किन्सन की ओर से

हाउस ऑव कामन्स,

लंदन

१७ फरवरी १९३६

प्रिय जवाहरलाल,

(मैं समझता हूं कि इस बार मैंने सही-सही लिखा है!)

कृपाकर टाइप किया हुआ पत्र भेजने के लिए क्षमा कीजियेगा। लेकिन आपका पत्र आने के बाद से मुझे दम मारने की भी फुर्सत नहीं मिली। इसी बीच मुझे हवाई जहाज से बर्लिन की एक तूफानी यात्रा भी करनी पड़ी।

अलग डाक से मैं 'टाइम एण्ड टाइड' की एक प्रति भेज रहा हूं, जिसमें, मैं समझता हूं, आप अपनी यात्रा के बारे में प्रोफेसर लास्की के विचार पढ़ना पसन्द करेंगे, जिसमें कि हम सबकी प्रतिध्वनि है।

लेडी रोन्डा ने मुझसे पूछा है कि शांति की रक्षा की सम्भव युक्तियों के बारे में जेरल्ड हर्ड 'टाइम एण्ड टाइड' में जो लेखमाला लिख रहे हैं उसमें उनके बाद क्या आप भी कुछ लिख सकेंगे ? ब्रिटिश उपनिवेशों और विरोधी देशों के साथ कुछ-न-कुछ समझौता करने के बारे में आपने लायड जार्ज को जो कहते सुना है, वही विचार पार्लमेंट के काफी सदस्यों का है। आपने अपने भाषण में कहा था—"औपनिवेशिक देशों का क्या होगा ? जो कुछ होनेवाला है, क्या उसके बारे में उन्हें कुछ कहने का अधिकार नहीं होगा ? क्या उन्हें यह बताने का अधिकार नहीं है कि वे अपना स्वामी बदलना चाहते हैं या कोई स्वामी चाहते भी हैं या नहीं ?" आपकी इस बात का लोगों पर जो असर पड़ा वह मैंने लेडी रोन्डा को बता दिया है। वह जानना चाहती हैं कि इस देश में उपनिवेशों के साथ सहयोग करने के बारे में जो सद्भावनापूर्ण चेष्टाएं की जा रही हैं उनके संबंध में क्या आप उपनिवेशों की ओर से अपने विचार प्रकट करना चाहेंगे . . . चाहे आप कितने ही जोरदार शब्दों में अपने विचार प्रकट करना क्यों न पसंद करें ? मैं समझता हूं कि अगर आपके पास समय हो तो ऐसा करना उचित होगा। बेशक इसके लिए पारिश्रमिक दिया जायगा, यद्यपि मुझे भय है कि वह ज्यादा नहीं होगा। लेडी रोन्डा का खयाल है कि लगभग एक हजार शब्द काफी होंगे। अगर आप समझते हैं कि आप भारत जाने से पहले ऐसा नहीं कर सकेंगे और रास्ते में जहाज पर से कुछ लिखकर भेजना पसन्द करेंगे तो आप कृपाकर लेडी रोन्डा को ऐसा लिख भेजिये। उनके दफ्तर का पता है—३२ ब्लूम्सबरी स्ट्रीट, डब्ल्यू. सी.-१।

मुझे यह जानकर बड़ी प्रसन्नता है कि आपने कमला को पहले से कुछ अच्छा पाया और इस बात की सम्भावना है कि वह खतरे को पार कर गई हैं।

आप हमारे साथ रहे, यह हमारे लिए एक बड़े सौभाग्य की बात है। आपकी इस यात्रा से मूर्ति-पूजकों के बीच बड़ी सद्भावना फैली है।

आप दोनों को आदरसहित,

आपका,

श्री जवाहरलाल नेहरू एलेन

१२९. रोम्यां रोलां की ओर से

विला ओल्गा,
विलनेंव (वो)
मंगलवार, २५ फरवरी १९३६

प्रिय मित्र,

अपने बुरे स्वास्थ्य के कारण मैं आपके जाने से पहले आपके प्रति सम्मान प्रदर्शित करने के लिए नहीं आ सका। जबतक आप और मैं एक ही जगह पर थे, उसी बीच ही मैं चाहता था कि कम-से-कम आपको, आपकी पत्नी तथा आपके प्यारे देश को स्नेहभरी शुभकामनाएं भेज दूं।

भावना के स्तर पर मैं अनुभव करता हूं कि यह विछोह आपके लिए कैसा होगा! मेरी कामना है कि आगे आनेवाले वसंत तक श्रीमती जवाहरलाल नेहरू के स्वास्थ्य में सुधार होजाय और आप शांत मन से अपने उस कार्य पर लौटें, जो वहां आपकी प्रतीक्षा कर रहा है।

मुझे आशा है कि आपके मार्ग-दर्शन में हिंदुस्तान हमारे पश्चिम की तरह इस बात को जान जायगा कि उसकी राष्ट्रीय स्वाधीनता और सामाजिक प्रगति में जो रोड़े अटका रहे हैं, उन सबके विरुद्ध किस प्रकार 'जनवादी मोर्चा' प्रस्तुत करें।

मुझसे कहा गया है कि मैं आपसे और गांधीजी से भी अनुरोध करूं कि आप दोनों उस विश्व-शांति-सम्मेलन में शामिल हों, जिसे हम गर्मियों के अंत में, संभवतः सितंबर में, जिनेवा में करने जा रहे हैं। वह एक विशाल और शक्तिशाली कांग्रेस होगी—एक प्रकार से विश्व-व्यापी शांति की शक्तियों को सक्रिय करने के लिए। फ्रांस, इंग्लैंड, अमरीका, चैकोस्लोवेकिया, स्पेन, बेलजियम, हालैंड तथा दूसरे बहुत-से देशों के अनेक राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं और सम्माननीय व्यक्तियों ने उसमें आना स्वीकार कर लिया है (इंग्लैंड के लार्ड राबर्ट सैसिल, मेजर एटली, नारमन एंजिल, फिलिप नायल बेकर, एलेग्जेंडर, प्रो. लास्की। फ्रांस के एरिओ, पियेर को, जुओ, काद्रें, राकामों, प्रो. लांज्वें, इत्यादि। चैकोस्लोवेकिया के बेनेश्, होज़ा। स्पेन के अयान्या, आलवारेय देल वागो आदि। बेलजियम के लुई दे ब्रुकेर, आंरी लाफोंतेन इत्यादि)। इसका मतलब यह हुआ कि राष्ट्रीय

तथा अंतर्राष्ट्रीय पैमाने पर एक ऐसा संगठन बनेगा, जो विश्वव्यापी ज्वाला के संकटपूर्ण खतरे का प्रतिरोध करेगा। हमारे भारतीय मित्रों को जब आप हमारा अभिवादन दें तो कृपया इस संबंध में भी उनसे चर्चा करलें। उनका और आपका भी उत्तर या तो मुझे भेज दिया जाय या 'युद्ध और फासिज्म-विरोधी संघर्ष की विश्व-समिति' के कार्यालय को, जिसका कि उन्होंने मुझे अवैतनिक अध्यक्ष बनाया है। (२३७ लाफाइयेत पेरिस-१०)।

मुझे आशा है, हम लोगों का आपसे और हमारे भारतीय मित्रों से नियमित पत्र-व्यवहार करते रहना संभव होगा। इसका मतलब यह हुआ कि हिंदुस्तान में जो भी सामाजिक और राजनैतिक कार्य हों, उनके बारे में पश्चिमी राय बराबर ध्यान में रहे, क्योंकि इधर बहुत-से ऐसे लोग हैं, जो कि उस विषय में मौन रहते हैं या झूठी खबरें फैलाते हैं।

मैं सम्पूर्ण हृदय से आपसे हाथ मिलाता हूं। मेरे प्यारे मित्र, स्वस्थ रहना, प्रसन्न रहना और अपने उस ध्येय को प्राप्त करना, जो कि सच्चे भारत का ध्येय है।

सादर,

आपका,

रोम्यां रोलां

गांधी और उनके मित्रों को—मीरा, प्यारेलाल और महादेव देसाई, जो कि विलनेव में हमारे अतिथि रहे थे—मेरा अभिवादन निवेदन कर दीजिये।

'वांद्रेदी' में आपका जो लेख मैदम आंद्रे विवलि की भूमिका के साथ प्रकाशित हुआ है, उसे मैंने बड़ी रुचि से पढ़ा है। आपका दूसरा लेख, जो आपने मेरी बहन को भेजा है, 'यूरोप' के मार्च अंक में छपेगा।

१३०. सुभाषचंद्र बोस की ओर से

कुरहाउस् हख्लान्ड
बाडगाश्टाइन (आस्ट्रिया)
४ मार्च १९३६

प्रिय जवाहर,

लम्बी और थका देनेवाली यात्रा के बाद मैं कल सुबह यहां पहुंचा।

यह स्थान सुन्दर और शांत है। मैं चाहता हूं कि काम के भंवर-जाल में कूद पड़ने के पहले तुम यूरोप में थोड़ा आराम कर लो।

तुमसे विदा होने के बाद मैं सोच रहा हूं कि क्या सचमुच मुझे उस तरह का बयान जारी करना चाहिए जैसा कि मैंने तुमसे जिक्र किया था। मेरा खयाल है कि मुझे बयान देना चाहिए, कारण मेरे पुनः जेल जाने की संभावना है और कुछ लोग जरूर ऐसे होंगे जो मेरे सुझाव पाना चाहेंगे। मैं यथासंभव संक्षिप्त बयान दूंगा और उसमें साफ तौर से जता दूंगा कि मैंने निश्चित रूप से तुम्हें पूरा समर्थन देने का फैसला किया है।

आज के प्रमुख नेताओं में से तुम्हीं एक ऐसे व्यक्ति हो, जिससे हम कांग्रेस को प्रगतिशील दिशा में ले जाने की आशा कर सकते हैं। इसके अलावा, तुम्हारी स्थिति असाधारण है, और मेरे खयाल से महात्माजी भी और किसीकी अपेक्षा तुम्हारा ज्यादा लिहाज करेंगे। मेरी हार्दिक अभिलाषा है कि तुम फैसले करने में अपनी सार्वजनिक स्थिति की मजबूती का पूरा फायदा उठाओगे। कृपया अपनी स्थिति को वास्तविकता से अधिक कमजोर मत समझो। गांधीजी हरगिज ऐसा रुख नहीं अपनायेंगे, जो तुम्हें दूर ले जानेवाला हो सकता है।

जैसा कि मैंने अपनी पिछली बातचीत में सुझाया था तुमको तत्काल दो काम करने होंगे : (१) हर तरह से पदग्रहण को रोको, (२) कांग्रेस कार्य-समिति को विस्तृत और व्यापक करो। यदि यह कर लोगे तो तुम कांग्रेस को पतन से बचा लोगे और उसे लीक से बाहर ला सकोगे। बड़ी समस्याओं का हल थोड़ी प्रतीक्षा कर सकता है, किन्तु कांग्रेस को पतन की राह पर जाने से तो तुरन्त ही बचाना होगा।

मुझे यह जानकर बड़ी खुशी हुई कि तुम कांग्रेस का विदेश-विभाग स्थापित करना चाहते हो। यह बात मेरे विचारों से पूरी तरह मेल खाती है।

मैं इस पत्र को लम्बा नहीं करना चाहता, क्योंकि तुम्हें भी रवाना होने की जल्दी होगी और रवाना होने के पहले बहुत-से काम निपटाने होंगे। मैं तुम्हारी सकुशल स्वदेश-यात्रा की कामना करता हूं, और जो कठिन कार्य तुम्हारा इन्तजार कर रहा है, उसमें तुम्हारी प्रचुर सफलता चाहता हूं।

अगर मुझे लखनऊ आने दिया गया तो मेरी सेवाएं तुम्हारे अधीन होंगी ।

तुम्हारा,
सुभाष

१३१. एच. एन. ब्रेल्सफ़ोर्ड की ओर से

३७ बेल्साइज़ पार्क गार्डन्स,
लंदन एन. डब्ल्यू. ३
८ मार्च १९३६

कृपाकर इसका उत्तर न दें ।

प्रिय नेहरू,

आपको जो धक्का लगा है, उसकी, मैं समझता हूं, आपको महीनों से शंका रही होगी, फिर भी आप सदा यही आशा करते रहे होंगे कि प्रकृति कोई जादू कर देगी । लेकिन दुःख का यह पहाड़ आखिर आपपर अटूट ही पड़ा । मुझे भय है कि इतने दिनों की लम्बी चिन्ता के बाद आपमें इतनी शक्ति नहीं रह गई होगी कि आप इस दुःख का सामना कर सकें । आपके मित्र चाहे कितनी भी सहानुभूति दिखायें, उससे आपका दुःख कम नहीं हो सकता । हां, मुझ जैसे लोग, जो उनसे मिल चुके हैं—मैं तो उनसे क्षणभर के लिए ही मिल पाया था—वे आपकी विपदा का अनुभव अवश्य कर सकते हैं, क्योंकि वे जानते हैं कि आपकी पत्नी कितनी अच्छी और असामान्य महिला थीं । लेकिन अगर मेरे शब्दों से आपको कुछ ढांढस मिले तो मैं कहना चाहूंगा कि हमें आपके दुःख में आपके साथ बड़ी गहरी और हार्दिक सहानुभूति है ।

दुःख की इस घड़ी में आप अपना कम मूल्यांकन न करें । हिंदुस्तान को आपकी बहुत आवश्यकता है, खास तौर से और व्यक्तिगत रूप में आपकी । मैं समझता हूं कि कमोबेश मैं आपके यहां के दूसरे नेताओं को भी जानता हूं । किसीमें भी आप जैसा साहस और मानसिक बल नहीं है । सबसे बड़ी बात यह है कि वर्गहीन समाज की जो कल्पना आपके मस्तिष्क में है वह किसीके मस्तिष्क में नहीं है । आप यह विश्वास मानिये कि इतिहास ने आपको ही नेतृत्व करने के लिए चुना है और इस विश्वास से अपने में शक्ति भरिये ।

आपने 'विश्व इतिहास की झलक' की एक प्रति भेजने की जो कृपा की है उसके लिए क्या मैं आपको धन्यवाद दे दूं ? इसे मैं बड़ी दिलचस्पी के साथ पढ़ूंगा। आपने मुझे याद किया, इससे मैं बड़ा अभिभूत हुआ हूं।

स्नेहसहित,

आपका,
एच. एन. ब्रेल्सफोर्ड

१३२. महात्मा गांधी की ओर से

दिल्ली
९ मार्च १९३६

प्रिय जवाहरलाल,

तो तुम कमला को सदा के लिए यूरोप में छोड़कर लौट आये ! फिर भी उसकी आत्मा कभी भारत से बाहर नहीं थी और हममें से अनेकों की भांति सदा तुम्हारा रत्न-भंडार बनकर रहेगी। मैं उस अंतिम वार्तालाप को कभी नहीं भूलूंगा, जिसने हमारी चार आंखों को गीला किया था।

यहां भारी जिम्मेदारी तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही है। वह तुमपर डाली गई है, क्योंकि तुम उसे उठाने की क्षमता रखते हो। तुम्हारे पास आने का मेरा साहस नहीं होता। मेरे शरीर में मूल लचक वापस आगई होती तो साहस करता। मुझमें कोई भीतरी खराबी नहीं है। शरीर का वजन तो बढ़ा ही है। परन्तु तीन ही महीने पहले जो जीवन-शक्ति इसमें थी वह जाती रही। आश्चर्य की बात यह है कि मुझे कभी बीमारी महसूस नहीं हुई। फिर भी शरीर कमजोर होगया था और यंत्र ऊंचा रक्तचाप बताता था। मुझे सावधान रहना पड़ेगा।

मैं आराम लेने के लिए कुछ दिन दिल्ली में हूं। अगर तुम्हारी मूल योजना कार्यान्वित हो जाती तो मैं अपनी मुलाकात के लिए वर्धा में रह जाता। तुम्हारे लिए वहां अधिक शांति होती। लेकिन तुम्हारे लिए एक-सी ही बात हो तो हम दिल्ली में मिल सकते हैं। वहां मैं कम-से-कम इस महीने की २३ तारीख तक रहूंगा। लेकिन अगर तुम्हें वर्धा ज्यादा पसन्द हो तो मैं वहां इससे पहले लौट सकता हूं। अगर तुम दिल्ली आओ तो किंग्स्वे में नये बनाये गए हरिजन-निवास में मेरे साथ ठहर सकते हो। यह काफी अच्छी

जगह है। जब बता सको मुझे बता देना कि हमारे मिलने की कौन-सी तारीख रहे। राजेन्द्रबाबू और जमनालालजी तुम्हारे साथ हैं या होंगे। वल्लभभाई भी होते, परन्तु हम सबने सोचा कि वह दूर रहें तो बेहतर होगा। दूसरे दोनों वहां राजनैतिक चर्चा के लिए नहीं, पर मातमपुरसी के लिए गये हैं। राजनैतिक चर्चा तब होगी जब हम सब मिलेंगे और तुम घरू कामकाज निपटा लोगे।

आशा है, इन्दू ने कमला के निधन का और तुम्हारे तुरंत के वियोग का दुःख भली प्रकार सहन कर लिया होगा। उसका पता क्या है?

तुम सब प्रकार सकुशल होगे।

सप्रेम,
बापू

१३३. सुभाषचंद्र बोस की ओर से

कुरहाउस् हख्लान्ड,
बाडगाश्टाइन (आस्ट्रिया)
१३ मार्च १९३६

प्रिय जवाहर,

मुझे अभी-अभी विएना-स्थित ब्रिटिश कौंसिल का जरूरी पत्र मिला है, जो इस प्रकार है:

> "मुझे विदेश-मंत्री ने आपको यह चेतावनी देने के लिए हिदायत दी है: भारत सरकार को समाचारपत्रों से यह पता चला है कि आप इसी महीने भारत लौटना चाह रहे हैं और भारत सरकार यह स्पष्ट करना चाहती है कि अगर आपने ऐसा किया तो आप स्वतंत्र रहने की आशा नहीं कर सकते।
>
> (ह.) जे. डब्ल्यू. टेलर
> ब्रिटिश कॉन्सल"

मैं अपनी यात्रा का प्रबंध करने जा ही रहा था कि यह पत्र मिला। सच बात यह है, मैंने अपने प्रवास का प्रबंध करने में इसलिए देरी की कि मैं यह अंदाज कर रहा था कि समुद्री यात्रा से ज्यादा फायदा होगा या हवाई

यात्रा से। हवाई यात्रा की दशा में मैं अपने इलाज का क्रम यहां पूरा कर सकता था, जिसमें कुल पच्चीस दिन लगेंगे।

यहां कोई ऐसा व्यक्ति नहीं है और न यूरोप में ही कोई दिखाई देता है, जिससे ऐसे मामले में सलाह ली जा सके। फिलहाल मेरा झुकाव तो यही है—तुम अपनी खुद की प्रतिक्रिया से भी उसकी भली-भांति कल्पना कर सकते हो—कि इस चेतावनी की उपेक्षा करूं और स्वदेश के लिए रवाना हो जाऊं। केवल एक ही बात का विचार करना है कि कौन-सा मार्ग सार्वजनिक हित की दृष्टि से ठीक होगा। व्यक्तिगत लाभ-हानि का मेरे लिए कोई महत्व नहीं है और व्यक्तिशः मैं वही रास्ता अपनाने को तैयार हूं, जिससे सार्वजनिक हित होता हो। मैं सार्वजनिक मामलों से इतने अधिक समय से अलग हूं कि मेरे लिए यह पता लगाना मुश्किल है कि कौन-सा कदम सार्वजनिक हित के खयाल से सबसे अच्छा रहेगा। शायद तुम इस बारे में मुझे सलाह दे सको। मैं यह जानता हूं कि तुम्हारे लिए भी ऐसी हालत में किसी दूसरे को सलाह देना मुश्किल होगा। किन्तु तुम आसानी से व्यक्तिगत मुद्दे को भुला दे सकते हो—मैं जानता हूं कि जब सार्वजनिक सवाल सामने हो तो तुम ऐसा कर सकते हो—और एक सार्वजनिक कार्यकर्ता को एकमात्र सार्वजनिक हित के खयाल से सलाह दे सकते हो। अपने देश के सार्वजनिक जीवन में जो प्रमुख स्थान तुम्हें प्राप्त है, उसकी दृष्टि से भी तुम ऐसी अजीब और अरुचिकर परिस्थितियों में सलाह देने की जिम्मेदारी से बच नहीं सकते।

मैं इस मामले में तुम्हें केवल इसीलिए कष्ट देना चाहता हूं कि मैं और ऐसे किसी व्यक्ति की कल्पना नहीं कर सकता, जिसपर मैं अधिक भरोसा कर सकूं। समय इतना थोड़ा है कि मैं कई लोगों की सलाह ले भी नहीं सकता। अपने रिश्तेदारों से सलाह लेना भी बेकार होगा; क्योंकि हो सकता है कि वे इस मामले पर विशुद्ध सार्वजनिक दृष्टि से विचार न कर सकें। अतः मेरे लिए यही रास्ता खुला है कि मैं तुम्हारी सलाह पर भरोसा करूं। तुमको यह पत्र २० ता. तक मिल जायगा। अगर तुम कृपाकर के, पत्र मिलने के फौरन बाद तार से जवाब दो तो वह मुझे समय पर मिल जायगा। मैं के. एल. एम. वायुयान पकड़ सकता हूं, जो रोम से २ अप्रैल को रवाना होता है। इस तरह अगर मैं २१ या २२ को भी भारत के लिए रवाना होने का

आख़िरी फैसला करूं तो मुझे उस हवाई जहाज में जगह मिल सकती है, जो रोम से २ अप्रैल को रवाना होता है। यह भी मुमकिन हो सकता है कि मुझे २९ मार्च को रवाना होनेवाले हवाई जहाज में जगह मिल जाय।

जब मैंने इस तरह स्वदेश लौटने का इरादा किया था कि मैं लखनऊ कांग्रेस में शरीक हो सकूं तो अवश्य ही यह संभावना थी कि हिंदुस्तान में उतरते ही मुझे पकड़कर जेल में बंद कर दिया जायगा। लेकिन साथ ही यह संभावना भी थी कि मुझे कम-से-कम कुछ समय आजाद रहने दिया जायगा। यह संभावना अब बिल्कुल खत्म हो जाती है और अब स्वदेश लौटने का मतलब होता है जेल में दाखिल होना। बेशक जेल में जाने की भी जन-हित की दृष्टि से अपनी उपयोगिता है, और इस प्रकार के सरकारी आदेश की अवहेलना करने और जान-बूझकर जेल का आवाहन करने के हक में बहुत-कुछ कहा जा सकता है।

कृपया यथासंभव शीघ्र मुझे उत्तर भेजें। इस पते पर तार भेज सकते हैं :

बोस, कुरहाउस्, हख्लान्ड, बाडगाश्टाइन, आस्ट्रिया।

आशा है, तुम्हारी यात्रा आरामदेह रही होगी और तुम्हारा स्वास्थ्य संतोषजनक होगा।

तुम्हारा,
सुभाष

कल ही मैंने एक अखबारी संदेश में यह संकेत दिया है कि यहां अपना इलाज पूरा करने के बाद वायुयान द्वारा मेरे जाने की संभावना है।

सु. च. बोस

१३४. एलेन विल्किन्सन की ओर से

हाउस ऑव कामन्स
लन्दन
२२ मार्च १९३६

प्रिय जवाहरलाल,

क्षमा कीजिये, यह पत्र टाइप कराके भेज रहा हूं। इसका अर्थ यह नहीं है कि मैं जल्दी में हूं या ऐसा मैंने औपचारिकता के कारण किया है, बल्कि बात केवल इतनी है कि आदत पड़ जाने के कारण यह मशीन ही मेरे लिखने

का स्वाभाविक ढंग बन गई है (गांधीजी की प्रतिच्छाया !) । लेन ने मेरे पास आपकी किताब के पेजप्रूफ भेजे हैं। इसे पढ़कर मैं सचमुच रोमांचित हो उठा हूं। यह बात मैं विनम्रतावश नहीं कह रहा हूं। कुछ जरूरी काम के लिए मैं कामन्स-सभा से जल्दी ही घर लौट आया था। किताब मेरी प्रतीक्षा कर रही थी और मैंने बैठकर उसे उसी रात पढ़ डाला। फिर मैंने खुद चाय बनाई और सबेरे साढ़े पांच बजे के आसपास उसे आपकी याद में पीया।

यह एक महत्वपूर्ण पुस्तक है और हिंदुस्तान की वर्तमान स्थिति को समझने के लिए अनिवार्य है। आपके प्रकाशकों को चिन्ता है कि यह कहीं जब्त तो नहीं कर ली जायगी। जसाकि आप जानते हैं, यह बात केवल बड़े अधिकारी बता सकते हैं। मैं समझता हूं कि बहुत-कुछ प्रकाशन के समय की स्थिति पर निर्भर होगा। शायद लोग यह सोचें कि आपने गांधीजी की जो आलोचना की है, उससे कांग्रेस में फूट पड़ने में सहायता मिलेगी। हमारे देशवासियों के सरकारी दिमाग के बारे में कुछ निश्चय के साथ नहीं कहा जा सकता। जब आपके देश की बात उठती है तब यहां के समझदार-से-समझदार लोगों को भी कुछ हो-सा जाता है।

फिर भी अधिकारियों ने इसका हिंदुस्तान के लिए निषेध किया तो उनके ऐसा करने से इंग्लैंड और अमरीका में पुस्तक के लिए बड़ा शानदार प्रचार हो जायगा। कामन्स-सभा में हम खूब हो-हल्ला मचायेंगे और उस ओर जनता का ध्यान आकर्षित करेंगे। सच तो यह है कि इंग्लैंड में ऐसी पुस्तक की अधिक आवश्यकता है। अच्छे-से-अच्छे वामपक्षियों को भी भारत के संबंध में घोर अज्ञान है। मैं समझता हूं कि पुस्तक के अन्तिम परिच्छेदों से और आपने कांग्रेस तथा गांधीजी का जो विश्लेषण किया है उससे तथा आपने जो समाजवादी निष्कर्ष निकाला है उससे भी इंग्लैंड के समाजवादियों में इसके प्रति बड़ी रुचि जागृत हो जायगी। ताल्लुकेदारों के बारे में गांधीजी के विचार सब लोग जान गये हैं। यह सब 'मेनचैस्टर गार्जियन' और 'दि टाइम्स' की बदौलत हुआ है। काफी लोगों की यह आम भावना है कि आप गांधीजी के आध्यात्मिक पुत्र और उत्तराधिकारी हैं।

हो सकता है कि ये सारी बातें आपको रुचिकर न लगें, क्योंकि आपने

यह पुस्तक विशेष रूप से हिंदुस्तान के लिए लिखी है। अगर अधिकारियों ने पुस्तक को सचमुच जब्त किया तो यह एक बहुत ही लज्जाजनक बात होगी, क्योंकि जिन बातों को लेकर आप क्रोध से आगबगूला हो सकते थे उनके संबंध में आपने बड़ी शान से अवैयक्तिक ढंग से विचार किया है। मैं इस बात की चेष्टा करूंगा कि प्रकाशन से पहले एक-दो प्रभावशाली व्यक्ति इस पुस्तक को पढ़ लें। इससे निश्चय ही सहायता मिलेगी।

जब मुझे आपकी पत्नी का दुःखद समाचार मिला तो मैंने आपको पत्र नहीं लिखा। मैंने सोचा कि जो कुछ भी शब्दों में कहा जा सकता है वह सब मेरा तार कह देगा। कमला की सारी स्मृतियां मेरे मन में सजीव थीं और जब मैंने उनके बारे में आपकी पुस्तक में पढ़ा तब मुझे स्मरण हो आया कि जब हम हिंदुस्तान में थे तब उन्होंने अपने दुःख और कष्ट के समय भी हमारे साथ कितनी कृपा दिखलाई थी। मैं समझता हूं कि यह आशा करना व्यर्थ होगा कि जिन लोगों ने आपको उनसे उनके अंतिम वर्ष में अलग रखा, उन्हें अपने ऊपर पर्याप्त ग्लानि होगी।

कामन्स-सभा में आजकल हमारी सारी बहसें युद्ध-संबंधी तैयारियों के बारे में ही होती हैं, यहांतक कि फौरन युद्ध छेड़ने के लिए बड़े-बड़े उद्योगों को भी पुनः संगठित करने की बात सोची जाती है। आपके जाने के बाद से स्थिति और भी बिगड़ गई है। राइनलैंड पर हिटलर के आक्रमण से स्वभावतः फासिस्ट-विरोधी लोग भड़क उठे हैं। वे सोचते हैं कि इस समय फ्रांस की सहायता करके वे हिटलर को नष्ट करने में सहायता दे सकते हैं। सन् १९१४ ई. की 'प्रजातंत्र की खातिर सरकार की रक्षा कीजिये' वाली पुकार को आज फिर से सुनना बड़ा भयानक मालूम देता है। इसका मतलब यह है कि मजदूर-आन्दोलन एक बार फिर से राजशाही की ओर झुक जायगा। मैंने लैन्सबरी के जोरदार युद्ध-विरोधी आन्दोलन में साथ देने का निश्चय कर लिया है।

यह समाजवाद तो नहीं है, लेकिन इससे हम कम-से-कम मजदूरों को भावी साम्राज्यवादी झगड़ों में एक-दूसरे का गला न काटने की चेतावनी तो दे ही सकते हैं।

लखनऊ में आपको जिस बड़े ही कठिन समय का सामना करना है

उसके लिए मैं अपनी शुभकामनाएं भेज रहा हूं, चाहे उनका कुछ भी रूप हो। मैं समझता हूं कि इस साल कांग्रेस का अध्यक्ष होना शायद संसार का सबसे मुश्किल काम है। आप जो कुछ भी करेंगे उसीकी बड़ी आलोचना होगी। लेकिन आपकी पुस्तक से लोगों को यह विश्वास हो जायगा कि आप जो कुछ भी करने का निश्चय करेंगे उसका रास्ता सीधा और ईमानदारी का होगा और वह जनता के असीम प्रेम पर आधारित होगा। लेकिन हममें से जो लोग राजनीति को एक गंभीर विषय मानते हैं, उन्हें एक नीरस क्षेत्र में काम करना है।

मुझे शायद यह कहने की आवश्यकता नहीं कि अगर आपके साथ कोई भी ऐसी बात हो जिसमें मैं या जिन लोगों को मैं प्रभावित कर सकता हूं वे किसी प्रकार की सहायता दे सकते हैं तो आपको लिखने-भर की जरूरत होगी। हम लखनऊ और उसके बाद के समाचारों की बड़ी व्यग्रता से प्रतीक्षा करेंगे। आपके यहां आने से भारतीय मामलों में मजदूर-दल की रुचि काफी बढ़ गई है। इंडिया आफिस यह जानना चाहता है कि प्रश्नोत्तर के समय, जब कि सबकुछ शान्त था, हम एकाएक फिर क्यों भड़क उठे?

लेन

१३५. रवीन्द्रनाथ टैगोर के नाम

१ अप्रैल, १९३६

प्रिय गुरुदेव,

आपने कमला के बारे में जो कुछ कहा, उसका अंग्रेजी अनुवाद आज मैंने 'विश्व-भारती न्यूज' में पढ़ा। आपके बहुत ही उदार शब्दों से मुझपर गहरा असर हुआ और संभव हो तो मैं आपको बताना चाहता हूं कि आपके आशीर्वाद से और इस विचार से कि आप हम गुमराहों को ठीक रास्ते पर रखने के लिए मौजूद हैं, मुझे कितना बल मिला है। आपसे दिल्ली स्टेशन पर मिलकर मुझे खुशी हुई थी, परन्तु रेलगाड़ी मिलने के लिए अनुकूल जगह नहीं होती और मुझे संतोष नहीं हुआ। आशा है, जल्दी ही कोई और अच्छा मौका मिलेगा। मुझे बड़ी खुशी है कि आपको विश्व-भारती के लिए दिल्ली में अच्छी रकम मिल गई।

मुझे उम्मीद है कि इस मौजूदा प्रवास के बाद आप विश्राम करेंगे।

मुझे मालूम नहीं कि आपका ठीक-ठीक कार्यक्रम क्या है, इसलिए मैं यह पत्र शांतिनिकेतन भेज रहा हूं।

प्रेम और आदरसहित,

आपका,
जवाहरलाल नेहरू

विश्वभारती न्यूज, अप्रैल १९३६

कमला नेहरू की स्मृति में

[८ मार्च को यहां श्रीमती कमला नेहरू की स्मृति में शोक-दिवस मनाया गया था। उस समय गुरुदेव ने आश्रमवासियों को बंगला में एक प्रवचन दिया था। उसीका यह संक्षिप्त अनुवाद है---सम्पादक]

आज हम एक ऐसे व्यक्ति को श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए यहां इकट्ठे हुए हैं, जिनके साथ संयोग से उस एक सेवा के द्वारा हमारा घनिष्ठ संबंध होगया था, जो कि उन्होंने हमारे आश्रम से चाही थी और जिसकी हमने उत्सुकता से पूर्ति की थी। ऐसे समय जब उनके पति कारागार में थे और उनका अपना स्वास्थ्य एक घातक रोग के कारण खतरे में पड़ गया था, हमने उनकी पुत्री इन्दिरा को अपनी देखभाल में लेकर थोड़े समय के लिए उनकी चिन्ता दूर की थी। उनके साथ की उस मुलाकात में मुझपर उनके चारों ओर के शान्ति और वीरोचित साहस के वातावरण का गहरा असर हुआ था। अक्सर रस्म के तौर पर जो शोक-सभाएं की जाती हैं उन्हें कृत्रिम पूर्णता प्रदान करने के लिए अतिशयोक्ति से काम लिया जाता है। कमला के मामले में इसकी जरूरत नहीं है, क्योंकि वह सचमुच महान थीं और उनकी महानता ने अपना परिचय लोगों के हृदयों में अपने-आप दे दिया है और उनकी महानता तुरन्त स्वीकार कर ली गई है। उन्होंने अपने उदात्त जीवन के सारे उतार-चढ़ावों में जो मौन गौरव रखा था, उसकी ध्वनि आज इतनी बुलन्द होगई है कि उसकी सचाई हम सबपर छा गई है।

उनके पति जवाहरलाल को युवक भारत के सिंहासन पर आसीन होने का असंदिग्ध अधिकार है। उनका चरित्र शानदार है। वह अपने धैर्यशाली संकल्प और निर्भय साहस में तो अटल हैं ही, परन्तु अपने साथियों से जिस बात में वह बहुत ऊंचे हैं वह है उनकी अविचल नैतिक प्रामाणिकता

और बौद्धिक ईमानदारी। उन्होंने राजनैतिक उपद्रवों के बीच में शुद्धता का झंडा असाधारण ढंग से ऊंचा रखा है, यद्यपि ऐसे उपद्रवों में सब प्रकार के धोखे और आत्म-वंचनाओं का बाजार गर्म होता है। जब सचाई खतरनाक थी तो उससे वह कभी नहीं सकुचाये और न सुविधा होने पर झूठ के साथ मेल किया। उनकी तेजस्वी बुद्धि नीतियों के असम्मानित पथ से सदा स्पष्ट तिरस्कार के साथ विमुख रही है, यद्यपि वहां सफलता उतनी ही आसान है, जितनी कमीनी है। सत्य का यह ऊंचा आदर्श जवाहरलाल के स्वातंत्र्य-युद्ध में उनका सबसे बड़ा योगदान है।

और इनसब कामों में उनकी पत्नी उनकी उपयुक्त सहयोगिनी थीं। उनमें भी अपने पति की तरह वीरोचित शान्ति थी, जो विपरीत भाग्य के निर्दय प्रहार चुपचाप सहन कर सकती थी और उनके आदर्श को धोखा देकर आसानी से बच निकलने के प्रलोभन के आगे कभी आत्म-समर्पण नहीं करती थी। तपस्या के इस दुर्लभ गुण के कारण उन्हें अपने पति के बराबर स्थायी स्थान मिल गया है। यह वही स्थान है, जो उनके जीवन-काल में उनका था। अतीत काल की प्रसिद्ध वीरांगना इतिहास के प्रकाशमान क्षितिज में अपने पूर्ण गौरव में दिखाई दे सकती हैं। समय ने कमला को अभी इतना दूर नहीं किया है। वह अभी तक निकट वर्तमान की सीमाओं के भीतर हैं, जहां महत्वपूर्ण चीजें महत्वहीन वस्तुओं के साथ गुंथ जाती हैं। इस त्रुटि के बावजूद वह हमारे सामने ऐसे गौरव के साथ आती हैं, जिसमें वीरोचित गुण है। यह गुण उनके पति में भी है।

आज का दिन हमारा होली के त्योहार का, वसन्त के उत्सव का, दिन है। गिरे और सूखे हुए पत्तों के बीच में प्रकृति मृत्यु पर विजय पानेवाले एक नये जीवन के प्रवेश की तैयारी कर रही है। उसके लिए नई कोपलें आनंद की भेंट लेकर आ रही हैं। ऐसे अवसर पर राष्ट्र में नवजीवन की जागृति के साथ वसन्त ऋतु के आगमन का संबंध होना उचित ही होगा। और जवाहरलाल वह ऋतुराज हैं, जो यौवन और विजयपूर्ण आनंद की ऋतु के, युद्ध की अजेय भावना और स्वातंत्र्य पक्ष के प्रति अटल निष्ठा के प्रतिनिधि हैं। कमला नेहरू ने भारत के नवीन राष्ट्रीय जीवन की शान में स्वयं अपनी मृदुता का भी ऐसा योगदान किया है, जो त्याग-बल में शानदार

हैं और उनकी महान स्त्रियोचित आत्मा से अन्ततोगत्वा हमारी सफलताओं में चार चांद लग सकते हैं।

हम आज अनुभव करते हैं कि वर्तमान की तेजी से आनेवाली घटनाओं पर वह अपनी ऐसी छाप छोड़ गई हैं, जो सर्वकाल के लिए है। तब हम कैसे वियोग की अशुभ भावना रख सकते हैं, जब उनकी अमर आत्मा सदा हमारे साथ है।

१३६. रवीन्द्रनाथ टैगोर की ओर से

'उत्तरायण'
शांतिनिकेतन, बंगाल
५ अप्रैल १९३६

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा पत्र मिला और मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि आश्रम के छात्रों से मैंने कमला के बारे में जो कुछ शब्द कहे थे, उनसे तुम्हें आशा और बल मिला। विश्वास करो कि मैं बहुत सच्चे दिल से तुम्हारे इस शोक को अनुभव करता हूं।

गाड़ी में तुम्हारे साथ जो कुछ मिनटों का समय मुझे मिला था, उससे मैं भी संतुष्ट नहीं हुआ। यात्रा की थकान से मेरा शरीर और मन दोनों चूर थे और मेरे लिए बोलना भी दूभर हो रहा था। तुम यहां आकर कुछ दिन मेरे साथ रहो और मैं विश्वास दिलाता हूं कि शांतिनिकेतन इलाहाबाद से अधिक गरम नहीं होगा।

सस्नेह तुम्हारा,
रवीन्द्रनाथ टैगोर

१३७. रफ़ी अहमद किदवई की ओर से

यू. पी. सूबा कांग्रेस कमेटी,
अमीनाबाद पार्क, लखनऊ
२० अप्रैल १९३६

प्रिय जवाहरलालजी,

पिछले कुछ दिन मैंने बड़ी दिमागी तकलीफ में काटे। जाहिरा तौर पर आप ही सिर्फ हमारी एक उम्मीद थे, लेकिन क्या आप ख्वाबी साबित

होने जा रहे हैं ? आप गांधीवाद के असर का और उसकी मिली-जुली मुखालफत का कहांतक मुकाबला कर सकेंगे, इसमें कुछ लोगों के अपने-अपने शक हैं।

आपको वर्किंग कमिटी को फिर से बनाने का मौका दिया गया था। आपने टण्डन, नरीमन, पट्टाभि, सार्दूलसिंह को छोड़ दिया है। आपने गोविंददास और शरद् बोस के मुकाबले में भूलाभाई और राजगोपालाचारी को शामिल किया है। इन लोगों से आपको ताकत मिलती। इन्होंने छल करके आपको बीच के तबके के लोगों से अलहदा कर दिया है। हम ए. आई. सी. सी. और डेलीगेट दोनों में कमजोर पड़ गये हैं। जो वर्किंग कमिटी आपने बनाई है, वह पिछली के मुकाबले ज्यादा दकियानूसी साबित होगी।

हो सकता है कि मेरा नजरिया बहुत तंग हो। उसूली बहसों के मुकाबले अकसरियत पर मेरा ज्यादा भरोसा रहता है। हालात का मुझपर जो असर हुआ, उसे बताने के लिए मैं बेचैन था। आगे इसकी मैं कभी चर्चा नहीं करूंगा।

रफ़ी

१३८. महात्मा गांधी की ओर से

२१ अप्रैल १९३६

प्रिय जवाहरलाल,

टिप्पणियां अच्छी लिखी गई हैं। तुम्हारे उत्तर काफी पूरे हैं और सीधे तो हैं ही।

आगामी बैठक के बारे में चिंतित क्यों होते हो ? अगर चर्चा हुई तो वह एक दूसरे को अपने विचारों के ठीक होने का विश्वास कराने को ही तो होगी। जब तुम समझो कि किसी प्रस्ताव पर पूरी तरह बहस हो चुकी तब चर्चा बन्द कर देना। आखिर तो तुम्हें एकता के साथ काम चाहिए और मुझे ऐसा होने की बड़ी आशा है।

मैं २३ तारीख की शाम को नागपुर पहुंच रहा हूं।

मैं चाहता हूं कि रनजीत अपनी देखभाल खुद कर लेंगे। मुझे खुशी है कि वह खाली चले गये। आशा है, सरूप तुम्हारे साथ रहेगी।

सरदार अभी तक बीमार हैं और अभी तो सिर्फ छाछ पर हैं। ८ मई के बाद मैं उन्हें नंदी पर्वत पर ले जा रहा हूं। काश तुम भी आ सकते !

सस्नेह,
बापू

१३९. महात्मा गांधी की ओर से अगाथा हैरिसन के नाम

[कुमारी अगाथा हैरिसन क्वेकर सम्प्रदाय की थीं और गांधीजी तथा भारत से उन्हें बड़ा प्रेम था।]

वर्धा
३० अप्रैल १९३६

प्रिय अगाथा,

तुम्हारा १७ तारीख का पत्र मिला। जवाहरलाल से यही आशा रखी जा सकती थी। उनका अभिभाषण उनके ईमान का इक़बाल है। उनके 'मंत्रिमंडल' की रचना से तुम देखती हो कि उन्होंने अधिकांश वे लोग चुने हैं, जो परम्परागत विचार अर्थात् १९२० से आरंभ हुए विचारों का प्रतिनिधित्व करते हैं। अलबत्ता बहुमत मेरे विचारों का है। संभव हो तो मैं नये संविधान को आज नष्ट कर दूं। उसमें है ही क्या जिसे मैं पसन्द करूं ? मगर जवाहरलाल का रास्ता मेरा रास्ता नहीं। भूमि आदि के बारे में मैं उनका आदर्श स्वीकार करता हूं। मगर अपने तरीकों को पेश करने में उग्र होते हुए भी जवाहरलाल क्रिया में गंभीर हैं। जहांतक मैं उन्हें जानता हूं, वह संघर्ष को जल्दी नहीं ले आयेंगे। उनपर आ ही पड़े तो वह उससे बचने की कोशिश भी नहीं करेंगे। परन्तु शायद इस मामले में सारी कांग्रेस एक विचार की नहीं है। कुछ-न-कुछ मतभेद जरूर है। मेरे उपाय में संघर्ष को टालने की योजना रहती है। उनके उपाय में यह योजना नहीं है। मेरा अपना खयाल यह है कि जवाहरलाल अपने साथियों के बहुमत के निर्णय मान लेंगे। उनके जैसे स्वभाववाले आदमी के लिए यह अत्यन्त कठिन है। अभी से उन्हें ऐसा लग रहा है। वह जो कुछ करेंगे, शराफत के साथ करेंगे। यद्यपि जीवन के दृष्टिकोण के बारे में हमारे बीच की खाई बेशक चौड़ी हुई है, फिर भी दिलों में हम जितने नजदीक एक दूसरे के शायद आज हैं, उतने

पहले कभी नहीं थे। यह पत्र सार्वजनिक उपयोग के लिए नहीं है। लेकिन तुम्हें आजादी है कि तुम इसे अपने मित्रों को दिखा सकती हो।

मैं नहीं समझता कि अपने प्रश्न के उत्तर में तुम इससे ज्यादा कुछ चाहती होगी।

सस्नेह,
बापू

कुमारी अगाथा हैरिसन

१४०. महात्मा गांधी की ओर से

नंदी पर्वत
१२ मई १९३६

प्रिय जवाहरलाल,

अगाथा के नाम मेरा उत्तर मैंने तुम्हारे पास इस कारण भेजा कि मैं जान लूं कि मैंने तुम्हारा रवैया ठीक-ठीक बयान किया है या नहीं।

मगर मुझे खुशी है कि तुम मुझीसे निपट रहे हो। मैं किसी ऐसी प्रणाली का समर्थन करने का, जिसमें सतत और विनाशकारी वर्ग-युद्ध निहित है या ऐसी प्रणालियों को पसन्द करने का, जिसका वास्तविक आधार हिंसा पर है या कुछ लोगों की छोटे-मोटे कसूरों के लिए आलोचना और निन्दा करने का और जो दूसरे लोग कहीं अधिक महत्वपूर्ण दुर्बलताओं के अपराधी हैं, उनकी तारीफ करने का दोषी नहीं हूं।

संभव है, अनजाने में मुझसे तुम्हारे बताये हुए अपराध होते हों। ऐसा है तो तुमको मुझे ठोस उदाहरण देने चाहिए। मैं पहले ही स्वीकार कर चुका हूं कि तुम्हारा काम करने का तरीका जैसा मुझे दिखाई देता है उससे मेरा ढंग भिन्न है। मगर वर्तमान प्रणाली-सम्बन्धी दृष्टिकोण में कुछ भी अन्तर नहीं है।

डा. अन्सारी की मृत्यु एक सख्त चोट है। मेरे लिए उनकी दोस्ती राजनैतिक मित्रता से कहीं अधिक थी।

आशा है, तुम थोड़ी-सी ठंडी हवा खाने के लिए खाली जा रहे हो या मेरे पास आ रहे हो।

सरूप से कह देना कि उसके दो खत मिले हैं। सर तेजबहादुर को मैं लिखूंगा।

सस्नेह,
बापू

१४१. महात्मा गांधी की ओर से

नंदी पर्वत
२१ मई १९३६

प्रिय जवाहरलाल,

'हिन्दू' की दो कतरनें भेज रहा हूं। मैंने यह नहीं माना है कि सम्वाददाता ने तुम्हारे विचार ठीक-ठीक व्यक्त किये हैं। लेकिन दोनों विषयों पर तुम सही विवरण भेज सको तो मैं देखना चाहूंगा। स्त्रियों को न रखने का काम पूरी तरह तुम्हारा अपना ही था। सचमुच किसी और ने सोचा तक नहीं था कि मंत्रिमंडल में किसी स्त्री को न रखना संभव भी है। खादी के बारे में मैंने तुम्हारा कथन यही समझा है कि देश की वर्तमान अर्थ-व्यवस्था में वह अपरिहार्य है और जब राष्ट्र अपने स्वरूप में आयेगा तब मिल के कपड़े का स्थान हाथ के बने कपड़े को देना पड़ सकता है।

सस्नेह,
बापू

१४२. महात्मा गांधी की ओर से

बंगलौर
२९ मई १९३६

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा २५ तारीख का पत्र मिला। भगवान तुम्हें आवश्यक शक्ति दें। खाली में एक सप्ताह रहना भी नियामत होगा।

मेरा इरादा खादी पर तुम्हारे बयान का सार्वजनिक उपयोग करने का है। मुझसे बहुत लोग पूछताछ कर रहे हैं। हमारे जो लोग खादी में विश्वास रखते हैं, उनमें तोड़-मरोड़कर भेजे गये सार से घबराहट फैल गई है। तुम्हारे बयान से स्थिति में कुछ सुधार होगा।

कार्य-समिति में किसी स्त्री के न लेने के बारे में तुम्हारे स्पष्टीकरण से मेरा समाधान नहीं होता। यदि समिति में किसी स्त्री को रखने की तुमने जरा भी इच्छा प्रकट की होती तो बड़ों में से किसीको छोड़ देने के बारे में कुछ भी कठिनाई न होती। दबाव कहें तो केवल भूलाभाई के लिए था। और जब उनका नाम पहली बार लिया गया तब तुम्हें कोई आपत्ति नहीं

थी। और किसी सदस्य के लिए कोई दबाव नहीं था। और फिर किसी समाजवादी का नाम छोड़कर किसी स्त्री को ले लेने का चुनाव तो तुम्हारे हाथ में अबाधित ही था। परन्तु जहांतक मुझे याद है, तुम्हें स्वयं सरोजिनीदेवी के स्थान पर किसीको चुनने में कठिनाई थी और सरोजिनी देवी को तुम रखना नहीं चाहते थे। तुमने तो यहांतक कहा था कि कार्य-समिति में सदा किसी-न-किसी स्त्री को और मुसलमानों को एक निश्चित संख्या में रखने की परम्परा में तुम्हारा विश्वास नहीं है। इसलिए जहांतक किसी स्त्री को न लाने का सम्बन्ध है, मेरे खयाल से, यह तुम्हारा अबाधित निर्णय था। इस परम्परा को तोड़ने की इच्छा या हिम्मत और कोई सदस्य न करता। मैं तुम्हें यह भी बता दूं कि कुछ कांग्रेसी हल्कों में सारा दोष मुझपर थोपा जा रहा है; क्योंकि यह कहा जाता है कि मैंने श्रीमती नायडू को नहीं रखने दिया और यह आग्रह किया कि कोई स्त्री न रखी जाय। यह बात, जैसा मैंने तुमसे कहा, ऐसी है जिसका मैं साहस भी नहीं कर सकता। किसी भी स्त्री की बात तो क्या, मैं श्रीमती नायडू को भी अलग नहीं कर सकता।

दूसरे सदस्यों के विषय में भी मेरा यह खयाल रहा है कि तुमने उन्हें इसलिए चुना कि कार्य की दृष्टि से ऐसा करना ठीक था। 'बेहया' या 'हयादार' का कोई सवाल नहीं था, जब सभी अपने-अपने अन्तःकरण के अनुसार सेवा की उच्च भावनाओं से प्रेरित होकर काम कर रहे थे। मैं बता दूं कि तुम्हारे बयान से, जिसका समर्थन तुम्हारे पत्र से भी होता है, राजेन्द्र-बाबू, राजाजी और वल्लभभाई को भी बड़ा दुःख हुआ। उनका खयाल है और मैं उनसे सहमत हूं कि उन्होंने तुम्हारे साथी के रूप में सम्मान और पूर्ण निष्ठापूर्वक तुम्हारे साथ चलने की कोशिश की। तुम्हारे बयान से ऐसा प्रकट होता है कि तुम पीड़ित पक्ष हो। मैं चाहता हूं कि तुम इस दृष्टिकोण को समझलो और किसी भी तरह सम्भव हो तो इस खबर का सुधार करलो।

तीसरी बात के बारे में मैं उत्सुक हूं कि सफाई हो जाय। मैं अनुमान नहीं लगा सकता कि तुम क्या कहते हो, परन्तु उसे हमारे मिलने तक रहने दिया जाय। तुम जिस दबाव को सहन कर रहे हो, मैं उसे बढ़ाना नहीं चाहता।

डा. अन्सारी-स्मारक के विषय में मैंने आसफअली को अपनी स्पष्ट राय दे दी है कि पिताजी की तरह डाक्टर के स्मारक को भी राजनैतिक दृष्टि से अच्छे दिनों की प्रतीक्षा करनी चाहिए। तुम्हारा और कुछ खयाल है?

कमला-स्मारक धीरे-धीरे प्रगति कर रहा है। राजकुमारी का पत्र साथ में है। इसमें इन्दू का उल्लेख है।

सस्नेह,

बापू

१० तारीख तक बंगलौर शहर में।

१४३. रवीन्द्रनाथ टैगोर की ओर से

शांतिनिकेतन
३१ मई १९३६

प्रिय जवाहरलाल,

मैंने तुम्हारी महान पुस्तक अभी-अभी समाप्त की है। मैं तुम्हारी सफलता से अत्यन्त प्रभावित हूं और उसपर गर्व अनुभव करता हूं। उसके समस्त विवरणों के पीछे मानवता की एक गहरी धारा प्रवाहित है, जो तथ्यों की गुत्थियों को पार करके हमें उस व्यक्ति तक पहुंचा देती है, जो अपने कार्यों की अपेक्षा अधिक महान और अपने आसपास के वातावरण की अपेक्षा अधिक सच्चा है।

सप्रेम तुम्हारा,
रवीन्द्रनाथ टैगोर

[इस पत्र में जिस पुस्तक का जिक्र है, वह मेरी आत्मकथा है।]

१४४. चार्ल्स ट्रेवेलियन की ओर से

वैलिंगटन, कैम्बो
मोरपैथ
१२ जून १९३६

प्रिय श्री नेहरू,

मैंने आपकी पुस्तक पढ़ी है। इसमें जिस व्यक्ति पर प्रकाश पड़ता है, उससे मैं मिलना चाहूंगा। मैंने और आपने दोनों ने ही हैरो में पढ़ाई शुरू की

थी, जहां हमें दलितों का समर्थन करने की शिक्षा नहीं दी गई थी। लेकिन आपकी जनता की निर्धनता और उसपर होनेवाले दमन ने आपको इसकी शिक्षा दी और युद्ध तथा गंदी बस्तियों ने मुझे। हम दोनों के विचार बहुत-कुछ एक जैसे हैं। मैं चाहता हूं कि आप जब कभी इंग्लैण्ड आयें, मुझे सूचित करें। मैं समझता हूं कि मैं भारतवर्ष नहीं आ सकूंगा, क्योंकि मैं जर्मनी, इटली और हिंदुस्तान जैसे काले (तानाशाही तथा साम्राज्यवादी) स्थानों पर जाना पसन्द नहीं करूंगा, जबकि संसार में लाल तथा लालिमापूर्ण (साम्यवादी तथा समाजवादी) देश मौजूद हैं। लेकिन अगर मैं आया तो आपसे जरूर मिलूंगा, चाहे आप जेल में हों या मुक्त हों।

आपका,
चार्ल्स ट्रेवेलियन

१४५. महात्मा गांधी की ओर से

सेगांव
१९ जून १९३६

[यदि लिखावट इतनी धुंधली हो कि पढ़ी न जा सके तो इस पत्र को फेंक देना।]

प्रिय जवाहरलाल,

मैं तुम्हारी जानकारी के लिए साथ का पत्र भेजनेवाला था कि कल तुम्हारा पत्र मिला।

मुझे खुशी है कि रनजीत पहले से अच्छे हैं। उन्हें खुद अपनी देखभाल करनी चाहिए।

मैं नहीं चाहता कि तुम अपनी कार्यसमिति में किसी स्त्री को न रखने के बारे में कोई खास बयान जारी करो। मेरे खयाल से स्त्री को न रखने की बात का वही महत्त्व नहीं है, जो दूसरों को रखने या न रखने का है। हममें से किसीको भी कार्यसमिति में से स्त्री-मात्र को अलग रखने की न हिम्मत थी और न इच्छा। यदि तुम्हारे रवैये का यह ठीक-ठीक अर्थ है तो अवसर उपस्थित होने पर इसका स्पष्टीकरण हो जाना चाहिए।

दूसरों के बारे में, मुझे अफसोस है कि तुम अभी तक जो कुछ हुआ, उसपर खिन्न हो। ध्येय के हित में भूलाभाईवाली गोली तुमने निगल ली और

पहली ही चर्चा में तुम्हारे जिक्र करने से पहले मैंने निश्चित रूप से कह दिया था कि कार्यसमिति में समाजवादी होने ही चाहिए। मैंने नामों का भी जिक्र किया था। लेकिन मैं जिस बात पर जोर देना चाहता हूं वह यह नहीं है कि किसने किसका नाम लिया, बल्कि मेरा जोर इस बात पर है कि सब समान ध्येय की सेवा से प्रेरित होकर ही काम कर रहे हैं।

जहांतक मुझे याद है, तुम्हारा भेजा हुआ बयान वह नहीं है, जो मैंने देखा था। तुम्हारी भेजी हुई चीज तो शायद मैं पहली ही बार देख रहा हूं। डा. हार्डीकर से पूछ लो कि उन्होंने कोई और बयान जारी किया था क्या? तुमने जो मेरे पास भेजा है वह भी उससे भिन्न है, जो डाक्टर मुझे बताया करते थे। उनके विचार मेरी राय में दोषपूर्ण तो हैं, लेकिन उनके प्रकट करने पर मुझे कोई एतराज नहीं है। मेरी शिकायत यह है कि उन्होंने मुझसे एक बात कही और प्रकाशित दूसरी बात कराई। तुम यह पत्र डा. हार्डीकर को बता सकते हो।

आशा है, तुम अच्छे होगे। तुम्हारे पंजाब के तूफानी दौरे का हाल मैं चिंतित होकर पढ़ता रहा।

सस्नेह,
बापू

१४६. मोहम्मद इक़बाल की ओर से

लाहौर
२१ जून १९३६

प्रिय पंडित जवाहरलाल,

कल मुझे आपका खत मिला। बहुत-बहुत शुक्रिया। जिस वक्त मैंने मज़मूनों का जवाब दिया, मेरा यह ख़याल था कि आपको अहमदियों के सियासी रुख के मुताल्लिक कोई वाक़फ़ियत नहीं है। दरअसल मेरे जवाब का ख़ास मक़सद यह था कि मैं यह बताऊं, और खास तौर पर आपको, कि मुसलमानों की वफादारी कैसे पैदा हुई थी और कैसे अहमदियों के उसूलों में उसे एक इलहामी बुनियाद मिली। मेरा जवाब शाया हो जाने के बाद यह जानकर मुझे बड़ी हैरानी हुई कि तालीमयाफ्ता मुसलमानों को भी उन तारीख़ी वजहों का कोई इल्म नहीं है, जिन्होंने अहमदी तालीम को शक्ल अदा

की। फिर पंजाब और दूसरी जगहों के आपकी तारीफ करनेवाले मुसलमान आपके लेखों से परेशान हुए, क्योंकि उन्हें खयाल हुआ कि आपको अहमदिया तहरीक के साथ हमदर्दी ह। इसकी खास वजह यह थी कि अहमदिया लोग आपके लेखों से बेहद खुश थे। आपके बारे में इस गलतफहमी के लिए अहमदी अखबार खास तौर पर जिम्मेवार हैं। बहरहाल मुझे यह जानकर खुशी हुई कि मेरा खयाल गलत था। मुझे मज़हबी इल्म में बहुत कम दिलचस्पी है, लेकिन अहमदियों का जवाब देने के लिए मुझे थोड़ा-बहुत टटोलना पड़ा। मैं आपको इतमीनान दिलाता हूं कि मेरा मजमून इस्लाम और हिंदुस्तान की बेहतरी के खयाल से ही लिखा गया था। मेरे दिमाग में कोई शक-शुबाह नहीं कि अहमदिया इस्लाम और हिन्दुस्तान दोनों के गद्दार हैं।

लाहौर में आपसे मिलने का मौका खो दिया, इसका मुझे बेहद अफसोस है। उन दिनों मैं बहुत बीमार था और अपने कमरे से बाहर नहीं जा सकता था। पिछले दो बरस से लगातार बीमारी की वजह से करीब-करीब गोशा-नशीनी की जिन्दगी बिता रहा हूं। जब आप अगली मरतबा पंजाब आयें तो मुझे जरूर इत्तिला कर दें। 'यूनियन फार सिविल लिबरटी' के बारे में जो आपकी तजवीज है, उसके मुताल्लिक क्या आपको मेरा खत मिला? आपने चूंकि अपने खत में उसका जिक्र नहीं किया, इसलिए मुझे डर है कि वह अबतक पहुंचा ही नहीं।

आपका,
मोहम्मद इक़बाल

[अहमदिया एक मुस्लिम सम्प्रदाय है जिसे कादियानी भी कहते हैं।].

१४७. राजेन्द्रप्रसाद तथा दूसरे लोगों की ओर से

वर्धा
२९ जून १९३६

प्रिय जवाहरलालजी,

लखनऊ-कांग्रेस के बाद जब आपने मतभेदों तथा दृष्टिकोण के भेदों के बावजूद हमें कार्य-समिति का सदस्य चुना तो हमें आशा थी कि कार्य का एक सामान्य रास्ता निकालना तथा मतभेदों को अलग हटाकर संयुक्त रूप से काम करना और समझौते के बिंदु पर एकाग्र होना संभव हो जायगा।

हम अपने-आपको इसके अनुसार बनाने का भरसक प्रयत्न करते रहे। परन्तु दुर्भाग्य से हम पाते हैं कि ऐसे समझौते पर आ सकना संभव नहीं हुआ है, जो दो विरोधी तत्त्वों को इस योग्य बना सकता, जिससे वे शांतिपूर्वक काम कर सकते या एक स्वर से बोल सकते। हम अनुभव करते हैं कि विशेषतया इस स्थिति में अध्यक्ष तथा कार्य-समिति के समाजवादी सदस्यों द्वारा समाजवाद का प्रचार करना तथा उसपर जोर देना, जबकि कांग्रेस ने इसे अंगीकार नहीं किया है, देश के हित और राष्ट्रीय संघर्षों की सफलता के लिए हानिकर है। इन्हीं चीजों को हम सब देश का सबसे पहला और महत्वपूर्ण काम मानते हैं। लगता है, आप महसूस करते हैं और आपने जाहिर भी किया है कि कार्य-समिति जिस प्रकार की बनी है वह आपकी पसन्द की नहीं है, लेकिन वह आपपर लाद दी गई है और आपने उसे अपने निर्णय के विरुद्ध स्वीकार कर लिया। लखनऊ की घटनाओं के बारे में हमारी राय आपकी राय से विपरीत है। हमें बिल्कुल पता नहीं कि हममें से किसीने (आपपर) ज़रा-सा भी दबाव डाला हो। जो हो, आपकी घोषणाओं ने जो स्थिति पैदा कर दी है, वह अत्यन्त असंतोषजनक है और हम सोचते हैं कि हमें आपको पूरी तरह छूट दे देनी चाहिए, जिससे कार्य-समिति के ऐसे साथियों के रहने से रुकावट न हो, जिन्हें आप भार-रूप मानते हैं। दूसरी तरफ हम यह महसूस करते हैं कि कांग्रेस को आज भी उन्हीं आदर्शों, कार्य करने के उसी ढंग और उसी नीति पर चलना चाहिए, जिसपर वह सन् १९२० से चलती आई है, और जिसको हम अपने देश के लिए, खास तौर पर मौजूदा परिस्थितियों में, सबसे ज्यादा ठीक समझते हैं और जिन्होंने अभी तक बड़ी-बड़ी सफलताएं दिखाई हैं। हमारी राय है कि आपके और समाजवादी साथियों के भाषणों से और दूसरे आम समाजवादियों के कार्यों से, जिनका हौसला इन भाषणों से बढ़ गया है, सारे देश में कांग्रेस-संगठन कमजोर हो गया है। बदले में उससे कोई फायदा तो हुआ नहीं है। इस समय देश के सामने जो राजनैतिक काम है, खास तौर पर चुनावों का कार्यक्रम, उसपर आपके इस प्रचार का अत्यन्त हानिकारक प्रभाव पड़ा है और हम महसूस करते हैं कि इस प्रकार जो स्थिति उत्पन्न होगई है, उसमें हम चुनावों को व्यवस्थित करने तथा लड़ने की जिम्मेदारी अपने ऊपर नहीं उठा सकते।

इसलिए अत्यन्त अनिच्छापूर्वक हमने कार्य-समिति से त्यागपत्र देने का निर्णय किया है। हम सोचते हैं कि बहुत विचार-विमर्श के बाद हमने जो कदम उठाने का निश्चय किया है, उससे आपके प्रति और हमारे प्रति भी न्याय होगा और देश का भी भला होगा।

आपके

राजेन्द्रप्रसाद	जयरामदास दौलतराम	वल्लभभाई पटेल
सी. राजगोपालाचारी	जमनालाल बजाज	जे. बी. कृपालानी
	एस. डी. देव	

१४८. सुभाषचंद्र बोस की ओर से

मारफत—सुपरिंटेंडेंट पुलिस,
दार्जिलिंग
३० जून १९३६

प्रिय जवाहर,

मुझे तुम्हारा २२ ता. का पत्र पाकर खुशी हुई। वह मुझे २७ ता. को मिला। समाचारपत्रों से मुझे मालूम हुआ कि तुम बहुत ज्यादा परिश्रम कर रहे हो और मुझे तुम्हारे स्वास्थ्य के बारे में चिन्ता हो रही थी। मुझे खुशी है कि तुम, थोड़े समय के लिए ही सही, मसूरी विश्राम करने के लिए जा सके। मैं यह समझ सकता हूं कि अति परिश्रम को टालना तुम्हारे लिए कितना कठिन है, फिर भी मैं आशा करता हूं कि तुम बहुत ज्यादा परिश्रम नहीं करोगे। अगर तुम्हारी तबीयत बिगड़ी तो उससे किसीको मदद नहीं मिलेगी।

तुमने अपने बहनोई रनजीत के बारे में जो कुछ कहा है, वह बहुत ही दुःख की चीज है। किन्तु यह जानकर थोड़ी राहत मिली कि डाक्टर किसी गंभीर परिणाम की आशंका नहीं करते। हम आशा करें कि स्थान-परिवर्तन और विश्राम से उनकी तबीयत सुधर जायगी।

मैं करीब-करीब ठीक हूं। कुछ पेट की शिकायत है और थोड़ा फ्लू का असर होगया था (यह केवल गले की खराबी भी हो सकती है)—किंतु ये सब शिकायतें यथासमय दूर हो जायंगी।

अगर तुम्हारे पुस्तकालय में नीचे लिखी पुस्तकों में से कोई हों और

तुम उनको सुविधापूर्वक सुलभ कर सको तो कृपा करके एक या दो एक-साथ भिजवा देना।

१. हिस्टोरिकल ज्योग्राफी ऑव यूरोप—गोर्डन ईस्ट-लिखित
२. क्लैश ऑव कलचर्स एण्ड कॉन्टेक्ट ऑव रेसेस' —पिट रिवर्स-लिखित
३. शार्ट हिस्टरी ऑव ऑवर टाइम्स—जे. ए. स्पेंडर-लिखित
४. वर्ल्ड पॉलिटिक्स १९१८-३५—आर. पी. दत्त-लिखित
५. साइंस एंड दी फ्यूचर—जे. बी. एस. हालडेन-लिखित
६. अफ्रीका व्यू—हक्सले-लिखित
७. चंगेजखां—राल्फ फोक्स-लिखित
८. दि डयूटी ऑव एम्पायर—बारनेस-लिखित

उपरोक्त पुस्तकों के स्थान में तुम हाल में प्रकाशित कोई दूसरी दिलचस्प पुस्तकें चुन सकते हो। चिट्ठी-पत्री या पुस्तकें सुपरिंटेंडेंट पुलिस दार्जिलिंग की मारफत भेजी जानी चाहिए।

आशा है, तुम स्वस्थ होगे। सप्रेम तुम्हारा,
सुभाष

पं. जवाहरलाल नेहरू
इलाहाबाद।
सेंसर करके पास की गई
(ह.) सुपरिंटेंडेंट पुलिस, दार्जिलिंग

१४९. राजेन्द्रप्रसाद की ओर से

वर्धा
१ जुलाई १९३६

प्रिय जवाहरलालजी,

कल जबसे हम विदा हुए, महात्माजी के साथ बड़ी देर तक हमारी बातचीत होती रही और हमने आपस में भी लंबा मशविरा किया। हम समझते हैं कि हमने जो रास्ता अपनाया है, उससे आपको चोट महसूस हुई है और खास तौर पर हमारे पत्र ने आपको बहुत पीड़ा पहुंचाई है। आपको परेशान करने तथा आपको कष्ट पहुंचाने का हमारा मंशा कभी भी नहीं

था और यदि आप ज़रा भी कहीं जता देते या इशारा कर देते कि आपको उससे दुःख पहुंचा है तो हम बगैर किसी हिचकिचाहट के उस पत्र में संशोधन कर देते या उसे पूरी तरह से बदल देते। लेकिन सारी परिस्थिति पर पुर्नविचार करने पर हमने उस पत्र को और त्यागपत्रों को वापस लेने का निश्चय किया है, परन्तु चूंकि हम अपने त्याग-पत्रों को वापस ले रहे हैं, इसलिए अब हम अपने भावों को इस निजी पत्र में कुछ अधिक विस्तार के साथ आपके सामने स्पष्ट करने की इजाज़त चाहते हैं, जैसा उस पत्र में नहीं किया जा सकता था, जो कि प्रकाशित होनेवाला था। ऐसा करने में भी हमारी इच्छा आपको चोट पहुंचाने की नहीं है।

अखबारों में आपके भाषणों के जो विवरण छपे हैं, उन्हें देखकर हमें ऐसा लगता है कि आप कांग्रेस के आम कार्यक्रम पर इतना नहीं बोल रहे हैं, जितना उस विषय पर, जिसे कांग्रेस ने स्वीकार नहीं किया है और ऐसा करने में आप कार्य-समिति के हमारे साथियों के, और कांग्रेस के भी, अल्पमत के प्रवक्ता की हैसियत से ज्यादा काम कर रहे हैं, बनिस्बत बहुमत के प्रवक्ता के रूप में, जैसाकि हम कांग्रेस-अध्यक्ष की हैसियत से आपसे करने की अपेक्षा रखते थे। जैसा कि आपने बताया, यह हो सकता है कि आपके भाषणों के उन अंशों को ही अधिक प्रकाशित किया गया हो, जो समाजवाद का प्रतिपादन करते हैं और शेष को अखबारों में महत्व न दिया गया हो। शायद समाचार की दृष्टि से उसका मूल्य ज्यादा न माना गया हो। किन्तु यह याद रखना चाहिए कि आपके शब्द स्वयं अपने कानों से सुननेवाले जितने लोग होते हैं, उनसे कहीं ज्यादा वे लोग होते हैं, जो अखबारों में छपी रिपोर्टों को ही पढ़ते हैं। आपके भाषणों का इस विशाल जन-समूह पर जो असर होता है, उसे आप दरगुजर नहीं कर सकते।

हमारे खिलाफ एक नियमित और लगातार आंदोलन हो रहा है कि हम वे लोग हैं, जिनका ज़माना लद गया है, जो ऐसे विचारों का प्रतिनिधित्व करते हैं, जो घिस गये हैं और जिनका अब कोई मूल्य नहीं रहा है, जो देश की प्रगति में सिर्फ बाधक हैं और जिन्हें उन पदों पर से हटाकर अलग फेंक दिया जाना चाहिए, जिनपर वे अपात्र होते हुए भी बैठे हैं। गांधीजी के साथ रहकर हमने जिन आदर्शों, काम करने के जिन तरीकों और पद्ध-

तियों को सीखा है, वे ही हमें किसी भी संगठन में सत्ता और पदों की लालसा करने से रोकते हैं। हमने अनुभव किया है कि हमारे साथ बहुत भारी अन्याय हुआ है और हो रहा है तथा अपने एक साथी और अध्यक्ष के नाते हमें आपसे वह संरक्षण नहीं मिल रहा है, जिसके हम हकदार हैं। जब हमें निकालने की सप्रयास तैयारियां हो रही हैं और इसकी घोषणाएं आपकी उपस्थिति में की जाती हैं, और जैसाकि ट्रेड यूनियन कांग्रेस में कहा गया था, ऐसे गुटों के साथ आपकी सहानुभूति है, तो हमें लगता है कि जो कुछ कहा जाता है, वह केवल उन्हींकी भावनाओं का प्रतिनिधित्व नहीं करता, जो ऐसी भाषा बोलते हैं, बल्कि कुछ हद तक आपकी राय का भी। इससे हमें दुःख होता है, क्योंकि पदों से चिपटे रहने की हमारी तनिक भी इच्छा नहीं है। इस तरह पग-पग पर हम इस नतीजे पर पहुंच रहे हैं कि बतौर साथियों के हमें उस हद तक आपका विश्वास प्राप्त नहीं है, जिस हद तक होना चाहिए और आपकी हमारे या हमारे विचारों के लिए कोई इज्जत नहीं है। हमें स्वभावतः ऐसा लगता है कि आप हमें केवल एक बोझ मानते हैं और हमारे इस तरह पदों पर रहने से कोई भी उपयोगी उद्देश्य सिद्ध नहीं होता है।

बम्बई में महिला-सभा में आपका भाषण हममें से बहुतों को चुभ-सा गया और हमने सोचा कि आपकी भावना यह है कि हम जबर्दस्ती आपपर थोपे गये थे और अनिच्छापूर्वक आपको कार्य-समिति स्वीकार कर लेनी पड़ी थी। यदि लखनऊ में हमें मालूम हो जाता कि आपकी भावना यह है तो घटनाएं निश्चय ही कोई दूसरा रूप ग्रहण करतीं।

हमारा यह भी खयाल है कि देश में आप जिस तरह से स्थिति संभाल रहे हैं, उससे रचनात्मक कार्यक्रम को हानि पहुंच रही है, जिसे हम कांग्रेस के कार्यक्रम का अत्यंत अनिवार्य और महत्वपूर्ण अंग मानते हैं।

इन व्यक्तिगत प्रश्नों को छोड़ दें तो भी हमने अनुभव किया है कि पिछले सोलह-सत्रह वर्षों से जिन आदर्शों और नीति का हम अनुसरण करते रहे हैं और जो हमारे विचार से देश के लिए एकमात्र सही आदर्श हैं, उन्हींको यत्नपूर्वक हानि पहुंचाई जा रही है और इस खेल में जो लोग लगे हैं आपकी दृष्टि और सहानुभूति भी उनके साथ है। हमें महसूस हुआ

है कि आपके साथ हमारे रहने से लोगों पर यह गलत असर पड़ता है कि अनजान में और इच्छा न होते हुए भी इस प्रक्रिया में एक तरीके से हम मददगार हो रहे हैं। यह प्रवृत्ति है, जो देश में कांग्रेस के संगठन और उसकी प्रतिष्ठा को धीरे-धीरे नुकसान पहुंचा रही है, क्योंकि देश तो संपूर्णतया आज भी उन्हीं आदर्शों और नीति को मानता है। इसका नतीजा कांग्रेस को कमजोर करने में और कार्यकर्ताओं में फूट फैलने में होता है। इससे स्वभावतः आगामी चुनावों में कांग्रेस की सफलता की संभावनाएं भी कम होती हैं। इस मुद्दे पर आपके विचार दूसरे हैं। आखिर चुनावों के परिणामों के बारे में हम केवल अन्दाज ही तो कर सकते हैं और हमारे अन्दाज अलग-अलग हो सकते हैं। हमने मान लिया है कि इस दलील में बल है कि हमने जो कड़ा कदम उठाने का विचार किया है वह हमें तबतक नहीं उठाना चाहिए, जबतक कि हमें निश्चय नहीं हो जाय कि हमारे त्याग-पत्र से कुल मिलाकर चुनावों में सफलता की संभावनाएं बनती नहीं हैं तो कम-से-कम बिगड़ेंगी तो नहीं। हममें से कुछको ऐसा लगता है कि हमारे इस कार्य से, संभव है, ऐसे परिणाम उत्पन्न हों कि कांग्रेस की चुनाव-विषयक-स्थिति और भी बिगड़ जाय। हम ऐसी संभावना पैदा नहीं होने देना चाहते। इसके साथ ही अपने प्रान्तों का हमें जो व्यक्तिगत अनुभव है, उसके आधार पर, हमें भय है कि वहां कांग्रेस की स्थिति और अनुशासन कमजोर हो रहा है और इसे आपके ध्यान में ला देना हम अपना कर्तव्य समझते हैं, जिससे आप उचित उपाय कर सकें।

जैसाकि आपसे हमने बार-बार कहा है कि हमारे दिलों पर यह असर किसी एक भाषण या कार्य से नहीं पड़ा है, बल्कि कुल मिलाकर सारे क्रिया-कलापों से पड़ा है और हमने अपना कर्तव्य समझा कि यह सब स्पष्ट रूप से आपके सामने रख दें, जिससे आपको पूरा-पूरा पता रहे कि हमारे दिलों में क्या चल रहा है और यदि आप आवश्यक समझें कि इस संबंध में कुछ करने की जरूरत है तो वह आप कर भी सकें। आपकी भावनाओं को चोट पहुंचाने के लिए हमें अफसोस है और मुझे आशा है कि इस पत्र से मामला अधिक बिगड़ेगा नहीं, कुछ सुधरेगा ही, क्योंकि यही हम चाहते हैं। यह पत्र मैं आपको हम सबकी सलाह से और सबकी तरफ से लिख रहा हूं। जहांतक

हमारा संबंध है, इस घटना के लिए, जिसमें हमने देश का हित समझा है, केवल हम ही जिम्मेदार हैं और आप त्यागपत्रवाले पत्र को ऐसे ही समझें, जैसे वह हमारे द्वारा कभी दिया ही नहीं गया था। अतः उसे कृपा करके लौटा दें।

कहने की आवश्यकता नहीं कि यह पत्र केवल आपके लिए निजी है और इसे दफ्तर के कागजात में शामिल नहीं किया जाना चाहिए।

सप्रेम आपका,
राजेन्द्रप्रसाद

१५०. महात्मा गांधी के नाम

इलाहाबाद
५ जुलाई १९३६

प्रिय बापू,

मैं यहां कल रात पहुंचा। जबसे मैंने वर्धा छोड़ा तबसे मेरे जिस्म में कमजोरी और दिमाग में परेशानी मालूम होती है। कुछ इसकी वजह बेशक जिस्मानी है। ठंड लग जाने से मेरे गले की खराबी बढ़ गई है। कुछ और वजह भी हैं जो सीधे मन और आत्मा से ताल्लुक रखती हैं। यूरोप से लौटने के बाद मैंने देखा है कि कार्यसमिति की बैठकों में मैं बहुत थक जाता हूं। उनका मुझपर निष्प्राण करनेवाला असर होता है और हर नये अनुभव के बाद मुझे लगभग ऐसा महसूस होता है कि मैं बूढ़ा होगया हूं। मुझे ताज्जुब नहीं होगा, यदि समिति के मेरे साथियों को भी ऐसा ही महसूस होता हो। यह अच्छा तजुर्बा नहीं है और इससे कारगर काम के रास्ते में रुकावट होती है।

जब मैं यूरोप से लौटा तब मुझे कहा गया कि देश गिर गया है और इसलिए हमें धीरे चलना पड़ता है। लेकिन चार महीने के मेरे थोड़े-से तजुर्बे ने इस खयाल की पुष्टि नहीं की है। सच तो यह है कि मैं जहां कहीं गया हूं वहां मैंने उभरती हुई प्राणशक्ति पाई है और जनता की मदद की भावना पर मुझे अचरज हुआ। इसका क्या कारण है, यह तो मैं निश्चित रूप से नहीं कह सकता। मैं सिर्फ कई तरह के अंदाजे ही लगा सकता हूं। जनता के उत्साह ने कुदरती तौर पर मेरा दिल बढ़ा

दिया है और मुझमें नई शक्ति भर दी है। परन्तु मालूम होता है कि यह शक्ति कार्यसमिति की हर बैठक में बाहर निकल पड़ती है और मैं बहुत कुछ ऐसा महसूस करता हुआ लौटता हूं जैसे किसी बैटरी की बिजली खत्म होगई हो। इस मौके पर यह प्रतिक्रिया सबसे अधिक हुई है, क्योंकि मेरी जिस्मानी हालत गिरी हुई है।

लेकिन मैं आपको अपनी जिस्मानी या दिमागी हालत के बारे में लिखना नहीं चाहता था। इससे अधिक महत्त्वपूर्ण मामले ऐसे हैं, जिनकी मुझे चिन्ता है और अभी तक मुझे कोई साफ रास्ता नज़र नहीं आया। मैं जल्दबाजी में या मामले पर पूरा विचार किये बगैर काम नहीं करना चाहता। परन्तु मेरे अपने मन में निश्चय होने से पहले मैं आपको बता देना चाहता हूं कि मैं किधर देख रहा हूं।

आपने मामले को ठीकठाक करने के लिए और संकट को टालने म मदद देने के लिए जो कष्ट उठाया उस सबके लिए मैं आपका अहसानमन्द हूं। मुझे तब भी पक्का विश्वास था और अब भी पक्का विश्वास है कि जिस तरह की अलहदगी की बात सुझाई गई, उसका हमारे सारे काम पर, जिनमें चुनाव शामिल हैं, गंभीर असर होता। बहरहाल इस समय हम कहां हैं और भविष्य में हमारे लिए क्या बदा है? मैंने अपने नाम राजेन्द्रबाबू का पत्र (दूसरा) और मुझपर लगाये गए जबरदस्त आरोपों को फिर से पढ़ा। यह अभियोगपत्र जबरदस्त तो है, परन्तु निश्चित नहीं है। केवल स्त्रियों की सभा में मेरे भाषण की बात निश्चित है। लेकिन वास्तव में उसका किसी व्यापक प्रश्न से संबंध नहीं है। खास चीज यह है कि मेरी प्रवृत्तियां कांग्रेस के मकसद को नुकसान पहुंचानेवाली हैं, उनसे कांग्रेस का नुकसान हो रहा है और चुनावों में सफलता की संभावना घट रही है। यदि मेरा यही हाल रहा तो हालत और बिगड़ सकती है और मेरे साथी इस जबर्दस्त मामले में कोई जोखम नहीं उठाना चाहते।

अब जाहिर है कि यदि इस आरोप में कोई सचाई है तो उसका मुकाबला होना चाहिए। मामला इतना गंभीर है कि उसपर लीपापोती नहीं की जा सकती। इसमें कुछ काले और सफेद रंग नहीं हैं और

न कोई भले और बुरे का संतुलन करनेवाली बातें हैं । यह तो सब काला-ही-काला है और इससे निर्णय करना सचमुच आसान होगया है । कारण, तथ्य को कितनी ही कोमलता के साथ बयान किया जाय, वह यह है : कि मैं एक असह्य कंटक हूं और मुझमें जो गुण हैं—यानी थोड़ी-सी योग्यता, शक्ति, लगन, कुछ व्यक्तित्व जिसका कुछ असर होता है—वे ही खतरनाक बन जाते हैं, क्योंकि वे गलत आदमी के साथ लगे हुए हैं । इस सबसे जो नतीजा निकलता है, वह साफ है ।

लखनऊ से पहले और किसी हद तक लखनऊ में भी ख़ुद मुझपर यह असर पड़ा कि इस साल हम सबके लिए साथ-साथ चलने में कठिनाई नहीं होनी चाहिए । अब यह साफ है कि मेरा ख़याल गलत था, हालांकि दोनों तरफ कोशिश में कोई कसर नहीं रही । मुमकिन है, दोष मेरा ही हो, मुझे इसका पता नहीं है, लेकिन आदमी को अपनी आंख का शहतीर शायद ही दिखाई देता है । असलियत यही है कि आज वह आत्मिक वफादारी नहीं है, जो हमारे दल को बांधकर रखती है । यह एक मशीन जैसा दल है और दोनों ओर एक निस्तेज रोष और दमन की-सी भावना है और जैसा मनोविज्ञान का प्रत्येक विद्यार्थी जानता है, इससे सब तरह के गैर-मुनासिब निजी और सामाजिक पेंच पैदा होते हैं ।

इस बार जब मैं बम्बई पहुंचा तो बहुत लोग मेरे मुंह की तरफ देखते रहे, क्योंकि उनके लिए यह मानना कठिन होगया था कि मैं बच कैसे गया । वहां सबको मालूम था (जैसा 'टाइम्स ऑव इंडिया' में पहले समाचार आया था) कि मेरा शान्ति से खात्मा होनेवाला है—अलबत्ता सियासी खात्मा ही । दाह-क्रिया के सिवा और सबकुछ तय हो चुका था, इसीलिए उन्हें अचरज था । मुझे यह अजीब-सी बात मालूम हुई कि जब बाजार में बहुत लोगों को ये सब विश्वासपूर्ण अफवाहें मालूम थीं तब मुझे इनका कुछ भी पता नहीं था । लेकिन हालांकि मुझे उनकी जानकारी नहीं थी तो भी अफवाहों का होना बिल्कुल वाजिब था, इसीसे मेरी मौजूदा अलहदगी का अंदाज लगाया जा सकता है ।

मैं अपने मौजूदा विचारों के बारे में अपनी पुस्तक में और बाद में भी विस्तार से लिख चुका हूं । मेरे बारे में राय बनाने के लिए मसाले

की कमी नहीं है। ये विचार आकस्मिक नहीं हैं। ये मेरा अंग हैं और हालांकि भविष्य में मैं उन्हें बदल सकता हूं, फिर भी जबतक वे मेरे विचार हैं, तबतक मुझे उनको प्रकट करना ही चाहिए चूंकि मैं एक बड़ी एकता को महत्व देता था, इसलिए मैं उन्हें नरम-से-नरम ढंग से जाहिर करने की कोशिश करता था। इसका एक बड़ा कारण यह भी था कि निश्चित निर्णयों की अपेक्षा मैं विचार को निमंत्रण देता था। मुझे इस दृष्टिकोण में और कांग्रेस कुछ भी कर रही हो उसमें कोई संघर्ष दिखाई नहीं दिया। जहांतक चुनावों का संबंध था, मैं निश्चित रूप से अनुभव करता था कि मेरा निश्चित दृष्टिकोण हमारे लिए लाभ की चीज था, क्योंकि उससे आम लोगों में उत्साह पैदा होता है। परन्तु मेरे दृष्टि-कोण के नरम और अस्पष्ट होते हुए भी मेरे साथी उसे खतरनाक और हानिकारक समझते हैं। मुझसे तो यहांतक कहा गया कि हिंदुस्तान की गरीबी और बेकारी पर मेरा हमेशा जोर देना बुद्धिमानी की बात नहीं थी। कम-से-कम जिस ढंग से मैं ज़ोर देता था, वह बेजा था।

आपको याद होगा कि दिल्ली और लखनऊ दोनों जगह मैंने स्पष्ट कर दिया था कि सामाजिक मामलों पर मुझे अपने विचार प्रकट करने की आजादी होनी चाहिए। मैंने यह समझा था कि आप और समिति के सदस्य इससे सहमत हैं। अब प्रश्न स्वयं उन विचारों की अपेक्षा उन्हें प्रकट करने की स्वतंत्रता का अधिक हो जाता है और इससे भी बड़ा प्रश्न जीवन के मूल्यों का है। यदि हम किसी चीज का बड़ा मूल्य समझते हैं तो हम उसका बलिदान नहीं कर सकते।

यह संघर्ष है, जिससे इन्कार नहीं किया जा सकता। कौन सही है और कौन गलत, इसकी बहस करना व्यर्थ है। परन्तु पिछले सप्ताह की घटनाओं के बाद मुझे यह संदेह होने लगा है कि क्या हम सचमुच सही रास्ते पर चल रहे हैं। मेरा यह विचार होता है कि हमारे लिए ठीक बात यह होगी कि मामला महासमिति की अगली बैठक में संक्षेप में रख दिया जाय और उसका आदेश ले लिया जाय। यह किस प्रकार अच्छी तरह किया जाय, इस बारे में मेरा दिमाग अभी साफ नहीं है, परन्तु वह होना चाहिए सादे-से-सादे ढंग पर और बिना बहुत बहस-मुबाहसे के। जहां-

तक मेरा संबंध है, मेरी तरफ से बहुत कम तर्क होगा।

शायद इसका परिणाम यह होगा कि मैं हट जाऊंगा और अधिक एक-जैसे विचारों के लोगों की समिति बन जायगी।

आपने मुझसे कहा था कि किसी-न-किसी प्रकार का बयान ज़ारी करने का आपका इरादा है। मैं इसका स्वागत करूंगा, क्योंकि मैं मानता हूं कि प्रत्येक दृष्टिकोण देश के सामने स्पष्ट रख दिया जाय।

मैं अभी इस मामले का जिक्र किसीसे नहीं कर रहा हूं। अलबत्ता भेद लेनेवाली और अशिष्ट आंखें इसे आपके पास पहुंचने से पहले रास्ते में ही देख लेंगी। उन्हें बर्दाश्त करना पड़ेगा।

बम्बई में मृदुला से बात हुई थी। वह अहमदाबाद से कुछ घंटों के लिए खास तौर से मेरे अनुरोध पर आई थी। उसने मुझे बताया कि जहांतक तथ्यों का संबंध था, उसे जो कुछ आपने उससे कहा था और जो कुछ मैंने लिखा या कहा था उसमें कोई फर्क नहीं दीखा था (और न बताया था)। सच तो यह है कि उसने आपके नाम अपने पत्र में यह स्पष्ट कर दिया था, लेकिन शायद एक-दो वाक्य आपके देखने से रह गये। उसका इरादा है कि अपने पिछले पत्र की नकल आपके पास भेज दे, ताकि आप खुद इस बात को देख लें।

वर्धा में मुझसे कहा गया कि गुजरात की स्त्रियां यह कह रही हैं कि आप या वल्लभभाई दोनों स्त्रियों को कार्यसमिति से अलग रखने के लिए जिम्मेदार हैं। मैंने मृदुला से पूछा था। उसने मुझसे कहा कि जहां-तक उसे मालूम है, किसीने ऐसा कहा या सोचा नहीं।

मैंने इस बारे में सरोजिनी से भी बात की थी।

मैं डा. जीवराज मेहता और खुरशेद से मिला। जीवराज खर्च वगैरा के बारे में विधान से पूरी तरह सहमत नहीं हैं, परन्तु उन्होंने अपने पहले के आंकड़े को कुछ कम कर दिया। अब वह कहते हैं कि अस्पताल की इमारत और सामान वगैरा के लिए दो लाख काफी होने चाहिए।

और दो लाख वह सुरक्षित कोष के लिए चाहते हैं। उनकी यह भी राय है कि इमारत स्वराज-भवन की जमीन पर नहीं बनानी चाहिए, जैसी कि शुरू में योजना थी, बल्कि आनन्द-भवन के पूरब में खेतों पर बनानी

चाहिए। मैं इसके बारे में म्युनिसिपैलिटी से पूछताछ करूंगा।

मेरा इरादा महासमिति के अधिवेशन के आसपास बम्बई में कमला-स्मारक ट्रस्टियों की बैठक बुलाने का है। स्वराज-भवन के ट्रस्टियों की बैठक भी।

बम्बई में नरगिस ने आग्रह करके मुझे एक गले के जर्मन विशेषज्ञ के पास भेज दिया। इस आदमी ने मुझसे कहा है कि अपने गले को आराम देने के लिए मैं एक हफ्ते के लिए बिल्कुल चुप रहूं। यह तो मुश्किल काम है।

सस्नेह आपका,
जवाहरलाल

१५१. महात्मा गांधी की ओर से

सेगांव, वर्धा
८ जुलाई १९३६

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा पत्र अभी मिला। वर्धा की घटनाओं को तुम्हें लिख सकने के लिए मैं समय ढूंढ़ रहा था। तुम्हारे पत्र ने इसे कठिन बना दिया। परन्तु मैं इतना ही कहना चाहूंगा कि हट जाने के पत्र का वह अर्थ नहीं है जो तुमने इसे लेते समय लगाया। वह मेरे देख लेने के बाद तुम्हें भेजा गया था। त्याग-पत्र के स्थान पर इस तरह का पत्र भेजने का सुझाव मेरा था। मैं चाहता हूं कि तुम इस पत्र के विषय में अधिक न्यायपूर्ण विचार करोगे। हर हालत में मेरा यह दृढ़ मत है कि वर्ष के शेष समय में सारी खींचतान बन्द रहे और कोई त्यागपत्र न दिये जायं। संकट का सामना करने में महासमिति का सब काम ठप्प हो जायगा और वह सामना कर भी नहीं सकेगी। वह दो भावनाओं के बीच छिन्न-भिन्न हो जायगी। लोकतन्त्र के नाम पर उसपर एक ऐसा संकट अचानक लाद देना अत्यन्त अन्यायपूर्ण होगा, जो पहले कभी उसके सामने नहीं आया। तुम उस पत्र के गूढ़ार्थ को बढ़ा-चढ़ाकर समझ रहे हो। मैं बहस नहीं करूंगा, परन्तु यह आग्रह अवश्य करूंगा कि स्थिति पर गम्भीरतापूर्वक विचार करो और अपनी शान के सामने उदासी की घड़ी में हथियार

न डाल दो। कार्य-समिति की बैठकों में अपने विनोद को खुलकर क्यों न खेलने दो? जिन लोगों के साथ तुमने वर्षों तक बेखटके काम किया है, उनका साथ निभाना तुम्हारे लिए इतना कठिन क्यों होना चाहिए? यदि वे असहिष्णुता के अपराधी हैं तो तुम्हारा हिस्सा अधिक है। तुम्हारी आपसी असहिष्णुता के कारण देश की हानि नहीं होनी चाहिए।

आशा है, तुमने जर्मन डाक्टर की बहुत सयानी सलाह मान ली है।

सस्नेह,
बापू

१५२. जे. बी. कृपालानी की ओर से

स्वराज्य भवन,
इलाहाबाद
११ जुलाई १९३६

प्रिय जवाहर,

बम्बई से तुम बीमार होकर लौटे। इसलिए मैंने तुम्हें तकलीफ देना पसंद नहीं किया। अब चूंकि तुम्हारा स्वास्थ्य बहुत-कुछ ठीक होगया है, इसलिए कुछ सतरें लिखने का साहस कर रहा हूं।

पिछली बार वर्धावाले कदम का उतना व्यक्तिगत महत्व नहीं था, जितना तुमने दिया। कम-से-कम मेरे लिए तो वह केवल राजनैतिक महत्व ही रखता है। मैंने कभी कल्पना भी नहीं की थी कि अपने साथियों से मिल जाने में मेरी तुम्हारे प्रति व्यक्तिगत सम्मान में कमी थी। मैंने हमेशा तुम्हारी दोस्ती का मूल्य समझा है। इसका आधार निश्चय ही राजनैतिक था, परन्तु हमारे बरसों के घनिष्ठ संपर्क ने उसे मित्रता में बदल दिया है। इसकी सीमा कहांतक है, यह शायद तुम्हें पता न हो, क्योंकि उसे कभी शब्दों में जाहिर नहीं किया गया है। शायद तुम्हें यह जानकर आश्चर्य होगा, लेकिन यह एक तथ्य है कि मैंने अपना विवाह डेढ़ साल के लिए महज इसलिए स्थगित कर दिया, क्योंकि तुम मुक्त नहीं थे। जबकि मैं चाहता था कि कोई भी इस मौके पर उपस्थित न हो, तब भी मैं तुम्हारी उपस्थिति चाहता था। यह सब मैंने सुचेता को बता दिया था, और मेरी उम्र के कारण, इंतजार करने की अपनी स्वाभाविक अनिच्छा के बावजूद, उसने मेरी बात

को समझा और मेरी भावनाओं का आदर किया। खुरशेदबहन, जो हम दोनों की समान मित्र हैं, तुम्हारे प्रति मेरे लगाव को जानती हैं।

बापू ने मुझसे कहा कि मेरे बारे में तुम्हें बहुत दुःख हुआ। तुम्हारी शिकायत थी कि मैंने तुम्हें सारी बातें पहले क्यों नहीं बताईं, जबकि हम कई बार मिलते रहे थे। मैं सोचता हूं कि तुम्हारी शिकायत में जो बल है, उसे स्वीकार करना होगा। इसके लिए मेरी हद दर्जे की शर्म जिम्मेदार है। लखनऊ से लौटने के बाद से मैं बराबर सोचता रहा हूं कि तुमसे बातचीत करूं। किसी तरह हमारी भाग-दौड़ और काम के बोझ तथा हलचलों के कारण मैं इस बातचीत को आगे के लिए टालता रहा और कोई अवसर ही नहीं निकाल सका।

जहांतक मुझे पता है, वर्धावाली बात एकाएक और बिना पहले सोच-विचार के हुई थी। हस्ताक्षर करनेवाले हर व्यक्ति की प्रतिक्रिया एक-जैसी थी। उसका व्यक्तिगत महत्व भी है, इस बात का किसीको खयाल तक नहीं हुआ। तुम्हें शायद पता नहीं है कि पहले पत्र के मसविदे का बहुत अधिक हिस्सा और दूसरा तो पूरा-का-पूरा राजेन्द्रबाबू का ही लिखा हुआ था। तुम्हें यह जानकर शायद आश्चर्य होगा कि हम सब सचमुच यही समझते थे कि तुम हमें बोझ मानते हो और परिवर्तन से तुम्हें दुःख नहीं होगा। हमने यह भी सोचा कि कार्य-समिति को फिर से बनाना बिल्कुल संभव है, आवश्यक नहीं कि सोशलिस्टों को लेकर, बल्कि ऐसे लोगों को लेकर जो निश्चित रूप से सोशलिस्ट पार्टी से संबंध नहीं रखते, लेकिन कम-ज्यादा उनके विचार तुमसे मिलते-जुलते हैं। सबके बारे में मैं नहीं कह सकता, लेकिन मुझे निश्चय है कि हममें से अधिकांश ने नहीं सोचा था कि इससे तुमको तकलीफ होगी। परन्तु बाद की घटनाओं ने सिद्ध कर दिया कि हमारा अनुमान गलत था। यह सब मैं इसलिए लिख रहा हूं कि तुम उस कदम को सही-सही रूप में समझ जाओ, नहीं तो, मंशा न होते हुए भी, मित्रों के प्रति तुमसे कहीं अन्याय न होजाय।

इतनी तो हुई निजी तफसील। मेरे राजनैतिक विचारों ने, जैसेकि वे अभी हाल में प्रकट हुए हैं, तुम्हें हैरत में डाल दिया होगा। तुम मैदान से काफी समय तक दूर रहे। इसलिए पष्ठ-भमि की तुम्हें स्पष्ट कल्पना नहीं है।

समाजवादी मित्रों के साथ के विवाद बंबई-कांग्रेस से पहले के हैं। वे तो पूना-सम्मेलन के भी पहले के हैं। तुम्हें शायद पता है कि उस पूना-सम्मेलन में सविनय-अवज्ञा को वापस लेने के उनके प्रस्तावों के विरोध में बोलनेवाला मुख्यतः एकमात्र मैं ही था। तुम यह भी जानते होगे कि कुछ मित्रों को, खास तौर पर भूलाभाई और दूसरों को, मेरा यह विरोध पसन्द नहीं आया। मैंने दफ्तर का काम संभाला। उससे कहीं पहले से मेरा तो इस बात से विरोध ही रहा है। इस विरोध की कहानी और साथ-ही-साथ अपना दृष्टि-बिन्दु भी मैं संक्षेप में तुम्हारे सामने रखने की कोशिश करता हूं।

बापू की प्रतिष्ठा को कम करना और उनकी नीतियों का अतिक्रमण करना मैं एक बहुत बड़ी भूल समझता हूं। अगर वह जीवित रहे तो संघर्ष के समय उनकी फिर जरूरत होगी। मैं खूब जानता हूं कि वह संघर्ष के लिए वस्तुतः तरस रहे हैं। वह तो केवल समय की प्रतीक्षा कर रहे हैं। ऐसी स्थिति में उनके प्रभाव को घटाने या उनकी योजनाओं का मजाक उड़ाने का यत्न करना राजनैतिक मूर्खता है। कांग्रेस समाजवादी लोगों ने व्यक्तिगत रूप से और मिलकर यह किया है और करते हैं।

मैं मानता हूं कि मैं खुद एक प्रकार का समाजवादी हूं। रूस में जो कुछ हुआ है, दूसरों के समान, मैं भी स्वभावतः उसका प्रशंसक हूं। मैंने इस विषय का बहुत-सा महत्वपूर्ण साहित्य भी पढ़ा है। परन्तु केवल विचार-प्रधान होने से अधिक मैं कार्य-प्रधान हूं। इसलिए काम शुरू करने के पहले मैं तस्वीर को उसके पूरे रूप में देखने की राह नहीं देख सकता। मैं तो समझता हूं कि किसी सुधारक ने न ऐसा किया है और न कर सकता है। अगर कोई ऐसा करे तो, मेरा खयाल है, वह देखेगा कि उससे कुछ नहीं बन पाया है। हमें उन चित्रकारों की तरह होना पड़ता है, जो अपनी कला के प्रति सच्चे और वफादार होने के लिए अपने चित्र में हर चीज को या हर तफसील को दिखाने का यत्न नहीं करते। इसलिए एक कार्यकर्ता के नाते मैं दूर की चीजों से अधीर हो जाता हूं। मैं तो फिलहाल की जरूरत को अधिक महत्व देता हूं, अपना सारा ध्यान और प्रवृत्तियां उसीपर केन्द्रित कर देना चाहता हूं। बेशक, आदर्श को छोड़कर नहीं, बल्कि एक व्यावहारिक सुधारक जिस दृष्टि से उसे देखता है उससे। मैं मानता हूं कि राष्ट्रीयता, खास तौर पर यहां हिंदु-

स्तान में, गये जमाने की चीज नहीं ह। मेरा विश्वास है कि जबतक हम राज-नैतिक आजादी हासिल नहीं कर लेते, वह गई-बीती नहीं हो सकती। इसलिए मैं मानता हूं कि उसकी प्राप्ति के लिए सब वर्गों और सभी हितों की सेवा का उपयोग किया जा सकता है और उसके आधार पर एक संयुक्त मोर्चा बनाया जा सकता है। मैं समझता हूं कि स्वतन्त्रता ऐसा लक्ष्य है, जिसमें पर्याप्त प्रेरणा है और जिसे प्राप्त करना कठिन है। मैं तो यह भी मानता हूं कि यह आदर्श अभी हिंदुस्तानी समाज के सभी वर्गों की गहराई तक नहीं पहुंचा है। इसलिए जन-साधारण के सामने अधिक दूर की चीज रखते हुए मुझे डर लगता है कि हम कहीं उनकी एकाग्रता और काम करने की उनकी क्षमता को नष्ट न कर दें। मैं जानता हूं कि तर्क द्वारा इस विचार को गिराया जा सकता है, क्योंकि इसमें पूर्ण नहीं, आंशिक सत्य है। परन्तु हमें यह भी नहीं भूलना चाहिए कि जब हम सत्य पर प्रत्यक्ष अमल करने लगते हैं तब थोड़ी देर के लिए वह आंशिक सत्य ही संपूर्ण सत्य बन जाता है।

मैं यह भी मानता हूं कि हम बीते जमाने के आदमी नहीं हैं। हमारे पास अपने कुछ खास मूल्य हैं, जिनका महत्व, मैं नहीं मानता हूं कि खत्म हो गया है। मुझे अपने लोगों की इस प्रतिभा पर विश्वास है कि वे कोई नई चीज स्वयं प्रवर्तित कर सकते हैं, जैसाकि बापू ने मनोवैज्ञानिक क्षण पर किया। मैं नहीं बता सकता कि वह वस्तु क्या होगी। लेकिन इस समय तो मेरा उन तमाम लोगों पर विश्वास नहीं है, जिनके विचार, आदर्श और कार्य-पद्धतियां सब-की-सब बाहर से आई हैं, चाहे उनके दावे कुछ भी हों। दुर्भाग्यवश मेरा विचार है कि मेरे तमाम नौजवान समाजवादी दोस्तों के साथ यही सचाई है।

मैं मानता हूं कि पुराने दल की अपेक्षा आज इन नौजवानों के साथ तुम्हारी पटरी अधिक अच्छी बैठती है, भले ही पहले उसने कितना ही अच्छा काम किया हो। उन नौजवानों के साथ तुम अधिक आत्मीयता अनुभव करते हो। आदर्श और विचारों की दृष्टि से भी बापू की अपेक्षा वे तुम्हारे अधिक नजदीक हैं। ये समाजवादी मित्र जिस प्रकार अन्य दलों के साथ सांठ-गांठ कर लेते हैं, उसके कारण भी मैं उनपर अविश्वास करता हूं। उनके ये गठ-बन्धन केवल समय-साधक होते हैं। उन्होंने पूना में जमनादास

की सेवाओं का उपयोग किया। उन्हें पंजाब और बंगाल के संप्रदायवादियों से सांठ-गांठ करने में भी परहेज नहीं होगा, बशर्ते कोई तात्कालिक मतलब सिद्ध होता हो। हिंदुस्तान की राजनीति में मेरे विचार में यह एक खतरनाक बात है। मेरा मत है कि बापू ने इससे हमको वहुत बचाया है। मैं जानता हूं कि खुद वापू के अनुयायी भी ऐसा कर लेते हैं। इनमें उनमें सिर्फ कम-ज्यादा का फर्क है। मेरा अनुमान शायद गलत हो, परन्तु मेरा खयाल है कि समाजवादी मित्र इस कला में कहीं आगे बढ़े हुए हैं, जो कि एक शिथिल-चरित्र, कमज़ोर और गिरे हुए देश के लिए वहुत खतरनाक हैं।

इसलिए मैं स्वभावतः उस दल के साथ रहना चाहता हूं जो विचारों में बापू के अधिक निकट हैं। पिछले साल इस दल के साथ मेरी अंदरूनी लड़ाई को मेरे समाजवादी मित्र भी अच्छी तरह जानते हैं। परन्तु मैं देखता हूं कि अकेले आज वे ही—अधूरे तौर पर सही—रचनात्मक कार्यक्रम, बापू के विचारों और हिन्दुस्तान की राजनीति में बापू के बने रहने के सबसे बड़े हिमायती हैं। यह जानकर तुम्हें शायद आश्चर्य होगा कि लखनऊ में जब मैंने सुना कि श्री भूलाभाई को कार्यसमिति में लेने का विचार हो रहा है तब जयरामदास से मैंने बातचीत की और हम दोनों मिलकर बापू के पास दौड़े-दौड़े गये और वल्लभभाई के सामने हमने उन्हें इस विषय में अपने विचार ज़रा सख्त भाषा में सुनाये। जमनालालजी भी थे। बापू ने हमें बताया कि पार्लमेंटरी बोर्ड को तोड़ दिया गया है, इसलिए इस प्रवृत्ति के भी किसी प्रतिनिधि को कार्य-समिति में रखना जरूरी है। जो हो, बापू पर, सरदार पर अथवा जमनालालजी पर हम कोई असर नहीं डाल सके। फिर जिस समय समाजवादी मित्रों को शामिल किया गया तब भी हमने इस तरह की कोई आपत्ति नहीं उठाई।

ऊपर मैंने संक्षेप में बताया कि पिछले दो-तीन वर्षों से मेरा दिमाग किस प्रकार काम करता रहा है। मैं आशा नहीं कर रहा हूं कि ऊपर मैंने जो कुछ लिखा है, उसका तुमपर कोई असर होगा। परन्तु मेरे लिए इतना जान लेना भी काफी होगा कि तुम्हारे प्रति मेरे प्रेम और आदर पर तुम अविश्वास नहीं करते। मैं तो सचाई से कह सकता हूं कि राजनैतिक क्षेत्र में बापू को छोड़कर एक भी आदमी ऐसा नहीं है, जिसे मैं तुमसे अधिक

प्रेम और आदर करता हूं।

पत्र लम्बा हो जाने के लिए मैं क्षमा नहीं मांगता, क्योंकि मेरे विचार से तो यह अधूरा ही है। यदि इसे पढ़ने पर तुम महसूस करो कि हमको अधिक तफसील के साथ बातें कर लेनी चाहिए तो मैं इसका स्वागत ही करूंगा। मुझे संतोष होगा, यदि इसका इतना परिणाम भी हुआ कि मुझे भविष्य में चाहे कोई राजनैतिक कदम उठाना पड़े, मेरे व्यक्तिगत प्रेम के लिए तुम्हें शंका नहीं होगी।

तुम्हारा,
जीवत

१५३. महात्मा गांधी की ओर से

दुबारा मैंने नहीं देखा

सेगांव
१५ जुलाई १९३६

प्रिय जवाहरलाल,

१. आशा है तुमको 'टाइम्स ऑव इंडिया' के पत्र के बारे में मेरा तार मिला होगा। मैंने कल प्राप्त करके उसे पूरा पढ़ा। इसके विषय में मुझे कभी किसीने नहीं लिखा। पत्र को पढ़कर मेरी राय पक्की हुई है कि तुम्हें इसपर मान-हानि की कानूनी कार्रवाई करनी चाहिए।

२. यदि तुम मुझे गलत न समझो तो मैं चाहूंगा कि तुम मुझे नागरिक स्वातंत्र्य-संघ से मुक्त रक्खो। फिलहाल मैं किसी राजनैतिक संस्था में शामिल होना पसन्द नहीं करता और किसी पक्के सत्याग्रही के उसमें शरीक होने का कोई अर्थ भी नहीं। परन्तु इस संघ में मेरे सम्मिलित होने-न-होने के परिपक्व विचार के बाद मेरी यह राय पक्की हुई है कि सरोजिनी को या यों कहो कि किसी भी सत्याग्रही को अध्यक्ष बनाने में भूल होगी। मेरा अब यह मत है कि अध्यक्ष कोई प्रसिद्ध वैधानिक कानूनी वकील होना चाहिए। यदि यह बात तुम्हें न जंचती हो तो तुम्हें एक टिप्पणी लेखक को, जो कानून-भंग करनेवाला न हो, रखना चाहिए। मैं यह भी कहूंगा कि सदस्यों की संख्या सीमित रखो। तुम्हें संख्या के बजाय गुणों की आवश्यकता है।

३. तुम्हारा पत्र मर्मस्पर्शी है। तुम ऐसा अनुभव करते हो कि तुम सबसे अधिक पीड़ित पक्ष हो। लेकिन हकीकत यह है कि तुम्हारे साथियों

में तुम्हारे जैसी हिम्मत और साफगोई नहीं है। परिणाम विनाशकारी हुआ है। मैंने सदा उन्हें समझाया है कि वे तुमसे साफ-साफ और निडर होकर बात कर लें। परन्तु साहस न होने के कारण जब कभी वे बोले, भद्दी तरह से बोले और तुम्हें उत्तेजना हुई। मैं तुम्हें बताता हूं कि वे तुमसे डरते रहे, क्योंकि तुम्हें उनसे चिड़चिड़ाहट और अधीरता हो जाती है। वे तुम्हारी झिड़कियों से और तुम्हारे हाकिमाना ढंग पर कुढ़ते रहे और सबसे अधिक इस बात से कि उनके खयाल से तुम अपने-आपको अचूक और श्रेष्ठ ज्ञान-वाला समझते हो। वे महसूस करते हैं कि तुम उनके साथ शिष्टता से पेश नहीं आये और समाजवादियों के उपहास और गलत अर्थ लगाने से तुमने उनकी कभी रक्षा नहीं की।

तुम्हें शिकायत है कि उन्होंने तुम्हारी प्रवृत्तियों को हानिकारक बताया। इसका यह अर्थ नहीं था कि तुम हानिकारक हो। उनके पत्र में तुम्हारे गुणों या तुम्हारी सेवाओं के बखान करने का कोई मौका नहीं था। वे पूरी तरह जानते हैं कि तुममें जीवट है और आम जनता और देश के युवकों पर तुम्हारा काबू है। वे जानते हैं कि तुम्हें छोड़ा नहीं जा सकता और इस लिए वे झुक जाना चाहते थे।

मुझे यह सारा मामला दुखद लगता है, साथ ही हास्यजनक भी। इस-लिए मैं चाहता हूं कि तुम सारी बात विनोद-वृत्ति से देखो। मुझे इस बात की चिंता नहीं कि तुम ए. आई. सी. सी. को अपने विश्वास में लो, परन्तु मैं नहीं चाहता कि उसपर तुम्हारे घरेलू झगड़े ठीक करने का या तुममें और उनमें चुनाव करने का असह्य भार डाला जाय। तुम कुछ भी करो, उनके सामने बनी-बनाई बातें ही रखनी चाहिए।

तुम इस बात पर रोष क्यों करते हो कि तमाम समितियों में उनका बहुतम प्रकट हो। क्या यह अत्यन्त स्वाभाविक चीज नहीं है? तुम उनके सर्वसम्मत चुनाव से पदारूढ़ हो, लेकिन अभी तक सत्ता तुम्हारे पास नहीं है। तुम्हें पदारूढ़ करना तुम्हें शीघ्र सत्तारूढ़ करने का प्रयत्न था। और किसी तरह ऐसा न होता। जो हो, मेरे दिमाग में यही बात थी, जब मैंने कांटों के ताज के लिए तुम्हारा नाम सुझाया था। सिर पर घाव हो जायं तो भी इसे पहने रहो। समिति की बैठकों में फिर से

अपनी विनोद-प्रियता दिखाओ। तुम्हारा यही अत्यन्त सामान्य स्वरूप होना चाहिए, न कि एक चिन्तामग्न क्षुब्ध व्यक्ति का, जो ज़रा-ज़रा-सी बात पर उबल पड़ने को तैयार हो।

काश तुम मुझे तार से खबर दो कि मेरा पत्र पढ़ लेने के बाद तुम्हें उतनी ही प्रफुल्लता अनुभव हुई जितनी लाहौर में नववर्ष के दिन हुई थी, जब तुम तिरगे झंडे के चारों ओर नाचते बताये गए थे! अपने गले को भी तो तुम्हें मौका देना ही चाहिए।

मैं अपना बयान फिर से देख रहा हूं। मैंने निश्चय किया है कि जबतक तुम इसे देख न लो, मैं इसे प्रकाशित न करूं।

मैंने यह भी निर्णय किया है कि हमारे पत्र-व्यवहार को महादेव के सिवा और कोई न देखे।

सस्नेह,
बापू

१५४. अर्न्स्ट तोल्ले की ओर से

[अर्न्स्ट तोल्ले जर्मनी के प्रसिद्ध लेखक थे। उन दिनों उनकी पुस्तकें, अनुवाद के रूप में बहुत प्रचलित थीं। हिटलर के कारण उन्हें जर्मनी छोड़ना पड़ा। उसके पहले भी उन्होंने कुछ समय राजनैतिक कैदी के रूप में जेल में बिताया था। वह बहुत भावुक थे और स्पेन के गृहयुद्ध जैसी घटनाओं के कारण उन्हें काफी सहन करना पड़ा। उन्होंने आत्महत्या कर ली। क्रिस्तियान उनकी पत्नी थीं।]

लन्दन
२१ जुलाई १९३६

प्रिय नेहरू,

पत्र के लिए अनेक धन्यवाद। मुझे इस बात का बड़ा गर्व है कि पिछले कुछ सप्ताहों के समाचारों में हमारे नाम इतनी बार साथ-साथ लिये गए। मने आपकी पुस्तक पढ़ी है। जब मैंने आपकी पुस्तक पढ़ी, जो मेरी निगाह में अबतक आई आत्मकथाओं में सर्वोत्तम है और जो न केवल एक महान व्यक्तित्व का दर्शन कराती है, अपितु उस सराहनीय संघर्ष का भी, जो आपके देश की जनता ने अपनेको बाहरी और भीतरी बंधनों से मुक्त करने के लिए किया है, तो मैंने प्राय: हमारे बीच के बंधनों को अनुभव किया। मैं

अक्सर सोचा करता हूं कि जो लोग जेल में रह आते हैं, वे अदृश्य रूप से एक ऐसे बंधुत्व का अंग बन जाते हैं, जिसका आधार पीड़ा और हृदय की वह महान कल्पना-शक्ति होती है, जो जेल में विकसित होती है।

श्रीमती तोल्ले और मैं आपकी पुत्री इन्दिरा से समाचार पाने की बड़ी तीव्रता से प्रतीक्षा कर रहे हैं। हमें उससे मिलकर बड़ी प्रसन्नता होगी।

कुछ सप्ताह हुए श्रीमती तोल्ले ने मेरे एक नये नाटक 'नो मोर पीस' (बस, अब शांति नहीं) में काम किया था और उन्हें बड़ी सफलता मिली थी। संभव है कि जाड़ों में वह लंदन में भी अभिनय करें। सितम्बर के अन्त में मैं अमरीका जा रहा हूं, जहां मैं भिन्न-भिन्न विषयों पर भाषण करूंगा जैसे कि—

'हिटलर, उसके वचन और वास्तविकता।'

'क्या आपके समय की जिम्मेदारी आपपर है?'

'आधुनिक रंगमंच।'

यूरोप की स्थिति के बारे में आपको कुछ लिखने की मुझे कोई आवश्यकता नहीं है। उसे आप भी उतना ही जानते हैं, जितना मैं। राष्ट्र-संघ की भीतरी कमजोरी ज्यादा-से-ज्यादा प्रकट होगई है, और फासिस्ट तानाशाह इसका फायदा उठा रहे हैं। अंततः यूरोप में फासिस्ट और प्रजातंत्रीय गुटों में युद्ध होना अनिवार्य है। समस्या केवल यह है कि जनतंत्रीय देश एक स्पष्ट कार्यक्रम को सामने रखकर और दृढ़ संकल्प के साथ एक-दूसरे के साथ संगठित होते हैं या नहीं। यदि वे ऐसा नहीं करेंगे तो जिस चीज से वे बचना चाहते हैं उसको ले आयेंगे, यानी निकट भविष्य में ही युद्ध। दुर्भाग्यवश इतिहास से कोई भी सबक सीखना नहीं चाहता। जर्मनी का प्रजातंत्र भी कमजोर था और हिटलर को एक के बाद दूसरी रियायत देकर गृहयुद्ध से बचना चाहता था। इस प्रकार जर्मन अधिकारियों ने स्वयं अपने पतन का रास्ता तैयार कर लिया।

मैंने आपके लेख को बड़ी रुचि के साथ पढ़ा है। आपने फिलस्तीन की यहूदी-समस्या के बारे में जो कुछ भी कहा है उससे मैं पूरी तरह सहमत हूं। दो खतरे हैं—एक तो यहूदी राष्ट्रवादी, जो अपनी राष्ट्रीयता की धुन में आजकल की उस विचारधारा को भूल जाते हैं, जो राष्ट्रवाद से ऊंची है

और दूसरे, अरब राष्ट्रवादी जो फासिस्ट विचारधारा से विषाक्त होने के कारण उस समस्या को नहीं देख पाते, जो ज्यादा बड़ी है।

आपकी किताब ने इस देश में बड़ी रुचि पैदा कर दी है, यहांतक कि आपके विरोधियों में भी।

कुछ दिन हुए लार्ड-सभा के एक प्रसिद्ध सदस्य से मेरी बातचीत हुई थी। उन्होंने मुझे बताया कि वह इस पुस्तक को दो बार पहले ही पढ़ चुके हैं। सिद्धान्त और व्यवहार . . .

शुभकामना सहित,

आपका,

अर्न्स्टतौल्ले

१५५. महात्मा गांधी की ओर से

सेगांव

३० जुलाई १९३६

प्रिय जवाहरलाल,

मैं कितना चाहता हूं कि तुम 'पागलपन' के कामों को बन्द कर दो और आम भलाई के लिए अपनी शक्ति को बचाओ।

अगर तुम अपना विनोद कभी न छोड़ो और अपना पूरा कार्यकाल पूरा करो तथा अपनी नीति मौजूदा साथियों के द्वारा ही अधिक-से-अधिक चलाने का प्रयत्न करो तो सब ठीक हो जायगा। समय आ पहुंचा है कि भविष्य का अर्थात् अगले वर्ष की योजनाओं का विचार किया जाय। कुछ भी हो, तुम्हें विरोध में नहीं होना चाहिए। यह मेरी पक्की राय है। जब पिताजी की तरह तुम महसूस करो कि तुम कांग्रेस को अकेले ही संभालने को तैयार हो तब मेरे खयाल से मौजूदा साथियों की तरफ से कोई विरोध नहीं पाओगे। आशा है, बम्बई में तुम्हारा मार्ग साफ रहेगा।

कमला-स्मारक से मुझे बेचैनी हो रही है। मुझे मालूम नहीं कि चंदे या योजना के बारे में क्या हो रहा है। अगर खुरशेद या सरूप या दोनों इस चीज़ पर पूरा ध्यान लगा रही हैं तो अच्छा है। सरूप से कहना कि मैं आशा रखता हूं कि इस संबंध में वह जो कुछ करेगी उससे मुझे परिचित रखेगी।

मैं यहां समाजवाद के प्रश्न की चर्चा नहीं करूंगा। ज्योंही मैं अपनी टिप्पणी को दुबारा देख लेना खत्म कर दूंगा, तुम्हारे पास उसका मसविदा

पहुंच जायगा और बाद में अखबारों को भेजा जायगा। मेरी कठिनाई दूर भविष्य के बारे में नहीं है। मैं तो सदा वर्तमान पर ही पूरा ध्यान लगा सकता हूं और उसीकी मुझे कभी-कभी चिन्ता होती है। अगर वर्तमान को संभाल लिया जाय तो भविष्य अपने-आप संभल जायगा। लेकिन मुझे आगे की बात नहीं सोचनी चाहिए।

आशा है, तुम्हारा स्वास्थ्य सचमुच अच्छा रह रहा होगा। सस्नेह,

बापू

मेरे और जेंकिंस के बीच का पत्र-व्यवहार तुम देख लेना। मुझे भी कानूनी कार्रवाई से घृणा है। परन्तु यह मामला मुझे ऐसा लगता है, जिसमें कार्रवाई जरूरी है।

१५६. क्रिस्तियान तोल्ले की ओर से

लन्दन
२७ अगस्त १९३६

प्रिय श्री नेहरू,

आपकी पुत्री इन्दिरा कल हमारे यहां दोपहर का खाना खाने आई थी। दुर्भाग्यवश मिस्टर तोल्ले नहीं आ सके। उन्हें अमेरीका का वीसा लेने की कोशिश में अमरीकी कौंसल के पास जाना था, जिसमें उन्हें कुछ अड़चनें पड़ रही हैं। इन्दिरा से न मिल सकने के कारण उन्हें बड़ी निराशा हुई।

मैं आपको यह बताना चाहती हूं कि इन्दिरा से मिलकर मुझे कितनी प्रसन्नता हुई। यही नहीं कि वह इतनी खूबसूरत ह, बल्कि इतनी पवित्र है कि सभी लोग उसके साथ प्रसन्नता का अनुभव करने लगते हैं और लोगों के मन में कोई विरोधी भावना उत्पन्न नहीं हो पाती। मुझे तो वह एक छोटे-से फूल जैसी लगी जिसे हवा बड़ी आसानी से उड़ा ले जा सकती है, लेकिन मैं समझती हूं कि उसे उस हवा का डर नहीं है।

मैंने अभी-अभी आपके जीवन-चरित को बड़ी रुचि और गहरी सहानुभूति के साथ पढ़ना शुरू किया है।

शुभ कामनाओं और आदरसहित, सप्रेम आपकी,
हार्दिक शुभकामनाएं, क्रिस्तियान तोल्ले
सदा आपका, अर्न्स्ट तोल्ले

१५७. महात्मा गांधी की ओर से

सेगांव
२८ अगस्त १९३६

प्रिय जवाहरलाल,

कल की मेरी बातचीत ने मुझे विचार में डाल दिया है। क्या कारण है कि पूरी इच्छा होते हुए भी मैं उस चीज को नहीं समझ सकता, जो तुम्हारे लिए इतनी स्पष्ट है ? जहांतक मैं जानता हूं मुझे बौद्धिक ह्रास का मर्ज नहीं लगा है। तो फिर तुम्हें कम-से-कम मुझे यह समझाने पर कि तुम चाहते क्या हो, पूरा दिल क्यों न लगा देना चाहिए ? संभव है, मैं तुमसे सहमत न होऊं। मगर मेरी स्थिति तो ऐसा कहने की होनी चाहिए। कल की बातचीत से इसपर प्रकाश नहीं पड़ता कि तुम्हारे जी में क्या है। और शायद जो बात मेरे लिए सही है वही और भी कुछ लोगों के लिए हो। मैं इसी समय इस चीज की चर्चा राजाजी से कर रहा हूं। तुम भी समय निकाल सको तो मैं चाहूंगा कि अपने कार्यक्रम की चर्चा उनसे कर लो। मेरे पास समय नहीं है, इसलिए विस्तार से नहीं लिखूंगा। तुम जानते हो मेरा क्या मतलब है।

सस्नेह,
बापू

१५८. एडवर्ड टामसन की ओर से

होटल सेसिल, दिल्ली
२६ अक्तूबर १९३६

प्रिय नेहरू,

क्योंकि सरकार (जिसका राजद्रोह का स्तर इस देश में बड़ा नीचा है) मेरे पत्र-व्यवहार में दिलचस्पी लेती मालूम पड़ती है, मेरा खयाल है कि इस पत्र के आपके पास पहुंचने में काफी देर लग जायगी। इसलिए मैं जल्दी लिख रहा हूं।

इलाहाबाद में मैं दो-तीन दिन महा राजद्रोही समझे जानेवाले माननीय सर तेजबहादुर सप्रू के साथ बिताऊंगा। मेरा खयाल है कि मैं ३० अथवा ३१ अक्तूबर को इलाहाबाद पहुंच जाऊंगा।

क्या आप सप्रू को यह लिख देंगे कि आप इलाहाबाद में कब होंगे ?

मैं आज पक्के तौर पर नहीं कह सकता कि इलाहाबाद किस दिन पहुंचूंगा, क्योंकि यह इस बात पर निर्भर करता है कि सप्रू को २९-३० तारीख सुविधाजनक होगी या नहीं। मुझे परसों तक इसका पता चल जायगा; लेकिन मेरी चिट्ठियों को एक दिन का रास्ता तय करने में चार-पांच दिन लगते हैं।

मुझे विश्वास है कि जो सज्जन इस पत्र को आपके पास पहुंचने से पहले ही पढ़ेंगे वह भले और मेहरबान होंगे। इसलिए मुझे उम्मीद है कि वह इस चिट्ठी की नकल करके शीघ्र ही आपको भेज देंगे।

आपका,
एडवर्ड टामसन

फिर से—

लन्दन के एक अखबार ने मुझसे कहा है कि मैं जो भी चाहूं लिखकर भेज दूं। मैं किसी विषय की तलाश में था। अब मैं सोचता हूं कि भारत सरकार के राजद्रोह के स्तर के बारे में एक लेख उन्हें भेज दूं। अगर मैं भारत की अपनी २६ साल की जानकारी के आधार पर कुछ लिखूं तो वह पढ़ने में बड़ा बेतुका लगेगा।

१५९. एडवर्ड टामसन की ओर से

३० अक्तूबर १९३६

प्रिय नेहरू,

मैं सम्भवत: कल १८-३८ की गाड़ी से कलकत्ता जाऊंगा।

मुझे मालूम होता है कि यहां इस जल्दी में मैं लिख नहीं सकता। कुछ लिखूं तो भी वह बेमन से लिखा जायगा। लेकिन इस पत्र के साथ कुछ भेज रहा हूं, जिसे भूमिका के तौर पर देने का मेरा विचार है। यह बहुत बुरा लिखा गया है, और अगर वक्त होता तो मैं इससे कहीं अच्छा लिख सकता था। लेकिन यह जरूरी है कि इसमें जो कुछ कहा गया है, वह आप देख लें। हो सकता ह कि खुफिया इसे रोक दे।

दूसरी चीज यह कि इस पत्र के साथ मैं कुछ सवाल भेज रहा हूं। ये भी अच्छे ढंग से नहीं लिखे गये, लेकिन इन्हें आपके इंग्लैण्ड के दोस्त पूछना चाहेंगे। अगर आपके सामने कोई भी निष्कर्ष ऐसा रक्खा जाय, जो आपको

गलत मालूम दे तो आप बेशक अपने उत्तरों में उसका खण्डन कर दें। जसे कि कह दें कि 'स्पर्श' एक भ्रमपूर्ण अनुवाद है, या अगर कोई ऐसा सवाल हो जो मैंने नहीं पूछा, लेकिन जिसे आप स्पष्ट करना चाहते हों तो वह सवाल पूछ लीजिये और उसका जवाव दे दीजिये।

यह सब बहुत ही भोंडा-सा लगता है। लेकिन मैं एक (अनभ्यस्त और बहुत बुरा) पत्रकार हूं।

मझे यह कह देना चाहिए कि कुछ समय पहले मैंने 'न्यूज क्रॉनिकल' में लिखा था कि मेरी राय में (१) कांग्रेस आखिरकार संविधान को अमल में लावेगी, (२) गांधी अव पहले दर्जे के सियासी नेता नहीं रह जायंगे (अगर यह राय गलत है तो इसमें ज्यादातर उन्हीं का दोष है, क्योंकि उन्होंने मुझे एक 'दोस्त' कहकर भी मेरे साथ न्याय नहीं किया), (३) कांग्रेस जब संविधान पर अमल करेगी तो उसके जिस मौजूदा रूप को हम जानते हैं, वह जरूर ही बदल जायगा, और इसलिए वह कांग्रेस के रूप में खत्म हो जायगी।

अगर मेरी बातें विल्कुल गलत निकलें तो कोई मुज़ायका नहीं। लेकिन मैंने अपनी ओर से कोई कसर नहीं उठा रक्खी है। कुछ चीजें तो सही निकलेंगी।

हिन्दुस्तान में जहाज से उतरने के बाद मैंने कुछ लिखा था—प्रकाशन के लिए नहीं—उसे साथ भेज रहा हूं। उससे आपको मेरी निजी स्थिति का मोटा अन्दाज हो जायगा। मुझे डर है कि मैं पूरी तरह से एक 'लिबरल' हूं।

इस चिट्ठी को पढ़ने के बाद मेहरबानी करके फाड़ दें। यह पुरानी पड़ गई है। यह मुझे भ्रांतियों से भरी हुई दिखाई देती है।

आपका,

एडवर्ड टामसन

फिर से—

अगर आप अपने उत्तरों पर नम्बर डाल देंगे तो मुझे पता लग जायगा कि उनका आशय किससे है। कृपया विश्वास रक्खें कि मैं जरूरी तौर पर हिंदुस्तान की आजादी का एक दोस्त हूं और अगर एक बार मेरा मन आश्वस्त

हो जाय तो फिर मेरी दृढ़ता पर भरोसा किया जा सकता है। अगर मैं असहमत होऊं तो मैं ऐसा नहीं कर सकता, न वैसा करने का ढोंग ही करूंगा।

१६०. एडवर्ड टामसन की ओर से

१६ सदर स्ट्रीट, कलकत्ता
१ नवम्बर १९३६

प्रिय नेहरू,

ये पुस्तकें पाकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई।

लेकिन आपने उनपर मेरा नाम नहीं लिखा।

मैंने आपसे पूछा था कि क्या आप मेरी कोई रचना लेना पसन्द करेंगे। आपने कहा—नहीं। बड़े दुःख की बात है, शायद इसलिए कि मेरा मैसोपोटामियन-युद्ध पर लिखा उपन्यास और कुछ भले ही न हो, पठनीय तो है ही।

मैं गांधी के बारे में और कुछ न कहूंगा, सिवा इसके कि अगर वह कोई नया संदेश नहीं खोज पाते तो सविनय अवज्ञा के पार पड़ते-पड़ते नाकामयाब हो जाने पर वह अब से आगे एक खतरा उठायेंगे। वह खतरा यह है कि वह एक शक्तिशाली गणपति मात्र रह जायंगे, जो अपने गणों को जगाने की ताकत तो रखता है, लेकिन उसके पास ऐसा कोई प्रयोजन नहीं है, जिसकी ओर वह उन्हें ले जा सके। मुझे नहीं लगता कि वह राजाओं के लोकापवाद को महसूस करते हैं। मैं कहूं, राजा लोग आपकी बड़ी बुराइयों में से एक हैं। वह (गांधी) एक रुढ़िवादी हैं।

अगर मैं आपसे मिल लिया होता तो 'न्यूज क्रॉनिकल' को लिखे मेरे दो लेख कुछ और ही तरह से लिखे गये होते। तब भी मेरा खयाल है कि सिर्फ कांग्रेसजनों से मिलने-जुलने से कांग्रेस की ताकत को बहुत ज्यादा समझ लेना संभव है। कम-से-कम मुझे यह लगा कि जवान शेरों के विरुद्ध, जो कल मुझे घेरे रहे, इस आरोप का यह एक मुनासिब बचाव हो सकता है कि मैं सिर्फ 'लिबरलों' से मिला हूं।

सौ बातों की एक बात आज यह दिखाई देती है—(१) जो शक्तियां शासन करती हैं, वे शासित शक्तियों से कहीं अधिक बढ़कर होती हैं। (२) निष्ठुरता का स्तर बेहद ऊंचा होगया है। जब मैंने कहा कि आपके

दांवपेच मुझे बुरे मालूम होते हैं, तब मैं आपके विरुद्ध (और हर जगह सब प्रकार की स्वतंत्रता के विरुद्ध) ताकतों के बहुत ही निष्ठुर होने की बात सोच रहा था, और अब उनकी मजबूत मोर्चेबंदी की बात सोच रहा हूं। मुझे घटनाओं की चीड़-फाड़ करने अथवा जो हुआ उसकी जिम्मेदारी दूसरों के सिर थोपने में तनिक भी दिलचस्पी नहीं है, लेकिन जैसाकि प्राय: रोज दैनिक पत्र से पता लगता है, अपने-आपको मूर्ख बनाये रखने में मुझे कोई तुक नहीं दिखाई देती। ये लोग नहीं चाहते कि कोई उन्हें दबोच सके।

आपका,
एडवर्ड टामसन

१६१. एडवर्ड टामसन की ओर से

स्कारटॉप, बोर्स हिल,
ऑक्सफोर्ड
२४ नवम्बर १९३६

प्रिय नेहरू,

बहुत-बहुत धन्यवाद। आपने समय निकालकर बड़ी मेहरबानी की।

अब मैं बूढ़ा हो चला हूं और हिंदुस्तान की तथा पश्चिम की सभी बातों से बहुत निराश और हताश होकर अपने थोड़े-बहुत बचे समय को अपने ही देश के मामलों में लगाना चाहता हूं। मुझे जो सत्य और शिष्ट लगा उसे बढ़ावा देने के प्रयत्न में २६ वर्ष बरबाद करने के बाद अब मैं यह जान गया हूं कि कोई भी अंग्रेज हिन्दुस्तान के बारे में परेशान होता है तो वह मूर्ख है। यही फैसला हिन्दुस्तानियों का भी है और निस्संदेह वे ठीक हैं। मैं यह देखता हूं, यद्यपि कुछ आश्चर्य के साथ, कि आपके देशवासी जिन विदेशियों को पसंद करते हैं और जिन्हें वे अपना साथी मानते हैं, वे सौभाग्यशाली लोग हैं, जो हर भारतीय चीज़ को सुनहरे रूप में देखते हैं। मानना चाहिए कि हर देश के लोग अपने कर्तव्य को अच्छी तरह से जानते हैं और यदि आपके देशवासी इन मूर्तिपूजकों की नितान्त निष्क्रियता को नहीं देख सकते तो मुझे इस नतीजे पर आना होगा कि उनकी क्रियाशीलता किसी ऐसे रूप में है, जिसे मेरी

आंखें नहीं देख पातीं। मेरा खयाल है कि भावुक लोगों तथा आलोचना करनेवाले उत्साही आदमियों की महान सेना ने हिन्दुस्तान को मूर्खता के लबादे में लिपटा (अगर आप इसे देख सकें तो) एक दुःस्वप्न बना दिया है। और २६ साल तक मैंने ऐसे अंग्रेज, यूरोपियन तथा अमरीकी पुरुषों (और स्त्रियों—नेहरू, ढेरों मूर्ख स्त्रियों) का असीम जलूस देखा है, जिनके दिमाग इतने दो कौड़ी के हैं कि हिन्दुस्तान से बाहर कोई भी उनकी राय पर पांच मिनट भी बरबाद न करेगा। फिर भी हिन्दुस्तान के साथ अपनेको नत्थी करके वे एक बनावटी महत्व के रोमांच और उसके लगातार शोर-शराबे में रहते हैं। हिंदुस्तान ही एक ऐसा विषय है, जो मूर्खों को हिंदुस्तान में अखबारों के पहले पृष्ठ की खबरों में जगह पाने का आधार दे देता है। इतना ही नहीं, बल्कि दुनिया में भी उन्हें कुछ हद तक शोहरत दिला देता है। ऐसे लोग हिन्दुस्तान के प्रेम की खातिर नहीं, बल्कि अपने मिथ्याभिमान के कारण आपकी ओर खिचकर आते हैं।

मुझे आपके लिए अफसोस है। अगर मैं कह सकूं तो कहूंगा कि बरसों से इतनी थोड़ी जान-पहचान में जितना मैंने आपको पसंद किया है, उतना और किसीको नहीं। मैं अब भी सोचता हूं कि अगर हम एक-दूसरे को अधिक समझ सकते और एक-दूसरे से भिन्न अपने अनुभवों को फुरसत से इकट्ठा कर सकते तो बौद्धिक रूप में हम एक-दूसरे की काफी मदद कर सकते थे। परन्तु हमें अलग रास्तों पर चलना है। 'रास्ता रास्ता है और उसका भी अंत होता है।' मैं अपनी जीवन-यात्रा के इस आखिरी हिस्से में अंग्रेजी कवि और उपन्यासकार के अपने अधिकारपूर्ण धंधे में जुट जाऊंगा और आप अपनी जनता की मूर्खता पर अपना दिल तोड़ने में संलग्न हो जायंगे। मैंने देखा कि भारत माता के नये मंदिर की पूजा करने के लिए और हरिजनों को ट्रावनकोर द्वारा नगण्य चीजों के विशाल रूप से भेंट देने के अवसर पर असामयिक जय-जयकार में शामिल होने के लिए आपको बाध्य किया गया, तब भी आपने अपना विवेक कायम रक्खा और इसके लिए मैंने आपकी सराहना की। आपने अपना आत्म-सम्मान शानदार तरीके से बचा लिया है, लेकिन

आप इस तरह कबतक बचाते रहेंगे ? कोई भी शक्ति आपके चारों ओर सरकस के उत्तरोत्तर बढ़ते घेरे को रोक नहीं सकती, जैसे कि महात्माजी घिरे हुए हैं। आपके भाग्य में यही बदा है। पर है यह भयंकर दुर्भाग्य, क्योंकि जो कुछ होता है, उसपर कभी-कभी आपका कोई अधिकार नहीं रहता।

पंडितजी, हर चीज का कारण होता है, यहांतक कि अंग्रेजों की तर्कहीनता का भी कारण है। साल के उन तीन दिनों में से आज वह दिन है, जबकि श्री अरविंद घोष दर्शन देते हैं। पांडिचेरी को, जहां बैठा मैं यह पत्र लिख रहा हूं, खाज हो रहा है। सौ से अधिक गधे साष्टांग प्रणाम और अर्चना करने के लिए उस व्यक्ति के सामने लाये (और सामने से ले जाये) जा रहे हैं, जो कहता है कि मैं सर्वशक्तिमान आत्मा का अवतार हूं। माता (पार्वती—और किसी-किसी भाव में, 'इन्द्र'—मेक.रिचार्ड) उनके साथ होती है। जिस देश में इस प्रकार की ऊल-जलूल बातें होती हैं वहां आप क्या करेंगे ? और जो बुद्धिमान समझे जाते हैं वे भी ऐसे मामलों में हिस्सा लेते हैं ! फिर भी कभी अरविन्द बड़े कुशाग्र बुद्धिवाले व्यक्ति थे और वह अंदर से कभी—जैसाकि मैं अच्छी तरह जानता हूं, क्योंकि वह मेरे साथियों में से एक थे—एक सुन्दर, सादे और चारित्रिक ईमानदारीवाले भारतीय थे।

लेकिन शायद मुझे ऐसा नहीं लिखना चाहिए। हममें से हरकिसी की कोई-न-कोई अपनी विशेष असंगति होती ही है। जैसेकि आपने अपनी 'विश्व-इतिहास की झलक' पुस्तक में नेपोलियन की पूजा (जवाहरलाल नेहरू के लिए यह महान् आश्चर्य की बात है !) करके पाठक को आश्चर्य में डाल दिया है, इसी प्रकार इस पांडिचेरी-आश्रम में हर काम इस आश्चर्यजनक विश्व के आन्तरिक सत्य तथा शक्ति से होता है। उस दशा में मुझे आपसे क्षमा मांगनी होगी।

हम अन्य विषयों पर आयें। आप नेहरू लोग बहुत बातों में भाग्यशाली रहे हैं, सबसे ज्यादा भाग्यशाली अपनी मोहक और शानदार स्त्रियों में। आपके इन्दिरा को लिखे पत्र बहुत सुन्दर हैं। यदि वह मुझे और मेरी पत्नी को मित्र समझेंगी तो हमें गर्व का अनुभव होगा और वह

हमें मित्र ही पायेगी।

मैं ५ दिसम्बर को बम्बई से पी. एण्ड ओ. 'मालोजा' से यात्रा करूंगा और इसके बाद (जो ताने-वाने मैंने बुने हैं, जिनमें मेरी दो ऐतिहासिक रचनाएं भी हैं और जिनका पहला खाका तैयार भी हो चुका है) भारतीय मामलों से मेरा सक्रिय सम्बन्ध समाप्त होता है। मैं उनके सम्बन्ध में कुछ नहीं जानता, वे अरविन्द घोष के नये (और जो कभी स्पष्ट नहीं हुआ) विश्व-धर्म की भांति अगम्य हैं तथा वे निस्संदेह अपने रास्ते बढ़ते जायंगे। आपको मेरी व्यक्तिगत शुभकामनाएं। आपकी यह बात ठीक है कि सभी चीजों को ऊपर से नीचे तक एक साथ नया रूप देने की आवश्यकता है। लेकिन आपके (और मेरे) देशवासियों का हर वर्ग केवल एक भाग का ही नया रूप चाहता है तथा असंदिग्ध रूप से अपने विशिष्ट भाग के लिए ही लड़ने के लिए तैयार है।

कृपया अपनी बहन को मेरी याद दिलाइयेगा, जिनके प्रेमपूर्ण आतिथ्य को मैं चिरकाल तक याद रखूंगा। मेरी इच्छा है कि वह मेरी पत्नी से परिचित होतीं। जब आप अगली बार ऑक्सफोर्ड आयेंगे तो मैं आशा करता हूं कि वह उनसे परिचित हो जायंगी।

आपका,

एडवर्ड टामसन

१६२. एडवर्ड टामसन की ओर से

बोर्स हिल, ऑक्सफोर्ड

६ दिसम्बर १९३६

प्रिय नेहरू,

आपने अच्छा किया जो पत्र लिखा। 'न्यूज क्रॉनिकल' वाला लेख हम लोगों की मुलाकात से पहले लिखा गया था। लेकिन दुर्भाग्यपूर्ण होते हुए भी मैं समझता हूं कि उसकी मुख्य बातें ठीक हैं। जब मैं हिन्दुस्तान आया था तब मैं समझता था कि यूरोप में और मेरे देश में भी लोकतांत्रिक उद्देश्य समाप्त होता जा रहा है और हिन्दुस्तान छोड़ते हुए, यह समझकर मैं त्रस्त हूं कि हिन्दुस्तान में भी उसका खात्मा होता जा रहा है।

जब मैंने 'न्यूज क्रॉनिकल' को लिखा तो मेरे दिमाग में सिर्फ आपकी

'आत्मकथा' थी। शास्त्री के प्रति आपकी सख्ती, जैसाकि आप भी शायद महसूस करते हैं, अधिकतर पाठकों को एक बढ़िया किताब में भारी कमी लगी। मैं आपके प्रति हुए अन्याय के निवारण के लिए 'न्यूज क्रॉनिकल' को लिखूंगा।

शास्त्री मेरे दोस्त हैं। इसके अलावा मैं समझता हूं कि राजाओं के सवाल पर, जिसे मैं कसौटी मानता हूं, उन्होंने वड़ी हिम्मत दिखाई। पिछले दो साल की मेरी ऐतिहासिक खोजों ने मुझे पूरी तरह राजाओं का विरोधी बना दिया है। आप कहते हैं कि हिन्दुस्तान और इंग्लैण्ड में आगाखां के अछूते बच जाने पर आपको आश्चर्य हुआ है। ऐसा ही मुझे भी हुआ है, लेकिन मुझे इस बात पर भी उतना ही आश्चर्य है कि राजा भी कैसे बच रहे हैं।

अब मैं समझा कि 'न्यूज क्रॉनिकल' को लेख लिखते समय मेरा यह सोचना कि सप्रू और अम्बेडकर को किसी राष्ट्रीय मोर्चे में खींचा जा सकता है, गलत था। सप्रू तो समाजवाद के डर (?) से गुस्से में आ जाते हैं और अम्बेडकर के वर्ग के लोगों में अभी तक देश-भक्ति विकसित नहीं हो सकी। उनको तो पहले एक पीढ़ी तक सामाजिक और आर्थिक न्याय का कुछ अंशों में आनन्द लेना चाहिए।

लेकिन कृपा करके आप अपना यह विश्वास खत्म कर दीजिये कि मैं हिन्दुस्तान के विरुद्ध कटुता लेकर लौटा हूं, अथवा मैंने अपना वक्त 'मदर इंडिया' की तरह विवादग्रस्त मुद्दे खोजने में लगाया है। मेरे बारे में आपकी इस तरह की धारणा, मैं अनुमान करता हूं कि 'मॉडर्न रिव्यू' आदि पत्रों के द्वारा सुनी-सुनाई बातों पर ही बहुत-कुछ आधारित है। और आपके बारे में मेरी जानकारी भी हाल तक मुख्यतः सुनी-सुनाई बातों पर ही बहुत-कुछ आधारित थी। कुछ महत्वपूर्ण पहलुओं में मैंने आपको निश्चित रूप से गलत समझा। संभवतः आपके लिए यह बहुत महत्व की बात नहीं कि आपने मुझे गलत समझा या नहीं, और यदि आप उन लोगों में से हों, जो 'मॉडर्न रिव्यू'-ग्रुप के देश-भक्तों की बात गम्भीरतापूर्वक लेते हैं तो भी मैं समझता हूं कि इसका बहुत असर नहीं पड़ता। जो हो, मेरे पास पिछले वीस साल से प्रकाशित कृतियां हैं, गल-

तियों से भरपूर, लेकिन किसी भी तरह उस प्रकार के ओछेपन से मुक्त, जैसाकि आप मानते हैं। मैं यह अच्छी तरह जानता हूं कि अगर कोई थोड़ी आलोचना भी कर दे तो वह दुश्मन मान लिया जाता है। लेकिन राष्ट्रीय आन्दोलन के असली दुश्मन वे नहीं हैं, जो कभी-कभी आलोचना कर देते हैं, अपितु वे लोग हैं, जो उसपर निर्भर करते हैं, अर्थात् शैलेन घोष, सैयद हुसैन और रजमी जैसे लोग (वे उतने ही देशभक्त हैं, जितने लकड़बग्घे होते हैं) और उनके अज्ञानी पश्चिमी प्रशंसक। भले ही आप यह विश्वास न करें, लेकिन एक वक्त आयेगा जब आप यह मान लेंगे कि हिन्दुस्तान को पूरी आजादी हासिल करने में मेरी मदद देने का मौका आयेगा तो मैं जरूर दूंगा।

मेरे पत्र ने स्वभावतः आपको प्रभावित किया। मैं मानता हूं कि मेरी दिमागी और आत्मिक तथा शारीरिक थकान बहुत बढ़ गई है, लेकिन पत्र में एक खास बात थी—पांडिचेरी। मैं मानता हूं कि अरविन्द का गोरखधंधा बहुत महत्वपूर्ण बात नहीं है। ऐसा हो तो भी, भले ही कोई व्यक्ति बहुत-से माया-जालों को छोड़ चुका हो, अन्य बंधन छोड़ने पर उसे चोट लगती है। मुझे सदा ऐसा लगा है कि वह व्यक्ति वास्तव में बहुत अच्छे दिमाग और चरित्र का है तथा असली देशभक्त है। मैं यह जानने को तैयार न था वह ऐसा मायावी है। मुझे यह जानकर दुःख हुआ कि उसका एक मुख्य सहयोगी (जिससे आश्रमवासियों ने मुझे मिलने नहीं दिया) अब वैसा व्यक्ति नहीं रहा, जैसा कि मैं उसे पहचानता था, पहले अपने साथी के रूप में, बाद में उस आदमी के तौर पर, जिसने मेरा कालेज ही उजाड़ दिया (अमृतसर-काल के तुरन्त बाद ही) और जिस आदमी में निस्स्वार्थ देशभक्ति और सादगी की एक जोत जलती थी। तीसरे, हिन्दुस्तान और इंग्लैण्ड में बड़े भक्त के रूप में एक मुसलमान विख्यात है। उस व्यक्ति की धार्मिक आस्था का मुझपर स्पष्ट रूप में बड़ा प्रभाव पड़ा, जबकि हाल ही में वह मुझे सुबह के सत्संग में अपने साथ ले गया था। उस भक्त में साम्प्रदायिकता इतनी थी कि जहां-कहीं वह उच्च पदासीन हुआ, हिन्दुओं के प्रति उदार न रहा। यह व्यक्ति अरविंद की 'शिव' के समान और उस फ्रांसीसी महिला की 'पार्वती' की

तरह पूजा करता था। मुझे लगा, जैसाकि मुझे तब लगता, अगर मैं सुनता कि कैन्टरबरी के आर्चबिशप एक गुप्त थियोसोफिस्ट हैं। आप किसका विश्वास कर सकते हैं, यदि एक सुप्रसिद्ध मुस्लिम नेता भी इस प्रकार के पाखंड को पूजने लगे ?

अगर हम फिर कभी मिले (मुझे आशा है, जरूर मिलेंगे। यदि आप दुबारा ऑक्सफोर्ड आयें तो क्या हमारे साथ ठहरेंगे ? इसका उत्तर देने का कष्ट न उठायें, लेकिन ध्यान में रखियेगा) तो मैं आपसे यह पूछना चाहूंगा कि इतनी बातें होते हुए भी आप अपनी 'आत्मकथा' में महान दयालु बने रहे, किन्तु अपनी 'विश्व-इतिहास की झलक' में निरंतर मेरे देशवासियों के प्रति अनुदार क्यों होगये ? यह आपके महान् और उदार तरीकों के अनुरूप न था। हम सब तथ्य की भूलें करते हैं और आपकी पुस्तक तो शक्ति और बुद्धि का चमत्कार है, लेकिन यह केवल या मुख्य रूप से एक तथ्य की भूल नहीं है। मैं तो यह समझता हूं कि उसका कुछ विशेष और अस्थायी सन्दर्भ है, जैसे कि मानसिक और शारीरिक अस्वस्थता की अवस्था में मेरी भारत के प्रति हुई हाल की प्रतिक्रियाएं। मैं नहीं कहूंगा कि आप अपना समय, जिसकी बहुत ज्यादा जरूरत है, इसपर खतो-किताबत में नष्ट करें, और फिर किसी भी मामले में चिट्ठी-पत्री हमेशा गलतफहमी पैदा करती है। लेकिन आपको उस आदमी की भांति, जो पूरी तरह से नाकामयाब साबित होगा, या उन थोड़े-से लोगों में से उस व्यक्ति की तरह, जो मानवता में आस्था रखने के मानव-जाति के अधिकार को फिर से स्थापित करेगा, अपनी ख्याति और प्रभाव की खातिर, इस मामले में ध्यान देना चाहिए। अपनी ही खातिर आपको इसके लिए कुछ प्रायश्चित्त करना चाहिए—मेरे लोगों की खातिर नहीं, क्योंकि आपको जो उत्तेजना मिली, उससे उनके प्रति कोई भी अन्याय क्षम्य हो सकता है।

मेरे कहने का मतलब यह है कि मैं जानता हूं कि यह पत्र आपतक पहुंचने से पहले जरूर ही ध्यानपूर्वक पढ़ा जायगा। इस कारण यह बताने की कोशिश करते हुए कि आखिर असली महत्व की चीज क्या है, मुझे बहुत ही सरल और संक्षेप में लिखना चाहिए।

मैं अपने साथ किसी प्रकार की कोई भारत-विरोधी भावना नहीं लाया हूं; लेकिन मैं जानता हूं कि हम हिन्दुस्तान में हों या इंग्लैण्ड में, बहुत ही निम्न कोटि के जन्तु हैं, और यह मेरे लिए घोर निराशा की बात है।

मैं जानता हूं, आपके और दूसरे राष्ट्रवादियों के दिमाग में यह बात भरी रहती है कि किसी भी अंग्रेज को, अगर वह हिन्दुस्तान का दोस्त समझा जाना चाहता है, तो कभी आलोचना नहीं करनी चाहिए। हमारा अपना मजदूर-दल भी (जिसका विश्वासघात, पलायन और लोकतंत्र-विरोधी कठोरता का इतना निन्दनीय रिकार्ड रहा है) इसी तरह की इच्छा करता है, लेकिन मैं इस कमी को पूरा नहीं कर सकता। अगर आपको ऐसा लगता है कि जिस कदम को मैं गलत मानता हूं उसे मुझे कभी नहीं कहना चाहिए तो आप मुझे अपना दुश्मन मान लीजिये।

सोलह वर्ष पहले असहयोग-आन्दोलन को मैं गलत नहीं समझता था। नैतिक आधारों पर मैं उसे पूरी तरह उचित मानता था और यह सोचता था कि अगर इसे आगे बढ़ाया गया तो इसके सफल होने में संदेह नहीं, लेकिन जब मुसलमानों और दूसरे बड़े दलों ने इसका समर्थन नहीं किया तो इसे छोड़कर दूसरी युक्तियां काम में लाई जानी चाहिए थीं। इसको बेमन जारी रखने से मुसलमानों को और निहित स्वार्थों को ही बल मिला है।

गोलमेज-परिषद् के अवसर से पहले जबतक कि गांधीजी ने असंगत और हठी रुख नहीं अपनाया, मैंने उन्हें कभी गलत नहीं माना। शायद उन्हें आना ही नहीं चाहिए था, लेकिन वह आ ही गये तो उनका दूसरे हिन्दुस्तानियों को, जिनमें से बहुतों ने अपने विचारों के लिए भारी कीमत चुकाई थी, अपने परामर्श के योग्य मानने और सामान्य प्रयत्न तथा आशा में संलग्न मित्र स्वीकार करने से इन्कार कर देना अनौचित्य-पूर्ण था।

जो चीज (कृपया मेरी बात सुनें, मैं पूरी तरह या सब पहलुओं से गलत नहीं हूं) कांग्रेस को सबसे ज्यादा नुक्सान पहुंचा रही है, वह है उसके द्वारा पैदा की गई यह धारणा कि वह बिलकुल प्रगति नहीं कर

रही है। मैं कांग्रेस के आंदोलन को २६ वर्ष से जानता हूं और मुझे तो ऐसा लगता है कि वह अपनी रीति-नीति में कठिनाई से और अनिच्छा-पूर्वक परिवर्तन करती है। और मुझे तो वह आज भी वैसी ही दिखाई देती है, जैसी कि विभाजन-विरोधी दिनों में थी। और अगर गांधी वही हैं, जिस रूप में वह हाल ही में मुझे दिखाई दिये हैं, तो उनमें सिवा उन भावनाओं को उभारने के और कुछ कर सकने की शक्ति नहीं रह गई है, जिनका उपयोग या संचालन करने का उन्हें अंदाज ही नहीं है।

जहांतक आपके समाजवाद का सवाल है, मुझे इसमें कोई संदेह नहीं कि यदि उसे ऊपरी तौर से देखा जाय तो यह गलत चाल है। पर इस विषय में मुझे विश्वास है कि आपकी सहज प्रवृत्ति आगे चलकर सही सिद्ध होगी। सारा आर्थिक और सामाजिक (और विशेष रूप से हिंदुस्तान में धार्मिक) ढांचा ही विकट है। मेरे लिए यह चाहना संभव नहीं हो सकता कि आप यहां अपना तरीका बदलें, यद्यपि मैं जानता हूं कि उससे आपके विरोधी तत्वों को अस्थायी बल ही मिला है।

जिन तरीकों को मैं गलत मानता हूं, वे वे ही हैं जो आपपर थोपे जा रहे हैं। मैं समझता हूं, दुनिया के हालात को देखते हुए कांग्रेस को सहयोग करना चाहिए और यह वचन देना चाहिए कि वह सहयोग करेगी। साथ ही कांग्रेस को यह भी चाहिए कि वह संविधान की उन बातों का स्पष्ट रूप से खंडन कर दे, जिनके पीछे कोई नैतिक आधार नहीं है और जिन्हें केवल बल पर आश्रित होने के कारण सहन किया जाता ह। जब परमात्मा अवसर देगा (जैसाकि मौजूदा घटना-चक्र देखते लगता है कि वह अवश्य देगा), तब उससे आपके हाथ बहुत मजबूत होंगे। आज के दो योग्यतम राजनीतिज्ञ रूजवेल्ट और डि वेलरा हैं, जिन्होंने नैतिक बल का ही आश्रय लिया है और केवल वही बात कही है, जोकि उन्होंने कर भी दिखाई है।

आपका काम तो कई गुना मुश्किल है, क्योंकि राजे-महाराजे और मुसलमान आपके विरुद्ध हैं, आपके विरोधी आपके बीच ही मौजूद हैं, पंडापन और अंधविश्वास की सारी प्रतिक्रियावादी ताकतें भी हैं। लेकिन कांग्रेस जनता को पहले भ्रम में डालकर और फिर उतना ही संशयाकुल

बनाकर अपने रास्ते को और भी कठिन बना रही है। लोग ऐसी भाषा का प्रयोग क्यों करें, जिसका वे जानते हैं कि एक ही चीज से बोध हो, जबकि उनके कार्य तुरन्त ही उस भाषा के विपरीत हों ? आप खुद ही अपनेको झूठा साबित कर रहे हैं। इसकी प्रतिक्रिया बड़ी भयंकर और हानिप्रद होगी।

मुझे खेद है कि आप मुझे भारत का कट्टर विरोधी समझते हैं। मैं जानता हूं कि ऐसा करना आपके लिए प्रायः अनिवार्य है। मेरी कटुता हिन्दुस्तान के प्रति नहीं है, वह तो उस मार्ग के प्रति है, जिसपर दुनिया चली है। मुझे आपके यहां के मुसलमानों और राजे-महाराजों की कठोरता की पूरी जानकारी है। इन राजा-महाराजाओं का हमारी कंज़रवेटिव पार्टी के साथ गठबन्धन है और ये हर संभव अस्त्र का उपयोग करके जो कुछ हथिया सकते हैं, हथिया लेंगे। कांग्रेस, जिसका ऐसे निर्दयी शत्रुओं से मुकाबला है, (१) या तो स्वयं सत्तारूढ़ होने से इन्कार करके इनको राजकाज में प्रमुख स्थान ले लेने देगी, (२) या उन्हें ऐसा बहाना देगी, जिसका वे बाह्य तत्वों के साथ अपने गठ-बंधन को मजबूत करने में तत्काल इस्तेमाल करेंगे। वे पद-ग्रहण तो करेंगे, लेकिन उन्हें नष्ट ही करने के लिए।

नहीं, आप अपनी स्थिति को इतना स्पष्ट कर दीजिये कि किसी भी संदेह की गुंजाइश न रहे और दुनिया आपकी बात सुने और समझे। यह कोई ३० वर्ष पुराने असहयोग-आन्दोलन की पुनरावृत्ति नहीं है। तब तो आप जहां भी सत्तारूढ़ हो सकते हों, और शासन तथा विधान-सभा में जो भला आप कर सकें, करें। आप अपने हर अधिकार की मांग कीजिये और किसी भी स्वत्व को हाथ से न जाने दीजिये। आपको तो सबसे पहले ही मौके पर यह कह देना चाहिए कि आप और भी आगे बढ़नेवाले हैं।

इसी तरह से आप मुसलमानों को ज्यादा-से-ज्यादा अनुभव करा सकेंगे कि उनका भविष्य हिन्दुस्तान के साथ है, इंग्लैण्ड के टोरियों के साथ नहीं। आप राष्ट्रीय आन्दोलन को मुख्यतः एक हिन्दू-आन्दोलन नहीं बनावेंगे, लेकिन (जैसा मुझे खेद है) आज वह है; बल्कि एक

भारतीय आन्दोलन का रूप देंगे।

मुझे विश्वास है कि ध्येय पीछे रह गया है। इस अवस्था में अन्यथा कहने में ईमानदारी नहीं होगी।

इस पत्र का उत्तर न दीजिये। फिलहाल केवल अपनी इस धारणा को दबाये रखिय कि मैं हिन्दुस्तान के प्रति कटुता रखता हूं।

भवदीय,
ए. टामसन

१६३. रवीन्द्रनाथ टैगोर की ओर से

शांतिनिकेतन, बंगाल
२१ दिसम्बर १९३६

प्रिय जवाहरलाल,

इंदिरा ने अपने पत्र में जिस स्नेह से मेरा उल्लेख किया है उसने सचमुच मेरे मर्म का स्पर्श किया है। वह बड़ी मनमोहक बालिका ह, जो अपने शिक्षकों और सहपाठियों के मन में बड़ी सुखद स्मृति छोड़ गई है। उसमें तुम्हारे चरित्र की दृढ़ता भी है और तुम्हारे विचार भी। और मुझे इस बात से आश्चर्य नहीं हुआ कि आत्मसंतुष्ट अंग्रेज-समाज से वह अपनेको पृथक् पाती है। उसे आगे जब पत्र लिखो तो कृपया मेरा आशीर्वाद भी भेजना।

हम लोग अपने वार्षिक समारोह में घिरे हैं, और मुझे भय है कि भीड़भाड़ और हलचल का मेरी शारीरिक शक्ति पर बड़ा भारी श्रम पड़ता है। लेकिन मैं अपने भाग्य की तुलना तुम्हारे भाग्य से करने में बुद्धिमत्तापूर्वक अपनेको बचाता हूं।

स्नेहपूर्ण आशीर्वादसहित,

तुम्हारा,
रवीन्द्रनाथ टैगोर

पंडित जवाहरलाल नेहरू,
कांग्रेस-शिविर,
फैजपुर।

१६४. महात्मा गांधी की ओर से

२८ दिसम्बर १९३६

प्रिय जवाहरलाल,

जैसी मुझे आशा ह, तुम आज खत्म कर लो तो शायद मुझे कल दोपहर के बाद चला जाने दोगे ।

यदि आयंदा कांग्रेस-अधिवेशन गांवों में करने के बारे में मेरा सुझाव तुम्हें पसन्द आ गया हो तो मैं चाहूंगा कि तुम कांग्रेस से फरवरी और मार्च के बीच में अधिवेशन करने के पुराने नियम को फिर से चालू कर देने के लिए कहो । संभव हो तो हजारों को जाड़े के मौसम के कष्टों से बचाना चाहिए । संसदीय लोगों को इस व्यवस्था के अनुकूल बन जाना चाहिए । अगर विधान-मंडलों में कांग्रेस को बहुमत प्राप्त हो जाय तो कोई कारण नहीं कि बड़े दिन, ईस्टर आदि की तरह उन्हें छुट्टी क्यों नहीं रखनी चाहिए ! मैंने सरूप से कहा है कि कमला-स्मारक के लिए कहीं-न-कहीं जल्दी ही जमीन जुटा लेनी चाहिए और फिर उसके लिए घर-घर चंदा इकट्ठा करने का काम शुरू कर देना चाहिए ।

सस्नेह,
बापू

१६५. एडवर्ड टामसन की ओर से

बोर्स हिल, ऑक्सफोर्ड,
३ जनवरी १९३७

प्रिय नेहरू,

इस ढंग से यह इंटरव्यू प्रकाशित हुआ है । इसके वेहूदा शीर्षकों, मोटे टाइपों आदि के लिए मैं जिम्मेवार नहीं हूं । मेरी प्रारंभिक टिप्पणी ही गायब होगई, जिसका मुझे दुःख है । उस टिप्पणी से पता लग जाता कि मैं आपका कितना ध्यान रखता हूं और आपके प्रति मेरे कितने ऊंचे विचार हैं । लेकिन सचाई यह है कि हमारी सभ्यता आज छिछोरेपन पर आधारित है तथा हर चीज सनसनीखेज बनाई जाती है । सिनेमा तथा सब तरफ व्याप्त नारी-आंदोलन ने हम सबको खत्म कर डाला है । यह युग पूरी हद तक भ्रष्ट होगया है ।

मुझे यह भी भय है कि हमारे सिरों पर अपनी स्वयं की विपदाओं की काली घटाएं तो मंडरा ही रही हैं, हिंदुस्तान भी हमारे हितों से बहुत दूर पड़ गया ।

एक लेख जो आपको पसंद आता और जिससे आप मुख्यतः सहमत होते, कई हफ्ते से रुका पड़ा है, क्योंकि पहले तो श्रीमती सिम्सन ही खबरों म चढ़ी रहीं और शायद फिर (मेरा अनुमान है) किसी फिल्मी सितारे का किसी दूसरे फिल्मी सितारे से 'रोमांस' चला । मुझे खेद है । मेरे लिए यह एक सबक होगा । दुबारा कभी भी किसी लोकप्रिय पत्र के लिए लिखने में मैं अपना समय बरबाद नहीं करूंगा । आप इनका विश्वास नहीं कर सकते ।

अभी हाल में एक लड़की (पेट्रीसिया ऐग्न्यू) हमारे साथ ठहरी हुई थी, जो आपकी लड़की की बड़ी उत्साही दोस्त है । वह उसके बारे में लगातार बातें करती रही । वे दोनों स्कूल में साथ-साथ थीं ।

१९३७ के वर्ष के लिए शुभकामनाएं ।

आपका,
एडवर्ड टामसन

न्यूज क्रॉनिकल

२ जनवरी १९३७

सुधारों के श्रीगणेश के साथ हिंदुस्तान में खतरा

नेहरू की 'न्यूज क्रॉनिकल' को मुलाकात

नये साल ने हिंदुस्तान को दुनिया के मंच के बीचोंबीच फिर ला खड़ा किया है । अगले महीने नये संविधान के अनुसार काम करनेवाले विधान-मंडलों के लिए प्रथम चुनाव होनेवाले हैं और १ अप्रैल से प्रांतीय स्वायत्त शासन अमल में आ जायगा ।

राष्ट्रवादियों अथवा होमरूलरों की गैर-सरकारी 'संसद' हिंदुस्तान की राष्ट्रीय कांग्रेस ने संविधान को अस्वीकार करने तथा उसके मार्ग में अड़चन डालने की कोशिश करने का फैसला किया है ।

रो और केम्ब्रिज में शिक्षित तथा कुछ ही दिन पहले तीसरी बार

कांग्रेस के अध्यक्ष चुने गए जवाहरलाल नेहरू इस विरोधी दल के नेता हैं।

हिंदुस्तानी मामलों के सुप्रसिद्ध विशेषज्ञ एडवर्ड टामसन द्वारा 'न्यूज क्रॉनिकल' के लिए एक विशेष मुलाकात में नेहरू ने घोषणा की कि "संविधान नाकामयाब होकर रहेगा" तथा "ब्रिटिश फौज को जाना ही होगा।"

"हमें छोड़ देना होगा"

लेखक

एडवर्ड टामसन

नेहरू के चरित्र के मेरे अध्ययन से मुझे लगा कि उनकी रुचि मुख्य रूप से हिंदुस्तान को साम्राज्य से 'स्वतन्त्र' कराने में नहीं है।

अगर उन्हें यह विश्वास हो जाय कि साम्राज्य वास्तव में बराबरी के राष्ट्रों का एक परिवार है, जिसके अलग-अलग सदस्य को अपने विचारों को रखने का पूरा अवसर हो तो वह इस बात पर राजी हो जायंगे कि हिंदुस्तान इन राष्ट्रों में से एक रहे।

लेकिन उनका खयाल है कि निहित स्वार्थों ने हमारा गला दबाया हुआ है और हमारे अपने दकियानूसीपन और बुद्धिहीनता से हिंदुस्तान की गुलामी में रही-सही कसर भी पूरी हुई है, इसलिए हिंदुस्तान के लिए उस समय तक कोई आज़ादी नहीं हो सकती जबतक कि वह हमसे सभी सम्बन्ध-विच्छेद न कर ले।

मैं यहां प्रश्नोत्तर रूप में नेहरू से हुई अपनी बातचीत दे रहा हूं।

प्रश्न : कहा जाता है कि आपने कहा है कि हिंदुस्तान नये संविधान को 'छुयेगा' ही नहीं, इससे आपका क्या तात्पर्य है ?

उत्तर : नये संविधान को न छूने का कोई सवाल ही नहीं है, क्योंकि हमारा चुनाव लड़ना जाहिर करता है कि हम उसके छूने में आते जा रहे हैं। जो कुछ मतलब है वह यह है कि हम इस संविधान को सहयोग की भावना से नहीं ले रहे हैं। वह हमारी मर्जी के खिलाफ हमपर लाद दिया गया है। हम इसे बिल्कुल नहीं चाहते हैं और हम उसका अमल मुश्किल-से-मुश्किल कर देना चाहते हैं। उसका संघीय भाग तो भयंकर है।

प्रश्न : फिर भी हिंदुस्तान की भीषण गरीबी के होते हुए, क्या यह बेहतर न होगा कि संविधान को हिंदुस्तानियों को कष्ट से छुटकारा पाने के किसी अवसर के साधन के रूप में इस्तैमाल किया जाय ?

बड़ी समस्याएं

उत्तर : संविधान नाकामयाब होना ही है, क्योंकि वह हिंदुस्तान की किसी बड़ी समस्या को हल नहीं कर सकता। भूमि, गरीबी और बेकारी की समस्याओं का हल होना जरूरी है।

हमारा खयाल है कि ब्रिटिश साम्राज्यवाद के अन्तर्गत कोई उचित हल नहीं निकल सकता।

हमने संविधान-सभा के जरिये हल की ओर इशारा भी किया है।

प्रश्न : कांग्रेस की मेरी आलोचना यह है कि उसे यह याद रखने का साहस नहीं कि ऐसे लोग भी हैं जो रजवाड़ों की प्रजा हैं और उनके अधिकारों की बात भी होनी चाहिए। आप क्या सोचते हैं ?

उत्तर : कांग्रेस रजवाड़ों की रियाया को नज़रंदाज़ नहीं करती, हालांकि उसकी हलचलें ज्यादातर ब्रिटिश हिंदुस्तान में ही केन्द्रित रही हैं। वह जैसी दूसरों के लिए वैसे ही रियासतों की रियाया के लिए भी एक-सी राजनैतिक, सामाजिक और नागरिक तथा दूसरी तरह की आजादियों के हक़ में है।

देसी रियासतों के लिए वह बहुत नहीं कर पाई है, क्योंकि दूसरी जगह उसके हाथ घिरे हुए थे और उसके ज्यादातर नेता अपना बोझ और ज्यादा बढ़ाना नहीं चाहते थे।

कोई तानाशाही नहीं

लेकिन उसूलन यह माना जा चुका है और उसकी घोषणा भी कर दी गई है।

प्रश्न : क्या वास्तविक 'डोमिनियन स्टेटस' स्वाधीनता के समान ही अच्छा न होगा ?

उत्तर : मैं हिंदुस्तान के लिए साम्राज्य में रहते हुए किसी सच्ची आज़ादी की बात नहीं सोच सकता हूं, यहांतक कि ब्रिटेन की दूसरी डोमीनियन के बराबर भी नहीं। दोनों में कोई समानता नहीं है। मैं एक

ऐसे आज़ाद हिन्दुस्तान की बात सोच सकता हूं, जो ब्रिटेन के साथ किसी दोस्ताना समझौते पर पहुंच सके।

प्रश्न : क्या आप यह पसंद करेंगे कि हिंदुस्तान ऐसी तानाशाही के नीचे चला जाय, जैसाकि आज हम फॉसिस्ट देशों में देखते हैं ?

उत्तर : मैं इस विचार के पूरी तरह खिलाफ हूं, खासकर किसी एक आदमी की तानाशाही के। तो भी, मैं यह तो सोच सकता हूं कि गंभीर संकट के वक्त में, आमतौर से एक सैनिक संकट में, चन्द अदमियों की तानाशाही का साधन जरूरी हो सकता है।

लेकिन यह मामूली हालत में नहीं रहनी चाहिए।

प्रश्न : क्या हिंदुस्तान की एकता अधिकतर बनावटी और हाल की चीज नहीं है ? क्या यह बेहतर न होगा कि हिंदुस्तान को जाति और भाषा के आधार पर अलग-अलग राष्ट्रों में बांट दिया जाय ?

उत्तर : मेरे विचार से अगर हिंदुस्तान के इस रूप में टुकड़े हुए तो वह वदकिस्मती की बात होगी। हिंदुस्तान की एकता न सिर्फ वाजिब है, वल्कि वहुत जरूरी भी है। मुझे शक है कि हिंदुस्तान में ऐसा कोई अक्लमन्द आदमी होगा, जो इस वारे में जुदे ढंग से सोचता हो।

तो भी यह एकता किसीको दवानेवाली नहीं होनी चाहिए, वल्कि उससे सांस्कृतिक तथा अन्य भिन्नताओं को पूरी आजादी होनी चाहिए।

प्रश्न : हिंदुस्तान की गरीबी हर नये आनेवाले को बेचैन कर देती है। आप इससे कैसे निपटेंगे ?

उत्तर : मुझे ऐसा लगता है कि हिंदुस्तान की वड़ी-वड़ी समस्याओं को हल करने का एक ही रास्ता है कि हिंदुस्तान की अर्थ-व्यवस्था को एक सुनियोजित ढंग से बनाया जाय, जिसमें यहां की भूमि, छोटे-बड़े उद्योग, सामाजिक सेवाएं वगैरा आ जायं।

'कोई निहित स्वार्थ नहीं'

यह प्रणाली तभी चल सकती है जब वड़े-वड़े निहित स्वार्थों की शक्ल में जो अड़चनें हैं वे दूर कर दी जायं। इसलिए यह जरूरी हो जाता ह कि ऐसी ज्यादातर अड़चनें दूर हों।

प्रश्न : अंग्रेज ही आपकी अकेली कठिनाई नहीं है। क्या आप नहीं

सोचते कि हिंदुस्तान और उसकी आजादी के बीच उसके साम्प्रदायिक झगड़े और राजे-महाराजे अड़े हुए हैं ?

उत्तर : मैं नहीं समझता कि जब आर्थिक सवालों पर सोचा जा रहा हो तो फिरकेवारान मसला थोड़ी-सी भी कठिनाई पेश करेगा। जहांतक हिंदुस्तानी राजा-महाराजों की बात है, यह सोचना बेहूदगी होगी कि ब्रिटिश हुकूमत के नुमाइंदों के साथ सौ बरस पहले हुई किसी संधि की वजह से वे अपने सामन्ती और मनमाने तरीकों को अपनाये जायंगे। आखिर में तो देसी रियासतों के लोगों को ही यह तय करना होगा कि राजाओं की स्थिति क्या रहे।

प्रश्न : जहांतक फौज का सवाल है, कुछ सूबे एक भी आदमी नहीं भेजते और दूसरे सैकड़ों भेजते हैं। ज्यादातर फौजी दो सूबों से ही आते हैं। क्या आप समझते हैं कि आपके यहां कभी भी एक लोकतंत्रीय सरकार हो सकेगी, जबकि हिंदुस्तान के एक क्षेत्र के हाथ में हथियार होंगे और दूसरों के लिए वह जोखम उठायेंगे ?

उत्तर : फौज का सवाल कोई मुश्किल कठिनाई पैदा नहीं करता। फौज और एक तरह की मिलीशिया पूरे हिंदुस्तान में भरती करनी होगी, और यह सोचने की भी कोई वजह नहीं कि मौजूदा हिंदुस्तानी फौज नये निजाम के तईं वफादार नहीं रहेगी।

हां, ब्रिटिश फौज को चला जाना पड़ेगा।

१६६. वी. गल्लेन्ट्स की ओर से

लदंन

८ फरवरी १९३७

प्रिय नेहरू,

अलबर्ट हॉलवाली रैली के लिए आपने जो संदेश भेजा है, उसके लिए बहुत-बहुत हार्दिक धन्यवाद। मैंने यह घोषित नहीं किया है कि यह संदेश कहां से आया है, लेकिन जैसे ही 'भारत की जनता' शब्द पढ़े गए वैसे ही तालियां गड़गड़ा उठीं। तार के अन्त में आपका नाम पढ़ने से पहले एक बार फिर ऐसा ही हुआ और जब मैंने आपका नाम पढ़ा तब तो तालियों का ठिकाना ही नहीं रहा। हर्ष के इस प्रदर्शन ने इस बात को

बिना किसी संदेह के प्रमाणित कर दिया कि दर्शकों में से प्रत्येक व्यक्ति आपकी अपील को स्वीकार कर रहा था।

आपको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि पूरी-की-पूरी सभा आश्चर्य-जनक रूप से सफल रही और हमें विश्वास है कि इसकी बहुत ही महत्व-पूर्ण राजनैतिक प्रतिक्रिया होगी।

हार्दिक धन्यवाद और समस्त मंगलकामनाओं सहित,

आपका,

वी. गल्लेन्ट्स

पंडित जवाहरलाल नेहरू
स्वराज्य भवन,
इलाहाबाद, यू. पी.

१६७. सर स्टैफ़र्ड क्रिप्स की ओर से

३ एल्म कोर्ट
टेम्पिल ई. सी. ४
३ मार्च १९३७

प्रिय नेहरू,

इतना लम्बा और रोचक पत्र लिखने के लिए समय निकालकर आपने बड़ी कृपा की। इसे हम 'ट्रिब्यून' में छापेंगे, क्योंकि यह जानकारी से भरा हुआ है और इसमें विजय की वह भावना है, जिसकी हमारे देश के लोगों को इस समय बड़ी जरूरत है।

हमारी एकता का आन्दोलन आगे बढ़ने लगा है, यद्यपि मजदूर संघर्षों और दल के अधिकारी-वर्ग की ओर से इसका बड़ा कड़ा विरोध हो रहा है। इससे बहुत अधिक मात्रा में राजनतिक रुचि और भावना जागृत करने में सफलता मिल चुकी है और अबतक इससे भलाई-ही-भलाई हुई है।

हिंदुस्तान के लोगों में जो शानदार उत्साह है, उससे मुझे ईर्ष्या होती है। मैं चाहता हूं कि ऐसा ही आन्दोलन हमारे यहां भी चले, लेकिन शायद हम लोगों में छल-कपट बहुत है और हमें अपने प्रजातंत्र में अत्य-धिक अधिकार प्राप्त हैं। आपने जो महान विजय पाई है, उसके लिए म आपको और कांग्रेस को अपनी हार्दिक बधाई भेजना चाहता हूं। हम आपके कन्वेन्शन के निर्णय की बड़ी रुचि के साथ प्रतीक्षा करेंगे और यह

भी जानना चाहेंगे कि इंडियन ऐक्ट को काम में लाने के वारे में आप क्या रुख अपनाते हैं।

मुझे निश्चय है कि आप हर प्रकार के साम्राज्यवाद के प्रति और उनके अनेक फासिस्ट तरीकों के प्रति भी, जो आज हिंदुस्तान में अमल में लाये जा रहे हैं, कड़े-से-कड़े विरोध की भावना बनाये रखेंगे। मुझे भय है कि यहां हम आपकी बहुत ही कम सहायता कर सकते हैं, क्योंकि अभी तक हमारा दल साम्राज्यवादी स्थिति के झंझटों को नहीं समझ सका है। फिर भी हम यहां के लोगों में जानकारी फैलाने की भरपूर चेष्टा कर रहे हैं और यह भी समझाने की चेष्टा कर रहे हैं कि शाही मामलों में ऐसे आन्दोलन के प्रति क्या-क्या जिम्मेदारियां होती हैं।

मैं समझता हूं, यह एक महत्व की बात होगी कि हम 'ट्रिव्यून' में अधिक-से-अधिक भारतीय समाचार छापें, इसलिए यदि समय-समय पर आप हमें कोई पत्र या छोटे लेख भेज सकें तो वह बहुत ही उपयोगी सिद्ध होगा, हालांकि मैं जानता हूं कि आप कितने व्यस्त हैं।

शुभकामना-सहित,

आपका,

स्टैफ़र्ड क्रिप्स

१६८. लार्ड लोथियन की ओर से

सेमूर हाउस,

१७, वाटरलू प्लेस, एस. डब्ल्यू. १

४ मार्च १९३७

निजी

प्रिय श्री जवाहरलाल नेहरू,

मैं भारतीय चुनावों के क्रम को इतनी बारीकी से देखता रहा हूं जितनी कि अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में इस समय मुख्य रूप से व्यस्त इस देश में रहकर सम्भव है। मुझे खुशी है कि कांग्रेस को छः सूबों में बहुमत प्राप्त है अथवा उसके और सब पार्टियों से अधिक सदस्य चुने गये हैं। वह प्रथम बार सबसे अधिक सक्रिय और अनुशासित राष्ट्रीय शक्ति को हिंदुस्तान में एक दायित्वपूर्ण और हकूमत के पद पर आसीन करेगी।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि जिन सूबों में कांग्रेस को बहुमत प्राप्त है, वहां वह पद-ग्रहण करना और जिम्मेदारी लेना स्वीकार करेगी। मैं जानता हूं, इस बारे में आपकी राय भिन्न होगी और आपकी वह राय न सिर्फ संविधान में सुरक्षित ब्रिटिश हकूमत के अधिकारों पर आधारित है, बल्कि इस तथ्य पर भी कि केन्द्रीय असेम्बली में सम्पतिशालियों का ही बहुमत होनेवाला है। मैं अपनी बात पर दो कारणों से ज़ोर देता हूं। प्रथम ो इतिहास में एक बार भी ऐसी मिसाल नहीं मिलती, जबकि उत्तर-दायी सरकार का सिद्धान्त उस असेम्बली में लागू किया गया हो, जहां-पर कि बहुमत सरकार की पूरी जिम्मेदारी उठाने में समर्थ न हो, भले ही संविधान में कितनी ही सुरक्षा बरती गई ो। पार्लमेंट का इरादा ा कि सूबाई अधिकारों के क्षेत्र के अन्तर्गत सूबों में पूरी जिम्मेदार सरकारें बनाई जायं। जबतक कोई मंत्रिमंडल ऐसी नीति न अपनाये, जिससे जनमत की भारी अवहेलना होती हो, कोई भी गवर्नर जनता के प्रतिनिधियों की इच्छा का विरोध तबतक नहीं कर सकता जबतक कि वे प्रतिनिधि अपनी नीति के परिणामों की पूरी जिम्मेदारी खुद उठाने को तैयार हों। इसलिए मेरा विश्वास है कि हकूमत के काफी मामलों में कांग्रेस पूरी जिम्मेदारी उठाने की स्थिति में है और वह उस अनुभव को प्राप्त करने लायक भी है, जो सरकार की जिम्मेदारी उठाने पर ही मिल सकेगा। और फिर जब वह शासन करने की अपनी योग्यता सिद्ध कर चुकेगी तब वह संविधान एवं संघीय मामलों पर बातचीत करने के लिए अधिक मजबूत स्थिति में होगी, यही तो ब्रिटेन और उसके बीच झगड़े की जड़ है।

दूसरा कारण यह है कि मेरा विश्वास है, हिंदुस्तान का सबसे महत्वपूर्ण और एकमात्र हित अपनी असीम एकता कायम रखने में है और जो संघीय संविधान में समाविष्ट है। जब आप अकथनीय दुर्भाग्यों और निस्सीम निराशा में लिप्त, अपनी समस्याओं को हल करने में नितान्त असमर्थ यूरोप को देखते हैं जिसकी यह स्थिति उसके २६ सर्व-प्रभुत्व-सत्ता-सम्पन्न राज्यों में बंट जाने के कारण हुई है तब पता चलता है कि पूरे देश में सरकार की स्थापना के ढांचे को शुरू करनेवाले हिंदुस्तान को कितना अच्छा सुअवसर मिला ह। एक समय था जब ब्रिटेन भारत में चीन

की तरह मंचू अथवा रूस में जार की तरह से देश की एकता को निरंकुश साधनों द्वारा कायम रख सकता था। वे दिन गये। कोई शक नहीं कि आप उस संविधान के अन्तर्गत मताधिकार एक भिन्न तरीके से चाहेंगे, लेकिन क्या यह अधिक महत्वपूर्ण नहीं कि संघीय ढांचे में रहकर संघर्ष किया जाय, वजाय इसके कि उस ढांचे को ही नष्ट कर दिया जाय और हिंदुस्तान की एकता को खतरे में डालकर यूरोप के रास्ते पर चलने की जोखिम उठाई जाय ? मेरा खयाल है कि उस रास्ते को अपनाने से आप अपने लक्ष्य पर अधिक जल्दी पहुंचेंगे और किसी अन्य मार्ग के अपनाने की अपेक्षा हिंदुस्तानी जनता को अधिक लाभ पहुंचा सकेंगे।

आखिरी बात यह कि मैं समझता हूं कि गवर्नरों से यह वादा लेना कि वे सुरक्षित अधिकारों का उपयोग न करेंगे, ठीक रास्ता नहीं है। वे यह वचन नहीं देंगे और वचन मांगने का मतलब होगा अवास्तविकताओं पर लड़ाई लड़ना। खास चीज तो यह है कि जिम्मेदारी ले ली जाय और तब उस जिम्मेदारी के अपनाने पर आग्रह किया जाय कि जिम्मेदारी में हस्तक्षेप न हो, क्योंकि आप अपनी नीति की जिम्मेदारी लेने को राजी हैं।

मुझे यकीन है कि एक साल पहले हुई दोस्ताना बातचीत को ध्यान में रखकर इस पत्र को लिखने के लिए आप क्षमा करेंगे। यह पत्र आपके तथा हिंदुस्तान दोनों के प्रति शुभेच्छा से प्रेरित होकर तथा इस विश्वास से लिखा गया है कि संविधान ने अधिकतर मताधिकार के कारण हिंदुस्तानियों के हाथ में शक्ति की एक ऐसी कुंजी दे दी है, जिससे वे यद्यपि विना संघर्ष और कठिनाई के तो नहीं पर संवैधानिक तरीकों से अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं वजाय उन तरीकों के, जिनसे पिछले सालों में दुनिया पर आफतें आईं, ऐसी आफतें जो पूंजीवादी शोषण से भी गई-बीती हैं और जिन्हें केवल लोकतंत्र ही अकेला दूर करने के लिए प्रयत्नशील है।

आपका,
लोथियन

१६९. वल्लभभाई पटेल की ओर से

अहमदाबाद
९ मार्च १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

अखबारों के समाचारों से मैं देखता हूं कि ८ ता. को पूना में महाराष्ट्र प्रान्तीय कांग्रेस कमिटी की बैठक हुई और उसने पद-ग्रहण के विरुद्ध निश्चय किया। परन्तु उसी दिन महाराष्ट्र की धारासभा के सदस्यों (नये चुने हुए सदस्यों) की एक बैठक हुई और उन्होंने पद-ग्रहण के पक्ष में एक प्रस्ताव पास किया। इतना ही नहीं किया, बल्कि और आगे बढ़े और उन्होंने एक दूसरे प्रस्ताव द्वारा मुख्यमंत्री पद के लिए श्री नरीमान की नामजदगी की सिफारिश की है। यह बड़ी बुरी बात है। इस संबंध में हाल ही में तुम्हारे द्वारा भेजी गई हिदायतों की ये प्रत्यक्ष विरोधी हैं। मुझे भय है कि बम्बई से मंत्रियों के पदों के लिए जो जोरों का प्रचार शुरू हुआ है, यह प्रस्ताव उसीका परिणाम है। मालूम होता है कि धारासभा के लिए चुने गए अपने सदस्यों को महाराष्ट्र प्रान्तीय कांग्रेस अपने काबू में रख पाने में असमर्थ है। यदि केन्द्र द्वारा मजबूत नियंत्रण नहीं रखा गया तो हालत बिगड़ जायगी। इन रिपोर्टों की एक कतरन तुम्हारी सूचना के लिए भेज रहा हूं।

बम्बई होता हुआ १४ की शाम को मैं दिल्ली पहुंच रहा हूं। आशा है, तुम प्रसन्न होगे।

सप्रेम तुम्हारा,
वल्लभभाई

१७०. रवीन्द्रनाथ टैगोर की ओर से

'उत्तरायण'
शांतिनिकेतन, बंगाल
२८ मार्च १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

मुझे अभी-अभी तुम्हारा तार मिला, जिससे आशा होती है कि आगामी १४ अप्रैल को होनेवाले हमारे समारोह की अध्यक्षता के लिए

तुम आ सकोगे । पर राजनैतिक स्थिति की जिस अनिश्चितता का तुमने ज़िक्र किया है वह, जहांतक हमारे इस छोटे-से समारोह का सवाल है, बहुत ही भयावनी है और मैं तुम्हें यह बताने के लिए फिर से लिख रहा हूं कि मैं स्वयं इस प्रसंग को किस प्रकाश में देखता हूं ।

विशाल पुस्तकालय और ५०,००० रु. की निधि चीनी जनता की भारत को भेंट है और इसे सही पृष्ठभूमि में न देख सकना दुर्भाग्य की बात होगी । इस कार्य का प्रेरक चीनी-हिन्दी सांस्कृतिक समाज है, जिसके संगठनकर्ताओं में मार्शल च्यांग काई शेक, राष्ट्रपति डा. त्साई ती ताओ और चीनी राष्ट्रीय अनुसंधान संस्थान के संचालक आदि, चीनी-जीवन के सभी नेता शामिल हैं । हमारे ऊपर इस बात की ज़िम्मेदारी है कि भेंट को मित्रता और सहयोग की समुचित भावना के साथ ग्रहण करें और समाज का औपचारिक उद्‌घाटन इस प्रकार होना चाहिए, जिससे हमारे चीनी मित्रों को तत्काल विश्वास हो सके कि भारत इस सुन्दर कार्य का उचित प्रत्युत्तर ही देगा । उद्‌घाटन-समारोह के लिए मुझे तुमसे अधिक उपयुक्त कोई दूसरा नहीं सूझता और तुम्हें आना ही होगा । जरूरत हो तो हवाई जहाज़ से आना, हमारे यहां हवाई जहाज के उतरने का अच्छा प्रबंध है। अपने साथ इंदिरा को लाना न भूलना ।

आशीर्वाद-सहित,

सप्रेम तुम्हारा,
रवीन्द्रनाथ टैगोर

१७१. अर्न्स्ट तोल्ले की ओर से

दी मिरामर
सांता मोनिका, केलिफोर्निया,
३० मार्च १९३७

प्रिय जवाहरलाल नेहरू,

पिछला पत्र लिखे महीनों बीत गये हैं । मुझे पूर्ण आशा है कि जब यह पत्र आपके पास पहुंचेगा तब आप खूब स्थिर होंगे ।

मैं आपके जीवन और कार्य का गहरी दिलचस्पी और बड़े ध्यान के साथ अध्ययन करता रहा हूं । अमरीका के कुछ समाचार-पत्रों और

पत्रिकाओं में हिंदुस्तान की स्थिति की खबरें बिना किसी व्यक्तिगत राग-द्वेष के और काफी विस्तार के साथ छपती हैं।

मैं यहां अमरीका में अक्तूबर के आरम्भ में भाषण देने के लिए आया था। इन भाषणों का उद्देश्य हिटलर और नाजी-प्रणाली का विरोध करना था, लेकिन हिटलर की केवल घरेलू नीति, हत्याओं और अल्प-संख्यकों, उदारदलीय सदस्यों तथा समाजवादियों के दमन के विरुद्ध ही नहीं, बल्कि उसकी विदेश-नीति के खिलाफ भी, जिससे सारे संसार की शान्ति को खतरा पैदा होगया है। स्वभावतः मैंने लोगों को यह भी बतलाया कि स्पेन के फ्रांको-विद्रोह को तैयार करने में और उसे समर्थन देने में हिटलर का हाथ था। मैंने सारे अमरीका का भ्रमण किया और सार्वजनिक सभाओं, विश्वविद्यालयों, महिला क्लबों में, लेखकों और पत्रकारों के सामने और रेडियो आदि पर भी भिन्न-भिन्न सामाजिक स्तर के लोगों के सामने भाषण किये।

यह भाषण-यात्रा तीन महीनों तक चली। अक्सर ऐसा होता था कि मैं दिन में दो-दो बार भाषण करता था। एक दिन तो चार बार भाषण किया। मैं जानता हूं कि आपको मेरे काम में रुचि है, इसलिए मैं अपने भाषणों के बारे में कुछ अखबारों की कतरनें इस पत्र के साथ भेजने की धृष्टता कर रहा हूं।

इस यात्रा की एक बहुत ही रोचक बात यह है कि यहां की साधारण जनता और हॉलीवुड के फिल्मी कलाकारों ने भी, जिनसे उम्मीद नहीं की जाती थी, बड़ी सहानुभूति दिखलाई है।

हॉलीवुड में एक बहुत ही प्रभावशाली नाजी-विरोधी संघ है, जिसके सदस्यों में बहुत-से सुप्रसिद्ध फिल्म-निर्माता, फिल्म-लेखक और फिल्म-कलाकार भी हैं।

यात्रा समाप्त करके मैं हॉलीवुड लौट आया और इस समय मैं मीट्रो गोल्डविन मेयर के लिए 'लोला मोन्टेज़' फिल्म की कहानी लिख रहा हूं। (लाला मोन्टज उस विचित्र आयरिश लड़की का नाम है, जो कि एक अफसर की बेटी थी, जिसने अपनी युवावस्था भारत में बिताई थी और जो बाद में लन्दन में एक 'स्पेनिश नर्तकी' के रूप में सामने आई

और फिर ववेरिया के शाह लुडविग प्रथम की मित्र वन गई। इस शाह की राजनीति पर सबसे अधिक उसीका निर्णायक प्रभाव रहा और ऐसा वह उस समय तक करती रही जबतक कि १८४८ में म्यूनिक का हास्यास्पद विद्रोह न उठ खड़ा हुआ, जिसके फलस्वरूप लोला मोन्टेज को देश-निकाला मिला और राजा को गद्दी छोड़नी पड़ी। इतिहास भी अक्सर कितना विचित्र होता है! यूरोपीय प्रतिक्रिया के समय यही लोला मोन्टेज आजादी की संदेश-वाहिका बनी।)

यहां का अपना काम खत्म हो जाने पर मैं न्यूयार्क चला जाऊंगा, जहां मेरे दो नाटक खेले जायंगे। दोनों ही पुस्तक के रूप में छपेंगे। छपते ही मुझे उनकी प्रति आपके पास भेजने में बड़ी प्रसन्नता होगी।

पिछली बार जब मैं यहां १९२९ में आया था, तबके बाद से यहां अमरीका में बड़े-बड़े परिवर्तन होगये हैं। यहां के महान आर्थिक संकट ने यहां की जनता पर, विशेष रूप से युवकों पर, बड़ा गहरा असर डाला है। तुच्छ आशावादिता और डालर की पूजा के बदले यहां आजकल एक बहुत ही गहरी आध्यात्मिक बेचैनी दिखाई दे रही है। लोगों में वास्तविक सामाजिक समस्याओं की ओर झुकाव और सामाजिक क्षेत्र के साथ-ही-साथ कला के क्षेत्र में भी सत्य की आकांक्षा दिखाई दे रही है।

इसके अलावा मैं समझता हूं कि अकेला अमरीका ही वह देश है, जिसने फासिज्म से इतनी जल्दी सबक सीखा है।

जनसंख्या का एक बहुत बड़ा भाग अब स्वतंत्रता के प्रति जागरूक हो गया है और रूजवेल्ट के चुनाव में दांव यह था कि कौन आजादी के पक्ष में है और कौन विरोध में।

मुझे अगले महीने रूजवेल्ट से मिलने की आशा है। अमरीकी इतिहास के वह एक महत्वपूर्ण व्यक्ति हैं।

इंग्लैंड में कब लौटूंगा, यह मैं अभी नहीं जानता। अभी तो मैं अमरीका में ही रहूंगा।

यूरोप के मामलों की शायद आपको भी उतनी ही जानकारी है, जितनी मुझे। निश्चय ही आजकल हम लोग एक यूरोपीय युद्ध के मध्य में

हैं। अभी तो अलग-अलग देशों के सैनिक दस्ते और टुकड़ियां लड़ रही हैं। सेना के मैदान में आने में अब थोड़े समय का ही सवाल रह गया है। इंग्लैण्ड और इटली के बीच झगड़ा लगातार बढ़ता चला जा रहा है और मेरी राय में मुसोलिनी के हिटलर के साथ मिल जाने के पीछे ब्रिटिश-विरोधी भावना काम कर रही है। कभी-कभी ऐसा लगता है कि लड़ाई आंशिक रूप में हिटलर और सोवियत रूस के बीच नहीं, बल्कि इंग्लैंड और इटली के बीच आरम्भ होगी।

स्पेन के मामलों में लोकतंत्रों ने आर्थिक कारणों से एक भयंकर भूल कर दी है, जिसे कि बाद की पीढ़ी शायद ही समझ पायगी। फ्रेंको और उसके फासिस्ट मित्रों की विजय का यूरोप की स्थिति पर क्या प्रभाव पड़ेगा, इस बात को फौरन ही समझ लेने के बदले उन्होंने अपने को तटस्थ घोषित कर दिया और इस प्रकार यूरोपीय लोकतंत्रों की स्थिति को और भी संकटजनक बना दिया। हमें उम्मीद करनी चाहिए कि इस मामले में लोकतंत्रों के हस्तक्षेप में बहुत देर नहीं होगी, जैसी कि बहुत-से मामलों में पहले हो चुकी है।

क्या हिंदुस्तान में भी फासिस्ट आन्दोलन है? क्या वहां भी नाजी लोग प्रचार द्वारा प्रभाव डालने की चेष्टा कर रहे हैं।

आपकी पुत्री के क्या समाचार हैं? क्या वह अब भी लन्दन में ही हैं? कृपया मेरा आदर और मेरी शुभकामनाएं स्वीकार कीजिये।

आपका,
अर्न्स्ट तोल्ले

१७२. महात्मा गांधी की ओर से

सेगांव, वर्धा

दुबारा नहीं देखा ५ अप्रैल १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हें बीमार क्यों होना चाहिए? बीमार हो जाने पर तुम आराम क्यों नहीं लेते? मैंने सोचा था कि इन्दू के आने के बाद तुम चुपके-से

कहीं चले जाओगे। जब वह आ जाय तो उसे मेरा प्यार पहुंचा देना। इस पत्र के साथ उसे भी दो शब्द लिख रहा हूं।

अब तुम्हारे रूठने की बात। किसी भी तरह सही, मैं जो भी कहता या शायद करता भी हूं वही तुम्हें खटकता है। चुप रहना असंभव था। मेरा खयाल था कि संदर्भ में शिष्टता और अशिष्टता शब्द बिल्कुल ठीक आ गये। बयान के बारे में कांग्रेस की तरफ से शिकायत का पहला स्वर तुम्हारा निकला है। अगर सभीको शिकायत थी तो मैं क्या कर सकता था? मुझे खुशी है कि तुमने लिख दिया। जबतक मेरी समझ साफ न हो जाय या तुम्हारे डर दूर न हो जायं तबतक तुम्हें मुझे बर्दाश्त करना होगा। मुझे अपने बयान से कोई हानि होने का अंदेशा नहीं है। क्या तुम्हारे दिमाग़ में कोई ऐसी चीज है जिसे मैं नहीं समझता?

कमलादेवी ने वर्धा से मद्रास तक हमारे साथ सफ़र किया। वह दिल्ली से आ रही थीं। वह मेरे डब्बे में दो बार आईं और लम्बी बातें कर गईं। अन्त में वह जानना चाहती थीं कि सरोजिनीदेवी को क्यों नहीं शामिल किया गया, लक्ष्मीपति को राजाजी अलग क्यों रख रहे हैं, अनुसूयाबाई को क्यों बाहर रखा गया? तब मैंने उन्हें बताया कि अलग रखने के मामले में मैंने क्या भाग लिया और उस दिन मौनवार को मैंने तुम्हारे लिए जो नोट लिखा था उसका जितना भाग मुझे याद था, लगभग सारा उन्हें कह सुनाया। अवश्य ही मैंने उन्हें बताया कि शुरू में सरोजिनी को न लेने और बाद में ले लेने में मेरा कोई हाथ नहीं था। मैंने उनसे यह भी कहा कि जहांतक मुझे मालूम है, लक्ष्मीपति को न लेने से राजाजी का कोई वास्ता नहीं था। मैंने सोचा, तुम्हें यह सब मालूम होना चाहिए।

आशा है, इस पत्र के पहुंचने तक तुम फिर पूरी तरह तंदुरुस्त हो जाओगे। माताजी के बारे में तुमने कुछ नहीं लिखा।

सस्नेह,

बापू

१७३. लार्ड लोथियन की ओर से

ब्लिर्कालिंग हॉल,
ए ल्सहम

गोपनीय

९ अप्रैल १९३७

प्रिय श्री जवाहरलाल नेहरू,

२५ मार्च के पत्र के लिए बहुत-बहुत धन्यवाद। 'टाइम्स' में प्रकाशित मेरा पत्र आपने देखा होगा। "मंत्रियों की उनकी वैधानिक गतिविधियों से सम्बन्धित सलाह को गवर्नर हस्तक्षेप के अपने विशेषाधिकार द्वारा रद्द नहीं करेगा", ऐसा आश्वासन मिलने पर ही हम सरकार बनायेंगे, कांग्रेस कमेटी का यह प्रस्ताव "बहुत ठीक" है, आपके इस विचार से मैं पूर्णतः सहमत नहीं हूं। ऐसा मानने के लिए जो कारण हैं उन्हें मैं यहां नहीं दोहराऊंगा। सिर्फ इतना कहूंगा कि गवर्नर अपने विशेषाधिकारों का प्रयोग करे या नहीं, यह कुछ आदेशात्मक नहीं है, बल्कि यह उसकी इच्छा पर निर्भर होगा और स्थिति इसीसे स्पष्ट हो जाती है। दूसरे शब्दों में, जैसा कि ज़ेटलैण्ड ने कल लार्ड-सभा में स्वीकार किया है, गवर्नर द्वारा अपने विशेषाधिकार के प्रयोग का प्रश्न उसके अपने निर्णय पर निर्भर करता है। वह इस बात पर विचार करेगा कि विशेषाधिकार का प्रयोग कानून और व्यवस्था तथा अल्पसंख्यकों आदि के लिए अपने मंत्रिमंडल की सलाह मानने की बनिस्बत अधिक हानिकर तो नहीं होगा। उत्तरदायी शासन-प्रणाली का यह एक बुनियादी तत्व है। और ठीक इसी कारण से, जहां-कहीं भी यह पद्धति लागू की गई है और लोकप्रिय मंत्रिमंडलों ने शासन-भार सम्हाला है, धीरे-धीरे सारे अधिकार विधानमंडलों और निर्वाचकों को सौंप दिये गए हैं। ऐसा क्यों होता है, इसके भी कारण हैं। जबतक मंत्रिमंडल अपनी नीति का अतिरेक कर निर्वाचकों को अपना विरोधी नहीं बना लेता तबतक व्यवहारतः विशेषाधिकार का प्रयोग करना गवर्नर के लिए असम्भव नहीं तो कठिन जरूर रहता है, क्योंकि ऐसा करने पर वैधानिक संकट उत्पन्न होता है, जिसके फलस्वरूप फिर से आम चुनाव कराना

लाजिमी हो जाता है। इस स्थिति में एक विदेशी ताकत द्वारा अधिकार के प्रयोग के कारण ही निर्वाचकों के हाथ उसकी नीति की हार हो जाती है। इसलिए मैं कहना चाहूंगा कि आपके दृष्टिकोण से भी पूर्व आश्वासन मांगने की नीति ठीक नहीं है। न तो आप और न गवर्नर ही वचनवद्ध होना चाहते हैं। इस प्रकार के आश्वासनों से और भी गलतफहमियां पैदा होती हैं। आप यह परम्परागत रास्ता क्यों नहीं अपनाते—शासन-भार सम्हालिये, अपने कानून वनाइये और फिर गवर्नर को हस्तक्षेप की चुनौती दीजिये ? अगर वह हस्तक्षेप नहीं करता तो आप पूरा भार सम्हाल लेंगे और कुछ ही सप्ताह या महीने में संसदीय प्रणाली प्रान्तों में पूरी तरह चालू हो जायगी और हर नये महीने के आरम्भ के साथ हस्त-क्षेप अधिकाधिक कठिन होता जायगा। हां, मंत्रिमंडल ही कोई गलती कर बैठे तो बात और है। यदि उसने हस्तक्षेप किया ही तो अपने दृष्टि-कोण को वुलन्द करने के लिए आपके पास आज की अपेक्षा अधिक अच्छा हथियार रहेगा।

अपने पत्र के अन्तिम पैरे में आपने कहा है कि हिंदुस्तान की आंगिक एकता को बनाये रखने तथा उसे शक्तिशाली वनाने के महत्व से आप पूर्णतः सहमत हैं, लेकिन आपकी राय में नये संविधान के संघ-विषयक खण्ड से इस एकता को संवल नहीं मिलेगा। मेरी समझ में यह नहीं आता। जहांतक वुनियादी बातों का सम्बन्ध है, नया भारतीय संवि-धान ठीक उसी सिद्धान्त पर आधारित है, जिसपर अमरीका, कनाडा अथवा आस्ट्रेलिया का संविधान वना है, अर्थात् संघीय विधान-मंडल के द्वारा हिंदुस्तान की आंगिक एकता, जिसमें लोकप्रिय निर्वाचक-मंडल समेत प्रत्येक व्यक्ति का प्रतिनिधित्व होगा और रियासतें तथा प्रांत संवि-धान के अन्तर्गत अपने कानूनी अधिकारों का प्रयोग करेंगे। सम्पूर्ण हिंदु-स्तान के लिए बननेवाला कोई भी संविधान अनिवार्यतः इन्हीं सिद्धांतों पर आधारित होगा। यह बिल्कुल सच है कि ऐसे अन्य तत्व भी हैं, जो अस्थायी तौर पर आवश्यक हो भी सकते हैं और नहीं भी, लेकिन जो आपके खयाल से ही नहीं, वस्तुतः किसी भी व्यक्ति की राय में अन्त-तोगत्वा आपत्तिजनक हैं। एक तत्व तो यह है कि संघीय विधान-मंडल में

लोकतन्त्र और निरंकुश सत्ता दोनों एक साथ बैठेंगे और यह कि मत-प्रयोग के मामले में रियासतों को अनुचित महत्व दिया गया है । आपकी दृष्टि से दूसरा तत्व वह है, जिसमें सम्पत्ति-अधिकारों को संरक्षण दिया गया है । व्यक्तिगत तौर पर मेरा भी यह ख़याल है कि संघीय विधान-मंडल को प्रत्यक्ष और व्यापक मताधिकार द्वारा न चुनना भारी गलती है, क्योंकि जबतक संघीय सभा में प्रांतों के प्रतिनिधि रहेंगे तबतक प्रान्तों में निहित हानिकर प्रवृत्तियों को केन्द्र में अत्यधिक प्रतिनिधित्व प्राप्त होता रहेगा । अन्त में साम्प्रदायिक फैसले की बात आती है । लेकिन, जैसाकि मेरा विश्वास है, संविधान के इन तत्वों का निराकरण खुद संघीय संविधान को नष्ट किये बिना भी हो सकता है । इस बात में मुझे सन्देह है कि मुसलमानों और अधिकतर अन्य अल्पसंख्यकों को नई संविधान-सभा में आने के लिए तैयार करना आपके लिए सम्भव है । लेकिन, उत्तरदायी शासन-प्रणाली जनता के प्रतिनिधियों के हाथ में जो अधिकार देती है उसका मैं इतना कायल हूं कि मेरा विश्वास है कि संविधान को नष्ट करने का प्रयास करने की अपेक्षा इसके ढांचे के अन्तर्गत ही लड़-झगड़कर इन त्रुटियों का निराकरण अधिक विवेकपूर्ण ढंग से और अधिक तेजी से किया जा सकता है । मैं भी सोचता हूं कि उसको नष्ट करने का प्रयास अनिवार्य रूप से हिंदुस्तान की आंगिक एकता को नष्ट कर देगा । मेरा विश्वास है कि यदि उत्तरदायी शासन-प्रणाली का संचालन शक्तिशाली अनुशासित दल द्वारा हो तो इससे न केवल संविधान में परिवर्तन ही किये जा सकते हैं, जो स्वयं भारतीय विधान-मंडलों के अधिकार में है, बल्कि एक बार यह मालूम हो जाने पर कि हिंदुस्तानी जनमत एक निश्चित रूप ले चुका है, ब्रिटिश संसद को भी उन तत्वों को संविधान से निकालने के लिए बाध्य किया जा सकता है, जिन्हें संविधान को लागू करने के निमित्त गोलमेज-सम्मेलनों के समय उसमें सम्मिलित करना आवश्यक था । आप इस विचार से सहमत नहीं होंगे, क्योंकि मैं नहीं समझता कि उत्तरदायी शासन-प्रणाली अनुशासित बहु-संख्यक दल के हाथ में 'स्वाधीनता' प्राप्ति की वह शक्ति देती है, जिसमें आपका उतना विश्वास है जितना मेरा । लेकिन मुझे यकीन है कि यदि

आप जाकर सप्रू से बात करें तो आपको वह यह तसल्ली दिला देंगे कि यह संविधान जितना आप समझते हैं उससे कहीं अधिक अधिकार बहुसंख्यक दल को देता है। वस्तुतः यह संविधान आपको अधिकार प्राप्त करने की कुंजी देता है, यदि आप इसका इस्तैमाल करना जानते हों। यही कारण है कि यहां के कट्टरपंथियों ने इसका इतना कड़ा विरोध किया है।

आपका,
लोथियन

पंडित जवाहरलाल नेहरू
इलाहाबाद।

१७४. एडवर्ड टामसन की ओर से

३ मई १९३७

प्रिय नेहरू,

आपकी अस्वस्थता का हाल सुनकर मुझे बड़ा दुःख हुआ। मैं आपके बेहतर होने की आशा करता हूं। मुझे पत्र लिखने का समय निकालकर आपने मुझपर बड़ी मेहरबानी की है।

जहांतक हिंदुस्तान के राजनैतिक मामलों का सवाल है, आपके मुकाबले मुझे बोलने का बहुत कम अधिकार है। अगर हमारे विचार नहीं मिलते तो शायद इसमें मेरी गलती है। अगर मैं कोई दिलचस्पी लेता हूं तो किसी बाहरी आदमी या अंग्रेज की हैसियत से नहीं, बल्कि एक ऐसे आदमी की हैसियत से जिसका विश्वास है कि हिंदुस्तान में कांग्रेस एक आधुनिकतम और महत्वपूर्ण आन्दोलन है, जिसकी तुलना किसी और से नहीं की जा सकती और यह कि वह उन बातों के लिए प्रयत्नशील है, जिन्हें मैं अपने देश में भी देखना चाहता हूं। इसलिए आपकी लड़ाई मेरी लड़ाई है।

मेरे ख़याल से 'न्यूज क्रॉनिकल' में राजनीति पर एक ही लेख आया था और वह, जैसाकि मैंने आपसे कहा था, यदि बम्बई में नहीं लिखा गया होता तो कुछ दूसरे ही तरीके से लिखा जाता। दूसरे लेख में कुछ सामान्य विचार दिये गए थे, जिसे एक सहायक सम्पादक ने और

सरल कर दिया (कभी-कभी तो इससे वक्तव्य ही असत्य हो गया है। मिसाल के तौर पर तीन लाइनें बचाने के लिए मुझसे यह कहलाया गया कि राष्ट्रीय कांग्रेस का आरम्भ ब्रिटिश अधिकारियों ने किया था!)

फिर भी, एक बात है, जिसपर मेरे खयाल से, मेरे प्रति सामान्य न्याय के लिए आपको अपनी राय स्थिर कर लेनी चाहिए। जब हमारी मुलाकात हुई थी तब मैं बहुत ही दुःखी, थका और हैरान था और हताश भी। इसलिए मैं कुछ इस तरह बातें कर गया कि जिससे आपका यह सोचना स्वाभाविक ही है कि मैं रेजमी, रामानन्द चटर्जी और उसी तरह के दूसरे लोगों को जरूरत से ज्यादा महत्व देता हूं, हालांकि ये बातें मैंने एकांत में कहीं और उनका जिक्र सार्वजनिक तौर पर या लिखित रूप में कभी नहीं किया। जब मन की हालत सामान्य होती है तो मेरे दिल में उनके प्रति कोई श्रद्धा नहीं होती और न साल में पांच मिनट के लिए भी उनपर कोई विचार करता हूं। मैं यह स्वीकार करता हूं कि पहले कई बार मुझको उनसे इस कारण खिन्नता हुई है कि आपके आन्दोलन में ऐसे स्वार्थी और अपना विज्ञापन करनेवाले लोग भरे हैं, जिनका, अगर इससे सम्बन्ध न हो तो थोड़ा भी महत्व नहीं हो सकता—ऐसे ही लोगों के लिए शैली ने 'दि इलस्ट्रियस ऑबस्क्योर' का विशेषण दिया है—और कुछ परले दर्जे के बेवकूफ लोगों से भी मुझे खिन्नता हुई है। विवेकशील और सद्भावी लोग इन्हें खड़ा करके सामने लाते हैं और फिर उन्हीं लोगों की राय में उन उद्देश्यों को हानि पहुंचती है, जिनका वे गलत प्रतिनिधित्व करते हैं। अनेक देशों के बहुत-से लोग यदि हिंदुस्तान के सवाल पर गम्भीरता से विचार नहीं करते तो इसके लिए ज्यादातर ऐसे ही लोग जिम्मेदार हैं। जो हो, मैं इसपर सहमत हूं कि इनसे खिन्न होने का सम्मान भी इन्हें नहीं दिया जाना चाहिए।

अब हम उन बातों पर विचार कर सकते हैं, जिनपर हम दोनों के विचार बिल्कुल मिलते हैं। मेरी पिछली हिंदुस्तान-यात्रा से मुख्य परिवर्तन यह हुआ है कि अब मैं राजाओं का पक्का विरोधी होगया हूं। मैं इतिहास-संबंधी एक काम कर रहा हूं, जिसमें यह बात स्पष्ट हो जायगी। इन्हीं जाड़ों में मैं एक किताब प्रकाशित कर रहा हूं, उसमें भी यह प्रकट

होगा। मेरी राय में ये राजे-महाराजे रक्त-शोषक कीड़े हैं। उनमें से अधिकतर तो निरे वेहूदे हैं। उनके बारे में जो चापलूसीपूर्ण बातें कहीं जाती हैं, वे तो और भी भयंकर हैं। लेकिन उनसे पिण्ड छुड़ाना आसान न होगा।

जेटलैण्ड के दिखावटीपन के बारे में भी मैं बिल्कुल सहमत हूं। मेरी अपनी राय यही है कि वह बिल्कुल अपवादरूप से दलीय व्यक्ति हैं। जन-सामान्य क्या सोचता है अथवा उसपर क्या बीतती है, इसकी उसे कोई जानकारी नहीं। उससे न तो हिंदुस्तान का और न हमारे देश का कोई लाभ होनेवाला है। वह विशुद्ध टोरी है।

हां, शायद मैं भौतिक शक्ति के सम्बन्ध में बहुत अधिक सोचता हूं। आपको मालूम है, मैं ५१ वर्ष का हूं। मेरा सम्बन्ध सुखद (जो किसी समय सुखद था!) आश्वस्त उदार आन्दोलन से है, जो महायुद्ध से पूर्व श्रमजीवी वर्गों के लिए कुछ (कम-से-कम उनके लिए जो कुछ भी किया जा सकता सब) करा सकने में समर्थ हुआ और जिसका विश्वास था कि किसी भी देश में किसी भी अन्याय को हम शांतिपूर्ण तरीके से मिटा सकते हैं। हममें से अधिकतर लोगों का एक पैर कब्र में है। जो बाकी हैं वे निराश हो चुके हैं और समय से पहले ही उनका दिल टूट चुका है। १९१३ में हमने सपने में भी नहीं सोचा था कि हम ऐसे जमाने से गुजरेंगे, जिसमें जर्मन गुप्तचरों को टावर में गोली मारी जायगी और एक आदमी को एडवर्ड तृतीय के कानून के अन्तर्गत 'बड़े देशद्रोह' के अपराध में फांसी पर चढ़ाया जायगा। स्वयं मैंने एक ऐसे आदमी को देखा है, जिसे डरपोकपन के कारण दूसरे दिन गोली मारी जानेवाली थी; और अब एक देश के बाद दूसरे देश में मर्दों और औरतों के प्राण ऐसे राजनैतिक विचारों के कारण लिये जा रहे हैं, जिनपर थोड़ी-सी भी उदारता का रंग चढ़ा है। कुछ दिन पहले एक रात बेतार के तार की खबर इतनी नीरस और दुःखांत थी कि वह मजाक बन गई। पहले तो हमने सुना कि मोरक्को में कोई तीस आदमियों को गोली मार दी गई, फिर स्पेन में एक जत्थे को, इसके बाद अबीसीनिया में एक जत्थे को, इसके बाद चीन में और सबसे अन्त में रूस में एक स्टेशन-मास्टर को इसलिए

गोली मार दी गई कि उसने अपने आदेशों की खिचड़ी बना दी थी, जिससे एक दुर्घटना होगई। अतः हम यह नहीं कह सकते कि निरंकुशता और सैनिक कानून से उत्पन्न बुराइयां हर हालत में असम्भव हैं। आखिर आयरलैण्ड समुद्र के उस पार ही तो है, और कुछ ही समय पहले फ्री स्टेट शासन ने कुछ सप्ताह में ही ८० से अधिक लोगों की जानें ले लीं।

दूसरे, स्पेन के बारे में हम लोग बहुत ज्यादा सोचते हैं। मेरे घनिष्ठ मित्र और साथी ज्योफ्रे गैरेट और कुछ दूसरे दोस्त काफी समय तक वहां रहे हैं। जिस प्रकार कांग्रेस मेरी अपेक्षा आपके अधिक निकट है, उसी प्रकार स्पेन आपकी बनिस्वत मेरे ज्यादा नजदीक है। और, जब मैं हिंदुस्तान में था तो यह सुना था कि बहुत-से लोग—हिंदुस्तानी और ब्रिटिश—यदि हालात पैदा हुए और क्रोध को इतना भड़का सके कि ब्रिटेन में समर्थन मिल जाय—राजद्रोह को हिंसात्मक तरीके से दबा देने के लिए बिल्कुल निर्दयता से तयार हैं। मेरा यह विचार था और आज भी है कि शासन-भार सम्हाल लेना कांग्रेस के लिए इस दृष्टि से अच्छा रहेगा कि वह अत्यावश्यक कानून बना सके और जब उसका समय आवेगा तब वह शासनारूढ़ हो जायगा। यही नहीं, यदि कांग्रेस ने शासन नहीं सम्हाला, तो भी नाममात्र के और बेकार मंत्रिमंडल जारी रहेंगे, और सम्प्रदायवादी तथा स्वार्थी लोग अपने गुटों तथा मजहबों की वहां जड़ें जमायेंगे, जैसाकि उन्होंने पिछले बीस साल में किया है।

फिर भी इन सबका कोई खास महत्व नहीं है। सिर्फ एक बात है। कृपया आप यह न सोचें कि आपका यह पत्र लिखना निरर्थक रहा। मैंने इसे बहुत ध्यानपूर्वक पढ़ा है और यह अधिकांशतः बहुत सही लगनेवाला है। यदि आप मुस्लिम फिरकापरस्ती से पल्ला छुड़ा सके तो यह एक बड़ी शानदार बात होगी। आपका पत्र पढ़ने के बाद मुझे यह विश्वास हो रहा है कि आप जीत रहे हैं, फिरकापरस्ती के विरुद्ध भी। मैं जानता हूं, यदि आपकी धमकी ने बहुत भयंकर रूप धारण किया तो ये लोग शारीरिक बल पर उतर आयेंगे। आप मुस्लिम राजाओं और मौलवियों के खिलाफ हैं। जो हो, मैं आपकी सफलता की कामना करता हूं। मालूम नहीं, आपके मन में यह विचार कैसे आया कि मैं हिंदुस्तान में कांग्रेस

को सबसे अधिक महत्वपूर्ण आन्दोलन नहीं मानता। यदि मैं आपकी मदद कर सकता हूं तो जरूर करूंगा। यह कहना कठिन है कि कैसे, लेकिन अवसर आयेंगे और तब आप मुझपर भरोसा रख सकते हैं।

आपका,

एडवर्ड टामसन

अब 'ग्लिम्पसेज ऑव वर्ल्ड हिस्ट्री' (विश्व-इतिहास की झलक) के बारे में आप जिस स्थिति में हैं, उसमें होते हुए मेरा खयाल है कि आप दूसरों पर यह असर छोड़ना नहीं चाहेंगे कि आप अंग्रेजों का छिद्रान्वेषण कर रहे हैं। यदि आपकी जगह मैं होता तो उनसे सम्बन्धित सारे अंशों को बहुत नजदीक से देखता। विचित्र बात तो यह है कि इस पुस्तक के उन स्थलों का, जहां आपने हिंदुस्तान के गहरे दुःख-दर्द की चर्चा की है, मुझपर यह असर हुआ कि आप वहां सज्जन तथा आश्चर्यजनक रूप से उदार हैं। जहां कोई भारतीय प्रश्न नहीं है और जहां अधिकतर इतिहासज्ञों की राय में मामला इंग्लैण्ड के अनुकूल है, वहां आप उदार नहीं रहे हैं।

मेरे विचार में इस पुस्तक का सबसे घटिया भाग वह है, जिसमें नेपोलियन का वर्णन दिया गया है। मैं स्वीकार करता हूं कि आपकी नेपोलियन-पूजा मेरी समझ में नहीं आती। ये पन्ने मुझे कलई पुते-से लगे। डक डे एंघेन अथवा न्यूरेम्बर्ग के उस पुस्तक-विक्रेता की निर्मम हत्या का कोई उल्लेख नहीं है। और, मैं यह निश्चित रूप से कह सकता हूं कि अंग्रेजों की उनकी कमीनेपन की आलोचना में संतुलन का अभाव है, क्योंकि १८१४ में अभूतपूर्व सद्व्यवहार प्राप्त करने के बाद नेपोलियन के विद्रोह तथा यूरोप में फिर खून की नदी बहाने के कारण स्वयं उसके ही बोरबन अथवा प्रशावासियों ने उसे अपराधी की तरह गोली मार दी होती। मैं जानता हूं कि उसके दमन के बाद बहुत समय तक हर जगह प्रतिक्रिया का बोलबाला रहा और उसके विजेता भी बहुत बुरे लोग थे। इसके विपरीत उनकी दृष्टि में वह नगण्य था और वे सब-के-सब राजाओं के दैवी अधिकारों पर बल देते थे, इसलिए उन्हें योंही छोड़ दिया। मुझे यह कुछ आश्चर्यजनक लगता है कि आपने नेपोलियन-

पूजा और सेंट हेलीना के शहीद होने के बारे में इतनी गम्भीरता दिखाई है। मेरी अलमारी में सेंट हेलीना के वास्तविक बलिदान के बारे में एक पुरानी किताब पड़ी है। क्या आपके मन में हडसन लो के लिए कोई दुःख नहीं हो सकता, जो कुचक्री और झगड़ालू लोगों के बीच पड़ा था, जहां नेपोलियन पुनः सत्ता-प्राप्ति के लिए जी-तोड़ कोशिश करता रहा ? उन पृष्ठों को देखने से वास्तव में ऐसा लगता है कि आप सफल हिंसा के प्रशंसक हैं। आप उन्हें योंही नहीं रहने दे सकते। उनके कारण आपकी किताब की बड़ी अप्रतिष्ठा होती है। आप स्वयं अपने मन से पूछकर देखियें कि वाटरलू के बाद अथवा १८१४ में मित्र-राष्ट्र क्या करते अथवा उन्हें क्या करना चाहिए था और तब क्या होता ?

फिर मेरा विचार है, महायुद्ध के प्रश्न पर आप हमारे राष्ट्र के प्रति अनुदार हैं। आपके शब्दों और वाक्यों को देखकर लगता है कि हमने जो कुछ किया, उसका तात्पर्य समुद्री नाकेबन्दी करना और रुपया देना ही था। यहां आप वही गलती करते दीखते हैं जो कभी-कभी मैंने स्वयं की है, अर्थात् तटस्थ वाद-विवाद-सभा की भावना से ऐसी बातों के बारे में लिखना, जो उनसे सम्बन्धित लोगों के लिए गहरी वास्तविकता रखती हैं, दुखदायी हैं और जिनकी जड़ में तीव्र भावावेश है। कृपया ऐसी मनोवैज्ञानिक गलती न करें, क्योंकि ऐसी गलतियों के लिए लोगों को बुरी तरह भुगतना पड़ता है। आपके विचार में जलियांवाला बाग में जनरल डायर की मनःस्थिति का स्पष्टीकरण करते हुए मैंने ऐसी ही भूल की है। मेरा खयाल है कि आप भी ऐसा ही करते हैं, जब आप ऐसे महायुद्ध के बारे में लिखते हैं, जिसमें हमारे राष्ट्र ने अपने दस लाख से ऊपर आदर्श नौजवान खो दिये और जिसमें हममें से प्रत्येक का या तो भाई या बेटा या दिली दोस्त काम आ गये।

अब मित्र-राष्ट्रों के सवाल को लीजिये। मेरा खयाल है कि बेल्जियम पर हमले के नतीजों को आप गलत ढंग से प्रस्तुत करते हैं। सिर्फ इस बात से कि आक्रमणकारी सेना चौबीस घंटे पहले ही तैयार हो चुकी थी, वह साबित नहीं होता, जो आप कहते हैं। मैं इतना जरूर जानता हूं कि फ्रांस के साथ मिल जाना हमारे लिए जरूरी था, नहीं तो बाद में हमारा

दमन कर दिया जाता। लेकिन उस जमाने से गुजरनेवाले एक अंग्रेज की हैसियत से मैं यह भी जानता हूं कि बेल्जियम पर अचानक हमला और वहां के राजा की अपील के कारण ही समूचा राष्ट्र एकबद्ध होकर सरकार के समर्थन पर आ गया। हमला अचानक इसलिए रहा कि कुछ समय से राष्ट्रों की प्रवृति अपने वचन-पालन की ओर दिखाई दे रही थी और हमारे लोगों को आक्रमण के कुछ दिन पहले तक इस बात की ज़रा भी आशंका न थी कि हम भी उसकी लपेट में आ जायंगे। आप कहते हैं कि कांग्रेस की चर्चा करते समय मैं गलती करता हूं, क्या दूसरे राष्ट्रों की चर्चा करते हुए वही गलती—सरकारों या कार्यपालिकाओं या नेताओं के गुटों के पीछे जो जनता है उसे भूल जाने की गलती—आप नहीं करते?

जो हो, आपके जैसा व्यक्ति, जो भयंकर कष्टों के बाद भी इतना उत्कृष्ट ग्रंथ 'मेरी कहानी' लिख सका, वह किसी परदेशी को, चाहे वह अंग्रेज हो या अमरीकी, ऐसी किसी चीज को देखने का मौका नहीं दे सकता, जिसपर आपके हस्ताक्षर हों, फिर भी जो इस पुस्तक की भावना के प्रतिकूल हो।

मेरे विचार से अन्य कई अलग-अलग संदर्भों में भी उदारता का ऐसा ही अभाव है। लेकिन मैं उनके विस्तृत अध्ययन से आपको कष्ट नहीं देना चाहूंगा (वस्तुतः मैंने उसका कोई सविस्तर अध्ययन किया भी नहीं है)। आपकी यह पुस्तक एक चमत्कारपूर्ण चीज है, मैं इतना ही कहूंगा (बल्कि पहले ही कहना चाहिए था)। यहां कुछ छोटे-मोटे स्थलों का उल्लेख कर रहा हूं, जो कल शाम पुस्तक पर फिर सरसरी निगाह डालते समय मुझे दिखाई दे गये।

पृष्ठ ६५९[1]—१८३० में मैटकाफ सुप्रीम कौंसिल का सदस्य था, १८३४ तक। वह गवर्नर (जनरल) नहीं था या १८३५ तक (आगरा का) गवर्नर नहीं था।

पृष्ठ ६७३—नीचे से चार लाइनें, 'प्रोग्रेस' वस्तुतः 'प्रोफेस' की जगह गलती से आ गया है।

---

[1] ये पृष्ठ-संख्याएं पुस्तक के अंग्रेजी संस्करण के अनुसार हैं। —सं०

पृष्ठ ६७४—राममोहन राय वस्तुतः सती-प्रथा के उन्मूलन को जबर्दस्ती का और अविवेकपूर्ण मानते थे, लेकिन बाद में उन्होंने इसका समर्थन किया। मेरी जानकारी में ऐसा कोई शासक नहीं है, जिसने पहले इसका निषेध किया हो, सिवा आसानी से नियन्त्रित क्षेत्रों के— जैसे सेरामपुर में डेनो ने (मेरा ख़याल है), गोवा में पुर्तगालियों ने, तंजोर में मराठों ने—अंतिम निषेध के रूप में यह असफल रहा; १९ वीं शताब्दी में भी तंजोर में विधवाएं जलाई जाती रहीं। लेकिन, आपको यह भूलना नहीं चाहिए कि स्थानीय कारणों ने भी निषेध को आसान बनाया। मलाबार व्यवहारतः मातृ-प्रधान है, इसलिए उस तट पर सती होना सम्भव न था और यही भावना दक्षिण भारत में फैल गई थी। मुगल सम्राटों की तरह मेटकाफ ने दिल्ली में सती-प्रथा पर रोक लगाई थी। निश्चित रूप से, ऐसे भी मौक़े आये, जबकि अकबर और शाहजहां के राजकाल में निषेध का उल्लंघन किया गया। मुझे एक ऐसा स्थल भी मिला है, जबकि मद्रास के ब्रिटिश गवर्नर ने १६६५ में एक महिला को नगर में सती होने से रोक दिया था।

हाथ में मेरे पास कोई सन्दर्भ मौजूद नहीं है, मेरे नोट कहीं पड़े हुए हैं, फिर भी यह कहना बिल्कुल गलत है कि मराठों ने सती-प्रथा पर रोक लगाई थी। पूना-स्थित ब्रिटिश एजेण्ट मेलेट का मकान संगम के निकट था, बाद में एल्फिंस्टन उसमें रहने लगे थे। सती देखते-देखते मेलेट का तो मन ही उकता गया था। सच तो यह है कि मराठे भारत की सर्वाधिक मानवीय परम्परा का एक प्रकार से प्रतिनिधित्व करते हैं और यह कि सतियों की संख्या उनके प्रदेश में अपेक्षाकृत कम थी। शिवाजी के साथ उनके गुलाम (स्त्री और पुरुष दोनों) और जानवरों के जल मरने की रोमांचकारी विनाश-लीला के बाद भी ऐसी काफी घटनाएं मिलती हैं। मराठों के लिए मेरे मन में बड़ी प्रशंसा और स्नेह है, जिनकी मानवता उस समय निश्चित रूप से हमारे अपने लोगों से ऊंची थी, लेकिन तंजौर को छोड़कर उन्होंने कहीं भी सती का निषेध नहीं किया था और तंजौर में भी वे असफल रहे। सती-निषेध एक ही वीर पुरुष का काम था और वह थे लार्ड विलियम बेंटिक। इसलिए ऐसा

क्यों नहीं कहते और क्यों नहीं उनका प्रसंग आने पर एक वीर पुरुष का अभिनन्दन करने का आनन्द प्राप्त करते ? उदाहरणार्थ, उज्जैन में दुनियाभर की सती-संबंधी कहानियां प्रचलित हैं, और अहिल्याबाई की पुत्र-वधू महेश्वर में जल मरी थी ।

पृष्ठ ६८४—हां, अब आप यह मानते हैं कि महर्षि रवीन्द्रनाथ के पिता थे ।

पृष्ठ ६९९—पेकिंग की लूट के सम्बन्ध में अनेक ताजा कहानियां सुनने को मिली हैं और चीन के साथ किये गए बर्ताव के सम्बन्ध में आपने जो कुछ कहा है, उससे मैं अधिकांशतः सहमत हूं, लेकिन साफ-साफ कह दूं कि आपकी इस मान्यता से मैं सहमत नहीं कि हमेशा मिशनरियों की ही दुष्टता रही थी । जिन मिशनरियों की हत्या की गई, उनमें से अधिकतर लोग 'चायना इनलैण्ड मिशन' से सम्बन्धित थे । यह एक ऐसी संस्था है, जिसका कोई खास प्रभुत्व नहीं है और जिसके सदस्य बिल्कुल गरीब और अकिंचन हैं और जिनका अपना कोई प्रभाव नहीं है और अपने वेतनों के लिए भी जिन्हें दैव पर भरोसा करना पड़ता है । यही नहीं, यह भी सच है कि जब जर्मनी ने मिशनरियों की हत्या को क्याउचो पर कब्जा करने का बहाना बनाया, परन्तु उस समय भी ब्रिटिश मिशनरी संस्था इस बात के लिए सतर्क रहीं कि उनकी अपनी सरकार मिशनरियों की हत्या का लाभ उठाने का यत्न न करने पाये । ऐसा उन्होंने अतीत का ध्यान करते हुए ही किया था, फिर भी उद्देश्य पूर्णतः सही न होने पर भी उन्हें श्रेय दिया जाना चाहिए । मेरे खयाल में आपने मिशनरियों पर सही ढंग से प्रकाश नहीं डाला है और चीन-सम्बन्धी अध्याय समाप्त हो जाने पर वे इस रूप में सामने आते हैं, मानो सारा मामला उन्हींको लेकर था, हालांकि बात ऐसी नहीं है । पेकिंग की लूट का नेतृत्व मिशनरियों ने किया, इसका आपके पास क्या प्रमाण है, मैं जानना चाहूंगा ? (पृष्ठ ७२२) । मुझे इसमें सन्देह है ।

पृष्ठ ७८०—फारस । यदि ब्रिटेन वास्तव में चाहता तो युद्ध की समाप्ति के बाद फारस को आसानी से अपने राज्य में मिला सकता था अथवा उसे अपनी सुरक्षा में ले सकता था । मेरी समझ में नहीं आता कि कमाल

के हाथ यूनान की उस पराजय का इससे क्या संबंध है, जिसे आपने आसानी के लिए ब्रिटेन की 'योजनाओं' की हार कहा; लेकिन शायद आपको पता होगा कि इसकी पूरी जिम्मेदारी व्यक्तिगत रूप से लायड जार्ज पर ही है। तथ्य तो ये थे कि हमारी सरकार को भी पता था कि साम्राज्यवादी कार्रवाई तबतक काफी बड़े हिस्से पर अपना अधिकार जमा चुकी थी और इसलिए फारस के मामले को, जैसा वह था, चलने दिया। अपने पुराने मित्र मोहम्मेरा के शेख को भी अपनी आजादी खोने दी तथा उसे तेहरान जाने देना पड़ा और उसका इलाका फारस में मिला दिया गया। मेरे खयाल में आप यह नहीं समझते कि युद्ध की समाप्ति के समय हर क्षेत्र में कैसी गड़बड़ मच रही थी। वोल्शेविकों का महत्व हम सचमुच नहीं समझ रहे थे। जिस समय उन्होंने अपनी महत्ता स्थापित की, उस समय मैं टाइग्रिस नदी के पूरब में था और मुझे याद है, हमारे जनरलों को (नवम्बर १९१७ में) कितना विस्मय और अचरज हो रहा था। क्या आप नहीं समझते कि जो चीज बाद में हुई, उसे आपने पहले ही स्थान दे दिया है ?

पृ. ८८२—हां, अंग्रेजों ने वाशिंगटन को जलाया और यह बड़ी गलती थी, परन्तु यह सब पहले अमरीकनों द्वारा कनाडियन भवनों और संग्रहालयों के जलाये जाने के प्रतिशोधस्वरूप जान-बूझकर किया गया था।

पृ. ९६८—मैंने इसका जिक्र किया है। मैं इसपर विश्वास नहीं करता कि "इंग्लैण्ड बहुत पहले ही निर्णय पर पहुंच चुका था और बेल्जियम का प्रश्न एक सुविधाजनक बहाने के रूप में सामने आ गया।" आपका तात्पर्य क्या है, मैं अच्छी तरह समझता हूं, लेकिन और कोई इसे इस अनुदारतापूर्ण ढंग से प्रस्तुत करता है तो इसका खमयाजा उसे ही भुगतना पड़ेगा और इसका दण्ड यह होगा कि उसकी रचना ठोस होते हुए भी लोग उसपर विश्वास नहीं करेंगे। नेहरू, आप किसी चीज को इस ढंग से पेश नहीं कर सकते ! आप न तो रामानन्द चटर्जी हैं और न शैलेन्द्रनाथ घोष। आप जवाहरलाल नेहरू हैं और यदि कोई अंग्रेज आपको तथ्य का स्मरण दिलाता है तो उसे जरूर माफ कर देंगे।

पृ. ४६५—अब डायनों को जीवित जलाने के बारे में। डायनें यूरोप महाद्वीप और स्काटलैण्ड में जलाई जाती थीं। मेरे खयाल में ऐसा एक भी उदाहरण नहीं मिलेगा, जबकि इंग्लैण्ड में कोई भी डायन जलाई गई हो। वे या तो डुबो दी जाती थीं अथवा फांसी पर लटका दी जाती थीं। यह एक छोटी बात है। लेकिन, मुझे याद है, उस गधे शैलेन्द्रनाथ घोष, 'अमरीका में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष' ने बोस्टन में यह कहा था, "१८१८ में आप लोग बोस्टन कामन में डायनों को जीवित जला रहे थे" और तब सभी श्रोता (स्त्री और पुरुष दोनों—विशेषतः महिलाएं) एक साथ खड़े होगये और जोरों से "नहीं" कहकर चिल्लाये, क्योंकि तीन बातें हैं, जिनपर बोस्टनवालों के कान जल्दी खड़े होते हैं; वह साल १८१८ नहीं, बल्कि १६९० है, वह स्थान बोस्टन नहीं, सेलम है और उन्हें फांसी पर लटकाया जाता था, जलाया नहीं जाता था। उसके बाद उसके एक-एक शब्द का हरेक ने मखौल उड़ाया।

प्रसंगवश यह कह दूं कि अंग्रेजों में तीन गुण हैं, जिनका कुछ श्रेय आप हम लोगों को दे सकते हैं, वैसे तो मानव-जाति की कहानी बड़ी दर्दनाक है। हमने किसी अन्य राष्ट्र से बहुत पहले डायनों के वध को रोक दिया था, हमने कानूनी उत्पीड़न पहले ही समाप्त कर दिया था, और गुलामों की मुक्ति का मूल्य चुकाकर तो हमने वास्तव में बड़ा शानदार काम किया। कम-से-कम जहां हम श्रेय के हकदार हैं, वहां तो श्रेय दीजिये ही। इससे निश्चय ही आप द्वारा की गई आलोचना को और बल मिलेगा।

पृ. ४८१ और अन्य स्थलों पर 'अशोक'[1] 'असोक' का भद्दा रूप है।

पृ. ५०७—'ब्लैक होल' पर सही टिप्पणी यह नहीं है कि यह मनगढ़ंत बात थी (इसपर मेरा विश्वास नहीं है) बल्कि यह है कि यह घटना एक मूर्खता थी, जान-बूझकर नहीं की गई थी और १९१८ में मोपला बंदियों की घुटन के बिल्कुल समान थी (जो अपेक्षाकृत कम क्षम्य है)।

[1] अंग्रेजी में 'असोक' लिखा जाता है। इसीसे यह भ्रम पैदा हुआ है।

पृ. ५१०—जब आप कहते हैं कि मराठों ने अंग्रेजों को "दक्षिण में" हरा दिया तो मेरे खयाल में आप 'दक्खन' का शब्दशः अनुवाद करते हैं। हमारे लिए दक्षिण का अर्थ होता है मैसूर के आसपास का क्षेत्र, बरगांव का इलाका नहीं।

पृ. ५५९—यह यकीन करना कठिन है कि आप दरअसल यह मानते हैं कि तेरह उपनिवेशों के साथ झगड़ा उतना साधारण था, जितना आप समझते हैं, और जिन युद्धों से उनको ही लाभ मिल रहा था, उनका खर्चा न देकर वे जो नीचता दिखा रहे थे, उसके खिलाफ ब्रिटेन का कोई पक्ष नहीं था। मेरे खयाल में ये सारे अंश इस पुस्तक के सामान्य स्तर से नीचे ठहरते हैं। मैं समझता हूं, कोई भी अच्छा अमरीकी इतिहासज्ञ इसे स्वीकार नहीं करेगा। यदि बेल्जियम पर हमला ब्रिटेन की पूर्व-निश्चित योजना के लिए सिर्फ बहाना ही था तो "प्रतिनिधित्व के बिना कर लगाने" के सम्बन्ध में आप क्या कहेंगे? फिर भी आप जानते हैं कि इसके कारण कितने गम्भीर थे, और इन तेरह उपनिवेशों में सहयोग इतना कम था कि जब गृह-युद्ध छिड़ा तो दक्षिण को यह दावा करने का अच्छा कानूनी आधार मिल गया कि वह संघ से सम्बन्ध-विच्छेद करने को स्वतन्त्र है। १७८९ में वर्जिनिया के खिलाफ इस अधिकार को चुनौती भी नहीं दी गई (मेरा खयाल है)। लेकिन आप यह जानते हैं कि अमरीकी इतिहासकारों की नई पीढ़ी उस क्रान्तिकारी युद्ध के बारे में क्या लिखती है।

पृ. ६०९—अंत में एक बात और। अन्तिम पैरे के बारे में आप खुद अपने मन से पूछिये और कभी बताइये कि आपकी राय में "उदार और सौजन्यपूर्ण व्यवहार" क्या होता?

ये सब बातें महान चमत्कारपूर्ण कार्य की तुच्छ आलोचनाएं हैं। आपने ऐसा चाहा भी था। लेकिन मैं अच्छी तरह जानता हूं कि जो बातें बिना कोई हानि पहुंचाये कही जा सकती हैं, वही लिखे जाने पर हमेशा आपत्तिजनक लगती हैं।...इन सबसे भी बड़ी मेरी शिकायत यह है कि उन तीनों किताबों पर आपने मेरा नाम नहीं लिखा। 'एडवर्ड टामसन को जवाहरलाल नेहरू की ओर से,' ऐसा लिखकर तीन पर्चियां आपको मेरे

पास भेजनी चाहिए ।

इन्दिरा से यह कहना न भूलें कि वह जब इधर आयें तो हमसे जरूर मिले । पेट्रिशिया एग्न्यू मेरी पत्नी की प्रिय सखियों में से एक की पुत्री है (वह महिला हाल ही में मर गईं) ।

शुभकामनाओं सहित,

आपका,

एडवर्ड टामसन

१७५. महात्मा गांधी की ओर से

सेगांव, वर्धा

२५ जून १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

सरहदी नीति पर तुम्हारा वक्तव्य अभी मिला । खानसाहब ने और मैंने उसे पढ़ लिया । मुझे वह बहुत पसन्द आया । पता नहीं स्पेनवालों और अंग्रेजों की बमबारी बिल्कुल एक-सी है या नहीं । क्या अंग्रेजों द्वारा की हुई हानि की मात्रा मालूम कर ली गई है ? अंग्रेजों की बमबारी का प्रकट कारण क्या बताया गया है ? इस बात पर हँसना भी मत और क्रोध भी न करना कि मैं इन चीजों को उतना अच्छी तरह नहीं जानता जितना तुम जानते हो । अखबारों को जितना कम मैं देखता हूं उससे मुझे बहुत कम ही जानकारी हो सकती है । मगर मेरे प्रश्नों का उत्तर देने का कष्ट मत उठाना । तुम्हारे बयान पर होनेवाली प्रतिक्रियाओं का मैं ध्यान रखूंगा । शायद उनसे कुछ प्रकाश पड़े । और जो कमी रह जाय वह तो जब हम मिलेंगे तब तुम पूरी कर ही दोगे । आशा है, मौलाना आयंगे । लेकिन वह न आ सकें तो भी मैं चाहूंगा कि तुम तो उस तारीख पर अवश्य पहुंच जाओ । इन तीनों शान्त दिनों में हम साथ रहेंगे ।

आशा है, इन्दू अच्छी तरह होगी ।

सस्नेह,

बापू

१७६. खलीकुज़्ज़मा के नाम

इलाहाबाद
२७ जून १९३७

प्रिय खलीक़,

कल तीसरे पहर मैंने २५ जून के 'खिलाफ़त' अखबार में बुन्देलखंड चुनाव के बारे में एक बयान पढ़ा। इस बयान पर तुमको शामिल करके छः-सात आदमियों के दस्तखत थे। उसे पढ़कर मुझे ताज्जुब हुआ। मैं कभी नहीं सोच सकता था कि इस किस्म के दस्तावेज पर तुम्हारा नाम हो सकता है। किसी भी हालत में मेरे लिए इसपर यकीन करना मुश्किल होता, लेकिन पिछले अप्रैल में हमारी बातचीत के बाद तो मैं अपनी आंखों पर भरोसा ही नहीं कर सकता था। पिछले दो-तीन महीनों में हिंदुस्तान में होनेवाली घटनाओं के साथ मेरा ताल्लुक छूट गया था, कुछ तो मेरी बीमारी की वजह से और कुछ मेरी गैर-मौजूदगी से। लेकिन घटनाओं से उसूलों में बहुत असर नहीं पड़ता और तुमने 'खिलाफ़त' में जो कुछ कहा है वह उन उसूलों की जड़ काटता है। पहले हम इस बारे में एकराय नहीं रहे होंगे कि हमें किस किस्म के काम करने चाहिए। लेकिन मेरा खयाल हमेशा यह रहा कि हमारे आम नजरिये एक-से हैं। मालूम होता है, मेरे समझने में भूल थी। जहांतक मेरा ताल्लुक है, मैंने पहले भी अपने प्यारे उसूलों का ज्यादा खयाल रखकर काम किया है और आगे भी करूंगा। मेरे कामों से जो नतीजे हो सकते हैं उनका खयाल न पहले बहुत रखा, न अब रखूंगा। खयाल और काम की इस बुनियाद के बिना मैं पानी पर एक तिनके की तरह हो जाऊंगा, जो हर हवा के झोंके के साथ इधर-उधर जाता है और उसका कोई डांड या कुतुबनुमा (कम्पास) नहीं है। मैंने जिंदगी को अक्सर एक भारी बोझा पाया है, लेकिन मुझे इस बात से कुछ तसल्ली रही है कि मैंने कुछ पक्के उसूलों पर कायम रहने की कोशिश की है।

... तुमने जो कुछ किया, या कहा जाता है कि किया, उसपर मुझे गहरा अफ़सोस है। मेरा फर्ज है, तुमको बताऊं कि इस मामले में मैं क्या महसूस करता हूं। मैंने सोचा था और मेरे खयाल से मुझे यह उम्मीद रखने का हक था कि तुम मुझसे चर्चा किये बिना ऐसा कोई कदम नहीं उठाओगे। तुम्हारे

यकीन दिलाने का मेरे मन पर असर हुआ था और मैं उसकी कद्र करता था। अब चूंकि यह यकीन नहीं रहा, इसलिए कुदरतन मुझे कुछ-न-कुछ चोट महसूस हुई।

यह खत बिल्कुल निजी है। सियासी नज़रिये से इसे लिखने का मेरा काम नहीं था।

तुम्हारा,
जवाहरलाल

[चौधरी खलीकुज्जमा यू. पी. के एक खास कांग्रेसी थे। बाद में वह मुस्लिम लीग में शामिल हो गये। विभाजन के होते ही वह पाकिस्तान चले गये।]

१७७. महात्मा गांधी की ओर से

सेगांव

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारे खत मुझे अच्छे लगते हैं। उनसे जो जानकारी मुझे होती है वह अन्यथा नहीं मिलती। इस्लाम-पक्षी आन्दोलन का मुझे कुछ भी पता नहीं था। उसपर मुझे आश्चर्य नहीं होता। मुलाकात पर तुमने मेरा बयान देखा होगा।

मेरा तरीका तुम्हें मालूम है। मुझे इन मुलाकातों से बल मिलता है। यह देखना तुम्हारा और दूसरे साथियों का काम है कि देश को, मैं जो कुछ करता हूं उसका, ठीक-ठीक अर्थ प्राप्त हो। मैं चाहता हूं कि तुम राजाजी के बारे में कोई चिन्ता नहीं करोगे। वह बिल्कुल ठीक हैं। फिर भी मैं चाहूंगा कि तुम अपनी शंकाएं उनपर प्रकट कर दो। मैं १५ तारीख की शाम को शान्तिनिकेतन के लिए और उसके बाद १९ तारीख को वालिकांदा के लिए रवाना हो रहा हूं।

सस्नेह,
बापू

१७८. महात्मा गांधी की ओर से

सेगांव, वर्धा
१० जुलाई १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

कल मौलानासाहब से मेरी लम्बी बातें हुईं। यदि प्रान्तों में मुस्लिम

मंत्रियों का चुनाव उनकी सलाह से करना है तो मेरे विचार से इस आशय की सार्वजनिक घोषणा कर देना बेहतर होगा। मौलाना सहमत हैं। यदि तुम्हारे खयाल में कार्य-समिति से परामर्श लेना चाहिए तो मेरा सुझाव है कि तार से ले लिया जाय।

मैं आशा करता हूं कि तुम हिन्दी-उर्दू के विषय में जल्दी ही लिखोगे।

सस्नेह,
बापू

[मौलाना से मतलब यहां मौलाना अबुल कलाम आजाद से है।]

१७९. महात्मा गांधी की ओर से

सेगांव, वर्धा
१५ जुलाई १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

आज चुनाव का दिन है। मैं निगाह रख रहा हूं।

परन्तु यह पत्र मैं तुम्हें यह बताने के लिए लिख रहा हूं कि मैंने कांग्रेसी मंत्रिमंडलों के कार्यकलाप और सम्बन्धित विषयों पर लिखना शुरू कर दिया है। मुझे हिचकिचाहट थी, परन्तु मैंने देखा कि जब मेरी भावनाएं इतनी तीव्र होगई हैं तो लिखना मेरा कर्तव्य है। काश मैं तुम्हें 'हरिजन' के लिए मेरे लेख की अंतिम प्रति दे सकता! यह महादेव देख लेंगे। यदि उनके पास नकल होगी तो भेज देंगे। तुम देख लो तो मुझे बताना कि मैं इस तरह लिखता रहूं क्या? सारी स्थिति से निपटने के तुम्हारे काम में मुझे हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए, क्योंकि देश के लिए मैं तुम्हारा अधिक-से-अधिक उपयोग चाहता हूं। यदि मेरे लिखने से तुम्हें अशान्ति हो तो मेरे हाथों निश्चित हानि होगी।

आशा है, मौलाना-संबंधी मेरा पत्र तुम्हें मिला होगा।

सस्नेह,
बापू

१८०. महात्मा गांधी की ओर से

सेगांव, वर्धा
२२ जुलाई १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

मौलानासाहब एक दिन वर्धा ठहर गये थे और हमारी लम्बी बातचीत हुई। उन्होंने मुझे विधान-सभा के मुस्लिम लीगी और कांग्रेसी सदस्यों के समझौते का मसविदा दिखाया। मेरे खयाल से यह अच्छा दस्तावेज है। परन्तु उन्होंने मुझे बताया कि तुम्हें तो यह पसन्द है, टंडनजी को नहीं है। मौलाना के सुझाव के अनुसार मैंने इसके विषय में टंडनजी को लिखा है। आपत्ति क्या है ?

पांचसौ रुपया वेतन, बड़ी-सी कोठी और मोटर पर कड़ी आलोचनाएं हो रही हैं। मैं जितना ही सोचता हूं उतना शुरू में ही इतनी फजूलखर्ची बुरी मालूम होती है। इसके बारे में मैंने मौलाना से भी बातचीत की थी।

इन्दू कैसी है ?

सस्नेह,
बापू

१८१. वल्लभभाई पटेल की ओर से

कांग्रेस हाउस,
बम्बई
३० जुलाई १९३७

गोपनीय

प्रिय जवाहरलाल,

पिछले दिनों में कुछ महत्वपूर्ण सवाल उठ खड़े हुए थे, इसलिए मैं २७ तारीख को वर्धा चला गया था। वहां से आज सुबह लौटा हूं। बहुत-से मामलों पर बापू से लंबा मशविरा किया। विभिन्न प्रान्तों में जो वेतन और भत्ते निश्चित किये गए हैं, उनके समाचारों से स्पष्ट ही उन्हें ज्यादा चिंता है। मैं तुम्हारी मंजूरी के लिए, जिन विभिन्न मुद्दों पर मेरी बापू से चर्चा हुई, उनपर हिदायतों के मसविदे की एक नकल तुम्हें भेज रहा हूं। तुम इसमें जो रद्दोबदल करना चाहो, कर सकते हो। परन्तु चूंकि मामला बहुत जरूरी है, इसलिए छहों मुख्य मंत्रियों के पास मैं उनके मार्ग-दर्शन के लिए हिदायतों के मसविदे की अग्रिम नकलें भेज रहा हूं, साथ ही उन्हें यह सूचना

दे दी है कि यह मसविदा उन्हें अग्रिम रूप में भेजा जाता है, लेकिन इसपर तुम्हारी मंजूरी बाकी है। जब वह मुझे मिल जायगी तभी अंतिम हिदायतें उन्हें भेजी जायंगी।

समाचार-पत्रों की रिपोर्ट से मुझे मालूम होता है कि तुम्हारे प्रान्त में मुस्लिम लीग से जो बात-चीत चल रही थी वह असफल रही। फिलहाल किसी ऐसे समझौते की अपेक्षा करना शायद ज्यादा जल्दबाजी होगी।

वर्धा से लौटने के बाद श्री नरीमान ने अपनी बदले की मुहीम जारी रखना ही पसन्द किया है। अखबारी मुहीम बहुत भद्दी और आतंककारी हो गई है। श्री नरीमान का ताजा वक्तव्य तुमने समाचार-पत्रों में जरूर देखा होगा। यह साफ होगया है कि अब वह किसी तरह जांच को टालना चाहते हैं, जिसको वह पहले चाहते थे, और इसका दोष वह कार्य-समिति पर डालने की कोशिश कर रहे हैं। अभी बापू के साथ उनका पत्र-व्यवहार चल रहा है और शायद बापू शीघ्र ही इस संबंध में अंतिम वक्तव्य जारी करें। नरीमान ने उनको लिखे तुम्हारे पत्र के कुछ अंश उद्धृत किये हैं। अगर मैं इसे जरूरी समझूं तो मैं तुमसे इस पूरे पत्र को प्रकाशित करने की इजाजत चाहूंगा। फिलहाल मैंने अपने-आपको सारे विवाद से अलग रखा है, जोकि पूरी तरह इकतरफा है। तुम्हारे लिए भी जरूरी हो सकता है कि बापू के ऐलान के बाद भी एक आखिरी बयान दो। इसलिए उनके सारे पत्र-व्यवहार की नकलें मैं कल तुम्हारी जानकारी के लिए भेज रहा हूं।

कल मैं कुछ दिनों के लिए अहमदाबाद जा रहा हूं। आशा है, तुम ठीक होंगे ?

तुम्हारा,

फिर से—

वल्लभभाई

इस चिट्ठी पर हस्ताक्षर करने के बाद मुझे ए. पी. से ज्ञात हुआ कि नरीमान ने एक लम्बा वक्तव्य देकर जांचवाली अपनी मांग को वापस ले लिया है, परन्तु उन्होंने अपने आरोप वापस नहीं लिये हैं, जोकि एक शरीफ आदमी की तरह उनको करना चाहिए था। अब बापू एक वक्तव्य देंगे और उसके बाद तुम अंतिम वक्तव्य दे सकते हो।

पं. जवाहरलाल नेहरू

इलाहाबाद।

१८२. महात्मा गांधी की ओर से

सेगांव, वर्धा,
३० जुलाई १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

आशा है कि महादेव ने तुम्हारे हिन्दी-सम्बन्धी निवन्ध की पहुंच के अलावा कल यह भी लिख दिया है कि वाइसराय ने मुझे ४ तारीख को दिल्ली बुलाया है। महज मिलने की खातिर मैंने उत्तर दिया है कि उन्होंने मेरी इच्छा पहले से ही जान ली है, क्योंकि खानसाहव पर लगाये गए प्रतिबन्ध और सीमा प्रान्त के दौरे की मेरी इच्छा के बारे में मैं उनसे मुलाकात मांगना चाहता था।

तदनसार मैं ४ तारीख को दिल्ली पहुंच रहा हूं। मुलाकात ११.३० बजे है। इसलिए मुझे आशा है कि मैं उसी दिन वापस होकर ५ तारीख को सेगांव पहुंच सकूंगा।

परन्तु यह पत्र तो तुम्हें ज़ाकिर के खत की नकल भेजने के लिए है। वह सव मेरे उस पत्र का उत्तर था, जिसमें मैंने बम्बई के हाल के दंगे और हिन्दी-उर्दू के कम्बख्त विवाद पर अपनी प्रतिक्रिया लिखी थी। मैंने सोचा कि इस विचारपूर्ण पत्र को तुम्हें भी बताऊं।

मैं झांसी के चुनाव को बुरी हार नहीं मानता। यह सम्मानपूर्ण पराजय है और उससे यह आशा होती है कि यदि हम परिश्रम करते रहे तो मुसलमानों तक कांग्रेस का सन्देश कारगर ढंग से पहुंचा सकते हैं। परन्तु मेरी यह राय अब भी कायम है कि केवल सन्देश ही पहुंचाया जाय और साथ-साथ देहातों में ठोस काम न किया जाय तो अन्ततः हमारा उद्देश्य पूरा नहीं होगा। परन्तु यह सब इसपर निर्भर है कि हम शक्ति किस ढंग से पैदा करना चाहते हैं।

मेहरअली का मद्रास का भाषण मेरे लिए आंखें खोलनेवाला है। पता नहीं, वह सामान्य समाजवादी विचार को कहांतक व्यक्त करते हैं। राजाजी ने मुझे उनके भाषणवाली एक कतरन भेजी थी। आशा है, उन्होंने तुम्हें भी एक नकल भेजी होगी। मैं इसे बुरा भाषण कहता हूं। तुम्हें इसपर ध्यान देना चाहिए। कांग्रेस की नीति के, जैसी मैं समझता हूं, यह विरुद्ध पड़ता है।

मद्रास में रॉय का भाषण भी हुआ। मैं मान लेता हूं कि तुम्हें ऐसी सब कतरनें मिलती होंगी। फिर भी तुरन्त तुम्हारे देखने के लिए कतरनें साथ में हैं, जो प्यारेलाल ने मेरे लिए तैयार की हैं। राय मुझे भी लिखते रहे हैं। तुम्हें उनका ताजा पत्र देखना चाहिए। मैंने फाड़ न दिया हो तो वह इस पत्र के साथ होगा। उनके रवैये पर तुम्हारी क्या प्रतिक्रिया है ? जैसा मैं तुम्हें पहले ही बता चुका हूं, उन्हें समझना मेरे लिए कठिन हो रहा है।

खादी को तुम्हारा दिया हुआ नाम 'आजादी की वर्दी' जबतक हिंदुस्तान में अंग्रेजी भाषा बोली जायगी तबतक जिन्दा रहेगा। इस मनोहर शब्द-प्रयोग के पीछे जो विचार है उसका पूरी तरह हिन्दी में अनुवाद करने के लिए किसी प्रथम श्रेणी के कवि की आवश्यकता होगी। मेरे लिए वह केवल काव्य ही नहीं, परन्तु वह एक ऐसे महान सत्य का प्रतिपादन करता है, जिसका पूरा अर्थ समझना अभी शेष है। सस्नेह,

बापू

यद्यपि राय के भाषण से संबंधित अंश मेहरअलीवाले अंश के बाद ही आता है फिर भी इसका यह अर्थ नहीं है कि वह मेहरअली के अंश के मुकाबले का है।

१८३. महात्मा गांधी की ओर से

रेल में,

३ अगस्त १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

यह मैं दिल्ली ले जानेवाली रेलगाड़ी में लिख रहा हूं। मेरा प्राक्कथन या जो कुछ भी इसे कहो, साथ में है। मैं तुम्हें कोई लम्बी-चौड़ी चीज नहीं दे सका।

तुमने पश्तो और पंजाबी के पहले 'शायद' रखा है। मेरा सुझाव है कि तुम यह क्रिया-विशेषण हटा दो। मिसाल के लिए खानसाहब पश्तो को कभी नहीं छोड़ेंगे। मेरा खयाल है, वह किसी लिपि में लिखी जाती है। भूल गया हूं किसमें ? और पंजाबी ? गुरुमुखी में लिखी हुई पंजाबी के लिए सिक्ख तो मर मिटेंगे। उस लिपि में कोई शोभा नहीं है। लेकिन मुझे मालूम हुआ है कि सिंधी की तरह वह भी सिक्खों को हिन्दुओं से अलग करने के लिए खास तौर

पर ईजाद की गई थी। यह बात हो या न हो, फिलहाल तो सिक्खों को गुरुमुखी छोड़ने को राजी करना मुझे असंभव लगता है।

तुमने चारों दक्षिणी भाषाओं में से कोई सामान्य लिपि तैयार करने का सुझाव दिया है। मुझे उनके लिए चारों की मिली-जुली लिपि की तरह ही देवनागरी भी उतनी ही आसान मालूम होती है। व्यावहारिक दृष्टि से उन चारों में से मिली-जुली लिपि का आविष्कार हो नहीं सकता। इसलिए मेरा सुझाव है कि तुम सिर्फ इतनी ही सामान्य सिफारिश करो कि जहां कहीं संभव हो, जिन प्रान्तीय भाषाओं का संस्कृत से सजीव सम्बन्ध है, वे अगर उसकी शाखाएं नहीं हैं तो उन्हें संशोधित देवनागरी अपना लेनी चाहिए। तुम्हें मालूम होगा कि यह प्रचार जारी है।

बस, अगर तुम मेरी तरह सोचते हो तो तुम्हें यह आशा प्रकट करने में संकोच नहीं होना चाहिए कि चूंकि किसी-न-किसी दिन हिन्दुओं और मुसलमानों को दिल से एक होना ही है, इसलिए जो हिन्दुस्तानी बोलते हैं उन्हें भी एक देवनागरी लिपि ही अपना लेनी चाहिए, क्योंकि वह अधिक वैज्ञानिक है और संस्कृत से निकली हुई भाषाओं की महान प्रान्तीय लिपियों के निकट है।

अगर तुम मेरे सुझाव आंशिक या पूरे स्वीकार कर लेते हो तो तुम्हें आवश्यक परिवर्तन मंजूर करते हुए स्थानों को खोज निकालने में कोई कठिनाई नहीं होगी। तुम्हारा समय बचाने की खातिर मैंने स्वयं ही ऐसा करने का इरादा किया था, परन्तु अभी मुझे अपने शरीर पर इतना भार नहीं डालना चाहिए।

मैं यह मान लेता हूं कि तुम्हारे सुझाव के मेरे समर्थन का यह अर्थ नहीं है कि मैं हिन्दी-सम्मेलनवालों से हिन्दी शब्द का प्रयोग छोड़ देने को कहूं। मुझे विश्वास है कि तुम्हारा यह मतलब नहीं हो सकता। मैं जहांतक सोच सकता हूं, मैं उस मतलब को अंतिम सीमा तक ले गया हूं।

अगर तुम मेरे सुझावों को स्वीकार नहीं कर सकते तो ठीक-ठीक बात बताने की खातिर 'प्राक्कथन' में यह वाक्य जोड़ देना बेहतर होगा : "बहरहाल, मुझे उनका सामान्य ढंग पर समर्थन करने में कोई संकोच नहीं है।"

आशा है, इन्दू का आपरेशन सकुशल हो जायगा।

सस्नेह,
बापू

१८४. महात्मा गांधी की ओर से

३ अगस्त १९३७

मैंने हिन्दू-उर्दू के प्रश्न पर जवाहरलाल नेहरू का निबंध बहुत ध्यान से पढ़ा है। पिछले दिनों यह प्रश्न एक दुर्भाग्यपूर्ण विवाद बन गया है। इसने जो भद्दा मोड़ लिया है, उसके लिए कोई उचित कारण नहीं है। कुछ भी हो, राष्ट्रीय और शिक्षा की शुद्ध दृष्टि से सोचा जाय तो जवाहरलाल के निबंध से सारे विषय के उचित निरूपण में मूल्यवान सहायता मिलेगी। उनके प्रस्तावों को सम्वन्धित लोग व्यापक रूप में स्वीकार कर लें तो उनसे यह विवाद, जिसने साम्प्रदायिक रंग ले लिया है, खत्म हो जाना चाहिए। सुझाव विस्तृत और बहुत माकूल हैं।

मो. क. गांधी

१८५. महात्मा गांधी की ओर से

रेल में
४ अगस्त १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

मैं मूर्ख हूं। तुम्हारा पत्र मिलने पर मैंने अपनी फाइल देखी तो मेहरअली के भाषणवाली कतरन मिल गई। मैंने उनके भाषण का, न कि मसानी के भाषण का, हवाला दिया था।

यह पत्र मुझे वर्धा ले जानेवाली बहुत हिलनेवाली गाड़ी में लिखा जा रहा है। अब रात के १०.३० बज गये हैं। मैं नींद से जाग उठा, भाषण का खयाल आया और ढूंढने लगा। कलवाला डिब्बा ज्यादा अच्छा था।

मैं वाइसराय से मिला। तुमने सरकारी विज्ञप्ति देखी होगी। उसमें मुलाकात का सार सही-सही दिया गया है। कुछ और प्रासंगिक बातें भी थीं, जिनका जिक्र कृपालानी तुमसे मिलने पर करेंगे। एक बात का उल्लेख यहां कर दूं। जैसे मुझे बुलाया वैसे शायद वह तुम्हें भी बुलायें। मैंने उनसे कहा

कि अगर निमंत्रण भेजा जायगा तो शायद तुम इन्कार नहीं करोगे। क्या मैंने ठीक कहा ?

मुझे अफसोस है कि मैंने राय के भाषण तुमपर थोपे। लेकिन मैंने सोचा कि तुम उन्हें पढ़ोगे तो जरूर ही, लेकिन मुझे उनपर तुम्हारी राय जानने की जल्दी नहीं है। अगर तुम पहले ही पढ़ न चुके हो तो सुविधा से पढ़ लेना।

मैंने जान लिया कि तुम इन्दू का आपरेशन बम्बई में करा रहे हो।

सस्नेह,

बापू

१८६. महादेव देसाई की ओर से

झांसी के निकट कहीं

४ अगस्त १९३७

प्रिय जवाहरभाई,

वायदे के अनुसार पत्र लिखना दिन में तो मेरे लिए असंभव था और चूंकि मुझे बापू का पत्र झांसी में १.५० बजे डाक में डालना है, इसलिए उसीके साथ अपना पत्र भी रख रहा हूं। जिन मुद्दों पर मुझे तुम्हारे सामने जोर देना था वे ये हैं :

१. पंजाबी और पश्तो के पहले 'शायद' नहीं रहना चाहिए। (पृ. २ और १०) बापू ने सुझाव दे दिया है, मैं इतना और कहना चाहता हूं कि सिक्खों के अनेक उत्तम गीत (गुरु नानक के और दूसरों के) जो उनकी गौरवशाली सम्पत्ति हैं, पंजाबी में हैं और यदि सिक्ख उसकी मान्यता के लिए नहीं लड़ते तोभी हमें उसे मान्यता देनी चाहिए। पश्तो के बारे में मुझे याद है कि खानसाहब मुझसे कह रहे थे कि पश्तो की सिंधी जैसी—एक प्रकार का उर्दू का संशोधन—एक लिपि है और सारे पठान यही भाषा बोलते हैं। खानसाहब और कुछ और लोग उर्दू जानते और बोलते हैं, क्योंकि उन्होंने कोशिश करके सीख ली है। दूसरे लोग--विशाल जन-साधारण—उर्दू बिल्कुल नहीं जानते।

२. पृ. ४ (पैरा १ और २) और ११ (पैरा ६ और ७)। सिंधी—तुम्हारा सुझाव है कि उर्दूमें सिंधी समा जाय। इससे उल्टी बात क्यों न हो ?

सिंधी ने उर्दू को सम्पूर्ण बनाकर अपनाया है और उसमें कुछ अक्षर ऐसे उच्चारणों के लिए जोड़ लिये हैं, जो संस्कृत में तो हैं, मगर अरबी और फारसी में नहीं हैं। बुरा न माना जाय तो यों कह सकते हैं कि उसने उर्दू को सम्पूर्ण बना दिया है। इसलिए सिंधी में उर्दू समा सकती है, न कि उर्दू में सिंधी। परन्तु मेरा अनुमान है कि तुम्हारा भी यही मतलब है। इतना ही है कि तुम उसे कम बुरा लगनेवाले ढंग से पेश करोगे। मेरा कहना ठीक है ?

दक्षिण भारत—(पृ. ४ के ऊपर-ही-ऊपर) एक पैरा है। उससे अनजाने में अलगाव की शरारत की ज्वाला भड़क सकती है। कुछ कट्टरपंथी आंध्रों, तामिलों और कन्नड़ों ने हिन्दी के विरुद्ध एक हल्ला-सा खड़ा कर दिया है। सही बात तो यह है कि विद्वानों ने मान लिया है कि एक तरफ तामिल और मलयालम और दूसरी तरफ देवनागरी में या एक ओर तेलुगु और कन्नड़ तथा दूसरी ओर देवनागरी में जितनी निकटता है उतनी तामिल, मलयालम, तेलुगु और कन्नड़ में आपस में नहीं है। भाषा की हैसियत से तामिल और मलयालम का एक वर्ग है और तेलुगु तथा कन्नड़ का दूसरा है। राजगोपालाचार्य ने एक लेख-माला लिखकर सुझाया है कि देवनागरी में कुछ परिवर्तन कर दिये जायं ताकि दक्षिण भारत के लिए उसे अपनाना आसान हो जाय और यह तथ्य कि लाखों दक्षिण भारतीयों ने थोड़े-से प्रयत्न से देवनागरी लिपि सीख ली है, सारे दक्षिण के लिए देवनागरी लिपि के पक्ष में एक प्रबल युक्ति है।

उस दिन मुझे एक दक्षिण भारतीय सौराष्ट्र से (जनसंख्या लगभग ५०,०००) एक पत्र मिला था। उसका कहना है कि उनके यहां तेलुगु-तामिल की मिली-जुली लिपि थी जो अब नष्ट हो गई है, परन्तु वह तामिल और तेलुगु के बजाय देवनागरी को खुशी से अपना लेंगे।

तामिलों, आन्ध्रों और कन्नड़ियों को हमारे धर्म-ग्रन्थ पढ़ने पड़ते हैं, जो सब संस्कृत में हैं। उनसे देवनागरी को अपनाने की आशा रखना उनपर बोझा डालना नहीं है, परन्तु धर्म-शास्त्रों के उनके अध्ययन में सुविधा पैदा करना है।

अन्त में, यदि चारों दक्षिणी भाषाएं अपनी ही कोई मिली-जुली लिपि चाहती हों (जो मेरे खयाल से असम्भव है) तो सदा के लिए यह संभावना

छोड़ दो कि उत्तर भारतवाले दक्षिण भारतीय भाषाएं सीखेंगे। कोई सामान्य लिपि होने से उत्तर भारतीयों को तामिल और तेलुगु जैसी भाषाएं सीखने की प्रवल प्रेरणा मिलेगी। (मैं इन दो का ही उल्लेख कर रहा हूं, क्योंकि मलयालम तो तामिल और संस्कृत का सम्मिश्रण है और कन्नड़ का कोई ऐंसा साहित्य नहीं, जिसकी तुलना किसी भी प्रकार से तामिल या तेलुगु के साथ की जा सके।)

अव एक ही अन्तिम विचार रह गया है, जिसका वर्णन करना मैं भूल गया था। तेलुगु, कन्नड़ और मलयालम में संस्कृत शव्दों की वहुत वड़ी मिलावट हैं। यह भंडार दिन-दिन बढ़ रहा है और तामिल भी अव संस्कृत-शव्द वड़ी संख्या में ले रही है। देवनागरी को अपनाने से यह प्रक्रिया तेज होगी।

इसलिए मुझे जरूर आशा है कि तुम देवनागरी और फारसी, इन दो लिपियों से अधिक का विचार नहीं करोगे।

३. पृ. ७. यह वड़ा मामूली-सा मुद्दा है और जानकारी-भर की बात है। तुम कहते हो कि जन-साधारण के साथ सम्पर्क वढ़ाने में बंगला सबसे आगे पहुंची है। मुझे मालूम नहीं है। मैं उस दिन अमिय चक्रवर्ती से बातें कर रहा था। उन्होंने कहा कि रवीन्द्रनाथ ठाकुर की पुस्तकों की भी बहुत बिक्री नहीं हुई है। 'गीतांजली' की इन सव वर्षों में दो हजार प्रतियां, 'जीवन-स्मृति' की अधिक-से-अधिक एक हजार प्रतियां इत्यादि। पता नहीं इस तथ्य से तुम वही नतीजा निकालोगे या नहीं, जो मैं निकालता हूं।

परन्तु झांसी समीप आ रही है। अव मुझे वन्द करना चाहिए। इसे दुबारा देखने के लिए मेरे पास एक क्षण भी नहीं है। खराब अक्षरों के लिए क्षमा करना। यह कसूर मेरा नहीं, गाड़ी का है।

तुम्हारा,
महादेव

१८७. महात्मा गांधी की ओर से

सेगांव, वर्धा
८ अगस्त १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

मेहरअली के भाषण-सम्बन्धी तुम्हारे पत्र के एक मुद्दे पर लिखना मैं

भूल गया था। मेरा मतलब ग्रीष्म विद्यालय के कैदियों को छोड़ने के बारे में राजाजी की विज्ञप्ति से है। तुम्हारा पत्र प्राप्त होने से पहले मैं उसे पढ़ चुका था, परन्तु उसपर मैंने बुरा नहीं माना। मेरा विचार है कि चूंकि तुमने तो ग्रीष्म विद्यालय के छात्रों की कार्रवाई को पसन्द किया था और मैं किसी भी तरह से उसका समर्थन नहीं कर सकता था, इसलिए मेरे विचार से इस बात की ओर ध्यान दिलाना आवश्यक था कि रिहाई का अर्थ इस कानून-भंग का समर्थन करना नहीं है, और कानून-भंग तो था ही। मुझे अन्देशा है कि जब कांग्रेस सत्ता में होगी तब वह अकसर वही भाषा काम में लेगी, जो उसके पहले के शासक लिया करते थे। फिर भी उसका हेतु दूसरा ही होगा।

आशा है, बम्बई में आपरेशन के सिलसिले में तुम्हारी अच्छी गुजर रही होगी। जब वह हो जाय तो तार देना।

सस्नेह,

बापू

यदि नरीमान तुम्हारे पास आयें तो उन्हें जांच करने की आज्ञा दे देना। मुझे खेद है कि बम्बई में तुम्हें इस मामले की झंझट रहेगी। महादेव तुम्हें बतायेंगे कि मैं क्या करता रहा हूं।

बापू

१८८. अर्न्स्ट तोल्ले की ओर से

सान्ता मोनिका, केलीफोर्निया

२३ अगस्त १९३७

प्रिय जवाहरलाल नेहरू,

२९ जुलाई के पत्र के लिए अनेक धन्यवाद। इतना कष्ट उठाकर आपने कितनी कृपा दिखाई है। आपके प्रयत्नों के लिए मैं आपका बहुत कृतज्ञ हूं। आप खुद सोच सकते हैं कि अगर मेरी पुस्तकें हिन्दी और मराठी में छप सकीं तो मुझे कितनी प्रसन्नता होगी।

क्या आपको मेरा सुखान्त नाटक 'नो मोर पीस' (अब और शान्ति नहीं) मिला ? मैंने प्रकाशक से आपको एक प्रति भेजने के लिए कहा था।

मेरी पत्नी हॉलीवुड में मेरे साथ रह रही हैं। वह बहुत बीमार थीं,

लेकिन सौभाग्यवश अब वह अस्पताल से लौट आई हैं और तेजी से स्वास्थ्य लाभ कर रही हैं।

मैं चीन की घटनाओं का बड़ी उत्सुकता और दिलचस्पी के साथ अध्ययन कर रहा हूं। ऐसा लगता है कि चीनियों के शक्तिशाली विरोध के बावजूद जापान जो प्रदेश लेना चाहता है उसे लेने में वह सफल हो जायगा। राष्ट्रसंघ की भी आजकल कैसी हास्यास्पद स्थिति है! जो संस्था मूलतः जनता के अधिकारों की रक्षा करने और उसपर होनेवाले आक्रमणों को रोकने के लिए स्थापित की गई थी, वह इतनी असहाय होगई है कि निर्णय करना तो दूर, वह आजकल की आवश्यक समस्याओं पर विचार तक करने का साहस नहीं करती है।

हमारे इस युग की सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि फासिस्ट और अर्द्ध-फासिस्ट राज्य तो इस बात को जानते हैं कि उन्हें क्या चाहिए और अपने संकल्प को कार्यान्वित करने के लिए वे हर प्रकार के साधनों का प्रयोग कर रहे हैं, जबकि प्रजातंत्र देश दूषित अन्तःकरण के साथ रक्षा की चिन्ता में लगे हुए हैं और सत्य का सामना करना नहीं चाहते, बल्कि समझौतों के रास्तों से भाग निकलना चाहते हैं, जिनसे कोई समस्या हल नहीं होती। स्पेन इसका एक दूसरा उदाहरण है। आजकल हमारे चारों ओर एक ऐसी उथल-पुथल मची हुई है, जो कि सारे संसार की राष्ट्रीय और सामाजिक समस्याओं तक फैल जायगी। १९१४ में जो विश्वयुद्ध आरम्भ हुआ था, वह वास्तव में कभी समाप्त नहीं हुआ और पता नहीं कबतक चलता रहेगा। हम तो बस यह आशाभर कर सकते हैं कि जो कुछ भी अवश्यम्भावी रूप से होगा, उससे इस संसार के सभी आवश्यक अंग छिन्न-भिन्न नहीं हो जायंगे।

जर्मनी से मुझे जो समाचार मिले हैं, उनसे पता चलता है कि नाजी-विरोधी संघर्ष बड़ी बहादुरी के साथ चल रहा है, किन्तु इतना शक्तिशाली नहीं है कि आज की राजसत्ता पर प्रभाव डाल सके। जबतक कि सचमुच ही संकट की स्थिति पैदा न हो जाय तबतक उन नाजियों की शक्ति को स्वीकार करना ही होगा, जो कि जर्मनी को बड़ी ही निर्दयता के साथ युद्ध के लिए तैयार कर रहे हैं। इसका यह मतलब नहीं है कि मुझे इस बात में विश्वास है कि वे निकट भविष्य में ही युद्ध करना चाहते हैं। डराकर और

बहकाकर वे विजय प्राप्त करने की चेष्टा कर रहे हैं और उस युद्ध से वचना चाहते हैं जो उनके लिए अंत में घातक सिद्ध हो सकता है। इस बीच वे फासिस्ट शक्तियों को संगठित करने की चेष्टा कर रहे हैं। कुछ दिन हुए मैंने 'न्यूयार्क टाइम्स' में एक लेख पढ़ा था, जिसमें दक्षिण अमरीका के कुछ भागों में नाजियों के प्रभाव के सम्बन्ध में बहुत-से आश्चर्यजनक तथ्य प्रकाशित हुए थे।

मेरी पत्नी और मैं आपको और आपकी पुत्री को अपनी शुभकामनाएं और स्नेहपूर्ण आदर भेजते हैं।

आपसे फिर पत्र पाने की आशा में,

आपका,
अर्न्स्ट तोल्ले

१८९. हाजी मिरज़ा अली (फकीर साहब इपी) की ओर से

[ईपी के फकीर उत्तर-पश्चिम सीमाप्रान्त के कुछ कबीलों के लोकप्रिय नेता थे। वह ब्रिटिश सरकार के घोषित शत्रु थे और उसे काफी परेशान करते थे।]

शीवाल
(वजीरिस्तान)
१० रज्जब, १३५६ हिजरी
१६ सितम्बर १९३७

आज़ादीपसन्द लोगों के रहनुमा और हिन्दुस्तानी कौम के सरदार के नाम

हम आपकी खिदमत में अदब के साथ यह अर्ज करते हैं:

हिन्दुस्तान के बहुत-से अखबारों के जरिए हमें यह मालूम हुआ कि वहां एक सिरे से दूसरे सिरे तक हमारे खिलाफ बहुत ज़बर्दस्त प्रोपेगैण्डा किया जा रहा है (यह कहने के लिए माफ़ी चाहता हूं)। हमारी बिल्कुल वही कैफ़ियत है जो मसीहा की थी, हालांकि उनके मुकाबले में हमलोग बहुत नाचीज़ हैं। हम लोग सच्चाई और जोश के साथ अपनी क़ौम और अपने मुल्क के तईं वफादार हैं। यही वजह है कि इस ज़माने के ईसाइयत के दुश्मन, जो हमें अपनी आज़ादी से महरूम रखना चाहते हैं, हमारे ख़िलाफ़

वदनीयती से भरा झूठ बोल रहे हैं। लेकिन, जनावेआला, आपको हम इतमी-नान दिलाना चाहते हैं कि जबतक इन ज़ालिमों को हम लोग अपनी तलवार की नोक से अपनी ज़मीन से निकाल वाहर न करेंगे या इस कोशिश में खुद फ़ना न हो जायंगे तबतक सरकार हिन्द और हमारे दरमियान अमन क़ायम नहीं हो सकता। हमारे नज़दीक आजादी का एक लमहा आरामतलब ग़ुलामी के हज़ारों वरस से वेहतर है। (चाहे इस ग़ुलामी से हमारी दुनियवी कैफ़ि-यत कितनी ही वेहतर क्यों न हो।)

आगे हम यह अर्ज़ और करना चाहते हैं कि बन्नू और डेरा इस्माइल खां के क़रीव वक़्तन-फ-वक़्तन लोगों के ज़बर्दस्ती उड़ाने और डकैतियों के जो मामले सुनाई पड़ते हैं वे सव अंग्रेजों के एजेण्टों की कारस्तानी के नतीजे हैं। इन वदफेलियों की हम हरगिज़ ताईद नहीं करते। हमारा मज़हब इस तरह की वातों की साफ़-साफ़ मुमानियत करता है। जो लोग इस क़िस्म के जुर्म करते हैं, इस्लाम के वमूजिब वे लोग 'ज़ालिम' और 'मरदूद' हैं। इस्लाम से उनका कोई ताल्लुक़ नहीं। इस्लाम अमन और सुलह का पैग़ाम लाया है। वह ज़ुल्म और ज़्यादती की ताईद नहीं करता। ऐसी हरकतें साफ़ तौर पर शैतानी और हैवानी हैं।

इस्लाम दुनिया में तनाजों और जंग को पसन्द नहीं करता। फिर भी जुल्म के आगे सिर झुका देना या एक वुज़दिल की तरह ज़ालिम के आगे घुटने टेक देना इस्लाम की तालीम के खिलाफ़ है। इस्लाम ने वुज़दिलों पर बदतरीन लानतें भेजी हैं।

आपको, जनावेआला, यह सफ़ाई के साथ समझना है कि ज़ालिम सरकार और हमारे वीच आज की यह लड़ाई पूरे तौर पर इसलिए चल रही है कि हमारी आज़ादी के ऊपर विला वजह हमला किया गया है, न कि इसलिए कि हममें इस्लाम के प्रोपेगैन्डा का जुनून है। अल्लाह ने मज़हब के मामले में क़ुरानशरीफ़ में यह साफ़-साफ़ हिदायत दी है कि—"ला इकराहा फ़िद्दीन" यानी मज़हब के मामले में कोई ज़वर्दस्ती नहीं होनी चाहिए। इसका मतलब यह है कि मज़हब के मामले में हर शख़्स आज़ाद है। जिस मज़हब को चाहे वह क़ुवूल करे और मुसलमान, हिन्दू या ईसाई जो चाहे बने। इसलिए क़ुरान से यह साफ़ है कि मज़हब लोगों के मिज़ाज़, अन्द-

रूनी कैफ़ियत और रूहानी नज़रिये से ताल्लुक़ रखता है। इसीलिए क़यामत का एक दिन मुक़र्रर है कि जब, इन्सान नहीं, बल्कि अल्लाह इस ज़िन्दगी के आमालों के लिए सज़ा और इनाम अता करेंगे। मोहतरम जनाब ! आप हमारी बात पर ऐतबार कीजिये कि वज़ीरिस्तान की इस वक़्त जो कैफ़ियत है, उसके लिए (अंग्रेजों के) ज़ुल्म और हिन्द सरकार की हमला करके हमारे मुल्क को फतह करने की नीति जिम्मेवार है। इसके अलावा और कोई वजह नहीं। चुनांचे जबतक हम लोगों में ज़िंदगी की एक सांस भी बाक़ी है तबतक हमारे लिए ग़ुलामी क़ुबूल करना नामुमकिन है। अल्लाह के फजल से हिन्दुस्तान भी अपनेको इनके हाथों से आज़ाद करे और हम भी तलवार की नोक पर अपने मुल्क को आज़ाद करें। अल्लाह हमारी मुराद पूरी करे! आमीन !

मोहर
हाजी मिरजा अली
(फ़कीरसाहब इपी)

१९०. रवीन्द्रनाथ टैगोर की ओर से

शांतिनिकेतन, बंगाल
२० सितम्बर १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

यह आश्वासन मेरे लिए बड़ा मूल्यवान् है कि विपत्ति के समय और जब जीवन की पकड़ सहसा ढीली पड़ जाय तो तुम्हारे स्नेह का पूरा-पूरा भरोसा कर सकता हूं। इससे मेरा हृदय बहुत अभिभूत हुआ है।

सस्नेह तुम्हारा,
रवीन्द्रनाथ टैगोर

१९१. महात्मा गांधी की ओर से

सेगांव, वर्धा
१ अक्तूबर १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

जहांतक मेरा संबंध है, पट्टाभि भी अच्छा चुनाव है। परन्तु मेरे खयाल से समिति के सदस्यों की राय ले लेनी चाहिए।

पता नहीं, वर्धा में होनेवाले शिक्षा-सम्मेलन में शरीक होने का समय तुम निकाल सकोगे या नहीं। इसके लिए तुम्हें निमंत्रण गया है। समय निकाल सको तो मैं चाहता हूं कि आ जाओ। परन्तु मैं यह नहीं चाहता कि अधिक महत्वपूर्ण कार्य के कारण तुम्हारी और कहीं आवश्यकता हो तो भी तुम सम्मेलन के लिए समय निकालो। बेशक दो दिन तक ज़ोर पड़ेगा, परन्तु तुम आ सको तो तुम्हारे रहने से शांति मिलेगी।

सस्नेह,

बापू

फिर से—

इस पत्र के साथ सैयद हबीब से मेरे पत्र-व्यवहार का परिणाम एक चैक और पत्र के रूप में भेजा जा रहा है। मैंने तुम्हारे साथ हुई बातचीत का जिक्र किये बिना उन्हें इधर-उधर से रुपया ले लेने के लिए खूब झिड़क दिया है।

१९२. रवीन्द्रनाथ टैगोर की ओर से

शांतिनिकेतन, बंगाल

१० अक्तूबर १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारे पत्र के लिए धन्यवाद। तुमसे मिलने की संभावना से मैं बहुत ही प्रफुल्लित हूं और तुम्हें शांतिनिकेतन आने का कष्ट नहीं उठाना पड़ेगा। मैं कल ११ अक्तूबर से लगाकर महीने के अंत तक कलकत्ता में रहने की आशा करता हूं और २५ तारीख को, या जिस दिन भी तुम्हें सुविधा हो, तुमसे मिलने की उम्मीद करूंगा। तुम जानते हो, मैं अभी तक डाक्टरों के हाथों में हूं, जो प्रकृति की ओर से यह धमकी दे रहे हैं कि अगर मैंने कलकत्ता में बिजली का एक जादुई इलाज कराना स्वीकार न किया तो बड़ा भयंकर दंड मिलेगा। तुम्हें समय मिले तो एक बार नहीं, दो बार मुझसे मिल जाना। मैं शायद शहर के बाहर किसी उद्यान-भवन में ठहरूंगा, और कृष्ण जो उन दिनों कलकत्ता में होगा, तुम्हें मेरे पास ले आयेगा।

सप्रेम तुम्हारा,

रवीन्द्रनाथ टैगोर

१९३. महात्मा गांधी की ओर से

सेगांव, वर्धा
१२ अक्तूबर १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। २५ तारीख को यहां से चलकर कलकत्ता आने की कोशिश कर रहा हूं। तब मुझे कांग्रेसी प्रान्तों में मंत्रि-मंडलों के कार्य-कलाप का सब हाल बताना। आशा है, गले की खराबी और जुकाम थोड़े ही दिन रहे होंगे और तुमने पंजाब का श्रम बरदाश्त कर लिया होगा। सरहद की जलवायु तो बहुत ही सुखद होगी। मैं कितना चाहता हूं कि कम-से-कम कुछ ही समय के लिए तुम आराम कर लो।

सस्नेह,
बापू

१९४. अमृत शेर गिल की ओर से

[अमृत शेर गिल एक अत्यंत प्रतिभाशाली कलाकार थीं, जिन्होंने अपना शिक्षण पेरिस में पाया था और जिनके चित्र पेरिस की अकादमी में प्रदर्शित किये गए थे। चढ़ती जवानी में ही अचानक उनकी मौत हो गई।]

६ नवम्बर १९३७

कुछ ही देर पहले किसीने मुझसे कहा, "आप जानती हैं, जवाहरलाल नेहरू बीमार हैं।" मुझे यह पता नहीं था। मैं कभी अखबार नहीं पढ़ती।

आपके बारे में बहुत सोचती रहती हूं, परन्तु किसी तरह—शायद इसी कारण—आपको कभी लिखने की इच्छा अनुभव नहीं हुई।

आपका पत्र पाकर चकित रह गई। कितना आनंददायक था वह! क्या यह भी कहने की बात है?

पुस्तक के लिए धन्यवाद।

आम तौर पर जीवनियों और आत्मकथाओं को मैं नापसंद करती हूं। उनमें झूठ की भनक होती है। उनमें अतिरंजना अथवा प्रदर्शन-मात्र होता है। परन्तु मेरा विचार है, आपकी आत्मकथा मुझे पसंद आयेगी। कभी-कभी आप अपने प्रभा-मंडल को पृथक् कर सकते हैं। आपमें यह कहने की क्षमता है कि "पहले-पहल मैंने जब समुद्र को देखा", जबकि दूसरे लोग कहेंगे, "पहले-पहल जब समुद्र ने हमारे दर्शन किये।"

चाहती हूं, आपको ज्यादा अच्छी तरह जानूं। मैं उन लोगों के प्रति हमेशा आकर्षित हो जाती हूं, जो इतने परिपूर्ण होते हैं कि वे असंगत हो सकते हैं—बेसुरे हुए बिना, और जो अपने पीछे शोक-संताप के स्निग्ध धागे नहीं छोड़ जाते।

मैं नहीं सोचती कि जीवन की दहलीज पर ही मनुष्य अपने-आपको अव्यवस्थित अनुभव करता है। होता यह है कि दहलीज पार करने के बाद ही उसे पता चलता है कि जो चीजें पहले सीधी-सादी मालूम होती थीं और जो भावनाएं स्वाभाविक लगती थीं, वे ही अब अनंतगुनी यातनादायक और जटिल हैं, और यह कि केवल असंगति में ही संगति होती है।

परन्तु वास्तव में आपका मस्तिष्क व्यवस्थित है।

मुझे नहीं लगता कि आपकी मेरे चित्रों में सचमुच रुचि थी। आपकी आंखें मेरे चित्रों पर थीं, परन्तु आप उन्हें देख नहीं रहे थे।

आप कठोर नहीं हैं। आपका चेहरा सौम्य हैं। मुझे आपका चेहरा अच्छा लगता है। वह भावनाशील, उद्दीपक और साथ ही अनासक्त है। मैं एक कतरन साथ भेजती हूं, जिसे मेरे पिता ने आपके पास भेजने के लिए कहा था। यह उन्हींकी लिखी हुई थी।

आपकी,

अमृत शेर गिल

१९५. सरोजिनी नायडू की ओर से

महात्माजी का शिविर,

कलकत्ता

१३ नवम्बर १९३७

मेरे प्रिय जवाहर,

मैं बैबेल की मीनार के आधुनिक संस्करण में से लिख रही हूं। वह 'छोटा-सा इन्सान'[1] निस्संग भाव से बैठा पालक और उबली हुई ककड़ी खाने में लगा है, जबकि उसके चारों ओर संसार-सागर के ज्वार-भाटे में बंगाली, गुजराती, अंग्रेजी और हिंदी की लहरें उठकर परस्पर टकरा रही हैं। विधान और उसके साथी इस व्यक्ति की अपनी स्वास्थ्य-संबंधी हठ-

---

१. गांधीजी की ओर संकेत है।

धर्मी से हार चुके हैं। वह सचमुच बीमार है . . . सिर्फ अपनी सूखी हड्डियों और पतले होते खून में ही नहीं, बल्कि अपनी अंतरात्मा के भीतर। . . . अपने युग का सबसे अकेला और व्यथित व्यक्ति . . . हिन्दुस्तान का भाग्य-पुरुष अपनी ही नियति के कगार के समीप . . .

दूसरे भाग्य-पुरुष तुम हो, जिसे मैं जन्मदिवस की शुभकामनाएं भेज रही हूं।. . . तुम्हें ये वक्त से नहीं मिलेंगी, क्योंकि बीच में तुम्हारी चिट्ठी-पत्री पर नजर रखनेवाली आंखें हैं। पिछले दो वर्षों से मैं तुम्हारे अकेलेपन को और तुम्हारी व्यथा को तीव्रता से अनुभव करती रही हूं और यह जानती रही हूं कि और कोई चारा नहीं।

आनेवाले वर्ष में तुम्हारे लिए मैं क्या कामना करूं ? सुख ? शांति ? विजय ? ये सब वस्तुएं जो दूसरे लोगों को परम प्रिय हैं, तुम्हारे लिए गौण हैं . . . करीब-करीब प्रासंगिक हैं। . . . मैं तुम्हारे लिए कामना करती हूं, मेरे प्रिय . . . अटूट निष्ठा और अडिग सत्य, साहस की, अपने कांटोंभरे रास्ते पर चलने के लिए, जिसपर आजादी की—व्यक्तिगत स्वाधीनता की नहीं, बल्कि एक राष्ट्र की मुक्ति की—चाह रखनेवाले और उसे अपनी जान से अधिक मूल्यवान माननेवाले हर व्यक्ति को चलना ही पड़ता है। उस ढालू और खतरनाक रास्ते पर तुम मजबूती के साथ चलते जाना . . . चाहे दुःख और व्यथा और अकेलापन ही हाथ आये। याद रखना कि तुम्हारे सारे त्याग का चरम वरदान स्वाधीनता ही है . . . पर तुम्हें अकेले नहीं चलना पड़ेगा।

तुम्हारी स्नेहमयी,
सरोजिनी

१९६. महात्मा गांधी के नाम

१४ नवम्बर १९३७

प्रिय बापू,

महासमिति के अधिवेशन पर आपका लेख मैंने अभी पढ़ा। मैसूर के प्रस्ताव के बारे में आपने कहा है कि महासमिति के लिए वह अनियमित था। यदि ऐसी बात थी तब तो उसपर चर्चा होने देना मेरा काम नहीं था और मुझे उसपर रोक लगा देनी चाहिए थी। मुझे किसी ऐसे संवैधानिक नियम की जानकारी नहीं है, जिससे यह नतीजा निकलता हो और इस तरह

का कोई नियम हो तो ही ऐसे प्रस्ताव को रोका जा सकता है जो मामूली तौर पर रखा जाय और महासमिति का बहुमत जिसका समर्थन करे। संविधान को छोड़ दें तो भी मुझे कांग्रेस या महासमिति के पहले के किसी ऐसे फैसले का पता नहीं है, जिसमें यह कहा गया हो कि ऐसे मामलों पर विचार नहीं होना चाहिए। ऐसा कोई प्रस्ताव होता तो भी मेरी समझ में नहीं आता कि वह महासमिति को किसी मामले पर विचार करने से, यदि वह विचार करना चाहे तो, कैसे रोक सकता है, जबतक कि उस प्रस्ताव में कोई नियम न बना लिया जाय। महासमिति को किसी ऐसे प्रस्ताव पर विचार करने की पूरी आजादी है, जो खुद उसके पास किये हुए किसी पिछले प्रस्ताव के खिलाफ जाता हो, लेकिन अगर कोई अमल या कार्य-विधि का नियम है तो जबतक महासमिति उसे बदल नहीं देती तबतक उसपर अमल करना पड़ता है। ऐसे किसी नियम का तो सवाल नहीं है, परन्तु मुझे तो किसी ऐसे प्रस्ताव का भी पता नहीं है, जिसमें ऐसी नीति तय की गई हो, जिसका मैसूर के प्रस्ताव से उल्लंघन होता है। हमारे जारी किये हुए पहले के बयानों में उल्लेख किया गया है कि कांग्रेस रियासतों में दखलंदाजी न करने की नीति का अनुसरण करना चाहती है। वे बयान स्वयं महासमिति को दखल देने से, यदि वह दखल देना चाहती हो, रोक नहीं सकते। मैं नहीं समझ सकता कि कानूनी शब्द 'अनियमित' कैसे लागू किया जा सकता है।

एक और सवाल उठता है कि दखल क्या है। क्या किसी प्रस्ताव में किसी राज्य का जिक्र करना ही दखलंदाजी है? क्या नागरिक स्वतंत्रताओं की मांग अथवा दमन की निंदा दखलंदाजी है? यदि ऐसा है तो कांग्रेस खुद पिछले दो वर्षों में निश्चित और असंदिग्ध शब्दों में उसकी दोषी रही है।

महासमिति के मैसूरवाले प्रस्ताव की भाषा बहुत खराब है और मैं किसी भी सूरत में नहीं चाहता था कि अभी महासमिति उसे पास करे। लेकिन इस मामले से मेरी भावनाओं का संबंध नहीं है। मुझे तो एक लोकतंत्री सम्मेलन के अध्यक्ष की हैसियत से काम करना पड़ता है। प्रस्ताव मैसूर में दमन की निंदा का था। यह दमन कैसा भी हो तो क्या भविष्य में राज्य के दमन की निंदा करने से भी हमें परहेज रखना है? अगर इस दमन में खुद कांग्रेस पर हमला करना, हमारे झंडे का अपमान करना या हमारे संग-

ठन पर रोक लगा देना आदि बातें होती हैं तो क्या हम चुप रहें ? इन बातों की सफाई हो जानी चाहिए ताकि हमारे दफ्तर और हमारे संगठन को निश्चित रूप से मालूम हो जाय कि हमें क्या ढंग अख्तियार करना है।

आपने कहा है कि महासमिति को कम-से-कम दूसरे पक्ष की बात सुने बिना यह प्रस्ताव पास नहीं करना चाहिए था। क्या आपके खयाल से हमारे लिए यह संभव है कि हम राज्यों में जाकर जांच करने के लिए समितियां नियुक्त करें ? क्या रियासतें रजामन्द होंगी ? मैंने रियासतों को कई मौकों पर यह सुझाव दिया है—जांच-समिति का नहीं, परन्तु-इतना ही कि कोई व्यक्ति वहां जाकर दोनों ओर से जांच कर ले। इसको उन्होंने हमेशा ठुकराया है।

यह मैसूरवाला मामला लंबे समय से चला आ रहा है। कर्नाटक प्रदेश कांग्रेस कमिटी ने इस मामले में कुछ कदम उठाये हैं। उसके मंत्री ने मैसूर के दीवान से लंबी मुलाकात की है। मैंने दीवान को बार-बार लिखा है और उनके सामने बहुत-से निश्चित मामले रखे हैं। उन्होंने लंबे जवाब दिये हैं और मेरी राय में राज्य की नीति को मुनासिब साबित नहीं कर सके हैं। महीनों से मैं मैसूर के कांग्रेसियों को आज्ञा भंग करने से रोकता रहा हूं और हाल ही में नरीमान के सिवाय और किसीने आज्ञा भंग की भी नहीं। अन्त में कर्नाटक प्रांतीय कांग्रेस समिति ने स्थिति पर विचार किया और मैसूर की दमन-नीति की निंदा की और आगे के लिए हमसे निर्देश मांगे कि उन्हें क्या करना चाहिए। इसलिए यह कहना सही नहीं है कि महासमिति ने किसी-को उसकी बात सुने बिना या एक पक्ष की बात सुनकर किसीकी निंदा की हो। हमारे लिए जितने मामूली रास्ते खुले हुए थे, उन सबको हमने आज़माया।

यह सब मैं आपको लिख रहा हूं, क्योंकि मैं खुद अपने दिमाग़ में साफ़ रहना चाहता हूं कि हमारी नीति क्या है। महासमिति ने और मैंने जो रास्ता अख़्तियार किया, उसपर आपने ऐतराज किया है। मैं अभी तक समझ नहीं पाया कि मैंने कैसे और कहां भूल की है और जबतक मैं यह

समझ नहीं लेता तबतक दूसरी तरह काम नहीं कर सकता।

महात्मा गांधी
वर्धा
मध्यप्रदेश

सप्रेम आपका,
जवाहरलाल

१९७. महात्मा गांधी की ओर से

वर्धा जाते हुए
१८ नवम्बर १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

मेरा ख़याल है कि उस भयंकर रविवार की रात में और सोमवार के मौन में जब तुम मेरे आसपास मंडरा रहे थे तब तुम्हारी आंखों में मैं वह खानगी पत्र पढ़ सकता था। कमज़ोरी ने अभी मुझे छोड़ा नहीं है। सारे मानसिक श्रम से मुझे लम्बे विश्राम की आवश्यकता है, परन्तु शायद वह मिल नहीं सकता। यह पत्र तुम्हें यह खबर देने को लिख रहा हूं कि मैंने बंगाल के कैदियों के बारे में क्या किया है। मैं यह भी जानना चाहता हूं कि मेरा काम तुम्हें पसन्द आया है या नहीं। समझौते की बातचीत का दिमाग पर काफी बोझ रहा है। उसे शुरू करने से पहले मैंने दोनों भाइयों से परामर्श कर लिया था कि बातचीत के द्वारा राहत प्राप्त करना वांछनीय है या नहीं। परिणाम के बारे में उदासीन रहना और रिहाई के लिए जब भी हो जाय, लोकमत के विकास पर निर्भर रहना सम्भव था। दोनों भाई जोरों से बातचीत के पक्ष में थे, जबकि सार्वजनिक आन्दोलन चलता रहे। मैंने अपनी योजना भी बताई। वह उसी ढंग की थी जैसी अंडमान के कैदियों के नाम मेरे तार में बताई गई थी। तदनुसार मैं देवली से वापस लाये गए नजरबन्दों से और कल रात को हिजली के कैदियों से मिला। मंत्रियों ने उन नजरबन्दों को, जिन्हें वह 'गांव और घर' में 'नजरबन्द' कहते हैं, लगभग तुरन्त छोड़ देना स्वीकार कर लिया है और नजरबन्दों की छावनियों में, जिन्हें छोड़ना वे सुरक्षित समझेंगे उन्हें भी, चार महीने के भीतर रिहा कर दिया जायगा। बाकी के लिए, यदि वे पहले ही न छोड़ दिये गए हों तो, मेरी सिफारिश मान ली जायगी। मेरी सिफारिश नजरबन्दों के वर्तमान विश्वास के पता लगा लेने पर निर्भर रहेगी। यदि मैं सरकार से कह सकूंगा कि लोग स्वाधीनता

की प्राप्ति के लिए हिंसक उपायों में विश्वास नहीं रखते और समय-समय पर कांग्रेस द्वारा पसन्द की गई कांग्रेस की प्रवृत्तियों में लगे रहेंगे तो उन्हें छोड़ दिया जायगा। नीति की घोषणा किसी भी समय की जा सकती है। कई जेलखानों में और हिजली की छावनी में कैदियों के साथ जो बातचीत हुई उसका ब्यौरा देने की मुझे आवश्यकता नहीं है। मुझे पता नहीं कि यह सब तुम्हें पसन्द है या नहीं। यदि बहुत नापसन्द हो तो मैं चाहूंगा कि तुम मुझे तार कर दो। नहीं तो मैं तुम्हारे पत्र की प्रतीक्षा करूंगा।

अहमदाबाद की हड़तालों से मुझे अशांति हुई। अखबारों से जो कुछ जानकारी होती है उसके सिवा उनके बारे में मैं कुछ नहीं जानता। शोला-पुर के बारे में भी यही बात है। यदि हम स्थिति पर काबू नहीं रख सकते, या तो इसलिए कि कुछ कांग्रेसी लोग कांग्रेस के अनुशासन को नहीं मानना चाहते, या इसलिए कि जो लोग कांग्रेस के प्रभाव से बाहर हैं उनकी प्रवृत्तियों का नियंत्रण कांग्रेस नहीं कर सकती तो हमारा पदारूढ़ रहना कांग्रेस के हित में बाधक सिद्ध हुए बिना नहीं रहेगा।

'वन्देमातरम्' का विवाद अभी तक शान्त नहीं हुआ है। कार्य-समिति के निश्चय पर अनेक बंगालियों को हार्दिक दुःख है। सुभाष ने मुझे बताया कि वह वातावरण को शांत करने की कोशिश कर रहे हैं।

आनेवाले गवर्नर के पद संभाल लेने के बाद जल्दी ही शायद मुझे बंगाल लौट आना होगा।

आशा है, तुम्हारा स्वास्थ्य अच्छा होगा। सरूप के बारे में अखबारों की खबर चिन्ताजनक थी। उसपर जो जोर पड़ रहा है, क्या उसका स्वास्थ्य उसे सहन नहीं कर सकता है ?

यह पत्र नागपुर के निकट आते-आते लिखा जा रहा है। हम आज शाम को वर्धा पहुंच रहे हैं।

सस्नेह,

बापू

['दो भाई' शायद शरत बोस और सुभाष बोस हैं।]

[कांग्रेस कार्यसमिति के इस निर्णय पर कि राष्ट्रीय अवसरों पर 'वन्देमातरम्' गान की केवल प्रथम पंक्तियां ही गाई जायं, एक साधारण-सा विवाद उठ खड़ा हुआ था।]

१९८. महादेव देसाई की ओर से

मगनवाड़ी, वर्धा
१९ नवम्बर १९३७

प्रिय जवाहरभाई,

८ तारीख का तुम्हारा पत्र मिला। सेम्युअल के आगमन के विषय में मैंने तुम्हारी सब बात समझ ली और मैं पोलक को लिख रहा हूं कि वह तुमसे मिलना चाहते हों तो तुम खुशी से मिलोगे।

अनूपचन्द शाह के प्रस्ताव के संबंध में तुमने गांधी-सेवा-संघ के अस्तित्व के बारे में उन्हें लिखकर बहुत अच्छा किया। अब मैं उन्हें लिख रहा हूं।

मैसूर-संबंधी प्रस्ताव पर अपने लेख के विषय में बापू खुद तुम्हारे १४ तारीख के पत्र का उत्तर देते, परन्तु वह अपना जवाब लिखवा नहीं सके। वह इतने अधिक क्षीण हो गये हैं कि डाक्टरों के ख़याल में उन्हें परिश्रम करने देना ख़तरनाक होगा, परन्तु मैंने तुम्हारे पत्र का सार उन्हें बता दिया था। उन्होंने मुझसे कहा कि उनकी राय में हस्तक्षेप न करने की नीति का स्पष्ट भंग हुआ है। वह जानते हैं कि पहले भी कांग्रेस ने हस्तक्षेप का दोष किया है, परन्तु वह यह भी जानते हैं कि वह ठीक नहीं था और यदि उन्हें इसे बन्द करना अति आवश्यक प्रतीत न हुआ होता तो वह यह लेख न लिखते। उन्हें खुशी है कि तुम मानते हो कि प्रस्ताव की भाषा अच्छी नहीं थी और उन्हें भरोसा है कि यदि कार्य-समिति के दूसरे सदस्य इस बात की तरफ तुम्हारा ध्यान दिलाने की सावधानी रखते कि प्रस्ताव नियम-विरुद्ध है तो तुम प्रस्ताव पर हुए भाषणों को रोक देते, क्योंकि वे भाषण प्रस्ताव से भी बुरे थे। बापू चाहते हैं कि मैं तुम्हें विश्वास दिला दूं कि उनका इरादा तुम्हारी निन्दा करने का कभी नहीं था। तुम सिर तक काम में डूबे हुए थे और कार्य-समिति के साथियों का फर्ज था कि तुम्हारा ध्यान दिलाते। तुम इतने अधिक अनुशासन-प्रेमी हो कि उनकी सलाह की उपेक्षा नहीं कर सकते थे, परन्तु बापू का विचार है कि वे लोग अपने कर्तव्य में चूक गये।

बापू के दिमाग में जो भावना है, उसे मेरी यह नीरस और भौंड़ी भाषा व्यक्त नहीं कर सकती। जिस दिन उन्हें दौरा पड़ा, इस प्रस्ताव पर उन्हें बहुत

गहरी चिन्ता थी, और आज भी वह उसी हालत में मालूम हुए, जब वह इस मामले की बातचीत कर रहे थे। मैंने उन्हें रोक दिया और कहा कि उनके विचारों को मैं यथाशक्ति ज्यों-का-त्यों तुमतक पहुंचा दूंगा।

रक्त-चाप में इतना उतार-चढ़ाव रहता है कि डाक्टरों के ख़याल से बापू को बहुत स्वतंत्रता नहीं देनी चाहिए। वह एक पखवारे के भीतर कलकत्ता जाना चाहते थे, परंतु वह स्वयं मानते हैं कि शारीरिक दृष्टि से यह असंभव है। उन्होंने कम-से-कम उस समय तक बिस्तरे में ही रहने का वचन दिया है, जबतक कि खून का दबाव एक पखवारे या इससे अधिक तक के लिए स्थिर न हो जाय। प्यार।

तुम्हारा,
महादेव

१९९. एेगनेस् स्मेड्ली की ओर से

जनरल हेडक्वार्टर्स,
चाइनीज़ एथ रूट आर्मी, (रेड आर्मी)
वेस्टर्न शान्सी प्रॉविन्स, चीन
२३ नवम्बर १९३७

प्रिय श्री नेहरू,

मैं आपको फिर एक आवश्यक कार्य के संबंध में पत्र लिख रही हूं।

जापान द्वारा अधिकृत प्रदेशों में—उदाहरण के लिए सुयुआन, चहर और होपेई प्रान्तों में—हजारों चीनी विद्यार्थियों, मजदूरों और किसानों ने विद्रोह करके स्वयंसेवक दल बना लिया है और वे जापानियों से लड़ रहे हैं। उनके पास हथियार हैं, लेकिन न तो जाड़े में पहनने के कपड़े हैं, न जूते और अक्सर कई दिनों तक उनके पास भोजन भी नहीं होता। यहां हमारी सेना बहुत गरीब है और वह उत्तर की जनता को संगठित तथा हथियारों से लैस कर रही है। उसके पास स्वयंसेवकों के लिए पैसे नहीं हैं। अभी-अभी उसने दो हजार लोगों की एक स्वयंसेवक सेना को एक हजार डालर की रकम दी है, जो करीब पचास सेंट फी आदमी पड़ता है। यह रकम चार-पांच दिन के भोजन का काम चलाने के लिए दी गई है, जिसका मतलब यह है कि लोगों को करीब-करीब भूखे रहना पड़ेगा।

क्या इंडियन नेशनल कांग्रेस चीनी स्वयंसेवकों के लिए कुछ रुपया दान में दे सकती है? आज और पिछले हफ्ते भी मैंने इस समस्या पर अपने सदर

मुकाम में बातचीत की थी । हम अमरीका में और यहां चीन में भी रुपया जमा करने की कोशिश कर रहे हैं, हालांकि सभी जगह चीनी जनता बहुत भारी बोझ से दबी हुई है । इसीलिए अब मैं इंडियन नेशनल कांग्रेस से अपील कर रही हूं । हमारे स्वयंसेवकों के लिए कुछ अवश्य भेजिये और अगर आप भेजें तो 'बैंक आव चाइना, सिआन्फू शाखा, सिआन, चीन' के नाम बैंक-ड्राफ्ट बनाकर नीचे लिखे पते पर भेजें—

मिस येगनेस् स्मेड्ली
हवाई डाक से, द्वारा लिन पेह-चू, ची सिएन च्वांग ११,
हांगकांग के मार्ग से । सिआन्फू, शेन्सी प्रान्त, चीन

आप जो कुछ भी करें, फ़ौरन करें, क्योंकि जापानी दक्षिण की ओर बढ़ रहे हैं । सिर्फ हवाई जहाज से हांगकांग के रास्ते भेजें, क्योंकि हांगकांग से सियान को हवाई जहाज का सीधा रास्ता है ।

हम आपसे अपील करते हैं कि आप चीनी जनता को दासता से लड़ने में सहायता दें ।

भवदीया,
स्मेड्ली

२००. गोविन्दवल्लभ पन्त के नाम

निजी

२५ नवम्बर १९३७

प्रिय पन्तजी,

मैं आज आसाम के लिए रवाना हो रहा हूं और दिसम्बर के मध्य से पहले लौटने की संभावना नहीं है । जाने से पहले आपको लिखना और बताना चाहता हूं कि जहांतक कांग्रेस मंत्रिमंडलों का संबंध है, सारे हिंदुस्तान में घटनाएं जिस ढंग से हो रही हैं, उससे मुझे बड़ी तकलीफ हुई है । कार्य-समिति के सदस्यों को मैंने जो पत्र भेजे हैं और जिनकी नकल आपको भी भेजी गई थी, उनमें मैंने अपनी भावनाएं जाहिर की हैं । यह राय प्रकट करने में संयम रखा गया था, परन्तु उस संयम के पीछे विश्वास की तीव्रता थी । यदि मैं पारिभाषिक भाषा में कहूं तो कांग्रेसी मंत्रिमंडलों की वृत्ति क्रांति-विरोधी हो

रही है। अलवत्ता यह जान-बूझकर नहीं किया जा रहा है, लेकिन जब चुनाव करना पड़ता है तो झुकाव इस तरफ को है। इसके अलावा आम रवैया जड़ है। हम जड़ नहीं बन सकते, क्योंकि इसका मलतब यह हो जाता है कि हम केवल पिछली सरकारों की परम्परा को छोटे-मोटे फर्क के साथ निभा रहे हैं। सच तो यह है कि हम वहुत अर्से तक जड़ नहीं रह सकते, क्योंकि दुनिया जड़ नहीं है। चुनाव जरूरी तौर से करना पड़ता है और मुझे डर है कि वहुत बार चुनाव गलत किस्म का होता है।

मुझे पूरा यकीन है कि कांग्रेस मंत्रिमंडलों के आने से हमारी शक्ति बहुत बढ़ गई है। कुछ तो विलाशक इसकी वजह उनके द्वारा किये गए शुरू-शुरू के कुछ काम हैं, लेकिन ज्यादातर तब्दीली मनोवैज्ञानिक थी और वह अनिवार्य थी। लेकिन हम मनोविज्ञान पर अथवा कुछ अच्छे कामों की नेकनामी पर जिन्दा नहीं रह सकते। हमको अब कई महीने काम करते हो गये। अब हमें ज्यादा बड़े नतीजे दिखाने होंगे, और अब जबकि आगे बढ़ने के लिए वक्त आ रहा है तो हम पीछे जाने की स्पष्ट वृत्ति का परिचय देते हैं। अवश्य ही हम पीछे नहीं जा सकते, क्योंकि आन्दोलन इतना प्रवल है कि वह हमें पीछे जाने नहीं देगा। परन्तु पीछे जाने की कोशिश करके उस आन्दोलन को बहुत कमजोर करते हैं और ठीक वही काम करते हैं, जो ब्रिटिश सरकार अनेक वर्षों से हमसे कराने की कोशिश करती रही है अर्थात् फूट पैदा करके कांग्रेस से या कांग्रेस के एक अंग से ऐसी नीति स्वीकार कराई जाय जो असल में साम्राज्यवादियों के पक्ष की नीति है। यदि ऐसा ही होता दीखता है तब तो हम जितनी जल्दी ही पद छोड़ दें, उतना ही बेहतर है। मेरा विचार बिल्कुल स्पष्ट है कि हम जितनी तेजी से आगे बढ़ते रहे हैं, उससे बहुत अधिक तेजी से आगे नहीं बढ़ सकते तो हमारा भीतर रहने से बाहर रहना अच्छा है। असल में फिलहाल तो खास तौर पर मद्रास और बंबई में सवाल पीछे जाने का नहीं है।

मुमकिन है, मेरा नजरिया गलत हो, परन्तु मैं तो अपनी ही रोशनी के अनुसार विचार और काम कर सकता हूं, और मुद्दे इतने गंभीर हैं कि उन्हें छिपाया नहीं जा सकता।

आपका,

जवाहरलाल

२०१. चू तेह की ओर से

सदर मुकाम, एर्थ रूट आर्मी,
शान्सी, चीन
२६ नवम्बर १९३७

प्रिय श्री नेहरू,

हमने यहां के अखबारों में पढ़ा है कि आपने हमारे स्वतन्त्रता-संग्राम के समर्थन में हिंदुस्तान के कई नगरों में सार्वजनिक सभाएं कीं। अनुमति दीजिये कि मैं चीनी जनता और खास तौर से एर्थ रूट आर्मी (चीन की लाल सेना) की ओर से आपको धन्यवाद दूं।

आप जानते हैं कि जापानियों ने चीन के बहुत-से शहरों और खास-खास रेल-मार्गों पर अधिकार कर लिया है। हमारी एर्थ रूट आर्मी, जो कि चीनी जनता की क्रांतिकारी सेना है, जनता को उस लम्बी लड़ाई के लिए संगठित और सुसज्जित कर रही है, जिसके अन्त में हमें विजय और मुक्ति मिलेगी। हमारा यह काम मुश्किल है, क्योंकि हमारी सेना निर्धन है। उत्तर में जहां-जहां भी हमारे अड्डे हैं, हम किसानों को सहायता दे रहे हैं और वे बड़ी तेजी से हमारी सेना का एक अभिन्न अंग बनते जा रहे हैं। किन्तु एक समस्या है, जिसे हम हल नहीं कर पायेंगे और उसीके बारे में मैं अब आपको लिख रहा हूं।

वे प्रदेश जो वास्तव में जापान के अधिकार में हैं—जैसे कि शान्सी के उत्तरी भाग में रेलवे के किनारे-किनारे का प्रदेश, सुयुयान और चहार प्रान्तों के प्रदेश तथा पश्चिमी होपेई के भी प्रदेश—इन सभी स्थानों में हजारों किसान, मजदूर और विद्यार्थी आपसे-आप विद्रोह कर उठे हैं। उन्होंने हथियारों पर अधिकार कर लिया है और आक्रमण करनेवाली शाही फौज के खिलाफ वे स्वयंसेवक दल बनाकर लड़ रहे हैं। इन स्वयंसेवकों के पास हथियार हैं, लेकिन उनके पास न गर्म कपड़े हैं, न कम्बल, न जूते। उनके पास खाने का सामान भी बहुत कम है या अक्सर होता ही नहीं। अभी हाल में उनमें से दो हजार आदमियों का एक दल इस प्रान्त के उत्तर-पूर्वी हिस्से की हमारी सेना की एक टुकड़ी में आ मिला था। हम उनको सिर्फ १ हजार चीनी डालर दे पाते हैं, जो कि फी आदमी सिर्फ पचास सेंट पड़ता है। यह रकम

करीब एक हफ्ते तक दिन में एक बार के भोजन के लिए काफी होगी। हमारी समस्याएं इतनी बड़ी हैं कि हम अपने स्वयंसेवकों को उनकी आवश्यकता के अनुसार सहायता नहीं दे पा रहे हैं। यह एक ऐसी समस्या है जो हमारे सामने हर समय रहती है। हम स्वयंसेवकों के लिए यहां चीन में और विदेशों में भी रुपया जमा करने की चेष्टा कर रहे हैं। मिस स्मेड्ली ने हमें बताया है कि हम आपको सहायता के लिए लिख सकते हैं और उन्हें विश्वास है कि इंडियन नेशनल कांग्रेस, जिसके कि आप अध्यक्ष हैं, हमारी सेना को कुछ धन दान में देगी, जोकि वह स्वयंसेवकों को दे सकेगी। आप यह जान लें कि आप द्वारा भेजे गए पैसे-पैसे का हार्दिक स्वागत किया जायगा और वह स्वयंसेवकों के पास पहुंच जायगा तथा उन्हें अपने संघर्ष को जारी रखने में सहायता देगा।

सम्भव है, चीनी स्वयंसेवकों के नाम पर रुपया जमा करने के लिए आप कोई कमेटी बना सकें। यदि ऐसा हो सके तो कृपया फौरन कीजिये। हम जानते हैं कि आपके देश में ऐसे लाखों लोग हैं जो हमारे संघर्ष में हमसे सहानुभूति रखते हैं और हमारी सहायता के लिए कुछ देने को तैयार होंगे।

चीनी जनता की एर्थ रूट आर्मी के सेनापति की हैसियत से मैं आपको और हिंदुस्तान की नेशनल कांग्रेस को और वहां की सारी जनता को यह बताना चाहता हूं कि चीन दास नहीं बना है, न वह हारा है। हम कभी भी दास नहीं बनेंगे, न बनाये जा सकते हैं। हमारी सेना कभी उत्तरी चीन से पीछे नहीं हटेगी। हम जनता के साथ रहेंगे, उसे संगठित और हथियारों से लैस करते रहेंगे और जापानी साम्राज्यवादी सेनाओं से लगातार उस समय तक लड़ते रहेंगे जबतक कि उनका आखिरी आदमी हमारे देश से, जिसमें मंचूरिया भी शामिल है, निकाल बाहर न किया जाय। जापानी चाहे कितना भी झूठ बोलें और प्रचार करें, उनके धोखे में न आयें। हमारा संघर्ष तो अभी शुरू ही हुआ है। चीनी सरकार की नियमित सेनाएं लड़ रही हैं। हमारी सेनाएं कभी भी हराई नहीं जा सकेंगी, क्योंकि हम जनता की सेना हैं और हजारों की बढ़ती हुई संख्या में हमारे साथी हमारे कंधे-से-कंधा भिड़ाकर युद्ध कर रहे हैं।

हम लोग वहुत ही अनुशासनपूर्ण और अच्छी तरह से सिखाये हुए ल.ह सैनिक हैं और हमारे सभी सिपाहियों को, नए वालियंटरों से लेकर कमान्डरों तक को, वहुत ऊंची राजनैतिक शिक्षा मिली हुई है। एशिया में आज हम जो भूमिका अदा कर रहे हैं और भविष्य में करेंगे उसके प्रति हम पूरी तरह से जागरूक हैं। हम जानते हैं कि हम सिर्फ चीनी राष्ट्र और चीनी जनता की लड़ाई नहीं लड़ रहे हैं, बल्कि हम सारे एशिया की जनता की लड़ाई लड़ रहे हैं और हम दलित राष्ट्रों तथा दलित वर्गों की मुक्ति के लिए लड़नेवाली विश्व-सेना का एक भाग हैं। अपनी इसी जागरूकता के कारण, हम आपसे, जो भारत की महान जनता के एक महान नेता हैं, अपने संघर्ष में हर प्रकार की सहायता मांगना उचित समझते हैं। चीनी स्वयंसेवकों के नाम में हम आपकी आर्थिक सहायता, दवादारू, डाक्टरी औजारों, युद्ध का काम सीखे हुए डाक्टरों और नर्सों का ही नहीं, वल्कि उन स्वयंसेवकों का भी स्वागत करेंगे जो हमारी सेना के स्वयंसेवक दलों के साथ लड़कर हमारी लड़ाई के प्रति अपनी एकता की भावना व्यक्त करेंगे। हम आपसे प्रार्थना करते हैं कि आप इस सवाल पर पूरी गंभीरता के साथ विचार करें, हमारी सहायता के लिए अपना आन्दोलन और भी तेज कर दें, जापानी सामान के बहिष्कार के आन्दोलन को और भी व्यापक तथा गहरा बना दें और अपनी जनता को हमारे स्वतंत्रता-संग्राम की बातों के बारे में सही जानकारी दें। यदि जापानी चीन पर कब्जा जमाने में सफल हो जाते हैं तो एशिया का कोई भी राष्ट्र अनेक वर्षों, शायद बीसियों वर्षों, तक आजादी हासिल नहीं कर सकेगा। हमारा संघर्ष आपका संघर्ष है।

आपने हमारे लिए अबतक जो कुछ किया है, उसके लिए हमारी सेना एक बार फिर आपका हार्दिक धन्यवाद करती है।

आपका साथी,
चू तेह
कमांडर इन चीफ,
एर्थ रूट आर्मी, चीन

२०२. ख़लीकुज़्ज़मा की ओर से

लखनऊ
२८ नवम्बर १९३७

प्रिय जवाहर,

कुछ दिन पहले, नत्थी कागजों के साथ मुझे तुम्हारा खत मिला। तुम्हें याद होगा कि पिछली मई में जब बुन्देलखंड का चुनाव लड़ा जा रहा था, मैंने तुम्हें तफसील से उन खतरों के बारे में लिखा था, जिनके मुस्लिम अवाम से ताल्लुक पैदा करने की तहरीक उठ खड़े होने का मुझे डर था। और मेरे खयाल से मौजूदा हालत कांग्रेस की उसी पालिसी की नतीजा है। बावजूद मुश्तरका चुनावों और कम्यूनल एवार्ड के मुस्लिम चुनाव-हलकों से कांग्रेस के चुनाव लड़ने के हक को कोई रोक नहीं सकता; लेकिन मेरी समझ से ज़बतक मुसलमान मुश्तरका चुनावों के हक में हैं तबतक यह ज्यादा बेहतर होता कि मुसलमान अपनी जमात की तरफ से अपने नुमाइन्दे चुनते। बदकिस्मती से मैं इस मामले में तुम्हें एकराय होने के लिए राजी न कर सका। नाखुशगवार वारदातों का सीधा ताल्लुक इन चुनावों से है और जबतक ये चुनाव जारी रहेंगे तबतक, मुझे डर है, मौजूदा हालात का कोई हल नहीं निकल सकता। कांग्रेस का मुस्लिम उम्मीदवार और उसके मददगार इस बात का जरूर ऐलान करेंगे कि वे उतने ही नेक और पाक मुसलमान हैं, जितने कि उनके मुखालिफ मुसलिम लीगी, और वोटरों को अपनी-अपनी तरफ करने के लिए दोनों मुखालिफ अपने-अपने मजहबी जोश-खरोश का खुलकर इजहार करेंगे। चाहें कांग्रेस मुश्तरका चुनाव-हलकों से अपने उम्मीदवारों को जिताने में कायमयाब हो भी जाय तब भी ज़ाती तौर से मैं ऐसा महसूस करता हूं कि जबतक कम्यूनल एवार्ड को ठीक न कर दिया जाय तबतक इस मसले को लड़ाई की जड़ बनाना कांग्रेस के लिए मुनासिब नहीं। अभी हाल में बिजनौर के चुनाव के बाद डाक्टर मुंजे ने अपने एक बयान में कांग्रेस को कम्यूनल एवार्ड की धज्जियां उड़ाये जाने पर मुबारकबाद दी है। मुझे यकीन है, ऐसे किसी खयाल से कांग्रेस मुश्तरका चुनाव के तरीके के मातहत मुस्लिम चुनावों में हिस्सा न लेगी; लेकिन कांग्रेस की इस पालिसी का जरूरी नतीजा कम्यूनल एवार्ड को रद्द करना होगा, हालांकि कांग्रेस

इस बात से एकराय हैं कि विना आपसी समझौते के इसमें न तवदीली की जाय और न रद्दोबदल । लीग और कांग्रेस के मुखालिफ खयाल के अलावा मुझे और कोई बात ऐसी नहीं दिखाई देती कि जिसका ताल्लुक दोनों जमातों के मेंवरों के बीच की मौजूदा कड़ुवाहट से हो । और ये बाई-इलेक्शन भी हमेशा नहीं चलते रहेंगे । जब ये खत्म हो जायंगे तो लोग वैठकर ठंडे दिल से, जो प्रोग्राम और काम हमारे सर पर है, उसके बारे में सोचेंगे । तब मैं उम्मीद करता हूं कि यह अलगाव बहुत-कुछ खत्म हो जायगा और लोग आपसी कड़ुवाहट को भूल जायंगे ।

मुस्लिम लीग ने अव आजादी के मक़सद को मान लिया है । उसका यह लाज़मी फर्ज़ होना चाहिए कि वह हर ऐसी मुहीम में मदद दे, जिसका मकसद हुकूमतशाही का खात्मा हो । जैसे ही कांग्रेस लड़ाई का सरगर्म प्रोग्राम वनायेगी, मुझे यक़ीन है, लीग पीछे नहीं रहेगी । वह कांग्रेस के साथ कन्धे-से-कन्धे लगाकर लड़ाई में हिस्सा लेगी । इसी तरह जहांतक असेम्वलियों के अंदर काम करने का ताल्लुक़ है, लीग ने वर्धा के प्रोग्राम को पूरी तरह मान लिया है । लीग के मेंवर उसकी ताईद करने को बंधे हुए हैं ।

लोगों पर नामुनासिव असर डालने के वारे में मौलाना शौकतअली ने जो वयान दिया है, उसकी तफसील के साथ खबर देने की हालत में मैं नहीं हूं; लेकिन फिर भी मैं यह मानता हूं कि कांग्रेस सरकार ने जनाब हाफिज मोहम्मद इब्राहीम से, अपनी वज़ारत क़ायम रखते हुए, असेम्वली की मेंबरी से जो फिर से चुनाव लड़ने के लिए इस्तीफा दिलवाया वह अगर पूरी तरह से ग़ैरकानूनी नहीं तो पक्के तौर पर बहुत ग़ैरवाजिब था । गवर्नमेण्ट ऑव इंडिया एक्ट ने गवर्नर को यह हक़ दिया है कि वह किसी ऐसे आदमी को, जो मेंबर नहीं है, वज़ीर बना सकता है, बशर्ते कि वह अपने वजीर बनने के छः महीने के अंदर अपनेको मेंवर चुनवा ले । लेकिन यह कानून इस बात की इजाजत नहीं देता कि असेम्बली के मेंबर की हैसियत से जो आदमी वज़ीर वनाया गया था वह अपनी वज़ारत तो क़ायम रख ले और असेंवली की मेम्बरी से इस्तीफा दे दे । इसके अलावा आप आसानी से इस बात को समझ सकते हैं कि ८० बरस की परदेसी हुकूमत ने मुस्लिम जमात के अन्दर से मुखालफ़त के सारे जज़बात को क़रीब-क़रीब खत्म कर

दिया है और अब वह हुकूमत से डरने और अदब करने की आदी हो गई है। कोई शख्स अगर वज़ीर की हैसियत से चुनाव लड़े तो लाज़मी तौर पर उसे मुसलमानों की इस कमज़ोरी से फायदा मिलेगा ही। मैंने वज़ीरे-आज़म को इस रवैये के ख़िलाफ़ अपना ऐतराज़ भेज दिया था, लेकिन महज़ ख़त की पहुंच के अलावा मुझे कोई जवाब नहीं मिला। बहरहाल अब तो यह सब पुरानी बात हो गई। जो इत्तिला तुमने मांगी है, वह गालिबन नवाब इस्माईल खां दे सकेंगे।

लीग के प्रोपेगैण्डा के तरीक़े और उसके मेंबरों के ऐतराज करने क़ाबिल और बेढंगे तौर से पेश आने के बारे में जो मिसालें दी गई हैं, मुझे यकीन है कि जो कुछ तुमको बताया गया है उसमें असलियत और सचाई होगी, लेकिन वह तसवीर का महज़ एक पहलू है। मुस्लिम कांग्रेसमैन, अहरारी और जमियत के लोग, रोज़ाना जिस तरह गन्दी जबान इस्तेमाल करते हैं और गालियां देते हैं और जिस तरह का बेबुनियाद प्रोपेगैण्डा करते हैं, वह दूसरी तरफ के लिए भी कोई तारीफ़ के लायक़ बात नहीं है। मिसाल के तौर पर मैं तुमको बताऊं कि मौलाना अताउल्लाह शाह बुख़ारी ने अपनी एक तक़रीर में लीग के नुमाइंदों को "मुतफहन लाशें" (बदबू देनेवाली लाशें) कहकर बयान किया है। इसी तरह कांग्रेस के एक अख़बार 'हिन्दुस्तान' ने मुस्लिम लीग के मेंबरों को "भांड़" और "मदारी" कहकर गैर-जिम्मेवार अखबारनवीसी की हद कर दी है। लाहौर की एक मसजिद में लीग के एक हमदर्द पर अहरारों का हमला करना यह ज़ाहिर करता है कि कांग्रेस के ये मददगार हिंसा की तरफ़ झुकाव में वफादारी रखते हैं। ये लोग इस बात का ऐलान करते हैं कि ये अलग सियासी जमातों के होने में यक़ीन नहीं करते, फिर भी मुसलमानों में जो अलग जमात बनाये रखने की कमजोरी है, शायद इसीलिए ये लोग अपना मुस्लिम पार्टी का बिल्ला क़ायम रखे हुए हैं। हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच की कड़ुवाहट की निस्बत आज मुसलमानों और मुसलमानों के बीच में कहीं ज़्यादा कड़वाहट है। मुझे यक़ीन है कि आगे आनेवाले वक़्त में ग़ुस्से और ग़ैरजिम्मेवरी की यह ज्यादती खत्म हो जायगी। जब एक-दूसरे के नज़रिये के बारे में ग़लत-फ़हमी का कोहरा और धुंध साफ हो जायंगे तो हम हिन्दुस्तान की आज़ादी

के लिए कन्धे-से-कन्धे भिड़ाकर काम कर सकेंगे। इस बीच दोनों जमातों के जिम्मेवार मेंबरों को अपनी-अपनी जमात के बेलगाम लोगों को समझा-बुझाकर और सही रास्ता दिखाकर क़ाबू में रखने की कोशिश करनी होगी।

तुम्हारा,
खलीक

२०३. महादेव देसाई की ओर से

मगनवाड़ी, वर्धा
२ दिसम्बर १९३७

प्रिय जवाहरभाई,

तुम्हारा २७ तारीख का पत्र मिला। मुझे आश्चर्य हुआ कि तुम लिख पाये और इससे भी अधिक आश्चर्य इसपर हुआ कि तुम इतना लम्बा लिख सके। तुम्हारा जो कुछ कहना है उसकी मैं क़द्र करता हूं। मैं तुमपर कोई तर्क थोपना ही नहीं चाहता था, क्योंकि मैंने मान रखा था कि तुम्हें तर्क की ज़रूरत नहीं है, परन्तु तुमने अपने पत्र में जो अनुरोध किया था उसके प्रकाश में तुम सिर्फ़ बापू की राय जानना चाहते थे।

बापू की हालत में कोई सुधार नहीं है और हम सब पत्र-व्यवहार उनसे दूर रख रहे हैं, परन्तु मैंने निश्चय किया कि डाक्टरों के आदेश के बावजूद मुझे तुम्हारा पत्र उन्हें सुना देना चाहिए। उन्हें खुशी हुई कि मैंने पढ़कर सुना दिया और अगर उनके लिए ज़रा भी संभव होता तो वह जवाब लिखवा देते। परन्तु इसका तो प्रश्न ही नहीं था और मैं ही अपनी भाषा में तुम्हें बताने की कोशिश करूंगा कि जब उन्होंने यह लिखा कि मैसूर-वाला प्रस्ताव अनियमित है तब उनके दिमाग़ में क्या था। पता नहीं, तुम्हें याद हो या न हो कि बापू ने यही बात कार्यसमिति में भी कही थी। (उन्हें यही खयाल था और जमनालालजी से पूछने पर उन्होंने इसका समर्थन किया।) और उन्हें विश्वास था कि इस प्रस्ताव की इजाज़त नहीं दी जायगी। जब उन्हें मालूम हुआ कि वह पास होगया है तो उन्हें आघात लगा।

तुम्हारे अपने ही पत्र में तुम स्वीकार करते हो कि प्रस्ताव की भाषा

ख़राब थी, परन्तु कदाचित् तुम यह कहोगे कि इससे वह ग़ैरक़ानूनी नहीं हो जाता। बापू समझते हैं कि हो जाता है, क्योंकि उसमें राज्य की दमन-नीति का विरोध ही नहीं किया गया है, बल्कि ब्रिटिश भारत के लोगों से मैसूर के लोगों की भरसक सहायता करने की अपील भी की गई है। यदि इससे लखनऊ के प्रस्ताव की भावना भंग नहीं होती तो और क्या होता है? लखनऊवाला प्रस्ताव बहुत बहस-मुबाहसे के बाद निश्चित हुआ था और उसमें राजेन्द्रबाबू की १-८-३५ की नीति-सम्बन्धी घोषणा का प्रतिबिंब था और १७-१०-३५ को महासमिति ने उसे मंजूर किया था। उस घोषणा का प्रस्तुत अंश यह था: "परन्तु यह समझ लेना चाहिए कि राज्यों के साथ लड़ाई जारी रखने का भार और दायित्व स्वयं राज्यों के लोगों पर ही रहेगा। कांग्रेस तो राज्यों पर मित्रतापूर्ण और नैतिक प्रभाव ही डाल सकती है और यह प्रभाव जहां भी संभव होगा, ज़रूर डाला जायगा। मौजूदा हालात में कांग्रेस के पास और कोई सत्ता नहीं है, यद्यपि भारत के लोग चाहे अंग्रेजों के अधीन हों या राजाओं के या और किसी सत्ता के, वे हैं भौगोलिक और ऐतिहासिक दोनों दृष्टियों से एक और अविभाज्य। विवाद की गर्मी में कांग्रेस की मर्यादा को अक्सर भुला दिया जाता है। सही बात यह है कि और किसी नीति से सामान्य उद्देश्य ही विफल हो जायगा।"

यह घोषणा उस समय की प्रचलित नीति को ही दोहराना था और लखनऊ के प्रस्ताव ने अधिक-से-अधिक स्पष्ट शब्दों में यह कहकर कि "हालात को देखते हुए रियासतों की भीतरी आजादी की कशमकश रियासतों के लोगों को खुद ही करनी पड़ेगी", उस घोषणा को कांग्रेस के एक क़ानून का रूप दे दिया। मैसूरवाले प्रस्ताव के समर्थकों ने कांग्रेस की उस अपने-आप लगाई हुई मर्यादा को भुला दिया और कांग्रेस की चिर-स्वीकृत नीति को भंग कर दिया।

अब मैं तुम्हारे दूसरे सवाल पर आता हूं। तुम कहते हो: "बापू यह भी उल्लेख करते हैं कि महासमिति के प्रस्तावों से सत्य और अहिंसा का भंग होता है। ये गंभीर आरोप हैं और प्रमाणित होने चाहिए।" इत्यादि। स्वाभाविक है कि जब तुम यह लिख रहे थे तब बापू का लेख तुम्हारे सामने नहीं था। उन्होंने कहा है कि प्रस्ताव (मसानी का) और भाषण 'मर्यादा के

बाहर' थे। उन्होंने समझाया है कि कैसे मर्यादा के बाहर थे और फिर वे उनसे कहते हैं, "इस मामले में जवाहरलाल नेहरू ने अपने विस्तृत वक्तव्य में जो कुछ कहा है, उसका अध्ययन करें और उसे हृदयांकित करें।" उसके बाद यह वाक्य आता है : "मुझे पक्का विश्वास है कि आलोचक अपने अमल में सत्य और अहिंसा से विचलित हुए।" यह बात खुद प्रस्ताव की अपेक्षा भाषणों के सम्बन्ध में अधिक कही गई है। तुम्हें खुद कई वक्ताओं को रोकना पड़ा था और उन्हें सिद्धान्त और नीति तक ही सीमित रहने को कहना पड़ा था। श्री मसानी ने कहा, "बहुत-से राजनैतिक कैदी छोड़ दिये गए और पाबन्दियां हटा ली गईं, मगर कांग्रेसी प्रान्तों में अभी तक कुछ कैदी हैं।" क्या यह इस बात को प्रमाणित करने को काफी है कि मंत्री लोग साम्राज्यवाद के साथ तादात्म्य कर रहे हैं या वे हक और सिकन्दर हयात खां जैसे ही बुरे हैं? क्या यह कहना सच है कि दमन का सारा शस्त्रागार कायम है, जबकि कांग्रेस-मंत्रियों के पदारूढ़ होने के दो मास के भीतर मोपला-अत्याचार कानून उठा दिया गया? मैं और भाषणों का उल्लेख नहीं करूंगा।

मैसूरवाले प्रस्ताव के बारे में बापू की राय यह थी कि जब हम खुद वहां गये और क़ानून का सामना किया तब मैसूर राज्य की नीति को दमन-नीति बताना असत्य है। "घृणित दमनास्त्र और राज्य में से गुजरनेवालों पर लागू करने के लिए छपे हुए आदेश तैयार रखना" सत्यपूर्ण भाषा नहीं है।

तुम्हारे पत्र के बाकी हिस्से की बात यह है कि तुमने जो कुछ कहा है उसकी बापू बड़ी कद्र करते हैं। सिर्फ इसीलिए कि बापू कहते हैं, किसी चीज को तुम्हारे मान लेने का कोई प्रश्न नहीं हो सकता और अनुशासन का अर्थ यह कभी नहीं हो सकता कि "किसी मामले में किसीकी अपनी बात चुप-चाप स्वीकार कर ली जाय।"

पता नहीं, तुम इससे पहले अखबारों को अपना बयान जारी कर चुके हो या नहीं। लेकिन अगर जारी नहीं किया है तो इस पत्र के प्रकाश में तुम शायद कुछ तब्दीली करोगे। इस पत्र का या इसके कुछ हिस्सों का तुम जो चाहो सो उपयोग कर सकते हो, हालांकि यह मेरा पत्र है, बापू का नहीं

और मैं इसे बापू को दिखाये बिना डाक में डाल रहा हूं। अगर तुम्हें ऐसा लगे कि बयान ज्यों-का-त्यों चला जाय तो तुम उसे जारी करने में स्वतंत्र हो, यानी तुम कह सकते हो कि तुम्हें उत्तर तो मिला मगर वह गले उतरने-वाला नहीं था और तुम्हें अपने ही अन्तःकरण के आदेश पर चलना चाहिए।

रही बात हमारे कुछ मंत्रियों के कामों में प्रकट होनेवाले सत्य और अहिंसा के भंग की, सो बापू चाहेंगे कि तुम साफ-साफ और पूरी बात लिखो और उनकी हाल की बीमारी की परवा न करो। कारण, वह भंग कहीं से भी हो, उसकी निन्दा करनी होगी और अगर हमारे मंत्री सचमुच अपराधी हैं तो वे निकाल देने लायक हैं।

बंगाल के मामले में तुम्हारा जो कुछ कथन है वह बापू ने सब समझ लिया। तुमसे यह आशा न रखकर कि तुम इन रिहाइयों पर 'हर्षोन्मत्त' हो उठोगे, वह तुमसे इतना ही पूछना चाहते थे कि जिस ढंग से उन्होंने गवर्नर से और मंत्रियों से मुलाकात की और कैदियों तथा नजरबन्दों के सवाल पर चर्चा की वह तुम्हें पसन्द आया या नहीं।

स्नेहाधीन,
महादेव

२०४. येडल्फ मायेर्स की ओर से

द्वारा दी टाइम्स ऑव इंडिया
बम्बई
६ दिसम्बर १९३७

प्रिय जवाहरलाल नेहरू,

मैंने अभी-अभी आपका 'भाषा का सवाल' नाम का पैम्फ्लेट पढ़ा है, जिसमें आपने बेसिक इंग्लिश की चर्चा की है। बेसिक में मुझे साधारण से अधिक रुचि है और मुझे ऐसा लगता है कि अपने उत्साह के बावजूद आप उसके साथ अपने पैम्पलेट में बहुत ही कम न्याय कर सके हैं। इसलिए मैं सोच-विचारकर एक ऐसा मुहावरा गढ़ने की चेष्टा करता रहा हूं, जिससे सार रूप में यह स्पष्ट हो जाय कि आपके विवरण में कहां और कितनी कमी है। तभी मुझे एक उद्धरण का स्मरण हो आया, जो आपने अपनी 'मेरी कहानी' में दिया है। इसका कारण शायद यह है कि इसके लेखक

प्रोफेसर जॉन ड्यूई खुद बेसिक के एक उत्सुक समर्थक हैं। उद्धरण इस प्रकार है: "...किसी आदर्श लक्ष्य के लिए की गई कोई भी कार्रवाई... अपने सामान्य और स्थायी मूल्य पर विश्वास होने के कारण एक धार्मिक वस्तु है।"

मेरे लिए बेसिक एक धर्म जैसी चीज है। इसका आंशिक कारण यह है कि विचार-विनिमय के सामान्य (बल्कि सहायक) साधन के ज़रिये एक अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण को या विश्वचेतना को जागृत करने की आवश्यक समस्या का एकमात्र व्यावहारिक हल स्पष्टतः इसीमें मिलता है। इसके अलावा आंशिक कारण यह भी है कि यह एक दैवी शस्त्र प्रतीत होता है, जिसके ज़रिये अगर आदमी चाहे तो शब्द के उस जादू तक पहुंच सकता है, जिसने मानवता को क़ैद कर रखा है और जिससे लोकप्रिय तथा वैज्ञानिक दोनों ही तरह के विचारों पर वह घातक प्रभाव पड़ता है, जिसकी आपने स्वयं अपनी पुस्तक में चर्चा की है।

आपने अपने पैम्फलेट में इनमें से एक भी पहलू को नहीं लिया ह, न अन्तर्राष्ट्रीय पहलू को और न सामाजिक शास्त्र के पहलू को ही। यह मैं मानता हूं कि बेसिक की चर्चा आपने केवल संयोगवश की है। लेकिन मैं समझता हूं कि बेसिक का जो व्यापक मानवतापूर्ण ध्येय है वह तो है ही, उसके अलावा भी अगर आपने बेसिक के साथ कुछ अधिक न्याय किया होता तो उससे आपकी बेसिक हिन्दुस्तानी की अपील को बल मिलता और उसकी सम्भावनाओं के प्रति लोगों में अधिक रुचि उत्पन्न होती। मुझे पता नहीं कि आपने बेसिक का किस सीमा तक अध्ययन किया है। इसलिए मैं आपके पास दो छोटी-छोटी किताबें यह सोचकर भेजने की धृष्टता कर रहा हूं कि शायद आपने इन्हें न देखा हो। इनमें उन दो पहलुओं का वर्णन है, जिनका मैंने उल्लेख किया है। ये पुस्तकें हैं—स्वयं ऑगडन-लिखित 'डेबबेलाइ-जेशन' और रिचार्ड्-लिखित 'बेसिक इन टीचिंग : ईस्ट एन्ड वेस्ट'। उम्मीद है कि आप इनपर नज़र डालने और अवसर आने पर इनमें लिखी बातों का उपयोग करने के लिए समय निकाल सकेंगे।

इन सब बातों से निश्चय ही मैं एक झक्की मालूम होता होऊंगा और कभी-कभी मैं सोचता हूं कि 'नो मोर वार' (अब और युद्ध नहीं) तथा

उस जैसे और आन्दोलनों से निराश होकर और हमारे ऊपर संकट के जो भयंकर बादल मंडरा रहे हैं उनके कारण, कहीं ऐसा तो नहीं कि मुझमें संतुलन की जो कुछ भी भावना थी, उसे अब मैं खोता जा रहा हूं। फिर भी कुल मिलाकर मुझे इस बात का विश्वास है कि लक्ष्य हमसे चाहे कितनी भी दूर हो और रास्ते की कठिनाइयां चाहे कितनी भी बड़ी हों, हम एक स्थिति पर पहुंच गये हैं, जहां एक समान भाषा का प्रचार, वकीलों के शब्दों में, मनुष्य के विकास के लिए आवश्यक बन गया है और इसके बिना एक समान लक्ष्य की भावना कभी इतनी मजबूत नहीं हो सकती कि हमारी राष्ट्रीय प्रतिद्वन्द्विताओं पर विजय पा सके। इसलिए जो कोई भी इसे पास लाने की चेष्टा कर रहा है, वह इतिहास के क़दम-से-क़दम मिलाकर आगे बढ़ रहा है। यह एक महान भावना है और अगर इतिहास और आदर्शवादिता की दृष्टि से मुझे इस बात का विश्वास न भी होता तब भी बेसिक को संसार के कोने-कोने में शॉ, वेल्स, स्त्रेन हेडिन, हॉगबैन, ड्यूयी, डब्ल्यू. के., लियाओ, हूक, ओकाकुरा, हक्सले, पर्सी नन, ईलियट स्मिथ, विकहैम स्टीड और मैडम लिटविनोफ जैसे लोगों से जो आश्चर्यजनक समर्थन मिला है, उससे मुझे पुनः आश्वस्त होने में सहायता मिलती है। ये थोड़े-से लोग, जिनके नाम मैंने योंही गिना दिये हैं, निश्चय ही सनकी नहीं हैं।

शायद इससे भी अधिक उत्साहवर्द्धक मेरी कामयाबी की बात यह है कि इस वर्ष जब मैं इंग्लैंड छुट्टी पर गया हुआ था तब मैं दो साल की चेष्टा के बाद 'टाइम्स ऑव इंडिया' के जिद्दी संचालकों को (जिनके यहां मैं भी काम करता हूं) बेसिक में दिलचस्पी लेने के लिए प्रेरित कर सका। इस बात का और बेसिक के जन्मदाता ऑगडेन के साथ मैंने छुट्टी लेकर उनकी संस्था में जो विशेष अध्ययन किया, इसका एक नतीजा यह हुआ है कि हम बहुत जल्दी ही हिंदुस्तानी आवश्यकताओं को विशेष ध्यान में रखते हुए बेसिक के बारे में एक सस्ती पुस्तक प्रकाशित करने जा रहे हैं। अंग्रेजी पढ़ाने की आजकल की बेकार और खर्चीली प्रणाली को बदलकर बेसिक को लाने के लिए जो व्यापक और गहरा आन्दोलन किया जानेवाला है, उसकी यह भूमिका है।

उसके सम्बन्ध में आपके पैम्फलेट में एक टिप्पणी है, जिससे कि

भ्रम पैदा हो सकता है। आपने लिखा है—"...और बेसिक का शब्दकोश वैज्ञानिक, तकनीकी और व्यापारिक शब्दों को छोड़कर ९८० शब्दों में सीमित कर दिया गया है।" जैसाकि ऑगडन की पुस्तकों में सब जगह लिखा हुआ है, यह संख्या ८५० है और यदि इसमें ५० अन्तर्राष्ट्रीय शब्द भी मिला लिये जायं तब भी कुल जोड़ ९०० ही होगा। शायद आपने ऐसा भूल से लिख दिया है और मुझे आशा है कि आप हमें इस बात का अधिकार देंगे कि आवश्यकता पड़ने पर हम इसका स्पष्टी-करण कर सकें। इस बारे में एक औपचारिक पत्र भी साथ में भेजा जा रहा है।

अब जबकि मैंने ये सब बातें कहकर अपने मन का बोझ हल्का कर लिया है, मैं आपको यह बताना चाहूंगा—जो कि मैं बहुत दिनों से बताना चाह रहा हूं—कि आज से करीब एक साल पहले जब मैंने आपकी 'मेरी कहानी' पढ़ी थी तब उसका मुझपर कितना गहरा असर पड़ा था। पहली बात तो यह है कि मेरे और आपके विचार बहुत-कुछ एक-से हैं। जैसा कि आप जानते हैं, इंग्लैंड में जन्म और पालन-पोषण होने के बावजूद मैं जाति का यहूदी हूं और पुनरुत्थान के अपने राष्ट्रीय संघर्ष में मैंने भी आपकी ही तरह अक्सर अपनेको 'अकेला और बेघर' अनुभव किया है। कुछ तो इसलिए कि फिलस्तीन में, जहांकि मैंने जातीय आधार पर पांच वर्ष तक यह आन्दोलन चलाया था, वहां के आवासी अधिकतर प्रवासी यहूदी हैं (मैं अंग्रेजों के बीच हमेशा यहूदी और यहूदियों के बीच हमेशा अंग्रेज बना रहा हूं) और कुछ इसलिए कि मैं अपनेको इस आन्दो-लन के धार्मिक पहलू के साथ जोड़ न सका, खास तौर से इस विचार-धारा से कि भगवान ने हमारी जाति को चुनकर बनाया है। लेकिन यह तो एक छोटी-सी बात है। पुस्तक को पढ़ने के बाद जहां एक ओर हिंदु-स्तान के नेताओं और जनता की नैतिक वीरता और बलिदान के लिए प्रशंसा की भावना उठी वहां मेरे मन में मुख्य रूप से यह भी विचार आया कि अपनी निर्धनता और अपने पिछड़ेपन के बावजूद हिंदुस्तान निकट भविष्य में ही 'भीतरी (आत्मिक) और बाहरी (भौतिक)' विकास के बीच उस संतुलन और मेल को स्थापित कर लेगा जो कि आपके

कहने के अनुसार दुर्भाग्यवश पश्चिमी देश प्राप्त करने में असफल रहे हैं और इस प्रकार वह सभ्य जीवन की कला का अनुकरणीय आदर्श संसार के शेष देशों के सामने रखेगा । मैं समझता हूं कि यह विचार सबसे पहले उस समय उठा जब मैं आपकी पुस्तक में जेल-जीवन का वर्णन पढ़ रहा था—वहां की भयानक अमानुषिकता के बारे में ही नहीं, बल्कि भावी विकास की सम्भावनाओं से पूर्ण श्रेष्ठ मानवीय शक्ति के भयानक विनाश के बारे में भी । उस समय मैंने सोचा कि जब कांग्रेस के हाथों में सत्ता आयेगी तब निश्चय ही वह जेल-जीवन की उस प्रणाली को शीघ्र ही बदलने का प्रयत्न करेगी, जिसमें रहकर वह स्वयं इतना दुःख भोग चुकी है और जिसे जेल के सुधारक सालों से संसार के सभी देशों में निन्दनीय बताते रहे हैं, लेकिन जिसका कुछ असर नहीं पड़ा है । यही बात दूसरी चीजों के साथ भी है—जैसे शिक्षा, मजदूर-कल्याण, नशाबन्दी आदि । मैंने निश्चित रूप से यह सोचा कि जो पीढ़ी सोचने और काम करने के रूढ़िवादी तरीकों के विरोधी वातावरण में पाली-पोसी गई है उसमें दूसरे देशों के आरामकुर्सी में बैठनेवाले सिद्धान्तवादियों की अपेक्षा सुधार करने की अधिक क्षमता होगी ।

जैसाकि मैंने कहा यह एक साल पहले की बात है और पिछले कुछ महीनों में मैं सबसे अधिक रोमांचित यह देख-देखकर होता रहा हूं कि अब जबकि आप लोगों को अपने देश के एक बहुत बड़े भाग पर अधिकार प्राप्त हो गया है, आप व्यक्तिगत अनुभव पर आधारित समझ और सहानुभूति को तथा व्यक्तिगत यातना के बीच पले हुए आदर्श को व्यवहार में लाने के लिए पहली बार प्रयत्न कर रहे हैं और पहली बार उसका रूप सामने आ रहा है । उदाहरण के लिए मंत्रिपद से सम्बन्धित आत्म-त्यागपूर्ण आदेश, बंदियों की मुक्ति, नशाबंदी के प्रयोग, कृषि-सुधार, सार्वजनिक शिक्षा आदि ।

निस्सन्देह आपको यह अनुभव हो रहा है कि विनाशकारी आलोचना की अपेक्षा रचनात्मक चेष्टा अधिक कठिन होती है । लेकिन मुझे ऐसा लगता है कि चूंकि आपने सरलता, सत्य और अहिंसा को अपना आदर्श मानकर काम करना शुरू किया है, इसलिए आप अपने लक्ष्य तक, अर्थात्

एक सुखी और सचमुच ही सभ्य समाज की स्थापना के ध्येय तक शायद पश्चिमी देशों से पहले ही और उनकी इच्छा के विरुद्ध भी पहुंच जायंगे।

मैं समझता हूं कि गांधीजी, उनकी लंगोटी और उनकी बकरी के दूध ने संसार को आत्मिक और भौतिक विकास के मेल का अर्थ कुछ-कुछ समझा दिया है। जहांतक मेरा सवाल है, मैं समझता हूं कि सरलता पर जरूरत से ज्यादा जोर दिया गया है, फिर भी उसके पीछे जो आदर्श है वह (जहांतक हिंदुस्तान का सवाल है) आपके 'साध्य' और 'साधन' दोनों का प्रतीक है।

मुझे ऐसा लगता है कि मेरा यह पत्र बड़ा असम्बद्ध-सा होगया है। मैंने बहुत सारी बातें इसमें एकसाथ मिला दी हैं। अगर इसमें एकता का कोई सूत्र है तो वह इस विचार पर आधारित है कि शायद हिंदुस्तान एक ऐसी सामाजिक क्रान्ति के बीच फंसा हुआ है जिसकी सीमा में शिक्षा भी अवश्य सम्मिलित होनी चाहिए और यह कि बेसिक का विचार (जोकि अपने-आपमें क्रान्तिकारी है) उस क्रान्ति में एक महत्वपूर्ण हिस्सा लेगा, जिसका असर न सिर्फ अंग्रेजी के पढ़ाने पर पड़ेगा बल्कि जिसका शिक्षा के तमाम मनोवैज्ञानिक और अध्यापकीय दृष्टिकोण पर पड़ेगा। (देखिये रिचर्ड्स)।

आपका,
येंडल्फ मायेर्स

२०५. महात्मा गांधी की ओर से

सेगांव, वर्धा
७ दिसम्बर १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

मैंने मथुरा के प्रस्तावों या तुम्हारे भाषण को नहीं पढ़ा। मैं दोनों देखना चाहूंगा।

महादेव के पत्र में तुम्हारी कोमल शिकायत पढ़ी। मैं क्या कर सकता हूं? मैं जैसा हूं वैसा ही तुम्हें मुझको स्वीकार करना होगा। मैं जानता हूं, तुम कर रहे हो। मैं यह भी जानता हूं कि मेरे प्रति तुम कितने

कोमल हो।

क्रिप्स को जब चाहो अपने साथ ला सकते हो।

सस्नेह,
बापू

२०६. राजेन्द्रप्रसाद की ओर से

पो. ग्रा. जीरादेई (सारन)
२४ दिसम्बर १९३७

प्रिय जवाहरलालजी,

आपका ता. २९ नवम्बर का पत्र और उसके साथ के कागजात ठीक वक्त पर मिल गये थे, परन्तु मुझे खेद है कि कांग्रेस के पिछले प्रस्ताव उस वक्त मेरे पास न होने के कारण मैं आपको नहीं लिख सका।

मैं अखिल भारतीय कांग्रेस कमिटी की बैठक में हाजिर नहीं था, इसलिए नहीं कह सकता कि उसकी कार्रवाई सत्य और अहिंसा से किस प्रकार दूर चली गई। परन्तु मेरा खयाल है कि महात्माजी का संकेत श्री मसानी के प्रस्ताव के शब्दों की तरफ उतना नहीं होगा, जितना उसपर किये गए भाषणों की ओर रहा होगा।

मैसूर-प्रस्ताव 'अधिकार के बाहर था' इस वक्तव्य पर कांग्रेस के पिछले प्रस्तावों के संदर्भ में विचार किया जाना है। मैसूर राज्य में नागरिक स्वतंत्रता को दबाने के लिए जो दमन की नीति जारी है, उसका इस प्रस्ताव में महासमिति ने जोरदार विरोध किया और मैसूर की जनता को बधाई देते हुए और उसके न्यायोचित और अहिंसात्मक संघर्ष में उसकी सफलता की कामना करते हुए "रियासतों की जनता तथा ब्रिटिश भारत की जनता से राज्य के विरुद्ध मैसूर की जनता को अपने आत्म-निर्णय के अधिकार के लिए किये जानेवाले संघर्ष में उसे प्रोत्साहन तथा समर्थन देने की अपील की।" मैं नहीं जानता कि महासमिति अथवा कांग्रेस का इससे पहले ऐसा कोई प्रस्ताव है, जिसमें एक देशी राज्य के किसी खास कार्य या नीति के प्रति विरोध प्रकट किया गया हो और रियासतों तथा ब्रिटिश भारत की जनता से अपील की हो कि वह उस राज्य की जनता का उनके संघर्ष में समर्थन करे तथा उसको प्रोत्साहन

दे। परंपरागत नीति तो भारतीय रियासतों के मामलों में हस्तक्षेप न करने की रही है। कांग्रेस में केवल तीन प्रस्ताव ऐसे हो चुके हैं, जिनके प्रकाश में पता लगाया जा सकता है कि क्या नीति बदल दी गई है या उसमें कुछ हेर-फेर कर दिया गया है। १९२८ में कलकत्ता-कांग्रेस में पास किये गए प्रस्ताव में भारतीय रियासतों के लोगों को उनके न्यायोचित तथा शांतिपूर्ण संघर्ष में कांग्रेस की सहानुभूति तथा प्रोत्साहन का आश्वासन दिया गया था। अगस्त १९३५ में कार्य-समिति ने कांग्रेस-नीति को अपने एक वक्तव्य में विस्तारपूर्वक दोहराया, जिसे उसी वर्ष मद्रास में महासमिति ने अपनी १७-१८ अक्तूबर की बैठक में स्वीकार कर लिया। इस वक्तव्य में रियासती लोगों के शान्तिपूर्ण और न्यायोचित संघर्ष के साथ कांग्रेस की सहानुभूति और प्रोत्साहन की प्रतिज्ञा को दोहराने के बाद यह निर्देश दिया गया कि सहानुभूति तथा प्रोत्साहन किस किस्म का होगा तथा उनका रूप क्या होगा। "तो भी यह समझ लेना चाहिए कि रियासतों में होनेवाले इस संघर्ष को चलाने की जिम्मेदारी और बोझ जाहरा तौर पर उनकी जनता पर ही पड़ेगा। कांग्रेस तों रियासतों पर मित्रतापूर्ण तथा नैतिकतापूर्ण प्रभाव डाल सकती है और इतना तो जहां-जहां भी संभव होगा, वह ज़रूर करेगी। वर्तमान परिस्थितियों में उसके पास कोई और शक्ति नहीं है, यद्यपि भारत की समस्त जनता, चाहे वह अंग्रेजों के अधीन हो, चाहे राजाओं के या किसी दूसरी सत्ता के, भौगोलिक तथा ऐतिहासिक दृष्टि से एक है और अविभाज्य है। विवाद की गरमी में प्रायः कांग्रेस की मर्यादाएं भुला दी जाती हैं। वस्तुतः दूसरी कोई नीति सामान्य उद्देश्य को असफल बना देगी।" कलकत्ता-अधिवेशन के प्रस्ताव तथा महासमिति के इस वक्तव्य की अप्रैल १९३६ में लखनऊ कांग्रेस ने फिर से पुष्टि की और कहा कि "रियासतों के अन्दर होने वाली आजादी की लड़ाई का स्वरूप ही ऐसा है कि उसे स्वयं वहां के निवासियों को ही लड़ना होगा।" मेरी याद में इस प्रस्ताव में "मुख्यतः" शब्द जोड़ देने के संशोधन को ठुकरा दिया गया था। महासमिति के कलकत्तावाले प्रस्ताव में न केवल मैसूर के किसी कार्य और नीति का विरोध किया गया है, बल्कि रिया-

सतों और ब्रिटिश भारत की जनता से अपील की गई है कि वे मसूर की जनता को पूरा-पूरा समर्थन और बढ़ावा दें। दूसरे शब्दों में मित्रतापूर्ण और नैतिक प्रभाव डालने से यह कहीं आगे बढ़ जाता है और कांग्रेस की मर्यादाओं को भुला देता है, और ठीक उसी नीति को अंगीकार करता है, जिससे सामान्य उद्देश्य असफल हो जाता है और जिसका लखनऊ-कांग्रेस के उस प्रस्ताव से मेल नहीं बैठता, जिसमें नीति के पिछले वक्तव्य की दुवारा पुष्टि की गई थी। बेशक कांग्रेस को अपनी नीति बदल देने की पूरी छूट है, लेकिन जबतक वह कायम है तबतक यह महासमिति की अधिकार सीमा में नहीं है कि वह रियासत के भीतरी शासन में हस्त-क्षेप करनेवाला प्रस्ताव स्वीकार करे और वहां चल रहे किसी संघर्ष में भाग ले। यदि महासमिति के प्रस्ताव पर अमल होता है तो कार्य-समिति को मैसूर की जनता की धन-जन तथा और सब तरह से मदद करनी पड़ेगी और यदि उसके आह्वान पर अमल होता है तो देशी राज्यों और ब्रिटिश भारत की जनता को भी यही करना चाहिए, परन्तु कांग्रेस ने इस प्रकार के समर्थन के लिए कभी नहीं सोचा या वादा किया था। दूसरे, अखिल भारतीय कांग्रेस कमिटी का कलकत्तावाला प्रस्ताव लखनऊ-कांग्रेस के प्रस्ताव का उल्लंघन करता है। मेरा खयाल है कि गांधीजी ने इसी कारण कलकत्ता के प्रस्ताव को महासमिति के अधिकार से बाहर बताया है।

आपका,
राजेन्द्रप्रसाद

२०७. एडवर्ड टामसन की ओर से

स्कारटौप
बोर्स हिल, ऑक्सफोर्ड,
२ जनवरी १९३८

प्रिय नेहरू,

मैं मानता हूं कि मानवीय हित पहले आता है, लेकिन दूसरे जीवधारियों का भी महत्व है और उनके लिए भी साथ-ही-साथ कुछ होना चाहिए। अगर कुछ जातियां खत्म होगईं तो यह एक ऐसी शरारत हो जायगी,

जो कभी दुरुस्त नहीं हो सकती। पुराने समय में हिंदुस्तान को खाई में डाल दिया गया और मुझे यह हमेशा ही बेहद बदतमीजी लगती रही है कि चन्द मालदार लोग और शासक यह समझें कि उन्हें एक देश की परम्पराओं को आपकी और आगे आनेवाली पीढ़ियों के लिए नष्ट कर डालने का हक हासिल है।

आप इस बारे में कुछ चीजें कर सकते हैं ? जब कोई जानवर या चिड़िया संरक्षण में इसलिए ली जाती है कि उसकी नस्ल खत्म होनेवाली है तो उसका बेचा जाना कानूनन अपराध माना जाना चाहिए। आपके यहां कुछ ऐसी चिड़ियां हैं, जो करीब-करीब खत्म हो चली हैं, लेकिन उनका मांस खुले आम बिकता है। गैंडों के सींग भी, जिन्हें कलकत्ता के चीनी तथा दूसरे लोग कामोद्दीपक समझते हैं, बेचे जाते हैं। इससे कोई अन्याय नहीं होगा कि इस प्रकार के नीच प्रयोजनों के लिए मांगी जानेवाली वस्तुएं मुनाफाखोरी से बाहर रखी जायं।

लेकिन सबसे जरूरी बात यह है कि इस तरह का जनमत तैयार किया जाय, जो शिकार की नीच मनोवृत्ति को समाप्त कर सके, ताकि हिंदुस्तानी यह सुनकर कि फलां राजा ने पांचसौ चीते मार डाले (जैसा कि रीवां ने किया है) या अनगिनत मुरगाबियों को गोली से उड़ा दिया या काले बारहसिंगे का शिकार करते हुए कोई राजा तीस मील फी घंटे की रफ्तार से मोटर चला सकता है, तारीफ से 'वाह-वाह' करने से इन्कार करके पश्चिम का पथ-प्रदर्शन कर सकें। इस प्रकार की झूठी प्रतिष्ठा को नष्ट करना होगा। दक्षिण अफ्रीका में जनमत इसे नष्टप्राय कर चुका है (और कनाडा में भी)। अहिंसा की भावना पुनः प्रतिष्ठित कीजिये और यह भावना फैलाइये कि हिंदुस्तान के जंगली जीव आपकी विरासत के एक अंग है, जिन्हें दूसरे लोगों को नष्ट करने का कोई हक नहीं है।

एक साल हुआ, मैंने आपके यहां 'टाइम एण्ड टाइड' पत्र देखा था। अगर आप उसे अब भी पढ़ते हों तो उसके ताजा (१ जनवरी) अंक में महाराज बीकानेर पर लिखा मेरा लेख आपको दिलचस्प लगेगा।

मुझे यह पढ़कर बेहद खुशी हुई थी और उत्साह मिला था कि

कांग्रेसी मन्त्री सिर्फ पांचसौ रुपया मासिक वेतन ले रहे हैं और---यद्यपि जीवन में अनेक भ्रम होते हैं—मुझे यह सुनकर वड़ा दुःख पहुंचा कि मंत्रियों का यह त्याग अधिकतर मिथ्या है, क्योंकि वाकी का वेतन वह 'भत्तों' के रूप में ले लेते हैं। अगर यह सच है तो कांग्रेस को इससे इतना बड़ा नुकसान पहुंचेगा जितना कि किसी भी सरकार की कार्रवाई से नहीं पहुंच सकता। मैं उम्मीद करता हूं कि आप मुझे बता सकेंगे कि यह बात झूठ है। मुझे यह बात एक हिंदुस्तानी ने ही बताई थी, जिसे सच्चाई मालूम होनी चाहिए।

१९३८ के वर्ष के लिए शुभकामनाओं-सहित,

आपका,
एडवर्ड टामसन

२०८. सैयद वज़ीर हसन की ओर से

३८, केनिंग रोड,
इलाहाबाद
११ फरवरी १९३८

प्रिय जवाहरलालजी,

पिछले अक्तूबर में लखनऊ में मुस्लिम लीग के इजलास में उसके सदर की तकरीर से न सिर्फ मुसलमानों और हिन्दुओं, बल्कि मुसलमानों और मुसलमानों के बीच गलतफहमी, झूठ और मजहवी तथा फिरकेवारान नफरत का फैलाव शुरू होगया। उस दिन से वाकयात के बारे में वढ़ा-चढ़ाकर झूठे बयान निकालकर मजहबी नफरत और अक़लियत के हकों की आड़ में रोज-ब-रोज इसे बढ़ाया जा रहा है। खास तौर से मैं नीचे लिखी बातों का जिक्र कर सकता हूं :

१. यह कि कांग्रेस एक हिन्दू जमात है।

२. वह हिन्दुस्तान में स्वराज नहीं, बल्कि हिन्दूराज कायम करना चाहती है।

३. यह कि कांग्रेस और सात सूबों में उसकी सरकारें कम तादादवाले फिरकों को, खासतौर पर मुसलमानों को, सताने और कुचलने की कोशिश कर रही हैं।

४. यह कि हिन्दुस्तान के आठ करोड़ लोगों के खयालों की सच्ची

नुमाइन्दा मुस्लिम लीग ही है।

५. यह कि कांग्रेस में बहुत थोड़े-से मुसलमान हैं और ये भी इस्लाम के तईं गद्दार हैं।

मैं पक्के तौर पर महसूस करता हूं कि अगर इस तरह के प्रोपेगैण्डा को चुनौती नहीं दी जाती और झूठ का परदाफ़ाश नहीं किया जाता तो यह झूठ सच के तौर पर जारी हो जायगा और पूरे मुल्क की माली और सियासी आज़ादी की हमारी जो जद्दोजहद है उसपर इसका गहरा असर पड़ेगा।

ऊपर कही गई बात को दिमाग में रखते हुए मेरी यह पुख्ता राय है कि जिस क़दर मुमकिन हो, बहुत बड़े पैमाने पर ऐसे मुसलमानों और उनके लीडरों का एक जल्सा किया जाय, जिन्होंने कांग्रेस के उसूलों को मंजूर किया है और उन लोगों का भी, जिन्हें मैं कांग्रेसी ख़याल का कहूंगा। यह जल्सा जल्द ही आनेवाली किसी तारीख़ में, क़रीब मार्च के आखिर में या अप्रैल के शुरू में, किसी मरकज़ी जगह पर किया जाना चाहिए और इसमें जरूरी तजवीज़ पास करके मुस्लिम लीग के प्रोपेगैण्डे को ग़लत ठहराना चाहिए। मौलाना अबुल कलाम आज़ाद को इस जल्से का कन्वीनर होना चाहिए। मैं यहां यह और कह दूं कि मेरी मुराद यह नहीं है कि मुस्लिम लीग और कांग्रेस के सदरों के बीच जो समझौते की बातचीत चल रही है, उसमें मैं किसी तरह की कोई अड़चन डालूं। इसके बदले इस जल्से की कार्रवाई से समझौते के लिए ज़मीन बहुत-कुछ साफ हो जायगी, क्योंकि यह समझौता मुस्लिम लीग के मुसलमानों और कांग्रेस के मुसलमानों दोनों को ही मंजूर होना चाहिए। आखिर में मैं आपसे कहूंगा कि इस खत के मजमून पर आप हरिपुरा में अपने साथियों के साथ ग़ौर करें और जल्दी ही फैसला करें। शायद इस बात का ज़िक्र करना मौजूं होगा कि इस खत में जो ख़यालात ज़ाहिर किये गए हैं, उनसे कांग्रेसी मुसलमानों की एक बड़ी तादाद एक राय है।

आपका,

एस. वज़ीर हसन

[सैयद वज़ीर हसन बहुत सालों तक ऑल इंडिया मुस्लिम लीग के एक खास मेंबर रहे।]

२०९. मुहम्मदअली जिन्ना की ओर से

१, हेस्टिंग्स रोड,
नई दिल्ली
१७ मार्च १९३८

प्रिय पंडित जवाहरलाल नेहरू,

आपका ८ मार्च १९३८ का खत मुझे मिल गया। १८ जनवरी के आपके पहले खत से मुझे यह मालूम हुआ कि हिन्दू-मुस्लिम-एके को बढ़ाने के लिए आप यह जानना चाहते हैं कि दोनों में किन-किन बातों में फर्क है। मैंने आपको जवाब में लिखा था कि यह मामला ख़तो-किताबत से हल नहीं हो सकता और खतो-किताबत से हल करने की कोशिश वैसी ही नामुनासिब होगी जैसी अखबारों में इस मामले पर बहस करने की कोशिश। इसपर आपने अपने ४ फरवरी के जवाब में कांग्रेस के ऊपर मेरी कुछ फर्जी नुक्ताचीनी के बारे में और मेरे कुछ और बयानों के बारे में, जिनका उन बातों से, जिनपर हमें इस वक़्त ग़ौर करना चाहिए, कोई खास ताल्लुक दिखाई नहीं देता, अपनी शिकायतों की एक फेहरिस्त तैयार करके मुझे भेजी थी। आप इन्हीं शिकायतों पर अड़े रहे और अभी तक आपकी यही राय है कि हम उन्हीं शिकायतों पर बहस जारी रक्खें, हालांकि इनका हमारे इस वक्त के मामले से कोई ताल्लुक़ नहीं है। जैसाकि मैंने अपने पिछले खत में आपको पहले ही तफसील से समझा दिया, इस बहस के लिए मैं तैयार नहीं हूं।

मैं समझता हूं कि हमारी बातचीत की शुरुआत इस सवाल से हुई थी कि मुल्क की ज़िंदगी में मुसलमानों के मज़हब, उनकी तहज़ीब, उनकी ज़बान, उनके अपने निजी कानून, सरकार और मुल्क के इंतज़ाम में उनके सियासी हक़, इन सबके बारे में मुसलमानों के हक़ों की हिफ़ाज़त किस तरह की जा सकती है। इस तरह के बहुत-से सुझाव दिये गए हैं, जो मुसलमानों को तसल्ली दे सकेंगे और अकसरियतवाले फ़िरके में यक़ीन और महफ़ूज़ होने का खयाल पैदा कर देंगे। मुझे हैरत हुई, जब आपके जिस खत का मैं जवाब दे रहा हूं, उसमें आपने कहा है, "लेकिन वह कौन-से मामले हैं, जो मौजूं हैं? मुमकिन है कि मैं कुन्दज़हन हूं और या

इस मसले की पेचीदगियों से पूरी तरह वाक़िफ़ नहीं हूं। अगर ऐसा है तो मैं इसका मुस्तहक़ हूं कि आप मुझे रोशनी दें। मैं बड़ा मशकूर होऊंगा, अगर आप मुझे हाल का कोई ऐसा बयान बता दें जो अखबारों में या किसी प्लैटफार्म से दिया गया हो और जिससे मुझे इस बात के समझने में मदद मिले।" शायद आपने 'चौदह पाइंटों' की बावत सुन लिया है।

इसके बाद आपने लिखा है, "इसके अलावा पिछले कुछ सालों में बहुत-सी ऐसी बातें हुई हैं, जिनसे हालत अब बदल गई है।" हां, मैं आपसे एकराय हूं। हाल में अखबारों के अन्दर बहुत-से सुझाव सामने आ चुके हैं। मिसाल के तौर पर, अगर आप १२ फरवरी १९३८ के 'स्टेट्मैन' अखबार को देखें तो उसमें एक मज़मून है, जिसका हैडिंग है 'थ्रू मुस्लिम आईज़' (मुसलमानों की आंखों से)। (आपके सुभीते के लिए मैं उस मज़मून की एक नक़ल इस खत के साथ भेज रहा हूं)। उसके बाद १ मार्च १९३८ के 'न्यू टाइम्स' में एक मज़मून निकला है, जिसमें आपके हाल के एक बयान का जिक्र किया गया है। वह बयान, मैं समझता हूं, आपने हरिपुरा-कांग्रेस के इजलास में दिया था। अखबारों के मुताबिक आपने वहां यह कहा था कि "मैंने इस सवाल को, जिसे फिरकेवारान सवाल कहा जाता है, खुर्दबीन लगाकर देखा, लेकिन अगर कहीं कुछ हो ही न तो दिखाई क्या दे सकता है?" 'न्यू टाइम्स' के उस १ मार्च सन १९३८ के मज़मून में भी बहुत-से सुझाव पेश किये गए हैं। (आपके सुभीते के लिए उसकी एक नक़ल भेज रहा हूं)। इसके अलावा आपने मिस्टर अणे की उस मुलाकात को भी देखा होगा, जिसमें उन्होंने कांग्रेस को चेतावनी दी है और कुछ ऐसी बातें गिनाई हैं, जिनकी मांग मुस्लिम लीग कर सकती है।

अब इतने से आप अच्छी तरह समझ गये होंगे कि जिस तरह के सुझाव दिये जा चुके हैं, या दिये जा सकते हैं, या जिनके दिये जाने की उम्मीद की जा सकती है, उन सबको हमें ग़ौर से समझना होगा, और अखीर में मैं समझता हूं कि हर सच्चे नेशनलिस्ट का यह फर्ज है, चाहे वह किसी भी जमात या किसी भी फिरके का क्यों न हो, कि वह इस सारी हालत को अच्छी तरह समझने की कोशिश करे और मुसलमानों और हिंदुओं

के बीच समझौता करावे और मुल्क में सच्चे मानी में एक मिला-जुला मोर्चा क़ायम करे। इस बात की उतनी ही फ़िक्र आपको होनी चाहिए, जितनी मुझे। आपका भी यह उतना ही फ़र्ज है, जितना मेरा, चाहे हम किसी भी जमात या फिरके के क्यों न हों! लेकिन अगर आप यह चाहते हों कि मैं खुद इन सब सुझावों को जमा करके एक फरियादी के तौर पर आपके सामने पेश करूं, ताकि आप और आपके साथी उनपर ग़ौर कर सकें तो मुझे डर है मैं ऐसा नहीं कर सकता और न मैं उन मुख्तलिफ़ बातों पर आपसे ज़्यादा खतो-किताबत जारी रखने के लिए भी यह सब करने को तैयार हूं। लेकिन अगर आप फिर भी इस बात पर ही ज़िद करें, जैसा कि आप करते मालूम होते हैं, जब आप अपने खत में कहते हैं, "मेरा दिमाग, पेश्तर इसके कि वह ठीक-ठीक काम कर सके या मैं कोई क़दम उठाने की बात सोच सकूं, यह चाहता है कि सब बात साफ़-साफ़ सामने आ जाय। गोलमोल बात और असली मुद्दों से बचते रहने से तसल्ली-बख्श नतीजे पैदा नहीं हो सकते। मुझे यह बड़ा अजीब मालूम होता है कि बावजूद मेरे बार-बार पूछने के मुझे यह नहीं बताया जाता कि हमें किन बातों पर बहस करनी है।" आपका यह लिखना न ठीक है और न असलियत के मुताबिक़ है; लेकिन अगर ऐसा हो तो मैं आपसे गुज़ारिश करता हूं कि आप कांग्रेस से यह कहें कि वह बाज़ाप्ता तरीके से मुझसे खतो-किताबत करे और मैं ऑल इंडिया मुस्लिम लीग की कौंसिल के सामने उस सारे मामले को पेश कर दूंगा। यह मैं इसलिए कह रहा हूं, क्योंकि आपने खुद अपने खत में लिखा है कि "मैं कांग्रेस का सदर नहीं हूं और न उस तरह की नुमाइन्दा हैसियत रखता हूं; लेकिन अगर मैं इस मामले में किसी तरह की मदद कर सकता हूं तो मैं कांग्रेस की खिदमत के लिए तैयार हूं और मैं बड़ी खुशी से आपसे मिलकर इनसब बातों पर आपसे बतचीत करूंगा।" जहांतक आपसे मिलने और इन मामलों पर बातचीत करने का ताल्लुक है, मुझे यह कहने की जरूरत नहीं है कि मैं खुशी से इसके लिए तैयार हूं।

आपका,

एम. ए. जिन्ना

२१०. महादेव देसाई की ओर से

१ वुडबर्न पार्क,
कलकत्ता
२० मार्च १९३८

प्रिय जवाहरभाई,

खाली से तुम्हारा पत्र पाकर खुशी हुई। इससे भी अधिक प्रसन्नता बापू को तुम्हारा हार्डीकर को दिया गया उत्तर पढ़कर हुई। उन्हें बहुत ही आनंद हुआ कि जो कसर उन्होंने रख दी थी तुमने पूरी कर दी। सारी चीज़ को रखने के तुम्हारे ढंग को उन्होंने बड़ा पसन्द किया, यद्यपि यह संभव है कि कुछ भागों में वह जुदी भाषा काम में लाते।

खाली के बारे में बापू कहते हैं कि तुम्हारा चित्र अनिवार्य रूप में लुभावना है, परन्तु उनका यह भी कहना है कि किसी प्रलोभन की ज़रूरत नहीं थी। उन्होंने मुद्दत से वहां जाने की आकांक्षा रखी थी, परिवर्तन की खातिर इतनी नहीं, जितनी उस छोटे-से स्वर्ग को देखने के लिए जिसे रनजीत पृथ्वी पर उतार लाये हैं। वह उनके प्रयोगों में गहरी दिलचस्पी रखते हैं और जब कभी उन्हें काम से छुट्टी मिल सकेगी, वहां जाने को उत्सुक रहेंगे।

पिछली दफा से अब वह बहुत अच्छे हैं। ज़ोर भी उतना ही अधिक पड़ा है, और उसका कोई फल निकलने की संभावना नहीं है, परन्तु उन्होंने पिछली बार की अपेक्षा उसे अधिक अच्छी तरह सहन किया है।

प्यार,

तुम्हारा,
महादेव

२११. गोविन्दवल्लभ पन्त की ओर से

लखनऊ
२३ मार्च १९३८

प्रिय जवाहरलालजी,

आपके कृपापत्र के लिए अनेक धन्यवाद। मुझे खुशी है कि खाली में कुछ दिन बिताकर आप कड़ी मेहनत के लगातार और सख्त बोझ से

कुछ राहत पा सके। जैसाकि आप कहते हैं, यह स्थान रमणीक है और यह हमारी कृतज्ञता का भी पात्र है, क्योंकि इसने अपने सुन्दर और स्वास्थ्यप्रद वातावरण में आपको कुछ विश्रांति और शांति का आनंद उठाने का मौक़ा दिया। मैं एक दूसरे व्यक्तिगत कारण से भी खाली का आभारी हूं, इसलिए कि इसने आपको जो अवकाश प्रदान किया, उसके कारण मैं आपका शिक्षाप्रद पत्र पा सका।

अपने बारे में आपने जो कहा है, जीवन की जो दृष्टि बताई है और विभिन्न प्रश्नों को आप जिस तरह देखते हैं, वह पद्धति, ये सब मेरे लिए विशेष रूप से मूल्यवान हैं। ऐसी बात नहीं कि मैं उनकी तरफ़ से बिलकुल अनजान था, परन्तु विभिन्न महत्त्वपूर्ण मामलों में आपका दिमाग किस तरह काम करता है, उसका आपके इस पत्र में स्पष्ट चित्र मुझे मिला। आपने हमारे सामाजिक जीवन के कुछ पहलुओं का भी उल्लेख किया है। सचमुच यह मानना पड़ेगा कि हममें से बहुतों का निजी जीवन एकदम नीरस, बंजर, और मूर्खों का-सा भद्दा होता है, देखकर अत्यन्त दुःख होता है। इस पत्र में उन सब बातों की बहस में मैं नहीं पड़ना चाहता, जिनका आपने जिक्र किया है, क्योंकि अगर मैं उनके बारे में कुछ लिखने बैठूंगा तो यह पत्र बहुत अधिक लम्बा हो जायगा और मैं इतना लम्बा खर्रा इस समय आपके सिर नहीं मढ़ना चाहता। ऐसा मैं बाद में कर सकता हूं।

आज तो मेरे दिमाग को यूरोप म हिटलर के राज्य-विप्लव और हमारे अपने प्रांत के सांप्रदायिक उपद्रव घेरे हुए हैं। ये घटनाएं अस्थायी महत्त्व से ज्यादा अहमियत रखती हैं और इनकी तुलना में दूसरी सारी समस्याएं गौण हो उठती हैं। आस्ट्रिया पर कब्जा होना प्रथम श्रेणी के अंतर्राष्ट्रीय महत्त्व की घटना है। इसके परिणाम जरूर ही बहुत दूरगामी होंगे। तमाम राजनैतिक व्यवस्था अनिश्चित अवस्था में है और दुनिया के सामने केवल दो विकल्प हैं—एक तरफ तो सशस्त्र क्रूर अधिनायकवाद और दूसरी तरफ व्यक्तिगत और राष्ट्रीय स्वतंत्रता का पोषक जनतंत्र। यद्यपि ये घटनाएं यूरोप में हो रही हैं, फिर भी इनके परिणामों से हम अछूते नहीं रह सकेंगे।

इस सूबे के सांप्रदायिक दंगों में जो हिंसा तथा रक्तपात हुआ, उससे मुझे अत्यन्त क्लेश और दुःख हुआ है। अब तो इलाहाबाद और बनारस में लगभग शान्ति है, परन्तु सांप्रदायिक पागलपन किसी भी समय उभड़ सकता है। इलाहाबाद के उपद्रव के बारे में आपका तार मिल गया था और मैंने भी एक तार आपको भेजा था, क्योंकि समाचार-पत्रों में आपने इन उपद्रवों का हाल पढ़ा ही होगा और चूंकि आप जल्दी ही यहां आनेवाले हैं, इसलिए मैं उनके बारे में विस्तार से नहीं लिखना चाहता। पिछले कुछ महीनों से राजनीति के लबादे में मुस्लिम लीग द्वारा जो प्रचार हो रहा है, वही मुख्यरूप से इस तरह की हालतों के लिए जिम्मेदार है। धार्मिक भावनाओं को उभाड़ना बहुत आसान है और जब कोई दल अपने राजनैतिक मतलब को पूरा करने के लिए इसका सहारा लेता है तब उसे इसके परिणामों की शिकायत नहीं करनी चाहिए।

आशा, है आप स्वस्थ होंगे।

सप्रेम आपका,
गो. ब. पंत

२१२. सरोजिनी नायडू की ओर से

दि गोल्डन थ्रेशोल्ड,
हैदराबाद (दक्षिण)
२९ मार्च १९३८

प्रिय जवाहर,

मुझे आशा है कि पुराने जमाने के संत की भांति ही पर्वतों की ओर निगाह उठाकर तुमने भी उनसे शांति, शक्ति और प्रेरणा प्राप्त की होगी और तुम उसीकी जवानी के दिनों की तरह झरने के पास से पांच कंकड़ उठाकर उनसे प्रत्येक गोलिआथ को मार सके होगे। तुम्हारे तो इतने सारे खास-खास गोलिआथ हैं, जिन्हें तुम मारना चाहोगे।[1]

---

[1] इसका आशय बाइबिल में वर्णित गोलिआथ नामक दैत्य से है, जिसने इजराइल की सेना को चुनौती दी थी और जिसे डेविड नामक गड़रिये ने गोफन से पत्थर फेंक-फेंककर मार डाला था। —सम्पा०

मुझे बहुत दुःख है, और ऐसा लग रहा है मानो किसीने मुझे ठग लिया, और कि मैं कलकत्ता न जा सकूंगी। कम-से-कम एक बार तो मैं डाक्टरों के हुक्म को मान ही रही हूं, यद्यपि इसका कारण शायद मेरी भलमनसाहत इतना नहीं, जितना इस समय अन्य किसी काम के लिए शारीरिक असमर्थता है। इसलिए मैं ज्यादातर सोफे पर पड़ी-पड़ी अपने बगीचे में चिड़ियों की चहचहाहट सुनती रहती हूं। बुलबुलों ने संतरे के पेड़ में घोंसला बनाया है, और एक रामचिड़िया दोपहर को फव्वारे में नहाने आती है, और हनीबर्ड्स क्लिमैंटिस और बिग्नोनिया की बेलों में व्यस्त हैं। क्या तुमने कभी एक फारसी कविता 'पत्तियों की संसद' का अनुवाद पढ़ा है ?

जबतक वह 'छोटा-सा इन्सान' दूसरी चीजों पर अपना 'गांधी-जादू' चला रहा है, तबतक यह तो बताओ कि साम्प्रदायिक समझौते के सवाल पर 'नेहरू के मिजाज' का क्या हाल है ? मैं उस कठिन समस्या का सही हल पाने के लिए बहुत चिंतित हूं। बेबे को एकदम बेबे-जैसी सर्दी होगई है, जिसकी तुलना बस उसकी बेबे-जैसी जिद से ही की जा सकती है। पर अब वह पहले से अच्छी है और अपने हाथ ऐसे रंगों में डुबोती रहती है, जिसके आगे जोसेफ का रंगबिरंगा कोट भी कुछ नहीं और अपनी अलमारी में भरे हुए कपड़ों को फिर से नया करती और तरह-तरह के रंगों में छिपाती रहती है।

मेरे पति १४ तारीख को 'कोंते रोस्सो' द्वारा वियना जा रहे हैं। बेबे शायद उन्हें बिदा करने बम्बई जाय और शायद बेटी के यहां ठहरे। हां, बेटी मुझसे बेहद नाराज है, क्योंकि उसके विचार से मैं राजा के राजनैतिक विचारों को गंभीर नहीं समझती। कैसी बच्ची है वह— और राजा भी !—प्यारे बच्चे ! दोनों में से एक में भी ज़रा खुशमिजाजी होती तो उनके लिए—और मेरे लिए भी—कितना अच्छा होता।

इस पत्र का उद्देश्य तुम्हारे हालचाल का पता लगाने के लिए पूछ-ताछ करना था। पर यह एकदम अपठनीय और बेसिर-पैर का दस्तावेज हो गया है ! यह सौ फीसदी स्वदेशी कागज, देशभक्ति को साबित

करने के लिए तो बेहद अच्छा है, पर ओफ, इसपर लिखने में कैसी तकलीफ होती है !

सप्रेम तुम्हारी,
सरोजिनी

मैंने सी. एल. यू. के वास्ते पैसे के लिए बहुत-से लोगों को लिखा है, पर अभी कोई उत्तर नहीं ।

२१३. महात्मा गांधी की ओर से

सेगांव
२५ अप्रैल १९३८

प्रिय जवाहरलाल,

महादेव के सीमाप्रान्त के दौरे के विवरण की प्रतिलिपि साथ में है । चूंकि मैं नहीं जा सकता था और हमें अशांतिप्रद समाचार मिल रहे थे, इसलिए मुझे लगा कि उन्हें भेज दिया जाय । मैं यह विवरण सब सदस्यों में नहीं घुमा रहा हूं । मैं मौलाना और सुभाष को नकलें भेज रहा हूं । विवरण से मैं बेचैन होगया हूं । महादेव को अधिक कहना है । अवश्य ही एक प्रति भाइयों[1] को भेज रहा हूं । आशा है, तुमको भाइयों पर अपना बड़ा असर इस्तेमाल करने की प्रेरणा होगी । मैं तो तार द्वारा उनके सम्पर्क में हूं ही । मुझे जो आघात लगा है, उसके बावजूद अगर खान-साहब चाहेंगे तो मैं कुछ दिन के लिए उस प्रान्त में जा भी सकता हूं । मालूम होता है, हम भीतर से कमजोर होते जा रहे हैं । इससे मुझे चोट लगती है कि हमारे इतिहास के इस बहुत नाजुक अवसर पर हम महत्व-पूर्ण मामलों में सहमत दिखाई नहीं देते । मैं तुम्हें बता नहीं सकता कि यह जानकर मुझे कितना घोर अकेलापन महसूस होता है कि आजकल मैं तुम्हें अपने विचार का नहीं बना सकता । मैं जानता हूं, तुम प्रेमवश बहुत-कुछ करोगे । परन्तु राजनैतिक मामलों में स्नेह के आगे आत्मसमर्पण नहीं हो सकता, जब बुद्धि विद्रोह करती हो । तुम्हारी बगावत के कारण तुम्हारे प्रति मेरा आदर और भी गहरा है । परन्तु इससे अकेले-

---

[1]. खान अब्दुल गफ्फार खां और डा. खानसाहब

पन का दुःख और भी तीव्र हो जाता है। लेकिन अब मुझे अपनी कलम रोकनी चाहिए।

प्यार,

बापू

२१४. महात्मा गांधी के नाम

इलाहाबाद
२८ अप्रैल १९३८

प्रिय बापू,

मैं आज सुबह लखनऊ से इलाहाबाद लौटा। आपका पत्र और साथ में महादेव की सरहदी यात्रा पर उनके नोट की नकल मिली। मैंने इस नोट को पढ़ लिया है और मैं खानसाहब और अब्दुलगफ्फार खां को लिखूंगा। महादेव ने जो कुछ लिखा है, उसपर मुझे अचरज नहीं है। मैंने स्वयं जो कुछ देखा यह उसका स्वाभाविक विकास है, किन्तु मैंने यह आशा रखी थी कि वहां उस समय जो वृत्तियां देखने में आईं, उनपर कुछ रोक लगाई जायगी। आपके सिवा यह काम कारगर तरीके पर कोई आदमी कर सकता है तो वह मौलाना अबुल कलाम ही हैं। मेरे खयाल से यह बहुत आवश्यक है कि वह सरहद में जायं। इस बीच मुझे यह आशा जरूर है कि दोनों खानबन्धु मंत्रियों की सभा और कार्य-समिति के लिए आयंगे।

जैसा आपको मालूम है, पिछले छः महीनों में कांग्रेस की राजनीति में घटनाओं ने जो रुख अख्तियार किया है, उससे मुझे बड़ा दुःख हुआ है। जिन मामलों ने मुझे अशान्त किया है, उनमें से गांधी सेवा संघ का नया रूप भी है। हम बहुत तेजी से टैमनी हॉल[1] का ढंग अपना रहे हैं और

---

[1] अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में समाजोपयोगी कार्यों के लिए न्यूयार्क में स्थापित संस्था, जो आगे चलकर अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए सभी तरीके अपनाने के कारण भ्रष्टाचार का प्रतीक बन गई। —सम्पा०

यह देखकर तकलीफ होती है कि गांधी सेवा संघ भी मामूली सतह पर उतर आया है। वह तो दूसरों के लिए नमूना कायम कर सकता था और किसी-न-किसी तरह चुनाव जीतने पर उतारू एक दलगत संगठन बन जाने से इन्कार कर सकता था। मुझे बहुत दुःख होता है कि कांग्रेस-मंत्रि-मंडल क्षमता के साथ काम नहीं कर रहे हैं और जो वे कर सकते थे वह भी बहुत नहीं कर रहे हैं। वे पुरानी व्यवस्था के बहुत ज्यादा अनुकूल बन रहे हैं और उसे उचित साबित करने की कोशिश कर रहे हैं। परन्तु बुरी होते हुए भी ये सब बातें बर्दाश्त की जा सकती थीं। इससे कहीं बुरी बात यह है कि हमने जो ऊंची प्रतिष्ठा इतनी मेहनत करके लोगों के दिलों में बना ली है, उसे खो रहे हैं। हम मामूली राजनीतिज्ञों की सतह पर उतरते जा रहे हैं, जिनके कोई उसूल नहीं होते और जिनका काम रोजमर्रा के अवसरवाद के असर से होता है।

इसका कुछ कारण तो अलबत्ता दुनिया-भर की आम खराबी है और कुछ जिस संक्रमण-काल से हम गुजर रहे हैं वह है। फिर भी इससे हमारी खामियां सामने आती हैं और यह देखकर दुःख होता है। मेरे खयाल से कांग्रेस में काफी सद्भावनावाले लोग हैं, जो ठीक ढंग से काम में जुट जायं तो स्थिति का सामना कर सकते हैं। परन्तु उनके दिमाग दलगत संघर्षों से और इस व्यक्ति या उस गुट को कुचलने की इच्छा से भरे हैं। जाहिर है कि भले आदमियों की अपेक्षा बुरे ज्यादा पसन्द किये जाते हैं, क्योंकि बुरे दलबंदी में साथ देने का वचन देते हैं। जब ऐसा होता है तब बिगाड़ तो होगा ही।

महीनों से मैं महसूस करता हूं कि जिस तरह से चीजें चल रही थीं उनमें मैं हिंदुस्तान में कारगर तौर से काम नहीं कर सकता था। जैसे हमेशा काम चलाया जा सकता है, वैसे अलबत्ता मैंने भी चलाया, परन्तु मुझे यह महसूस हुआ है कि मैं ठीक जगह पर नहीं हूं और अयोग्य हूं। (कारण तो और भी थे) परन्तु यह एक कारण था जिससे मैंने यूरोप जाने का निश्चय किया। मैंने महसूस किया कि मैं वहां अधिक उपयोगी हो सकता हूं और हर हालत में मैं अपने थके हुए और चक्कर में पड़े हुए दिमाग को तो ताजा कर ही लूंगा। मुझे आपके साथ विस्तार से किसी

मामले की चर्चा करने में कठिनाई मालूम हुई, क्योंकि आपके स्वास्थ्य की मौजूदा हालत में मैं आपको थकान और चिन्ता में डालना नहीं चाहता, और फिर मुझे यह भी अनुभव हुआ कि ऐसी चर्चाओं से कोई ठोस नतीजे नहीं निकलते।

मैंने २ जून को बम्बई से जहाज पर रवाना होने का फैसला किया है। पता नहीं, मैं कितने अर्से दूर रहूंगा। परन्तु संभव है, मैं सितम्बर के अन्ततक लौट आऊं।

पहली मई को मैं एक सप्ताह के लिए गढ़वाल जा रहा हूं। स्वरूप मेरे साथ जायगी और हम बदरीनाथ और बर्फ पर थोड़ी-सी हवाई उड़ान करेंगे। गढ़वाल से लौटकर मैं मंत्रियों की सभा और कार्यसमिति के लिए बम्बई जाऊंगा।

महात्मा गांधी, सप्रेम आपका,
जुहू (बम्बई) जवाहरलाल

२१५. महात्मा गांधी की ओर से

पेशावर जाते हुए, रेल में
३० अप्रैल १९३८

प्रिय जवाहरलाल,

जिन्ना के साथ ३॥ घंटे की बातचीत का जो संक्षिप्त विवरण लिख डाला है, उसकी नकल साथ में है। संभव है, तुम्हें और दूसरे सदस्यों को बातचीत का आधार पसन्द न आये। स्वयं मुझे तो और कोई चारा नहीं दीखता। आज मेरी कठिनाई यह है कि मैं तुम्हारी तरह देश में इधर-उधर घूमता नहीं और इससे भी गंभीर बाधा वह भीतरी निराशा है, जो मुझपर छा गई है। मैं काम चला रहा हूं, परन्तु यह सोचकर आत्म-ग्लानि होती है कि मेरा वह आत्म-विश्वास जाता रहा, जो मुझमें एक महीने पहले था। मुझे आशा है कि मेरे जीवन में यह सिर्फ एक अस्थायी घटना है। मैंने यह जिक्र इसलिए कर दिया है कि तुम्हें प्रस्तावों पर उनके गुणों के आधार पर जांचने में मदद मिले। मैं नहीं समझता कि पहले प्रस्ताव के बारे में कठिनाई पेश आयेगी। दूसरा प्रस्ताव अपने सारे गूढ़ार्थों सहित

अनोखा है। अगर वह तुम्हें न जंचे तो उसे योंही अस्वीकार कर देने में संकोच न करना। इस मामले में तुम्हें आगे होना पड़ेगा।

मैं ११ तारीख को लौट आने की आशा रखता हूं। मेरे इस तार के उत्तर में कि सुभाष को जिन्ना के साथ जाव्ते से समझौते की बातचीत शुरू करनी चाहिए, उनका तार है कि वह १० तारीख को बम्बई में होंगे। मैं चाहता हूं कि तुम भी वहां जल्दी जा सको। मैं मौलानासाहब को इसी ढंग से लिख रहा हूं और इस पत्र की नकल उन्हें भेज रहा हूं।

प्यार,

बापू

२१६. महात्मा गांधी की ओर से

७ मई १९३८

प्रिय जवाहरलाल,

गांधी सेवा संघ के नये स्वरूप में ऐसी कौन-सी बात है, जिसने तुम्हें अशांत बना दिया? मैं स्वीकार करता हूं कि उसकी जिम्मेदारी मेरी है। मैं चाहता हूं कि तुम मुझे निःसंकोच बताओ कि तुम्हें किस चीज से अशांति हुई है? अगर मेरी भूल हुई है तो तुम जानते हो कि भूल मालूम होते ही मैं अपने कदम पीछे हटा लूंगा।

आम हालात खराब होने के बारे में मैं तुमसे सहमत हूं, भले ही दुर्बल स्थानों के संबंध में हमारा मतभेद हो।

शेष मिलने पर।

प्यार,

बापू

२१७. महात्मा गांधी की ओर से

सेगांव, वर्धा
२६ मई १९३८

प्रिय जवाहरलाल,

तुम कितने काम से काम रखनेवाले और मुस्तैद हो। मुझे खुशी है कि तुमने गुड़गांव जिला कांग्रेस कमेटी के मामले की जांच कर ली। आशा है, दोनों फरीक तुम्हारी सलाह को मान लेंगे। ऐसा ही होना चाहिए।

आज तुम्हारा पत्र मेरी और जिन्ना की बातचीत के मेरे विवरण के

बारे में मिला और मेरा खयाल है कि उनसे मेरी दूसरी बातचीत अनिवार्य थी। मुझे आशा है कि इससे कोई हानि नहीं होगी। तुम्हें समय मिल जाय तो जाल से मिलने के बाद मैं चाहूंगा कि तुम मुझे दो शब्द लिख भेजो। क्या अच्छा हो, यदि तुम अपने यूरोप के दौरे के दिनों थोड़ा-सा आराम ले लो और यहां की तरह सारा समय भाग-दौड़ में ही न बिता दो।

प्यार, बापू

२१८. गोविन्दवल्लभ पन्त की ओर से

ब्रुक हिल हाउस
नैनीताल
३० मई १९३८

प्रिय जवाहरलालजी,

खेद है कि आपके रवाना होने से पहले अपनी शुभकामनाएं प्रकट करने तथा आपसे विशेष मामलों पर बातचीत करने मैं स्वयं नहीं आ सका। जब २१ या २२ तारीख को मैं आपके साथ था, तब उपाध्याय से हो रही आपकी बातचीत से मैं समझ गया था कि आप उसी रात को १०-३० बजे आजमगढ़ के लिए रवाना होंगे। मैं आपके यहां लगभग ८ बजे पहुंचा और तेजी से रेलवे स्टेशन गया, परन्तु दुर्भाग्य से आपसे मुलाकात नहीं हो सकी। आपको विदा करने मैंने इलाहाबाद जाना चाहा, परन्तु ऐसा करने में मैं असमर्थ था, क्योंकि अपनी लड़की की बीमारी के कारण, जो कि तेज मियादी बुखार से पीड़ित है, मुझे अचानक नैनीताल जाना पड़ा। जब आप हिन्दुस्तान से बाहर जा रहे हैं, मैं अपनी समस्याओं और कठिनाइयों का रोना सुनाकर आपको परेशानी में डालना नहीं चाहता। मैं आपकी निर्विघ्न और सुखकर यात्रा, यूरोप में आपके प्रसन्नतापूर्ण समय तथा जल्दी ही हिन्दुस्तान वापसी के लिए शुभ-कामना भेजता हूं। देश से आपकी गैरहाजिरी से निस्संदेह हमारी कठिनाइयां बढ़ जायंगी। प्रान्त में दूसरा कोई ऐसा प्रभावशाली व्यक्तित्व नहीं है, जिसके पास मुसीबत के समय विश्वास के साथ सही सलाह और मार्ग-दर्शन के लिए हम जा सकें, और जो, अगर ऐसी जरूरत आ पड़े तो प्रभावकारी ढंग से मामलों में हस्तक्षेप कर सके। तो भी मैं महसूस करता हूं कि संसार की

वर्तमान स्थिति पर विचार करते हुए, देश के व्यापक हितों के लिए, यह अनिवार्य है कि आप यूरोप जायं। वर्तमान संगठन वड़ी अनिश्चित अवस्था में है और नई व्यवस्था का उदय होना ही है, जिसका दूसरे देशों की तरह भारत पर भी एक-सा प्रभाव पड़ेगा। ऐसे समय में यह महत्वपूर्ण है कि हम वाहरी दुनिया से अपना संवंध वनायें और इस काम के लिए सारे हिंदुस्तानियों में आप सवसे अधिक उपयुक्त व्यक्ति हैं। हमपर तो शायद अपनी स्थानीय समस्याओं का ही वहुत ज्यादा भूत सवार है और हम मामलों को उस व्यापक दृष्टि से नहीं देख रहे हैं, जिस दृष्टि से देखना चाहिए। देश में फैली नीरस गंभीर उदासीनता धीरे-धीरे विचार और जीवन के नये स्पन्दनों को स्थान दे रही प्रतीत होती है और शहरी और ग्रामीण दोनों क्षेत्रों में काफी बड़े पैमाने पर वांछनीय और स्वस्थ क्रियाशीलता विद्यमान है। सर्वत्र लोगों की आंखें खुल रही हैं और समस्याएं स्पष्ट की जा रही हैं। तो भी मुझे इस मामले को विस्तार देने की जरूरत नहीं, क्योंकि यह पत्र पहले ही वहुत लंवा हो गया है।

आशा है, आप एक ऐसे निष्णात व्यक्ति के लिए मेरी प्रार्थना को ध्यान में रखेंगे, जो पुनर्निर्माण के काम में हमारा सहायक हो सके। यदि कोई आदमी मिल जाय तो मुझे अवश्य सूचित करेंगे।

चि. इन्दू से मिले तो उसे मेरा प्यार कहें।

सद्भावनाओं-सहित,

सस्नेह आपका,
गो. व. पन्त

[सन् १९३८ के जून के शुरू में मैं यूरोप गया। बम्बई से जिनेवा तक समुद्र से गया। वहां से मैं मार्सेलीज गया और मार्सेलीज से खुश्की की राह से बार्सेलोना गया, जहां मैंने कुछ दिन बिताये। उन दिनों स्पेन में गृहयुद्ध चल रहा था। इसके बाद मैं लन्दन चला गया।]

२१९. लार्ड लोथियन की ओर से

ब्लिकलिंग हॉल,
एल्स्हम
२४ जून १९३८

प्रिय श्री नेहरू,

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि आप इंग्लैंड सकुशल पहुंच गये और बार्सेलोना पर फ्रैंको के वमों से बच आये। मैं यहां ९ जुलाई के सप्ताहांत में आपका स्वागत करने की प्रतीक्षा में हूं। उस पार्टी में वहुत थोड़े लोग होंगे। आशा है, लेडी येस्टर होंगी। वह बड़ी विनोदप्रिय हैं और उनसे मिलकर आप प्रसन्न होंगे। जनरल आयरन साइड आयेंगे, जो कि इंग्लैण्ड के सर्वोत्तम योद्धाओं में से एक हैं, और जो आपको दुनिया के सैनिक और आम हालात से अवगत करा सकेंगे। शायद किसी दूसरे से वह जानकारी आपको हासिल नहीं हो सकेगी। श्री टामस जोन्स भी होंगे, जो बाल्डविन के प्रधान मंत्रित्व के काल में उनके सबसे नजदीकी सलाहकार थे और जो एक खास व्यक्ति हैं। मैंने सर फिंडलेटर स्टुअर्ट को भी वुलानें का कुछ विचार किया है। वह इंडिया आफिस के प्रधान हैं। बड़े अच्छे आदमी हैं, लेकिन मैं सोचता हूं कि वह कुछ ज्यादा सरकारी हो सकते हैं। इनके अलावा और कोई नहीं होगा। मुझे उम्मीद है कि पार्टी से पहले मैं आपसे मिलूंगा और तब अंतिम व्यवस्था पर विचार हो जायगा। मेरा मुख्य उद्देश्य सुन्दर वातावरण में आपको एक शांत सप्ताह जुटाना है, जहां हम कुछ बातचीत भी कर सकेंगे।

लोथियन

फिर से—

मुझे खेद है कि आपकी लड़की कहीं और व्यस्त है।

२२०. सर जार्ज शुस्टर की ओर से

[सर जार्ज शुस्टर तीसरी दशाब्दि के मध्य में भारत सरकार की कार्यकारिणी परिषद् में वित्त-मंत्री थे ।]

३० सेंट जेम्स प्लेस,
लन्दन, एस. डब्ल्यू. १
७ जुलाई १९३८

प्रिय पंडित जवाहरलाल नेहरू,

मैं आपके उस भाषण के बारे में बहुत सोचता रहा हूं जो आपने मंगल की शाम को दिया था—खास तौर से आर्थिक समस्याओं के बारे में। मुझे अफसोस है कि मैं अपने विचार कुछ इस ढंग से रख रहा हूं कि उससे आपका मौखिक क्रोध (मैं समझता हूं कि वह मौखिक से अधिक और कुछ नहीं था) न्याय-संगत सिद्ध होगा। मैं इस बात को सचमुच बहुत ज्यादा महसूस करता हूं कि आपको हिंदुस्तान में जिन आर्थिक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है, वे मूलभूत कठिनाइयों से परिपूर्ण बड़ी महत्वपूर्ण समस्याएं हैं और ब्रिटिश प्रभाव को केवल हटा देने से वे हल नहीं हो सकेंगी।

आपने मुझे जो उत्तर भेजा है, उससे यह निष्कर्ष निकलता है कि असल में आप अंग्रेजों के संबंध को नहीं, बल्कि पूंजीवादी प्रणाली को रोग का मुख्य कारण मानते हैं और अंग्रेजों के संबंध पर आप जो आक्रमण करते हैं उसका आधार यह है कि आप पूंजीवादी प्रणाली को उसके साथ अनिवार्य रूप से जुड़ा हुआ मानते हैं। इससे कई मुश्किल सवाल उठ खड़े होते हैं, जिनके बारे में मैं आपसे विचार-विनिमय करना पसन्द करूंगा। लेकिन इस पत्र में मैं उनपर कुछ लिखने की चेष्टा नहीं करूंगा। इसमें तो मैं केवल दो-चार संक्षिप्त विचार प्रकट करूंगा।

मैं आपसे इस बारे में सहमत हूं कि हिंदुस्तान की भौतिक स्थिति को सम्हालने के लिए जिस वस्तु की आवश्यकता है वह है राष्ट्रीय प्रयत्न—इस राष्ट्रीय प्रयत्न के कार्यक्षेत्र में इतनी व्यापकता होनी चाहिए और उसे प्रेरणा देनेवाली भावना में इतनी प्रबलता होनी चाहिए, जितनी कि पूंजीवादी प्रणाली को संचालित करनेवाले उद्देश्यों तथा लाभ की आकांक्षा

से प्राप्त नहीं हो सकती। मेरा विश्वास है कि यह प्रयत्न एक महान सहकारिता की भावना पर आधारित होना चाहिए और वह हिंदुस्तान के तमाम गांवों में राष्ट्रीय नेताओं द्वारा फैलाया जाना चाहिए। दूसरी ओर, मैं यह भी विश्वास करता हूं कि आप जैसे राष्ट्रीय नेता उद्योग पर घातक आघात किये विना ही अधिकांश सफलता प्राप्त कर सकते हैं, क्योंकि वह उद्योग आजकल मुख्यतः शहरों में केन्द्रित है।

इन विषयों के प्रति अपनी विचारधारा का स्पष्टीकरण करने के लिए मैं एक पेम्फ्लेट भेज रहा हूं। इसमें मेरा वह भाषण है जिसे मैंने आज से साढ़े तीन साल पहले (हिंदुस्तान से लौटने के तत्काल बाद ही) लंदन की रॉयल सोसाइटी ऑव आर्ट्‌स में दिया था। निश्चय ही यह बहुत ही प्रारम्भिक ढंग का है और मुझे आशा नहीं है कि यह आपके लिए अधिक उपयोगी सिद्ध हो सकेगा। फिर भी मुझे विश्वास है कि मैंने जो कुछ भी कहा है उसमें आप सत्य का अंश पायेंगे और समस्या तक पहुंचने के मेरे तरीके और ढंग को पूर्ण रूप से सहानुभूतिरहित नहीं पायेंगे। आप देखेंगे कि इस भाषण में मैंने कहा था कि इस विषय पर मैं गांधीजी के बहुत-से विचारों से सहमत हूं। यदि आप इसको पढ़ने का समय निकाल सकें और इस संबंध में मुझसे आगे बातचीत करें तो मैं अपनेको बड़ा सम्मानित मानूंगा।

एक और चीज है, जिसके बारे में मैं आपसे फिर से बात करने का अवसर प्राप्त करना चाहूंगा। मंगल की शाम को मैंने आपको यह योजना बताई थी कि मिस्टर विन्ट नाम के जिस नवयुवक से मैंने आपका परिचय कराया था उन्हें कुछ विशेष विषयों का अध्ययन करने के लिए हिन्दुस्तान भेजा जाय। यदि आप इस समय मुझसे मिलने का अवकाश न निकाल सकें तब भी मुझे आशा है कि आप मिस्टर विन्ट को हिंदुस्तान में अपने से मिलने के लिए अवसर देंगे। जब वह आपके पास मेरी यह प्रार्थना स्वयं लेकर जायंगे तब मैं आपको और भी अधिक विस्तार से बताऊंगा कि हम क्या करना चाहते हैं।

यदि आप समय निकाल सकें तो आर्थिक और राजनैतिक प्रश्नों पर मतभेद होते हुए भी, मुझे और मेरी पत्नी को आपसे यहां लन्दन में

अपने घर पर मिलने का अवसर पाकर हार्दिक प्रसन्नता होगी। क्या आप सोमवार को हमारे यहां—जहां परिवारवालों के अतिरिक्त और कोई नहीं होगा—रात का भोजन करने आ सकेंगे ?

आपका,
जार्ज शुस्टर

पंडित जवाहरलाल नेहरू,
ऑरमैन्डे हाउस।

२२१. मैडम सनयात सेन की ओर से

चाइना डिफेंस लीग
सेन्ट्रल कमेटी,
हांगकांग
७ जुलाई १९३८

प्रिय श्री नेहरू,

मैं आपसे जॉन लीनिंग का परिचय कराना चाहती हूं, जो यहां से हिंदुस्तान के लिए रवाना हो रहे हैं। मिस्टर लीनिंग हमारे चाइना डिफेंस लीग की कार्यकारिणी के सदस्य हैं और चीन में जब जापानी आक्रमण की लहर आई थी तब की और उसके बाद की स्थिति की वह प्रत्यक्ष जानकारी रखते हैं। चीन के प्रति उनकी मित्रता बहुत गहरी और सच्ची है। वह सब प्रकार की विघ्न-बाधाओं का सामना करते हुए भी प्रजातंत्र के हित का समर्थन करेंगे।

चूंकि आप चीन के एक बहुत बड़े मित्र हैं, मुझे विश्वास है कि आप हमारे प्रतिरोध-आन्दोलन के संबंध में सारी बातें एक ऐसे आदमी से जानना पसन्द करेंगे जो कि युवक-वर्ग के निकट सम्पर्क में है।

आपने हमारे प्रति जो सहानुभूति और मैत्री व्यक्त की है उसे जान कर हम आपके कृतज्ञ हैं। उससे हमें प्रोत्साहन मिला है और इस अवसर पर हम आपके प्रति अपनी कृतज्ञता और मित्रता के भाव व्यक्त करना चाहते हैं।

हार्दिक अभिवादन-सहित,

आपकी,
सुंग चिंग लिंग

२२२. हैवलेट जॉनसन की ओर से

डीनरी
कैन्टरबरी
१६ जुलाई १९३८

प्रिय श्री नेहरू,

कैसी आनन्ददायक पुस्तकें भेजी हैं आपने ! मैं इनके लिए बड़ा कृतज्ञ हूं और फुर्सत मिलते ही मैं इन्हें पढ़ने में बड़ी लगन के साथ जुट जाऊंगा।

आपका यहां आना हम लोगों के लिए सदा एक सुखद स्मृति बना रहेगा। उसे हम उतना ही महत्व देते हैं, जितना मिस्टर गांधी की यात्रा को। मैं तो यह भी कहने का साहस करता हूं कि आपकी यह यात्रा उनकी यात्रा की उसी प्रकार पूरक है, जिस प्रकार आपकी नीति उनकी नीति की। आपकी अगली यात्रा की मैं बड़ी उत्सुकता से प्रतीक्षा करूंगा। आशा है, वह इस बार अधिक लंबी होगी।

आदरसहित,

आपका,
हैवलेट जॉनसन

२२३. एडवर्ड टामसन की ओर से

बोर्स हिल, ऑक्सफोर्ड
२० जुलाई १९३८

प्रिय जवाहरलाल,

कुछ मनोदशाओं में मैं एक अभिमानी व्यक्ति हूं, (मुझे आशा है कि मैं घमंडी नहीं हूं, वह तो बिल्कुल दूसरी चीज है) और उस अभिमान के कारण भी हैं। लेकिन आजतक मुझे किसी भी चीज से इतना अभिमान नहीं हुआ, जितना कि इस किताब से, जिसपर आपने लिखा है—"मेरे मित्र एडवर्ड टामसन को।"

मैं जानता हूं, आप ऐसे व्यक्ति हैं, जो अपनी अल्पभाषिता को अमानवीय दर्जे तक ले जाते हैं। मैं यह भी जानता हूं कि आप जो कहते हैं, उससे उन सारी चीजों का बोध होता है, जो उन शब्दों में लाई जा सकती हैं।

मुझे आपसे और आपकी प्यारी बेटी तथा श्रीमती रॉबसन से मिलकर बड़ी खुशी हुई।

आपका,
एडवर्ड टॉमसन

२२४. श्रीमती पॉल रॉबसन की ओर से

लन्दन
शुक्रवार की शाम
जुलाई १९३८

प्रिय श्री नेहरू,

आज के आनन्ददायक भोजन के लिए अनेक-अनेक धन्यवाद। पॉल और मैं आपके बहुत बड़े प्रशंसक हैं और हमारे साथ आपने अनुग्रहपूर्वक जो दो घंटे बिताये, उनसे हम रोमांचित हो उठे। किसी ऐसे आदमी के साथ, जिसकी रुचियां अपनी जैसी हों और जो हमारी विशेष समस्याओं और पृष्ठभूमि को समझता हो, आजादी के साथ बातचीत कर सकना एक बहुत बड़ा सौभाग्य है।

जैसाकि मैंने वचन दिया था मैं आपको राष्ट्रीय नीग्रो कांग्रेस की कारंवाइयों का संक्षिप्त विवरण भेज रही हूं। साथ में मैं अपनी भी एक विनम्र कृति भेज रही हूं, जिसे लिखे आठ साल से भी अधिक हो गये हैं। अब जब मैं बड़ी हो गई हूं, मुझे वह बचकानी-सी मालूम होती है, लेकिन उससे कुछ सीमा तक उस उद्देश्य की पूर्ति तो होती ही है, जिसकी पूर्ति मैंने उससे करनी चाही थी, अर्थात् उससे अमरीका में हब्शियों की पृष्ठभूमि की एक झलक मिल जाती है। मैंने जान-बूझकर उसे व्यक्तिगत कथा का रूप दिया है, क्योंकि मुझे लगा कि किसी दूसरे रूप में लोग हब्शियों की पृष्ठ-भूमि में रुचि नहीं लेंगे। मुझे इसका बड़ा ही आश्चर्यजनक पुरस्कार मिला, क्योंकि लोगों ने उसे खूब खरीदा और पढ़ा और अब भी खरीदते तथा पढ़ते हैं और अनजाने ही कुछ तथ्यों का परिचय प्राप्त कर लेते हैं।

जैसाकि निश्चय हुआ था, हम आपके साथ अगले सोमवार को गोले-

गल्लेन्ट्स में खाना खायेंगे। आपसे फिर मिलने की प्रतीक्षा में,

आपकी,
स्लेंडा गुड रॉबसन

२२५. मुस्तफा-अल-नहास की ओर से

[जून १९३८ के शुरू में जब मैं समुद्र के रास्ते से यूरोप लौट रहा था तो मेरा जहाज स्वेज में रुका। वहां आने से कुछ ही पहले मुझे मिस्र की वफ्द पार्टी के नेता नहास पाशा का संदेश मिला, जिसमें मुझे निमंत्रण दिया गया था कि मैं सिकंदरिया में उनसे मिलूं। मैंने फौरन स्वेज से सड़क द्वारा काहिरा, और फिर हवाई जहाज से सिकंदरिया, जहां नहास पाशा और उनके साथियों से मैं मिला, जाने का निश्चय किया। उसके बाद मैं पोर्ट सईद गया और वहां किसी तरह से जहाज पकड़ लिया, जो कि इस बीच स्वेज नहर से चला गया था।

दिसंबर १९२८ में यूरोप से हिंदुस्तान आते समय में कुछ दिनों के बाद मिस्र में रुका। मेरी बेटी इंदिरा मेरे साथ थी।]

सां स्तिफनो
२ अगस्त १९३८

प्रिय जवाहरलाल नेहरू,

मुझे जहाज और लंदन से भेजे आपके दोनों दोस्तीभरे खत मिले, जिनमें आपने मेरे साथियों और मेरे लिए वड़े नेक जज़बात ज़ाहिर किये हैं।

कहने की जरूरत नहीं कि आपके आने से हम लोगों को, और खासकर मुझे, कितनी खुशी हुई और उसकी याद कभी मिट नहीं सकती।

हालांकि आप कुछ घंटे ही हमारे साथ रहे, पर वाकई यह एक खुशगवार मौका था और उससे हमें उस पाक मक़सद के बारे में अपने खयालात और जज़बात एक-दूसरे के सामने जाहिर करने का मौका मिला, जिसके लिए हम अपने दोनों मुल्कों में लड़ रहे हैं। अगर सिर्फ हमारे दोनों मुल्कों की एक-सी आजादी की जद्दोजहद को मिलाया जा सके तो हमारे मिलने से जरूरी तौर पर एक बहुत बड़ा फायदा होगा।

अगर मुझे आपको लिखने में देर हुई है तो इसलिए क्योंकि सबसे

पहले मैं हमारी नेशनल वफ्दिस्ट कांग्रेस की मीटिंग की तारीख तय करना चाहता था, जिससे मैं आपको निजी हैसियत से और आपकी पार्टी के डेलीगेशन को मीटिंग के दौरान मिस्र घूमने के लिए दावत दे सकूं। अभी तक मैंने यूरोप के सफर का अपना पक्का प्रोग्राम भी तय नहीं किया है।

वफ्द (वफ्दिस्ट पार्टी) ने अभी फैसला किया है कि इस साल हमारी कांग्रेस की मीटिंग २४ और २५ नवंबर को होगी। इसने यह भी फैसला किया है कि इस साल हिंदुस्तानी कांग्रेस, नजदीक-पूरब के दबाये हुए लोगों की कांग्रेस, फिलस्तीन की कांग्रेस और दीगर अरब अवाम को भी बुलाकर, अपनी कांग्रेस को मुल्की शक्ल देने के अलावा एक नई शक्ल दी जाय। अपने साथियों और अपनी तरफ से यह बुलावा आपको और कांग्रेस के डेलीगेशन को देते हुए मुझे बड़ी खुशी महसूस होती है।

कहने की जरूरत नहीं कि आपकी तरफ से बुलावा आने पर हम भी खुशी से वफिदस्ट पार्टी का डेलीगेशन हिंदुस्तान भेजेंगे।

जहांतक यूरोप में मेरे सफर के प्रोग्राम का ताल्लुक है, मैंने अपनी बीवी के साथ इस तरह तय किया है : ११ अगस्त को हम लोग 'कवमार' जहाज में जिनेवा के लिए सवार होंगे और मांतेकातिनी (इटली) को इलाज के लिए जायंगे। यह इलाज करीब-क़रीब पंद्रह से बीस दिन तक (पॉस होटल में) चलेगा। इलाज के बाद हम लोग दस रोज तक कोरतीना दम्पेज़ो (इटली मिरामोंती होटल) में आराम करेंगे। उसके बाद स्विट्जरलैंड होते हुए पेरिस जायंगे। अगर हमारे लिए ठीक रहा तो हम लोग वहां रुक सकते हैं। ११ अक्तूबर तक हम पेरिस में रहेंगे और १२ अक्तूबर को नील में मार्सेल्स पर जहाज में बैठकर वापस लौटेंगे।

अगर इस सफर में यूरोप में हम लोग कहीं भी मिल सकें तो वाकई बड़ी खुशी की बात होगी और पिछली १० जून को सां स्तिफानों में हमने जो दिलचस्प बातचीत शुरू की थी, उसे जारी रखने का हम दोनों को मौका मिलेगा।

मैं अलग लिफाफे में आपके यहां आने के वक्त की तीन तस्वीरें भेज रहा हूं।

आपका,

एम. नहास

२२६. महात्मा गांधी की ओर से

सेगांव, वर्धा
३१ अगस्त १९३८

प्रिय जवाहरलाल,

अपनी सीमित शक्ति के कारण मुझे मजबूर होकर तुम्हें लिखने की इच्छा को दवा देना पड़ा था।

इन्दू के बारे में मेरे तार के तुम्हारे जवाब की प्रतीक्षा है।

संघ के संबंध में तुम्हारी चेतावनी मैंने समझ ली है। मैं इस खबर पर विश्वास नहीं करता यानी अगर वह अफवाह से कुछ अधिक है तो। पहले कांग्रेस की अनुमति लिये बिना वे उसे आमंत्रित नहीं करेंगे। अनुमति उन्हें मिल नहीं सकती।

फिर रही बात यहूदियों की, सो मेरा बिल्कुल तुम्हारे जैसा ही खयाल है। मैं विदेशी माल का बहिष्कार करता हूं, विदेशी योग्यता का नहीं। और पीड़ित यहूदियों के लिए तो मेरी भावना तीव्र है। एक ठोस प्रस्ताव के रूप में मेरा सुझाव है कि तुम सबसे योग्य व्यक्तियों के नाम इकट्ठे करलो और उन्हें साफ बता दो कि उन्हें हमारे भाग्य के साथ अपना भाग्य मिला देने और हमारा जीवन-स्तर स्वीकार करने को तैयार होना पड़ेगा। बाकी महादेव लिखेंगे।

प्यार,

बापू

२२७. महात्मा गांधी की ओर से

(१९३८-३९)

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। मैं जानता हूं, गलतफहमियां हो सकती हैं। इनका और अज्ञान या स्वार्थपूर्ण आलोचना का मुझपर कभी असर नहीं हुआ। मैं जानता हूं कि अगर हम भीतर से मजबूत हैं तो सब ठीक हो जायगा। विदेशी मामलों में तुम मेरे पथप्रदर्शक हो। इसलिए तुम्हारे पत्र से मुझे सहायता मिलती है।

कुमारप्पा के मामले में तुमने काफी से ज्यादा क्षति-पूर्ति कर दी है।

उनका पत्र तुम देखना पसन्द करोगे। उसे पढ़कर फाड़ सकते हो। हां, उनके जैसे कार्यकर्ता हमारे पास बहुत थोड़े हैं।

प्यार,

बापू

२२८. एडवर्ड टामसन की ओर से

बोर्स हिल, ऑक्सफोर्ड
२ सितम्बर १९३८

प्रिय जवाहरलाल,

आपकी बहन और पुत्री की अस्वस्थता की खबर से हम दोनों दुखी हैं। विश्वास है, वे जल्द ही अच्छी हो जायंगी।

आयरलैण्ड जाते समय आपका लंदन का पता न लेकर मैंने कैसी बेवकूफी की। मैंने आपको प्राग् के पते पर तो लिखा ही, लंदन के उस बिल्कुल गलत पते से भी लिखा। यह पता मेरी मूढ़ कल्पना की ही ईजाद था।

मैंने अभी कोर्डा से फोन पर बातचीत की है। वह रविवार को विमान द्वारा लंदन जा रहे हैं और सोमवार की शाम को अमरीका रवाना होंगे। इसलिए, अगर आप कुछ सप्ताह लंदन में रुकें तो ठीक ही है, अगर नहीं तो आपसे न मिल सकने का उन्हें बड़ा मलाल रहेगा।

वह निश्चित रूप से एक पखवारे के अन्दर अमरीका से लौट आयेंगे। उन्हें गुप्त रूप से यह चेतावनी दे दी गई है कि राजनैतिक अनिश्चय के कारण अधिक समय तक वहां रहना ठीक न होगा। विदेशों में जो आशावाद प्रकट किया जा रहा है उसका आधार गलत है। न्यूरेम्बर्ग रैली से पहले निश्चित रूप से कुछ कहा नहीं जा सकता।

हो सकता है, कोर्डा अपनी अमरीका-यात्रा मुल्तवी कर दें, ऐसी कुछ सम्भावना है। इस बारे में वह मुझे कल तीसरे पहर फोन पर बतायेंगे।

लेकिन आप और आपके लोग क्यों न स्टूडियो देख लें। अगर कोर्डा सोमवार को अमरीका रवाना हो भी गये तो भी यह देखने में तो कोई रुकावट होनी नहीं चाहिए कि आधुनिक सभ्यता का उनका "पेस्ट नम्बर वन" कैसे चल रहा है।

अथवा; अगर वह चले गये तो आप ऐसा क्यों न करें कि सप्ताह के

बाद में, जब आपकी बहन बिल्कुल स्वस्थ हो जायं और इंदिरा भी आने की स्थिति में हो, आप यहां चले आयें? बुधवार या गुरुवार को। आप लोग दोपहर का खाना हमारे साथ खायें, चाय भी यहीं पियें। हम आपको अरब गांव के सामने बहती हुई नदी, सूडानी किला, विक्टोरियन महल आदि दिखायेंगे। बड़ी मजेदार चीजे हैं। आप जोल्टन कोर्डा से भी मिल सकेंगे। इन सबके पीछे उन्हींका कला-कौशल है।

जो हो, कल रात जब आप फोन करेंगे तो मैं आपको यह निश्चित रूप से बता सकूंगा कि कोर्डा अपनी अमरीका-यात्रा स्थगित कर रहे हैं या नहीं।

प्राग् से लिखा गया आपका पत्र बड़ा दिलचस्प और बहुत ज्ञानवर्द्धक था। मुझे बहुत पहले से मालूम है कि एलेन आॅव हर्टवुड एक असहनीय कंटक था। लेबर पार्टी में लोग उसे क्रीपिंग जीसस के नाम से पुकारते हैं।

अगर कोर्डा के जाने के बाद सप्ताह में देर से किसी दिन आना सुविधाजनक रहे तो आपकी बहन और पुत्री को देखने का आनन्द लाभ कर सकूंगा। आशा है, बुधवार तक वे दोनों अच्छी हो जायंगी।

अब ऐसा लगता है कि कोर्डा को गुप्त चेतावनी दी जाने की बात शायद नहीं कहनी चाहिए थी। लेकिन आपसे कहने में क्या हर्ज! पता होने पर आप भी वही चेतावनी देते।

आपका,

एडवर्ड टामसन

स्टूडियो का निकटवर्ती स्टेशन डेनहम (पेडिंग्टन से) है, जो वेकंस-फील्ड / प्रिंसेज रिसबरा लाइन पर है। आध-आध घंटे पर गाड़ी छूटती रहती है। हमने समय का पक्का पता करने की कोशिश की थी। लेकिन स्टेशन आफिस बन्द हो चुका था। फिर भी, गाड़ियों की संख्या काफी है।

२२९. जे. बी. कृपालानी की ओर से

स्वराज भवन,

इलाहाबाद

९ सितम्बर १९३८

प्रिय जवाहर,

मुझे अफसोस है, पिछले कोई तीन हफ्तों से तुम्हें नहीं लिख सका।

मैं इलाहाबाद में नहीं था। वर्धा होता हुआ मैं परसों लौटा हूं, जहां अध्यक्ष, मौलानासाहब, वल्लभभाई और राजेन्द्रबाबू किसी-न-किसी काम से मौजूद थे। मैंने उनसे कृष्ण मेनन के बारे में बात कर ली। जो कुछ मैंने तुमको लिखा था, उस बारे में वे सब मुझसे सहमत थे। उन्होंने मुझसे यह भी कहा कि मैं मेनन को लिख दूं कि ग्लासगो में होनेवाली 'शांति और साम्राज्य कांग्रेस' में वह हमारा प्रतिनिधित्व कर सकते हैं। इसीके अनुसार मैंने मेनन को लिख दिया है। सुभाष ने कहा कि इस परिषद् को वह अपना एक सन्देश भेजेंगे। मुझे आशा है, वह जरूर भेजेंगे।

वप्दिस्ट कांफ्रेंस में शामिल होने के निमंत्रण को मंजूर करने के बारे में अभी कुछ तय नहीं हुआ। जब हम दिल्ली में २० तारीख को मिलेंगे तब मैं समिति के सामने मामले को दुबारा रख दूंगा। इस बार महासमिति की बैठक भी होगी। जुलाई में कार्य-समिति की पिछली बैठक में बापू ने युद्ध और सैनिक शिक्षा के बारे में अपने विचार हमें संक्षेप में सुनाये थे। यह सब जल्दी में किया गया था और बैठक के बिल्कुल अन्त में। यह सुझाव दिया गया था कि पूरे दो दिन खास तौर पर इसी सवाल की चर्चा के लिए रखे जायं। इसलिए इस बार दो दिन इसके लिए दिये गए हैं। हम २० को दिल्ली पहुंच जाना चाहते हैं, जबकि यह घोषित किया गया है कि हमारी औपचारिक बैठक २२ को शुरू होगी। महासमिति २४ से शुरू होगी।

यूरोप की स्थिति के बारे में ता० ३० को बुडापेस्ट से लिखे तुम्हारे पत्र की नकलें मैंने कार्यसमिति के सभी सदस्यों को भेज दी हैं। चूंकि हम शीघ्र ही मिल रहे हैं, इसलिए मध्य यूरोप की स्थिति की अलग से चर्चा के लिए कोई खास बैठक नहीं बुलाई जा सकती। युद्ध, शस्त्रीकरण और सैनिक शिक्षा के बारे में हमारा जो आम रुख है, उसीके प्रकाश में, मुझे विश्वास है कि इस सवाल पर चर्चा हो जायगी। तुम जानते हो कि केंद्रीय धारा-सभा ने भर्ती-विरोधी विधेयक स्वीकार कर लिया है, जिसमें सैनिक-भर्ती के खिलाफ प्रचार पर सजा रखी गई है। मुस्लिम लीग ने सरकार के साथ मत दिया। इसलिए युद्ध और दूसरे संबंधित विषयों पर हमारे रुख के सवाल पर पूरी तरह से अगली बैठक में विचार होगा। मैं चाहता हूं कि तुम उस समय यहां हो। यह इच्छा वर्धा में हमारे दूसरे मित्रों ने भी प्रकट

की है। वल्लभभाई तो कहते थे कि दिल्ली की बैठकों के लिए तुम समय से हवाई जहाज द्वारा आ सको तो बहुत अच्छा हो। आम तौर पर यह महसूस किया जाता है कि यह समय है जब तुम घरेलू राजनीति में हमारी मदद करो।

१ ता. को बुडापेस्ट से तुमने जो पत्र भेजा था, उसकी नकल मैंने बापू के पास भेज दी है। तुमको शायद याद हो कि फेडरेशन के बारे में बापू मित्रों को जो छोटे-छोटे पत्र लिखते रहे हैं, उसी प्रसंग में यह पत्र था। वर्धा में मैंने बापू के नाम आई अगाथा हैरिसन की चिट्ठी पढ़ी थी। उन्होंने लिखा था कि उन्हें दुःख है कि भूलाभाई के रुख को गलत समझा जा रहा है और उसे गलत ढंग से प्रस्तुत किया जा रहा है। उनका कथन है कि उन्होंने लन्दन में ऐसी कोई बात नहीं कही जो हमारे प्रस्तावों में प्रकट किये गए कांग्रेस के रुख से मेल न खाती हो। इसका महत्व जो भी हो, यह तो केवल तुम्हारी जानकारी के लिए लिख दिया है।

मुझे मालूम हुआ है, पिछली बार इंग्लैंड में जिन विभिन्न लोगों या गुटों से तुम मिले, उनके प्रति जो रुख तुमने अख्तियार किया, उससे बापू को बड़ा संतोष हुआ। तफसील में कोई राय नहीं दी, लेकिन तारीफ जोरदार की। किसी और ने कोई राय जाहिर नहीं की। मुझपर जो असर हुआ, वह मैंने तुमको लिख दिया है। संघ, संविधान-सभा और स्वतंत्रता के बारे में तुमने जो रुख अपनाया, उसकी हरकोई सराहना करता है। मेरी अपनी राय तो यह है कि मजदूर-दल ने योजना की जो रूपरेखा प्रस्तुत की है, उसका आज बहुत कम व्यावहारिक मूल्य है। भविष्य में उसका मूल्य क्या होगा, यह बहुत-कुछ इंग्लैंड की दलीय राजनीति पर निर्भर करता है। लेकिन इस और किसी दूसरी चीज का भी दारोमदार आखिरकार विश्व-स्थिति पर है। यह बिल्कुल संभव है कि दुनिया की बिगड़ती हुई हालत के साथ इंग्लैंड हमारी बात और ज्यादा मानने को तैयार हो जाय, लेकिन उसकी आम राजनीति अनुदार ही रह सकती है। बाहरी खतरा अक्सर तीव्र घरेलू राजनैतिक नीतियों पर विपरीत प्रभाव डालता है। फिर भी मजदूर-दल के ज्ञापन को अगर प्रकाशित कर दिया जाता है तो प्रचार की दृष्टि से इसकी बड़ी कीमत होगी। कम-से-कम वह इतना तो दिखा देगा कि कुछ

गुट, वर्तमान में वे कितने ही छोटे क्यों न हों, हमारे साथ यह सोचते हैं कि हिंदुस्तान और इंग्लैंड में दोस्ताना संबंधों या किसी व्यापाराना समझौते से अधिक और कुछ नहीं होना चाहिए। वहां की जनता हिंदुस्तान की आज़ादी के विचार को अच्छी तरह जान लेगी।

तुम्हारे खत में दफ्तर से संबंध रखनेवाली जितनी भी सूचनाएं थीं, सबपर अमल हो गया है। लोहिया अब भी दफ्तर में बने हैं और अपना हमेशा का काम कर रहे हैं। मैंने उनसे कह दिया है कि तुम्हारे आने से पहले वह नहीं जा सकते। अहमद इस महीने के शुरू से ही हमें छोड़कर चले गये हैं, परन्तु वह यहीं बस गये हैं। अशरफ़ भी अपना काम कर रहे हैं।

चीन जानेवाले हमारे शुश्रूषा-दल के साथ कोई राजनीतिज्ञ भी रहे, तुम्हारे इस सुझाव को मैंने वर्धा में अपने साथियों के सामने रख दिया है। परन्तु यह दल रवाना हो गया, उसके बाद तुम्हारा वह पत्र मुझे मिला। इस-लिए उन्होंने कहा कि इस प्रश्न पर भी अगली बैठक में ही विचार हो सकेगा।

यहां जो कुछ चल रहा है वह सब विजयालक्ष्मी ने तुमको बताया होगा। हमें यह जानकर खुशी हुई कि अब इन्दिरा की सेहत पहले जैसी ठीक हो गई है। हम आशा करते हैं कि इस परिवर्तन से विजयालक्ष्मी भी बेहतर महसूस कर रही होंगी। अहमदाबाद में भारती से मालूम हुआ कि तुम्हारा स्वास्थ्य भी बहुत अच्छा नहीं है। थोड़ा आराम क्यों न कर लें? हर आदमी पूछ रहा है कि तुम कबतक घर वापस आ रहे हो? तुम उसका कोई अंदाज ही नहीं कराते। इस संबंध में अपनी राय लिखो।

मेरा और सुचेता का तुम सबको प्यार।

सप्रेम तुम्हारा,
जीवत

२३०. क्रिस्टीन ह. स्टर्जन की ओर से

कैर्नगोर्म,
ब्यूरी मिडलोथियन
१९ सितम्बर १९३८

प्रिय डाक्टर नेहरू,

पिछले सप्ताह के 'मैनचेस्टर गार्जियन वीकली' में आपका जो अत्यंत

सुन्दर पत्र छपा है, उसके लिए मैं आपको धन्यवाद देना चाहती हूं। उस पत्र में आपने बड़े ही गौरव और स्पष्टवादिता के साथ वे भावनाएं व्यक्त की हैं जो आजकल के दुःखमय समय में हममें से भी बहुत-से लोग अनुभव करते हैं। मुझे उम्मीद है कि आपको इसी प्रकार के और भी पत्र उन लोगों के पास से प्राप्त होंगे, जिन्हें मेरी ही तरह आजकल की अपनी सरकार की नीतिहीनता से धक्का और आघात लगा है और जो सच्चाई को जान गये हैं।

हम यहां के महत्वपूर्ण व्यक्तियों में से नहीं हैं, लेकिन मैं समझती हूं कि इस देश में हम जैसे सरल, शांतिप्रिय और मूलतः अच्छे आदमियों का बहुमत है, यंद्यपि हमारे पास वह संस्था नहीं है जिसके जरिये हम अपनी आवाज दूसरों तक पहुंचा सकें। शायद कभी वह दिन आयेगा जब सामूहिक रूप से हम इतने उद्वेलित हो उठेंगे कि दूसरों को अपनी इच्छा महसूस करा सकें।

इसके पहले कि आज जो कुछ भी कलकल करता हुआ एक साधारण-सा झरना मालूम देता है वह एक तीव्र वेगवती धारा बनकर उन्नति के मार्ग में आनेवाली धाराओं को बहा ले जाय, हमें शिक्षा, जागृति और संगठन के एक लम्बे और कठोर रास्ते को पार करना है। लेकिन मैं आपको यह बताना चाहती हूं कि हममें से बहुत-से लोग बौद्धिक और आत्मिक रूप से आपके साथ हैं। 'मैनचेस्टर गार्जियन' में प्रकाशित आपके पत्र के उत्तर में आपको जितने भी पत्र मिलेंगे, समझ लीजिये कि उतने ही सैकड़ों और हजारों ऐसे अज्ञात तथा संतप्त लोग हैं, जिन्हें आपने सोचने में सहायता दी है, किन्तु जो आपको यह बात लिखते नहीं।

एक बार फिर आपको धन्यवाद। भगवान करे, आजाद हिंदुस्तान और प्रजातंत्रीय विश्व के लिए आप जो कार्य कर रहे हैं वह हर तरह से फले-फूले।

आपकी,
क्रिस्टीन ह. स्टर्जन

२३१. टी. मैस्की की ओर से

१० अक्तूबर १९३८

प्रिय नेहरू,

मुझे यह सुनकर दुःख हुआ कि आप अब सोवियत यूनियन की यात्रा पर नहीं आ सकते। मैं जानता हूं कि इसके लिए आप कितने इच्छुक थे। मुझे उम्मीद है कि जो यात्रा आपको विवश होकर स्थगित करनी पड़ी है उसके लिए आप कभी भविष्य में अवसर निकाल सकेंगे।

आप से जिनेवा में मिलकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई थी और उस भेंट की मधुर स्मृतियां सदा मेरे साथ रहेंगी। मुझे हार्दिक आशा है कि आपकी पुत्री और बहन यदि अबतक बिल्कुल ही अच्छी नहीं हो गई हैं तब भी पहले से बेहतर जरूर होंगी।

आपका,
टी. मैस्की

२३२. मुस्तफा-अल-नहास की ओर से

हैलियोपोलिस
१७ अक्तूबर १९३८

प्रिय जवाहरलाल नेहरू,

आपके दोनों खत मिले और मैं तहेदिल से आपका उस हमदर्दी के लिए शुक्रगुजार हूं, जो हमारे काहिरा लौटने पर हमारे शानदार इस्तकबाल के दौरान में पुलिस के हाथों जान-बूझकर हमारी जान लेने के लिए की गई खौफनाक कोशिशों से बचने पर, मकराम पाशा और मेरे तईं आपने जाहिर की है। गहरी चोटों और घावों के बावजूद, जिनसे हमें अभी तक पूरी तरह आराम नहीं हुआ है, अल्लाह ने हमारी जिंदगी बचा दी।

मकराम पाशा को अपने माथे में बहुत बड़ा आपरेशन करवाना पड़ा। खुशी की बात है कि मकराम पाशा या मेरी कोई हड्डी नहीं टूटी। लोग बहुत भड़के हुए हैं।

हमारे कुछ दोस्तों को आपकी बहन के सिकंदरिया उतरने पर उनका इस्तकबाल करने में खुशी हासिल होगी और उनके साथ जाकर

उनके आराम के लिए सारी चीजों का इंतजाम करने का मौका मिलेगा।

जहांतक आपका और आपकी लड़की का ताल्लुक है, हमारे साथियों का एक डेलीगेशन आपको सिकंदरिया पर मिलेगा और सारे हफ्ते मिस्र में और काहिरा में अपने बीच आपको रखने का हमें मौका मिलेगा।

साम्राज्यशाही और फिलस्तीन में हाल ही में हुई सरकारी कान्फ्रेंस के बारे में आपके खयालात से हम एकराय हैं।

आपका,

मुस्तफा-अल-नहास

मैं इस खत की एक नकल अहतियातन लंदन के पते पर भी आपको भेज रहा हूं।

२३३. सुभाषचन्द्र बोस की ओर से

रेल से

१९ अक्तूबर १९३८

प्रिय जवाहर,

तुम आश्चर्य कर रहे होगे कि मैं भी कैसा अजीब आदमी हूं कि तुमने इतने पत्र लिखे और मैंने उनका कोई जवाब नहीं दिया। मुझे तुम्हारे सब पत्र मिल गये थे। कांग्रेस कार्यसमिति के सदस्यों के नाम लिखे गए तुम्हारे पत्रों को सभीने पढ़ा है। युद्ध-संकट के समय तुम्हारे वक्तव्य सामयिक और हमारे लिए सहायक थे।

तुम कल्पना नहीं कर सकते कि इस अवधि में तुम्हारा अभाव मुझे कितना खटका है। अवश्य ही, मैं अनुभव करता हूं कि तुम्हें परिवर्तन की सख्त जरूरत थी। मुझे अफसोस इसी बात का है कि तुमने काफी शारीरिक विश्राम नहीं लिया। कुल मिलाकर, समाचारपत्रों में तुम्हें अच्छा स्थान मिला, रायटर की कृपा के कारण। जनता तुम्हारी यूरोप की गतिविधि और प्रवृत्तियों से परिचित रह सकी और लोग तुम्हारे उद्‌गारों में गहरी दिलचस्पी लेते रहे हैं। मुझे बड़ी खुशी है कि तुम अपने यूरोप-प्रवास के दौरान में इतना कीमती काम कर सके, हालांकि यहां हमने तुम्हारा अभाव बहुत अधिक महसूस किया।

वापस लौटने पर तुम्हें अनेक समस्याओं का सामना करना होगा।

हिन्दू-मुस्लिम सवाल है। मि. जिन्ना असंगत हैं और अकड़े हुए हैं। अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के दक्षिणपंथियों और वामपंथियों में फूट है। वामपंथी उठकर चले गए थे, इसपर महात्माजी ने बुरा माना। फिर अन्तर्राष्ट्रीय प्रश्न हैं।

मुझे आशा है, तुम योजना-समिति की अध्यक्षता स्वीकार कर लोगे। अगर उसे सफल बनाना है तो तुम्हें स्वीकार करना ही होगा।

सप्रेम, तुम्हारा स्नेही,

सुभाष

फिर से—

मैं कल बम्बई से कलकत्ता पहुंच रहा हूं।

२३४. एडवर्ड टामसन की ओर से

बोर्स हिल,
ऑक्सफोर्ड
२१ अक्तूबर १९३८

प्रिय जवाहरलाल,

मुझे बड़ा खेद है।

मैं इस निश्चय पर पहुंचा हूं कि कुछ उदार किस्म का ही सही, लेकिन हूं मैं आखिरकार कंजरवेटिव ही। हर चीज बड़ी उलझी है, और वामपंथी लोग फिलस्तीन के प्रश्न पर बड़े तीखे हो रहे हैं। 'मैनचेस्टर गार्जियन' हमेशा से विवेक-रहित ज़ायोनिस्ट अखबार रहा है। अग्र-लेख लिखकर वह यही दिखाता रहा है कि अरब-अशान्ति का कारण इटली का प्रचार ही है। वह अमरीकनों के पत्रों को विशेष स्थान देता रहा है, जिनमें राष्ट्रवादियों के खिलाफ बड़ी कार्रवाई करने का आग्रह किया जाता रहा है। उसने मेरा एक पत्र छापने से इन्कार करके वापस कर दिया है। मेरे खयाल में 'न्यू स्टेट्समैन' में आज जो पत्र छपा है, यह मुझे उम्मीद है, वही है। 'न्यूज़ क्रॉनिकल' पत्र नहीं छापेगा, पर उसने कम-से-कम इतनी शिष्टता जरूर बरती है कि उसने पत्र को साफ इन्कारी के साथ वापस नहीं किया है। तीनों ही पत्रों में उस भयंकर घटना की चर्चा है, जिसे प्रकाशित करने की अनुमति मैंने आज 'टाइम एण्ड

टाइड' से ले ली है। (इसमें उस अंश को मेरे लेख से काटकर निकाल दिया था)। 'न्यूज़ क्रॉनिकल' और 'डेली टेलीग्राफ' में एक ही चित्र छपा है। लेकिन 'न्यूज़ क्रॉनिकल' ने उसका परिचय 'अरब लुटेरे लाये जा रहे हैं' इस रूप में दिया है, जबकि 'डेली टेलीग्राफ' ने उन्हें 'अरब बंदी' कहा है। 'डेली टेलीग्राफ' ने मेरा एक पत्र छापा, हालांकि उसने भी उस घटना को काट दिया। मेरी जिन्दगी में पहले कभी ऐसा मौका नहीं आया, जब किसी अलोकप्रिय आन्दोलन की सुनवाई कराना इतना असंभव हो गया हो। अखबारों पर यहूदियों का प्रभुत्व है, इसपर पहले मैं कभी विश्वास नहीं कर सकता था। यहूदी और अमरीकन मिलकर और 'लिबरल और लेबर' समाचार-पत्र अरब पक्ष की सुनवाई के हर प्रयास को कठोरतापूर्वक दबा रहे हैं। मेरे खयाल से 'टाइम एण्ड टाइड' का आज का 'फिलस्तीन पर नोट' बड़ा बेहूदा है। 'न्यू स्टेट्समैन' मेरा पत्र छाप देगा, इसमें मुझे बड़ा सन्देह है।

यह बात मुझ और आप ही तक रहे, मेरे खयाल में लिंडसे जीत नहीं सकेगा। बैठ जानेवाले दोनों ही उम्मीदवारों का आचरण ठीक नहीं रहा है। लेबरपार्टी का उम्मीदवार लोगों को यह एहसास कराता है कि उसके साथ व्यवहार अच्छा नहीं हुआ है। वह उस मंच पर नहीं आयेगा, जिसपर लिबरल पार्टी का उम्मीदवार होगा और सुनने में आया है कि उसने 'राजद्रोह' के सम्बन्ध में 'डेली हेरल्ड' को एक पत्र लिखा था, जिसका इस्तेमाल उस कम्बख्त अखबार ने लिंडसे के खिलाफ किया है। लिबरल उम्मीदवार बार-बार यह जता रहा है कि बैठकर उसने कितना अच्छा काम किया है और अनेक प्रमुख लिबरल नेता खुले आम हॉग के पक्ष में हो गये हैं। मेरे खयाल में वक्ताओं का ठीक-ठीक उपयोग नहीं हो रहा। जहांतक मेरा खुद का सवाल है, मैंने उसी क्षण कह दिया था मैं जहां कहीं भी और जब कभी भी बोलने को तैयार हूं, विशेषकर लिबरलों और महिलाओं के बीच, क्योंकि मैं लिबरल हूं (जहांतक मेरा किसी पार्टी से ताल्लुक है) और मैं उस कुख्यात भोज में मौजूद था, जहां लिंडबर्ग ने पहले हमारी सरकार को भयभीत कर दिया था। बाद में उसने लायड जार्ज और मंत्रिमंडल की भी खबर ली। इससे और अन्य

कई सूत्रों से हाल की घटनाओं की अन्दरूनी कहानी से मैं बहुत वाकिफ हूं और मैं अनिश्चित मन रखनेवाले लोगों को प्रभावित कर सकता हूं। यही नहीं, जब मैं क्रोधित हो जाता हूं—और अब जितना मुझे क्रोध है, उतना जिन्दगी में कभी नहीं आया—तो अच्छा भाषण करता हूं। लेकिन पार्टी के लोग इस चुनाव में केवल पके-पकाये वक्ताओं का उपयोग करेंगे। यह चुनाव ऐसा है, जहां चुनाव-परिणाम निर्दलीय मतदाताओं पर निर्भर करेगा। पार्टीवालों ने मुझसे चन्दा भर लिया है। वे मुझे छोटी-सी गोष्ठी में भी भाषण करने देना नहीं चाहते। बहरहाल हमारे सामने दो ऐसे उम्मीदवार हैं, जिनके भाषण, ऑक्सफोर्डवालों को जबानी याद हैं। पार्टी के अन्य लड़ाकू लोग तो हैं ही।

मैं ऐसे लोगों में नहीं हूं, जो ऐसी सभा में भाषण करते हैं, जहां से निकल ही न सकें। लेकिन इस बार मैं बवण्डर का सामना करना चाहता था। मैं एक-दो वे बातें कहना चाहता था, जो लिंडबर्ग ने कही थीं और जो जान-बूझकर दबा दी गई थीं। कुछ और बातें भी कहता। मैं पहले ही जानता था कि लिंडसे के खिलाफ क्या-क्या बातें कही जानेवाली हैं और मैं उनका जवाब पहले ही दे देना चाहता था।

यहां जलियांवाला बाग पर अक्षम्य दो बहसें होने पर टैगोर को जो एहसास हुआ था, मुझे भी वैसा ही हो रहा है। दुनिया को मेरे बारे में गलतफहमी पैदा हो गई है और मैं हताश हो चला हूं, लेकिन अगर अरब लोग लंदन में एक सभा बुला सकें और वक्ता की जरूरत हुई तो मैं वहां बोलूंगा। हमारे अखबारों ने जहांतक जो कुछ करने का अवसर मुझे दिया, मैंने किया है। लेकिन जैसाकि मैं कहता हूं, हमारे ही पक्ष के अखबार विवेकरहित हैं, 'मैंचेस्टर गार्जियन' तो सबसे अधिक (यह तो वास्तव में नफरत लायक और संकुचित विचार का अखबार है और हमेशा से रहा है)।

अब कुछ अधिक खुशी की बातें बता दूं। 'दि ड्रम' की समालोचनाओं का कोर्डा की आत्मा पर बड़ा गहरा असर पड़ा है। पिछले मंगलवार को उन्होंने टेलीफोन किया था और मुझे डेनहम आकर मिलने को कहा था। वह साबू के लिए कोई कहानी जल्द प्राप्त करने के लिए बेचैन

हैं। साबू घोड़ा और हाथी सम्भालने में तो बड़ा होशियार है। दूसरी बातें उसे उतनी नहीं मालूम। कोर्डा उसे चीथड़ों में लिपटे एक गंदे आदमी के रूप में पेश करना चाहते हैं, हालांकि साहसिकताओं की भी भरमार रहेगी। उन्होंने कहा कि मैं भारतीय अभिनेताओं के माध्यम से एक सच्चा भारतीय जीवन पेश करना चाहता हूं। अन्त में उन्होंने यह भी कहा कि मैं हिंदुस्तान के लिए कुछ प्रचार करना चाहूंगा, एक ऐसा चित्र जिसमें हिंदुस्तान के सौन्दर्य की झांकी होगी, ऐसे हिंदुस्तानी चरित्र रहेंगे, जो हत्यारे और देशद्रोही नहीं थे, बल्कि ऐसे पुरुष और स्त्री, जिन्हें आप प्यार करते थे और जिनका आदर करते थे। इस बारे में आपके क्या विचार हैं? फिल्म संसारभर में जाती है। प्रचार के हर साधन पर हमारे दुश्मनों का कब्जा है और मेरा मन उनका जवाब देने का होता है। मैं एक ऐसी फिल्म बनाऊंगा, जिसमें वे बस्तियां दिखाई जायंगी, जिनमें हिंदुस्तानी मजदूर रहते हैं। उसमें उनके कारखाने के हालात दिखाये जायंगे। आप और नैन इसपर सोचें। ऐसी हालतें मुझे कलकत्ता में मिल सकती हैं—सड़ांध फैलाती हुई नहरें और दलदल जहां भूख से तड़पड़ाते पुरुष और स्त्रियां रहते हैं। परन्तु सारी दुनिया को दिखाने के लिए प्रयाग-संगम की फिल्म बनाने के बारे में आपके क्या विचार हैं? गौरव-मंडित गंगा और यमुना हिंदुस्तान की गरीबी और हिंदुस्तान की सुन्दरता का ऐसा प्रदर्शन करती हैं, जिसे भुलाया नहीं जा सकता। यह काम मैं कहां करूं—कलकत्ता, ग्वालियर (उत्कृष्ट दृश्यावली के लिए), इलाहाबाद, कानपुर में?

हिंदुस्तान के निवास के दिनों की मेरी मानसिक क्लान्ति की झलक इस अन्तिम उपन्यास में है—एक बहुत ज्यादा थके हुए लेखक की एक बेहद थकानभरी किताब। इसमें कहानी जैसी कोई चीज नहीं है। इससे हमारे अपने कट्टरपंथियों से लेकर हिंदुस्तानी राष्ट्रवादी तक कोई खुश न होगा। हमारे कट्टरपंथी तो आरम्भिक पृष्ठों के कारण मेरी ज़िन्दा खाल उतरवा लेना चाहेंगे और अन्य पृष्ठों के कारण हिंदुस्तानी राष्ट्र-वादी मुझपर पत्थरों की बौछार करना चाहेंगे। यह कोई अच्छी किताब नहीं है, लेकिन अब तो लगभग मेरा खात्मा ही हो चुका है।

आपके और आपकी पुत्री के लिए शुभकामना ।

आपका,
एडवर्ड

फिर से—

एच. एन. ब्रेल्सफोर्ड ने बड़ी बदमाशी की है । पिछले रविवार के 'रेनाल्ड्स' में उसने यहांतक आग्रह किया है कि चेकोस्लोवेकिया के शरणार्थियों को फ़िलस्तीन में बसा दिया जाय । 'टाइम एण्ड टाइड' में उससे मैंने जो सीधे सवाल किये थे, उनका जवाब देने की कोशिश उसने कभी नहीं की । फिलस्तीन का प्रश्न मैं उठा दूं, यह बात 'टाइम एण्ड टाइड' वालों को नापसन्द थी । लेकिन उसकी 'नोट्स ऑन दि वे' की शर्त के अनुसार उसे छापना ही पड़ा । आपने गैरेट की 'दि शैडो ऑव दि स्वस्तिक' देखी है ?

२३५. रवीन्द्रनाथ टैगोर की ओर से

शांतिनिकेतन
बंगाल
१९ नवम्बर १९३८

प्रिय जवाहरलाल,

मैंने अभी-अभी अखबारों में तुम्हारे भारत लौटने की बात पढ़ी है और मैं जल्दी-से सारे देश के साथ अपना भी स्वागत का स्वर जोड़ देना चाहता हूं ।

मैं तुमसे मिलने को बहुत उत्सुक हूं और यदि शांतिनिकेतन-यात्रा भी अपने कार्यक्रम में रख लो तो मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी ।

अभी उस दिन डा. मेघनाद साहा से भारतीय उद्योग के वैज्ञानिक नियोजन के बारे में मेरी बड़ी लंबी और दिलचस्प बातचीत हुई । मैं भी इसके महत्व को मानता हूं और क्योंकि कांग्रेस के दिशा-दर्शन के लिए सुभाष द्वारा बनाई गई समिति के अध्यक्ष बनना तुमने स्वीकार कर लिया है, मैं इस विषय पर तुम्हारे विचार जानना चाहूंगा ।

इंदिरा को मेरी याद दिलाना और उसे मेरा प्यार देना।
सप्रेम,

तुम्हारा,
रवीन्द्रनाथ टैगोर

[यह राष्ट्रीय योजना कमेटी है, जिसे सुभाषचंद्र बोस ने तब नियुक्त किया था जब वह कांग्रेस के अध्यक्ष थे। मुझे इस कमेटी का अध्यक्ष बनाया गया था।]

२३६. जयप्रकाशनारायण की ओर से

कालीकट
२३ नवम्बर १९३८

प्रिय भाई,

स्वदेश लौटने पर सारे राष्ट्र के साथ मैं भी आपका स्वागत करता हूं। मेरी इच्छा थी कि यह संभव होता कि मैं जल्दी से इलाहाबाद आता, आपसे मिलता और यूरोप में जो दुखद घटनाएं आपने अपनी आंखों से देखीं तथा आपके जाने के बाद यहां जो कुछ हुआ, उन सबके बारे में आपसे बातचीत करता। यदि आप किसी तूफानी कार्यक्रम में नहीं फंस गये तो एक-दो हफ्तों में मैं यह इच्छा पूरी कर सकूंगा। मैं यहां मलाबार में पड़ा हुआ हूं और अपनी साइटिका का आयुर्वेदिक इलाज करवा रहा हूं। एकदम अच्छा तो नहीं हो गया हूं, परन्तु कुछ सुधार लगता है। प्रभावती मेरे साथ है। अखबारों में यह पढ़कर हमें खुशी हुई कि यूरोप-यात्रा से आपका स्वास्थ्य काफी सुधर गया है।

मुझे आशा है कि इतनी बड़ी-बड़ी घटनाओं के बीच आप सोशलिस्ट बुक क्लब के छोटे-से काम को भूले नहीं हैं, जिसके बारे में मैंने आपको लिखा था। अपनी योजना से हम कुछ आगे हैं और सुभाषबाबू की सहायता से उसके लिए कलकत्ता में ३०००) के करीब हम इकट्ठे कर सके हैं। क्लब का दफ्तर इलाहाबाद में है और अहमद मैनेजिंग डायरेक्टर की हैसियत से उसका काम देखते हैं। क्लब का किसी दल से सम्बन्ध नहीं है। यूरोप से भेजे अपने खत में आपने संस्थापक सदस्य के नाते क्लब में शामिल होने में तबतक अपनी असमर्थता प्रकट की थी, जबतक आप

उसके बारे में और ज्यादा मालूम न कर लें। इसी प्रकार किसी गुट के साथ मिलने के लिए भी आपने अपनी अनिच्छा प्रकट की थी। जैसा कि मैंने कहा है, क्लब का किसी गुट से संबंध नहीं है और समाजवादी साहित्य को छोड़कर और किसीके प्रति उसकी निष्ठा नहीं है। जहांतक दूसरी बात का ताल्लुक है, अगर आपको वक्त होगा तो अहमद आपसे हमारी पूरी योजना पर चर्चा कर लेंगे और कहने की जरूरत नहीं कि आपका कोई सुझाव होगा तो हमें उसे स्वीकार करने में बहुत-बहुत खुशी ही होगी। सुभाषबाबू क्लब के संस्थापक सदस्य पहले ही बन चुके हैं। इसमें शामिल होने की आपकी इन्कारी से हमें बड़ा धक्का लगेगा। मैं मानता हूं कि क्लब छोटे पैमाने पर काम करेगा, परन्तु मेरा विचार है कि समाजवादी आंदोलन से हिंदुस्तान में ऐसे परिणामों की आशा करना, जो उसके साधनों से परे हैं, तर्कसंगत नहीं होगा। और, आप मुझे यह कहने के लिए क्षमा करेंगे कि आपके लिए, जिन्हें स्वभावतः बड़े पैमाने पर ही काम करने की आदत है, हिंदुस्तान में समाजवादी प्रयत्नों से असहयोग करना ठीक नहीं होगा, महज इसलिए कि ये पुरानी और बड़ी संस्थाओं के प्रयत्नों के मुकाबिले छोटे हैं। मैं सोचता हूं कि हमारा यह अपेक्षा करना अनुचित नहीं है कि अगर आप अपनेको पूरी तरह हमारे साथ न मिलायें तो बतौर एक समाजवादी के थोड़ा-बहुत हम जो भी करें, उसे अच्छी तरह करने में हमारी मदद करें।

आपने अपने पत्र में कहा था कि हिंदुस्तान में राजनीति पुरानी लकीरों में जा पड़ी है। आपकी अनुपस्थिति में इन लकीरों में वह और भी गहरी धंस गई है। मैं महसूस करता हूं कि अगर मंचों की राजनीति के शोर-गुल को छोड़ दिया जाय तो ऐसी चीजें हो रही हैं, जो कांग्रेस को करोड़ों पद-दलितों के जनतंत्रीय संगठन से बदलकर धीरे-धीरे उसे हिंदुस्तान के स्थापित स्वार्थों के हाथ की कठपुतली बना रही हैं। गांधीवाद ने जो भद्दा रूप ग्रहण कर लिया है, वह इस परिवर्तन को और भी आसान कर देता है। वह कांग्रेस को दुर्जन-संगठन का कवच पहना देता है। मुझे लगता है कि कांग्रेस की नीति की प्रवृति के पुनर्परीक्षण की आवश्यकता उठ खड़ी हुई है, खास तौर पर कांग्रेस-शासित प्रान्तों में। उसके

सामाजिक और आर्थिक लक्ष्य को एक बार फिर से साफ करने की आवश्यकता भी है। कांग्रेस ने मजदूर-आन्दोलन के प्रति, जिसका प्रतिनिधित्व ट्रेड यूनियन कांग्रेस द्वारा होता है, जो रुख अख्तियार किया है वह उन लोगों की आंखें खोल देनेवाला है, जो यह नहीं चाहते कि मंत्रिमंडलों का उपयोग मजदूर-संगठन के हाथ-पांव बांधकर उन्हें मालिकों के हाथों सौंपने के लिए हो। आज हमारे सामने वास्तविक खतरा यह है कि मात्र भारतीय उद्योग ही राष्ट्र-रूप का पर्यायवाची बनता जा रहा है। फिर कांग्रेस के संगठनों का कार्य है। आज ये प्रायः कुछ भी काम नहीं कर रहे हैं और जहां वे काम कर रहे हैं वहां वे या तो चुनाव-यंत्र होकर रह गये हैं या जो काम करते हैं और या चुनावों के लिए जो तैयारी करते हैं, उसका उन्हें कुछ भी भान नहीं है। मैं सोचता हूं कि अब आपको इस प्रश्न का जवाब देना होगा, कथनी से नहीं बल्कि करनी से कि कांग्रेस को अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए क्या केवल तथाकथित रचनात्मक कार्यक्रम पर ही निर्भर रहना चाहिए ? जब किसी गांधीवादी के सामने यह सवाल आता है कि क्या कांग्रेस को अपने उद्देश्य की सिद्धि के लिए उचित रीति से तैयार किया जा रहा है तो उसका जवाब साफ और सीधा यही है कि केवल रचनात्मक कार्य द्वारा ही हम उस लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं। अब आपका काम देश को यह बताना है कि क्या केवल इतना करना काफी होगा या और भी कुछ करने की जरूरत है, और यह भी कि वह दूसरा कुछ क्या और कैसे करना होगा। जैसा कि आप जानते हैं, समाजवाद ने देश के सामने मजदूरों और किसानों के संगठन का कार्यक्रम रक्खा है, जिसमें युवकों, स्वयं-सेवकों और विद्यार्थियों के संगठनों को भी बढ़ाया जा सकता है। मजदूरों और किसानों के संगठनों को तो कांग्रेस के अंगों के रूप में सोचा गया है, उसके प्रतिस्पर्धी संगठनों के रूप में नहीं। आपने कार्यक्रम के बारे में अनगिनत बार अपनी स्थिति साफ की है, परन्तु मैं समझता हूं कि अब वह समय आ गया है जब आपको आगे आना चाहिए और इन्हें नया रूप देने तथा बढ़ाने का काम हाथ में लेना चाहिए। अब आपको सोचना चाहिए कि इस देश के अधिकांश लोगों में, और मैं तो समझता हूं कि खुद कांग्रेसजनों में भी, सामाजिक स्वतन्त्रता की जो

भावना और भूख असंदिग्ध रूप में है, उसे एक निश्चित रूप देकर स्थायित्व देने के लिए क्या किया जाना चाहिए। इस भूख को अभी तो केवल नये-नये समाजवादी संगठनों ने प्रकट भर किया है। इससे अधिक व्यापक प्रकाशन उसका अभी नहीं हो पाया है। मैं समझता हूं कि इसके लिए कुछ बुनियादी काम करने की जरूरत है और वह केवल आप ही कर सकते हैं, बशर्ते कि आप उसके लिए कुछ समय निकाल सकें और सोचें।

यह तो हुआ हमारे राष्ट्रीय आंदोलन के समाजवादी उद्देश्यों को एक नई दिशा और गति देने के बारे में। एक तात्कालिक और ज्यादा महत्व का काम रह जाता है—दुश्मन पर अगले आक्रमण (क्या यह अंतिम आक्रमण होगा?) का। हमारे सामने इसकी कोई निश्चित धारणा है? अपने-आपको इसके लिए तैयार करने के लिए हम क्या कर रहे हैं? हम इसे कब आरंभ करेंगे? इसके लिए क्या हमें तबतक ठहरना है, जबतक कि अंग्रेज स्वयं हमें मौका दें? यह तो उनके ही अधिक हक में होगा। मेरा खयाल है कि सत्याग्रह की पद्धति में आक्रमण की योजनाओं की अग्रिम तैयारी की गुंजायश नहीं होती। वहां तो केवल एक योजना होती है कि खूब कातो और इसी तरह के आत्मा को हिला देनेवाले काम करो। परन्तु क्या इससे आपको सन्तोष हो जायगा? कांग्रेस-कमेटियों को जनतान्त्रिक बनाना, लोकसंपर्क, मुस्लिम-संपर्क, गुलामी के विधान को उखाड़ फेंकना, इत्यादि जितनी भी योजनाएं और कार्यक्रम आपने कार्य-समिति में लड़-झगड़कर शामिल करवाये थे, उन सबको ताक में रख दिया गया है। फिर भी आशा की किरण है—वह है रियासतों में जागरण, और आप उसपर ध्यान देना चाहते हैं, यह प्रसन्नता की बात है। लेकिन दूसरी चीजों को आपके ध्यान की और ज्यादा जरूरत है।

मैं आशा करता हूं कि २३ नवम्बर को मैं कालीकट से रवाना होऊंगा और दिसम्बर के पहले हफ्ते में बिहार पहुंच जाऊंगा।

सप्रेम आपका,
जयप्रकाश

२३७. महात्मा गांधी की ओर से

सेगांव
२४ नवम्बर १९३८

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा खत मिला। मैं जानता था कि जहां तुम घोड़े पर सवार हुए वहां फिर तुम अपने समय के मालिक नहीं रहोगे। मुझे जो कुछ मिल जायगा उसीसे सन्तोष कर लूंगा।

गुरुदेव से पत्र-वाहक द्वारा मिला हुआ एक खत भेज रहा हूं। मैंने उत्तर दे दिया है कि मेरी अपनी राय यह है कि अगर उन्हें बंगाल को भ्रष्टाचार से मुक्त करना है तो अध्यक्ष के काम से छुटकारा पा लेने की जरूरत है। मुझे सन्देह नहीं कि गुरुदेव या तो तुम्हें सीधा लिखेंगे या तुमसे बात करेंगे। तुम अपनी ही राय देना।

आशा है, इन्दू को यात्रा से कोई हानि नहीं हुई होगी।

प्यार,

बापू

२३८. खुवान नेग्रिन् लोपेथ् की ओर से

[सन् १९३८ की गर्मियों के आरम्भ में मैंने रिपब्लिकन सरकार के निमंत्रण पर बार्सेलोना (स्पेन) की थोड़े दिन की यात्रा की थी। उन दिनों वहां गृहयुद्ध हो रहा था। वहां से लौटकर मैंने महात्मा गांधी को अपनी यात्रा के सम्बन्ध में लिखा और मेरी प्रार्थना पर गांधीजी ने रिपब्लिकन सरकार के प्रधानमंत्री के नाम एक पत्र लिखकर मेरे पास भेजा, जिसे मैंने प्रधानमंत्री के पास भेज दिया।]

एल प्रेसीडेंटे डेल कोन्सेजो डी मिनिस्ट्रोस
ग्राई मिनिस्ट्रो डी डिफेन्सा नेशनल

खुवान नेग्रिन् लोपेथ्न

बार्सेलोना (स्पेन)
२६ नवम्बर १९३८

मिस्टर जवाहरलाल नेहरू,
ओर्मोन्डे हाउस,
सेंट जेम्स स्ट्रीट,
लन्दन, एस. डब्ल्यू. १

प्रिय श्री नेहरू,

मुझे सचमुच बड़ा अफसोस है कि मैं आपके पिछले महीने की ११ तारीख के पत्र का इससे पहले उत्तर न दे सका। मैं आपको उस पत्र के लिए और साथ-ही-साथ उसके साथ भेजे गए महात्मा गांधी के पत्र के लिए धन्यवाद देता हूं।

महात्माजी के पत्र का उत्तर मैं इस पत्र के साथ भेज रहा हूं। कृपाकर उसे आप उनके पास भेज दीजियेगा।

मुझे यह जानकर खुशी हुई है कि हमारे देश में इतने थोड़े दिन रहकर भी आप यहां के संबंध में इतने अच्छे विचार बना सके। आपने हमारी जनता के लिए जो अभिवादन और हमारी सफलता के लिए जो शुभ कामनाएं भेजी हैं उनके लिए मैं आपको हार्दिक धन्यवाद देता हूं।

आप स्वयं देख रहे हैं कि हमें कैसी-कैसी बाधाओं के साथ लड़ना पड़ रहा है। हमें न केवल प्रजातंत्र के घोषित शत्रुओं के विरुद्ध लड़ना पड़ रहा है, बल्कि दुर्भाग्यवश हमें उन लोगों की ओर से भी कठिनाई भोगनी पड़ रही है, जो हमारे मित्र बनने का ढोंग रचते हैं।

सहानुभूति और प्रोत्साहन के कृपापूर्ण शब्दों के लिए मेरा हार्दिक धन्यवाद।

आपका,
ख़ु. नेग्रिन्
प्रधानमंत्री

२३९. ख़ुवान नेग्रिन् लोपेथ् की ओर से महात्मा गांधी के नाम

ख़ुवान नेग्रिन् लोपेथ्
एल प्रेजीडेन्टे डेल कोन्सेजो डी मिनिस्ट्रोज
वाई मिनिस्ट्रो डी डिफेन्सा नेशनल

बार्सेलोना
२६ नवम्बर १९३८

महात्मा गांधी,
सेगांव,
वर्धा (इंडिया)

प्रिय मित्र,

आपका ४ सितम्बर का कृपापत्र, जो आपने हमारे नेक मित्र श्री नेहरू के द्वारा भेजा था, मुझे बहुत देर से मिला। यही कारण है कि मैं इससे पहले उसका उत्तर देने का सौभाग्य प्राप्त न कर सका। आशा है, उसके लिए आप मुझे क्षमा करेंगे।

अपने प्रिय देश की स्वतंत्रता के लिए हम जो बड़ा संघर्ष कर रहे हैं उसके लिए आपने हमारी जनता के प्रति सहानुभूति और प्रोत्साहन के शब्द लिखे हैं। उनके लिए मैं आपको अपना हार्दिक धन्यवाद भेजता हूं।

यह जानकर बड़ा संतोष होता है कि आप जैसे प्रतिष्ठा के लोग हमारे पक्ष में हैं और हमारे कार्य की न्यायोचितता को पूरी तरह से समझते हैं। मुझे यह जानकर भी प्रसन्नता हुई है कि आपके देशवासी स्पेन की घटनाओं का बड़ी सहानुभूति और रुचि के साथ अध्ययन कर रहे हैं। आपने अपने पत्र में जो शुभकामनाएं और अभिवादन भेजे हैं उन्हें मैं बड़ी प्रसन्नता के साथ अपनी सरकार, बहादुर सेना और जनता के पास पहुंचा दूंगा। उनकी ओर से और अपनी ओर से भी मैं आपको हार्दिक धन्यवाद भेजता हूं।

आपका,
खु. नेग्रिन

२४०. रवीन्द्रनाथ टैगोर की ओर स

शांतिनिकेतन, बंगाल
२८ नवम्बर १९३८

प्रिय जवाहरलाल,

मैंने तुम्हें आने और मिलने के लिए इसलिए नहीं कहा था कि मुझे किसी निश्चित योजना पर बातचीत करनी थी या कोई अनुरोध करना था। मैं सिर्फ बंगाल के बारे में तुम्हारी राय जानना चाहता था, जिसकी वर्तमान स्थिति मुझे उलझन में डालती है और मुझे निराश करती है। मेरा प्रदेश चतुर तो है, पर नैतिक दृष्टि से अशिक्षित होने और अपने पड़ोसियों को हीन समझने के कारण अपनी इच्छा में तनिक-सी भी बाधा पड़ते ही होशहवास खोकर पागलों-जैसी हरकतें करने लगता

है। मैं उसकी दुर्बलता जानता हूं, पर उसे विनाश की ओर बढ़ते देखकर भी चुपचाप बैठे रहना और तटस्थ बने रहना मेरे लिए संभव नहीं। लेकिन साथ ही मैं इस बात के लिए भी बिल्कुल तैयार हूं कि मैं अपने विशेष काम में लगा रहूं और उसकी देखभाल कांग्रेस के ऊपर छोड़ दूं। पर मैं स्वयं ढीले पेचों को कसने और चुभनेवाले हिस्सों को रेतकर दूर कर देने के लिए किसी वैयक्तिक शक्ति में विश्वास करता हूं—उस मुख्य मिस्त्री की भांति, जो इन्सान के नाते निर्दोष चाहे न हो, पर कुशल मिस्त्री हो। किन्तु मैं तुमसे बातचीत करना, और उससे भी अधिक तुम्हारी बात सुनना, चाहता हूं, यद्यपि उससे कोई व्यावहारिक नतीजा चाहे न निकले। सच्ची बात यह है कि मैं तुमसे मिलना चाहता हूं, पर यह शायद तबतक संभव न हो पाये जबतक तुम्हारे पास कुछ खाली वक्त न हो।

मैं इंदिरा के स्वास्थ्य के बारे में चिंतित हूं। आशा है, जाड़े के महीने हिंदुस्तान में बिताने से उसे मदद मिलेगी।

सप्रेम,

तुम्हारा,
रवीन्द्रनाथ टैगोर

२४१. अनिलकुमार चन्दा की ओर से

शान्तिनिकेतन, बंगाल
२८ नवम्बर १९३८

प्रिय पंडितजी,

गुरुदेव ने आज फिर आपको लिखा ह, बहुत-कुछ मुझे लिखे आपके पत्र के उत्तर में, परन्तु मुझे निश्चय नहीं है कि उनका पत्र आपको बहुत ज्यादा बोध देगा।

डा. साहा की रैशनल प्लानिंग के विचारों ने उन्हें लुभा लिया है और वह कमेटी से बहुत आशा कर रहे हैं। इससे पहले कि आप दूसरा कोई काम अपने हाथ में लें, वह आपसे बातचीत करना चाहते थे, जिससे कहीं ऐसा न हो कि घटनाओं के प्रभाव से आप प्लानिंग कमेटी के काम से अपने-आपको सक्रिय रूप से अलग कर लें। आपसे मिलने की उनकी आतुरता का यही मुख्य कारण है।

वह यह भी चाहते हैं कि अगले वर्ष कांग्रेस का अध्यक्ष कोई आधुनिक विचारोंवाला व्यक्ति बने ताकि रिपोर्ट जब तैयार हो जाय तो उसे कांग्रेस दिल से स्वीकार कर ले और उसे उठाकर पटक न दिया जाय। उनकी राय में—और हम सबकी राय में भी—हाई कमाण्ड में केवल दो व्यक्ति सही अर्थों में आधुनिक विचारों के हैं—आप और सुभाषबाबू। आपके प्लानिंग कमीशन के अध्यक्ष बन जाने से आपका सक्रिय सहयोग पहले ही मिल गया है और इसलिए वह बड़े आतुर हैं कि सुभाषबाबू दुबारा कांग्रेस-अध्यक्ष चुन लिये जायं। मुझे आशा है, मुझमें जो विश्वास रक्खा गया है, उसका मैं घात नहीं कर रहा हूं—और आप संभवतः पहले ही से जानते हैं। यदि न जानते होंगे तो निश्चय ही आप जल्दी जान लेंगे—लेकिन उन्होंने हाल ही में गांधीजी को इस बारे में लिखा है। यदि अब उनकी आपसे मुलाकात हो सकी तो सुभाषबाबू को पुनः चुनवा लेने में वह शायद आपकी मदद चाहेंगे। यह दूसरा कारण है। इस सबके अलावा वह आपसे इसलिए भी मिलना चाहते हैं, क्योंकि आपसे मिलकर उन्हें बहुत सहज आनंद होता है और वह आपसे बातचीत करना चाहते हैं, क्योंकि वह वास्तव में आपको बहुत चाहते हैं।

उन्होंने मुझसे कहा है कि यहां आने के लिए आप किसी भी कारण से अपना कार्यक्रम न बिगाड़ें, लेकिन अपनी सुविधा से जितनी जल्दी आ सकें आ जायं। आपके आने से उन्हें आनंद होगा, परन्तु प्राथमिकता आपके काम और कांग्रेस की जरूरतों को मिलनी चाहिए।

इन्दिरा कैसी हैं? उन्हें कुछ दिन आराम के लिए यहां क्यों न भेज दें? हमारे लिए इससे बढ़कर खुशी की बात और क्या होगी?

सादर,

आपका,
अनिल

२४२. एडवर्ड टामसन की ओर से

बोर्स हिल,
ऑक्सफोर्ड,
२८ नवम्बर १९३८

प्रिय जवाहरलाल,

संलग्न पत्र एक ब्रिटिश वकील ने लिखा था। वकील महोदय का चरित्र बड़ा ऊंचा है और वह इस बात के मर्मज्ञ हैं कि गवाही किसको कहते हैं। मैंने पूछताछ की है और मैं संतुष्ट हूं कि इस पत्र को तथ्य के रूप में स्वीकार किया जा सकता है। कोई भी लिबरल अथवा लेबर अखबार इसे नहीं छापेगा, कोई लिबरल अथवा लेबर संसद-सदस्य कुछ पूछेगा नहीं। दलितों के सभी सच्चे दोस्त यहूदियों के आन्दोलन के पक्षपाती हैं और इसके विपक्ष की किसी भी बात पर नजर डालने के लिए तैयार नहीं। 'मनचेस्टर गार्जियन' यहूदी-आन्दोलन के अतिरिक्त कोई चीज अब नहीं छापता। अब अरब लोग बड़ी मुसीबत में हैं। यहूदियों पर नाजी अत्याचार के कारण हर कोई अपनेको यहूदियों के खिलाफ दिखाना नहीं चाहता और वे (यहूदी) अमरीकी दबाव को दुगुना करने के मौकों का इस्तेमाल कर रहे हैं और अपनी मांगें बढ़ाने के लिए सचेष्ट हैं। (मुझे यह कहते दुःख होता है कि रूजवेल्ट ने भी अपने एक भाषण में यह कहा है कि फिलस्तीन का द्वार यहूदियों के लिए खोल दिया जाना चाहिए।)

मुसीबत तो यह है, यह सरकार चाहे खराब ही क्यों न हो, यदि अमरीका और हमारे वामपंथियों का दबाव न हो तो फ़िलस्तीन में सभ्यतापूर्ण कार्रवाई करेगी ।

मैं जो पत्र भेज रहा हूं, उसकी प्रामाणिकता के बारे में मुझे संतोष है। कोई सुझाव रखने का काम मेरा नहीं है। लेकिन १. अगर राष्ट्रीय कांग्रेस इसी क्रिसमस पर मजबूती के साथ अरबों का पक्ष ले और साफ़-साफ वे बातें कह दे, जो हममें से कुछ लोग यहां कहते रहे हैं—यह कि, फिलस्तीन में 'आतंक के विरुद्ध' आतंक के कारण हिंदुस्तान को विमुख किया जा रहा है, तो इससे इस छोटे-से दलित राष्ट्र को बड़ा बल मिलेगा (फिलस्तीन में जघन्य तरीके अपनाये ज़ाने और उत्पीड़न की बातें सुनने में

आ रही हैं, जो हिंदुस्तान में पुलिस के खिलाफ कही जानेवाली कहानियों की याद दिलाती हैं)। २. मुस्लिम लीग से भी इसी तरह का प्रस्ताव पास कराने का कोई तरीका है ? हमारे लोग मुसलमानों की सहानुभूति खोने से बहुत घबराते हैं। दो प्रतियां भेज रहा हूं, इस आशा में कि एक प्रति मुसलमानों तक पहुंचाई जा सकती है। अब जबकि इकबाल नहीं रहे, मैं किसी प्रभावशाली मुसलमान को नहीं जानता। अकबर हैदरी हैं, पर वह कोई कार्रवाई नहीं करेंगे।

पता नहीं, यह पत्र आप तक पहुंचेगा भी या नहीं। मैं भेज तो रहा हूं, पर मुझे सन्देह है। अगर पहुंच जाय तो सूचित कर दें।

आंख के आपरेशन के लिए मेरी पत्नी लंदन आई थीं। वह ठीक नहीं रहा। आंख की पुतली खिसक गई और एक दूसरा आपरेशन जरूरी था। उनके लिए बड़ी मुसीबत का समय था और बड़ी तकलीफ रही। वह अब ी नर्सिंग होम में हैं और धीरे-धीरे अच्छी हो रही हैं।

क्रिसमस और नववर्ष की शुभकामनाएं।

आपका,
एडवर्ड टामसन
(इमेरिटस फ्राम इण्डिया)

२४३. महात्मा गांधी की ओर से

सेगांव, वर्धा
३० नवम्बर १९३८

प्रिय जवाहरलाल,

चीनी मित्र आये और पांच के बजाय पैंतीस मिनट ले लिये। अन्त में मुझे कोमलता से कहना पड़ा कि वे अपने समय से सात गुना अधिक ठहर गये।

अगाथा की वाइसराय से जो मुलाकात हुई उसके विवरण की तुम्हारी प्रति साथ में है। मेरा सन्देश इतना ही कहने को था कि वे मुझे अंग्रेज-जाति का मित्र समझें और उसका राजनीति से कोई सरोकार नहीं ा।

आशा है, तुमको मेरा वह पत्र ठीक तरह मिल गया होगा, जिसमें मैंने सुभाष-संबंधी गुरुदेव का पत्र भेजा था।

मैं आशा रखता हूं कि तुम काम से अपने-आपको मार नहीं रहे हो और इन्दू के हालचाल अच्छे हैं।

सरूप जो भारी काम कर रही है उससे उसे छुड़ा देना चाहिए। उसे अपना जर्जर शरीर फिर से बना लेना चाहिए।

प्यार,

बापू

२४४. मुस्तफा-अल-नहास की ओर से

हैलियोपालिस,
१२ दिसम्बर १९३८

प्यारे दोस्त,

अपनी रवानगी के वक्त पोर्ट सईद से आपने जो बढ़िया खत भेजा था, उसका मुझपर बहुत असर हुआ। यकीन रखिये कि अगर हमारे साथ थोड़े दिन रहने की आप अच्छी छाप लेकर गये हैं तो यहांपर भी आपके ऐसे दोस्त हैं, जो आपके बारे में उतनी ही बढ़िया यादें रखते हैं।

मैं आपको वे अखबार भेज रहा हूं, जिनमें आपके मिस्र में रहने का ब्यौरा दिया गया है। इनसे आपको पता चलेगा कि मिस्र के वफादार लोग आपको कितनी ऊंची जगह देते हैं और आपकी कितनी इज्जत करते हैं।

फिलहाल मैं उस सवाल को आगे लाने में लगा हूं, जो कि हमारे सामने है। मुझे उम्मीद है कि अपनी-अपनी आजादी को कायम रखते हुए हम साम्राज्यशाही के खिलाफ अपनी लड़ाई के एक-जैसे मुद्दों पर एक-दूसरे को बराबर खबर देते रहेंगे। हम जैसे-जैसे आगे बढ़ते हैं, वैसे-वैसे दुनिया की साम्राज्यशाही रुझान के बुरे कारनामे साफ होते जाते हैं। अफसोस है कि वे ही झगड़े और आफत की असली जड़ हैं। मि. दयालदास के जरिये पोर्ट सईद से आपने अपनी जो किताब भिजवाई, उसके लिए मैं आपका शुक्रगुजार हूं। इस किताब के पढ़ने से आपकी बहुत ही बहादुराना जिंदगी के लिए मेरे नजदीक आपकी कद्र और भी बढ़ी।

हमारी नेशनल वफ्दिस्ट कांग्रेस की, जिसम बहुत ही अहम मसलों पर बहस होगी, पक्की तारीख की खबर देने की मैं जल्दी ही उम्मीद करता हूं।

मुझे अफसोस है कि आपकी बहन को उनके सिकंदरिया में रहने के दिनों में उनकी खराब तंदुरुस्ती की वजह से हमारे दोस्त उतनी इज्जत नहीं दे सके, जितनी देना उनका फर्ज था और उनके लिए खुशी की बात थी।

प्यारे दोस्त, मेरी सच्ची दोस्ती में यकीन रक्खो। मेरी बीवी मेरे साथ आपको और आपकी मेहरबान लड़की को नेक ख्वाहिशें भेजती है।

आपका,
एस. नहास

फिर से—

आपके जाने के दिन की ली गई कुछ तस्वीरें भेज रहा हूं।

एम. एन.

२४५. कामेल एल चादरजी की ओर से

बगदाद
१३ दिसम्बर १९३८

प्रिय श्री नेहरू,

आज की तहजीब का एक सबसे बड़ा तोहफा शायद यह है कि बिना निजी ताल्लुकात के भी एक इन्सान दूसरे लोगों से गहरी दोस्ती कायम कर सकता है। आपका मुल्क न जाने कितने सालों से यकीनन बहुत बड़ा है। कुदरत ने उसे कभी खत्म न होनेवाले जरिये दिये हैं, हालांकि तहजीब की शुरुआत से ही हिंदुस्तान उतना बड़ा नहीं रहा, जितना कि आज है। आज तो इसके दिमागी बीज फूटकर ऐसे आदमियों की शक्ल में खिल उठे हैं, जिनकी मुल्क को जरूरत है, खास तौर से आप-जैसे निराले शख्स पूरबी आसमान पर चमककर, मेरे और मेरे भाइयों के मन में बस गये हैं।

जबतक हिंदुस्तान लगातार ऐसे अक्लमंदों को पैदा करता रहेगा और दुनिया के लिए ऐसी कुरबानियां करता रहेगा, जो इन्सान की तारीख में अपने ढंग की निराली हैं, तबतक हिंदुस्तान के आनेवाले जमाने के बारे में मैं नाउम्मीद नहीं हूं।

हम आपकी जद्दोजहद की तहेदिल से तारीफ़ करते हैं और चाहते हैं कि हमें भी उसमें थोड़ा-बहुत हाथ बंटाने का मौका मिले, क्योंकि

हम दोनों एक ही नाव के मुसाफिर हैं। साम्राज्यशाही और नाजायज फायदा उठाने के खिलाफ की जानेवाली तहरीक की सच्ची कोशिशों पर अलग-अलग इकाइयों की शक्ल में गौर नहीं करना चाहिए, बल्कि यह सोचना चाहिए कि न तो कोई जुगराफिया से ताल्लुक रखनेवाली हदें, न सियासी अड़चनें, उन्हें दबा सकती हैं।

अरब दुनिया के इस हिस्से में रहनेवाले हम जैसे लोगों को यह बात मंजूर करनी चाहिए कि हमें आपकी जबरदस्त लड़ाई की बहुत थोड़ी जानकारी थी और मिस्टर यूसुफ़ मेहरअली से, जिनके साथ सिवा इसके और कोई खराबी न थी कि वह हमारे मुल्क में बहुत कम ठहरे, हमें आपके सही मकसद की खबरें पाकर बड़ी खुशी हुई।

हम बहुत चाहते हैं कि आपकी तहरीक से ताल्लुक कायम करें और उससे वाकिफ हों। हम आपको और आप जैसे दूसरे हिंदुस्तानी लोगों को निजी तौर से भी जानना चाहते हैं। मिस्र की तरह क्या आप कभी ईराक आने की बात नहीं सोचते, जो आपके इतना नजदीक है ? अगर मैं यह कहूं कि जिस तरह हमारा फर्ज है कि आपके बड़े मुल्क और उसकी मुल्की और इन्सानी कोशिशों के बारे में जितना भी हो सके उतनी जानकारी हासिल करें, उसी तरह आपको भी अरब दुनिया के इस हिस्से के बारे नें जानकारी हासिल करनी चाहिए तो शायद आप मेरे इस बयान की मुखालफत नहीं करेंगे।

मुझे पक्का यकीन है कि मि. मेहरअली का यह थोड़े दिन का सफर आपसे और आपकी तहरीक से, जिसको हम बड़ी दिलचस्पी के साथ देख रहे हैं, ताल्लुकात कायम करने की शुरुआत होगी।

इस खत को खत्म करने से पहले मैं आपसे गुजारिश करता हूं कि अपनी कामयाबी के लिए आप हमारी दिली ख्वाहिशें मंजूर करें।

आपका,
कामेल एल चादरजी
सेक्रेटरी
दी पीपल्स रिफार्म पार्टी

२४६. एस. राधाकृष्णन की ओर से

लन्दन
३० दिसम्बर १९३८

प्रिय श्री नेहरू,

मुझे दुःख है कि हिंदुस्तान में आपसे नहीं मिल पाया। एक या दो चीजें हैं, जिनके बारे में आपसे वातें करना चाहता था।

१. आप जानते हैं, गांधीजी अपना सत्तरवां साल पूरा कर रहे हैं और उनकी अगली सालगिरह पर मेरा विचार उन्हें भेंट करने के लिए एक ग्रंथ निकालने का है, जिसमें केवल शुभकामनाएं ही नहीं होंगी, बल्कि उनके जीवन और कार्य पर संसार के बड़े-वड़े विचारकों और नेताओं के निवन्ध और विचार भी होंगे। ज्योंही मैं ऑक्सफोर्ड पहुंचूंगा, आपको उन लोगों की फेहरिस्त भेजूंगा, जिन्हें लिखने के लिए निमंत्रित किया गया है। फेहरिस्त में आप और कोई नाम जोड़ सकते हैं। उसकी मुझे सूचना दे दें। आपकी राय में हमारे भारतीय रजवाड़ों में से किसीसे लिखने को कहा जा सकता है ? मुझे इसकी वड़ी चिन्ता है। मुझे दक्षिण अफ्रीका भी जाना है और जनरल स्मट्स और रामराव को मैंने ईस्टर की छुट्टियों में उसे निश्चित करने के लिए लिखा है।

१९ सितम्बर से ८ दिसम्बर १९३९ तक दक्षिण कैलिफोर्निया के विश्वविद्यालय में एक सत्र तक के लिए काम करने को वचनवद्ध हूं, परन्तु गांधीजी को दी जानेवाली इस भेंट—ग्रंथ—की दृष्टि से मुझे इसे स्थगित करना पड़ेगा। सभा इत्यादि की व्यवस्था के लिए मैं आपपर निर्भर रहूंगा। मैं ग्रंथ को अवसर के अनुरूप वनाने का भरसक प्रयत्न करूंगा। वर्धा में मैंने प्यारेलाल से बातचीत की थी और उन्होंने कहा कि इसमें उन्हें कोई आपत्ति नहीं हो सकती। हिन्दू तिथि के हिसाव से हम दिन रक्खेंगे।

आपको भी इसके लिए लगभग एक हजार शब्दों की सामग्री देनी होगी और मार्च सन् १९३९ के अन्त तक आपका लेख मेरे पास पहुंच जाय तो ठीक रहेगा।

२. मुझे गांधीजी द्वारा पता लगा कि गवर्नमेंट ऑव इंडिया एक्ट में प्रस्तावित संघ के बारे में उनकी मुख्य आपत्ति उस बेमेल तंत्र पर है, जो

जनतंत्रीय प्रांतों तथा सामंतवादी राजाओं को साथ-साथ लाकर स्थापित किया जायगा। उनका आग्रह है कि उससे पहले कि राजा लोग संघ में शामिल हों, वे अपने यहां उत्तरदायी शासन स्थापित कर लें। मैंने उनसे पूछा कि अगर राजाओं के प्रतिनिधियों का बहुमत ($\frac{1}{2}+1$) लोकप्रिय विधान-मंडलों द्वारा चुनकर भेज दिया जाय तो उन्हें कोई आपत्ति होगी ? उन्हें यह पसन्द नहीं था। आपका क्या विचार है ?

ब्रिटिश सरकार को यह स्पष्ट कर देना चाहिए कि उनकी मंशा हिंदुस्तान की जनता पर संघ को थोप देने की नहीं है, जबकि कांग्रेस उसका उसके वर्तमान रूप में विरोध करती है।

१४ जनवरी तक मैं इंपीरियल होटल में रहूंगा। उसके बाद ऑक्स-फोर्ड जा रहा हूं, जहां मेरा पता होगा—१५, वार्डवेल रोड।

आपका,
राधाकृष्णन

२४७. सर स्टैफ़र्ड क्रिप्स की ओर से

लन्दन
३ फरवरी १९३९

प्रिय नेहरू,

मैं बता नहीं सकता कि आपके लम्बे और मोहक पत्र को पाकर मुझे कितनी प्रसन्नता हुई! मुझे ऐसा लगता था कि हमारे एक-दूसरे के बीच सम्पर्क समाप्त होने का खतरा है, क्योंकि हम दोनों ही काम में बहुत ज्यादा व्यस्त थे। हिंदुस्तान की स्थिति का आपने जो वर्णन किया है वह मेरे लिए बहुत ही बहुमूल्य है, यद्यपि इस समय—जैसाकि शायद आपने अखबारों में पढ़ा होगा—मैं घरेलू समस्याओं और मजदूर पार्टी के भीतरी झगड़ों में इतना फंसा हुआ हूं कि हिंदुस्तानी या औपनिवेशिक मामलों पर अधिक ध्यान केन्द्रित करना मेरे लिए मुश्किल है।

फिर भी मुझे इस बात की बड़ी खुशी है कि मैं लन्दन में हिंदुस्तानी स्वतंत्रता-दिवस की सभा में बोल सका।

यहां की स्थिति दिन-पर-दिन उग्र होती जा रही है। राष्ट्रीय सरकार के साथ जा मिलने की प्रवृत्ति मजदूर-दल में बढ़ती जा रही है। मैं इसी

के खिलाफ लड़ रहा हूं और विकल्पस्वरूप इस पक्ष म हूं कि दूसरे विरोधी तत्व एक साथ मिल जायं। मैं जो कुछ भी कर रहा हूं उसको विस्तार से बताने की जरूरत नहीं है, क्योंकि उसे आप 'ट्रिब्यून' में पढ़ सकते हैं, किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि उसे मेरे देश में बहुत काफी समर्थन प्राप्त है और यद्यपि मैं यह नहीं कह सकता कि मुझे पक्का विश्वास है, फिर भी मुझे आशा अवश्य है कि अगले कुछ महीनों के भीतर-ही-भीतर हमें कुछ सफलता प्राप्त होगी।

क्षमा कीजिये, इस समय मैं और अधिक नहीं लिख पा रहा हूं, क्योंकि मैं बहुत ही जल्दी में हूं।

आपका,
आर. स्टफर्ड क्रिप्स

२४८. महात्मा गांधी की ओर से

सेगांव, वर्धा
३ फरवरी १९३९

प्रिय जवाहरलाल,

चुनाव के बाद और जिस ढंग से वह लड़ा गया उसे देखते हुए मैं महसूस करता हूं कि मैं कांग्रेस के अगले अधिवेशन में अनुपस्थित रहकर देश की सेवा करूंगा। इसके अलावा मेरा स्वास्थ्य भी बहुत अच्छा नहीं है। मैं चाहता हूं, तुम मेरी मदद करो, मुझे शरीक होने को दबाना नहीं।

आशा है, तुम्हें और इन्दू को खाली में आराम लेने से लाभ हुआ होगा। इन्दू को मुझे लिखना चाहिए।

प्यार,

बापू

२४९. सुभाषचन्द्र बोस के नाम

इलाहाबाद
४ फरवरी १९३९

निजी और गोपनीय

प्रिय सुभाष,

शान्तिनिकेतन में हमने कोई घंटेभर या ज्यादा बातचीत की थी,

लेकिन मेरा खयाल है कि हम स्थिति को साफ करने में कामयाब नहीं हुए। असल में हम कर भी नहीं सकते थे, क्योंकि कई तरह की अनिश्चितताएं हैं और मुझे मालूम नहीं, मामलात की क्या शक्ल बनेगी। हमें इन घटनाओं का इन्तजार करना होगा, लेकिन साथ ही ये घटनाएं खुद हमपर और खास तौर पर तुमपर निर्भर करती हैं।

जैसा मैंने तुमसे कहा, तुम्हें चुनाव लड़ने से कुछ तो फायदा हुआ और कुछ नुकसान। मैं फायदे को मानता हूं, लेकिन जो नुक्सान होगा, उससे आशंकित हूं। मैं अब भी सोचता हूं कि कुल मिलाकर बेहतर होता अगर यह खासतौर का संघर्ष इस तरह न हुआ होता। परन्तु यह तो पुरानी बात है और हमें भविष्य का सामना करना है। इस भविष्य को हमें बड़े नजरिये से, न कि व्यक्तियों के नजरिये से देखना होगा। जाहिर है कि हममें से किसीके लिए भी यह अच्छा नहीं कि हमारी इच्छा के अनुसार ही मामलात की शक्ल न बने तो हम गुस्सा कर लें। नतीजा कुछ भी निकले, हमें तो ध्येय में पूरा योग देना है। यह मान लिया जाय तो भी सही रास्ता देखना आसान नहीं है और मेरा मन भविष्य के बारे में चिंतित है।

पहली चीज जो हमें करनी होगी वह यह है कि एक-दूसरे के नजरिये को पूरी तरह समझ लें। अगर यह कर लें तो तजवीजों का बनाना आसान है। लेकिन हमारे मन में संघर्ष और शंकाएं भरी हों कि सामनेवाले का क्या मकसद है तब भविष्य के निर्माण की कोशिश करना आसान काम नहीं होता। पिछले कुछ बरसों में गांधीजी और वल्लभभाई और उनके खयाल के दूसरे कुछ लोगों के निकट सम्पर्क में आया हूं। हमारी बार-बार और लम्बी चर्चाएं हुई हैं और हालांकि हम एक-दूसरे को कायल नहीं कर सके तो भी असर काफी डाला है; और मुझे विश्वास है कि हमने एक-दूसरे को बहुत हद तक समझ भी लिया है। १९३३ में ही जेलखाने से निकलकर मैं गांधीजी से मिलने पूना गया था, जहां वह उपवास के बाद आराम कर रहे थे। हमारे संग्राम के जुदे-जुदे पहलुओं के बारे में लंबी बातें हुईं और फिर हमारे बीच पत्र-व्यवहार हुआ, जो बाद में छपा। उन पत्रों और बातचीतों से हमारे स्वभाव-संबंधी और बुनियादी मतभेद

भी जाहिर हुए और बहुत-सी चीजें जो एक-सी थीं, वे भी सामने आईं। तबसे खानगी में और कार्य-समिति में कई बार चर्चाएं हुई हैं। कई मौकों पर मैं अध्यक्ष-पद से और कार्य-समिति से भी त्यागपत्र देने को तैयार हो गया था, लेकिन मैं रुका, क्योंकि मैंने सोचा कि इससे ऐसे मौके पर संकट पैदा हो जायगा, जब एकता की निहायत ज़रूरत थी। शायद मेरी भूल हुई।

अब यह संकट ऐसे तरीके पर आया है, जो दुर्भाग्यपूर्ण है। मेरा अपना कार्यक्रम निश्चित करने से पहले मुझे कुछ कल्पना होनी चाहिए कि तुम्हारे खयाल से कांग्रेस को क्या होना चाहिए और क्या करना चाहिए। मुझे तो इस बारे में कुछ भी मालूम नहीं है। वामपक्ष और दक्षिणपक्ष के बारे में और संघ-शासन वगैरा के बारे में बहुत-सी बातें हुई हैं, फिर भी जहांतक मैं याद कर सकता हूं तुम्हारी सदारत के दौरान में हमने कार्य-समिति में इन सवालों के बारे में कोई खास महत्व की बातों पर चर्चा नहीं की। मुझे पता नहीं तुम किसे वामपक्षी और किसे दक्षिणपक्षी समझते हो। अध्यक्ष के चुनाव के दौरान तुम्हारे बयानों में जिस ढंग से इन शब्दों का प्रयोग किया गया उनसे यह अर्थ निकलता था कि गांधीजी और कार्य-समिति में जो उनकी मंडली समझी जाती है वे दक्षिणपक्षी नेता हैं। उनके विरोधी जो भी हों, वे वामपक्षी हैं। यह मुझे बिल्कुल ग़लत-बयानी दिखाई देती है। मुझे ऐसा मालूम हाता है कि कई कहे जानेवाले वामपक्षी कथित दक्षिणपक्षियों से अधिक दक्षिणपक्षी हैं। तेज भाषा और कांग्रेस के पुराने नेतृत्व की नुक्ताचीनी करने और उनपर हमला करने की क्षमता राजनीति में वामपक्ष की कसौटी नहीं है। मुझे ऐसा मालूम होता है कि तात्कालिक भविष्य में हमारे मुख्य खतरों में से एक यह है कि ऐसे लोग पदारूढ़ होंगे और जिम्मेदारी के स्थान में आ जायंगे, जिनमें कुछ भी जिम्मेदारी की भावना नहीं है या स्थिति को वे अच्छी तरह समझते नहीं हैं और न उनमें ऊंचे दर्जे की बुद्धि मालूम होती है। वे ऐसी स्थिति पैदा कर देंगे, जिससे बड़ी प्रतिक्रिया हुए बिना नहीं रहेगी और फिर सच्चे वामपक्षियों का सफाया हो जायगा। चीन का उदाहरण हमारे सामने है और मैं नहीं चाहता कि हिंदुस्तान उस दुर्भाग्यपूर्ण रास्ते को अपनाये। मेरा बस चले तो मैं उसे रोकं।

मेरे खयाल से वामपक्ष और दक्षिणपक्ष शब्दों का प्रयोग आम तौर पर बिल्कुल ग़लत और गड़बड़ पैदा करनेवाला हुआ है। यदि इन शब्दों के बजाय हम नीतियों के बारे में बात करें तो कहीं बेहतर होगा। तुम किस नीति के समर्थक हो? संघ-विरोधी? बहुत ठीक। मेरा खयाल है कि कार्य-समिति के सदस्यों का बड़ा बहुमत उसका समर्थन करेगा और इस मामले में उनकी कमजोरी का संकेत करना न्यायपूर्ण नहीं है। क्या तुम्हारे लिए यह बेहतर न होता कि इस मामले की चर्चा कार्यसमिति में पूरी तरह की जाती और इस बारे में कोई तजवीज भी पेश की जाती और फिर उसकी प्रतिक्रियाएं देखी जातीं? अपने साथियों के साथ इस मामले की पूरी चर्चा किये बिना उन सबपर पीछे हटने का दोष लगाना अवश्य ही न्याय नहीं था। मैं यहां उस बात को नहीं दोहराऊंगा जो मैंने तुमसे इस असाधारण अभियोग के बारे में कही थी कि संघ-शासन में मंत्रिमंडलों का बंटवारा पहले ही हो चुका है। अनिवार्य रूप से अधिकांश लोगों ने सोचा कि कार्य-समिति के तुम्हारे साथी दोषी थे।

तुम्हें याद होगा कि मैंने यूरोप से तुमको और कार्य-समिति को लम्बी रिपोर्ट भेजी थी। मैंने बहुत ब्यौरेवार चर्चा की थी कि संघ-शासन के प्रति हमारा क्या रवैया होना चाहिए और निर्देशों की मांग की थी। तुमने मुझे कोई निर्देश नहीं भेजा, पहुंच तक नहीं दी। गांधीजी मेरे तरीके से सहमत थे और मुझे बताया गया है कि कार्य-समिति के अधिकांश सदस्य भी सहमत थे। मुझे अभी तक पता नहीं कि तुमपर क्या प्रतिक्रियाएं हुईं, परन्तु मुझे सूचना देने की बात छोड़ दी जाय तो भी क्या तुम्हारे लिए यह मौका नहीं था कि इस मामले की कार्यसमिति में खूब चर्चा की जाय और इधर या उधर फैसला कर लिया जाय? दुर्भाग्य से इस मामले में और दूसरे मामलों में तुमने कार्यसमिति में बिल्कुल निष्क्रिय वृत्ति धारण की है, हालांकि कभी-कभी बाहर तुमने अपने विचार प्रकट किये हैं। नतीजा यह निकला कि तुमने एक निर्देशक अध्यक्ष की अपेक्षा स्पीकर के रूप में अधिक काम किया है।

महासमिति के दफ्तर का काम पिछले साल के दौरान में बहुत बिगड़ गया है। तुमने उसे देखा तक नहीं और तुम्हारे नाम के पत्रों और तारों

का जवाब शायद ही दिया गया हो। नतीजा यह होता है कि दफ्तर के बहुत-से मामले अनिश्चित काल तक लटके रहते हैं। ठीक जिस समय हमारे संगठन को गहरे ध्यान की जरूरत है, उस समय मुख्य कार्यालय कारगर तरीके पर काम नहीं करता।

हमारे सामने रियासतों का सवाल है, हिन्दू-मुस्लिम प्रश्न है और किसानों तथा मजदूरों की समस्या है। इनके बारे में कई दृष्टिकोण हैं और कुछ संघर्ष भी हैं। क्या इनमें से किसीपर तुम्हारे निश्चित विचार हैं जो अपने साथियों के विचारों से भिन्न हैं ? बाम्बे ट्रेड डिस्प्यूट्स बिल को लो। मैं उसकी कुछ धाराओं से सहमत नहीं हूं और यदि मैं यहां होता तो उन्हें बदलवाने की पूरी कोशिश करता। क्या तुम भी असहमत हो और हो तो क्या तुमने उन्हें बदलवाने की कोशिश की ? किसानों-संबंधी आम स्थिति के संबंध में, बंगालसहित, विभिन्न प्रान्तों में, मुझे पता नहीं कि तुम्हारे निश्चित विचार क्या हैं।

प्रान्तीय कांग्रेसी सरकारें तेजी से छोटे-मोटे संकटों की ओर जा रही हैं और यह बिल्कुल संभव है कि रियासती आन्दोलन के बढ़ने से कोई बड़ा संकट उपस्थित हो जाय, जिसमें हम सब और प्रान्तीय सरकारें भी फंस जायंगी। तुम्हारे खयाल से हमें कौन-सा रास्ता अख्तियार करना चाहिए ? बंगाल में मिले-जुले मंत्रिमंडल की तुम्हारी इच्छा का संविधानवाद की ओर बह जाने के खिलाफ तुम्हारी नाराजी के साथ मेल नहीं बठता। मामूली तौर पर इसे एक दक्षिणपक्षी कार्रवाई समझा जायगा और खास तौर पर अब जबकि स्थिति का तेजी के साथ विकास हो रहा है।

और फिर वैदेशिक नीति का भी सवाल है। तुम जानते हो कि खास तौर पर इस नाजुक मौके पर मैं उसे बहुत अहमियत देता हूं। जहांतक मैं समझ सकता हूं, तुम भी देते हो। परन्तु अभी तक मुझे ठीक-ठीक पता नहीं है कि तुम किस नीति की कल्पना करते हो। मुझे सामान्य रूप में गांधीजी का नजरिया मालूम है और मैं उनसे पूरी तरह सहमत नहीं हूं, हालांकि अंतर्राष्ट्रीय संकट के दो-तीन वर्षों में हम साथ-साथ चले हैं और चल सकते हैं और उन्होंने मेरे नजरिये से पूरी तरह सहमत हुए बिना

अक्सर उसे स्वीकार किया है।

ये और कई दूसरे सवाल मेरे मन में पैदा होते हैं और मैं जानता हूं कि और बहुत-से लोगों को भी उनसे परेशानी होती है। उनमें वे लोग भी शामिल हैं, जिन्होंने चुनाव में तुम्हारे लिए राय दी है। यह बिल्कुल मुमकिन है कि इनमें से बहुत-से लोग कांग्रेस में उठनेवाले सवालों पर बिल्कुल दूसरी तरह राय दें और वहां कोई नई स्थिति पैदा हो जाय।

कार्य-समिति की रचना से बहुत-सी समस्याएं खड़ी होंगी। अंतिम समस्या ऐसी समिति बनाने की होगी, जिसे महासमिति का और आम तौर पर कांग्रेस का विश्वास प्राप्त हो। वर्तमान परिस्थिति में यह स्वयं बहुत कठिन बात है। ऐसी समिति का होना बहुत अच्छी बात नहीं है, जो ऐसे लोगों की इच्छा पर कायम रहती है, जो जिम्मेदार नहीं समझे जाते और जिनकी प्रमुखता का मुख्य कारण यह हो कि वे जिसे दक्षिण-पक्षी समझते हैं, उनकी उन्होंने टीका-टिप्पणी की है। ऐसी समिति पर किसीका, चाहे वह वामपक्षी हो या दक्षिणपक्षी, विश्वास नहीं होगा। वह या तो उठाकर फेंक दी जायगी या महत्वहीन बनकर रह जायगी।

यह बिल्कुल संभव है कि रियासती संग्राम के बढ़ने पर वल्लभभाई और गांधीजी तक उसमें अधिकाधिक फंस जायंगे। हिंदुस्तान की राजनीति में वह केन्द्रीय वस्तु बन जायगी और कोई कार्यसमिति, जिसमें दूसरे लोग होंगे, कारगर नहीं होगी और उसका महत्व नहीं रहेगा। पिछले दस-पंद्रह साल में कार्यसमिति का हिंदुस्तान में और बाहर भी बहुत ऊंचा दर्जा रहा है। उसके फैसलों का कुछ अर्थ माना जाता है और उसकी बात में ताकत होती है। वह इतनी चिल्लाती नहीं है, परन्तु जो कुछ वह कहती है उसके पीछे ताकत और क्रिया होती है। मुझे डर है कि हमारे बहुत-से कथित वामपक्षी और किसी बात की अपेक्षा तेज भाषा में अधिक विश्वास करते हैं। मेरे दिल में नरीमान-ढंग के सार्वजनिक कार्यकर्त्ता के लिए कुछ भी प्रशंसा नहीं है और इस किस्म के बहुत लोग हैं।

हम दुखदायी पेंच में फंस गये हैं और फिलहाल मुझे उसम से

निकलने का कोई रास्ता नजर नहीं आता। मैं पूरी कोशिश करने को तैयार हूं, लेकिन स्पष्टीकरण और नेतृत्व तुम्हारी तरफ से होना चाहिए और तभी दूसरों के लिए यह निश्चय करना संभव होगा कि उनका मेल बैठता है या नहीं। इसलिए तुमको मेरा सुझाव है कि तुम स्थिति के सभी गूढ़ार्थों की जांच करो, ऊपर बताई समस्याओं पर विचार करो और उनपर एक ब्यौरेवार नोट लिखो। इसे प्रकाशित करने की जरूरत नहीं, परन्तु उसे उन लोगों को दिखलाना चाहिए, जिन्हें तुम सहयोग के लिए निमंत्रण दो। ऐसा नोट चर्चा का आधार बन जायगा और चर्चा से तुमको मौजूदा गुत्थी सुलझाने में मदद मिलेगी। बातचीत से बहुत फायदा नहीं होता। वे अस्पष्ट और अक्सर गुमराह करनेवाली होती है और हमारे यहां पहले ही काफी अस्पष्टता रही है। मैं चाहता हूं कि तुम ब्रिटिश सरकार को चुनौती देने के बारे में अपने सुझाव का विस्तार करो। ठीक-ठीक तुम इस बारे में क्या कार्रवाई करना चाहते हैं और बाद में क्या करोगे? जैसा मैंने तुमको बता दिया है, मुझे यह विचार बिल्कुल पसन्द नहीं है, परन्तु यह संभव है कि अगर तुम इसका विस्तार करो तो शायद मैं उसे ज्यादा अच्छी तरह समझ सकूं। मैंने अखबारों में तुम्हारा बयान देखा है। मेरे लिए वह इतना अस्पष्ट है कि मैं तुम्हारी इस स्थिति को नहीं समझ सकता। इसलिए मेरा अनुरोध है कि पूरा स्पष्टीकरण करो।

सार्वजनिक मामलों में सिद्धान्त और नीतियां होती हैं। हममें एक-दूसरे को समझने और साथियों की नेकनीयती में विश्वास रखने की बात भी होती है। अगर यह समझ और विश्वास नहीं है तो लाभदायक सहयोग बहुत कठिन हो जाता है। उम्र बढ़ने के साथ-साथ मैं साथियों के बीच इस विश्वास और समझ को अधिकाधिक महत्व देने लगा हूं। मैं बढ़िया-से-बढ़िया उसूलों का भी क्या करूं, अगर मुझे संबंधित व्यक्ति में भरोसा न हो? अनेक प्रान्तों की दलबंदियां इसका उदाहरण हैं और जो लोग मामूली तौर पर सम्माननीय और खरे हैं उनमें अत्यन्त कटुता और अक्सर बिल्कुल बेउसूलपन पाया जाता है। मैं इस तरह की राजनीति को हजम नहीं कर सकता और मैंने कई साल से अपने-आपको

उससे बिल्कुल अलग रखा है। मैं किसी गुट या किसी दूसरे आदमी के समर्थन के विना निजी तौर से काम करता हूं, हालांकि मुझे खुशी है कि मुझे बहुतों का विश्वास प्राप्त है। मुझे लगता है कि यह प्रान्तीय खरावी अब अखिल भारतीय स्तर पर फैलाई जा रही है। यह मेरे लिए बड़ी गम्भीर चिन्ता का विषय है।

तो हम फिर इस वात पर आ जाते हैं: राजनैतिक समस्याओं के पीछे मनोवैज्ञानिक समस्याएं हैं और उनसे निपटना हमेशा अधिक कठिन होता है। इसका एक ही उपाय है कि एक-दूसरे के साथ बिल्कुल खुले दिल से वात करें और इसलिए मुझे आशा है कि हम सब पूरी तरह साफ-साफ वातें करेंगे।

मैं यह आशा नहीं रखता कि तुम इस पत्र का जवाब फौरन दोगे। इसमें कुछ दिन लगेंगे। लेकिन मैं चाहूंगा कि तुम मुझे इसकी पहुंच भेज दो।

तुम्हारा,
जवाहर

२५०. वल्लभभाई पटेल की ओर से

बम्बई
८ फरवरी १९३९

प्रिय जवाहर,

मुझे तुम्हारा पिछला पत्र बारडोली में मिला, जो मेरे उस आग्रह के उत्तर में था कि तुम संयुक्त वक्तव्य पर हस्ताक्षर करो या एक स्वतंत्र वक्तव्य दो। मैंने तुम्हें यह सुझाव बापू के कहने पर दिया था। तुम्हारा जवाब भी मैंने उन्हें दिखा दिया है और उन्होंने मुझसे कहा है कि इसके बारे में मैं अपने विचार तुम्हें लिख दूं। वह स्वय भी उस पत्र से अप्रसन्न हुए, परन्तु मैंने तुम्हें और ज्यादा कष्ट देना ठीक नहीं समझा। संयुक्त वक्तव्य भी उन्हींके कहने से जारी किया गया था। वास्तव में मैंने उनसे कह दिया था कि मुझपर कीचड़ उछालने का यह एक और बहाना हो जायगा, लेकिन वह नहीं माने और मैंने उनकी आज्ञा का पालन किया। मौलाना ने अन्तिम क्षण पर अपना नाम वापस ले लिया।

वास्तव में मुझे प्रसन्नता है कि हम हार गये। बिना एक विचार की

कार्य-समिति के कोई भी प्रभावकारी काम संभव नहीं है। मैं तो सदा ऐसे अवसर के लिए भगवान से प्रार्थना करता रहा हूं।

जिससे मैं सबसे ज्यादा घृणा करता हूं वह वह तरीका है, जो इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए अपनेको वामपक्षी कहने का दावा करनेवाले लोगों द्वारा, और उससे भी ज्यादा अध्यक्ष द्वारा, अपनाया गया, जिसका हमपर यह आरोप है कि हम ब्रिटिश सरकार के साथ षड्यंत्र में शामिल हो गये हैं और स्थायी तौर पर संघ-मंत्रिमंडल भी बना लिया है। दुश्मनों को भी हमारी ईमानदारी पर भरोसा है, परन्तु हमारे अध्यक्ष को नहीं। किसी तरह भी हमें इस बारे में संदेह नहीं है कि हमें क्या करना है और मैंने सुभाष को लिख भी दिया है कि हम उनकी सुविधा से बाहर निकल आने को तैयार हैं। जीवत तुम्हें उस पत्र की एक नकल दिखायेंगे, जो मैंने कल उन्हें भेजा है।

मैं तुम्हारे विचार नहीं जानता, परन्तु इतनी आशा तो है कि हमने जो कुछ करने का सोचा है, उसके लिए कम-से-कम तुम हमें दोष नहीं दोगे। मेरा विचार है कि मेरी किस्मत में ही गालियां खाना बदा है। बंगाल के अखबार मुझपर आगबबूला हैं और खरे और नरीमान-कांड के लिए वे मुझे दोष देते हैं, हालांकि मेरे सब साथी भी इन कामों के लिए संयुक्त रूप से जिम्मेदार हैं। तथ्य यह है कि डा. खरे के मामले में सुभाष शुरू से आखिर तक उपस्थित थे और उन्होंने ही सारी चीज का संचालन किया था।

बड़ौदा में भी मेरे कारण एक बवंडर उठ खड़ा हुआ है। महाराष्ट्र के अखबारों में मेरे विरुद्ध जहर भरा रहता है। वे मेरे खून के प्यासे हैं।

राजकोट की वजह से सारे काठियावाड़ में आग-सी सुलग रही है। वहां जबरदस्त जन-जागृति हो गई है। अगर रेजिडेन्टों ने दबाव न डाला होता तो सारे नरेश फौरन झुक जाते।

आशा है, तुम स्वस्थ होगे।

तुम्हारा,
वल्लभभाई

२५१. सुभाषचंद्र बोस की ओर से

चौरम, जिला गया
१० फरवरी १९३९

प्रिय जवाहर,

मुझे तुम्हारा लंबा पत्र कलकत्ता में मिला। तुमने मेरी कमजोरियों का जिक्र किया है। जबकि मुझे उनका पूरी तरह भान है, मुझे कहना चाहिए कि कहानी का दूसरा पहलू भी है। इसके अलावा किसीको उन बाधाओं को नहीं भुलाना चाहिए, जिनका मुझे सामना करना पड़ा। उनका मैं इस पत्र में जिक्र नहीं करना चाहता, कुछ तो इसलिए कि उससे एक विवाद छिड़ जायगा और कुछ मुझे दूसरों की आलोचना करनी पड़ेगी। अब मुख्य प्रश्न त्रिपुरी कांग्रेस के कार्यक्रम का है। जयप्रकाश तुमसे १२ ता. को मिलेंगे और कार्यक्रम के बारे में मेरे विचार तुम्हें बतायेंगे। मैं उसी समय तुमसे मिलना चाहता, किन्तु मैं नहीं समझता कि यह संभव हो सकेगा। जो हो, मैं ता. २० को इलाहाबाद में तुमसे मिलने की कोशिश करूंगा।

राजकोट आदि के बारे में मैंने तुम्हारा वक्तव्य देखा। वक्तव्य बहुत अच्छा है, किन्तु मेरे विचार से उसमें एक दोष है। ब्रिटिश सरकार राजाओं के जरिये कांग्रेस से लड़ना चाहती है, किन्तु हमें उसके जाल में नहीं फंसना चाहिए। रियासती समस्याओं के बारे में राजाओं के साथ मोर्चा लेते हुए भी, हमको स्वराज्य के प्रश्न पर ब्रिटिश सरकार को सीधी चुनौती देनी चाहिए। तुम्हारे वक्तव्य में मुझे यह विचार नहीं मिला और मैं अनुभव करता हूं कि अगर हम स्वराज्य का प्रश्न छोड़ देते हैं और केवल रियासती प्रश्नों पर ब्रिटिश सरकार और राजाओं से लड़ना शुरू कर देते हैं तो हम अपनी असली लड़ाई से भटक जाने का खतरा मोल ले रहे हैं। शेष मिलने पर।

सप्रेम तुम्हारा,
सुभाष

२५२. वाई. टी. वू की ओर से

दी नेशनल कमिटी,
ऑव यंगमेन्स क्रिश्चियन एसोसियेशन ऑव चाइना
१३१, म्यूजियम रोड, शंघाई
२३ फरवरी १९३९

प्रिय श्री नेहरू,

आपसे बारडोली में मिलने के बाद मैं कुशलपूर्वक और सानन्द घर लौट आया। बारडोली में इतनी व्यस्तता के बीच भी आपने हमसे जो भेंट की थी और जहाज पर मेरे पास आपने जो संदेश भेजा था, उसके लिए मैं एक बार फिर कृतज्ञता प्रकट करना चाहता हूं। वह संदेश और साथ-ही-साथ जो संदेश आपने मिस्टर साई को भेजा था, उन दोनों का ही चीनी भाषा में अनुवाद किया गया और वे सिंगापुर, हांगकांग तथा शंघाई में चीनी और विदेशी पत्रों में प्रकाशित हुए।

यह पत्र मैं आपको उस बातचीत की पुष्टि करने के लिए लिख रहा हूं, जो हमने आपकी आत्मकथा को चीनी भाषा में अनुवादित करने के बारे में की थी। हम इस कार्य को जल्दी ही आरम्भ करने जा रहे हैं और मेरा खयाल है कि आप अपने प्रकाशकों को भी इसकी सूचना दे देना चाहेंगे। जैसाकि मैंने आपसे बारडोली में कहा था, चीन अन्तर्राष्ट्रीय कापीराइट योजना का सदस्य नहीं है और वह लेखकों तथा प्रकाशकों से अनुमति लिये बिना ही पुस्तकें छापता रहा है। फिर भी हमारे एसोसिएशन प्रेस ने अपनी यह नीति रखी है कि वह कम-से-कम लेखक को सूचना दे देता है और जब कभी सम्भव होता है तब शिष्टाचार के नाते अनूदित पुस्तक की कुछ प्रतियां भी उसे भेज देता है।

अनुवाद को हमें कुछ संक्षिप्त करना पड़ेगा, जिससे कि उसका आकार कुछ कम हो जाय और उसे सस्ते दामों में निकाला जा सके। अगर आपको इसमें कोई आपत्ति हुई तो हम ऐसा नहीं करना चाहेंगे।

निश्चय है कि आपकी इस पुस्तक से चीनी पाठकों को बड़ी प्रेरणा

मिलेगी, जैसीकि कुछ साल पहले गांधीजी की आत्मकथा के अनुवाद से मिली थी।

भवदीय,
वाई. टी. वू
प्रधान सम्पादक

२५३. शरच्चन्द्र बोस के नाम

इलाहाबाद
२४ मार्च १९३९

प्रिय शरत्,

गांधीजी मौलाना आज़ाद से मिलने आज सुबह यहां पहुंचे और उन्होंने मुझे आपका २१ मार्च का उनके नाम का खत दिखाया। उसे पढ़कर मुझे दुःख और अचरज हुआ। हम सब जानते हैं कि प्रमुख कांग्रेसियों में नीति और कार्यक्रम की बातों पर मतभेद हैं और हमने अक्सर अपने-अपने नजरिये को प्रकट किया है, हालांकि हम साथ-साथ चलने में कामयाव हुए हैं। आम तौर पर कांग्रेस ने गांधीजी के कार्यक्रम का पालन किया है और उनके नेतृत्व को स्वीकार किया है। खुद मुझे ऐसे मतभेदों में कोई नुकसान दिखाई नहीं देता, बशर्ते कि सामान्य कड़ी बनी रहे और हम मिलकर काम करते रहें। हमारे आन्दोलन में ये प्राणशक्ति के चिह्न हैं। परन्तु आपके पत्र में शायद ही किसी नीति या कार्यक्रम के सवाल का जिक्र है। उसमें निजी मुद्दों का जिक्र है और खास आदमियों के खिलाफ गम्भीर आरोप लगाये गए हैं। उससे बहस नीची सतह पर उतर आती है और यह जाहिर है कि यदि किसी आदमी या गुट की दूसरे के खिलाफ ऐसी राय हो तो किसी सामान्य कार्य में आपसी सहयोग असंभव हो जाता है। मुझे पता नहीं कि आपके पत्र में इस बारे में सुभाष के विचार कहांतक व्यक्त होते हैं। कुछ भी हो, यह जाहिर है कि आपने जो निजी सवाल उठाये हैं, उनकी सफाई नहीं होगी तो उनसे कारगर सहयोग में बाधा पड़ेगी।

आपके पत्र से निजी मुद्दा तीव्र हो जाता है। लेकिन यह सवाल तो पहले भी था और, जैसा आपको मालूम है, त्रिपुरी में वह प्रमुख रहा।

जब अध्यक्ष के चुनाव के दो-तीन दिन बाद मैं सुभाष से मिला तो मुझे इसका महत्व मालूम हो गया और मैंने उनसे इसकी सफाई कर लेने का अनुरोध किया। उसके थोड़े ही दिन बाद ४ फरवरी को मैंने उन्हें एक लम्बा खत लिखा, जिसमें मैंने उनसे अनुरोध किया कि जहांतक उनका संबंध है, राजनैतिक मुद्दों की सफाई करलें, क्योंकि वामपक्ष और दक्षिणपक्ष की बहुत ज्यादा अस्पष्ट बातें होती रही थीं और उनसे हालत पर कोई रोशनी नहीं पड़ती थी और मैंने खानगी पहलू का भी जिक्र किया था। मैंने यह लिखा था :

"सार्वजनिक मामलों में सिद्धान्त और नीतियां होती हैं। हममें एक दूसरे को समझने और साथियों की नेकनीयती में विश्वास रखने की बात भी होती है। यदि यह समझ और विश्वास नहीं है तो लाभदायक सहयोग बहुत कठिन हो जाता है। उम्र बढ़ने के साथ-साथ मैं साथियों के बीच इस विश्वास और समझ को अधिकाधिक महत्व देने लगा हूं। मैं बढ़िया-से-बढ़िया उसूलों का भी क्या करूं, अगर मुझे संबंधित व्यक्ति में भरोसा न हो? अनेक प्रान्तों की दलबन्दियां इसका उदाहरण हैं। और जो लोग मामूली तौर पर सम्माननीय और खरे हैं, उनमें अत्यन्त कटुता और अक्सर बिल्कुल बेउसूलपन पाया जाता है। मैं इस तरह की राजनीति को हजम नहीं कर सकता और मैंने कई साल से अपने-आपको उससे बिलकुल अलग रखा है। मैं किसी गुट या किसी दूसरे आदमी के समर्थन के बिना निजी तौर से काम करता हूं, हालांकि कि मुझे खुशी है कि मुझे बहुतों का विश्वास मिला हुआ है। मुझे लगता है कि यह प्रान्तीय खराबी अब अखिल भारतीय स्तर पर फैलाई जा रही है। यह मेरे लिए बड़ा गम्भीर चिन्ता का विषय है।

"तो हम फिर इस बात पर आ जाते हैं : राजनैतिक समस्याओं के पीछे मनोवैज्ञानिक समस्याएं हैं और उनसे निपटना हमेशा अधिक कठिन होता है। इसका एक ही उपाय है कि आप एक-दूसरे के साथ बिल्कुल खुले दिल से बात करें और इसलिए मुझे आशा है कि हम सब पूरी तरह साफ़-साफ़ बातें करेंगे।"

दुर्भाग्य से सुभाष को राजनैतिक या निजी सवालों की सफाई

करने का समय नहीं मिला या इच्छा नहीं थी। जब वह गांधीजी से मिलने वर्धा जा रहे थे तब मैंने उनसे फिर अनुरोध किया था कि निजी पहलू साफ-साफ तौर पर निपटा लें क्योंकि अपने बयान में उन्होंने जो आरोप लगाये थे वे गंभीर थे और जहां-के-तहां नहीं छोड़े जा सकते थे। उनकी बाद की सफाई से मामला बिल्कुल नहीं सुधरा था। उन्होंने इस बारे में गांधीजी से बात करने का वचन दिया था, लेकिन बाद में ऐसा हुआ कि उन्होंनें इस विषय का जिक्र तक न किया।

इस प्रकार यह मामला, जैसा मुझे भय था, कांग्रेस के सामने आ गया और इससे दूसरे मुद्दों के विचार पर भी असर पड़ा। मेरा अपना रवैया इस मामले में मेरे लिए अनोखा था और मैं दोनों तरफ के किसी भी आदमी के विचारों से पूरी तरह सहमत नहीं हो सका। इसलिए मैंने विषय-समिति या खुली कांग्रेस में इस चर्चा में कोई भाग नहीं लिया। लेकिन मुझे बहुत तेजी से अनुभव हुआ कि अध्यक्ष के बयानों में जो आरोप लगाये गए थे वे साथियों के प्रति अन्यायपूर्ण थे और उन्हें वापस लेना चाहिए। खुली कांग्रेस में मेरा हस्तक्षेप सिर्फ कार्यवाहक अध्यक्ष की बात कहने और जो कार्यविधि अपनाने की थी उसे अंग्रेजी में समझाना ही था। किसी-न-किसी कारणवश कुछ प्रतिनिधि नहीं चाहते थे कि मैं ज़रा भी बोलूं, हालांकि उन्हें यह मालूम नहीं था कि मैं क्या बोलनेवाला था और उनकी तरफ से संगठित रुकावट हुई, जो आपने देखी। मैंने खयाल किया कि थोड़े-से प्रतिनिधियों की इस अड़ंगेबाजी के कारण हट जाना या झुक जाना मेरे लिए नामुनासिब होगा, जबकि लगभग एक लाख प्रतिनिधि और दर्शक, जिन्होंने अत्यन्त उल्लेखनीय शान्ति और अनुशासन का पालन किया, मेरी बात सुनना चाहते थे। इसलिए मैं डेढ़ घंटे तक डटा रहा। मैं कबूल करता हूं कि कुछ सैकिंड के लिए मुझे गुस्सा आ गया और मैंने आपसे कह दिया कि यह हुल्लड़बाजी और फासिस्ट व्यवहार था। मैं इस बारे में आपसे कह रहा था, न कि श्रोताओं से, हालांकि मेरे कुछ शब्द माइक्रोफोन पर चले गये होंगे। मुझे गुस्से में आने का अफसोस है, मगर आप अवश्य समझ लेंगे कि मुझपर दबाव बहुत पड़ा था।

मैंने यह सफाई जरा लम्बी दी है, क्योंकि इस घटना से मेरा खुद का

संबंध था। और बातें जिनका आपने जिक्र किया है बहुत-कुछ मेरी जानकारी के बाहर की हैं, लेकिन जो आरोप आप लगाते हैं वे इतने आश्चर्यजनक हैं कि मुझे उनके सच होने पर भरोसा नहीं होता। मैं मानता हूं कि कांग्रेस के दिनों में वोट मांगने का काम व्यापक रूप में हुआ और सब तरह की बातें कही गई होंगी। मुझे इस तरह की चीज से अरुचि है, इसलिए मैं दूर-दूर रहा और प्रतिनिधियों के शिविर में भी नहीं गया। अलबत्ता, शुरू-शुरू में उत्तर प्रदेश कांग्रेस-समिति की सभा में गया था। लेकिन आपके आरोप पुरानी कार्यसमिति के कुछ प्रमुख सदस्यों के खिलाफ हैं। मुझे इनके बारे में कोई जानकारी नहीं है और मुझे विश्वास है, आप सहमत होंगे कि व्यक्तियों के विरुद्ध निश्चित सबूत के बिना ऐसे आरोप यों-ही नहीं लगाये जा सकते। किसीके लिए यह कहना बेहूदा बात थी कि सुभाष की बीमारी बनावटी थी और जहांतक मैं जानता हूं मेरे किसी साथी ने इसका संकेत भी नहीं किया। सच तो यह है कि हम सबको बड़ी चिन्ता थी।

भूलाभाई देसाई ने क्या कहा होगा, इसका जवाब देना तो उन्हींका काम है। मैं तो यही मानता हूं कि आपने गलत समझा, क्योंकि मैं कल्पना नहीं कर सकता कि वह ऐसी बात कहेंगे।

कार्यवाहक अध्यक्ष के निर्णय अथवा व्यवहार के बारे में कुछ भी कहना मेरा काम नहीं है। परन्तु मुझे विश्वास है कि फिर से सोचने पर आप मुझसे सहमत होंगे कि वह बहुत कठिन स्थिति में थे और उन्होंने कार्रवाई शान और इन्साफ के साथ चलाई। राष्ट्रीय मांग के प्रस्ताव पर आपको संशोधन रखने देने में उन्होंने किसी बात को खींचा होगा, परन्तु आपको कांग्रेस के सामने अपना नजरिया रखने का पूरा मौका था। मतदान के समय प्रस्ताव का विरोध करनेवाले आप अकेले ही आदमी थे। मैं आपको बताऊं कि मुझे इसपर कितना अचरज हुआ था, क्योंकि मैं कल्पना नहीं कर सकता था कि अपने-आपको वामपक्षी समझनेवाला कोई कांग्रेसी उसका विरोध करेगा।

त्रिपुरी में मेरे निवास के दिनों में प्रतिनिधि-कैंपों से तरह-तरह की खबरें और अफवाहें मेरे कानों तक पहुंचती थीं। कुछ तो बहुत ही

भद्दी थीं, परन्तु मैंने प्रमाण के बिना किसीको भी मानने से इन्कार कर दिया। आपकी जांच के लायक एक मामला बंगाल के प्रतिनिधियों को प्रतिनिधि-टिकिट देने का था। यह जिम्मेदार व्यक्तियों का बयान था और महासमिति के दफ्तर से किसी हद तक उसका समर्थन हुआ कि बहुत-से टिकिट ऐसे लोगों के लिए जारी किये गए, जो त्रिपुरी नहीं आये थे। यह भी कहा गया कि प्रतिनिधियों को कांग्रेस में लाने के लिए बड़ी-बड़ी रकमें खर्च की गईं।

मेरे खयाल से आपके या दूसरों के लगाये हुए विविध आरोपों की कुछ-न-कुछ जांच करना वांछनीय है। यह अनुचित है कि ऐसे आरोप अस्पष्ट रूप में लगाये जायं, और बहुत-से आदमी उन्हें मान लें तो इससे वह साबित नहीं हो जाता। हम अपने सार्वजनिक जीवन को एक-दूसरे की निन्दा की सतह तक गिरने नहीं दे सकते।

आपने कांग्रेसी मंत्रियों का जिक्र किया है। मैं उनकी तमाम प्रवृत्तियों का बहुत प्रशंसक नहीं हूं, लेकिन त्रिपुरी में उन्होंने जो भाग लिया उसपर आपकी आपत्ति से मुझे अचरज होता है। क्या मंत्री होने के कारण उन्हें कांग्रेस में भाग नहीं लेना चाहिए? यह तो अजीब प्रस्ताव है और मेरे विचार से गलत है। जहांतक मुझे मालूम है वे अपनी निजी हसियत में काम कर रहे थे और इसका उन्हें पूरा हक था। उनके 'भौतिक प्रभाव' से आपका क्या मतलब है? मैं समझता हूं कि इसकी सफाई हो जानी चाहिए, क्योंकि उसके विचित्र गूढ़ार्थ हैं, जो बिल्कुल अनुचित हैं। मेरी समझ में यह भी नहीं आता कि कांग्रेस की प्रवृत्तियों में भाग लेने का अर्थ कांग्रेस पर छा जाना हो। इससे तो वे बहुत दूर हैं।

मैंने आशा रखी थी कि भीतरी और बाहरी संकट के इन दिनों में कांग्रेसियों में बहुत-कुछ सहयोग हो सकेगा, और इसके लिए त्रिपुरी में और पहले भी मैंने परिश्रम किया। मुझे साफ नजर आता है कि किसी कार्रवाई अथवा वामपक्षी कार्यक्रम के पहले यह अत्यावश्यक है कि हम कारगर तौर पर काम करें। अगर हम ऐसा नहीं करते तो सारे कार्यक्रम फिजूल हैं और उनका कोई नतीजा नहीं निकलता, और हममें धीरे-धीरे परन्तु निश्चित रूप से यही वृत्ति आ रही है। इसी वजह से मैंने दिल्ली

से सुभाष को तार द्वारा सुझाव दिया था कि त्रिपुरी के प्रस्ताव के अनुसार कार्यसमिति जल्दी बना ली जाय । मैंने यह भी सुझाया था कि अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति का विचार करने के लिए महासमिति की बैठक की जाय ।

त्रिपुरी के प्रस्ताव में कांग्रेस के अध्यक्ष और गांधीजी के बीच सहयोग की कल्पना की गई थी और नीति थोड़ी बहुत ज्यों-की-त्यों जारी रहनेवाली थी । आपके पत्र से यह अर्थ निकलता है कि यह संभव नहीं है । मुझे मालूम नहीं कि सुभाष का भी यही विचार है या क्या । है तो स्पष्ट ही ऐसी ज़िच पैदा हो गई है जिसे महासमिति ही मिटा सकती है और महासमिति की बैठक जितनी जल्दी हो जाय, उतना अच्छा है ।

मैं हमेशा की तरह जोर के साथ महसूस करता हूं कि हमें जो नीति और कार्यक्रम चलाना है उसके बारे में हमारे अपने दिमाग साफ होने की बहुत ज्यादा जरूरत है । खास तौर पर कथित वामपक्षियों को साफ रहना चाहिए । वामपक्षियों के लिए अस्पष्ट रहना और दुःसाहस की स्थिति में बह जाना खतरनाक है । मेरा अनुरोध है कि सुभाष अपनी स्थिति साफ करें और आपको भी मेरा यही सुझाव है । मैं देखता हूं कि बहुत-से लोग, जो अपने-आपको वामपक्षी कहते हैं, ऐसे उपाय और नीतियां सुझाते हैं जो बहुत दक्षिणपक्षी और नरम हैं । बंगाल में मिले-जुले मंत्रिमंडल के सवाल को ही लीज़िये । किन्हीं हालात में इसकी कल्पना की जा सकती है, परन्तु इस समय तो यह निश्चित रूप से एक दक्षिणपक्षी कदम है । मेरी समझ में नहीं आता कि आप बंगाल में संदिग्ध हालात में मिला-जुला मंत्रिमंडल क्यों चाहें और फिर भी दूसरी जगह कांग्रेस-मंत्रिमंडलों पर आपत्ति करें, हालांकि कमजोरियां होते हुए वे भी बेहतर हालात में काम कर रहे हैं ।

आपने त्रिपुरी में कार्यसमिति के कुछ पुराने सदस्यों की तरफ से अड़ंगेबाजी होने का जिक्र किया । मैं नहीं जानता, आपका इससे क्या मतलब है । किसी व्यक्ति या गुट के कांग्रेस के सामने कोई प्रस्ताव रखने पर आपका ऐतराज हो तो बात दूसरी है । इसके अलावा मैं नहीं जानता कि वहां क्या अड़ंगेबाजी की गई ।

आपने अपने पत्र में ऐसी भाषा इस्तेमाल की है, जो बहुत ही तेज और

कड़वी है। मुझे उसे पढ़कर बड़ा अफसोस हुआ और मुझे उसका औचित्य मालूम नहीं हुआ। मुझे सबसे ज्यादा तकलीफ इस बात से हुई कि तमाम राजनैतिक प्रश्नों पर व्यक्तिगत मामले छा गये हैं। यदि कांग्रेसजनों में संघर्ष होना ही है तो मैं दिल से आशा रखता हूं कि उसे ऊंची सतह पर रखा जायगा और नीति और सिद्धान्त के मामलों तक ही वह सीमित रहेगा।

मैं इस पत्र की नकल सुभाष को भेज रहा हूं। गांधीजी ने भी इसे देख लिया है।

आपका,
जवाहरलाल नेहरू

श्री शरत्चन्द्र बोस,
कलकत्ता

२५४. सुभाषचंद्र बोस की ओर से महात्मा गांधी के नाम

जीलगोरा पो. आ.
जिला मानभूम, बिहार
२५ मार्च १९३९

प्रिय महात्माजी,

आशा है, आपने आज शनिवार २५ तारीख का मेरा वह बयान देख लिया होगा जो मैंने उन लोगों को जवाब देने के लिए निकाला है, जो मुझपर कांग्रेसी मामलों में गतिरोध पैदा करने का दोष लगा रहे हैं। हमारे सामने तात्कालिक और जरूरी समस्या नई कार्यसमिति का गठन करने की है। इस समस्या को संतोषजनक रूप से हल करने के लिए व्यापक महत्व रखनेवाली कुछ दूसरी समस्याओं पर हमको पहले विचार करना चाहिए। फिर भी मैं प्रथम समस्या को पहले हाथ में लूंगा।

इस समस्या के बारे में अगर आप कृपाकर नीचे लिखे मुद्दों पर अपनी राय मुझे बता सकेंगे तो मैं आभारी होऊंगा :

१. कार्यसमिति के गठन की आपकी मौजूदा कल्पना क्या है? क्या वह समानशील होनी चाहिए या कांग्रेस के भीतर मौजूद विभिन्न पार्टियों या गुटों के आदमी उसमें लिये जाने चाहिए, ताकि समिति कुल मिलाकर, जहांतक संभव हो, कांग्रेस के सामान्य स्वरूप की दिग्दर्शक

हो सके ।

२. अगर आपकी अब भी यही राय हो कि समिति को समानशील होना चाहिए तो जाहिर है कि एक ओर मेरा जैसा आदमी तथा दूसरी ओर सरदार पटेल एवं आप लोग एक ही समिति में नहीं रह सकते। (मैं यहां यह कह दूं कि मैंने इस विचार का विरोध किया है कि समिति को समानशील होना चाहिए ।).

३. अगर आप इससे सहमत हों कि कार्यसमिति में विभिन्न पार्टियों अथवा गुटों का प्रतिनिधित्व हो तो हरेक की संख्या कितनी हो ?

मेरी राय में कांग्रेस में दो मुख्य पार्टियां या 'ब्लॉक' हैं। उनका संख्या-बल कम-ज्यादा बराबर-बराबर है । अध्यक्षीय चुनाव में हमारा बहुमत रहा । त्रिपुरी में बहुमत दूसरे पक्ष का था, किन्तु ऐसा कांग्रेस-समाजवादी पार्टी के रुख के कारण हुआ । अगर कांग्रेस-समाजवादी पार्टी तटस्थ न रहती तो अनेक बाधाओं के होते हुए भी, (इनका मैं बाद की चिट्ठी में या मिलने पर जिक्र करूंगा) खुले अधिवेशन में हमको बहुमत मिलता ।

४. मुझे यह व्यवस्था न्यायसंगत प्रतीत होती है कि सात सदस्यों के नाम मैं सूचित करूं और सात नाम सुझाने के लिए आप सरदार पटेल से कहें ।

५. इसके अलावा अगर मुझे अध्यक्ष बना रहना हो और ठीक तरह से काम करना हो तो सेक्रेटरी मेरी पसंद का होना चाहिए ।

६. कोषाध्यक्ष का नाम सरदार पटेल सुझा सकते हैं ।

अब मैं पन्त-प्रस्ताव के एक-दो मुख्य फलितार्थों का जिक्र करूंगा । (मैं इस बारे में विस्तार से अलग चिट्ठी लिखूंगा) । एक तो यह कि क्या आप इसे मेरे प्रति अविश्वास का प्रस्ताव समझते हैं और क्या आप यह चाहेंगे कि उसके फलस्वरूप मैं इस्तीफा दे दूं ? मैं आपसे यह प्रश्न इसलिए पूछता हूं कि इस प्रस्ताव की स्वयं उसके समर्थकों ने भी अनेक व्याख्याएं की हैं ।

दूसरे, पन्त-प्रस्ताव के पास हो जाने के बाद अध्यक्ष की सही स्थिति क्या है ? कांग्रेस-संविधान की धारा १५ कार्यसमिति को नियुक्त करने के बारे में अध्यक्ष को कुछ अधिकार देती है और संविधान की उस धारा में

अभी तक कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। साथ ही पन्त-प्रस्ताव यह कहता है कि कार्यसमिति मुझे आपकी इच्छा के अनुसार बनानी चाहिए। इसका असली नतीजा क्या हुआ ? क्या मेरा कोई स्थान रहता है ? क्या आप कार्यसमिति के सदस्यों की सूची अपनी इच्छा के अनुसार बनायेंगे और मुझे आपके फैसले की घोषणा कर देनी होगी ? इसका नतीजा यह होगा कि कांग्रेस-संविधान की धारा १५ उसमें तब्दीली हुए विना ही रद्द हो जायगी।

इस बारे में मुझे यह कहना चाहिए कि पन्त-प्रस्ताव में उपर्युक्त धारा स्पष्टतः अवैधानिक और अनियमित है। असल में तो पन्त-प्रस्ताव सारा ही देर में आने के कारण अनियमित था। यह मेरे अधिकार में था कि मैं पूरे पन्त-प्रस्ताव को अनियमित करार दे देता, जिस प्रकार कि मौलाना आजाद कांग्रेस के खुले अधिवेशन में राष्ट्रीय मांगवाले प्रस्ताव में शरत्चन्द्र बोस के संशोधन को अनियमित ठहराने के अधिकारी थे। फिर, वैधानिक दृष्टि से, पन्त-प्रस्ताव को विचार के लिए स्वीकार कर लेने के वाद भी मुझे कार्यसमिति के गठन-सम्वन्धी उसकी आखिरी धारा को अनियमित ठहरा देना चाहिए था, क्योंकि वह कांग्रेस-संविधान की धारा १५ के खिलाफ पड़ती है। किन्तु मैं स्वभाव से इतना अधिक लोकतंत्री हूं कि कानूनी और वैधानिक मुद्दों को ज्यादा महत्व नहीं देता। इसके अलावा, मैंने महसूस किया कि जब वोट मेरे खिलाफ जाने की सम्भावना है तो संविधान की ओट लेना मर्दानगी की वात न होगी।

यह पत्र पूरा करने के पहले एक बात का और जिक्र करूंगा। अगर तमाम बाधाओं, रुकावटों और कठिनाइयों के बावजूद मुझे अध्यक्ष बना रहना है तो आप मुझसे किस तरह काम करने की आशा रखेंगे ? मुझे याद है कि आपने मुझे पिछले बारह महीनों में जब-तव (शायद अक्सर) इस तरह की सलाह दी कि मुझे कठपुतली अध्यक्ष नहीं रहना चाहिए और मुझे अधिकारपूर्वक काम करना चाहिए। वर्धा में १५ फरवरी १९३९ को जब मैंने देखा कि आप मेरे कार्यक्रम से सहमत नहीं हैं तो मैंने कहा था कि मेरे सामने दो विकल्प हैं या तो आत्मसमर्पण कर दूं या अपने प्रामाणिक विश्वासों पर डट जाऊं। अगर मेरी याददाश्त

ठीक हो तो आपने मुझसे यह कहा था कि जबतक मैं आपके दृष्टिकोण को स्वेच्छापूर्वक स्वीकार नहीं करता, आत्म-समर्पण का मतलब आत्म-दमन होगा और आप आत्मदमन को पसंद नहीं कर सकते। अगर मुझे अध्यक्ष बना रहना है तो क्या अब भी मुझे कठपुतली अध्यक्ष की तरह काम न करने की सलाह देंगे, जैसीकि आपने गत वर्ष दी थी ?

मैंने ऊपर जो कुछ लिखा है, उसका मतलब यह है कि अध्यक्ष के चुनाव और खासकर त्रिपुरी-कांग्रेस में जो कुछ हुआ, उसके बाद भी कांग्रेस की सब पार्टियों (या गुटों) के लिए साथ काम करना संभव हो सकता है।

अपने अगले पत्र में कुछ समस्याओं की चर्चा करूंगा, जिनमें से कुछ का मैंने अपने आज के अखबारी बयान में जिक्र किया है।

मेरी तबीयत में धीरे-धीरे पर बराबर सुधार हो रहा है। काफी नींद न आने के कारण ही मुख्यतः जल्दी सुधार नहीं हो रहा है।

आशा है, भारी काम-काज में फंसे रहने के बावजूद आपका स्वास्थ्य बराबर सुधर रहा होगा।

प्रणाम !

आपका,
सुभाष

२५५. सुभाषचन्द्र बोस की ओर से

जीलगोरा पो. आ.
जिला मानभूम, बिहार
२८ मार्च १९३९

प्रिय जवाहर,

मुझे लगता है कि तुम कुछ समय से मुझे बहुत ज्यादा नापसंद करने लगे हो। यह मैं इसलिए कहता हूं कि कोई भी बात, जो मेरे विरुद्ध पड़ती हो, उसे तुम बड़े उत्साह से ग्रहण कर लेते हो और मेरे पक्ष में जानेवाली बातों की उपेक्षा करते हो। मेरे राजनैतिक विरोधी मेरे खिलाफ जो कुछ कहते हैं, उसे तुम मान लेते हो, किन्तु तुम उनके खिलाफ कही जा सकनेवाली बातों के प्रति करीब-करीब अपनी आंखें बन्द कर लेते हो। मैं इस कथन को आगे स्पष्ट करने की कोशिश करूंगा।

मेरे लिए यह एक पहेली ही है कि तुम मुझे इतना अधिक नापसंद क्यों करने लगे हो। जहांतक मेरा संबंध है, जबसे मैं सन् १९३७ में नजर-बंदी से बाहर आया हूं, मैं व्यक्तिगत और सार्वजनिक जीवन में तुम्हारा बहुत अधिक लिहाज और खयाल रखता आ रहा हूं। राजनैतिक दृष्टि से मैंने तुम्हें अपना बड़ा भाई और नेता माना है और अक्सर तुम्हारी सलाह लेता रहा हूं। पिछले साल जब तुम यूरोप से वापस आये तो मैं तुम्हारे पास इलाहाबाद आया और पूछा कि अब तुम हमें क्या नेतृत्व दोगे। आम तौर पर, जब मैं तुम्हारे सामने इस रूप में आया तो तुम्हारे जवाब अस्पष्ट और अनिश्चित रहे। उदाहरण के लिए, गत वर्ष जब तुम यूरोप से लौटे तो तुमने मुझे यह कहकर टाल दिया कि तुम गांधीजी से परामर्श करोगे और उसके बाद मुझे बताओगे। जब हम वर्धा में मिले, तब तुम गांधीजी से मिल लिये थे, किन्तु तुमने मुझे कुछ भी निश्चित नहीं बताया। बाद में तुमने कार्यसमिति के सामने कुछ प्रस्ताव पेश किये, जिनमें नया कुछ नहीं था और न देश को कोई नेतृत्व दिया गया था।

अध्यक्ष-पद के पिछले चुनाव के बाद एक कटु विवाद छिड़ गया और उसके दौरान में बहुत-सी बातें कही गईं—कुछ मेरे हक में और कुछ मेरे खिलाफ। तुम्हारे उद्‌गारों और बयानों में हरेक मुद्दे का मेरे विरुद्ध अर्थ लगाया गया। दिल्ली के एक भाषण में तुमने यह कहा बताया कि तुम मेरे द्वारा या मेरे पक्ष में हुए चुनाव-प्रचार को पसंद नहीं करते। मैं नहीं जानता कि तुम्हारे मन में ठीक-ठीक क्या था, किन्तु तुमने इस तथ्य को बिल्कुल ही भुला दिया कि मेरी चुनाव-अपील डा. पट्टाभि की अपील पत्रों में छपने के बाद ही जारी हुई थी। जहांतक चुनाव-प्रचार का ताल्लुक है, तुमने जाने या अनजाने इस तथ्य को नजर-अंदाज किया कि दूसरे पक्ष का चुनाव-प्रचार कहीं ज्यादा बढ़ा-चढ़ा था और डा. पट्टाभि के लिए मत प्राप्त करने में कांग्रेसी मंत्रि-मंडलों की मशीनरी का पूरा-पूरा उपयोग किया गया। दूसरे पक्ष के पास नियमित संगठन था (गांधी सेवा संघ, कांग्रेसी मंत्रिमंडल, और शायद चरखा संघ और अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघ भी) जिसे तुरन्त गतिमान कर दिया गया। इसके अलावा, सभी बड़े-बड़े नेता और तुम भी मेरे खिलाफ थे—महात्मा गांधी का नाम और प्रतिष्ठा दूसरे

पक्ष के साथ थे—और अधिकतर प्रदेश कांग्रेस कमेटियां उसके हाथों में थीं। उन सबके खिलाफ मेरे पास क्या था ? मैं अकेला खड़ा था। मुझे व्यक्तिशः पता है—क्या तुम्हें मालूम नहीं—कि कई जगह चुनाव-प्रचार डा. पट्टाभि के लिए नहीं, गांधीजी और गांधीवाद के लिए हुआ, हालांकि अनेक आदमियों ने ऐसे मिथ्या प्रचार के वशीभूत होने से इन्कार कर दिया। फिर भी, एक सार्वजनिक सभा में खड़े होकर, तुमने ऐसे आधार पर मेरी निन्दा करने की कोशिश की, जो बिल्कुल गलत प्रतीत होता है।

अब त्यागपत्रों की बात ले लो। बारह सदस्यों ने त्यागपत्र दिये। उन्होंने एक स्पष्ट पत्र लिखा—शिष्ट पत्र था वह, जिसमें उन्होंने अपनी स्थिति को बिल्कुल स्पष्ट कर दिया। मेरी बीमारी का खयाल करके उन्होंने मेरे बारे में एक भी कटु शब्द का प्रयोग नहीं किया, हालांकि वे चाहते तो मेरी प्रतिकूल आलोचना कर सकते थे। किन्तु तुम्हारा बयान—उसके बारे में मैं क्या कहूं ? मैं कटु भाषा का प्रयोग नहीं करूंगा और केवल यही कहूंगा कि वह तुम्हारे लायक नहीं था। (मुझे बताया गया है कि तुम अपने बयान का मोटे रूप में त्यागपत्र के भीतर समावेश कराना चाहते थे, किन्तु यह स्वीकार नहीं किया गया।) तुम्हारे बयान से ऐसा असर पड़ता है कि अन्य बारह सदस्यों की तरह तुमने भी त्यागपत्र दे दिया है, किन्तु इस समय तक आम जनता के सामने तुम्हारी स्थिति एक पहेली बनी हुई है। जब कोई संकट पैदा होता है तो अक्सर तुम इस पक्ष या उस पक्ष में अपनी राय नहीं बना पाते और नतीजा यह होता है कि जनता को तुम दो घोड़ों पर सवारी करते हुए दिखाई देते हो।

मैं फिर तुम्हारे २२ फरवरी के वक्तव्य पर आता हूं। तुम्हारा खयाल है कि तुम जो कहते हो या करते हो, उसमें बहुत ही युक्तियुक्त और संगत रहते हो। किन्तु विभिन्न अवसरों पर तुम्हारे रुख से अक्सर लोग स्तब्ध और आश्चर्यचकित रह जाते हैं। कुछ उदाहरण ले लो। २२ फरवरी के अपने वक्तव्य में तुमने कहा कि तुम मेरे दुबारा चुने जाने के खिलाफ थे और इसके तुमने कुछ कारण दिये। उन कारणों की २६ जनवरी को अल्मोड़ा से जारी किये अपने वक्तव्य में दिये गए कारणों से तुलना करो। तुमने स्पष्टतः अपना आधार बदल लिया। फिर कुछ बम्बई के मित्रों ने मुझसे

कहा कि तुमने उनसे पहले कहा था कि तुम्हें मेरे अध्यक्ष-पद के लिए खड़े होने में कोई एतराज नहीं है, बशर्ते कि मैं वामपक्ष के उम्मीदवार के रूप में खड़ा होऊं।

अल्मोड़ा के बयान को तुमने यह कहकर खत्म किया था कि हमको व्यक्तियों को भुला देना चाहिए और केवल सिद्धान्तों और अपने ध्येय को ही याद रखना चाहिए। तुम्हें कभी यह खयाल नहीं आया कि व्यक्तियों को भुला देने की बात तुम तभी कहते हो, जब कुछ खास व्यक्तियों का सवाल सामने होता है। जब सुभाष बोस दुबारा चुने जाने के लिए खड़ा होता है तो तुम व्यक्तियों की उपेक्षा करते हो और सिद्धान्तों आदि की दुहाई देते हो। जब मौलाना आजाद पुनः निर्वाचन के लिए खड़े होते हैं तो तुम्हें लम्बा प्रशंसा-गीत लिखने में कोई संकोच नहीं होता। जब मामला सुभाष बोस और सरदार पटेल तथा दूसरों के बीच होता है तो सबसे पहले सुभाष बोस को अपने व्यक्तिगत प्रश्न का खुलासा करना चाहिए। जब शरत् बोस त्रिपुरी में कुछ बातों की शिकायत करते हैं (उन लोगों के रवैये और व्यवहार की शिकायत करते हैं, जो अपनेको महात्मा गांधी के कट्टर अनुयायी कहते हैं) तो तुम्हारे खयाल से वह व्यक्तिगत प्रश्नों के स्तर पर उतर आते हैं, जबकि उन्हें अपनेको सिद्धान्तों और कार्यक्रमों तक ही सीमित रखना चाहिए था। मैं स्वीकार करता हूं कि मेरा तुच्छ दिमाग तुम्हारी संगतता को समझने में असमर्थ है।

अब मैं व्यक्तिगत प्रश्न की चर्चा करूंगा, जो, जहांतक मेरा संबंध है, तुम्हारी निगाह में इतना अधिक महत्वपूर्ण बन जाता है। तुम्हारा आरोप है कि मैंने अपने बयानों में अपने सहयोगियों के प्रति अन्याय किया है। प्रकटतः तुम उनमें नहीं हो और अगर मैंने कोई आरोप लगाया था तो वह दूसरों के खिलाफ था, अतः तुम अपनी ओर से नहीं, बल्कि दूसरों की वकालत कर रहे हो। एक वकील आम तौर पर अपने मवक्किल से ज्यादा वाचाल होता है। इसलिए तुमको यह जानकर आश्चर्य होगा कि जब इस प्रश्न पर मैंने त्रिपुरी में सरदार पटेल से (और राजेनबाबू और मौलाना से) बातचीत की तो उन्होंने मुझे यह आश्चर्यजनक खबर सुनाई कि मेरे विरुद्ध उनकी मुख्य शिकायत कांग्रेस कार्यसमिति की गत जनवरी की

बारडोली की बैठक से पहले की अवधि से संबंध रखती हैं। जवाब में जब मैंने यह कहा कि जनता में आम खयाल यह है कि मेरे खिलाफ शिकायत मेरे 'चुनाव वक्तव्यों' से ताल्लुक रखती है तो उन्होंने कहा कि यह तो अतिरिक्त आरोप है। आखिर इसका यह मतलब हुआ कि तुम्हारे मवक्किल 'लांछन के मामले' को उतना महत्व नहीं देते जितना तुम उनके वकील की हैसियत से देते हो। त्रिपुरी में, चूंकि सरदार पटेल और अन्य लोग कांग्रेस महासमिति की बैठक में शामिल होने के लिए चले गये और वादा करके भी बैठक के बाद वापस नहीं लौटे, मैं इस बारे में और बातचीत नहीं कर सका, ताकि यह मालूम करता कि कार्यसमिति की बारडोली की बैठक के बाद की कौन-सी घटनाओं से उनका आशय है। किन्तु मेरे भाई शरत् ने इस बारे में सरदार पटेल से बात की थी तो उन्होंने शरत् को बताया कि उनको मुख्य शिकायत मेरे उस रवैये पर है, जो मैंने कांग्रेस महासमिति की दिल्ली की बैठक में, सितम्बर १९३८ में अपनाया, जबकि समाजवादी बैठक से उठकर चले गये थे। इस आरोप पर मुझे और मेरे भाई दोनों को बड़ा आश्चर्य हुआ, किन्तु प्रसंगवश उससे यह भी पता चल गया कि सरदार पटेल और दूसरों के मन में 'लांछनवाले मामले' का उतना महत्व नहीं है, जितना महत्व उसे तुमने दिया है। असल में, जब मैं त्रिपुरी में था, कई प्रतिनिधियों ने मुझे बताया (मैं तुम्हें बता दूं कि वे मेरे समर्थक नहीं थे) कि 'लांछनवाले मामले' को तो उस समय तक करीब-करीब भुला ही दिया गया था, जबतक कि तुमने अपने बयानों और उद्गारों द्वारा इस विवाद को पुनः सजीव नहीं कर दिया। और इस बारे में मैं तुम्हें बताऊं कि कांग्रेस अध्यक्ष के चुनाव के बाद से कार्य-समिति के बारह भूतपूर्व सदस्यों ने जितना एक साथ मिलकर नहीं किया, उससे अधिक तुमने मुझे जनता की निगाह में गिराने के लिए किया है। अवश्य ही, अगर मैं सचमुच इतना दुष्ट हूं तो यह तुम्हारा अधिकार ही नहीं, बल्कि कर्त्तव्य भी हो जाता है कि तुम जनता के सामने मेरा पर्दाफाश करो। किन्तु शायद तुमको यह प्रतीत होगा कि जो दुष्ट व्यक्ति तुम्हारे समेत बड़े-से-बड़े नेताओं, महात्मा गांधी और आठ प्रान्तीय सरकारों के विरोध के बावजूद अध्यक्ष चुना गया, उसमें कुछ तो अच्छाई होगी। उसने अपने अध्यक्ष-काल में देश की कुछ तो सेवा की

होगी कि उसकी पीठ पर कोई संगठन न होने पर भी और भारी बाधाओं के बावजूद वह इतने वोट प्राप्त कर सका।

तुमने अपने २२ फरवरी के वक्तव्य में आगे कहा है : "मैंने कांग्रेस अध्यक्ष को सुझाया कि यह सबसे पहला और सबसे जरूरी विचारणीय मुद्दा है, किन्तु अबतक उसे निपटाने की कोई कोशिश नहीं की गई।" किन्तु ये पंक्तियां लिखते समय तुमको यह खयाल क्यों नहीं आया कि गलतफहमी को दूर करने के लिए मेरा सरदार पटेल और दूसरों से मिलना जरूरी था और यह कार्यसमिति की २२ फरवरी की बैठक के समय ही हो सकता था ? अथवा क्या तुम यह खयाल करते हो कि मैंने कार्य-समिति की बैठक को टाला ? यह सही है कि 'लांछनवाले मामले' के बारे में मैंने १५ फरवरी को महात्मा गांधी से चर्चा नहीं की, हालांकि उन्होंने एक बार इसका जिक्र किया था, किन्तु उस समय मैं तुम्हारे ही इस निर्देश का पालन कर रहा था कि हमको व्यक्तिगत सवालों के बजाय सिद्धान्त और कार्यक्रमों को ज्यादा महत्व देना चाहिए । मैं तुम्हें बता दूं कि जब महात्मा गांधी ने मुझसे कहा कि सरदार पटेल और अन्य एक ही समिति में मेरे साथ सहयोग नहीं करेंगे तो मैंने उनसे यही कहा कि २२ फरवरी को जब हम मिलेंगे तो मैं उन लोगों से बात कर लूंगा और उनका सहयोग हासिल करने की कोशिश करूंगा। तुम शायद मुझसे सहमत होगे कि लांछनों का—अगर कोई थे तो—महात्मा गांधी से नहीं, बल्कि कार्यसमिति के सदस्यों से संबंध था और उनके बारे में उन्हींसे बात करना जरूरी था।

इस बयान में तुम मुझसे यह चाहते हो कि मैं लिखित रूप में यह ठीक-ठीक बताऊं कि वाम-पक्ष और दक्षिण-पक्ष जैसे शब्दों से मेरा क्या आशय है। मैंने तो यही सोचा कि कम-से-कम तुम ऐसा सवाल नहीं पूछोगे। क्या तुम उन रिपोर्टों को भूल गये जो तुमने खुद ने और आचार्य कृपालानी ने हरिपुरा में कांग्रेस-महासमिति को दी थीं ? क्या तुमने अपनी रिपोर्ट में यह नहीं कहा था कि दक्षिण-पक्ष वाम-पक्ष को दबाने की कोशिश कर रहा है ? अगर तुम जरूरत पड़ने पर वाम-पक्ष और दक्षिण-पक्ष जैसे शब्दों का प्रयोग कर सकते हो तो क्या दूसरे लोग वैसा नहीं कर सकते ?

तुमने मुझपर राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय मामलों पर अपनी नीति

स्पष्ट न करने का आरोप भी लगाया है। मेरा खयाल है कि मेरी अपनी नीति है, वह गलत या सही हो सकती है। त्रिपुरी में अपने संक्षिप्त अध्यक्षीय भाषण में मैंने उसका अत्यंत स्पष्ट शब्दों में जिक्र किया है। मेरी विनम्र राय में, भारत की और अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति को देखते हुए हमारे सामने एक ही समस्या—एक ही कर्तव्य है—कि ब्रिटिश सरकार के सामने स्वराज्य का प्रश्न पेश करें। इसके साथ-साथ, सारे देश में रियासती जनता के आन्दोलन के पथ-प्रदर्शन की भी एक व्यापक योजना बनानी चाहिए। मेरा खयाल है कि त्रिपुरी-कांग्रेस के पहले भी मैंने अपने विचारों की स्पष्ट झांकी तुम्हें उस समय दे दी थी, जब हम शांतिनिकेतन में और बाद में आनन्द भवन में मिले थे। मैंने अभी-अभी जो लिखा है, वह भी कम-से-कम निश्चित नीति ही है। अब मैं तुमसे पूछता हूं कि तुम्हारी क्या नीति है? हाल के एक पत्र में त्रिपुरी-कांग्रेस द्वारा स्वीकृत राष्ट्रीय मांग-संबंधी प्रस्ताव का तुमने जिक्र किया है, और तुम उसे काफी महत्व देते प्रतीत होते हो। मुझे खेद है कि एकदम ऐसा अस्पष्ट प्रस्ताव, जिसमें भली लगनेवाली सामान्य बातें कही गई हों, मैं पसंद नहीं कर सकता। वह हमें कहीं भी नहीं ले जा सकता। अगर हम स्वराज्य के लिए ब्रिटिश सरकार से लड़ना चाहते हैं और हम अनुभव करते हों कि उसके लिए उपयुक्त समय आ गया है तो हमको ऐसा साफ-साफ कहना चाहिए और आगे कदम बढ़ाना चाहिए। तुमने एक से अधिक बार मुझसे कहा है कि चुनौती देने का विचार तुम्हें जंचता नहीं। पिछले बीस वर्षों में महात्मा गांधी ब्रिटिश सरकार को बार-बार चुनौतियां देते रहे हैं। इन चुनौतियों और जरूरत होने पर साथ-साथ लड़ाई की तैयारी करने के फलस्वरूप ही वह ब्रिटिश सरकार से इतना कुछ प्राप्त कर सके हैं। अगर तुम सचमुच यह मानते हो कि राष्ट्रीय मांग को मनवा लेने का समय आ गया है तो चुनौती देने के अलावा तुम और कौन-सा रास्ता अपना सकते हो? पिछले दिनों महात्मा गांधी ने राजकोट के सवाल पर चुनौती दी थी। क्या तुम चुनौती के विचार का इसलिए विरोध करते हो कि मैंने उसे पेश किया है? अगर यही बात है तो उसे साफ-साफ और बिना किसी लाग-लपेट के क्यों नहीं कहते?

सार रूप में कहूं तो मैं यह नहीं समझ पाता कि देश की आन्तरिक राज-

नीति के बारे में तुम्हारी क्या नीति है। मुझे याद पड़ता है, मैंने तुम्हारे किसी एक बयान में यह पढ़ा था कि तुम्हारे खयाल से राजकोट और जयपुर, देश के सभी अन्य राजनैतिक प्रश्नों को ढक लेंगे। मैं तुम्हारे जैसे बड़े नेता के मुंह से ऐसा उद्गार सुनकर स्तब्ध रह गया। मैं नहीं समझ सकता कि कोई भी सवाल स्वराज्य के मुख्य सवाल को कैसे ढक सकता है ? राजकोट इस विशाल देश के भीतर एक छोटा-सा बिन्दु है। जयपुर का क्षेत्र राजकोट से कुछ बड़ा है, किन्तु जयपुर का सवाल भी हमारी ब्रिटिश सरकार के साथ चलनेवाली मुख्य लड़ाई की तुलना में चिऊंटी की चटक-मात्र है। फिर, हम यह नहीं भूल सकते कि देश में छःसौ से अधिक रियासतें हैं। अगर हम मौजूदा टुकड़ों में विभक्त, थेगली लगानेवाली और समझौता-पसंद नीति का अनुसरण करते रहेंगे और अन्य राज्यों में लोक-संघर्ष स्थगित कर देंगे तो रियासतों में नागरिक स्वतंत्रता और उत्तरदायी शासन स्थापित करने में हमें ढाईसौ साल लग जायंगे और उसके बाद हम स्वराज्य की बात सोचेंगे।

अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में तुम्हारी नीति और भी अधिक पंगु है। कुछ समय पहले जब तुमने कांग्रेस कार्यसमिति के सामने इस आशय का प्रस्ताव किया कि यहूदियों को भारत में बसने दिया जाय तो मैं आश्चर्यचकित रह गया। जब कार्यसमिति ने (शायद महात्मा गांधी की सहमति से) इस प्रस्ताव को ठुकरा दिया तो तुमको बड़ी चोट लगी। विदेश-नीति यथार्थवादी विषय है और उसका निर्धारण मुख्यतः राष्ट्र के हित की दृष्टि से ही होना चाहिए। उदाहरण के लिए रूस को ले लो। अपनी आन्तरिक राजनीति में वह साम्यवाद का पोषण करता है, किन्तु अपनी विदेश-नीति पर वह कभी भी अपनी भावनाओं को हावी नहीं होने देता। यही कारण है कि जब उसे अपना फायदा नजर आया तो उसने फ्रांसीसी साम्राज्यवाद के साथ समझौता कर लेने में कोई संकोच नहीं किया। फ्रांस-रूस-समझौता और चेकोस्लोवाक-रूस-समझौता इसकी पुष्टि करते हैं। आज भी, रूस ब्रिटिश साम्राज्य के साथ समझौता करने के लिए उत्सुक है। अब बताओ, तुम्हारी विदेश नीति क्या है ? भावनाओं के बुदबुदों और नेक शिष्टाचारों से विदेश-नीति का निर्माण नहीं होता। हर समय पराजित ध्येयों की वकालत करते

रहने तथा एक ओर जर्मनी और इटली जैसे देशों की निन्दा करने और दूसरी ओर ब्रिटिश और फ्रांसीसी साम्राज्यवाद को सदाचरण का प्रमाणपत्र देने से कोई काम बननेवाला नहीं है।

पिछले कुछ समय से तुम्हें और महात्मा गांधी समेत हर संबंधित व्यक्ति को मैं यह समझाने की कोशिश कर रहा हूं कि हमको अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति का भारत के हक में फायदा उठाना चाहिए और इस उद्देश्य से अपनी राष्ट्रीय मांग एक चुनौती के रूप में ब्रिटिश सरकार के सामने रखना चाहिए, किन्तु मैं तुम्हें या महात्मा गांधी को तनिक भी प्रभावित नहीं कर सका, हालांकि देश की जनता का एक बड़ा भाग मेरे रुख को पसंद करता है और ग्रेट ब्रिटेन के भारतीय विद्यार्थियों ने अनेक हस्ताक्षरोंवाला एक दस्तावेज मुझे भेजा है, जिसमें मेरी नीति का समर्थन किया गया है। आज जब त्रिपुरी-प्रस्ताव के बंधनों के बावजूद, कार्यसमिति की तुरन्त नियुक्ति न करने के लिए तुम मुझे दोष देते हो तो अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति अचानक तुम्हारी निगाह में असाधारण महत्व धारण कर लेती है। मैं पूछता हूं, यूरोप में आज ऐसा क्या हुआ है जो अप्रत्याशित था? क्या अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति का प्रत्येक विद्यार्थी यह नहीं जानता था कि वसन्त में यूरोप में संकट पैदा होगा? जब मैं ब्रिटिश सरकार को चुनौती देने की बात कहता था तो क्या मैंने बार-बार इसका जिक्र नहीं किया?

अब मैं तुम्हारे बयान के दूसरे हिस्से पर विचार करूंगा। तुम कहते हो : "यह कार्य-समिति फिलहाल तो अस्तित्व में नहीं है और अध्यक्ष, जैसा कि शायद वह चाहते हैं, अपने प्रस्ताव तैयार करने और उन्हें कांग्रेस के सामने पेश करने के लिए स्वतंत्र हैं। उनकी इच्छा के अनुसार साधारण कामकाज को निपटाने के लिए भी कोई बैठक नहीं बुलाई गई।" मुझे आश्चर्य है, तुम ऐसे अर्द्ध-सत्य या मैं कहूं असत्य का आश्रय कैसे ले सकते हो? कार्यसमिति के बारह सदस्य अकस्मात् और अप्रत्याशित रूप में अपने इस्तीफे मेरे आगे धर देते हैं और फिर भी तुम उनको नहीं, मुझे ही दोष देते हो कि शायद मैं प्रस्ताव तैयार करने के लिए स्वतंत्र होना चाहता था। फिर, सामान्य कामकाज निपटाने से मैंने तुम्हें कब रोका? कांग्रेस के लिए प्रस्ताव तैयार करने के मुख्य काम के बारे में भी, हालांकि मैंने त्रिपुरी-

कांग्रेस तक कार्यसमिति की बैठक स्थगित करने का सुझाव दिया था, किन्तु क्या मैंने सरदार पटेल से अपने तार में यह नहीं कहा कि समिति के दूसरे सदस्यों से परामर्श करें और उनकी राय मुझे तार द्वारा सूचित करें ? अगर तुम्हें इस बारे में ज़रा भी शक है तो कृपया सरदार के नाम मेरे तार पर एक नजर डाल लो। मेरा तार इस प्रकार था :

"सरदार पटेल, वर्धा।

कृपया महात्माजी के नाम मेरा तार देखें। खेद के साथ अनुभव करता हूं कि कार्यसमिति कांग्रेस तक स्थगित कर दी जाय। कृपया साथियों से परामर्श करें और राय तार से सूचित करें।

—सुभाष"

त्रिपुरी-कांग्रेस के समाप्त होने के सात दिन बाद तुमने मुझे इस आशय का तार भेजा कि कांग्रेस में गतिरोध के लिए मैं ही जिम्मेदार हूं। तुम्हारी समस्त न्याय-भावना के बावजूद तुमने यह अनुभव नहीं किया कि त्रिपुरी-कांग्रेस ने जब पंडित पन्त का प्रस्ताव पास किया तो वह अच्छी तरह जानती थी कि मैं सख्त बीमार हूं, महात्मा गांधी त्रिपुरी नहीं आये हैं और हम दोनों का निकट भविष्य में मिलना मुश्किल होगा। तुमने यह भी नहीं सोचा कि मेरे हाथों से अवैधानिक और अनियमित रूप से कार्य-समिति नियुक्त करने का अधिकार छीनकर कांग्रेस ने स्वयं गतिरोध की जिम्मेदारी अपने सिर पर ली है। अगर पंडित पंत के प्रस्ताव ने निष्ठुरतापूर्वक कांग्रेस-संविधान की अवहेलना न की होती तो मैंने १३ मार्च १९३९ को कार्यसमिति को नियुक्त कर दिया होता। तुमने कांग्रेस के सात दिन बाद ही मेरे विरुद्ध सार्वजनिक आन्दोलन शुरू कर दिया, हालांकि तुम्हें मेरे स्वास्थ्य की दशा का अच्छी तरह पता था और मेरे नाम दिया हुआ तुम्हारा तार मुझे मिलने के पहले ही अखबारों में छप गया। जब त्रिपुरी के पहले पूरे पखवारे कार्य-समिति के बारह सदस्यों के त्यागपत्र देने के कारण कांग्रेस के मामलों में गतिरोध रहा तो क्या तुमने विरोध में एक शब्द भी कहा ? क्या तुमने मेरे प्रति एक शब्द भी सहानुभूति का कहा ? तुमने हाल के एक पत्र में लिखा है कि तुम अपनी ही ओर से बोलते हो या काम करते हो और तुमको और किसीका प्रतिनिधि नहीं मानना चाहिए। यह हमारी बदकिस्मती है

कि तुम्हें यह कभी नहीं सूझता कि तुम दूसरों को दक्षिण-पंथियों के हिमायती के रूप में नजर आते हो। उदाहरण के लिए अपने २६ मार्च के पत्र को ही ले लो। तुम उसमें कहते हो : "मैंने तुम्हारा बयान आज पत्रों में पढ़ा। मुझे डर है इस तरह के दलीलवाजी से युक्त बयान स्थिति को सुधारने में सहायक नहीं होंगे।"

इस समय, जबकि कई हल्कों से मेरे ऊपर अन्यायपूर्ण हमले हो रहे हैं— जैसा कि कहा जाता है, कमर से नीचे प्रहार किये जा रहे हैं—तुम विरोध में एक शब्द नहीं कहते, तुम मेरे लिए एक शब्द सहानुभूति का नहीं वोलते। किन्तु जब मैं आत्म-रक्षा में कुछ कहता हूं तो तुम्हारी प्रतिक्रिया होती है— "ऐसे दलीलवाजीवाले बयान अधिक सहायक नहीं होंगे।" क्या तुमने मेरे राजनैतिक विरोधियों के वयानों के लिए भी ऐसे ही विशेषणों का प्रयोग किया है ? शायद उनकी तुम सराहना करते होगे।

फिर, तुम अपने २२ फरवरी के वक्तव्य में कहते हो : "स्थानीय कांग्रेसी झगड़ों को सामान्य तरीके से निपटाने के बजाय सीधे शीर्ष-स्थान से निपटाने की प्रवृत्ति दिखाई देती है और इसका यह नतीजा होता है कि खास गुटों और पार्टियों के साथ रियायत होती है, गोलमाल पैदा होता है और काम की हानि होती है। . . . मुझे यह देखकर दुःख होता है कि हमारे संग-ठन के हृदय-स्थल में नये तरीके दाखिल किये जा रहे हैं, जिनसे स्थानीय झगड़े ऊंचे स्तरों पर भी फैल जायंगे।"

इस प्रकार का दोषारोपण पढ़कर मुझे दुःख-मिश्रित आश्चर्य हुआ, जबकि तुमने सब तथ्यों का पता लगाने की परवा नहीं की है। कम-से-कम तुम यह तो कर सकते थे कि मुझसे तथ्यों के बारे में, जिस रूप में कि वे मुझे मालूम हैं, पूछ लेते। मैं नहीं जानता कि यह लिखते समय तुम्हारे दिमाग में कौन-सी वातें थीं। एक मित्र का कहना है कि तुम दिल्ली प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी के मामलों के बारे में सोच रहे हो। अगर यही बात है तो मैं तुम्हें बिल्कुल साफ-साफ बता दूं कि दिल्ली के बारे में मैंने जो कुछ किया, मेरे लिए वही करना ठीक था।

इस संबंध में मुझे कहने की इजाजत दो कि ऊपर से हस्तक्षेप करने के मामले में कोई कांग्रेस-अध्यक्ष तुमसे बाजी नहीं मार सकता। शायद तुम

उन बातों को भूल गये जो तुमने कांग्रेस-अध्यक्ष की हैसियत से की हैं या शायद अपनी ओर विवेचक दृष्टि से देखना मुश्किल होता है। २२ फरवरी को तुम मुझपर ऊपर से हस्तक्षेप करने का आरोप लगाते हो। क्या तुम यह भूल गये कि ४ फरवरी को तुमने मुझे एक पत्र लिखा था, जिसमें तुमने मुझ-पर निराग्रही और निष्क्रिय अध्यक्ष होने का आरोप लगाया है? तुमने लिखा है : "वस्तुतः तुमने निर्देश देनेवाले अध्यक्ष की अपेक्षा प्रवक्ता (स्पीकर) की हैसियत अधिक रखी है।" तुम्हारा यह आरोप सबसे अधिक आपत्ति-जनक है कि मैं पक्षपातपूर्ण ढंग से काम कर रहा हूं और किसी खास पार्टी या गुट के प्रति रियायत कर रहा हूं। क्या व्यक्तिशः मेरे प्रति नहीं तो कांग्रेस के अध्यक्ष के प्रति तुम्हारा यह कर्तव्य नहीं था कि उसके विरुद्ध समाचारपत्रों में ऐसा गंभीर आरोप लगाने के पहले उचित जांच कर लेते?

यदि चुनाव-विवाद पर समग्र दृष्टि से कोई विचार करे तो वह यही सोचेगा कि चुनाव का दंगल समाप्त हो जाने के बाद यह सारा प्रकरण भुला दिया जायगा, लड़ाई के अस्त्रों को दफना दिया जायगा और जैसाकि मुक्केबाजी के दंगल के बाद होता है, मुक्केबाज हंसते हुए हाथ मिला लेंगे। किन्तु सत्य और अहिंसा के बावजूद ऐसा नहीं हुआ। चुनाव-परिणाम को खिलाड़ी की भावना से स्वीकार नहीं किया गया, मेरे विरुद्ध मन में गांठ बांध ली गई और प्रतिशोध की भावना गतिशील कर दी गई। तुमने कार्य-समिति के अन्य सदस्यों की ओर से शस्त्र ग्रहण किये। तुम्हें ऐसा करने का पूरा अधिकार था। किन्तु क्या तुमने कभी यह नहीं सोचा कि कुछ मेरे पक्ष में भी कहा जा सकता है? क्या कार्यसमिति के दूसरे सदस्यों के लिए इसमें कुछ अनुचित नहीं था कि मेरी अनुपस्थिति में और मेरी पीठ-पीछे एकत्र होते और डा. पट्टाभि को कांग्रेस की अध्यक्षता के लिए खड़ा करने का फैसला करते? क्या सरदार पटेल और दूसरों के लिए यह अनुचित न था कि कार्य-समिति के सदस्य के नाते कांग्रेस-प्रतिनिधियों से डा. पट्टाभि का समर्थन करने की अपील करते? क्या चुनाव-कार्य के लिए सरदार पटेल का महात्मा गांधी का नाम और उनकी सत्ता का उपयोग करने में कुछ भी अनुचित नहीं था? क्या सरदार पटेल का यह कहना अनुचित नहीं था कि

मेरा दुबारा चुना जाना देश के हित के लिए हानिकर होगा ? क्या विभिन्न प्रान्तों में कांग्रेस-मंत्रिमंडलों का वोट हासिल करने के लिए उपयोग करने में कोई गलती नहीं थी ?

जहांतक कथित 'लांछनों' का ताल्लुक है, मुझे जो कुछ कहना था, वह मैं अपने अखबारी बयानों में और त्रिपुरी में विषय-समिति के सामने अपने भाषण में पहले ही कह चुका हूं। किन्तु मैं तुमसे एक सवाल पूछना चाहूंगा। क्या तुम यह भूल गये कि जब लार्ड लोथियन भारत का दौरा कर रहे थे तो उन्होंने सार्वजनिक रूप में कहा था कि सब कांग्रेसी नेता संघ-योजना के बारे में पं. नेहरू से सहमत नहीं हैं ? इस उद्गार के क्या तात्पर्य और अर्थ हैं ?

तुमने अपने २२ फरवरी के बयान में संगठन के शिखर पर पारस्परिक संदेह के वातावरण और विश्वास की कमी की शिकायत की है। क्या मैं तुमसे कहूं कि अध्यक्षीय चुनाव होने तक तुम्हारे कार्यकाल की अपेक्षा मेरे कार्यकाल में कार्यसमिति के सदस्यों में संदेह और विश्वास का अभाव कहीं कम था ? उसके फलस्वरूप हमारे त्यागपत्र देने की कभी नौबत नहीं आई, जैसाकि, तुम्हारे ही कथनानुसार, तुम्हें एक से अधिक बार करना पड़ा। जहांतक मुझे मालूम है, झगड़ा चुनाव-संघर्ष में मेरी सफलता के बाद से शुरू हुआ। अगर मैं हार गया होता तो ज्यादा संभव यही था कि जनता को 'लांछन' प्रकरण के बारे में सुनने को मिलता ही नहीं।

तुम यह अक्सर कहते रहते हो कि तुम अपना ही प्रतिनिधित्व करते हो, और किसीका नहीं, और तुम्हारा किसी भी पार्टी से संबंध नहीं है। अक्सर यह बात तुम इस ढंग से कहते हो मानो इस बात पर तुम बड़ा गर्व या सुख अनुभव करते हो। साथ ही, कभी-कभी तुम अपनेको समाजवादी— 'पक्का समाजवादी' भी कहते हो। मेरी समझ में नहीं आता कि कोई समाजवादी, जैसाकि तुम अपनेको मानते हो, व्यक्तिवादी कैसे हो सकता है ? एक दूसरे से बिल्कुल भिन्न होता है। मेरे लिए यह भी एक पहेली है कि तुम जिस व्यक्तिवाद के समर्थक हो, उसके जरिये समाजवाद कभी भी कैसे स्थापित हो सकता है। अपने पर किसी भी पार्टी का बिल्ला न लगाकर आदमी सब पार्टियों का प्रिय हो सकता है, किन्तु उसका मूल्य क्या ? अगर

एक आदमी किन्हीं विचारों और सिद्धान्तों में विश्वास रखता है तो उसे उन्हें साकार करने की कोशिश करनी चाहिए और यह किसी पार्टी या संगठन के जरिये ही किया जा सकता है। मैंने आजतक नहीं सुना कि किसी देश ने बिना पार्टी के समाजवाद की स्थापना की है या उस दिशा में कदम आगे बढ़ाया है। महात्मा गांधी की भी अपनी पार्टी है।

एक और विचार है, जिसका तुम अक्सर राग अलापते हो—उसके बारे में भी मैं कुछ कहना चाहूंगा। मेरा आशय राष्ट्रीय एकता के विचार से है। मैं भी उस विचार का पूरा समर्थक हूं, जैसा कि, मैं मानता हूं, सारा देश है। किन्तु इसकी एक प्रकट सीमा है। जिस एकता की हम कोशिश करते हैं या कायम रखना चाहते हैं, वह काम करने की एकता होनी चाहिए, हाथ-पर-हाथ धरकर बैठे रहने की नहीं। एक पार्टी अगर दो टुकड़ों में बंटती है तो यह हमेशा ही बुरा नहीं होता। ऐसे मौके आते हैं जब आगे बढ़ने के लिए अलहदगी जरूरी होती है। जब रूस की सोशल डेमोक्रेट पार्टी सन् १९०३ में टूटी और बोलशेविक और मेनशेविक अस्तित्व में आये तो लेनिन ने राहत की सांस ली थी। मेनशेविकों का भारी बोझ सिर से उतर गया और लेनिन ने महसूस किया कि आखिर तेज तरक्की का रास्ता खुल गया है। भारत में जब 'मोडरेट' (नरम दली) कांग्रेस से अलग हो गये तो किसी भी प्रगतिशील विचार-धारा के व्यक्ति ने इस अलहदगी पर अफसोस प्रकट नहीं किया। उसके बाद, जब बहुत-से कांग्रेसी सन् १९२० में कांग्रेस से हट गये तो शेष कांग्रेसियों ने उनकी जुदाई पर आंसू नहीं बहाये। इस तरह की अलहदगियों से वास्तव में आगे बढ़ने में मदद मिली। कुछ समय से हम एकता के अंध भक्त बन रहे हैं। इसमें खतरा छिपा हुआ है। उसका कमजोरी को छिपाने के लिए या ऐसे समझौते करने के लिए उपयोग किया जा सकता है जो बुनियादी तौर पर प्रगति-विरोधी होते हैं। तुम अपना ही उदाहरण ले लो। तुम गांधी-इर्विन-समझौते के खिलाफ थे, किन्तु तुमने एकता के नाम पर उसे स्वीकार कर लिया। फिर, तुम प्रान्तों में मंत्रि-पद स्वीकार करने के खिलाफ थे, किन्तु जब पद ग्रहण करने का निश्चय हुआ तो तुमने शायद उसी एकता के नाम पर इस फैसले को मान लिया। दलील की खातिर मान लो कि किसी तरह कांग्रेस का बहुमत संघ-योजना को

अमल में लाना स्वीकार कर लेता है तो उसके विरोधी, अपने दृढ़ सिद्धान्तों के बावजूद, उसी एकता के नाम पर अपने राजनैतिक विश्वासों के विरुद्ध संघ-योजना को स्वीकार करने के लिए प्रेरित हो सकते हैं। एक क्रान्तिकारी आन्दोलन में एकता साध्य नहीं हुआ करती, साधन ही होती है। उसकी तभी तक जरूरत है, जबतक कि वह प्रगति में सहायक होती है। ज्यों-ही वह प्रगति में बाधक बनने लगती है कि वह एक बुराई बन जाती है। मैं पूछता हूं, अगर कांग्रेस बहुमत से संघ-योजना को स्वीकार कर ले तो तुम क्या करोगे ? क्या तुम उस फैसले के आगे सिर झुकाओगे या उसके खिलाफ बगावत करोगे ?

तुम्हारा इलाहाबाद से लिखा ४ फरवरी का पत्र दिलचस्प है। उससे प्रकट होता है कि मेरे प्रति तुम्हारा रुख उस समय तक कड़ा नहीं हुआ था जैसाकि बाद में हुआ। उदाहरण के लिए तुम अपने पत्र में लिखते हो : "जैसा कि मैंने तुमसे कहा, तुम्हारे चुनाव-संघर्ष से कुछ लाभ हुआ है तो कुछ हानि।" बाद में तुम्हारी यह धारणा बन गई कि मेरा दुबारा निर्वाचित होना बिल्कुल बुरा हुआ। आगे तुमने लिखा है : "इस भविष्य पर हमको व्यक्तियों के अर्थ में नहीं, बल्कि व्यापक दृष्टि से विचार करना चाहिए। जाहिर है कि घटना-चक्र हमारी इच्छा के अनुकूल नहीं घूमा, केवल इसी-लिए हममें से किसीको रुष्ट नहीं हो जाना चाहिए। कुछ भी होता रहे, हमें तो अपने ध्येय की पूर्ति के लिए पूरी ताकत खर्च करनी होगी।" यह स्पष्ट है कि तुम 'लांछन'-प्रकरण को वह महत्व नहीं देते थे, जो बाद में देने लगे। यही नहीं, जैसा मैं पहले कह चुका हूं, 'लांछन'-प्रकरण पर बाद में जो आन्दो-लन हुआ, उसके मुख्यत: जनक तुम्हीं थे। इस बारे में शायद तुम्हें याद होगा कि जब हम शांतिनिकेतन में मिले थे तो मैंने सुझाया था कि अगर हमारी कोशिश के बावजूद हम कार्य-समिति के सदस्यों का सहयोग हासिल न कर सकें तो हमको कांग्रेस को चलाने की जिम्मेदारी से मुंह नहीं मोड़ना चाहिए। उस समय तुम मुझसे सहमत हुए थे। बाद में, पता नहीं, किन कारणों से तुम मानों बड़ी बहादुरी से दूसरे पक्ष में जा मिले। बेशक, तुम्हें ऐसा करने का प्रत्येक हक हासिल था, किन्तु फिर तुम्हारा समाजवाद या वामवाद कहां गया ?

अपन ४ फरवरी के पत्र में तुमने एक से अधिक बार यह आरोप लगाया है कि मेरी अध्यक्षता के जमाने में संघ जैसे महत्वपूर्ण सवालों पर चर्चा नहीं हुई। यह एक अजीब आरोप है जबकि तुम खुद करीब छः महीने देश से बाहर रहे। क्या तुम्हें पता है कि जब श्री भूलाभाई देसाई के कथित लन्दनवाले भाषण पर तूफान पैदा हुआ था तो मैंने कार्यसमिति को यह सुझाया था कि संघ के विरुद्ध हमें अपना प्रस्ताव दोहराना चाहिए और देश में संघ-विरोधी प्रचार चलाना चाहिए, पर मेरा प्रस्ताव गैर-जरूरी समझा गया। क्या तुम्हें मालूम है कि बाद में जब कार्यसमिति की बैठक सितम्बर में दिल्ली में हुई तो संघ की निन्दा करनेवाला प्रस्ताव जरूरी समझा गया और कांग्रेस महा-समिति ने ऐसा प्रस्ताव स्वीकार किया ?

इस पत्र में एक आरोप तुमने यह लगाया है कि मैंने कार्यसमिति में निष्क्रिय रुख रखा और मैंने वस्तुतः निर्देशक अध्यक्ष बनने के बजाय स्पीकर की तरह काम किया। इस प्रकार का कथन कुछ न्यायोचित नहीं है। क्या यह कहना गलत होगा कि आमतौर पर कार्यसमिति का ज्यादातर समय तुम खुद ही ले लेते थे ? अगर कार्यसमिति में तुम्हारे जितना वाचाल कोई दूसरा सदस्य होता तो हम अपना काम कभी निपटा ही नहीं पाते। इसके अलावा, दूसरे तौर-तरीके कुछ ऐसे थे कि तुम लगभग अध्यक्ष के काम अपने हाथों में ले लेते थे। अवश्य ही मैं तुम्हारी लगाम खींचकर समिति को सम्हाल सकता था, किन्तु उसके फलस्वरूप हमारे बीच खुली दरार पड़ जाती। बहुत साफ-साफ कहूं तो तुम कभी-कभी कार्यसमिति में लाड़-प्यार से बिगड़े बेटे की तरह बर्ताव करते थे और अक्सर तुम्हारा पारा चढ़ जाता था। अब बताओ, तुमने अपनी तमाम 'गरममिजाजी' और उछल-कूद से क्या नतीजे हासिल किये ? तुम आमतौर पर घंटों अड़े रहते और तब आखिर में घुटने टेक देते। सरदार पटेल और दूसरों के पास तुमसे निपटने के लिए एक कुशल तरीका है। वे तुम्हें खूब बोलने देंगे और अन्त में तुमसे कहेंगे, अच्छा प्रस्ताव लिख डालो। एक बार तुमको प्रस्ताव बनाने दिया कि तुम खुश हो जाओगे, फिर भले ही वह प्रस्ताव कैसा भी क्यों न हो। मैंने तुम्हें अपने मुद्दे पर आखिर तक डटे रहते शायद ही कभी देखा है।

मेरे खिलाफ दूसरा अजीब आरोप यह है कि पिछले वर्ष में कांग्रेस

महासमिति के दफ्तर की हालत बड़ी खराब हो गई है। मैं नहीं जानता कि तुम्हारे खयाल से अध्यक्ष के क्या काम हैं। मेरे खयाल से वह किसी शानदार क्लर्क या शानदार सेक्रेटरी से कहीं ज्यादा हैसियत रखता है। अध्यक्ष की हैसियत से तुम सेक्रेटरी के काम भी अपने हाथ में ले लिया करते थे, किन्तु यह कोई वजह नहीं कि दूसरे अध्यक्ष भी तुम्हारे जैसा ही बर्ताव करें। इसके अलावा, मेरी मुख्य कठिनाई यह थी कि कांग्रेस महासमिति का दफ्तर काफी दूर था और जनरल सेक्रेटरी मेरी पसन्द का नहीं था। यह कहने में कोई अतिशयोक्ति न होगी कि जैसा एक सेक्रेटरी को अपने प्रेसीडेण्ट के प्रति वफादार होना चाहिए, वैसा जनरल सेक्रेटरी वफादार न था। (मैं जान-बूझकर बहुत नरम शब्दों में यह बात कह रहा हूं।) असल में, कृपालानीजी को मेरी इच्छा के विरुद्ध मुझपर थोपा गया। शायद तुम्हें याद होगा कि मैंने कांग्रेस महासमिति के दफ्तर का एक भाग कलकत्ता लाने की भरसक कोशिश की, ताकि मैं उसके काम की ठीक तरह से देखभाल कर सकूं। किन्तु तुम सबने उसका विरोध किया और अब तुम उल्टे मुझे ही कांग्रेस महासमिति के दफ्तर की कमियों के लिए दोष देते हो ! अगर कांग्रेस महासमिति का दफ्तर, जैसा तुम कहते हो, सचमुच बिगड़ा है तो इसके लिए मैं नहीं, बल्कि जनरल सेक्रेटरी जिम्मेदार है। तुम मुझपर यही आरोप लगा सकते हो कि मेरे अध्यक्ष-काल में जनरल सेक्रेटरी के काम में कम हस्तक्षेप हुआ और उसे पहले की अपेक्षा वास्तव में ज्यादा अधिकार प्राप्त रहे। फलस्वरूप, अगर सचमुच कांग्रेस महासमिति के दफ्तर की हालत खराब हुई है तो उसकी जिम्मेदारी मुझपर नहीं, बल्कि जनरल सेक्रेटरी पर है।

मुझे आश्चर्य है कि बिना पूरे तथ्य जाने तुमने यह आरोप लगाया है कि मैंने बम्बई श्रमिक विवाद विधेयक को उसकी मौजूदा शक्ल में स्वीकृत होने से रोकने की भरसक कोशिश नहीं की। असल में, कुछ समय से, तथ्यों का पता लगाने की चिन्ता किये बिना तुमने मेरे खिलाफ आरोप लगाने की, कभी-कभी सार्वजनिक रूप से लगाने की, कला का विकास कर लिया है। अगर तुम जानना चाहते हो कि मैंने इस बारे में क्या किया तो सबसे अच्छी बात यह होगी कि सरदार पटेल से पूछ देखो। जो बात मैंने नहीं की, वह यही कि मैंने इस सवाल पर उनके साथ नाता नहीं तोड़ा।

अगर यह अपराध है तो मैं अभियोग को स्वीकार करता हूं। प्रसंगवश, क्या तुम्हें पता है कि बम्बई की कांग्रेस-समाजवादी पार्टी ने विधेयक का उसके मौजूदा रूप में समर्थन किया था ? और अव तुम्हारी अपनी बात ले लो। क्या मैं पूछ सकता हूं कि तुमने इस विधेयक की स्वीकृति को रोकने के लिए क्या किया ? जव तुम बम्बई लौटे तो तुम जरूर कुछ कर सकते थे। मेरे खयाल से कुछ श्रमिक कार्यकर्ता तुमसे मिले थे और उनको तुमने कुछ उम्मीद बंधाई थी। मेरी अपेक्षा तुम अच्छी स्थिति में थे, कारण, तुम मेरी अपेक्षा कहीं अधिक गांधीजी को प्रभावित कर सकते हो। अगर तुमने जोर लगाया होता तो जहां मैं विफल रहा, वहां तुम सफल हो सकते थे। क्या तुमने ऐसा किया ?

एक और मामला है, जिसके वारे में तुम अक्सर मेरे ऊपर तीर चलाया करते हो। वह है मिला-जुला मंत्रिमंडल बनाने का विचार। सिद्धांतवादी राजनीतिज्ञ की तरह तुमने हमेशा के लिए यह तय कर दिया कि मिला-जुला मंत्रिमंडल दक्षिण-पंथी कदम होगा। इस प्रश्न पर अपने आखिरी निर्णय की घोषणा करने के पहले क्या तुम एक बात करोगे ? क्या तुम एक पखवारे के लिए असम का दौरा करोगे और फिर आकर मुझे बता-ओगे कि क्या वर्तमान मिला-जुला मंत्रिमंडल प्रगतिशील रहा है अथवा प्रतिक्रियावादी ? इलाहाबाद में बैठकर बुद्धिमत्ताभरे ऐसे उद्गार प्रकट करने से क्या फायदा, जिनका वास्तविकता से कोई सम्बन्ध नहीं ? सादुल्ला-मंत्रिमंडल के पतन के वाद जब मैं असम गया तो मुझे एक भी ऐसा कांग्रेसी नहीं मिला, जो मिला-जुला मंत्रिमंडल बनाने पर जोर न देता हो। तथ्य यह है कि प्रांत प्रतिक्रियावादी मंत्रिमंडल के नीचे कराह रहा था। हालत बद से बदतर होती जा रही थी और भ्रष्टाचार रोजाना बढ़ता जा रहा था। जब नये मंत्रिमंडल ने पद ग्रहण किया तो असम की समस्त कांग्रेसी विचारधारा को माननेवाली जनता ने राहत की सांस ली और नये विश्वास और आशा का अनुभव किया। अगर तुम पदग्रहण की नीति को सारे ही देश के लिए छोड़ने को तैयार हो तो मैं भी असम और बंगाल जैसे प्रान्तों के कांग्रेसजनों के साथ-साथ उसका स्वागत करूंगा। किन्तु अगर कांग्रेस-पार्टी सात प्रान्तों में पदग्रहण करती है तो

यह जरूरी है कि दूसरे प्रान्तों में मिले-जुले मंत्रिमंडल स्थापित हों। अगर तुम्हें पता हो कि मिला-जुला मंत्रिमंडल बनने के बाद तमाम बाधाओं और कठिनाइयों के बावजूद, असम की हालत में कितना सुधार हुआ है तो तुम अपनी राय बिल्कुल बदल लोगे।

बंगाल के बारे में, मुझे भय है कि तुम करीब-करीब कुछ नहीं जानते। अपनी अध्यक्षता के दो वर्षों में तुमने इस प्रान्त का कभी दौरा नहीं किया, हालांकि इस प्रान्त को जिस भयंकर दमन में से गुजरना पड़ा, उसे देखते हुए उसकी ओर दूसरे प्रान्तों की अपेक्षा कहीं अधिक ध्यान देने की जरूरत थी। क्या तुमने कभी यह मालूम करने की परवा की कि हक-मंत्रिमंडल के पद ग्रहण करने के बाद इस प्रान्त में क्या हुआ? अगर तुमने की होती तो तुम एक सिद्धान्तवादी राजनीतिज्ञ की तरह बात न करते। तब तुम मुझसे सहमत होते कि अगर इस प्रान्त को बचाना हो तो हक-मंत्रिमंडल को खत्म होना चाहिए और मौजूदा परिस्थितियों में सर्व-श्रेष्ठ शासन की यानी मिले-जुले मंत्रिमंडल की स्थापना होनी चाहिए। किन्तु यह सब कहते समय मुझे यह भी कहना चाहिए कि मिले-जुले मंत्रिमंडलों का सवाल इसलिए उठता है कि पूर्ण-स्वराज्य का सक्रिय संघर्ष स्थगित कर दिया गया है। इस लड़ाई को कल शुरू कर दो और मिले-जुले मंत्रिमंडलों की सारी चर्चा हवा में उड़ जायगी।

अब मैं तुम्हारे दिल्ली के २० मार्च के तार का जिक्र करूंगा। उसमें तुमने कहा है: "अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति और नाजुक राष्ट्रीय समस्याओं की दृष्टि से कार्यसमिति का गठन और दफ्तर के इन्तजाम जरूरी हैं।" आदि। कार्यसमिति के शीघ्र गठन की जरूरत को हरकोई समझ सकता है, किन्तु तुम्हारे तार में मेरी कठिनाइयों के लिए तनिक भी सहानुभूति नहीं दिखाई दी। तुम अच्छी तरह से जानते हो कि अगर पन्त का प्रस्ताव पेश और स्वीकृत न हुआ होता तो कार्यसमिति की घोषणा १३ मार्च को हो गई होती। जब यह प्रस्ताव पास हुआ तो कांग्रेस अच्छी तरह जानती थी कि मैं सख्त बीमार हूं, महात्मा गांधी त्रिपुरी नहीं आये हैं और मेरा उनसे निकट भविष्य में मिलना मुश्किल होगा। मैं यह समझ सकता हूं कि कार्यसमिति के गठन में एक महीने की देरी हो जाती है तो स्वभावतः

लोगों को बेचैनी होगी। किन्तु त्रिपुरी-कांग्रेस के एक सप्ताह बाद ही आन्दोलन शुरू कर दिया गया और 'लांछन'-प्रकरण की तरह ही इस मामले में भी तुमने ही मेरे खिलाफ आन्दोलन शुरू किया। क्या महात्मा गांधी से मिले बिना कार्यसमिति का गठन करना आसान था ? मैं महात्मा-जी से कैसे मिल सकता था ?और क्या तुम भूल गये कि गत वर्ष हरिपुरा-कांग्रेस के छः सप्ताह बाद कार्यसमिति की बैठक हुई थी ? क्या तुम सोचते हो कि तुम्हारा तार अखबारों में छपने के बाद मेरे खिलाफ कुछ लोगों ने और अखबारों ने जो आन्दोलन शुरू किया, वह सर्वथा शुद्ध हेतु से प्रेरित था ? क्या मैं जान-बूझकर कार्यसमिति को नियुक्त न करके कांग्रेस के मामलों में गतिरोध पैदा कर रहा था ? अगर आन्दोलन सर्वथा उचित न था तो क्या एक सार्वजनिक नेता की हैसियत से तुम्हारा यह कर्त्तव्य न था कि तुम मेरे पक्ष में कुछ शब्द बोलते—उस समय जबकि मैं बिस्तर में पड़ा था ?

मैं तुम्हारे इस आरोप की चर्चा कर चुका हूं कि मेरी अध्यक्षता के जमाने में कांग्रेस महासमिति की हालत खराब हुई है। इस बारे में मैं एक शब्द और कहूंगा। क्या तुम्हें यह खयाल नहीं हुआ कि तुम मेरी निन्दा करने की कोशिश में जनरल सेक्रेटरी की निन्दा करने के अलावा दफ्तर के सारे कर्मचारियों की भी निन्दा कर रहे हो ?

तुमने अपने तार में 'नाजुक राष्ट्रीय समस्याओं' का जिक्र किया, जिनके लिए तुम तुरन्त कार्यसमिति के गठन की मांग करते हो, हालांकि तुम कहते हो कि तुम कार्यसमिति में नहीं रहना चाहते। कृपया बताओ भी कि ये 'नाजुक राष्ट्रीय समस्याएं' क्या हैं ? तुमने अपने एक पिछले पत्र में कहा था कि राजकोट और जयपुर की समस्या ही अत्यन्त नाजुक समस्या है। पर चूंकि महात्माजी इन मामलों से निपट रहे हैं, एक तरह से वे कार्यसमिति और महासमिति के कार्यक्षेत्र से बाहर हैं।

तुमने अपने तार में अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति का भी जिक्र किया है। मैंने अखबारों में देखा है कि तुम्हारे द्वारा इसका उल्लेख होने के बाद ऐसे कई आदमी, जिनमें तनिक भी अन्तर्राष्ट्रीय समझ नहीं है, जो अन्तर्राष्ट्रीय मामलों को समझने की कोई इच्छा नहीं रखते और जो अन्तर्राष्ट्रीय

स्थिति का भारत के हित में उपयोग भी नहीं करना चाहते, बोहेमिया और स्लोवाकिया की किस्मत के बारे में चिन्तित हो उठे हैं। जाहिर है कि यह मुझपर प्रहार करने का अच्छा हथियार मिल गया है। पिछले दो महीनों में यूरोप में ऐसा कुछ नहीं हुआ, जिसकी आशा नहीं थी। चेकोस्लोवाकिया में हाल में जो कुछ हुआ वह म्यूनिख-समझौते का नतीजा है। असल में यूरोप से जो जानकारी मुझे मिलती रही है, उसके आधार पर मैं पिछले छः महीनों में कांग्रेसी मित्रों से कहता रहा हूं कि वसन्त में यूरोप में संकट पैदा होगा, जो गरमियों तक जारी रहेगा। इसलिए मैं अपनी ओर से गतिवान कदम उठाने पर जोर देता आया—वह यह कि ब्रिटिश सरकार को पूर्ण स्वराज्य की मांग करनेवाली चुनौती दी जाय। मुझे याद पड़ता है कि जब मैंने पिछले दिनों (शान्तिनिकेतन या इलाहाबाद में) एक बार तुमसे अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति की चर्चा की थी और उसके आधार पर ब्रिटिश सरकार के सामने राष्ट्रीय मांग पेश करने की दलील दी थी तो तुमने यह ठंडा उत्तर दिया कि अन्तर्राष्ट्रीय तनाव कुछ साल जारी रहनेवाला है। अचानक ही तुम अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति के बारे में बड़े उत्साही हो गये हो। किन्तु मैं यह बता दूं कि तुम्हारी ओर से या गांधीवादी समुदाय की ओर से अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति का हमारे हित में उपयोग कर लेने का कोई इरादा नजर नहीं आता। तुम्हारे तार में यह भी लिखा है कि अन्तर्राष्ट्रीय संकट पर विचार करने के लिए कांग्रेस महासमिति की बैठक जल्दी होनी चाहिए। किस मकसद के लिए? एक लम्बा-चौड़ा प्रस्ताव पास करने के लिए, जिसका कोई व्यावहारिक नतीजा न हो? या तुम अपनी राय बदल लोगे और कांग्रेस महासमिति से कहोगे कि अब हमको पूर्ण स्वराज्य की ओर कदम बढ़ाना चाहिए और एक चुनौती की शक्ल में राष्ट्रीय मांग ब्रिटिश सरकार के सामने पेश करनी चाहिए? नहीं, मैं महसूस करता हूं कि या तो हम अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति पर गम्भीरतापूर्वक विचार करें और अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति का अपने हित में लाभ उठायें या फिर उसकी बात ही न करें। अगर हम कुछ करना-धरना नहीं चाहते तो खाली दिखावा करना बेकार है।

मुझे बताया गया है कि जब तुम दिल्ली में थे तो तुमने महात्माजी

को यह संदेश दिया कि उन्हें मौलाना आजाद से मिलने इलाहाबाद जाना चाहिए। यह जानकारी बिल्कुल गलत हो सकती है। लेकिन अगर गलत न हो तो क्या तुमने उनको सुझाया कि उन्हें साथ-साथ धनबाद भी हो आना चाहिए ? जब मेरे सेक्रेटरी ने तुमको २४ मार्च को टेलीफोन किया कि अखबारों में यह छपा है कि डाक्टरों की मनाही के कारण महात्माजी धनबाद नहीं आ सकते और इसका आप खंडन करें तो तुमने ऐसी कोई इच्छा प्रकट नहीं की कि महात्माजी धनबाद आयें, हालांकि तुम इस बात के लिए बड़े उत्सुक थे कि मुझे गांधीजी की इच्छा के अनुसार कार्यसमिति के गठन की घोषणा कर देनी चाहिए। टेलीफोन पर तुमने यही कहा कि धनबाद गांधीजी के कार्यक्रम में शामिल नहीं है। क्या तुम्हारे लिए महात्माजी को धनबाद आने के लिए रजामंद करना इतना अधिक मुश्किल था ? क्या तुमने कोशिश की ? तुम कह सकते हो कि उन्हें राजकोट के मामले में वापस दिल्ली लौटना था। किन्तु उनकी वाइसराय से मुलाकात पूरी हो चुकी थी और जहांतक सर मारिस ग्वायर से मिलने की बात है, सरदार पटेल को मिलना था, न कि महात्माजी को।

राजकोट-प्रकरण के सम्बन्ध में मैं कुछ शब्द कहना चाहूंगा। समझौते की शर्तों को, जिनके आधार पर महात्माजी का उपवास समाप्त हुआ, तुम काफी अच्छा समझते हो। कोई भी हिन्दुस्तानी ऐसा नहीं होगा, जिसे महात्माजी का जीवन बच जाने पर खुशी और राहत अनुभव नहीं हुई होगी। किन्तु जब हम समझौते की शर्तों की तर्क की बारीक निगाह से जांच-पड़ताल करते हैं तो हमें क्या मालूम होता है ? पहली बात तो यह कि सर मारिस ग्वायर को, जो संघ-योजना के अविभाज्य अंग हैं, पंच मान लिया गया। क्या इसका यह अर्थ नहीं कि हमने अप्रत्यक्ष रूप में संघ-योजना को स्वीकार कर लिया ? दूसरे, सर मारिस न तो हमारे आदमी हैं, और न स्वतंत्र एजेंट ही हैं। वह सीधे-सादे रूप में सरकार के आदमी हैं। ब्रिटिश सरकार के साथ अपने किसी भी विवाद में अगर हम किसी हाईकोर्ट जज या सेशन जज को पंच मान लें तो ब्रिटिश सरकार इसके लिए खुशी से राजी हो जायगी। उदाहरण के लिए बिना मुकदमा

चलाये नजरबंद राजबंदियों के मामले में ब्रिटिश सरकार हमेशा गर्व के साथ कहती है कि तत्संबंधी कागजात दो हाईकोर्ट या सेशन जजों के सामने रखे जाते हैं। किन्तु हमने इस व्यवस्था को कभी संतोषजनक नहीं स्वीकार किया। फिर राजकोट के मामले में भिन्न तरीका क्यों स्वीकार किया गया?

इस बारे में एक और मुद्दा है, जिसे मैं नहीं समझ पाता और जिस-पर तुम प्रकाश डाल सकते हो। महात्मा गांधी वाइसराय से मिलने गये और उनकी भेंट हो चुकी। अब वह वहां क्यों इन्तजार कर रहे हैं? अगर सर मारिस ग्वायर को जरूरत हो तो सरदार पटेल को इन्तजार करना चाहिए। अगर महात्माजी वाइसराय से मुलाकात कर चुकने के बाद दिल्ली में ठहरे रहते हैं तो क्या इससे अप्रत्यक्ष रूप में ब्रिटिश सर-कार की प्रतिष्ठा नहीं बढ़ती? तुमने अपने २४ मार्च के पत्र में लिखा था कि महात्माजी का कई दिन तक दिल्ली में ठहरने का निश्चय हो चुका है और वह बाहर नहीं जा सकते। मैं तो ऐसा सोचता हूं, महात्माजी के लिए दिल्ली में इन्तजार करते रहने के बजाय और कई जरूरी काम करने को पड़े हैं। अगर महात्माजी थोड़ा भी परिश्रम करें तो जिस बहाव और गतिरोध आदि की तुम इतनी शिकायत करते हो, उसे देखते-देखते समाप्त किया जा सकता है। किन्तु इस बारे में तुम चुप हो और सारा दोष मेरे लिए सुरक्षित रखते हो।

अपने २३ मार्च के पत्र में तुमने लिखा है: "मैंने बाद में दूसरे लोगों को यह गोलमोल बात करते पाया कि कांग्रेस महासमिति की बैठक बुलाई जाय। मैं ठीक-ठीक नहीं जानता कि इन आधारों पर कौन सोच रहा है और महासमिति की बैठक बुलाने का उनका क्या उद्देश्य है, सिवा इसके कि उससे स्थिति और स्पष्ट हो सके।" खबरें काफी तेजी से और दूर-दूर फैलती हैं और मुझे सूचना मिली है कि कुछ केन्द्रीय एम. एल. ए. महा-समिति की बैठक जल्दी बुलाने के अनुरोध-पत्र पर महासमिति के सदस्यों के हस्ताक्षर प्राप्त करने की कोशिश कर रहे हैं, मानो मैं महासमिति की बैठक बुलाने को टाल रहा हूं और जान-बूझकर कांग्रेस के मामलों में गतिरोध पैदा कर रहा हूं। क्या तुमने इस तरह की खबर दिल्ली में या

अन्यत्र नहीं सुनी ? यदि हां, तो क्या तुम समझते हो, यह कदम न्यायोचित और सम्माननीय है ?

इसी २३ मार्च के पत्र में तुम राष्ट्रीय मांग के प्रस्ताव और शरत् द्वारा उसके विरोध का जिक्र करते हो। जहांतक शरत् के रुख का संबंध है, वह शायद इस वारे में तुम्हें लिखनेवाले हैं। किन्तु यह कहना सही नहीं है कि उनके विरोध के अलावा प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकृत हुआ। मैंने कई लोगों से सुना है कि उन्होंने प्रस्ताव का विरोध किया, इसलिए नहीं कि उसमें कुछ बुनियादी खरावी थी, वल्कि इसलिए कि उसका कोई व्यावहारिक अर्थ नहीं था। वह भी उन निर्दोष प्रस्तावों जैसा था जो हर कांग्रेस-अधिवेशन के अन्त में पेश किये जाते हैं, अनुमोदित होते हैं और या तो सर्वसम्मति से या मूक रूप में पास किये जाते हैं। वह कौन-सा अमली नेतृत्व देता है ?

इस वारे में मैं यह कहे विना नहीं रह सकता कि पिछले वर्षों में कांग्रेस के प्रस्ताव बहुत ज्यादा लम्वे-चौड़े रहे हैं। उन्हें 'प्रस्तावों' की अपेक्षा 'निबंध' कहना ज्यादा ठीक होगा। पहले हमारे प्रस्ताव संक्षिप्त, विषय-संगत और व्यावहारिक होते थे। मेरा खयाल है कि हमारे प्रस्तावों को यह नई शक्ल देने में तुम्हारा हाथ रहा है। जहांतक मेरा सम्बन्ध है, मैं लम्बे निबंधों के बजाय अमली प्रस्ताव ज्यादा पसंद करता हूं।

तुमने अपने पत्रों में एक से अधिक वार आज की कांग्रेस में 'दुस्साहसिक प्रवृत्तियों' का जिक्र किया है। तुम्हारा ठीक-ठीक आशय क्या है ? मुझे ऐसा लगता है कि तुम्हारे ध्यान में कुछ खास व्यक्ति हैं। क्या तुम नये आदमियों और औरतों के कांग्रेस में आने और प्रमुखता प्राप्त करने के विरुद्ध हो ? क्या तुम चाहते हो कि कांग्रेस का शीर्ष नेतृत्व चन्द व्यक्तियों के लिए ही सुरक्षित रहे ? अगर मेरी याददाश्त मुझे धोखा नहीं देती तो संयुक्त प्रान्त की प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी की परिषद ने एक वार इस आशय का नियम स्वीकार किया था कि किन्हीं कांग्रेस संस्थाओं में एक व्यक्ति तीन साल से अधिक पदाधिकारी न रहे। प्रकटतः यह नियम मातहत संस्थाओं के लिए था और उच्च संस्थाओं में एक ही व्यक्ति उसी पद पर दसों साल तक रह सकता है। तुम कुछ भी कहो, हम सब, एक अर्थ में,

दुस्साहसी हैं, कारण, जीवन एक दीर्घ दुस्साहस है। मैंने तो सोचा था कि जो लोग अपनेको प्रगतिशील कहते हैं, वे कांग्रेस संगठन की नई श्रेणियों में नये खून का स्वागत करेंगे।

तुम्हारे लिए यह सोचने का कोई कारण नहीं है कि शरत् का पत्र मेरी ओर से लिखा गया। (यहां मैं तुम्हारे २४ मार्च के पत्र का हवाला दे रहा हूं।) उनका अपना व्यक्तित्व है। जब वह यहां से कलकत्ता लौटे तो उन्हें गांधीजी का तार मिला कि वह उन्हें पत्र लिखें। अगर गांधीजी ने इस तरह का तार नहीं दिया होता तो मुझे शक है कि उन्होंने पत्र लिखा भी होता। किन्तु मैं यह कह दूं कि महात्माजी को लिखे गए उनके पत्र में कुछ ऐसी बातें हैं जो मेरी भावनाओं को प्रकट करती हैं।

शरत् के नाम तुम्हारे पत्र के बारे में मुझे कुछ कहना है। मैं तुम्हारे पत्र से यह अर्थ लेता हूं कि त्रिपुरी में वातावरण आदि के बारे में उन्होंने जो कुछ लिखा, उसपर तुम्हें आश्चर्य हुआ। इसपर मुझे आश्चर्य होता है। हालांकि मैं स्वतंत्रतापूर्वक आ-जा नहीं सकता था, किन्तु स्वतंत्र जरियों से उस जगह के दूषित वातावरण की मुझे काफी रिपोर्ट मिली थीं। मेरी समझ में नहीं आता कि तुम उस जगह आये-गये और फिर भी कैसे तुम्हें उसकी गंध नहीं आई या तुमने उसके बारे में सुना नहीं ?

दूसरे, तुम्हारा यह कहना है कि त्रिपुरी में दूसरे सवालों के विचार पर व्यक्तिगत प्रश्नों की छाया पड़ी। तुम्हारा कहना सही है। सिर्फ तुमने यह और नहीं जोड़ा कि यद्यपि तुम इस विषय पर विषय-समिति या खुले अधिवेशन में बोले नहीं, पर तुमने इन व्यक्तिगत प्रश्नों को तीव्र बनाने में और उन्हें सार्वजनिक दृष्टि में प्रधानता दिलाने में और किसी भी व्यक्ति की अपेक्षा अधिक योग दिया।

तुमने शरत् के नाम अपने पत्र में कहा है : "किसीके लिए भी यह कहना बेहूदा बात थी कि सुभाष की बीमारी बनावटी है और मेरे किसी भी साथी ने मेरी जानकारी में ऐसा इशारा नहीं किया।" जब तुम ऐसा कहते हो तो लगता है कि तुमने अपनी आंखों पर बिल्कुल रंगीन चश्मा चढ़ा दिया है, जबकि त्रिपुरी में और उसके पहले मेरे राजनैतिक विरोधियों ने सब जगह इस आशय का व्यवस्थित प्रचार किया था। यह

एक और अतिरिक्त प्रमाण है कि पिछले कुछ समय से तुम्हारा मेरे विरुद्ध झुकाव रहने लगा है (देखो इस पत्र का प्रारंभ)। मैं नहीं सोचता कि शरत् ने त्रिपुरी के वातावरण आदि के बारे में जो कुछ कहा है, वह ज़रा भी अत्युक्तिपूर्ण है।

तुमने त्रिपुरी में सुनी कुछ अरुचिकर रिपोर्टों का जिक्र किया है। तुम्हारे लिए यह अजीब और अशोभनीय बात है कि तुम उन्हीं रिपोर्टों से प्रभावित होते हो जो हमारे विरुद्ध जाती हैं। मैं कुछ उदाहरण देता हूं। क्या तुम जानते हो कि बंगाल ही एक ऐसा प्रान्त नहीं है जिसके प्रतिनिधियों के टिकिट जारी करने के बारे में शिकायतें की गई हैं? क्या तुम जानते हो कि इसी तरह की शिकायतें आन्ध्र के विरुद्ध भी की गई थीं? किन्तु तुम केवल बंगाल का जिक्र करते हो। फिर, क्या तुम्हें पता है कि जब बंगाल प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी के दफ्तर ने मूल रसीदें खो जाने के कारण दुहरी रसीदें जारी कीं तो उसने इस बारे में कांग्रेस महासमिति के दफ्तर को चेतावनी दे दी थी और कहा था कि उसे प्रतिनिधि टिकिट जारी करने में सावधानी रखनी चाहिए? क्या तुमने यह जानने की परवा की कि इस गलती के लिए कौन जिम्मेदार है, बंगाल प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी या कांग्रेस महासमिति का दफ्तर?

फिर, तुमने प्रतिनिधियों को लाने में बड़ी रकम खर्च करने का जिक्र किया है। क्या तुम नहीं जानते कि पूंजीपति और पैसेवाले लोग किस पक्ष में हैं? क्या तुमने सुना है कि पंजाब के प्रतिनिधियों को लारी भर-भरकर लाहौर से लाया गया? शायद डा. किचलू इसपर रोशनी डाल सकते हैं। पंजाब की एक प्रसिद्ध महिला कांग्रेस कार्यकर्त्री ने, जो मुझसे पांच दिन पहले मिली थीं, बताया कि हमें सरदार पटेल की हिदायत के अनुसार लाया गया है। मैं नहीं जानता, किन्तु निश्चय ही तुमको थोड़ी तटस्थता की भावना रखनी चाहिए।

त्रिपुरी में कांग्रेस-मंत्रियों के रवैये के बारे में मुझे दो बातें कहनी हैं। मुझसे महासमिति के बहुत-से सदस्यों ने अनुरोध किया कि मतदान पर्ची के जरिये होना चाहिए। जब मैंने इसका कारण पूछा तो उन्होंने कहा कि अगर उन्होंने खुले रूप से कांग्रेस मंत्रियों के विरुद्ध वोट दिया तो उन्हें

दिक्कत में फंसना पड़ेगा। इसका क्या मतलव ? दूसरे, मैं इसके खिलाफ हूं कि कांग्रेसी मंत्री इस तरह दलगत तरीके से मत संग्रह करें। इसमें शक नहीं कि उन्हें ऐसा करने का वैधानिक हक है, किन्तु इसका नतीजा यह होगा कि हर प्रान्त में कांग्रेस पार्लमेंटरी पार्टी में फूट पड़ जायगी। अगर कांग्रेसी मंत्रियों को अपने प्रान्त की असेम्बलियों और परिषदों के तमाम कांग्रेसी सदस्यों का संयुक्त समर्थन प्राप्त नहीं होगा तो वे कैसे अपना काम चला सकेंगे ?

क्या तुम इससे सहमत नहीं कि त्रिपुरी-कांग्रेस में (विषय-समिति में भी) पुराने नेतृत्व ने जनता की दृष्टि में निष्क्रिय रुख रखा और मंत्री रंगमंच पर हावी रहे ? जब शरत् ने यह कहा तो क्या वह गलती पर थे ?

यह जले पर नमक छिड़कना हुआ जब तुम शरत् के नाम अपने पत्र में कहते हो : "त्रिपुरी-प्रस्ताव कांग्रेस-अध्यक्ष और गांधीजी के बीच सहयोग की कल्पना करता है।"

तुम इसी पत्र में दावा करते हो कि तुमने त्रिपुरी में और उसके पहले कांग्रेसियों में सहयोग स्थापित करने की कोशिश की। क्या मैं तुम्हें यह अप्रिय तथ्य बताऊं कि दूसरे लोगों की इस बारे में दूसरी राय है ? उनके खयाल से, त्रिपुरी-कांग्रेस में कांग्रेसजनों और कांग्रेसजनों के बीच जो खाई पैदा हुई, उसकी जिम्मेदारी से तुम बच नहीं सकते।

अब मैं तुम्हें अपनी नीति और कार्यक्रम स्पष्ट करने की दावत देता हूं—अस्पष्ट सामान्य बातों के द्वारा नहीं, बल्कि यथार्थवादी विस्तार के साथ। मैं यह भी जानना चाहूंगा कि तुम क्या हो, समाजवादी या वाम-पक्षी या मध्यमार्गी या दक्षिणपंथी या गांधीवादी या और कुछ ?

तुम्हारे शरत् को लिखे पत्र में दो प्रशंसनीय वक्तव्य हैं, "तमाम राजनैतिक प्रश्नों पर व्यक्तिगत पहलुओं को प्रधानता मिलते देखकर मुझे सबसे अधिक दुःख हुआ। अगर कांग्रेसियों में संघर्ष होना है तो मेरी यह हार्दिक इच्छा है कि उसे ऊंचे स्तर पर और नीति तथा सिद्धान्त के मामलों तक ही सीमित रखा जाय।" अगर तुमने खुद अपनी बात पर अमल किया होता तो कांग्रेस राजनीति की दूसरी ही शक्ल हुई होती।

जब तुम कहते हो, तुम्हारी समझ में नहीं आया कि त्रिपुरी में क्या

रुकावट थी तो मैं तुम्हारे 'सीधेपन' की बलायें लिये बिना नहीं रह सकता। त्रिपुरी-कांग्रेस ने असल में सिर्फ एक ही प्रस्ताव पास किया और वह था पन्त-प्रस्ताव और उसमें तुच्छता और प्रतिशोध की भावना भरी हुई थी। सत्य और अहिंसा के हिमायतियों ने अध्यक्ष के निर्वाचन के बाद दुनिया को बताया कि वह बहुमत के रास्ते में रोड़े नहीं अटकायेंगे और बाधा न डालने की भावना से उन्होंने कार्य-समिति की सदस्यता से त्यागपत्र दिया है। त्रिपुरी में उन्होंने बाधा डालने के अलावा और कुछ नहीं किया। उन्हें ऐसा करने का अधिकार था, किंतु उन्होंने ऐसे दावे क्यों किये, जिन्हें अमल में उन्होंने झुठलाया ?

मैं इस लम्बे पत्र को समाप्त करने के पहले कुछ और बातों का जिक्र करूंगा।

तुमने त्रिपुरी में बंगाल के प्रतिनिधियों को टिकिट जारी करने में हुई दिक्कत का जिक्र किया है। एक दिन मैंने पत्रों में पढ़ा कि कलकत्ता की एक सार्वजनिक सभा में कांग्रेस महासमिति के एक सदस्य ने कहा कि उसने संयुक्त प्रान्त के कुछ प्रतिनिधियों से सुना है कि इस तरह की दिक्कत संयुक्त प्रान्त के बारे में भी पेश आई थी।

क्या तुम यह नहीं सोचते कि पन्त-प्रस्ताव का बुनियादी हेतु महात्मा-जी को मेरे विरुद्ध खड़ा करना था ? क्या तुम ऐसे कदम को प्रामाणिक समझते हो, जबकि मेरे और महात्माजी के बीच, कम-से-कम जहांतक मेरी तरफ का सवाल है, कोई खाई पैदा नहीं हुई थी ? अगर पुराने नेता मुझसे लड़ना चाहते थे तो उन्होंने सीधे तरीके से ऐसा क्यों नहीं किया ? उन्होंने महात्मा गांधी को हमारे बीच में क्यों डाला ? यह चतुर युक्ति थी, किन्तु सवाल यह है कि क्या यह कदम सत्य और अहिंसा के अनुकूल था ?

मैं तुमसे यह पूछ चुका हूं कि क्या तुम सरदार पटेल के इस कथन को उचित समझते हो कि मेरा दुबारा निर्वाचन देश के ध्येय के लिए हानिकर होगा ? तुमने इस बारे में एक शब्द भी नहीं कहा कि उन्हें अपना यह कथन वापस लेना चाहिए। इस प्रकार तुमने अप्रत्यक्ष रूप से उनके आरोप का समर्थन किया। अब मैं तुमसे यह पूछता हूं कि तुम

महात्माजी के इस आशय के उद्‌गार के बारे में क्या सोचते हो कि आखिर मैं (सुभाष) देश का शत्रु नहीं हूं। क्या तुम सोचते हो कि इस प्रकार का कथन उचित था ? यदि नहीं तो क्या तुमने मेरे पक्ष में महात्माजी से एक भी शब्द कहा ?

तुम कुछ लोगों की इस चाल के बारे में क्या सोचते हो कि जब हम त्रिपुरी में थे तो दैनिक पत्रों में यह प्रकाशित हुआ था कि पन्त-प्रस्ताव को महात्माजी का पूरा समर्थन प्राप्त है ?

और अब तुम पन्त-प्रस्ताव के बारे में क्या सोचते हो ? त्रिपुरी में यह अफवाह थी कि तुम उसके बनानेवालों में से एक थे। क्या यह तथ्य है ? क्या तुम इस प्रस्ताव को पसंद करते हो, हालांकि उसपर मतदान के समय तुम तटस्थ रहे थे ? तुम उसकी क्या व्याख्या करते हो ? क्या तुम्हारे खयाल में वह अविश्वास का प्रस्ताव था ?

मुझे खेद है कि मेरा पत्र इतना लम्बा हो गया है। बेशक, उससे तुम्हारा धीरज खो जायगा, किन्तु मुझे लम्बा लिखना पड़ा; क्योंकि मुझे बहुत-सी बातें कहनी थीं।

संभव है, मुझे तुम्हें फिर लिखना पड़े या अखबारों में बयान देना पड़े। यह अपुष्ट रिपोर्ट है कि कुछ लेखों में तुम मेरी अध्यक्षता की प्रतिकूल आलोचना कर रहे हो। जब मैं तुम्हारे लेख पढ़ूंगा तो मैं इस विषय में कुछ कह सकूंगा और हमारे काम की तुलना कर सकूंगा, खासकर इस बात की कि वामपक्ष के ध्येय को तुमने दो साल में और मैंने एक साल में कितना आगे बढ़ाया।

अगर मैंने कठोर भाषा का प्रयोग किया हो या कहीं तुम्हारी भावनाओं को चोट पहुंचाई हो तो क्षमा कर देना। तुम खुद कहते हो कि स्पष्टता सबसे अच्छी वस्तु है और मैंने स्पष्ट होने की कोशिश की है, शायद नग्न रूप से स्पष्ट।

मेरी तबीयत धीमे, पर लगातार सुधर रही है। आशा है, तुम स्वस्थ होगे।

सस्नेह तुम्हारा,

 सुभाष

२५६. महात्मा गांधी की ओर से

नई दिल्ली
३० मार्च १९३९

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारे दो पत्र मिले। दोनों अच्छे थे।

तुम्हें पत्र-व्यवहार की नकलें भेज रहा हूं।

यू. पी. की घटनाओं से मुझे अशांति होती है। मेरा हल यह है कि या तो तुम्हें प्रधानमंत्री बन जाना चाहिए या मंत्रिमंडल को तोड़ देना चाहिए। तुम्हें उच्छृंखल तत्वों पर काबू पाना चाहिए।

जो समाजवादी यहां आये थे, उनसे मेरी तीन दिन दिल खोलकर बातें हुईं। नरेन्द्रदेव तुम्हें खबर देंगे। वह अपने-आप न दें तो तुम मंगा लेना।

प्यार,

बापू

२५७. महात्मा गांधी की ओर से सुभाषचंद्र बोस के नाम

नई दिल्ली
३० मार्च १९३९

प्रिय सुभाष,

अपने तार का जवाब पाने की खातिर मैंने तुम्हारे २५ तारीख के पत्र का उत्तर देने में देर की है। सुनील का तार मुझे कल रात को मिला। अब प्रातःकाल की प्रार्थना के समय से पहले उठकर यह उत्तर लिख रहा हूं।

चूंकि तुम्हारे खयाल में पंडित पंत का प्रस्ताव अनियमित था और कार्य-समिति-सम्बन्धी कलम स्पष्ट रूप में अवैधानिक और नाजायज है, इसलिए तुम्हारा मार्ग नितान्त स्पष्ट है। समिति का तुम्हारा चुनाव अबाधित होना चाहिए।

इसलिए इस विषय में तुम्हारे कई प्रश्नों को मेरे उत्तर की जरूरत नहीं।

जब हम फरवरी में मिले थे तबसे मेरी राय मजबूत हुई है कि जहां मौलिक बातों पर मतभेद हों, जैसा हम सहमत थे कि हैं, वहां मिली-

जुली समिति हानिकर होगी। इसलिए यह मानकर कि तुम्हारी नीति को महा-समिति के बहुमत का समर्थन प्राप्त है, तुम्हें बिल्कुल उन्हीं लोगों की बनी हुई कार्यसमिति रखनी चाहिए, जो तुम्हारी नीति में विश्वास करते हैं।

हां, मैं उसी विचार पर कायम हूं, जो मैंने हमारी फरवरी की मुलाकात में सेगांव में प्रकट किया था कि मैं किसी भी प्रकार से तुम्हारे आत्म-दमन में भागीदार होने का अपराधी नहीं बनूंगा। स्वेच्छापूर्वक आत्म-विलय दूसरी चीज है। किसी ऐसे विचार को दबा लेना, जिसे तुम देश-हित के लिए प्रबल रूप में रखते हो, आत्म-दमन होगा। इसलिए अगर तुम्हें अध्यक्ष के रूप में काम करना है तो तुम्हारे हाथ खुले रहने चाहिए। देश के सामने जो परिस्थिति है, उसमें किसी मध्यम मार्ग की गुंजायश नहीं है।

जहांतक गांधीवादियों का सम्बन्ध है (यदि यह गलत शब्द-प्रयोग करें तो) वे तुम्हें बाधा नहीं पहुंचायेंगे। जहां संभव होगा, तुम्हारी सहायता करेंगे और जहां सहायता नहीं कर सकेंगे, वहां अलग रहेंगे। अगर वे अल्पमत में हैं तब तो कुछ भी कठिनाई नहीं होनी चाहिए। जहां वे स्पष्ट बहुमत में होंगे वहां शायद वे अपने-आपको दबाकर न रख सकें।

लेकिन मुझे जिस चीज की चिन्ता है वह यह हकीकत है कि कांग्रेस के मतदाता फरजी हैं और इसलिए बहुमत और अल्पमत का पूरा अर्थ नहीं रह जाता। फिर भी जबतक कांग्रेस की भीतरी सफाई नहीं हो जाती तबतक जो हथियार हमारे पास फिलहाल है उसीसे काम चलाना होगा। दूसरी चीज, जिससे परेशानी है, वह है हमारा आपसी भयंकर अविश्वास। जहां कार्यकर्त्ताओं में परस्पर अविश्वास हो वहां मिल-जुलकर काम करना असंभव हो जाता है।

मेरे खयाल से तुम्हारे पत्र के और किसी मुद्दे का जवाब देने की आवश्यकता नहीं है।

जो कुछ करो भगवान से मार्ग-दर्शन लेते रहो। डाक्टरों की आज्ञाओं का पालन करके जल्दी अच्छे हो जाओ।

प्यार,

बापू

जहांतक मेरा सम्बन्ध है, हमारे पत्र-व्यवहार को प्रकाशित करने की जरूरत नहीं। परन्तु तुम्हारा दूसरा विचार हो तो छापने की मेरी इजाजत है।

२५८. सुभाषचंद्र बोस के नाम

निजी और खानगी

इलाहाबाद
३ अप्रैल १९३९

प्रिय सुभाष,

तुम्हारा २८ मार्च का लम्बा खत मेरे पास अभी-अभी पहुंचा और मैं जल्दी से जवाब दे रहा हूं। सबसे पहले तो मैं यह कहना चाहता हूं कि मुझे कितनी खुशी हुई कि तुमने मुझे इतना पूरे और साफ तौर पर लिखा है और स्पष्ट कर दिया है कि मेरे बारे में और विविध घटनाओं के बारे में तुम्हारे क्या भाव हैं। अक्सर स्पष्ट कहने से चोट लगती है, लेकिन लगभग हमेशा ही वह वांछनीय है, खास तौर पर उन लोगों के बीच जिन्हें साथ-साथ काम करना पड़ता है। इससे हमें दूसरे के और अधिक आलोचक दृष्टिकोण से अपने-आपको ठीक रूप में देखने में मदद मिलती है। इस बारे में तुम्हारा पत्र बहुत सहायक है और इसके लिए मैं तुम्हारा आभारी हूं।

एक ऐसे खत का जवाब देना आसान काम नहीं है, जो टाइप किये हुए सताईस पन्ने का हो और जिसमें बहुत-सी घटनाएं और विविध नीतियों और कार्यक्रमों का जिक्र भरा हो। इसलिए मुझे डर है कि मेरा उत्तर इतना पूरा और ब्यौरेवार नहीं होगा, जितना हो सकता है। इन सब मामलों को ठीक ढंग से निपटाने की कोशिश में एक किताब या ऐसी ही कोई चीज लिखनी पड़ेगी।

असल में तुम्हारा पत्र मेरे आचरण का अभियोग-पत्र और मेरी खामियों की जांच है। तुम अच्छी तरह समझ सकते हो कि ऐसे अभियोग-पत्र का जवाब देना पड़े तो यह कठिन और परेशान करनेवाला काम हो जाता

है। लेकिन जहांतक त्रुटियों का संबंध है, या कम-से-कम उनमें से अनेक का संबंध है, मुझे कुछ कहना नहीं है। मैं अपराध स्वीकार करता हूं, क्योंकि मैं अच्छी तरह समझता हूं कि दुर्भाग्य से मुझमें वे त्रुटियां हैं। मैं यह भी कह सकता हूं कि तुम्हारे इस उद्‌गार की सचाई की मैं पूरी तरह कद्र करता हूं कि जबसे तुम १९३७ में नजरबन्दी से निकले, तुमने मेरे साथ बहुत ही आदर और लिहाज का वर्ताव खानगी में और सार्वजनिक जीवन में भी किया। इसके लिए मैं तुम्हारा कृतज्ञ हूं। मैं खुद भी हमेशा तुम्हारे लिए आदर और स्नेह रखता रहा और अब भी रखता हूं, हालांकि कभी-कभी तुमने जो कुछ किया या जिस तरह किया, वह मुझे कतई पसन्द नहीं आया। मेरा खयाल है कि किसी हद तक हमारे स्वभाव अलग-अलग हैं और जीवन तथा उसकी समस्याओं के प्रति हमारा दृष्टिकोण एक-सा नहीं है।

अब मैं तुम्हारे पत्र को निपटाऊंगा और एक-एक पैराग्राफ को लूंगा।

मैं भूल रहा हूं कि मैंने तुमसे क्या कहा था, जब पिछले नवम्बर में मेरे यूरोप से लौटने पर तुम मुझसे इलाहाबाद में मिले थे। तुम करांची से कलकत्ता जाते हुए थोड़ी देर के लिए यहां उतर पड़े थे। मैं कल्पना नहीं कर सकता कि तुमको निश्चित उत्तर दे सकने से पहले उस समय गांधीजी से पूछने के लिए मेरे पास क्या चीज थी। मुझे यह भी याद नहीं कि सवाल क्या था। लेकिन शायद मेरा मतलब यह था कि मेरा अपना कार्यक्रम विभिन्न मामलों पर गांधीजी की प्रतिक्रिया पर निर्भर होगा। तुमको याद होगा कि हरिपुरा से पहले और पीछे मैंने तुमसे क्या कहा था। मैं कार्यसमिति के सदस्य के नाते उससे संबंध रखने के बारे में उस समय बहुत बेचैन था और छोड़ना चाहता था। इसका कारण यह था कि मुझे अधिकाधिक ऐसा अनुभव हुआ था कि वहां मैं कोई उपयोगी काम नहीं कर रहा था। दूसरा कारण यह भी था कि गांधीजी, जिसे 'एक विचार की' समिति कहते थे, उसकी दृष्टि से सोच रहे थे और मैं नहीं समझता था कि मैं उसका अंग बन सकता हूं। मेरे सामने उस समय यह चुनने का मौका आगया कि मैं उससे चुपचाप हटकर बाहर से उसे सहयोग दूं या गांधीजी और उनके गुट को चुनौती दूं। मुझे लगा कि हिंदुस्तान के हितों

के लिए और हमारे पक्ष के लिए यह हानिकारक होगा कि मैं या तुम यह निश्चित फूट पैदा करो। वेशक यह कहना वेहूदा है कि किसी भी कीमत पर एकता होनी चाहिए। कभी-कभी एकता हानिकारक हो सकती है और उस समय वह नहीं रहनी चाहिए। यह सव उस समय की परिस्थिति पर निर्भर करता है, और मुझे उस समय दृढ़ विश्वास था कि गांधीजी और उनके गुट को वाहर निकाल देने से या उसकी कोशिश से एक नाजुक मौके पर हम वहुत कमजोर हो जायंगे। मैं उस स्थिति का सामना करने को तैयार नहीं था। साथ ही जो घटनाएं हो रही थीं, उनमें से वहुत-सी मुझे नापसंद थीं। और कुछ मामलों में, जैसे रियासतों और मंत्रिमंडलों के वावत, गांधीजी का आम रवैया भी मुझे पसन्द नहीं था।

मैं यूरोप चला गया और जव वापस आया तो फिर पुरानी समस्या सामने आई। उसी समय तुम मुझसे मिले और शायद मैंने तुम्हें वताया कि मेरे मन में क्या था। मेरा अपना दिमाग साफ था। परन्तु स्थिति के वारे में मेरी क्रिया गांधीजी की प्रतिक्रियाओं पर निर्भर थी। अगर अव भी वह एक-जैसे विचारोंवाली वात पर जमे हुए थे तव तो मेरा कोई स्थान नहीं था, नहीं तो मैं कार्य-समिति के सदस्य की हैसियत से सहयोग देने की कोशिश करता। मैं इस मुद्दे पर कांग्रेस में दो दल करने के लिए तैयार नहीं था। मेरा दिमाग तो हिंदुस्तान में और वाहर वढ़ते हुए संकटों से भरा हुआ था और मुझे ऐसा लग रहा था कि शायद हमें चंद महीनों के दौरान ही किसी वड़े संग्राम का सामना करना पड़ेगा। गांधीजी के सक्रिय भाग और नेतृत्व के विना उस संग्राम के कारगर होने की संभावना नहीं थी।

इस संग्राम की मेरी कल्पना का आधार संघ-शासन नहीं था। मैं चाहता था कि कांग्रेस संघ-शासन के सवाल को लगभग मुर्दा समझ ले और आत्म-निर्णय तथा संविधान-सभा की मांग पर सारा जोर लगाये और उसे विश्व-संकट से संवद्ध करके रखे। मुझे लगा कि संघ-शासन का मुकावला करने पर वहुत ज्यादा जोर देने से इस मुर्दे को जिन्दा रखने में मदद मिलती थी और अधिक वुनियादी सतह पर सोचने और वाद में कार्रवाई करने में वाधा पड़ती है। जव मैं इंग्लैंड में था तव तुमने इस आशय का एक वयान जारी किया था कि तुम संघ-शासन से अन्त तक

लड़ोगे और कांग्रेस ने उसे मान लिया तो भी लड़ोगे। तुम्हारे इस बयान का इंग्लैंड में ठीक उल्टा असर हुआ। हर शख्स ने कहा कि अगर कांग्रेस का अध्यक्ष संघ-शासन के मुद्दे पर इस्तीफे की बात सोच रहा है तो जरूर कांग्रेस उसे स्वीकार करनेवाली है। मुझे लाचारी महसूस होती थी और मैं इस दलील का आसानी से जवाब नहीं दे सकता था।

मैंने दो प्रस्ताव इस आधार पर तैयार किये। उनमें कोई असाधारण बात नहीं थी, सिर्फ जोर देने का ढंग दूसरा था। तुम्हें मालूम है कि कार्य-समिति के लिए सारे प्रस्ताव इस दृष्टि से बनाने पड़ते हैं कि दूसरे सदस्य सहमत हो जायं। कोई ऐसा मसविदा बनाना, जो अपनेको अधिक पसंद हो, परन्तु जो दूसरों को मंजूर न हो, बहुत आसान है। कार्य-समिति के सामने इन प्रस्तावों को रखने में मेरा विचार यह था कि अगली कांग्रेस में अधिक व्यापक और दूर तक जानेवाले प्रस्ताव के लिए जमीन भी तैयार की जाय और देश का मानस भी तैयार किया जाय। किन्तु मेरे प्रस्ताव मंजूर नहीं हुए और मुझसे कहा गया कि उनपर कांग्रेस के समय विचार होना चाहिए।

कार्य-समिति की इसी बैठक में मैंने यहूदियों के बारे में एक प्रस्ताव रखा। तुमको याद होगा कि इससे पहले ही जर्मनी में यहूदियों के विरुद्ध एक भयंकर कत्ले-आम हो चुका था और संसारभर में उसकी गूंज थी। मुझे लगा कि हमें इस बारे में अपनी राय जरूर जाहिर करनी चाहिए। तुम कहते हो कि तुम "हक्के-बक्के रह गये, जब मैंने एक ऐसा प्रस्ताव पेश किया जो हिंदुस्तान को यहूदियों के लिए शरण का स्थान बनाना चाहता था।" मुझे यह जानकर आश्चर्य होता है कि तुम्हारी इस मामले में इतनी तीव्र भावनाएं हैं, क्योंकि जहांतक मुझे याद है, तुमने उस समय अपने विचार निश्चित रूप से प्रकट नहीं किये। परन्तु क्या मेरे प्रस्ताव के लिए यह कहना न्यायपूर्ण है कि वह हिंदुस्तान में यहूदियों के लिए एक शरण-स्थान स्थापित करना चाहता था? पुराना मसविदा मेरे सामने है। उसमें कहा गया है: "इस समिति को इस बात पर कोई ऐतराज नहीं है कि यहूदी शरणार्थियों में से जो निपुण और विशेषज्ञ हैं और जो हिंदुस्तान की नई व्यवस्था के योग्य हैं और हिंदुस्तानी आदर्श स्वीकार करते हों उन्हें

हिंदुस्तान में नौकरी दे दी जाय।" मैंने इस सवाल को यहूदियों को सहायता देने के नजरिये से नहीं सोचा था, हालांकि हमारे देश को हानि पहुंचाये विना जहां संभव हो ऐसी सहायता देना वांछनीय था, लेकिन मेरा नजरिया तो हमारे विज्ञान और उद्योग वगैरा के लिए प्रथम श्रेणी के आदमी साधारण वेतन पर प्राप्त करके अपनी ही सहायता करने का था। नाज़ियों का कब्ज़ा हो जाने के बाद कई देशों ने अच्छे आदमी चुनने के लिए वियना में विशेष कमीशन भेजे। तुर्की को इन विशेषज्ञों से वड़ा लाभ हुआ है। मुझे सही किस्म के कलाविद और विशेषज्ञ जुटाने का यह आदर्श मौका दिखाई दिया। थोड़ी तनखाहों पर उनके यहां आने से दूसरे वेतन कम करने में भी हमें सहायता मिलती। वे एक विशेष अवधि के लिए न कि हमेशा के लिए वसने को आते और उनकी एक सीमित संख्या ही आती, और उनमें भी वे ही आते जो हमारे लिए निश्चित रूप में उपयोगी होते और जो हमारे आदर्शों और राजनैतिक नजरिये को मानते। लेकिन इस प्रस्ताव पर भी सहमति नहीं हुई, इसलिए उसे छोड़ दिया गया।

कांग्रेस-अध्यक्ष के चुनाव के बाद दिल्ली में दिये गए मेरे भाषण का तुमने जिक्र किया है। मुझे अफसोस है कि मैंने वह अखबारी खबर नहीं देखी, जिसका उल्लेख तुमने किया है, हालांकि बाद में किसीने मुझे उसके बारे में बताया था। सच तो यह है कि मैंने तुम्हारे या तुम्हारे चुनाव के बारे में कुछ नहीं कहा। मैं दिल्ली और पंजाब-कांग्रेस के उपद्रवों और झगड़ों का जिक्र कर रहा था और यह कहा था कि पदों की लिप्सा और उसके लिए मत बटोरने की बेहद लालसा पाई जाती है। मैंने उसे बुरा बताया। शायद अखबारवालों के दिमाग में तुम्हारा चुनाव था, इसलिए उन्होंने मेरे कथन को तोड़-मरोड़कर रख दिया। सभा में जो लोग मौजूद थे उनसे और दूसरे लोगों से मैंने पूछा और मैंने जो कुछ कहा था उसके बारे में उन्होंने मेरे ही खयाल की पुष्टि की।

तुम्हारा यह कहना बिल्कुल सही है कि डाक्टर पट्टाभि के लिए मत बटोरने का बहुत काम हुआ, जैसा तुम्हारे लिए भी हुआ। चुनाव के लिए मत बटोरने में मुझे कोई आपत्ति दिखाई नहीं देती। मुझे ठीक-ठीक पता नहीं है कि तुम्हारे यह कहने का क्या अर्थ है कि पट्टाभि के लिए

मत प्राप्त करने में कांग्रेसी मंत्रिमंडलों का तंत्र इस्तेमाल किया गया। मैं नहीं जानता कि इस काम के लिए वहां कौन-सा तंत्र है और अवश्य ही उत्तर प्रदेश में तो मैंने उसे काम करते नहीं देखा। अलबत्ता, एक मामले में तुम्हारे पक्ष में ऐसा जरूर हुआ। मुझे कोई कल्पना नहीं है कि हमारे मंत्रियों ने किस तरफ राय दी, लेकिन मेरा यह खयाल है कि आधे से अधिक ने पट्टाभि के लिए मत नहीं दिये हैं और जहांतक मैं जानता हूं, इससे भी कम लोगों ने दिये होंगे। एक मंत्री नें राय देने से इन्कार कर दिया, एक ने तुम्हारे लिए सक्रिय और सार्वजनिक रूप में वोट मांगे और यह आम राय थी कि उन्होंने तुम्हारे लिए बहुत-से मत प्राप्त किये।

सार्वजनिक सभा में मैं तुम्हारी निंदा करूं, इसपर तुम्हारा ऐतराज करना बिल्कुल सही है। ऐसा करना निहायत बेजा होता। लेकिन हकीकत यह है कि मैंने दिल्ली में या और कहीं ऐसी कोई बात नहीं की।

अब मैं उस बयान पर आता हूं, जो मैंने कार्य-समिति के बारह सदस्यों के इस्तीफे के समय जारी किया था। जब मैंने कार्य-समिति के कुछ और सदस्यों द्वारा अपनाये गए उग्र रवैये की अपेक्षा नरम रुख पेश करने का साहस किया तो दो दिन तक लंबी बहस हुई। उस बैठक से पहले जब मैंने सुना था कि त्यागपत्र की संभावना है तब मैंने इसे रोकने की चेष्टा की थी। मैंने दुबारा यही कोशिश की, लेकिन कई कारणों से स्थिति पहले से कहीं मुश्किल होगई। तुम जानते हो कि तुम्हारे अध्यक्षीय वक्तव्यों में कार्य-समिति के कुछ सदस्यों पर जो छींटे उड़ाये गए उनके बारे में मेरे तीव्र विचार थे। मैंने तुमसे इसका बार-बार जिक्र किया था। तुम गांधीजी से मिलने जा रहे थे तब मैंने विशेष रूप से तुम्हारे दिल पर यह बात जमाने की कोशिश की थी कि राजनैतिक सवालों की चर्चा करने से पहले इस मामले की सबसे पहले सफाई होनी चाहिए। जयप्रकाश मुझसे सहमत थे। जब दो आदमियों के बीच में सन्देह और अविश्वास की दीवार हो तो कोई राजनैतिक चर्चा नहीं हो सकती। तुमने अपने बयानों में जो कुछ कहा था वह सर्वथा अनुचित था। ऐसी स्थितिवाले शख्स के लिए, जो अन्दरूनी और कांग्रेस-अध्यक्ष की जगह पर हो, स्पष्ट ही यह अच्छी बात नहीं है कि वह अखबारी अफवाहों अथवा बाजारू बयानों

को दोहराये। उसके बारे में यह माना जाता है कि उसकी जानकारी होगी और उसके एक संकेत से भी लोगों को विश्वास हो जाता है। यह सही है कि तुमने किसीके नाम का उल्लेख नहीं किया, परन्तु तुम्हारे बयानों को पढ़नेवाला हर आदमी ज़रूर इस नतीजे पर पहुंचा कि तुम्हारा मतलब कार्य-समिति के कुछ सदस्यों से था। किसी व्यक्ति का इस कथन से ज्यादा बड़ा अपमान नहीं हो सकता कि जिस पक्ष की वह सार्वजनिक रूप में हिमायत करता है उसे गुप्त रूप में धोखा देता है और संघ-शासन में मंत्रिमंडलों का आपस में बंटवारा भी कर दिया है। वह एक मनगढ़न्त बयान था और उससे दिल को चोट लगी।

ऐसे बयान से तुम्हारे और गांधीजी के बीच आगे कोई सहयोग होने में कारगर बाधा उपस्थित होगई, क्योंकि दूसरे लोग तो एक तरह से गांधीजी के प्रतिनिधि थे। मैं उत्सुक था कि तुम दोनों में सहयोग हो, क्योंकि दूसरा विकल्प मुझे बहुत हानिकारक मालूम हुआ। इसलिए मैंने तुम्हें दबाया कि इस रुकावट को साफ कर दिया जाय और गांधीजी के साथ साफ-साफ बात कर ली जाय। मैंने समझा, तुम ऐसा करने के लिए सहमत थे। बाद में जयप्रकाश और गांधीजी से यह मालूम होने पर अचरज हुआ कि तुमने तो इस विषय का जिक्र तक नहीं किया। मैं स्वीकार करता हूं कि इससे मैं बहुत परेशान हुआ और इससे मैंने समझ लिया कि तुम्हारे साथ काम करना कितना कठिन था।

गांधीजी ने मुझे यह भी कहा कि तुम्हारी मुलाकात से उन्होंने यह खयाल बनाया कि तुम उनके सहयोग के लिए बहुत उत्सुक नहीं थे, हालांकि तुमने योंही सहयोग उनसे मांगा जरूर था। ऐसा मालूम होता था कि तुम्हारा विचार ऐसे विभिन्न व्यक्तियों की कार्य-समिति बनाने का था, जिनका तुमने इस काम के लिए पहले ही विचार कर लिया था और शायद वचन दे दिया था। अवश्य ही तुमको ऐसा करने का पूरा हक था। परन्तु इन सब बातों से संकेत मिलता था कि तुम गांधीजी और उनके गुट के सहयोग के अलावा कुछ और ही सोच रहे थे।

पंजाब के चुनाव, दिल्ली के चुनाव और आंध्र में नेल्लोर के संबंध में तुमने जो कार्रवाई की थी उससे मैं चौंक गया, कार्रवाई से इतना नहीं, जितना

उसके करने के ढंग से। तुमने महासमिति-कार्यालय से पूछे बिना या आंध्र के मामले में प्रान्तीय कांग्रेस-समिति से पूछे बिना सीधी कार्रवाई कर ली। पंजाब में तुमने महासमिति कार्यालय की तरफ से होनेवाली जांच को बन्द करने का तार भेज दिया। दिल्ली में तुमने प्रान्तीय कांग्रेस-कमेटी से पहले पूछे बिना कार्रवाई की। मेरा खुद का खयाल है कि तुम्हारा दिल्ली-संबंधी फैसला गलत था। लेकिन यह महत्व की बात नहीं है। मुझे ऐसा लगा कि तुमपर व्यक्तियों और गुटों का सीधा असर पड़ रहा है और किसी पदाधिकारी को जो अव्यक्तिगत और मामूली तरीका अपनाना चाहिए, उसे तुम कुचले दे रहे हो। यह ढंग मुझे खतरों से भरा हुआ मालूम हुआ।

तुम कहते हो कि "ऊपर से हस्तक्षेप करने की आदत में कोई कांग्रेस-अध्यक्ष मुझे मात नहीं दे सकता।" मैं महसूस करता हूं कि मैं दखल देने-वाला आदमी हूं। लेकिन जहांतक महासमिति के काम का संबंध, है मुझे याद नहीं पड़ता कि मैंने महासमिति के दफ्तर के काम में दखल दिया हो, हालांकि मैं अक्सर उसपर असर डालने की कोशिश करता था। मेरी जान-बूझकर यह नीति थी (और इस आशय के गश्ती पत्र जारी किये गए थे) कि दखल न दिया जाय और प्रान्तीय मामलों में महासमिति-कार्यालय भी हस्तक्षेप न करे, जबतक कि अनिवार्य न होजाय।

जब ये विविध घटनाएं मुझे बेचैन कर रही थीं तभी गांधीजी और वल्लभभाई के नाम तुम्हारे तार आये और इनका अर्थ यह समझा गया कि तुम नहीं चाहते थे कि हम कार्य-समिति की बैठक करें या मामूली कामकाज भी निपटायें। तुम्हारा कहना है कि तुम्हारा मतलब कोई ऐसी मनाही नहीं था, लेकिन तारों का जरूर ही यह मतलब निकल सकता था। यह संभव था कि तुमसे पूछ लिया जाता कि तुम्हारा क्या मतलब था, लेकिन यह अवांछनीय प्रतीत हुआ, क्योंकि इसका मतलब यह होता कि हम तुमको दबाकर कोई ऐसी चीज करना चाहते हैं, जो शायद तुम नहीं चाहते थे कि हम उस वक्त करें।

इन सब बातों से स्पष्ट होता था कि तुम अपनी ही पसंद के साथियों के साथ किसी मार्ग का अनुसरण करना चाहते थे, कार्यसमिति के पुराने सदस्य भार बन गये थे और उनकी कोई खास जरूरत नहीं रह

गई थी। उनके लिए त्याग-पत्र देना बिल्कुल जरूरी होगया। उनका ऐसा न करना तुम्हारे प्रति, देश के प्रति और अपने प्रति अन्याय होता और लोकतंत्री कार्य-प्रणाली के विपरीत होता। मैं नहीं समझता कि वे कैसे रुक सकते थे या उनके इस्तीफे से कैसे गत्यवरोध पैदा हुआ। त्यागपत्र न देने से अवरोध उत्पन्न हो जाता, क्योंकि उसके कारण तुम जो कारंवाई मुनासिब समझते वह नहीं कर सकते थे।

तुमने ठीक ही वताया है कि मैंने वेवकूफी का-सा रवैया अख्तियार किया। मैंने दरअसल इस्तीफा नहीं दिया और फिर भी ऐसा दिखाया मानो मैंने वैसा किया हो। इसका कारण यह था कि मैं अपने साथियों के सारे नजरिये से बिल्कुल असहमत था। मेरा जोरदार खयाल था कि उस परिस्थिति में मैं तुमको सहयोग नहीं दे सकता था। लेकिन उतना ही जोरदार मेरा खयाल यह था कि मैं एक तरह दूसरों से भी अलग हो रहा हूं। असल में यह दूसरा भाव अधिक प्रवल था, क्योंकि इसका अर्थ एक ऐसे अध्याय को खत्म करना था, जो लम्बा होगया था। 'नेशनल हेरल्ड' में मैंने जो लेखमाला लिखी उसका पहला लेख तुम पढ़ोगे तो शायद तुमको कुछ-कुछ पता लगेगा कि मेरा दिमाग किस तरह काम कर रहा था।

इस्तीफे के सामान्य पत्र में मेरे २२ फरवरीवाले वयान को शामिल करने का कोई सवाल नहीं था। मेरा बयान स्पष्ट ही निजी था और उसे और कुछ नहीं समझा जा सकता था। मुझे दूसरों के साथ त्यागपत्र में शामिल होने को वहुत दबाया गया था। मैंने इन्कार कर दिया था। मैंने उनका त्यागपत्र तुमको भेज दिये जाने के बाद तक देखा भी नहीं था।

मैं तुमको थोड़ा और समझा दूं कि पिछले दो-तीन महीने में मेरे मन में किस बात से वहुत बड़ी वेचैनी रही है। मैं दो बड़े कारणों से तुम्हारे चुनाव में खड़े होने के खिलाफ था : एक तो उस समय उसका यह अर्थ होता कि गांधीजी से संवंध टूट रहा है और मैं नहीं चाहता था कि ऐसा हो (इस बात की चर्चा करने की जरूरत नहीं है कि ऐसा क्यों होता। मुझे लगा कि ऐसा होगा।) दूसरे मैंने सोचा कि उससे सच्चे वामपक्ष को हानि होगी। वामपक्ष इतना शक्तिशाली नहीं था कि वह स्वयं भार को उठा ले और जब सचमुच कांग्रेस में मुकाबला होगा तो वामपक्ष हार

जायगा और फिर उसके विरुद्ध प्रतिक्रिया होगी। मैं इसे तो संभव समझता था कि तुम पट्टाभि के खिलाफ चुनाव जीत जाओगे, लेकिन मुझे बहुत संदेह था कि जिसे गांधीवाद कहते हैं, उसके साथ साफ लड़ाई में तुम कांग्रेस को अपने साथ ले जा सकोगे। अगर संयोगवश तुम कांग्रेस में बहुमत प्राप्त कर लेते तब भी गांधीजी के बिना देश में प्रबल समर्थन न मिलता और कारगर काम और इससे भी अधिक संग्राम के लिए तैयारी बहुत मुश्किल हो जाती। देश में पहले ही इतनी अधिक फूट फैलानेवाली वृत्तियां मौजूद थीं और उनपर काबू पाने के बजाय हम उन्हें बढ़ा देते। इस सबका नतीजा यह होता कि ठीक जिस समय हमें शक्ति की आवश्यकता थी तब हम राष्ट्रीय आन्दोलन को कमजोर कर देते। तुम्हारे दुबारा चुने जाने के मेरे विरोध के दो मुख्य कारण थे। बम्बई के कुछ मित्रों ने तुमसे जो कुछ कहा वह पूरी तरह सही नहीं था। मैंने तो यह कहा था कि अगर तुम्हारे कुछ निश्चित वामपक्षी सिद्धांत और नीतियां हैं तब तो तुमको दुबारा चुनाव में खड़े होने का कोई मतलब हो सकता है, क्योंकि तब तो चुनाव से लोगों को विचारों और नीतियों की शिक्षा मिलती। लेकिन थोड़े-बहुत व्यक्तिगत आधार पर चुनाव लड़ने में यह खूबी भी नहीं होती। जो हो, ऊपर दिये हुए कारणों से मैंने तुम्हारा चुनाव के लिए खड़ा होना वांछनीय नहीं समझा।

मेरे २६ जनवरी और २२ फरवरी के बयान जरूर ही कुछ भिन्न हैं, लेकिन मैं नहीं समझता कि उनसे नजरिये का कोई परिवर्तन प्रकट होता है। पहला बयान तुम्हारे चुनाव से पहले जारी हुआ था और मैं भरसक किसीका पक्ष नहीं लेना चाहता था। मुझे डा० पट्टाभि के लिए अपील करने को कहा गया था। यह मैंने मंजूर नहीं किया। इसलिए मेरा बयान जान-बूझकर हल्का कर दिया गया। बाद में कुछ और तथ्य मेरी जानकारी में आये। मैंने तुम्हारे चुनाव-संबंधी बयान देखे और कई और बातें हुईं, जिनका मैंने ऊपर उल्लेख किया है। मैंने यह भी देखा कि तुम्हारा तरह-तरह के लोगों से गहरा संबंध होगया था, जो तुमपर बहुत असर डाल रहे थे। इन व्यक्तियों में से कुछ स्वयं तो वांछनीय थे, लेकिन मेरे खयाल से वे किसी वामपक्षी मत अथवा किसी संगठित मत के प्रतिनिधि नहीं

थे। इसीलिए पारिभाषिक राजनैतिक अर्थ में मैं उन्हें साहसी कहता हूं। किसी आदमी में या राष्ट्र में साहस की वृत्ति होना अवश्य ही बहुत वांछनीय वस्तु है, परन्तु राजनैतिक संघर्ष में इस शब्द का एक खास अर्थ होता है। वह संबंधित व्यक्ति के लिए हरगिज बेइज्जती का शब्द नहीं है। मैंने साहसी वृत्ति को बिल्कुल पसंद नहीं किया और उसे हमारे काम के लिए हानिकारक समझा। अस्पष्ट वामपक्षी नारों के साथ कोई स्पष्ट वामपक्षी विचारधारा अथवा सिद्धान्तों का न होना इन वर्षों में यूरोप में बहुत नजर आया। इससे फासिज्म का विकास हुआ है और जनता के बहुत बड़े समुदाय गुमराह हुए हैं। भारत में इस तरह की घटना की संभावना से मेरा मन भर गया और मुझे बेचैनी हुई। अंतर्राष्ट्रीय मामलों में तुम्हारे विचार मुझसे भिन्न थे और हमारा नाजी जर्मनी अथवा फासिस्ट इटली की निंदा करना तुमको पूरी तरह पसंद नहीं था। इससे मेरी बैचैनी और बढ़ गई और सारे चित्र को देखते हुए मैंने उस दिशा की बिल्कुल कल्पना नहीं की, जिसमें तुम हमें ले जाना चाहते थे।

इस दिशा अथवा तुम्हारे विचारों के बारे में मुझे पूरा भरोसा नहीं था, हालांकि सामान्य संकेतों से मुझे अशांति हुई, इसलिए मैंने फरवरी के शुरू में किसी समय तुम्हें लिखा और अनुभव भी किया कि इन मामलों की सफाई के लिए तुम कोई नोट लिखो। तुम्हारे पास ऐसा करने के लिए समय नहीं था और फिर तुम बीमार होगये। मेरी कठिनाइयां बनी रहीं और मेरे चित्त को बेचैन करती रहीं। २२ फरवरी के मेरे बयान में और उसके बाद भी 'नेशनल हेरल्ड' में मेरे लेखों में इन सब बातों की ही झलक है। यह संभावना थी कि कार्यसमिति इधर-उधर के तत्वों से बनेगी, जिनका कोई संगत दृष्टिकोण नहीं होगा, लेकिन जिनकी एकमात्र कड़ी सामान्य विरोध की होगी। यह कोई अच्छी बात नहीं मालूम हुई। मैं नहीं समझ पाया कि मैं उसमें कैसे शरीक हो सकता था। मुझे पुरानी कार्यसमिति के साथ भी काफी मुश्किल पेश आ चुकी थी, हालांकि मत-भेदों के होते हुए भी हम एक-दूसरे को समझते थे और सालों तक साथ-साथ निभ सके थे। उस स्थिति में बने रहने की भी मेरी इच्छा नहीं थी, फिर भी छोटी-सी कार्यकारिणी में मेरा ऐसे लोगों के साथ संबंध कैसे

होता जिनके और मेरे बीच में एक-दूसरे को समझने की कड़ी भी नहीं थी।

एक निजी पहलू भी मैं तुमको साफ-साफ बता देना चाहता हूं। मैं बराबर महसूस करता रहा कि तुम दुबारा चुने जाने के लिए बेहद उत्सुक थे। राजनैतिक दृष्टि से उसमें कोई बेजा बात नहीं थी और तुम्हें दुबारा चुने जाने की इच्छा रखने का और उसके लिए काम करने का पूरा हक था। लेकिन इससे मुझे दुःख जरूर हुआ, क्योंकि मेरे खयाल से तुम्हारा इतना बड़ा पद था कि तुमको इस किस्म की चीज से ऊपर रहना चाहिए था। मुझे यह भी लगा कि यदि तुम दूसरी तरह से काम करते तो तुम नीतियों और गुटों पर कहीं अधिक प्रभाव डाल सकते थे।

तुमने मुझे यह याद दिलाया है कि वल्लभभाई ने तुम्हारे बारे में क्या कहा और बताया है कि मैंने इसके लिए उनकी आलोचना नहीं की। जहांतक चुनाव के समय जारी किये गए अलग-अलग बयानों का सम्बन्ध है, मुझे वे बिल्कुल पसन्द नहीं आये हैं। काश कोई भी बयान न दिया जाता! लेकिन जहांतक मुझे याद है, उनमें कोई ऐसी खास बात मुझे दिखाई नहीं दी, जिससे मेरा हस्तक्षेप जरूरी होता। वल्लभभाई के ये शब्द कि तुम्हारे चुनाव से देश के हित को हानि पहुंचेगी, सूरत भेजे गये एक खानगी तार में इस्तेमाल किये गए थे। मेरे खयाल से इसमें फर्क पड़ जाता है कि कोई बात किसी सार्वजनिक बयान में कही जाय या किसी निजी पत्र अथवा तार में। यह बात भी महत्वपूर्ण है कि यह संदेश तुम्हारे भाई को भेजा गया था। यह कहने में एक तेज बात है, मगर इसमें कोई बेइज्जती करने का इरादा नहीं मालूम होता। यदि वल्लभभाई की पक्की राय है कि हिंदुस्तान की भलाई के लिए गांधीजी का नेतृत्व आवश्यक है और तुम्हारे फिर से चुने जाने से हिंदुस्तान उस नेतृत्व से वंचित हो सकता है तो वह जरूर ऐसा सोच और कह सकते हैं। ठीक इसी तरह हम गांधीजी का कितना ही आदर करें तो भी हम इस फैसले पर पहुंच सकते हैं कि गांधीजी का नेतृत्व देश के लिए खतरनाक और हानिकारक है।

मैंने तुमको लिखा था कि तुम्हारे दुबारा चुनाव से कुछ हानि और

कुछ लाभ हुआ है। मेरी अब भी वही राय है, हालांकि लाभ से हानि अधिक हो सकती है। हानि इस अर्थ में कि इससे हमारे संगठन में फूट पड़ती है। लाभ यह हुआ कि इससे हमारे पुराने नेताओं में से कुछ लोगों का आत्मसंतोष हिल गया। मेरे मन में कोई शंका नहीं कि तुम्हारे पक्ष में राय बहुत-कुछ इस आत्मसंतोष के विरुद्ध थी और किसी हद तक उन तरीकों के खिलाफ थी, जो काम में लिये गए थे। मैंने यह बात गांधीजी और दूसरे लोगों को बार-बार और जोर के साथ बताई है और इसपर ध्यान देने की प्रार्थना की है। अध्यक्ष के चुनाव के मतदान के रूप में जो नाराजी जाहिर की गई उसमें सार था।

तुमने मुझे याद दिलाया है कि जहां एक तरफ मैं ऊपर से तुम्हारे दखल देने पर आपत्ति करता हूं वहां मैंने ४ फरवरी को तुम्हें लिखा था कि अध्यक्ष के नाते तुम बहुत कम अड़ते हो और निष्क्रिय रहते हो। यह सही है। मैंने जिस हस्तक्षेप का जिक्र किया वह तुम्हारे दुवारा चुनाव के ठीक पहले और ज्यादातर बाद में हुआ। इसका ताल्लुक पहले के काल से नहीं था। जब मैंने तुम्हारे अड़ने की बात कही तो मेरा मतलब पिछले साल कार्यसमिति में तुम्हारे रवैये से था। मैंने यह आशा रखी थी कि तुम वहां अधिक जोरदार नेतृत्व करोगे, हालांकि मैं फूट नहीं चाहता था। मैं यह भी नहीं चाहता था कि अध्यक्ष की हैसियत से तुम प्रान्तीय मामलों में दखल दो। तुमने इस बात का जिक्र किया है कि कार्य-समिति के कुछ सदस्य तुम्हारी अनुपस्थिति में इकट्ठे हुए और तुम्हारे पीठ-पीछे अध्यक्ष-पद के लिए डा. पट्टाभि को खड़ा करने का निश्चय किया। मेरा खयाल है कि इस बारे में वल्लभभाई के बयान से कुछ गलतफहमी पैदा होगई है। जहांतक मैं जानता हूं, ऐसी कोई बैठक नहीं हुई। बारडोली में हुआ यह था कि मौलाना आजाद पर गांधीजी और मैंने तथा दूसरों ने भी दबाव डाला कि वह खड़ा होना मंजूर कर लें। उनकी इच्छा नहीं थी। जिस दिन मैं बारडोली से रवाना हो रहा था (तुम्हारे रवाना होने के दूसरे दिन), उस दिन मैं गांधीजी से और दूसरे लोगों से विदा लेने गया। हममें से कुछ गांधीजी की कुटिया के बरामदे में खड़े थे। मैं भूल रहा हूं कि मौलाना और वल्लभभाई के सिवा वहां और कौन था। मौलाना ने फिर कहा कि उन्हें यह जिम्मे-

दारी उठाने में संकोच है। इसपर वल्लभभाई ने कहा कि अन्त में मौलाना इन्कार कर दें तो डा. पट्टाभि को खड़ा होने के लिए कहना चाहिए। मुझे डा. पट्टाभि का नाम इसके लिए पसन्द नहीं था, इसलिए इसका खंडन किये बगैर मैंने फिर कहा कि मौलाना को राजी करना ही चाहिए। थोड़ी देर बाद मैं बारडोली से चला आया। इलाहाबाद पहुंचने पर मुझे तार से यह सूचना मिली कि मौलानासाहब सहमत होगये हैं। मैं सीधा अल्मोड़ा चला गया और अध्यक्ष के चुनाव से पहले दिन तक वहां रहा।

रही बात 'लांछनोंवाले' प्रस्ताव की, सो हकीकत यह है। इस मामले की सफाई करने के लिए तुम्हें एक से ज्यादा बार दबाने के अलावा मेरी इस मामले में अधिक दिलचस्पी नहीं हुई। मैं समझता था कि तुम्हारी तरफ से सफाई हुए बिना गांधीजी और तुम मिलकर काम नहीं कर सकते। गांधीजी या राजेन्द्रबाबू या सरदार पटेल का इस बारे में क्या विचार था यह तो वे ही कह सकते हैं। उनका मुझपर निश्चित असर यह हुआ कि वे इसे बड़ा महत्त्व देते थे। जब हम त्रिपुरी पहुंचे तब मुझे फिर ऐसा ही कहा गया। मेरी अपनी निश्चित राय तो यह थी कि मामले को तुम या राजेन्द्रबाबू या दोनों संक्षिप्त वक्तव्यों द्वारा महासमिति में रख दो और इसके बारे में कोई प्रस्ताव न लाया जाय। और लोग इससे सहमत नहीं हुए। एक सुझाव यह दिया गया कि महासमिति के लिए प्रस्ताव का मसविदा तैयार किया जाय। मेरा खयाल है कि कांग्रेस से बचने का विचार नहीं था, बल्कि विषय-समिति शुरू होने से पहले वातावरण साफ करने का था। सदा की भांति प्रस्ताव का मसविदा बनाने को मुझसे कहा गया। मैंने कहा कि मैं सहमत नहीं हूं, मगर तुम्हारे दृष्टिकोण को यथासंभव व्यक्त करने की चेष्टा करूंगा। मैंने महासमिति के लिए प्रस्ताव का एक संक्षिप्त मसविदा बना दिया, जिसमें पुरानी कार्य-समिति और गांधीजी के नेतृत्व और नीति के प्रति विश्वास प्रकट किया गया और यह भी कहा गया कि उस नीति का कोई भंग नहीं होना चाहिए। उसमें न तो 'लांच्छनों' का जिक्र था और न गांधीजी की इच्छानुसार कार्यसमिति बनाने का। यह प्रस्ताव पसन्द नहीं किया गया और बाद में शायद और लोगों से सलाह करके राजेन्द्रबाबू ने एक लम्बा और संशोधित प्रस्ताव पेश किया (गोविन्द

वल्लभ पन्त तबतक नहीं पहुंचे थे)। मुझे यह प्रस्ताव पसन्द नहीं आया और मैंने ऐसा कहा। मैंने कहा कि मेरे खयाल से अपने-आपमें लांछनोंवाली धारा, जिस रूप में वह रखी गई थी, आपत्तिजनक नहीं थी, परन्तु फिर भी मुझे वह अवांछनीय मालूम हुई और यह कि उसपर रोष होगा, खास तौर पर चूंकि तुम बीमार थे। मुझे वताया गया कि प्रस्ताव में इस मामले का कुछ-न-कुछ जिक्र करना बहुत बड़े महत्व की बात थी, क्योंकि जिन लोगों के सम्मान पर कलंक लगाया गया था उनकी स्थिति की कुछ ऐसी सफाई किये बिना उनके लिए अपना सहयोग देना असंभव था। उनके काम करने के लिए यह भी बहुत जरूरी था और गांधीजी की नीति पर चलना भी। यह भी कहा गया कि उल्लेख अधिक-से-अधिक नरम और अव्यक्तिगत बना दिया गया है। इससे आगे वे नहीं जा सकते थे।

इसके बाद मुझे कुछ कहना नहीं था। मैंने स्पष्ट कर दिया कि कुछ बातों में मैं प्रस्ताव को दुर्भाग्यपूर्ण मानता था। लेकिन चूंकि यह उनके लिए सम्मान का विषय था, इसलिए मेरा उसके साथ और अधिक वास्ता नहीं रहा। मैं उसकी चर्चा में भाग नहीं लूंगा।

उसके बाद मुझे मालूम नहीं क्या हुआ। महासमिति की बैठक में ही मैंने देखा कि गोविन्दवल्लभ पन्त उसे पेश करनेवाले थे। तुम वहां मौजूद थे। बाद में जब प्रस्ताव विषय-समिति को दिया गया तब मैं प्रस्ताव के कुछ समर्थकों के पास गया और फिर सुझाव दिया कि कुछ परिवर्तन कर दिये जायं। मैंने बताया कि मूल प्रस्ताव महासमिति के लिए था, ताकि इस घटना और विवाद को समाप्त किया जाय; परन्तु अब चूंकि वह कांग्रेस में जा रहा था, इसलिए उसपर दूसरी दृष्टि से विचार करना चाहिए। मुझे फिर कहा गया कि यह इज्जत का सवाल था और जबतक उसकी सफाई नहीं होती तबतक वह सहयोग की दृष्टि से कैसे सोच सकते थे। तुमको याद होगा कि कांग्रेस से पहले उन्होंने तुमसे कहा था कि वह तुम्हारे साथ सहयोग नहीं कर सकेंगे। वह इस प्रस्ताव को एक ऐसा जरिया समझते थे, जिसके कारण सहयोग का प्रयत्न हो सके। इसके अलावा कोई जरिया नहीं था।

खुले अधिवेशन के पहले दिन जब तुम बहुत बीमार थे, मैंने प्रस्ताव

को बदलवाने की एक और जोरदार कोशिश की। मुझे सफलता नहीं मिली, हालांकि श्री अणे के महासमिति में भेजने के प्रस्ताव को मंजूर करने में सब सहमत थे। श्री अणे का यह खयाल मालूम होता था और उनकी बात का हम सबपर यह असर पड़ा कि उनका प्रस्ताव बंगाल के बहुत-से भाइयों को पसन्द था। हमपर यह भी असर पड़ा (वह गलत हो सकता है) कि तुम्हें भी उनका प्रस्ताव पसन्द था। बाद में जो कुछ हुआ वह तुमको मालूम है।

दूसरे दिन जब कांग्रेस के अधिवेशन में, जो विषय-समिति के मंडप में हुआ था, गोविन्दवल्लभ पन्त प्रस्ताव पेश कर रहे थे तब सुरेश मजूमदार मेरे पास आये। उन्होंने सुझाया कि प्रस्ताव महासमिति को भेज दिया जाय अर्थात् उन्होंने श्री अणे के प्रस्ताव को फिर से ताजा किया। उन्होंने कहा कि पिछली रात कुछ गलतफहमी होगई थी और अब यह प्रस्ताव फौरन मान लिया जायगा। मैंने उन्हें बताया कि खास तौर पर इस स्थिति में जब पन्तजी सचमुच मामले को पेश कर रहे थे, मैं लाचार था। मैं पहले कई तरह से भरसक प्रयत्न कर चुका था और अब संबंधित पक्षों के पास जाना बेहतर होगा। मुझे मालूम नहीं, बाद में उन्होंने क्या किया।

रही बात यह कि त्रिपुरी में और प्रतिनिधियों के शिविर में पर्दे के पीछे क्या-क्या हो रहा था, सो इस बारे में शायद तुम्हारी जानकारी मुझसे अधिक है। मैं तो अपने तम्बू से बाहर भी नहीं निकला, सिवा विशेष समारोहों के लिए और मेरे पास मिलनेवाले भी बहुत ही थोड़े आये। कुछ मैं मिस्री प्रतिनिधियों के साथ भी लगा रहा।

तुमने मेरे 'मवक्किलों' का जिक्र किया हैं। मुझे डर है कि ये मवक्किल मेरी वकालत से बहुत खुश नहीं हैं और मैं उनका अप्रिय बनने में सफल होगया हूं। कितनी बहादुरी की बात है कि लगभग हरेक को नाखुश कर दिया जाय!

यह 'लांच्छनों' वाला प्रस्ताव अवैधानिक था या अनियमित, यह फैसला करना तुम्हारा काम है। इस सवाल पर मैं अपनी राय दूं, इसमें बहुत सार नहीं है। मुझे कुदरती तौर पर दिलचस्पी है कि कांग्रेस का काम चलता रहे और अवरोध की भावना, जो आज हममें है, दूर हो जाय। मुझे आश्चर्य है कि तुम ऐसा सोचते हो कि मैंने तुम्हारे विरुद्ध सार्वजनिक आन्दोलन छेड़

दिया है। गांधीजी के साथ मेरी बात होने के बाद मुझे बड़ी चिन्ता हुई और मैंने स्थिति पर देर तक विचार किया। मेरा दुर्भाग्य है कि अन्तर्राष्ट्रीय घटनाओं का मुझपर जितना असर होना चाहिए, उससे अधिक होता है। यूरोप में बहुत गंभीर संकट पैदा होगया था, जिसका परिणाम युद्ध हो सकता था। मुझे लगा कि हमें निष्क्रिय होकर घटनाओं का इंतजार नहीं करना चाहिए। गांधीजी के नाम शरत् के तार से पता चला कि वह उनसे मिलने नहीं आ रहे थे। इस प्रकार जब घटनाएं तेजी से हो रही थीं तब भी कुछ नहीं किया जा रहा था। इसपर मैंने वह तार भेजने का निश्चय किया। मैंने वह तार बाद में गांधीजी को तथा और एक-दो को बताया। मैंने किसी अखबारवाले को न तो दिया, न दिखाया। सच तो यह है कि मैंने उस समय गांधीजी के साथ एक-दो व्यक्तियों के अलावा किसीसे उसका जिक्र भी नहीं किया। अब भी मैंने औरों को नहीं बताया है। शायद किसीको दूसरों से जानकारी मिली और उसने अखबारवालों को दे दी।

क्या तुम्हारा खयाल नहीं है कि त्रिपुरी से पहले कार्यसमिति के बारह सदस्यों के त्यागपत्र और कांग्रेस के बाद की स्थिति की तुलना सही नहीं है? उनके इस्तीफों के कारण कोई अवरोध नहीं था या नहीं होना चाहिए था। अवरोध हो जाता यदि वे त्यागपत्र न देकर काम करने का आग्रह करते। उनके त्यागपत्रों पर नाराजी जाहिर न करके, मेरे खयाल से, व्यक्तिगत और सार्वजनिक दोनों कारणों से उनके लिए और कोई रास्ता खुला नहीं था।

जब मैंने दिल्ली से तुमको तार भेजा तो मैं अच्छी तरह जानता था कि तुम वहां नहीं आ सकते। मैं चाहता था कि तुम यह सुझाव दो कि गांधीजी तुमसे मिलने धनबाद चले जायं। मेरा खयाल है कि तुम उन्हें बुलाते तो वह चले जाते। यह स्वाभाविक था कि बिना बुलाये जाने में उन्हें संकोच हुआ। त्रिपुरी का प्रस्ताव विहित था अथवा अविहित, प्रारम्भ तुम्हारे हाथ में था। जबतक उन्हें यह ज्ञान न हो कि तुमपर क्या प्रतिक्रिया होगी, वह कोई कदम नहीं उठा सकते थे। शायद तुमको ऐसा लगा कि वह धनबाद न आ सकें। जब तुम्हारे सेक्रेटरी ने मुझे यहां टेलीफोन किया तब गांधीजी दिल्ली जाने के लिए सचमुच स्टेशन पर जा रहे थे। अगर निकट भविष्य

में रूबरू मिलना कठिन था तो भी मेरे खयाल से तुम एक-दूसरे के साथ पत्र-व्यवहार करके जमीन साफ कर सकते थे। तुम्हारा यह कहना मेरे प्रति बड़ा अन्याय है कि मैंने वह तार दिल्ली से तुमको परेशान करने या तुम्हारे विरुद्ध किसी आन्दोलन का अगुआ वनने के लिए भेजा।

मैं यह भी कह दूं कि जहांतक मेरा संबंध है, मुझे गांधीजी का यह विचार बिल्कुल पसन्द नहीं आया कि वह ग्वायर के निर्णय की प्रतीक्षा में दिल्ली ठहरे रहें। मुझे उनका उपवास या ग्वायर के पास मामला भेजना भी अच्छा नहीं लगा। समझौते की जिन शर्तों के अनुसार गांधीजी का उपवास खत्म हुआ उनका मैंने बहुत विचार नहीं किया। मैंने उनका उपवास समाप्त होने पर प्रसन्नता प्रकट कर दी और बस।

यह पत्र बहुत ही लम्बा होगया और मैंने उसे लगभग एक लगातार बैठक में तुम्हारा पत्र पाने के तुरन्त बाद लिखा है। फिर भी और कई ऐसी बातें हैं, जिनका तुमने उल्लेख किया है और जिनके बारे में मैं कुछ कह सकता था। तुमने मेरी जो कमजोरियां बताई हैं उनकी चर्चा करना मेरे-लिए जरूरी नहीं है। मैं उन्हें स्वीकार करता हूं और मुझे उनका दुःख है। तुम्हारा यह कहना ठीक है कि अध्यक्ष के रूप में मैं अक्सर एक सचिव अथवा बड़े क्लर्क की तरह काम करता था। मुझे अपना सचिव और क्लर्क आप ही बनने की आदत बहुत अर्से से है और मुझे डर है कि मैं इस तरह से दूसरों के अधिकार का अतिक्रमण करता हूं। यह भी सच है कि मेरे कारण कांग्रेस के प्रस्ताव लम्बे, बातूनी और निबंधों जैसे हो जाते हैं। मेरा खयाल है कि कार्यसमिति में मैं बहुत ज्यादा बोलता था और हमेशा जैसा चाहिए वैसा बर्ताव नहीं करता था।

तुम्हारे वामपंथी और दक्षिणपंथी शब्द-प्रयोग पर मैंने आपत्ति की, क्योंकि मेरे खयाल से तुम उन्हें अस्पष्ट और ढीले-ढाले रूप में इस्तेमाल कर रहे थे। अवश्य ही वामपंथी और दक्षिणपंथी जैसी चीज तो है। वह कांग्रेस में भी मौजूद है और देश में भी। लेकिन यदि ये शब्द ठीक तौर पर काम में न लिये जायं तो उनसे गड़बड़ पैदा हो सकती है और होती है।

मैं नहीं सोचता कि मैंने कभी यह कहा कि राजकोट और जयपुर दूसरे विषयों को आच्छादित कर लेते हैं। शायद मैंने यह कहा था कि राज-

कोट अर्थात् गांधीजी का उपवास और उसके विविध गूढ़ार्थ कई ढंग से वातावरण पर छाये रहे।

बंबई के मालिक-मजदूर के झगड़ों-संबंधी बिल के बारे में यह बात है कि मैं उसके कानून बन जाने के बाद हिन्दुस्तान पहुंचा। बंबई में गोली भी उससे पहले चल चुकी थी। इसका उल्लेख मैं एक तथ्य के रूप में ही कर रहा हूं, न कि बहाने के रूप में।

उत्तर प्रदेश कांग्रेस में हमारे यहां एक नियम है कि प्रांतीय कांग्रेस कमेटी से लगाकर गांव तक कोई आदमी किसी कमेटी का लगातार दो वर्ष तक अध्यक्ष नहीं हो सकता।

तुमने विविध प्रान्तों से प्रतिनिधियों को त्रिपुरी ले जाने में भ्रष्टाचार का हवाला दिया है। जहांतक मेरे अपने प्रान्त का संबंध है, मेरा विश्वास है कि इस किस्म की कोई चीज की गई थी, हालांकि मुझे पक्की तरह से उसका पता नहीं है। शायद दूसरी जगह भी ऐसा किया गया हो। मेरा सुझाव है कि सभी प्रान्तों में जांच करा ली जाय। इससे हमारे संगठन को बल मिलेगा। तुम मुझसे पंतजी के प्रस्ताव का मेरा अर्थ पूछते हो। मैं नहीं समझता कि वह अविश्वास का प्रस्ताव था, लेकिन वह ऐसा अवश्य था, जिससे तुम्हारे निर्णय में पूर्ण विश्वास के अभाव का संकेत मिलता था। रचनात्मक रूप में वह गांधीजी के प्रति विश्वास का वोट है।

मैं समाजवादी हूं अथवा व्यक्तिवादी ? क्या ये दोनों शब्द परस्पर विरोधी हैं ? क्या हम सब ऐसे सम्पूर्ण मानव हैं कि हम अपनी व्याख्या एक-दो शब्दों में ठीक-ठीक कर सकते हैं ? मैं मानता हूं कि स्वभाव और शिक्षा-दीक्षा से मैं व्यक्तिवादी हूं और बुद्धि से एक समाजवादी हूं, फिर चाहे इसका कुछ भी अर्थ हो। मैं आशा करता हूं कि समाजवाद व्यक्तित्व का हनन अथवा दमन नहीं करता। असल में इसके प्रति मेरा आकर्षण इसलिए है कि वह असंख्य व्यक्तियों को आर्थिक और सांस्कृतिक गुलामी से मुक्त कर देगा। परन्तु चर्चा के लिए मेरा विषय रोचक नहीं है, खास तौर पर एक अत्यन्त लम्बे पत्र के ठेठ अन्त में। इसे यहीं छोड़ दो कि मैं एक असंतोषजनक मानव-प्राणी हूं, जिसको अपने-आपसे और संसार से असंतोष है और जिस छोटी-सी दुनिया में वह रहता है, वह भी उसे बहुत पसन्द नहीं करती।

राष्ट्रीय अथवा अंतर्राष्ट्रीय मामलों के बारे में अपने विचारों पर तड़के ही लिखने का साहस नहीं होता। आम तौर पर मैं उनके बारे में चुप नहीं रहता। तुमने देखा है कि मैं बोलता बहुत हूं और लिखता और भी अधिक हूं। अभी इसे यहीं छोड़ देता हूं। परन्तु यह जरूर कहूंगा कि जहां मैं अक्सर हारे हुए पक्षों की हिमायत और जर्मनी तथा इटली जैसे देशों की निन्दा करता हूं, वहां मैं नहीं समझता कि मैंने ब्रिटिश और फ्रेंच साम्राज्यवाद को कभी सदाचार का प्रमाणपत्र दिया है।

एक-दो दिन हुए, मैंने तुम्हें एक लेखमाला के कुछ लेख भेजे थे, जो मैंने त्रिपुरी से पहले 'नेशनल हेरल्ड' को दिये थे। उनमें से एक लेख रह गया था। अब पूरे लेख अलग से भेज रहा हूं। 'फ्री प्रेस जर्नल' या और किसी पत्र के लिए हाल में मैंने कोई लेख नहीं लिखा।

सस्नेह तुम्हारा,
जवाहरलाल

श्री सुभाषचन्द्र बोस,
कांग्रेस अध्यक्ष,
डाकघर जीलगोरा,
जिला मानभूम

२५९. शरत्चन्द्र बोस की ओर से

कलकत्ता
४ अप्रैल १९३९

प्रिय जवाहरलाल,

आपके २४ तारीख के लम्बे पत्र के लिए अनेक धन्यवाद। हालांकि गांधीजी को २१ तारीख को भेजे मेरे पत्र की लगभग हर बात से आप असहमत हैं, फिर भी आपके पत्र को पढ़कर मुझे एक तरह से खुशी हुई, क्योंकि उसमें दूसरे व्यक्ति का दृष्टि-बिंदु मिला। उसके जवाब में देरी होने का मुझे बहुत दुःख है। देरी की वजह मेरी खराब तंदुरुस्ती थी, जो दुर्भाग्य से अब भी वैसी ही चल रही है।

आपका यह कहना बिल्कुल सही है कि मेरे पत्र में नीति और कार्यक्रमों की नहीं, निजी प्रश्नों की चर्चा है। लेकिन ऐसा जान-बूझकर ही किया गया है। ऐसी बात भी नहीं कि मैं सिद्धान्तों और व्यक्तियों के बीच

के अंतर और उनके सापेक्ष महत्व को नहीं जानता। सच तो यह है कि अगर मेरे लिए संभव होता तो आपकी भांति मैं भी सिद्धान्तों और कार्य-क्रमों के स्तर पर ही चर्चा करना पसंद करता, लेकिन दुर्भाग्य से राज-नीति में हम हमेशा कोरे सिद्धान्तों पर ही जीवित नहीं रह सकते। वर्त्त-मान विवाद में तो केवल सिद्धान्तों और कार्यक्रमों तक अपने-आपको सीमित रखना और भी कठिन है, क्योंकि अध्यक्ष के चुनाव का शुरू से ही, यदि पूरी तरह नहीं तो बहुत-कुछ, वैयक्तिक रूप रहा है।

आप खुद कहते हैं कि मेरे उठाने के पहले से ही वैयक्तिक सवाल मौजूद था और त्रिपुरी में इसने दूसरे मुद्दों के विचार पर भी अपना रंग चढ़ा दिया। इसमें मैं आपसे पूरी तरह सहमत हूं। असल में, मैं तो यह भी कहूंगा कि दूसरे सब मुद्दे प्रायः भुला दिये गए थे। इसीलिए मैंने वैय-क्तिक प्रश्नों को खोलकर रख दिया और महात्माजी से अनुरोध किया कि वह लीक में से हमें बाहर कर दें। सिद्धान्तों आदि को लेकर व्यर्थ बात करने से कोई लाभ नहीं था, जबकि असली रोड़े तो व्यक्तिगत विरोध और द्वेष हैं—वह विद्वेष, जो सुभाष के किसी कार्य से या उनके सोचने के ढंग से पैदा नहीं हुआ, बल्कि पुरानी कार्य-समिति के कुछ सदस्यों के रुख और कामों से उपजा है।

इससे मुझे व्यक्तिगत मतभेदों की शुरुआत के आपके विवरण में एक बहुत गंभीर छूट का पता चला है। माना जाता है कि अपने चंद पुराने साथियों के बारे में सुभाष ने कुछ कहा। आपकी धारणा है कि यह मत-भेद उसी बात से आरंभ हुआ। यह सही नहीं है, क्योंकि आपके विवरण में शुरुआत की और उस घटना के सबसे महत्वपूर्ण भाग की उपेक्षा है। गलतफहमी के इस अध्याय का प्रारम्भ बारडोली में हुआ, जहां एक खास दल अगले साल के कांग्रेस के अध्यक्ष के सवाल को तय करने के लिए इकट्ठा हुआ और अध्यक्ष और कार्य-समिति के कुछ दूसरे सदस्यों की बिना जानकारी के और उनके पीठ-पीछे उसने कुछ निश्चय कर लिये और कुछ व्यवस्थाएं भी कर डालीं। ये विचित्र और गुप्त कार्यवाहियां मेरी समझ से एकदम परे हैं। मुझे ताज्जुब है कि क्या आपको उनमें साथियों के बीच का वह विश्वास और वह सद्भाव दिखाई देता है,

जिसको आप कहते हैं कि आप बहुत महत्व देते हैं ? क्या आप ऐसे मामले में अध्यक्ष को विश्वास में लेने की अनिच्छा को उचित ठहरा सकते हैं, जिसका कांग्रेस और उसके अध्यक्ष दोनों के साथ अत्यन्त गहरा संबंध आता है और जिसपर अध्यक्ष को अपनी बात कहने का अधिकार था ? हां, यह बात अलग है कि यह औचित्य अध्यक्ष के प्रति महज व्यक्तिगत विद्वेष से अथवा उसके सामने दिल खोलकर बात कहने की अनिच्छा से उत्पन्न हुआ हो ।

जहांतक मुझे पता है, सुभाष ने अपनी तरफ से ऐसे व्यवहार के लिए कोई अवसर नहीं दिया । उसने अपने पूरे कार्य-काल में एक ओर गांधीजी को और दूसरी ओर कार्य-समिति के अपने साथियों को भी पूरा-पूरा सहयोग दिया । कार्य-समिति की बारडोलीवाली बैठक की तारीख तक उसके और उसके साथियों के बीच किसी भी प्रकार की गलतफहमी की छाया तक नहीं थी । चुनाव के बाद भी गांधीजी को पूरे दिल से सहयोग देने के अपने इरादे में वह कभी कच्चा नहीं पड़ा । जब हम सब बारडोली में थे, उस समय उसके साथियों ने अध्यक्ष के चुनाव के प्रश्न को उसके सामने क्यों नहीं रक्खा और इसपर सांगोपांग विचार क्यों नहीं किया ? त्रिपुरी में पहली बार मैंने सुना कि सरदार को और कुछ दूसरे लोगों को भी पिछले सितम्बर में महासमिति की दिल्लीवाली बैठक के सुभाष द्वारा संचालन के संबंध में शिकायत रही, जबकि उसने समाजवादी दल के कुछ सदस्यों को नागरिक स्वाधीनता के प्रस्ताव पर विस्तार से चर्चा करने की अनुमति दी । उनका यह भी कहना था कि इससे सुभाष में उनका विश्वास डिग गया । दिल्ली की बैठक के बाद जब हम वर्धा और बारडोली में मिले तो इस शिकायत का इशारा तक भी नहीं किया गया ।

वास्तव में अगले वर्ष के लिए अध्यक्ष के चुनाव के संबंध में गुप्त रूप से बारडोली में हुए विचार-विमर्श और लोगों में खुलेपन की कमी के बारे में मैं जितना सोचता हूं उतना मुझे लगता है, मानों एक षड्यंत्रकारी दल ने कोई साजिश की है, जो चाहता है कि उसे शाहंशाह बनानेवाला समझा जाय—उसके हाथ में सारी सक्रिय शक्ति रहे—और जो कांग्रेस को अपनी इच्छाओं के स्वर में बुलवाना चाहता है ।

आपके सामने मैं स्पष्ट रूप से स्वीकार करूंगा कि साथियों के रूप में काम करने और टीम वनाने की दृष्टि से पुरानी कार्य-समिति के कुछ सदस्यों में लगभग पूरी तरह से विश्वास खो चुका हूं। ऐसा मैंने इच्छापूर्वक अथवा सहज भाव से नहीं किया। मेरे इन पुराने साथियों ने स्वयं एक-एक कदम करके मुझे इस निराशा तक पहुंचाया है। इस समाचार ने कि ये लोग बारडोली में इकट्ठे हुए और इन्होंने अध्यक्ष के पीठ-पीछे अध्यक्षता के बारे में निर्णय कर लिया, मुझे गहरी चोट पहुंचाई और इनकी सद्भावना और वफादारी में मेरे विश्वास को, जो कि उस समय तक अटल था, हिला दिया। फिर अध्यक्ष के चुनाव के बारे में बयान और पत्र-व्यवहार निकला; परन्तु त्रिपुरी में मैंने जो कुछ देखा और मुझे अनुभव कराया गया उसके मुकाबले में ये चीजें बड़ी छोटी थीं। वहांपर मैंने जो अनुदारता और तंगदिली देखी, जो कुछ मामलों में कपट और द्वेष की हद तक पहुंच गई थी, उससे मैं दंग रह गया।

मैंने चंद लोगों के बारे में जो बातें आपको बताईं उन्हें वैसा मान लेना आपको मुश्किल लगे तो मुझे अचरज नहीं होगा। दूसरों के बारे में ऐसी बातों पर विश्वास करना मनुष्य पसंद नहीं करता, साथियों के बारे में तो और भी नहीं। फिर आपका जैसा स्वभाव और शिक्षण है उसे देखते हुए आपके लिए यह और भी मुश्किल होगा कि आप जिन व्यक्तियों के साथ जुड़े हुए हैं, उनके बारे में बुरा विचार रक्खें। क्या विश्वास करने की इस असमर्थता की मिसाल हमें संसार में नहीं मिलती कि मौजूदा ब्रिटिश सरकार के सदस्यों के बीच इटन और हैरो में आचार के स्तरों और मूल्यों के जो तरीके व्यवहार में आते हैं, दुनिया में उनसे जुदा तरीके भी हैं? उनका विश्वास है कि हिटलर और मुसोलिनी सबसे अच्छे हैं और उन्हें तब गहरा धक्का लगता है जब उन्हें पता चलता है कि ये तानाशाह क्रिकेट, स्कूल के दिनों के पुराने संबंध, आदि की कद्र नहीं करते हैं। साथ-ही-साथ आप व्यक्तिवादी हैं। जैसाकि आप स्वयं कहते हैं, आप किसी दल या किसी दूसरे आदमी तक की मदद के बिना अकेले ही काम कर सकते हैं। जिस प्रकार की राजनीति में आपको रुचि नहीं है, उसकी तरफ से आप इस तरह अपना मुंह फेर सकते हैं, मानों वह है ही नहीं। परन्तु हर आदमी

इतना भाग्यशाली नहीं होता कि वह राजनीति की चीजों को नजरंदाज कर सके। स्वभावतः वे वहां की गन्दगी और बदबू दोनों से घबड़ा उठते हैं और घबराहट में उनकी जबान से ऐसी भाषा निकल पड़ती है, जिसे उन लोगों के लिए समझना मुश्किल होता है, जिन्होंने जिन्दगी के गंदे पहलू को न देखने का निश्चय कर लिया है।

मैंने जो आरोप लगाये हैं, उनमें कुछ तो मेरे स्वयं के अन्वेषण द्वारा प्रमाणित होते हैं और कुछ ऐसे लोगों की साक्षी द्वारा, जिनके कथनों पर मेरा पूरा विश्वास है। मैंने सिर्फ सुनी-सुनाई बात या अफवाह के आधार पर कुछ नहीं कहा है। अगर मैं वैसा करता तो इन इलजामों की फेहरिस्त और अधिक लम्बी हो जाती या हो सकती। अगर मौका आया तो मैं अपने आरोपों के समर्थन में सारी सामग्री को उन व्यक्तियों के सामने अवश्य ही रख दूंगा, जिनका वास्ता सचाई का पता लगाने से रहता है। परन्तु सामान्य तौर पर मैं कह सकता हूं कि सुभाष के पुराने साथियों का रुख इतना खुला और साफ था कि यदि कानूनी कार्रवाई के लिए जिस प्रकार के सबूतों की आवश्यकता होती है, उनकी जरूरत यहां भी समझी जाय तो मुझे आश्चर्य ही होगा। अगर मेरे इलजामों के बारे में सचाई का पता लगाने में आपकी रुचि हो—वास्तविक, न कि कानूनी सचाई— तो आपको अलग-अलग क्षेत्रों में पूछताछ करनी पड़ेगी और आप अपनें-आपको संतुष्ट कर सकेंगे कि हर चीज, जो मैंने लिखी है, तथ्य पर आधारित है। उनकी ओर से हाल ही में जो इन्कारी आई है, उसके होते हुए भी, मैं यही कहता हूं। त्रिपुरी में उन्होंने जो पार्ट अदा किया, उससे मुझे जितना आश्चर्य हुआ उससे ज्यादा आश्चर्य मुझे वास्तव में उनकी इस इन्कारी से हुआ है। अब मैं साफ तौर से समझता हूं कि कांग्रेस के उच्च क्षेत्रों में 'सत्य और अहिंसा' का क्या अर्थ है।

मुझे डर है कि कांग्रेस के मंत्रियों के बारे में मैंने जो टिप्पणी की, उसको आप ठीक तरह से नहीं समझ पाये। उनके कांग्रेस की कार्यवाहियों में हिस्सा लेने के बारे में मुझे कोई ऐतराज नहीं है, परन्तु आप आदमी को पूरी तरह पद से पृथक नहीं कर सकते, और कांग्रेस के काम में मंत्रियों की मौजूदगी तथा उनके सक्रिय भाग लेने के फलितार्थों के प्रति हमें जागरूक रहना पड़ता

है, खास तौर पर इस प्रकार के विवाद में, जो सुभाष के चुनाव पर उठाया गया था। प्रान्तीय सरकारों के सदस्यों के रूप में उनके पास बड़ी ताकत और साधन हैं, जिनमें दूसरों पर अनुग्रह करना भी शामिल है। गैर-सरकारी कांग्रेसी सदस्यों के पास इस शक्ति और इन साधनों का संतुलन करने के लिए कोई चीज नहीं है। व्यावहारिक दृष्टि से मंत्रियों के मुकाबले कांग्रेस के गैर-सरकारी सदस्य निश्चित रूप से अलाभ की स्थिति में हैं, क्योंकि मंत्रियों का सरकारी असर तो पड़ेगा ही, चाहे वे स्वयं इसका उपयोग न भी करना चाहें, हालांकि उनसे ऐसी अपेक्षा रखना कि वे उपयोग नहीं करना चाहेंगे, जरूरत से ज्यादा होगा। इसके साथ ही अगर वे गतिहीन हो जायं और वर्तमान व्यवस्था को बनाये रखने में ही रुचि रक्खें तो उनका असर और उनकी आवाज कांग्रेस की गतिशीलता में निश्चय ही बाधक होगी। पद-ग्रहणवाला प्रस्ताव मंजूर होने के बाद से प्रान्तों में और कांग्रेस के संगठन में जो परिवर्तन हुए हैं, उनसे सम्पर्क रखनेवाला हर व्यक्ति जानता है कि यह एक खतरा पैदा हो गया है। होनेवाली चीज की ओर से आंखें मूंद लेने में कोई फायदा नहीं।

इसके अतिरिक्त आपको यह याद रखना है कि त्रिपुरी में मंत्रियों ने अपने-आपको विषय-समिति और खुले अधिवेशन में वाद-विवाद में हिस्सा लेने तक ही सीमित नहीं रखा, उन्होंने सक्रिय होकर और डटकर प्रचार किया, और इस उद्देश्य से वे प्रतिनिधियों के कैंपों में भी चक्कर लगाते रहे। वैधानिक दृष्टि से देखें तो उनके आचरण का अर्थ यही था। अपने-अपने प्रांतों में सुभाष के खिलाफ मंत्री लगातार प्रचार करते रहे। इसके बावजूद जब सुभाष और पुरानी कार्य-समिति के कुछ सदस्यों के बीच चुनाव का मसला आया तब प्रांतीय कांग्रेस द्वारा चुने गये प्रतिनिधियों ने सुभाष के पक्ष में ही घोषणा की। मंत्री इस फैसले को अंतिम फैसला स्वीकार करने को तैयार नहीं थे और उसे पलटने के लिए उन्होंने प्रयत्न किया। उन्हें भय था कि अध्यक्ष के चुनाव के परिणाम का मतलब होगा संसदीय कार्यक्रम में परिवर्तन। अंततोगत्वा वे सफल हो गये। अब सवाल यह है मतदाताओं के निर्णय को वफादारी के साथ स्वीकार कर लेने के उनके रास्ते में क्या रुकावट थी? जाहिरा तौर पर यह स्पष्ट रुकावट पुरानी

कार्य-समिति के सदस्यों के प्रति उनकी वफादारी थी। ऐसी दशा में उन खास लोगों का मामला उठा, जिन्होंने एक स्वतंत्र चुनाव के निर्णय को नहीं माना, बल्कि उलटे उन्होंने उसे रद्द करने की कोशिश की और अंत में ऐसा करने में वे कामयाब हो गये। मैं नहीं सोचता कि ऐसा हो सकता था, अगर संबंधित व्यक्तियों के पीछे प्रांतीय सरकारों की प्रतिष्ठा और शक्ति नहीं होती। इतने पर भी यदि आपको यह विश्वास न हो कि मंत्रियों का प्रभाव कांग्रेस के स्वतंत्र जनतांत्रिक निर्णयों को उलट सकता है तब मैं आपको दूसरे किसी प्रकार से अपनी राय का नहीं बना सकता।

कांग्रेस में एकता की जरूरत के लिए जितने आप जागरूक हैं, उतना मैं भी हूं। परन्तु हमें सोचना यह है कि इस एकता को कैसे लाया जाय? क्या किसी एक आदमी के पक्ष में पद त्यागकर यानी 'नेता-सिद्धांत' को स्वीकार करके, या हमेशा के लिए किसी गुट के हाथों में सत्ता सौंप करके, अथवा महत्वपूर्ण विचारधाराओं को एक स्थान पर लाकर और कोई सर्व-सम्मत कार्यक्रम अंगीकार करके, या द्विदलीय प्रणाली को लाकर, जिसमें बहुमत-दल शासन चलायेगा और अल्पमतवाला दल विरोध में रहेगा? इन प्रश्नों का जवाब दिया ही जाना है। नीतियों और कार्यक्रमों के सवाल को लेने से भी पहले, कांग्रेस को किस तरीके से चलाया जाय, उसके बारे में हमें अपने विचारों को स्पष्ट करना है। एक स्वीकृत वैधानिक नियम के अभाव में पद के लिए भ्रमपूर्ण संघर्ष और परिणामस्वरूप फूट का उठ खड़ा होना निश्चित है। सच्ची एकता को प्राप्त किये बिना दो दलों में से एक दल को अपने दुःख भूल जाने की सलाह देने का ज्यादा असर होना संभव नहीं है, खासतौर पर तब जबकि दूसरा दल अपनी निजी बेजारी को भूल जाने में अपनी असमर्थता दिखाता हो और अपनी बात को अंत तक ले जाने के लिए तुला हो। ऐसा मालूम होता है कि आप यह महसूस नहीं कर सके हैं कि पंडित गोविंदवल्लभ पंत का-सा कोई प्रस्ताव निश्चित रूप से फूट की ओर ले जायगा और कांग्रेस के विभिन्न गुटों के बीच, भविष्य में, सहयोग में अड़चन पैदा करेगा। अब भी देश में इस प्रस्ताव को लेकर जो भावना उठ रही है, उसकी शक्ति को आप नजरन्दाज करते मालूम होते हैं। देश के विभिन्न भागों में इसमें कमी-बेशी हो सकती है, लेकिन इसमें कोई संदेह नहीं कि

वह चारों ओर फैली है। प्रस्ताव और उसके द्वारा दिखाई गई वैयक्तिक कटुता दोनों ने कांग्रेस की एकता पर गहरी चोट की है। अंत में परिणाम यह होगा कि या तो वे सभी प्रगतिशील तत्वों को कांग्रेस से बाहर निकाल देंगे, जिससे असली ताकत एक छोटे-से गुट के हाथ में रह जायगी और इस प्रकार कांग्रेस निष्प्राण हो जायगी या अपनी फूट में ही पड़ी कांग्रेस में सत्ता के लिए झगड़े-टंटे चलते रहेंगे।

मैं नहीं समझता कि आप क्यों कहते हैं और कैसे कह सकते हैं कि पुरानी कार्य-समिति के सदस्यों की ओर से कोई अड़चन नहीं डाली गई, जबकि सबको साफ दिखाई देता है कि विरोध ठेठ शुरू से आखीर तक रहा। अड़चनें कहां-कहां डाली गईं, यह मैं सामने रखने की कोशिश करूंगा।

अध्यक्ष के चुनाव के परिणाम की घोषणा के बाद यदि यह नजरिया अख्तियार किया जाता कि उसका अर्थ पुरानी कार्य-समिति की नीति और कार्यों की अस्वीकृति है तो कार्य-समिति के सदस्यों के सामने एकमात्र सम्मानपूर्ण रास्ता यही था कि वे वफादारी से निर्णय को मानते और अध्यक्ष को पूरी तरह उसकी मरजी पर छोड़ देते कि वह विधान के अनुसार काम करे। लेकिन निजी हैसियत से मैं इस नजरिये को ठीक नहीं मानता और बहुत-से लोग मेरी जैसी राय रखते हैं। सबसे पहले तो अध्यक्ष के चुनाव के परिणाम को मैं दो व्यक्तियों—सुभाष और डा. पट्टाभि सीतारमैया—के दावों पर जनता का फैसला मानता हूं। दूसरे, अबतक अध्यक्ष के चुनाव के लिए जो पद्धति अपनाई जाती रही थी, उसके लिए मतदाताओं की अस्वीकृति, अर्थात् मतदाता नहीं चाहते थे कि कुछ इने-गिने लोगों द्वारा इस सवाल का फैसला किया जाय; बल्कि वे चाहते थे कि चुनाव में उनकी एक असरदार आवाज रहे और जनतंत्रीय संस्था का अपनी राय को प्रकट करने का अधिकार रहे।

ऐसी सूरत में अध्यक्षीय चुनाव के बाद सबसे अधिक समझदारी का और सीधा रास्ता यह होता कि सर्वसम्मत नीति और कार्य की योजना पर राय जानी जाती। महात्माजी के द्वारा ऐसा करना बिल्कुल आसान था, क्योंकि उनकी सलाह की अवहेलना करने या उनके प्रभाव पर उंगली

उठाने का सवाल ही नहीं उठता। सुभाष के चुनाव के कारण कांग्रेस में महात्माजी की स्थिति में कोई अन्तर नहीं पड़ता। फिर भी समझौते पर पहुंचने की कोशिश करने के बजाय पुरानी कार्य-समिति के सदस्यों ने अपने त्याग-पत्र देकर एक गतिरोध पैदा कर दिया। ऐसा करने में उन्होंने रोड़े अटकाने जैसा काम किया, क्योंकि, जैसाकि घटनाओं ने दिखाया, सत्ता छोड़ने की उनका मंशा तनिक भी नहीं था; बल्कि इसपर जमे रहने के लिए उन्होंने महात्माजी की आड़ ले ली। उन्होंने देश को यह समझने का मौका दिया कि क्योंकि उनकी ओर से नामजद आदमी अध्यक्ष नहीं चुना गया, इसलिए उन्हें कांग्रेस से अपना सहयोग खींच लेना पड़ सकता है। इस पृष्ठभूमि से भी ज्यादा गंभीर धमकी थी कि कांग्रेस-नियंत्रित प्रांतीय सरकारें भी शायद त्याग-पत्र देना जरूरी समझें। मैं नहीं कहता कि यह आखिरी सुझाव कार्य-समिति के सदस्यों के नाम पर दिया गया था, जिन्होंने त्याग-पत्र दिया था, या स्वयं मंत्रियों के नाम पर; परन्तु समाचार-पत्रों में ये अटकलें प्रकाशित हुईं और इनका कहीं किसीने खण्डन नहीं किया। इन अटकलों ने जनता को उस दिशा में विचार करने का काफी मौका दे दिया। त्रिपुरी में जो कुछ हुआ वह अड़चन की दूसरी सीढ़ी थी। आपका यह कहना कि कुछ व्यक्तियों या गुटों के द्वारा कांग्रेस के सामने कुछ प्रस्तावों को पेश किये जाने का मतलब अड़चन डालना नहीं होता है, बेहद सीधापन कहा जायगा। आप तो इस तरह लिखते हैं मानों ये प्रस्ताव हवा में हों और उनकी न कोई पृष्ठभूमि हो, न इतिहास और न जड़ें ही। प्रस्तावों का मतलब ही क्या, अगर वे प्रस्तावकों के कार्य की योजना को प्रकट न करते हों ? इस दृष्टिकोण से विश्लेषण करने पर पंडित गोविंदवल्लभ पंत का प्रस्ताव कार्य की इस योजना को व्यक्त करता है। अध्यक्ष के हाथ बांधकर और कार्य करने की उसकी आजादी को छीनकर इस प्रस्ताव में अध्यक्षीय चुनाव के असर को रद्द करने की कोशिश की गई है। अध्यक्ष को उसके पद से हटाने की कोशिश करने के मुकाबले यह किसी प्रकार कम बाधक नहीं था। अध्यक्ष को हटाने की बात, जो पहले सोची गई थी, इसलिए नहीं आजमाई गई, क्योंकि वह आसानी से पार पड़नेवाली नहीं थी।

कांग्रेस द्वारा पारित एक औपचारिक प्रस्ताव द्वारा अध्यक्ष से कार्य-

समिति को नामजद करने का अधिकार छीनना अपने-आपमें कांग्रेस में पहले से अपनाई जानेवाली प्रथा को छोड़ने का चौंका देनेवाला कदम था। यह इसलिए भी फिजूल था, क्योंकि सुभाष ने विना गांधीजी के मशविरे के कार्य-समिति के बनाने की बात न कभी कही थी, न सोची तक थी। अगर इस प्रकार के विशेष निर्देशन की जरूरत इस साल थी तो मैं कहूंगा वह १९२१ से कांग्रेस के गांधी-युग से अबतक लगातार रही।

प्रस्ताव में जो कपट भरा हुआ था वह मुझे और भी बुरा लगा। प्रस्ताव की मंशा थी पुरानी कार्य-समिति के सदस्यों के लिए विश्वास प्राप्त करके उन्हें फिर से सत्तारूढ़ करना। परन्तु उसी समय महात्माजी के लिए विश्वास के मत के प्रश्न को लेकर असली मुद्दे को घुटाले में डाल दिया गया, मानों त्याग-पत्र देनेवाले पुरानी कार्य-समिति के सदस्यों के प्रति विश्वास प्रकट किये बगैर महात्माजी में विश्वास प्रकट नहीं हो सकता था। मैं मानता हूं कि महात्माजी के खुद के बयान ने दो अलग-अलग व्यक्तिगत मसलों को आपस में मिला देना आसान कर दिया। मेरा यह कहना अनुचित नहीं होगा कि पुरानी कार्य-समिति के सदस्य ज्यादा हिम्मत और खरापन दिखाते अगर वे खुद अपनी जिम्मेदारी पर यह कदम उठाने का निश्चय करते और महात्माजी की आड़ न लेते। उनका स्पष्ट कर्तव्य तो यह था कि महात्माजी को इस सारे विवाद से अलग रखते, जैसा कि उन्हें हमारे राजनैतिक जीवन में रहना चाहिए।

आपके पत्र में कुछ और भी मुद्दे हैं, जिनकी सफाई होनी चाहिए। बंगाल के प्रतिनिधियों को दोहरे प्रतिनिधि-टिकट देने का जहांतक संबंध है, मैंने पूछताछ की और यह बात मालूम हुई कि बंगाल के बहुत-से प्रतिनिधियों ने त्रिपुरी पहुंचने पर पाया कि वे अपने साथ प्रतिनिधि कार्ड नहीं लाये और उसीके मुताबिक उन्होंने अपनी ओर से दूसरे कार्डों के लिए अर्जी दी। कहीं देर न होजाय, इसलिए अपने उन दोस्तों की ओर से भी अर्जी दे दी, जो उस समय तक आ नहीं पाये थे। इस बात का पता लगते ही त्रिपुरी में बंगाल प्रान्तीय कांग्रेस कमिटी के पदाधिकारियों ने तुरत दूसरे प्रतिनिधि-टिकट देने का काम अखिल भारतीय कांग्रेस कमिटी से लेकर खुद संभालने को कहा, क्योंकि प्रतिनिधियों की उनकी व्यक्तिगत जानकारी

की वजह से उनके लिए काम को जल्दी और बिना गलती किये निबटा लेना संभव था। परन्तु महासमिति के दफ्तर ने यह सहयोग लेने से इन्कार कर दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि जो प्रतिनिधि सीधे अपने साथियों से बगैर मिले और सलाह किये महासमिति के दफ्तर पर चले गये, उन्हें दुबारा कार्ड मिल गये। इस मौके पर बंगाल प्रान्तीय कांग्रेस के पदाधिकारियों ने दुबारा हस्तक्षेप किया और दो-दो बार दिये गए टिकटों को खोज निकाला और उन्हें ठीक किया, सिवा छः को छोड़कर, जिनका पता नहीं लग सका। इसके अतिरिक्त बंगाल प्रान्तीय कांग्रेस के सुझाव पर एक अधिकारी अखिल भारतीय कांग्रेस कमिटी की ओर से और एक बंगाल प्रान्तीय कांग्रेस कमिटी की ओर से, इस प्रकार दोनों ने मिलकर बंगाल के प्रतिनिधियों की पंडाल में प्रवेश की जांच की, जिससे इस बात का संदेह तक न रहे कि कोई भी अनधिकृत व्यक्ति बंगाल के प्रतिनिधि के नाम पर पंडाल में घुस गया है। मैं जानता हूं, जांच में एक भी गलत आदमी नहीं पाया गया। इस जांच से दोहरे टिकट देने की गलती गौण हो जाती है। मुझे सूचित किया गया है कि आंध्र के प्रतिनिधियों के बारे में गंभीर अनियमितता हुई है। मुझे पता नहीं कि उस मामले में भी प्रतिनिधियों की जांच के लिए इसी प्रकार का तरीका अपनाया गया या नहीं। शायद आप इस बारे में कुछ पूछताछ करेंगे।

मेरे लिए यह एक नई खबर है कि प्रतिनिधियों को कांग्रेस में लाने के लिए पैसा खर्च किया गया। क्या मैं जान सकता हूं कि किसके द्वारा, कब और कहां? पहले जब 'परिवर्तनवादियों' और 'अपरिवर्तनवादियों' में कशमकश होती थी तब हम खूब सुना करते थे कि दोनों गुटों की ओर से अपने-अपने समर्थकों के सफर-खर्च देने में पैसा खर्च किया जा रहा है और इस प्रकार कांग्रेस में उनकी उपस्थिति निश्चित की जा रही है, लेकिन मैंने कभी भी मामले की तहकीकात करने की परवा नहीं की। आपके पत्र से मुझे सबसे पहले पता लगा कि इस समय भी उसी तरह पैसा खर्च किया गया।

आप लिखते हैं कि आप द्वारा पेश की गई राष्ट्रीय मांग के विरुद्ध मुझे देखकर आपको आश्चर्य हुआ। अगर मुझे अपना संशोधन पेश करने

की इजाजत दे दी गई होती तो मेरे द्वारा इस प्रस्ताव का औपचारिक विरोध करने की नौबत ही नहीं आती। परन्तु चूंकि यह अवसर मुझे नहीं दिया गया, इसलिए मैंने अनुभव किया कि मुझे प्रस्ताव के विरुद्ध अपना विरोध दर्ज कराना है, और अपने इस रुख के कारण मैंने अपने भाषण में दिये। मेरी राय में वह एक बेअसर और निष्फल मांग थी, जिसका कोई परिणाम होनेवाला नहीं था। इसी तरह के प्रस्ताव हर साल किये जाते रहे और उनसे न तो हमारे दुश्मन हमारी राय के कायल हुए और न हमारे लोगों का हौसला बढ़ा, क्योंकि उनमें यह नहीं बताया गया था कि अगर वे मंजूर न किये गए तो आगे क्या निश्चित इरादा होगा और क्या कदम उठाये जाने की योजना होगी। समय की सीमा के सुझाव का विरोध करते हुए आप इस तरह बोले, मानों कांग्रेस के इतिहास में यह कोई नई चीज थी। हमारी आज की मांग को पूरा करने के लिए एक समय-सीमा निर्धारित करने में यदि अति है तो मैं अनुमान करता हूं कि यह तब भी थी जब मुझसे बड़े लोगों द्वारा कांग्रेस के प्रस्तावों में इस प्रकार की समय-सीमाएं शामिल की गई थीं। अगर जरा-सा मौका मिलते ही, हिटलर की तरह, बिना रू-रियायत के सख्ती और मजबूती से चोट करने का विचार आपके दिमाग में होता और अगर मैं इस बात का क़ायल हो जाता कि आपमें ब्रिटिश साम्राज्यवाद पर इस तरह चोट करने की आवश्यक शक्ति है तो मैं समय-सीमा रखने की आपकी हिचकिचाहट को समझ सकता था। लेकिन मेरा विश्वास है कि ये आकस्मिक उलट-फेर, जिनके लिए कोई पूर्व-सूचना नहीं दी गई थी, सत्य और अहिंसा के सिद्धांतों के विरुद्ध हैं। सत्य की खातिर हमने हमेशा सावधानी रखी है कि जो हम करनेवाले हैं, उसे दुश्मन पर जाहिर कर दें, जिससे उसे यह कहने का जरा भी बहाना न मिले कि वह बेखबर था। आकस्मिकता युद्ध का एक बहुमूल्य सिद्धांत है, लेकिन मेरे विचार से सत्याग्रह का नहीं।

जो हो, यह सब मुद्दे से परे की बात है, क्योंकि मेरी राय में क़ांग्रेस के दक्षिण-पक्ष का समय-सीमा रखने का आधार अपनी शक्ति का बोध नहीं था, बल्कि अपनी कमजोरी की चेतना थी। दक्षिण-पंथी लोग हिंदुस्तान की जनता में उसके सक्रिय प्रतिकार करने की क्षमता में और उस प्रतिकार

को संगठित करने की अपनी निजी क्षमता में विश्वास खो चुके हैं। वे समय-सीमा इसीलिए नहीं चाहते, क्योंकि उसकी समाप्ति पर उन्हें बुलाया जायगा और कोई कदम उठाने पर मजबूर किया जायगा। स्थिति का मेरा निदान यही है। हो सकता है, मैं पूरी तरह ठीक न होऊं।

आगे किस नीति और कार्यक्रम का अनुसरण किया जाय, इस संबंध में मैंने अपने विचार साफ तौर से उन प्रस्तावों में बता दिये हैं, जो मैंने कांग्रेस महासभा के कार्यालय को भेजे हैं। इससे पहले जलपाईगुरी में हुए वंग प्रांतीय सम्मेलन में भी अपने अध्यक्षीय भाषण में मैंने उन विचारों को जतला दिया था। दुर्भाग्य से त्रिपुरी में उठाये गए व्यक्तिगत प्रश्न ही सारी चीजों पर छाये रहे। जहांतक बंगाल में मिली-जुली सरकार के औचित्य या अनौचित्य का संबंध है, मैंने गत कार्य-समिति की बैठकों में अपने विचारों को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है। पद-ग्रहण की स्वीकृति निश्चित रूप से दक्षिण-पक्षीय कदम है। लेकिन एक बार कांग्रेस इसके पक्ष में निर्णय कर लेती है तो मेरी राय में, तथाकथित कांग्रेसी प्रांतों और तथा कथित गैर-कांग्रेसी प्रांतों में भेद नहीं किया जा सकता और न किया जाना चाहिए, बशर्ते कि कांग्रेस का कार्यक्रम गैर-कांग्रेसी प्रांतों में भी स्वीकार कर लिया जाता है। आखिरकार यह भी तो एक संयोग है कि कुछ प्रांतों में कांग्रेस बहुमत में है—एक ऐसा संयोग, जो अपने-आपमें इस संयोग पर आधारित है कि इन प्रांतों में हिंदू बहुमत में है। मुझे उम्मीद है कि पिछले दो साल के अनुभव से आपको यह तसल्ली होगई होगी कि अबतक कांग्रेस मंत्रिमंडलों ने गवर्नमेंट ऑव इंडिया एक्ट से लड़ने या उसे समाप्त करने के लिए कुछ भी नहीं किया है।

आपका यह मानना कि मैंने गांधीजी को जो कुछ लिखा है, उसका मतलब यह है कि अध्यक्ष और गांधीजी के बीच सहयोग खत्म हो जाय, सही नहीं है। मैं आपको पहले ही बता चुका हूं कि महात्माजी की स्थिति और नीति तथा पुरानी कार्यसमिति के कुछ सदस्यों की स्थिति और नीति को मैं एक-जैसी नहीं मानता। इस नुक्ते पर मुझे और ज्यादा जोर देने की जरूरत नहीं है, क्योंकि इसपर मैं काफी लिख चुका हूं।

इससे पहले कि मैं यह पत्र समाप्त करूं, मैं एक और भूल सुधारना

चाहूंगा। अक्सर यह मान लिया जाता है कि मैं जो कुछ लिखता हूं वह सुभाष के विचारों का भी प्रतिनिधित्व करता है, परन्तु ऐसा हमेशा नहीं होता, क्योंकि न मैं हर बात में सुभाष का मशविरा लेता हूं और न ले सकता हूं, और न वह ऐसा करता है। हां, इस खास मामले में गांधीजी को लिखे अपने पत्र की एक नकल मैंने उसके पास भेज दी है और अब यह कहना उसीपर है कि किन मुद्दों पर वह मुझसे सहमत है और किनपर नहीं। मैं उसका वकील नहीं हूं।

आशा है, आप अच्छे होंगे। पिछले दो या तीन हफ्तों में मेरा स्वास्थ्य बहुत खराब रहा है। मैं ईस्टर की छुट्टियों में पहाड़ों पर जाकर आराम करने की सोच रहा हूं।

सप्रेम आपका,

शरतचन्द्र बोस

२६०. सुभाषचन्द्र बोस की ओर से

जीलगोरा पो. आ.

जिला मानभूम, बिहार

१५ अप्रैल १९३९

प्रिय जवाहर,

पता नहीं, महात्माजी तुमको हमारे बीच चल रही चिट्ठी-पत्री की नकलें भेज रहे हैं या नहीं, जैसे कि वह दूसरों को भेजते हैं। अगर तुमको ये नकलें न मिली हों तो मैं तुमको सबसे ताजा स्थिति बताना चाहूंगा। उसके बाद मैं तुम्हारी प्रतिक्रिया जानना चाहूंगा और तुम्हारी सलाह भी कि आगे मुझे क्या करना चाहिए।

महात्माजी का आग्रह है कि कार्यसमिति समानशील होनी चाहिए। वह चाहते हैं कि मैं ऐसी समिति का गठन कर लूं और अपने कार्यक्रम की घोषणा कर दूं। उसके बाद मैं कांग्रेस महासमिति की स्वीकृति प्राप्त करूं।

मैंने महात्माजी से बार-बार कहा है कि मैं ऐसी कार्यसमिति एक से अधिक कारणों से नहीं बना सकता। इसके अलावा कांग्रेस ने मुझे अपना कार्यक्रम बनाने और उसकी घोषणा करने का निर्देश नहीं दिया है। मुझे तो सिर्फ एक खास तरीके से अर्थात पन्त-प्रस्ताव के अनुसार कार्यसमिति का गठन करना है।

कुछ वैकल्पिक सुझाव देने के बाद मैंने आखिर में यह कहा है कि सब-कुछ निष्फल रहने पर उनको कार्यसमिति गठित करने की जिम्मेदारी अपने सिर पर लेनी चाहिए—कारण मैं समानशील समिति बनाने की उनकी सलाह का पालन नहीं कर सकता। अपने दो आखिरी पत्रों में मैंने उनसे यह अनुरोध किया है कि वह यह जिम्मेदारी उठा लें।

मैं नहीं कह सकता कि महात्माजी कार्य-समिति की घोषणा करेंगे। अगर वह कर देते हैं तो गतिरोध समाप्त हो जायगा। किन्तु अगर वह नहीं करते तो ? उस दशा में मामला अनिर्णीत अवस्था में कांग्रेस महासमिति के सामने जायगा। उस अवस्था में महासमिति क्या करेगी, यह मैं नहीं जानता।

मैं महसूस करता हूं कि अगर चिट्ठी-पत्री के जरिये कोई समझौता नहीं होता है तो मुझे गांधीजी से प्रत्यक्ष मिलकर समस्या को सुलझाने की आखिरी कोशिश करनी चाहिए। किन्तु राजकोट की वजह से गांधीजी की गतिविधि अनिश्चित है। यह भी पक्का नहीं है कि कांग्रेस महासमिति की बैठक के समय वह कलकत्ता आ सकेंगे, हालांकि उन्होंने मुझे तार दिया है कि वह आने की 'जी-तोड़' कोशिश करेंगे।

अब अगर गांधीजी कार्यसमिति का निर्माण नहीं करते और मैं गांधीजी से मिलने का समय निकालने के लिए कांग्रेस महासमिति की बैठक स्थगित कर देता हूं तो कैसा ? क्या महासमिति के सदस्य इसका समर्थन करेंगे या मुझपर टालमटोल करने का दोष मढ़ेंगे ? बहुत-से लोगों की राय है कि जब-तक हम मिलते नहीं और समझौते की आखिरी कोशिश नहीं करते, महा-समिति की बैठक नहीं होनी चाहिए। बैठक उसी दशा में स्थगित करनी पड़ेगी जबकि महात्माजी २७ से पहले कलकत्ता नहीं आ पाते, जिस दिन कि कार्यसमिति की बैठक होनी है। बैठक स्थगित करने के बारे में तुम्हारा क्या खयाल है ?

अगर महात्माजी तुमको न भेज चुके हों तो अबतक पूरा पत्र-व्यवहार मैं तुम्हें भेज सकता हूं।

एक बात और। क्या कुछ घंटों के लिए तुम यहां आ सकोगे ? उस दशा में हम बात कर सकेंगे कि आगे मुझे क्या करना चाहिए। इस बारे में तुम्हारी सलाह भी मिल जायगी।

यह पत्र संक्षिप्त है और जल्दी में लिखा गया है और एक मित्र के हाथ भेज रहा हूं। पता नहीं, मैं ताजा स्थिति स्पष्ट कर पाया हूं या नहीं—आशा तो यही है कि मैंने कर दी है।

अगर तुम यहां आने का समय निकाल सको तो तुम तूफान एक्सप्रेस (८ डाउन) से आकर कुछ समय बचा सकते हो। वह साढ़े चार बजे शाम पहुंचती है और तुम बम्बई मेल से लौट सकते हो, जो धनबाद आधी रात को पहुंचती है। जमदोबा धनबाद से नौ मील है। स्टेशन पर तुम्हें कार मिल जायगी।

सस्नेह तुम्हारा,
सुभाष

२६१. महात्मा गांधी के नाम

इलाहाबाद,
१७ अप्रैल १९३९

प्रिय बापू,

प्यारेलाल सुभाष के साथ आपके पत्र-व्यवहार की नकलें मेरे पास भेजते रहे हैं। मुझे अंदेशा है कि इस चिट्ठी-पत्री से अड़चन की स्थिति आगई है और मुझे कोई रास्ता इससे निकलने का दिखाई नहीं देता। मैं उस आदमी की जैसी बदकिस्मती की हालत में हूं, जो दोनों में से एक भी नजरिये से सहमत नहीं है। इस कारण मैंने यही उत्तम समझा कि चुप रहूं और किसीको कुछ न लिखूं और न जनता में कुछ कहूं। लेकिन मुझे ऐसा लगता है कि हमारे लिए इस तरह लाचारी में बहते चले जाना बहुत अच्छा नहीं है। मामले इतने गंभीर और नतीजे इतने दुखदायी हैं कि उनकी कल्पना नहीं की जा सकती।

मुझे लगता है कि कोई रास्ता नहीं निकलेगा, जबतक कि आप बहुत हद तक खुद जिम्मेदारी उठाने को तैयार नहीं होंगे। आपको अगुआ बनना होगा और आप घटनाओं के होते रहने के लिए ही इंतजार नहीं कर सकते। सुभाष में अनेक कमजोरियां हैं, परन्तु प्रेम से उन्हें समझाया जा सकता है। मुझे विश्वास है कि आप निश्चय कर लेंगे तो कोई रास्ता निकाल सकेंगे।

राजकोट का महत्व मैं खूब समझता हूं, परन्तु आप मेरे इस विचार से सहमत होंगे कि कांग्रेस का बड़ा सवाल उससे कहीं अधिक महत्वपूर्ण है और वह हमारी सारी प्रवृत्तियों का नियमन करेगा। इसलिए मेरी आपसे प्रार्थना है कि थोड़े दिन राजकोट के मामलों पर ध्यान न देकर भी आप कांग्रेस की तरफ ध्यान दें। इस विचार से घबराहट होती है कि शायद आप महासमिति की वैठक में शरीक न हों। इसका तो यही मतलव है कि हालात विगड़ते जायं और कांग्रेस चूरचूर होजाय। सही तरीका यह है कि महासमिति की बैठक से पहले कोई निपटारा कर लिया जाय। महासमिति पर इस मामले को छोड़ देना तो और भी गड़वड़ पैदा करना होगा। काश आप सुभाष से मिल लेते! इस मुलाकात का कोई अच्छा नतीजा निकलने के अलावा भी इससे कई तरह की मदद मिलती।

कार्यसमिति के वनने में देर लगना वुरा हुआ। परन्तु हम झगड़ने के लिए ही मिलें तो यह और भी बुरा होगा। हालांकि यह मुझे वहुत ही नापसंद है, फिर भी एक-दो सप्ताह के लिए महासमिति का अधिवेशन मुल्तवी कर देना बेहतर होगा, ताकि आपको सुभीता रहे और निपटारे का ज्यादा मौका मिले।

मुझे अभी ही सुभाष का एक पत्र मिला है। उनका कहना है कि मैं उनसे स्थिति की चर्चा करने के लिए कुछ घंटों के लिए मिल लूं। मुझे अंदेशा है कि हमारी बातचीत का कोई निश्चित परिणाम नहीं निकल सकेगा, क्योंकि मेरे हाथ में कुछ है नहीं। फिर भी मैं उन्हें इन्कार नहीं कर सकता और एक-दो दिन में जाने का विचार है। मैं उनसे क्या कहूंगा, इसका मेरे मन में स्पष्ट विचार नहीं है। मेरे खयाल से मैं उन्हें यही सलाह दे सकता हूं कि वह आपसे यह कह दें कि कार्यसमिति के नाम सुझाने का काम वे पूरी तरह आपपर छोड़ते हैं। वह अपने कुछ सुझाव आपको दे सकते हैं, परन्तु साफ तौर पर यह समझकर कि आप उन्हें स्वीकार या अस्वीकार कर सकते हैं। कार्यक्रम की वात यह है कि वह त्रिपुरी-कांग्रेस के प्रस्तावों के अनुसार होगा, जिनमें और बातों के साथ-साथ निश्चित रूप से यह बता दिया गया है कि पिछले कार्यक्रम में कोई भंग नहीं होगा।

अगर सुभाष इससे सहमत हो जाते हैं तब जिम्मेदारी आपपर रहती

है और आप उससे वच नहीं सकते। मेरा दिल्ली में भी यह खयाल था और अब भी है कि आप सुभाष को अध्यक्ष मान लें। उन्हें निकाल देने का प्रयत्न करना मुझे निहायत गलत कदम मालूम होता है। रही बात कार्य-समिति की, सो इसका फैसला करना आपका काम है। लेकिन मैं यह जरूर समझता हूं कि एक-जैसे विचारोंवाली कल्पना का संकीर्ण अर्थ किया गया तो उससे शान्ति अथवा कारगर काम नहीं हो सकेगा। कुछ-न-कुछ तो एक-जैसे विचार जरूर होने ही चाहिए, नहीं तो हम काम नहीं कर सकते। मैं नहीं समझता कि कार्यसमिति में चन्द लोगों के होने से नीति में कोई बुनियादी फर्क हो जायगा। अवश्य ही जिन आदमियों की नेकनीयती पर हमें जरा भी विश्वास न हो उन्हें स्वीकार करना कठिन होता है। परन्तु समान विचारों के सिद्धान्त का विस्तार राजनैतिक दृष्टिकोण के भेद तक नहीं करना चाहिए, वशर्ते कि काम की सामान्य पृष्ठभूमि स्वीकार कर ली जाय। आखिर तो हमें याद रखना होगा कि समान विचारों की कार्यकारिणी वना देने से हम समान विचारों की कांग्रेस तो नहीं वना लेते। दूसरी बात ज्यादा आसान हो जाती है, यदि हममें विचारों की व्यापक समानता हो।

आपको पिछले कई महीनों से कांग्रेस की घटनाओं से बड़ा कष्ट हुआ है और आपने भ्रष्टाचार आदि की निंदा की है। मैं समझता हूं कि काग्रेस में हरेक सयाना तत्व, चाहे उसके राजनैतिक विचार कुछ भी हों, इस समस्या को हल करने के लिए उत्सुक है। मैं कांग्रेस के बाहर की बहुत-सी बातों पर काफी ध्यान दे रहा हूं और मुझे कहना पड़ता है कि घटना-चक्र और नई शक्तियों के पैदा होने से मुझे घबराहट होती है। मैं केवल साम्प्र-दायिक प्रश्न का ही जिक्र नहीं कर रहा हूं। उससे भी गहरी शक्तियां काम कर रही हैं। अगर इस नाजुक अवसर पर कांग्रेस कमजोर और छिन्न-भिन्न हो जाती है तो परिणाम विनाशकारी हो सकते हैं। हमें एक होकर रहना ही चाहिए। इसलिए मैं आपसे प्रार्थना करता हूं कि इस मामले को निपटाने का आप निश्चय कर लें, भले ही निपटाने का तरीका हम सबको पसन्द न हो। हम इसी तरह अपनी पसन्द की दिशा में जा सकते हैं, नहीं तो हमारे पैर रुक जाते हैं।

एक बात अपने बारे में भी। यह मेरा दुर्भाग्य है कि मैं अत्यधिक

व्यक्तिवादी हूं। पिछले दिनों कार्यसमिति की बैठकों में मुझे अपना निभाव बहुत कठिन मालूम हुआ और शायद मैं अपने साथियों के लिए भी एक आफत होगया था। इसका कारण दोनों तरफ सद्भाव की कमी नहीं था। इसलिए मुझे महसूस हुआ कि मुझे कमेटी में नहीं रहना चाहिए। इससे भी अधिक प्रबल कारणों से सुभाष की बनाई हुई भिन्न प्रकार की कमेटी में शरीक होने का विचार मुझे कठिन लगा। मेरे भाव अब भी वे ही हैं, लेकिन जो रुकावट पैदा होगई है उसे देखते हुए कोई रास्ता निकल आता है और कमेटी में मेरा रहना सहायक समझा जाता है तो मैं रहना मंजूर कर लूंगा। मुझे यह चीज कोई बहुत प्रिय नहीं है, परन्तु मैं यह जरूर महसूस करता हूं कि मौजूदा गैर-मामूली हालात में अगर यह जिम्मेदारी मुझे दी गई तो मैं उससे बच नहीं सकता।

महात्मा गांधी,
राजकोट।

सप्रेम आपका,
जवाहरलाल

२६२. अबुल कलाम आज़ाद की ओर से

कलकत्ता
१७ अप्रैल १९३९

प्रिय जवाहर,

जब मैं अपनी इलाहाबाद में लगी चोट के बारे में सोचता हूं तो यह लगता है कि अगर ऐसा कलकत्ता में हो जाता तो मेरे अपने आदमी भी उससे ज्यादा मेरे आराम और इलाज के लिए नहीं कर पाते, जो इलाहाबाद में मेरे लिए किया गया। सच तो यह है कि मेरे नजदीकी और प्यारे-से-प्यारे रिश्तेदार भी मेरे लिए उतनी गहराई से महसूस नहीं कर पाते, जितना आपने वहां मेरे लिए किया। मैं नहीं समझ पाता कि कैसे मैं आपके तईं अपनी अहसानमंदी जाहिर करूं। यकीन कीजिये, आपके प्यार और मेहरबानी के लिए मेरा दिल अहसान से भरा हुआ है।

बहुत-सी ऐसी मामूली बातें होती हैं, जो दिल पर गहरा असर डालती हैं। इलाहाबाद से चलते वक्त आपने मेरे आराम-देह सफर के लिए बहुत मामूली-से-मामूली तफसील को देखा, हालांकि यह सफर सिर्फ एक रात

का था। मुझे पता नहीं था कि कितनी चीजें मेरे साथ भेजी गई थीं। यहां पहुंचने पर मुझे मालूम हुआ कि यू. डी. कोलोन तक की शीशी भी टोकरी में रख दी गई थी।

मुझे नहीं मालूम कि आपने गांधीजी के नाम सुभाष के खत देखे हैं या नहीं। यह अफसोस की बात है कि सुभाषबाबू बिल्कुल उसी जगह हैं, जहां वह त्रिपुरी के पहले थे और इस बात की कोई उम्मीद नहीं कि वह त्रिपुरी की तजवीज पर अमल करके हालत को सुधारेंगे। एक तरफ तो वह कहते हैं कि पन्त की तजवीज आईन के खिलाफ है और इसलिए हक के बाहर है, दूसरी तरफ वह चाहते हैं कि गांधीजी कुछ शर्तों को मानें। इसके साथ-साथ वह बेएहतियाती से यह दावा करने में भी नहीं सकुचाते कि अगर सोशलिस्ट गुट गैरजानिबदार न बन जाता तो पन्त की तजवीज गिर जाती। बावजूद इस सबके, इस बात की कोई उम्मीद नहीं है कि कांग्रेस सुभाषबाबू के साथ चल सके। लगता है, सब चीजें ठप्प हो जायंगी। इसलिए हमें आइन्दा क्या करना है, इसे तय कर लेना चाहिए।

मैं सुभाषबाबू के मामले को न तो राइटिस्टों और लेफ्टिस्टों की लड़ाई मानता हूं और न कांग्रेस की मिली-जुली या एकराय वर्किंग कमेटी का ही सवाल मानता हूं। यह महज सुभाष और उनके कुछ हिमायतियों का मामला है। यह उलझन किस तरह खत्म होती है, इसकी ज्यादा अहमियत नहीं। हमें तो इन सवालों पर आजादी से और खास तौर से गौर करना चाहिए, जिससे कोई हल निकल सके।

मुझे उम्मीद है, आपको मेरा पिछला खत मिल गया होगा और आपने सुलतान अहमद के बारे में लखनऊ फोन कर दिया होगा।

आपका,
ए. के. आजाद

२६३. सुभाषचंद्र बोस की ओर से

जीलगोरा पो. आ.
२० अप्रैल १९३९

प्रिय जवाहर,

मैंने आज महात्माजी को दो तार भेजे हैं। उनमें से एक तार उनके

नाम के मेरे आज के पत्र में भी दोहराया गया है। मैं अपन पत्र और तार की नकलें इस चिट्ठी के साथ भेज रहा हूं।

पत्र-व्यवहार को प्रकाशित न करने के तार के बारे में मैंने तुम्हारे नाम का उपयोग किया है। आशा है, तुमको ऐतराज नहीं होगा।

मुझे गांधीजी के बुखार की चिन्ता है। आशा है, वह ठीक हो जायगा। परमात्मा न करे, अगर वह बना रहता है तो हम क्या करेंगे ? कृपाकर इस संभावना के बारे में कुछ सोचना। मैं कल २१ ता. को कलकत्ता के लिए रवाना हो रहा हूं।

सप्रेम तुम्हारा,
सुभाष

२६४. सुभाषचंद्र बोस की ओर से महात्मा गांधी के नाम

जीलगोरा पो. आ.
जिला मानभूम, बिहार
२० अप्रैल १९३९

प्रिय महात्माजी,

मैंने आज आपको यह तार भेजा है :

"महात्मा गांधी, राजकोट।

आपको बुखार आने की खबर से बहुत चिन्तित हूं। आपके शीघ्र स्वस्थ होने की प्रार्थना करता हूं। जवाहरलालजी और मुझे हार्दिक आशा है कि हमारी मुलाकात का अच्छा नतीजा निकलेगा और समान ध्येय के लिए सभी कांग्रेसजनों का सहयोग संभव होगा। कलकत्ता में हमारी जल्दी होनेवाली मुलाकात की दृष्टि से हम दोनों पत्र-व्यवहार को उस मुलाकात के पहले प्रकाशित करना अवांछनीय समझते हैं। प्रणाम—सुभाष।"

पिछले तीन सप्ताह में हमारे बीच लम्बा पत्र-व्यवहार हुआ है। जहां-तक कार्यसमिति के गठन का संबंध है, इस पत्र-व्यवहार का कोई ठोस नतीजा नहीं निकला है। फिर भी शायद एक दूसरी तरह से हमारे विचारों का स्पष्टीकरण करने में वह मददगार हुआ है। किन्तु अब तात्कालिक सवाल को हल करना होगा, कारण हम अधिक समय तक कार्यसमिति के

विना काम नहीं चला सकते । देश की और अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति को देखते हुए यह जरूरी हो जाता है कि कांग्रेसजन अपने मतभेदों को समाप्त कर दें और संयुक्त मोर्चे का निर्माण करें । आपको अच्छी तरह मालूम है कि अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति किस प्रकार दिन-प्रति-दिन विगड़ती जा रही है । ब्रिटिश पार्लमेंट के सामने पेश हुए संशोधन विधेयक से प्रकट होता है कि अगर युद्ध का संकट उपस्थित होता है कि तो ब्रिटिश सरकार कांग्रेसी मंत्रिमंडलों को जो थोड़े-बहुत अधिकार मिले हुए हैं, उनको भी छीन लेने की तैयारी कर रही है । सारी जानकारी को ध्यान में रखते हुए इसमें जरा भी शक की गुंजाइश नजर नहीं आती कि हम असाधारण रूप से भारी संकट के निकट पहुंच रहे हैं । हम उसका सामना उसी अवस्था में कर सकेंगे जव हम अपने मतभेदों को तुरन्त मिटा देंगे और अपने संगठन में एकता और अनुशासन स्थापित करने की पूरी-पूरी कोशिश करेंगे । यह काम उसी दशा में हो सकेगा, जव आप आगे आकर नेतृत्व करें । तव आप देखेंगे कि हम सब आपको पूरा सहयोग देते हैं और आपका अनुसरण करते हैं । आप यह भी देखेंगे कि भ्रष्टाचार को समाप्त करने और हिंसा की प्रवृत्ति पर अंकुश लगाने के बारे में हमारे वीच मतैक्य है—हालांकि देश में विद्यमान भ्रष्टाचार और हिंसक भावना की मात्रा के बारे में मतभेद हो सकता है । कार्यक्रम का निश्चय तो कांग्रेस या कांग्रेस महासमिति ही करेगी । हालांकि प्रत्येक व्यक्ति को इन संस्थाओं के सामने अपने विचार रखने का असंदिग्ध हक हासिल है । कार्यक्रम के बारे में मेरा यह खयाल है कि जो संकट शीघ्र ही हमारे सिर पर आ रहा है वही बड़ी हद तक हमारे कार्यक्रम का निर्धारण करेगा और तब इस वारे में किसी बड़े मतभेद की कोई गुंजाइश नहीं रह जायगी ।

मैं बड़ी उत्सुकता और आशा के साथ कांग्रेस महासमिति की बैठक के पहले कलकत्ता में या उसके निकट आपसे मिलने की प्रतीक्षा कर रहा हूं । वंगाल में और अन्य प्रान्तों में यह राय तेजी से बन रही है कि कांग्रेस कार्य-समिति की समस्या सैद्धान्तिक मतभेदों और पिछले मतभेदों या गलत-फहमियों के बावजूद आपसी समझौते से हल की जानी चाहिए । पन्त-प्रस्ताव के अनुसार कार्य-समिति का गठन करने की जिम्मेदारी आपकी

है और जब आप यह जिम्मेदारी उठाते हैं तो आप देखेंगे कि हम अपनी शक्तिभर आपको सहयोग देंगे।

जवाहर कल यहां थे। हमारी मौजूदा स्थिति पर लम्वी चर्चा हुई। मुझे खुशी हुई कि हमारे विचार मिलते हैं।

हम सोचते हैं कि कलकत्ता से बहुत दूर न हो, ऐसे किसी रास्ते के स्टेशन पर आप एक दिन के लिए उतर पड़ें और हम शांति के साथ बातचीत कर लें। अगर आप नागपुर के रास्ते आयें तो खड़गपुर के निकट मिदनापुर सबसे अच्छी जगह रहेगी। अगर आप छिड़की के रास्ते आते हैं तो हमें वर्दवान के निकट कोई जगह देखनी होगी। मैंने इस बारे में आपको एक तार भेजा है और आपके उत्तर की इंतजार करूंगा। मैंने जवाहर को वातचीत में शामिल होने को कहा है और उन्होंने कृपा करके मान लिया है।

आपके बुखार के वारे में मैं चिन्तित हूं। मेरी प्रार्थना है कि वह जल्दी ही ठीक हो जाय।

सविनय प्रणाम। आपका,

सुभाष

२६५. सुभाषचंद्र बोस की ओर से महात्मा गांधी के नाम

२० अप्रैल १९३९

महात्मा गांधी, राजकोट।

बड़ी खुशी की वात है, आप २७ ता. को कलकत्ता आ रहे हैं। आप जहां चाहें ठहरें, कोई ऐतराज नहीं। आपके आराम और सार्वजनिक सुविधा की दृष्टि से मेरा सुझाव है कि आप शहर के किनारे नदी-तट के उद्यान-भवन में ठहरें। सतीशबाबू से परामर्श करने के बाद कलकत्ता से आपको फिर तार करूंगा। जवाहरलालजी कल यहां थे। हमारे खयाल से यह वांछनीय होगा कि आप कलकत्ता के निकट किसी जगह एक दिन के लिए उतर पड़ें, जहां हम दोनों आपसे व्यक्तिगत बातचीत के लिए मिल सकते हैं। अगर आप इस विचार से सहमत हों और अपने रास्ते की खबर तार से दे दें तो मैं बीच के किसी सुविधाजनक स्टेशन पर आपके ठहरने का इन्तजाम कर दूंगा। २१ ता. को कलकत्ता जा रहा हूं।

सुभाष

२६६. लेडी येस्टर की ओर से

लन्दन
१० मई १९३९

प्रिय पंडित जवाहरलाल नेहरू,

आपको याद होगा कि पिछली गर्मियों में आपने मुझसे गैडिल्यू नाम की नागा जाति की लड़की की बात वताई थी, जो सन् १९३० में हुई कुछ मणिपुरी यात्रियों की हत्या के संवंध में सन् १९३३ में कैद की गई थी। उसके मामले में मैंने इंडिया आफिस से कुछ लिखा-पढ़ी की थी, जिसके फलस्वरूप उन्होंने जांच-पड़ताल की और इस संवंध में मुझे काफी विस्तृत जानकारी भेजी। संक्षेप में, मुझे बताया गया है कि जादोनंग नाम के एक आदमी ने अपनेको एक प्रकार के मसीहा के रूप में स्थापित कर लिया था और गैडिल्यू उसकी पुरोहितानी थी और जिस हत्या की चर्चा की गई है वह जादोनंग के धर्म-देवताओं के सामने एक प्रकार के बलिदान के रूप में थी। आशंका की जाने लगी थी कि इस धर्म के नागा अनुयायियों द्वारा कूकियों की पूरी-की-पूरी जाति के मारे जाने का खतरा था। मुझे बताया गया है कि इन हत्याओं में गैडिल्यू का हाथ होने के काफी प्रमाण हैं; किन्तु केवल इसलिए कि वह अभी युवावस्था में थी और उसपर जादोनंग का प्रभाव था, अदालत ने उसके मृत्यु-दंड को वदल दिया है।

यह भी बताया गया है कि नागाओं का यह आन्दोलन अभी समाप्त नहीं हुआ है और अगर गैडिल्यू छोड़ दी गई तो फिर उठेगा। "इस समय गैडिल्यू मणिपुर राज्य और असम प्रान्त की शांति के लिए खतरे का एक सम्भावित साधन मानी जाती है।"

भारत-मंत्री ने इस बात पर जोर दिया है कि गैडिल्यू के दण्ड का मामला शाही प्रतिनिधि के अधीन है और चूंकि यह प्रश्न ब्रिटिश राज्य से नहीं, बल्कि मणिपुर के आन्तरिक मामलों से संबंध रखता है, इसलिए वह गवर्नर के निर्णय में हस्तक्षेप करने को तैयार नहीं है।

मैंने उन्हें लिखा था कि क्या एक ऐसी कम उम्र की लड़की के लिए रचनात्मक सुधार का व्यवहार कैद से अधिक लाभप्रद नहीं होगा, खास तौर से अब जबकि जादोनंग का प्रभाव हट गया है? उसके उत्तर में मुझे बताया

गया है कि जेल में बोर्सटल प्रणाली संशोधित रूप में लागू है और उसके अनुसार शिक्षा की सुविधाएं दी जाती हैं। मुझे इस बात का भी विश्वास दिलाया गया है कि गैडिल्यू के मामले में मेरे जो सुझाव थे वे गवर्नर के पास विचारार्थ भेज दिये जायेंगे। मुझे पक्की उम्मीद है कि मेरी चेष्टाओं का कुछ-न-कुछ फल निकलेगा, यद्यपि मुझे इस बात का अफसोस है कि इस काम में इतनी देर लग गई।

मुझे आशा है कि आपकी पुत्री और बहन अब पहले से अच्छी हैं।

आपकी,

नैन्सी येस्टर

[गैडिल्यू एक नागा लड़की थी। उसे मृत्यु-दंड दिया गया था। नागा-विद्रोह हुआ था। इस लड़की की अवस्था केवल २० वर्ष की ही थी। उसके मृत्यु-दंड पर मुझे बड़ा आघात लगा और मैंने उसका मामला अपने हाथ में लिया।]

२६७. माओत्से तुंग की ओर से

येनान, शेन्सी

२४ मई १९३९

श्री ज. नेहरू,
आनन्द भवन,
इलाहाबाद (यू. पी.)

प्रिय मित्र,

डाक्टर एम. अटल के नेतृत्व में भारत का जो चिकित्सा-दल यहां आया है और भारत की राष्ट्रीय महासभा ने चीनी जनता को उसके जापानी साम्राज्यवादियों से युद्ध करने के लिए अभिवादन और प्रोत्साहन के जो संदेश भेजे हैं, उन्हें प्राप्त करके हमने बड़ी प्रसन्नता और सम्मान का अनुभव किया है।

हम आपको सूचित करना चाहते हैं कि भारतीय चिकित्सा-दल ने यहां अपना काम शुरू कर दिया है। एर्थ रूट आर्मी के सभी सदस्यों ने उनका बड़े उत्साह के साथ स्वागत किया है। दल के सदस्यों में हमारी समान कठिनाइयों में हाथ बटाने की जो भावना है, उससे उसके सम्पर्क

में आनेवाले सभी लोग बड़े प्रभावित हुए हैं।

आपने चिकित्सा-संबंधी और दूसरी वस्तुओं की जो सहायता दी है उसके लिए हम आपकी महान् भारतीय जनता और राष्ट्रीय महासभा को धन्यवाद देते हैं और उम्मीद करते हैं कि वे भविष्य में भी इस प्रकार की सहायता देते रहेंगे और हम मिलकर जापानी साम्राज्यवादियों को निकाल बाहर करेंगे।

अन्त में, किन्तु कम महत्व के साथ नहीं, हम आपको अपना धन्यवाद, शुभ कामनाएं और हार्दिक अभिवादन भेजना चाहते हैं।

आपका,
माओत्से तुंग

२६८. वल्लभभाई पटेल की ओर से

बम्बई
३ जुलाई १९३९

प्रिय जवाहर,

सर एस. १ तारीख को बापू से मिले और अपनी क्षेत्रीय योजना के बारे में उनसे बातचीत की। बापू ने उनसे कहा है कि इस योजना पर उनसे बातचीत करने की जरूरत नहीं है, लेकिन राजेन्द्रबाबू का सन्देश उन्हें मिल गया है और अगर वह और उनके मुस्लिम लीगी साथी कौमी सवाल को हल करना चाहते हैं तो वह राजेन्द्रबाबू और कांग्रेस के दूसरे मित्रों से मिल सकते हैं, इस स्पष्ट समझ के साथ कि किसी भी पक्ष की तरफ से किसी भी बात पर कोई आश्वासन नहीं है। आज रात को वह फिर आ रहे हैं। इसमें से कुछ भी नतीजा निकलनेवाला नहीं है।

बापू ने सीमा-प्रान्त जाना मुल्तवी कर दिया है, क्योंकि उन्हें बादशाह खान का तार मिला कि उन्हें ५ जुलाई को रवाना होना चाहिए।

उस दिन तुम गुस्से में आगये और 'हरिजन' में प्रकाशित उनकी मुलाकात के मामले पर बहुत आवेश में बातचीत की। उस बात पर तुमको इतना ज्यादा नाराज देखकर हम सबको बड़ा दुःख हुआ और हमने अनुभव किया कि तुमने बापू के साथ बहुत अन्याय किया। मुझे यह भी लगा कि इस तरह की एक-दो घटनाएं उन्हें सार्वजनिक जीवन से अलग हट

जाने का निर्णय लेने को बाध्य कर देंगी। वह ७१ वर्ष के हैं और उनकी बहुत-सी ताकत खत्म हो चुकी है। जब तुम्हारी भावनाओं को चोट पहुंचती है तो उन्हें भी बड़ा दुःख होता है। मैं नहीं सोचता कि वह जितना तुमको चाहते हैं उतना और किसीको चाहते हों, और जब वह देखते हैं कि उनके किसी कार्य से तुमको दुःख पहुंचा है तो वह बड़े सोच में पड़ जाते हैं और दुखी हो उठते हैं। उस शाम के बाद से वह पूरी तरह छुट्टी पाने की सोचने लगे हैं। पेरिन और भरूचा की उनसे बातचीत और राजेन्द्रबाबू के नाम खुरशेद के पत्र ने आग में घी का काम किया है।

मैं उन्हें यह समझाने की कोशिश कर रहा हूं कि वह जल्दी में कोई निश्चय न करें। परन्तु तुम उन्हें जानते हो और वह क्या करेंगे, इसका मुझे कोई पता नहीं है।

तुमको यह सब बता देना मुझे बहुत जरूरी मालूम हुआ, इसलिए लिख रहा हूं। यदि तुम उचित समझो तो उन्हें लिख सकते हो कि तुमसे पूरी तरह सलाह-मशविरा किये बगैर कोई निर्णय न करें।

तुम्हारा,
वल्लभभाई

२६९. महात्मा गांधी की ओर से

सेगांव, वर्धा
२९ जुलाई १९३९

प्रिय जवाहरलाल,

धामी के लोगों का पथ-प्रदर्शन करने के बजाय मैंने उन्हें तुम्हें सौंप दिया है। मेरे खयाल से मेरी तरफ से किसी हस्तक्षेप के बिना तुम्हींको यह भार वहन करना चाहिए। राज्यों का यह विचार दिखाई देता है कि कांग्रेस को अलग रखा जाय और उसकी तथा देशी राज्य परिषद् की उपेक्षा की जाय। मैं 'हरिजन' में पहले ही सुझाव दे चुका हूं कि तुम्हारी समिति से पूछे बिना किसी रियासती संघ या मंडल को अपने-आप कार्रवाई नहीं करनी चाहिए। मुझे कुछ करना ही हो तो तुम्हारे मार्फत करना चाहिए अर्थात् जब तुम मुझसे पूछो तो जैसे कार्यसमिति को अपनी राय दे देता हूं वैसे ही तुम्हें दे दूं। कल ग्वालियरवालों को भी मैंने ऐसा ही कहा है। तुम्हारी समिति को

ठीक ढंग से काम करना है तो उसे थोड़ा-सा पुनर्गठित करना होगा।

आखिर मेरा कश्मीर जाना नहीं हुआ। शेख अब्दुल्ला और उनके मित्रों को मेरा सरकारी मेहमान बनने का विचार सहन नहीं होता। अपने पिछले अनुभव के आधार पर मैंने शेख अब्दुल्ला की अनुमति की आशा से राज्य का प्रस्ताव मंजूर कर लिया था। परन्तु मैंने देखा कि मेरी भूल हुई। इसलिए राज्य के आतिथ्य की स्वीकृति रद्द करके मैंने शेख का आतिथ्य स्वीकार किया। इससे राज्य को परेशानी हुई। इसलिए मैंने वहां जाने का विचार ही छोड़ दिया। मुझसे दोहरी मूर्खता का अपराध हुआ—एक तो तुम्हारे विना वहां जाने का विचार करने का दुःसाहस किया और दूसरे राज्य का प्रस्ताव मान लेने से पहले शेख की इजाजत नहीं ली। मैंने सोचा था कि राज्य का प्रस्ताव मंजूर करके मैं प्रजा की सेवा करूंगा। मुझे स्वीकार करना चाहिए कि शेख और उनके मित्रों के सम्पर्क से मुझे खुशी नहीं हुई। वे हम सबको बहुत ही बेतुके मालूम हुए। खानसाहब ने उन्हें समझाया, मगर कोई नतीजा नहीं निकला।

तुम्हारी लंका-यात्रा शानदार रही, मुझे इसकी परवा नहीं कि तात्कालिक परिणाम क्या हुआ। सालेह तैयबजी मुझसे अनुरोध कर रहे हैं कि तुम्हें बर्मा भेजूं और एण्ड्रूज तुम्हारा विचार दक्षिण अफ्रीका के सम्बन्ध में कर रहे हैं। लंका के लिए तो कांग्रेस के शिष्टमंडल की कल्पना मुझे स्वयं स्फूर्ति से हुई। इन दो स्थानों की प्रेरणा उकसाने पर भी नहीं होती। लेकिन ये बातें तो जब मिलेंगे तब करेंगे। आशा है, तुम ताजे हो और कृष्णा मजे में है। प्यार।

बापू

२७०. महात्मा गांधी की ओर से

सेगांव, वर्धा
११ अगस्त १९३९

प्रिय जवाहरलाल,

योजना-समिति के बारे में (और समय न होने के कारण) कार्यसमिति की मौजूदगी में तुमसे बात करने को आधा ही मन था। शंकरलाल आज सुबह तुमसे बात करके आये थे। साथ में इस मामले पर कृपालानी को उन्होंने

जो पत्र लिखा था उसकी नकल भी लाये थे। उनकी आपत्ति से मेरी सहानुभूति थी। इस समिति के काम-काज को न तो मैं कभी समझ सका हूं और न उसकी कद्र ही कर सका हूं। पता नहीं, वह समिति को बनानेवाले प्रस्ताव की चहारदीवारी के भीतर ही काम कर रही है या नहीं। मैं नहीं जानता कि उसके कार्यकलाप से कार्यसमिति को परिचित रखा जा रहा है या नहीं। उसकी अनेक उप-समितियों का हेतु भी मेरी समझ में नहीं आया है। मुझे ऐसा लगा है कि एक ऐसे प्रयत्न में जिसका कोई फल नहीं निकलेगा, बहुत-सा रुपया और परिश्रम बर्बाद किया जा रहा है। ये मेरी शंकाएं हैं। मैं प्रकाश चाहता हूं। मैं जानता हूं, तुम्हारा मन चीन में है। अगर तुम्हारे खयाल से शाह तुम्हारे विचार प्रकट कर सकते हैं तो मैं उनसे जान लेने की कोशिश करूंगा या तुम अपने महान मिशन से लौट आओ तबतक प्रतीक्षा करूंगा। ईश्वर तुम्हारी रक्षा करे और तुम्हें मातृ-भूमि में सुरक्षित लौटा लाये। प्यार।

बापू

२७१. अबुल कलाम आजाद की ओर से

कलकत्ता
१७ अगस्त १९३९

प्रिय जवाहरलाल,

आपके खत के लिए शुक्रिया। मैंने आपके इलाहाबाद के पते से एक के बाद एक दो खत भेजे हैं। मुझे उम्मीद है, वे आपको मिल गये होंगे।

मुझे नहीं मालूम आया राजेन्द्रबाबू ने मेरा खत कमेटी के सामने पेश किया या नहीं। खुद उन्होंने और वल्लभभाई ने जोर दिया था कि अगर मैं हाजिर नहीं हो सकता तो उस सूरत में अपनी राय भेज दूं और इसीलिए मैंने तफसील में अपनी राय लिख दी थी। मेरी राय में सुभाषबाबू का तर्ज गलत था और वर्किंग कमेटी के लिए जरूरी था कि वह अपनी राय जाहिर करे। लेकिन मैंने यह सुझाव दिया था कि इस मौके पर बहुत ज्यादा सख्ती न दिखाई जाय। मैंने तजवीज की थी कि वर्किंग कमेटी उसी तरह की एक तजवीज पास करे, जिस तरह की आपने यू. पी. में पास की है और बाकी

चीज सदर के ऊपर छोड़ दे। उसके बाद सदर उन लोगों से खतो-किताबत करे और अगर वे लोग कमेटी की तजवीज से एकराय हों तो उनके खिलाफ सदर चाहे तो आगे की कार्रवाई खत्म कर दे। लेकिन अगर वे इस हद तक भी तैयार न हों तब उन्हें उनके मौजूदा ओहदों से निकाल बाहर किया जाय। लेकिन अगले साल उनके चुनाव पर कोई बन्दिश न लगाई जाय।

मैंने आपको फोन पर बातें करने की तकलीफ दी, क्योंकि मैं समझता था कि इस मामले पर गौर करने में आप हिस्सा लेंगे, लेकिन अब मालूम हुआ कि आप करीब-करीब अलहदा रहे और आपकी राय के बगैर फैसला किया गया।

आपका,
आजाद

२७२. मैडम सनयात सेन की ओर से

हांगकांग
१५ सितम्बर १९३९

प्रिय मित्र,

आपके चीन आने पर आपका स्वागत न कर सकने के कारण मुझे जो गहरी निराशा हुई उसीको प्रकट करने के लिए ये थोड़ी-सी पंक्तियां लिख रही हूं। डाक्टर मुखर्जी से मुझे अभी-अभी मालूम हुआ है कि मेरा संदेश आपको चुंगकिंग में नहीं मिला। मैं आपसे मिलने के लिए हवाई जहाज से आने की योजना बना रही थी, लेकिन तभी अखबारों में यह पढ़-कर मुझे बड़ा अफसोस हुआ कि आप स्वदेश लौट गये हैं। फिर भी मुझे विश्वास है कि हम जल्दी ही मिलेंगे। मैं उस दिन की बड़ी उत्सुकता के साथ प्रतीक्षा कर रही हूं जब हम आपका स्वतंत्र चीन में स्वागत कर सकेंगे।

डाक्टर मुखर्जी के साथ चिकित्सा-सम्बन्धी सहायता-कार्य के बारे में मेरी काफी लम्बी बातचीत हुई और हमने इस बात पर विचार किया कि पहले जो चीजें हम यूरोप से मंगाते थे वे अब जब वहां से नहीं मिल सकतीं तब आपके देश से हमें कितनी और किस प्रकार की सहायता मिल सकती है। मुझे यकीन है कि उनसे मेरी जो बातचीत हुई है और हिंदुस्तान में चाइना डिफेंस लीग की शाखा स्थापित करने के बारे में मैंने जो सुझाव

दिये हैं वे सब बातें वह आपको बतायेंगे। हो सकता है कि यहां की जटिल स्थिति के कारण हमें अपनी संस्था कुनमिन या क्वीलिन में ले जानी पड़े। परिवर्तन हुआ तो आपको सूचित करूंगी।

आप जिस कार्य का नेतृत्व कर रहे हैं उससे मैं अपनेको परिचित रखने की चेष्टा करती हूं और साथ-ही-साथ आपके उद्देश्य की प्रगति का पूरी सहानुभूति के साथ अध्ययन करती हूं, क्योंकि वही चीन का भी उद्देश्य है।

अभिवादन सहित

आपकी,
सुंग चिन्ग लिन्ग

२७३. महात्मा गांधी की ओर से

सेगांव, वर्धा
१८ सितम्बर १९३९

प्रिय जवाहरलाल,

च्यांग काई शेक के नाम मेरा पत्र साथ में है। पत्र मैं चाहता था उससे लम्बा होगया। शायद मूल के साथ टाइप की हुई प्रति भेजना अच्छा रहेगा। महादेव कल मद्रास गये। प्यार,

बापू

२७४. कृष्ण कृपालानी के नाम

[कृष्ण कृपालानी काफी समय तक रवीन्द्रनाथ टैगोर के सेक्रेटरी रहे थे। इस समय वह साहित्य अकादमी के सेक्रेटरी हैं।]

आनन्दभवन, इलाहाबाद
२९ सितम्बर १९३९

प्रिय कृष्ण,

२५ सितंबर का तुम्हारा खत अभी मिला। तुम्हें उस आदमी का बहुत लिहाज नहीं है, जो बेहद काम में घिरा हुआ है। अगरचे मामला अहम है, तोभी मैं मामूली तौर पर इस वक्त उसपर कुछ भी लिखने से तुमसे माफी मांग लेता, लेकिन जब मैंने प्रो. साहा[१] का तुम्हारे नाम लिखा

---

[१] मेघनाद साहा, एफ. आर. एस., प्रसिद्ध भौतिक शास्त्री थे। कुछ वर्ष पहले उनका देहांत होगया।

खत पढ़ा तो मुझे उसमें इतने ज्यादा गलत बयान मिले कि मैं पूरी तरह खामोशी अख्तियार नहीं कर सकता, इस आशंका से कि कहीं उनसे गलत-फहमियां पैदा न होजायं। उन्होंने बार-बार मेरा जिक्र किया है और मेरे बारे में कई ऐसी बातें कही हैं, जिनसे योजना-समिति में मैंने जो कुछ कहा है, उसकी बिल्कुल गलत छाप पड़े बिना नहीं रहेगी।

मुझे डर है कि इस विषय पर फिलहाल मैं पूरे विस्तार से नहीं लिख सकता। अभी तो मैं सिर्फ प्रोफेसर साहा या दूसरे लोगों के दिमाग का भ्रम दूर करने की कोशिश करूंगा।

योजना-समिति की बैठकों में सीधे गांधीजी के उसूलों पर किसी भी अवस्था में बहस नहीं हुई। कांग्रेस की तजवीजों में जिस तरह कांग्रेस के उसूल दिये गए हैं उनपर हमने जरूर चर्चा की और इस तरह हमने अप्रत्यक्ष रूप में गांधीजी के उसूलों का जिक्र किया, जिन्होंने गये बीस सालों से कांग्रेस पर बड़ा असर डाला है। मैंने कभी यह नहीं कहा कि श्री कुमारप्पा या किसी दूसरे की बनिस्वत मैं गांधीजी के विचारों को ज्यादा अच्छी तरह समझने का दावा करता हूं। मेरा खयाल है कि इस खास मामले में श्री कुमारप्पा गांधीजी के विचारों के बारे में यकीनन मुझसे कहीं ज्यादा बोलने का हक रखते हैं। ग्रामोद्योग के काम में उनका गांधीजी के साथ बरसों से नजदीक का ताल्लुक रहा है। इसलिए ग्रामोद्योगों और उनके बारे में गांधीजी के विचारों के संबंध में बोलने का उन्हें पूरी तरह हक है।

योजना-समिति में मैंने जो कुछ कहा, वह यह था कि कांग्रेस ने कभी भी अपने-आपको बड़े पैमाने के उद्योगों के खिलाफ घोषित नहीं किया; लेकिन बहुत-सी वजहों से, जिन्हें मैं ठीक समझता हूं, उसने कुटीर-उद्योगों पर जोर दिया है। निजी हैसियत से मेरा बड़े पैमाने के उद्योगों को बढ़ाने में विश्वास है। ताहम मैंने राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक कारणों से खादी-आंदोलन और बड़े ग्रामोद्योगों की पूरे दिल से हिमायत की है। मेरे खयाल में दोनों के बीच जरूरी तौर पर झगड़ा नहीं है, हालांकि कभी-कभी दोनों को किस तरह बढ़ाया जाय या उनके किन्हीं खास पहलुओं के बारे में झगड़ा हो सकता है। इस मामले में मैं ज्यादा हद तक गांधीजी के दृष्टिकोण की नुमाइंदगी नहीं करता हूं, लेकिन व्यवहार में दो दृष्टिकोणों में अभी तक

कोई खास झगड़ा नहीं रहा है।

मुझे यह साफ दिखाई देता है कि कुछ जरूरी और खास उद्योग——प्रतिरक्षा उद्योग, और लोक-सेवा के काम तो बड़े पैमाने पर ही होने चाहिए। कुछ दूसरे उद्योग ऐसे हैं, जो बड़े पैमाने पर या घरेलू उद्योगों के पैमाने पर हो सकते हैं। घरेलू उद्योगों के बारे में जुदा-जुदा रायें हो सकती हैं। इस मतभेद के पीछे दृष्टिकोण और जीवन-दर्शन का मतभेद है और जहांतक मैं श्री कुमारप्पा को समझा हूं, उन्होंने दृष्टिकोण के इस भेद पर ही जोर दिया है। उनका नुक्ता यह था कि बड़े पैमाने की मौजूदा पूंजीवादी प्रणाली बंटवारे के मसले को नजरंदाज कर देती है और इसकी बुनियाद हिंसा पर है। इससे मैं पूरी तरह एकराय हूं। उनका हल यह था कि छोटे-छोटे उद्योगों के बढ़ने से बंटवारा ज्यादा ठीक होता है और हिंसा का तत्व बहुत कम हो जाता है। मैं इससे भी सहमत हूं; लेकिन इससे हम बहुत दूर नहीं जा पाते हैं। हिंसा, एकाधिकार और सम्पत्ति का एक जगह संग्रह, ये मौजूदा आर्थिक ढांचे से पैदा हुए हैं। बड़े पैमाने के उद्योगों से अन्याय और हिंसा नहीं होती, लेकिन पूंजीपतियों और पैसा लगानेवाले लोगों द्वारा बड़े उद्योगों के दुरुपयोग से अन्याय और हिंसा होती है। यह सच है कि मशीन आदमी की ताकत को बेहद बढ़ा देती है, निर्माण और विनाश दोनों के लिए। मेरे विचार से पूंजीवाद के आर्थिक ढांचों को बदलने से मशीन के बुरे इस्तेमाल और हिंसा को मिटाया जा सकता है। निजी मिलकियत और लोभ पर समाज के जिस ढांचे की बुनियाद है, वह जरूरी तौर पर होड़ से पैदा होनेवाली हिंसा को बढ़ावा देता है। समाजवादी समाज में यह बुराई चली जायगी, साथ ही हमारे लिए वह अच्छाई रह जायगी, जिसे बड़ी मशीन लाती है।

मैं सोचता हूं, यह सच है कि बड़े उद्योग और बड़ी मशीन में कुछ खतरे विरासत में आते हैं। शक्ति के एक जगह इकट्ठी हो जाने की प्रवृत्ति होती है। मुझे पक्का यकीन नहीं है कि इसे पूरी तरह खत्म किया जा सकता है। लेकिन मैं दुनिया या किसी तरक्की-पसंद मुल्क की कल्पना नहीं कर सकता, जो बड़ी मशीन को तिलांजलि दे सके। अगर यह मुमकिन हो तो इसका नतीजा होगा उत्पादन का बुरी तरह नीचे गिरना और इस तरह जिंदगी

के मानदण्डों का नीचे चला जाना। एक मुल्क के लिए उद्योगीकरण से दूर रहने की कोशिश करने का नतीजा यह होगा कि वह आर्थिक तथा अन्य प्रकार से दूसरे ज्यादा उद्योग-धंधोंवाले मुल्क का शिकार हो जायगा और वे इसका शोषण करेंगे। छोटे-छोटे उद्योग-धंधों को बड़े पैमाने पर बढ़ाने के लिए, जाहिर है कि राजनैतिक और आर्थिक सत्ता जरूरी है। यह नामुमकिन है कि जिस मुल्क ने अपनेको पूरी तरह छोटे-छोटे उद्योग-धंधों में लगा दिया है, वह कभी भी इस राजनैतिक या आर्थिक सत्ता को हासिल कर सके और इसका असर यह होगा कि वह जैसे चाहता है उस तरह छोटे-छोटे उद्योग-धंधों को भी आगे नहीं बढ़ा सकेगा।

इसलिए मैं महसूस करता हूं कि बड़ी मशीन को बढ़ाना और उसका इस्तेमाल करना और इस तरह हिंदुस्तान का उद्योगीकरण करना उचित और अनिवार्य है। साथ ही मैं इस बात का भी कायल हूं कि चाहे कितना ही उद्योगीकरण हो जाय, हिंदुस्तान में छोटे-छोटे उद्योगों को बढ़ाने की जरूरत से मुंह नहीं मोड़ा जा सकता, और वह भी सिर्फ सहायक उद्योग के रूप में नहीं, बल्कि अलग इकाइयों के रूप में। मैं नहीं जानता कि अगली एक-दो पुश्तों में विज्ञान क्या कर दिखायगा, लेकिन जहांतक मुझे दिखाई देता है, बड़े उद्योगों के साथ-साथ हिंदुस्तान के लिए छोटे-छोटे उद्योग भी जरूरी रहेंगे और उन्हें हर तरह से बढ़ावा मिलना चाहिए। इसलिए मसला दोनों के बीच ताल-मेल बिठाने का है। यह राज्य की ओर से योजना का सवाल है। आज की अव्यवस्थित पूंजीवादी प्रणाली में इसको संतोषजनक ढंग पर सफलतापूर्वक नहीं किया जा सकता।

इस सवाल पर अपने विचार मैंने थोड़े में जाहिर करने की कोशिश की है। मैं किसी दूसरे के विचारों का खुलासा करने की बात नहीं सोच सकता हूं, लेकिन मैं महसूस करता हूं कि छोटे उद्योगों की वकालत करने-वालों से सहयोग करना आसानी से मेरे लिए मुमकिन है, भले ही मैं उनके बुनियादी दृष्टिकोण को स्वीकार न कर सकूं।

बदकिस्मती से हमारा साबका इस समय समाजवादी राज्य से नहीं पड़ रहा है, लेकिन हम बदलती हुई हालत में से गुज़र रहे हैं, जबकि पूंजीवादी निज़ाम टूट रहा है। इसमें अनेक मुसीबतें उठ खड़ी होती हैं। जो हो, यह

साफ है कि आज भी जो उसूल लागू किये जायं वे वही हों, जो कांग्रेस ने रखे हैं, यानी बुनियादी उद्योग-सेवाएं, यातायात वगैरा राज्य के अधीन या नियंत्रण में हों। अगर बुनियादी उद्योगों में सभी महत्वपूर्ण उद्योग आ जाते हैं तो हमें बहुत हद तक समाजीकरण हासिल हो जाता है। हमारी नीति के जरूरी नतीजे के तौर पर मैं यह भी कहूंगा कि जहां निजी स्वामित्व के बड़े उद्योग और छोटे उद्योग में झगड़ा हो, वहां वह बड़ा उद्योग राज्य का हो जाना चाहिए या उसपर राज्य का नियंत्रण रहना चाहिए। उस हालत में राज्य को किसी भी नीति को, जो कि वह निश्चित करता है, अख्तियार करने की ताकत और छूट होगी, और वह दोनों का तालमेल बिठा सकेगा।

पिछले बीस वर्षों में कांग्रेस की नीतियों के काफी तजुर्बे की बुनियाद पर मैं विश्वास के साथ कह सकता हूं कि छोटे उद्योग हिंदुस्तान के लिए बड़े आर्थिक और सामाजिक लाभ के रहे हैं। यह बिल्कुल सही है कि कांग्रेस यह मानकर चली है कि बड़े पैमाने के उद्योग अपनी देख-भाल करने के लिए काफी मजबूत हैं और इसलिए ज्यादा ध्यान छोटे उद्योगों पर दिया जाना चाहिए। इस बात को मुनासिब संदर्भ में समझने की जरूरत है। हमारा संगठन तो गैर-सरकारी है और राज्य का आर्थिक ढांचा हमारे नियंत्रण से एक दम बाहर है। ऐसी हालत में बड़े पैमाने के उद्योग को बढ़ावा देने का मतलब निजी निहित स्वार्थों को बढ़ावा देना होता है, अक्सर विदेशी निहित स्वार्थों को। हमारा मकसद सिर्फ यही नहीं है कि हिंदुस्तान की बेकार पड़ी इन्सानी ताकत और साथ ही बड़ी तादाद में लोगों के बेकार वक्त का इस्तेमाल करके पैदावार को बढ़ावें, बल्कि हिंदुस्तान की जनता में अपने पैरों पर खड़े होने की ताकत भी पैदा करें। कांग्रेस ने इसमें बड़ी हद तक कामयाबी हासिल की है।

इस विषय पर महज सिद्धान्त के रूप में, हवा में, विचार नहीं किया जा सकता, बल्कि इसका ताल्लुक उन परिस्थितियों और जीवन के तथ्यों के साथ होना चाहिए, जो मुल्क में मौजूद हों। हम मानवीय तथ्य को कभी नजरंदाज नहीं कर सकते। आज चीन में छोटे उद्योगों की तरफ कोई खास झुकाव नहीं है। लेकिन हालातों ने चीनियों को अपने गांवों के उद्योग-धंधों और सहकारी संस्थाओं को तेजी के साथ बढ़ाने के लिए मजबूर कर दिया

ह। हमारे गांवों के उद्योग-धंधों के आंदोलन में चीन की बहुत दिलचस्पी है और मुझसे उन्होंने कहा था कि हम उद्योग-धंधों के अपने कुछ विशेषज्ञों को चीन भेजें। मुमकिन है कि कुछ अच्छे चीनी विशेषज्ञ भी हमारे गांव के उद्योग-धंधों के तरीकों को समझने आयें।

प्रोफेसर साहा कहते हैं कि गांव के उद्योग-धंधे पुराने तरीकों पर ही निर्भर नहीं रहने चाहिए। कोई भी नहीं कहता कि वे रहने चाहिए। विज्ञान की नई-से-नई तकनीक का फायदा उठाया जाना चाहिए। परंतु ऐसा करने में यह याद रखना चाहिए कि गांववालों के लिए क्या संभव है और क्या साधन उनके पास हैं। अगर कोई चीज उनकी पहुंच के बाहर है तो वह व्यावहारिक नहीं है। अगर बिजली बहुत सस्ती हो और गांवों में आसानी से पहुंचाई जा सके तो उससे पूरा फायदा उठाना चाहिए। अगर गांव के उद्योग के लिए नई तरह की मशीन ज्यादा खर्चीली हो या जो गांव में आसानी से न सुधारी जा सके तो मौजूदा हालत में यह गांववालों के लिए ज्यादा अच्छी नहीं है। मामूली पुराने ढंग की सादी मशीन, जैसे मामूली चर्खा, न-कुछ में से कुछ पैदा कर देती है, क्योंकि उसपर गांववाला खाली या बेकार घंटों में काम करता है। उस गांववाले को जरूर उससे अच्छी मशीन दीजिये।

जापान की जो मिसाल प्रो. साहा ने दी है, वह बहुत ठीक नहीं है। वहां छोटे-छोटे उद्योग नहीं हैं, लेकिन विकेन्द्रित उद्योग हैं। इसमें शक है कि बड़े पैमाने के भरे-पूरे उद्योगों के मुकाबले इन्हें कितनी तरजीह दी जा सकती है।

प्रो. साहा सोचते मालूम होते हैं कि हिंदुस्तान में कुछ लोग यह महसूस नहीं करते कि बुनियादी उद्योगों का नियंत्रण विदेशी शोषकों के हाथों में है। वे हमारे नेताओं पर इलजाम लगाते हैं, मानो इसमें उनकी मंजूरी हो। दरअसल यह गैर-मामूली बात है, और यह जाहिर करती है कि हिंदुस्तान में क्या हो रहा है, इसकी जानकारी प्रो. साहा को नहीं है। यह छोटे या बड़े उद्योग का सवाल नहीं है। हमारे उद्योग में विदेशी निहित स्वार्थों के बढ़ने की हर हिंदुस्तानी निन्दा करता है, और उन्हें रोकने के लिए लगातार कोशिशें की गई हैं। प्रो. साहा बिना तनिक भी जानकारी

के यह भी कहते हैं कि कांग्रेस के मन्त्री उद्योगपतियों के (जिनमें ज्यादातर विदेशी हैं) हाथों की कठपुतली-मात्र हैं। यह सच है कि हमारे मन्त्री कई तरह से परिस्थितियों के हाथों की कठपुतली हैं और वे जिस तरह चाहते हैं उस तरह काम नहीं कर सकते। आज हर सरकार पूंजीवादी आर्थिक ढांचे के चंगुल में फंसी है, परन्तु यह कहना कि हमारे नेता मुगल बादशाहों के जैसा अपराध कर रहे हैं और विदेशी व्यापार यूरोप के व्यापारियों के हाथों में जाने दे रहे हैं अचरजभरा है, और हिंदुस्तान के हाल के इतिहास की तमाम राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक घटनाओं की जानकारी की कमी को जाहिर करता है।

यह विषय बहुत बड़ा है। मैंने तो सिर्फ एक या दो पहलुओं को छुआ है, जो मुझे सूझे। यह विषय तो इस तरह का है कि जिसपर चर्चा हो और पूरी तरह से हो, लेकिन यह बदकिस्मती है कि प्रो. साहा का खत ऐसी भावना से लिखा गया है, जो वैज्ञानिकता या तटस्थता से बहुत दूर है।

तुम्हारा,
जवाहरलाल

श्री कृष्ण कृपालानी
शांतिनिकेतन, बंगाल।

२७५. सर स्टैफ़र्ड क्रिप्स की ओर से

हाउस ऑव कामन्स
११ अक्तूबर १९३९

प्रिय नेहरू,

मैं इस इन्तजार में रहा हूं कि आपकी ओर से बातें कुछ अधिक निश्चित होती हुई दिखाई दें तब मैं आपको पत्र लिखूं। मैं जो कुछ भी यहां कर सकता था, करता रहा हूं। मैं ज़ेटलेन्ड से मिला था और मैंने उन्हें स्थिति की गम्भीरता को समझाने की चेष्टा की। मैंने अपनी ओर से कुछ सुझाव भी रखे, जो कि उन सुझावों जैसे हैं, जिन्हें (जैसाकि अब मुझे कृष्ण से मालूम हुआ है) आपने स्वीकार कर लिया है। ज़ेटलेन्ड ने खुद कहा कि इन सुझावों को वह तार से वाइसराय के पास भेज देंगे और मुझे उम्मीद है कि उन्होंने ऐसा किया भी है। लेकिन यह बात वाइसराय के साथ आपकी पहली मुलाकात से एक दिन पहले की है। मैं समझता हूं कि हमें यहां कांग्रेस के कार्य के लिए

बहुत काफी प्रचार करने में सफलता मिली है, जिसे मैं दूसरी स्थितियों को ध्यान में रखते हुए आश्चर्यजनक रूप से अच्छा मानता हूं। लेकिन स्वभावतः हम जनता के मत पर बहुत ज्यादा दबाव डालने की आशा नहीं कर सकते। मंत्रिमंडल के सदस्यों के सामने मैंने देश-विदेश और युद्ध की सामान्य स्थिति के बारे में जो बहुत-से विवरण उपस्थित किये हैं उनमें मैंने लोकतंत्र और स्वतंत्रता के तर्क की भी चर्चा करने की चेष्टा की है, जैसाकि वह हिंदुस्तान के प्रति हमारी प्रवृत्ति से सिद्ध होता है। इसलिए मुझे विश्वास है कि सम्भावित परिणामों की ओर से मंत्रिमंडल पूरी तरह से सचेत है, यद्यपि मुझे इस बात का निश्चय नहीं है कि असल में जो वास्तविक स्थिति पैदा हो रही है उसकी यथार्थता की ओर से वे लोग अभी जागरूक हुए हैं या नहीं। मजदूर-दल, जिसका कि आप जानते हैं, मैं अब सदस्य नहीं रह गया हूं, एक बहुत ही अच्छा और सहायक दृष्टिकोण अपना रहा है और वह सरकार पर दबाव भी डाल रहा है। मुझे उम्मीद है कि कुछ ही दिनों में हम इस मामले को कामन्स-सभा में खोलकर रख देंगे, क्योंकि उससे और भी अधिक प्रचार होगा।

लेकिन इन बातों के बावजूद, इस प्रकार से एक निरर्थक संकेत-मात्र से कुछ अधिक की आशा रखना सम्भव से बहुत ज्यादा की उम्मीद करना होगा। विंस्टन चर्चिल के मंत्रिमंडल में आ जाने से भारतीय स्वतन्त्रता के समर्थकों की संख्या बढ़ी नहीं है, फिर भी यह एक अच्छी बात है कि वह सब बातों को यथार्थता की दृष्टि से देखते हैं। अपनी इसी यथार्थवादी प्रवृत्ति के कारण ही उन्हें रूसी मामलों में दूसरों की अपेक्षा अधिक कीर्ति मिली है।

मैं जानता हूं कि आपको और कांग्रेस को इस बात के लिए सावधान करने की जरूरत नहीं है कि आप ऐसी कोई भी अव्यावहारिक चीज स्वीकार नहीं करेंगे, जो निर्णयात्मक रूप से सिद्ध न कर दे कि जो कहा जाता है, उसे माना भी जाता है। मुझे पूरा विश्वास है कि अंग्रेजों और हिंदुस्तानी जनता दोनों की भलाई इसीमें है कि अब कांग्रेस अपनी मांगों पर चट्टान की तरह अडिग खड़ी रहे। स्वभावतः मेरा मतलब विस्तार की बातों से नहीं है। मैं जानता हूं कि अगर स्वतंत्रता और लोकतंत्र की बात एक बार क्रियात्मक रूप से स्वीकार कर ली जाय तो आप इन विस्तार की बातों पर समझौता करने को हमेशा तैयार हैं। लेकिन अगर आप लोग इस समय दृढ़ न रहे तो फिर किसी

ऐसे समझौते की आशा नहीं की जा सकती, जिसपर यहां के सब लोग सहमत हों, और ऐसी हालत में, मुझे डर है—मैं समझता हूं कि आपको भी उतना ही डर होगा—कि हिंदुस्तान में एक बार फिर हिंसात्मक दमन का चक्र चल पड़ेगा।

अब मैं दो-चार शब्द यूरोप की स्थिति के बारे में कहना चाहूंगा, जैसीकि वह आज दिखाई देती है। मुझे उम्मीद है कि आपने 'ट्रिब्यून' में मेरे लेख देखे होंगे और उनसे आपको इस बात का संकेत मिल गया होगा कि मेरा दिमाग किस दिशा में कार्य कर रहा है, यद्यपि आपको यह भी ध्यान रखना चाहिए कि हमारे पीछे सेंसर मंडराता रहता है। मैंने जो कुछ भी लिखा है उसमें सेंसर के लोगों ने अभी तक कुछ अधिक या महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं किया है। लेकिन कुछ मामलों में हम राय देने के लिए इतने स्वतंत्र नहीं हैं, जितने कि होने चाहिए। जबतक मैं युद्ध का समर्थन कर रहा तबतक निश्चय ही मुझे कोई ऐसी बात नहीं कहनी चाहिए जिसको जर्मनी का रेडियो इस देश के खिलाफ उद्धृत कर सके।

यह बात बिल्कुल स्पष्ट है कि जर्मनी और रूस में नई जागृति के कारण वहां की स्थिति में परिवर्तन आगया है। फ्रांस की सरकार द्वारा अपने यहां के सबसे बड़े राजनतिक दल का दमन, इटली के साथ पुन: मैत्री की स्थापना और हिंदुस्तान तथा औपनिवेशिक समस्याओं के प्रति हमारी सरकार का रुख, इन सभी बातों से यह पता लगता है—जैसाकि कल दलादियें ने कहा था—कि यह युद्ध सिद्धान्तों का युद्ध नहीं है। मैं समझता हूं कि यह एक बहुत ही घातक और दु:खदायी स्वीकारोक्ति है। कुछ लोग अब भी सोचते हैं कि हम लोकतंत्र और स्वतंत्रता के सिद्धान्तों के लिए लड़ रहे हैं, किन्तु अब यह बिल्कुल स्पष्ट होगया है—जैसा कि पहले भी हो चुका है—कि इस बहाने साम्राज्यवाद अपने जीवन के लिए लड़ रहा है। यह जीवन का संघर्ष है और यह बहुत ही गम्भीर होगा, खास तौर से अगर रूस और जर्मनी हमारे विरुद्ध मोर्चा ले लें, जो कि बिल्कुल भी असम्भव नहीं है। इसलिए हमारे लिए यह और भी आवश्यक हो जाता है कि हिंदुस्तानी जनता के साथ ठीक सम्बन्ध बनाये रखने के लिए हम जो कुछ भी कर सकते हैं, करें।

जबतक ब्रिटिश सरकार अपने युद्ध-सम्बन्धी उद्देश्यों के बारे में पहले

से अधिक निश्चित और स्पष्ट वक्तव्य नहीं देगी और जबतक ये घोषित उद्देश्य अबतक के खोखले शब्दों को असलियत का जामा नहीं पहनायेंगे तबतक निश्चय ही इस देश में बहुत बड़ा और गहरा मतभेद बना रहेगा। इसका संकेत अभीसे मिलने लगा है और चाहे कैसा भी दमन-चक्र क्यों न चलाया जाय, वह स्थिति को और भी अधिक बिगाड़ने के अतिरिक्त और कुछ नहीं कर सकता।

दुर्भाग्य की बात है कि पिछले कुछ वर्षों में राजनीति का जो रूप रहा है उससे यहां की सरकार के पैर और भी मजबूत हो गये हैं और फिल-हाल उसमें कोई परिवर्तन आने की आशा नहीं है। लेकिन जबतक ऐसा परिवर्तन नहीं होगा तबतक इच्छित लाभ प्राप्त नहीं हो सकता।

आज की बहुत ही अन्धकारपूर्ण विचारधारा में एक उज्ज्वल रेखा यही है कि अधिकांश जनता, जिनमें कुछ कट्टर-से-कट्टर अनुदारदली भी हैं, इस बात को महसूस करने लगे हैं कि हमारी पुरानी सभ्यता खत्म हो चुकी है और अब वे उस नई सभ्यता का निर्माण करने में हाथ बंटाने को तैयार हैं जिसकी उन्नति के रास्ते में किसी भी निहित स्वार्थ को बाधा नहीं डालने दी जा सकती, यहांतक कि उनके अपने निहित स्वार्थों को भी नहीं। यह एक बहुत ही उल्लेखनीय और स्पष्ट परिवर्तन है। ये लोग इस बात को जानने के लिए बड़े चिन्तित हैं कि आखिर हम लोग किस बात के लिए लड़ रहे हैं। अपने युद्ध-उद्देश्य के बारे में हमने जो नीति प्रकट की है, अगर युद्ध उसीके आधार पर चलता रहा तो इसमें सन्देह नहीं कि यहां और हिंदुस्तान में दोनों ही जगह झगड़े उठ खड़े होंगे। यह बात मैं यहां की सरकार को समझाने की पूरी कोशिश करता रहा हूं और मुझे विश्वास है कि यहां के मंत्रिमंडल में भी अब कुछ-कुछ जागृति पैदा होगई है। कठिनाई यह है कि सदा की तरह इस जागृति के आने में इतनी देर लग जायगी कि फिर बिगड़ी बात बन नहीं सकेगी। यह भी एक कारण है, जिससे मैं उम्मीद करता कि कांग्रेस अपनी घोषणा पर एक चट्टान की तरह अडिग रहेगी, क्योंकि उससे हम लोगों को भी सरकार को यह समझाने में सहायता मिलेगी कि कुछ-न-कुछ क्रियात्मक रूप से अवश्य करना चाहिए। केवल अस्पष्ट गोलमोल घोषणाओं पर ही भरोसा नहीं रखा जा सकता।

आपको और कांग्रेस को मेरी शुभ कामनाएं। काश कि आप और हम मिलकर विस्तार के साथ बातचीत कर सकते !

आपका,
स्टैफ़र्ड क्रिप्स

२७६. रोजर बाल्डविन की ओर से

न्यूयार्क सिटी
१२ अक्तूबर १९३९

प्रिय जवाहरलाल,

'विश्व-इतिहास की झलक' के अंग्रेजी संस्करण की आपने जो प्रति भेजी है उसके लिए अत्यंत कृतज्ञ हूं। पुस्तक-प्रकाशन की दृष्टि से ही नहीं, बल्कि विद्वत्तापूर्ण खोज और आकर्षक अभिव्यक्ति की दृष्टि से भी यह एक अद्भुत कृति है।

मुझे यह सोचकर आश्चर्य होता है कि जेल के एकान्त में आप कैसे इतनी सामग्री एकत्र कर सके और उसे इतनी सफलता के साथ छांट सके। मैं तो ऐसा काम करने में घबरा जाऊंगा और मुझे तो यह काम जीवनभर का काम मालूम देगा। अमरीका के सम्बन्ध में आपने जो टीका-टिप्पणी की है, उसे मैंने बड़ी दिलचस्पी के साथ पढ़ा है और मैं उससे पूरी तरह सहमत हूं। आज से एक साल पहले युद्ध के कगार पर खड़े, कांपते संसार के सम्बन्ध में भी मैंने आपका सुन्दर परिच्छेद पढ़ा है।

अब जबकि वह कगार को पार कर चुका है, मैं समझता हूं कि हम सब लोग इतिहास के सबसे संहारकारी परिवर्तनों की धारा में बह रहे हैं और इस बात का पूरा-पूरा खतरा है कि हम लोग विश्व-संघ के तट की ओर नहीं जायंगे, जहां स्थायी शान्ति के लिए निश्शस्त्रीकरण और स्वतंत्र व्यापार आवश्यक माना गया है, बल्कि नई तानाशाहियों की स्थापना की दिशा में जायंगे। मैं स्वभाव से आशावादी हूं, लेकिन आजकल समय बड़ा कठोर है। समाचारपत्रों के पढ़ने से मुझे ऐसा लगता है कि हिंदुस्तान में भी यही दशा है। कांग्रेस की कार्रवाइयां और उसके अनेकानेक विरोधी तत्वों के समाचार भी यहां काफी विस्तार के साथ छपते हैं। इन समाचारों में आपके भी

उल्लेखनीय कार्यों के समाचार होते हैं।

हार्दिक शुभकामनाओं सहित,

आपका मित्र,
रोजर बाल्डविन

२७७. रघुनन्दनशरण की ओर से

[रघुनन्दनशरण दिल्ली के एक प्रमुख उद्योगपति थे। वह यहां के प्रमुख कांग्रेसी भी थे। नवाबजादा से मतलब लियाकतअली खां से है, जो बाद में पाकिस्तान के प्रधान मंत्री बने।]

दिल्ली

निजी और गोपनीय १४ अक्तूबर १९३९

प्रिय पंडितजी,

आपके दिल्ली से चले जाने के दो दिन बाद में नवाबजादा से, उनके द्वारा फोन से बुलाये जाने पर, मिला। हालांकि किसी खास चीज पर हमने चर्चा नहीं की, तो भी मेरे लिए यह साफ था कि वह जानना चाहते हैं कि क्या मि. जिन्ना से आपकी बातचीत और आगे बढ़ेगी या नहीं। यह भी साफ तौर से मालूम होता था कि वह हिन्दू-मुस्लिम सवाल का हल सच्चे दिल से चाहते हैं।

इसके कुछ ही समय बाद सुभाष दिल्ली आये। आने के थोड़ी देर बाद ही उन्होंने मुझे फोन किया और कहा कि मैं उनसे फौरन मिल लूं। मैं तुरन्त उनसे मिलने चला गया और आपसे हुई मुलाकात के बारे में जितना थोड़े में हो सकता था, उतने में उन्हें बता दिया। उनपर यह गलत छाप जान पड़ती थी कि 'स्टेट्समैन' में प्रकाशित खबर किसीके उकसाने से छपी है। मैंने उन्हें बताया कि ऐसा नहीं है। वाइसराय से मिलने से पहले वह मि. जिन्ना से नहीं मिल सके। उनके पास इसके लिए समय नहीं था। यहांपर यह कहा जा सकता है कि मि. जिन्ना चाहते थे कि इससे पहले कि वह वाइसराय-भवन के लिए रवाना हों, उनसे मिल लें।

इसलिए वह दोपहर बाद मिले। रात को लाला शंकरलाल ने मुझसे कहा कि हाई कमाण्ड में विश्वास का नितांत अभाव समझौते के मार्ग में रुकावट था और अगर सारी बातें सुभाष पर छोड़ दी जातीं तो जो होता, समझौते पर पहुंचने में कोई दिक्कत न होती। मुझे तो वस्तुत: इसपर विश्वास करना ही मुश्किल होगया, इसलिए दूसरे दिन सुबह मैं सुभाष से मिला। उन्होंने भी कम-ज्यादा वही बात मुझे बताई, जो पिछली रात को लाला शंकरलाल ने कही थी। इसपर मैंने उनसे पूछा कि क्या मि. जिन्ना आपपर उतनी पूरी तरह अविश्वास करते हैं, जितने कि आपके साथी ? इस सवाल से थोड़ा घबराते हुए उन्होंने उत्तर दिया कि अगर आप सबसे पहले अपने साथियों को किसी ऐसे समझौते को मानने के लिए राजी कर सकते हैं, जिसपर आप मि. जिन्ना से व्यक्तिगत बातचीत के परिणाम पर पहुंच सकें तो आप मि. जिन्ना से अपनी बातचीत उपयोगितापूर्वक आगे बढ़ा सकते हैं। उन्होंने मि. जिन्ना को झूठे अभिमान का साक्षात अवतार बताया और यह भी कहा कि सफलतापूर्वक उनसे कैसे निबटना चाहिए, यह केवल वही जानते हैं। मैंने कहा कि अगर मि. जिन्ना से आगे बातचीत करने का मौका आया तो उनकी सेवाएं आपको अवश्य सुलभ रहेंगी। परन्तु उन्होंने कहा कि जहांतक कांग्रेस का संबंध है, वहां वह कुछ भी नहीं हैं, इसलिए वह इस बातचीत में अच्छी तरह भाग नहीं ले सकेंगे। मैंने उनसे कहा कि वास्तव में यह तो कोई बाधा है नहीं। फिर भी उन्होंने मुझसे कहा कि मैं उनसे शाम को, उनके मि. जिन्ना से मिलने के बाद, मिलूं। मैंने ऐसा ही किया। उन्होंने मुझसे कहा कि मि. जिन्ना आपसे मिलकर और मामले पर आगे चर्चा करके खुश होंगे, बशर्ते कि कार्यसमिति आपको औपचारिक या अनौपचारिक रूप से उनसे बात करने का अधिकार दे दे।

सच पूछिये तो सुभाष ने जो कुछ कहा, उसपर मुझे जरा भी विश्वास नहीं हुआ। इसके लिए मेरे पास उचित कारण हैं। कुछ समान दोस्तों ने मुझे बताया कि मुलाकात का मि. जिन्ना पर अनुकूल असर हुआ और उन्हें उम्मीद है कि बातचीत फिर आगे बढ़ाई जायगी। इसकी पुष्टि करने के लिए मैं नवाबजादा से फिर मिला। बड़ी भावना के साथ

अपनी बातचीत की शुरुआत करते हुए उन्होंने कहा कि अगर हमारे नेता सिर्फ इस मौके पर अपने-आपको जरा ऊपर उठा लें तो हम इस बड़े मौके का आजादी हासिल करने में कामयाबी के साथ फायदा उठा सकते हैं। आखिर यह साम्प्रदायिक सवाल ऐसा नहीं है, जिसे हल न किया जा सके। मैंने उन्हें विश्वास दिलाया कि मैं भी उनकी भावनाओं को सही मानता हूं और सभी सही तौर पर सोचनेवाले लोग ऐसा ही कहेंगे। फिर मैंने उनसे पूछा कि आपकी और मि. जिन्ना की बातचीत, जो इतनी खुशी के साथ शुरू हुई थी, न्यायसंगत समाप्ति तक क्यों नहीं बढ़ सकी? उन्होंने थोड़ा आश्चर्य प्रकट किया और कहा कि मि. जिन्ना ने बुनियादी सवालों के बारे में अपने विचार आपको पूरी तरह बता दिये हैं, अब अगला कदम आपको उठाना है। यह फैसला आपको करना है कि उन्होंने जो आधार बताये हैं वे आपको मंजूर हैं या नहीं? उन्होंने यह भी कहा कि जहांतक मि. जिन्ना का ताल्लुक है, उनका रुख बड़ा दोस्ताना और गंभीर है और जहांतक संभव होगा, वह झगड़े के मुद्दों को टालेंगे। उन्होंने यह भी कहा कि सब लोगों में इस काम के लिए सबसे काबिल और उनकी पसंदगी के आदमी आप ही हैं। नवाबजादा ने बताया कि अभी जैसा प्रोग्राम है, उसके मुताबिक मि. जिन्ना अभी कुछ दिन दिल्ली में ही ठहरेंगे। अगर इस बारे में कुछ करना है तो सरकार की तरफ से कुछ ऐलान होने से पहले ही हो जाना चाहिए। अगर आप समझें कि मि. जिन्ना के साथ आपकी बातचीत से कुछ फायदा होगा तो कृपया मुझे खबर कर दें। जैसी हिदायत होगी, मैं वैसा ही करूंगा।

शायद आपको यह जानना दिलचस्प लगेगा कि मुफ्ती किफायतुल्ला और जमीयत-उल-उलेमा के दूसरे नेताओं से सुभाषबाबू मिले थे। उन्होंने इनसे यह आश्वासन चाहा कि वह फारवर्ड ब्लाक का समर्थन करेंगे। सुभाष ने साफ तौर पर उन्हें जता दिया कि कांग्रेस अब आगे जो भी निश्चय करे, वह तो सरकार से लड़ेंगे ही। अब ब्रिटिश सरकार से कोई समझौता करने में वह शरीक नहीं होंगे। मुफ्तीसाहब ने उन्हें सलाह दी है कि वह तसल्ली से तबतक इंतजार करें जबतक कि कांग्रेस कोई फैसला न कर ले। जल्दबाज़ी करने से कोई फायदा नहीं होगा। उचित यही होगा कि

सारे राष्ट्रीय संगठन मिलकर काम करें। सुभाषबाबू कुछ निराश से होकर ही लौटे हैं।

आपका स्वास्थ्य अच्छा होगा।

सादर आपका,
नन्दन

२७८. रघुनन्दनशरण की ओर से

दिल्ली
१७ अक्तूबर १९३९

प्रिय पण्डितजी,

आपका कृपा-पत्र मिलते ही मैंने नवाबजादा से सम्पर्क स्थापित किया। उन्होंने मुझे फोन किया और कहा कि मिं. जिन्ना इस मामले पर मुझसे बातचीत करना चाहेंगे। इसलिए मैं गया और उनसे बातचीत की। अभी लौटा हूं और अब आपको लिख रहा हूं।

वह मुझसे बड़ी सौजन्यता और गहरी भावनाओं के साथ मिले और बातचीत की शुरुआत १९२२ के साल के प्रसंग की याद दिलाते हुए की, जबकि मैं उनसे और उनकी पत्नी से खूब मिला करता था। उन्होंने बातचीत भावनापूर्ण ढंग और खुले दिल से की। वह खासतौर पर अच्छे मूड में थे और विनोदी मालूम पड़ रहे थे। शुरू में ही उन्होंने मुझसे आपको झूठी बातों और गप्पों के खिलाफ चेतावनी देने के लिए कहा। बड़े ही स्पष्ट शब्दों में उन्होंने कहा कि सुभाष और उनके लोग जो कुछ कह रहे हैं, उसमें एक शब्द भी विश्वास करने का नहीं है। उन्होंने कहा कि मैं यह सोच भी नहीं सकता कि मैंने किसीसे कहा हो कि कार्य-समिति के सदस्यों में मेरा विश्वास नहीं है। इसके विपरीत उन्होंने कहा कि वर्किंग कमिटी के अधिकांश सदस्यों को तो वह बहुत आदर की दृष्टि से देखते हैं। आपके बारे में बातचीत करते हुए उन्होंने कहा कि आपके लिए उनमें बड़ा स्नेह है और आपके चरित्र और ईमानदारी के प्रति उनके दिल में बड़ी इज्जत है। फिर उन्होंने कहा कि हिन्दू-मुस्लिम मसले के बारे में अपनी तरफ से उन्हें जो कुछ कहना था वह कह चुके हैं, अगले कदम का दारोमदार आपपर है। असल में उन्होंने कहा कि उन्होंने निश्चित रूप से आपसे अनुरोध किया है कि आप अपने साथियों

से मशविरा कर लें और फिर बातचीत को आगे बढ़ावें। वाइसराय के साथ बातचीत के बारे में उन्होंने आपसे कहा था कि अगर जरूरत हुई तो इस मुलाकात के बाद वह आपसे संपर्क कर लेंगे। आपके अपने साथियों से मश-विरा कर लेने के बाद वह पूरी अपेक्षा रखते हैं कि हिन्दू-मुस्लिम मसले पर चर्चा करने के लिए वह फिर सम्पर्क करेंगे। उन्होंने कहा कि यह बड़े दुःख की बात है कि मामला दोस्ती की भावना से नहीं सुलझाया जा सका। उन्होंने बताया कि हमारे बीच उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव का-सा फासला नहीं है। जितना हम सोचते हैं उससे ज्यादा हम एक-दूसरे के नजदीक हैं। उन्होंने कहा कि आपके साथ बातचीत का सूत फिर से जोड़ने का वह दर-असल स्वागत करेंगे। वह यहां कम-से-कम २२ तक रहेंगे। उन्होंने २२ ता. को वर्किंग कमिटी की बैठक दिल्ली में बुलाई है। इसके बाद वह कहां-कहां जायंगे, यह वह ठीक-ठीक नहीं जानते।

एक समाचार-पत्र का प्रतिनिधि वाइसराय के बयान अथवा कहूं, वाइ-सराय की उस घोषणा की, जो अगले दिन सुबह प्रकाशित हो जायगी, खबर पहले से ही उन्हें देने आया था। मेरा विचार था कि सारी चीजों से मि. जिन्ना बहुत दुखी और बेहद निराश थे। जाहिरा तौर से इसका उनपर अच्छा असर पड़ा। मैंने इसे शाम को पढ़ा था और मुझे कहना चाहिए कि मैं एकदम निराश हुआ। यह हमारी उम्मीद से ज्यादा खराब है। कोई घोषणा इससे ज्यादा प्रतिक्रियावादी और कमीनेपन से भरी हुई नहीं हो सकती थी। मुझे तो लगा, मानो जेल जाने के लिए मुझे बिस्तर बांध लेना चाहिए।

मैं यह कहने का साहस करता हूं कि आपसी समझ पैदा करने का यही समय है। मि. जिन्ना की चित्त-वृत्ति उपयुक्त है। आप उन्हें लिखिये और उनके साथ मुलाकात का इंतजाम करा लीजिये। निश्चय ही आप दोनों मिलकर जो समझौता कर लेंगे वह दोनों संस्थाओं को स्वीकार होगा।

आशा है, आप स्वस्थ और अच्छे होंगे।

सादर आपका,
नन्दन

फिर से—

आपको यह बताना रह गया कि मैंने दो महत्वपूर्ण नुक्तों पर खास

तौर पर संकेत किया था—एक यह कि मुस्लिम लीग को स्वतंत्रता के लिए कांग्रेस के दावे का समर्थन करना चाहिए, दूसरे उसे अपना यह विचार छोड़ देना चाहिए कि दो राष्ट्र हैं, एक हिन्दू और दूसरा मुस्लिम। इसका उन्होंने कोई साफ जवाब नहीं दिया। परन्तु जैसीकि उनकी आदत है, उन्होंने अपना विरोध या नामंजूरी ज़ाहिर नहीं की। इसके विपरीत हमारी बातचीत जारी रही और धीरे-धीरे वह अधिकाधिक मधुर और मैत्रीपूर्ण होती गई, शब्दों और विषय दोनों दृष्टियों से। अपने विचार प्रकट करने के लिए उन्होंने अपनी बात जिस तरह पेश की और जो शब्द कहे, उनपर अगर विश्वास किया जा सके तो उनसे समझौता होने में जरा भी कठिनाई नहीं होनी चाहिए। लीग के दूसरे खास-खास सदस्यों के मुकाबले, बेहिचक मेरी राय है कि वह उनसे हर तरह से बढ़कर हैं। मुझे लगा कि मैं सचमुच किसी ऐसे आदमी से बात कर रहा हूं जिसके अन्दर कुछ 'दम' है। अगर उन्हें केवल अपने प्रति सहिष्णु बना सकें तो उनपर विश्वास और भरोसा किया जा सकता है—यह है वह अचूक राय, जो मैंने उनके बारे में बनाई है।

पत्र-वाहक आपके जवाब के लिए वहीं रुकेगा। अगर आप मि. जिन्ना के नाम कोई पत्र देना चाहें तो इसीके हाथ भेज सकते हैं और मैं ऐसी व्यवस्था कर दूंगा कि कोई फौरन जाकर उन्हें दे आये।

सादर आपका,

नन्दन

२७८. मोहम्मद अली जिन्ना के नाम

लखनऊ,

निजी १८ अक्तूबर १९३९

प्रिय जिन्ना,

नंदन ने कल की उनकी और आपकी मुलाकात और बातचीत के बारे में मुझे लिखा है। मुझे अफ़सोस है कि कुछ गलतफ़हमी की वजह से आपने तो यह समझ लिया कि मैं दिल्ली में आपसे फिर मिलूंगा और मैंने यह समझा कि आप मुझे टेलीफोन करेंगे। सचमुच मैं आपसे फिर मिलने की उम्मीद कर रहा था और आपकी तरफ से किसी संदेसे के पाने के इंतजार में था। यह सही है कि इसका ताल्लुक वाइसराय के साथ बातचीत से था।

हमारी दूसरी बातचीत हालांकि लम्बी थी तो भी मामूली चीजों को लेकर थी और मैं इस मामले को ज्यादा गहराई से समझने के लिए दूसरा मौक़ा चाहता था।

मैं आपसे खुशी से फिर मिलूंगा। अगर अभी मेरे पास वक्त होता तो मैं इस काम के लिए दिल्ली चला आता। लेकिन यह मुश्किल मालूम होता ह, क्योंकि मुझे कल इलाहाबाद जाना है और कुछ घंटे वहां ठहरने के बाद कांग्रेस वर्किंग कमिटी के लिए वर्धा जाना है। अगले कुछ दिनों में आप भी बहुत घिरे रहेंगे। वाइसराय के बयान के बाद हालत बहुत तेजी से बदल सकती है और आगे के लिए कुछ मन्सूबे बांधना आसान नहीं है। लेकिन वर्धा की बैठक के बाद मैं आपसे बंबई या दिल्ली में, जहां भी आपको सहूलियत हो, मिलने की पूरी कोशिश करूंगा। अगर आप जल्दी ही बंबई जाते हों तो वर्धा से मैं वहां भी जा सकता हूं या मैं दिल्ली जा सकता हूं।

मैं आपसे बिल्कुल एकराय हूं कि अबतक हिन्दू-मुस्लिम मसले का निपटारा दोस्ताना ढंग से नहीं हो सका। मुझे इस मामले में बड़ा ही अफसोस होता है और मुझे अपने पर शर्म आती है, क्योंकि इसके हल करने में मैं कोई ठोस मदद नहीं कर सका हूं। मुझे आपके सामने मंजूर करना पड़ता है कि इस मामले में मुझे अपने ऊपर भरोसा नहीं रहा, हालांकि आम तौर पर मेरी ऐसी आदत नहीं है। लेकिन पिछले दो-तीन सालों का मुझपर जबरदस्त असर हुआ है। मेरा अपना दिमाग दूसरी ही सतह पर चलता है और मेरी ज्यादातर दिलचस्पियां दूसरी ही तरफ हैं। इसलिए हालांकि मैंने इस मसले पर बहुत गौर किया है और उसकी ज्यादातर बारीकियों को समझता हूं, फिर भी मुझे महसूस होता है कि मैं कोई पराया आदमी हूं और मेरे जजबात कुछ दूसरे हैं। इसलिए मुझे हिचक होती है।

लेकिन इससे कोई हल निकालने में मदद देने की ज्यादा-से-ज्यादा कोशिश करने में कोई रुकावट नहीं होती और मैं जरूर मदद दूंगा। मुस्लिम लीग में आपकी कद्र और असर की वजह से आपके लिए यह काम इतना मुश्किल नहीं होना चाहिए, जितना लोग सोचते हैं। मैं आपको पूरी ईमानदारी से यकीन दिला सकता हूं कि वर्किंग कमिटी के सारे मेंबर दिलोजान से हल निकालना चाहते हैं। मेरे लिए यह बहुत ही अचरज और अफसोस की

बात है कि हम अवतक इस कोशिश में कामयाब नहीं हुए, क्योंकि आखिर तो झगड़े के असली मामले आसानी से निपटाने के काबिल होने चाहिए और हैं।

इसलिए मैं वर्धा की बैठक के बाद जल्दी-से-जल्दी आपसे मिलने की कोशिश करूंगा। मेहरबानी करके अपना प्रोग्राम मुझे बताइये। जब हम मिलेंगे तब मैं खुशी से इस सवाल के तमाम पहलुओं पर चर्चा करूंगा। लेकिन मेरे खयाल से आगे चलकर लीग के कुछ नुमाइन्दों का कांग्रेस के नुमाइंदों से मिलना बेहतर होगा। आप जरूर ही समझ जायंगे कि फिलहाल मेरा दिमाग तेजी से हो रहे वाकयात से भरा है। मैं नहीं जानता कि अगले कुछ हफ्तों के दौरान में वे हमें कहां ले जायंगे। वाइसराय का बयान अपनी साम्राज्यशाही चुनौती की वजह से हम सबको ताज्जुब में डालनेवाला है। जहांतक मैं समझ सकता हूं, कांग्रेस के लिए उनके सुझावों को पूरी तरह नामंजूर कर देने के सिवा कोई रास्ता नहीं है और इसके जरूर ही हमारे और दूसरों के लिए गहरे नतीजे होंगे। मैं नहीं जानता कि आप और मुस्लिम लीग के आपके साथी क्या फैसला करेंगे। लेकिन मैं दिल से यकीन करता हूं कि आप भी वाइसराय के बयान पर अपनी जोरदार नामंजूरी जाहिर करेंगे और जो ढंग उन्होंने सुझाया है उसके मुताबिक मदद देने से इन्कार कर देंगे। मैं जोर के साथ महसूस करता हूं कि ब्रिटिश सरकार ने हम हिंदुस्तानियों की शान और खुददारी की बेइज्जती की है। वे मान बैठे हैं कि हम तो उनके रवैये के पिट्ठू हैं, जिन्हें जब और जहां वे चाहें हुक्म दे सकते हैं।

मुझे मालूम नहीं कि आप लखनऊ का 'नेशनल हेरल्ड' पढ़ते हैं या नहीं। मेरा लिखा हुआ एक लेख उसमें आज सुबह निकला है और दूसरा कल सुबह निकलेगा। इन लेखों में वाइसराय के बयान का मुझपर जो असर हुआ, वह नपी-तुली जबान में दिया गया है। दोनों लेख इस ख़त के साथ भेज रहा हूं। आपको कल, यानी जुमेरात १९ अक्तूबर को, टेलीफोन करने की कोशिश करूंगा। मेरा आगे का प्रोग्राम यह है—इलाहाबाद २० अक्तूबर, वर्धा २१ अक्तूबर और इसी तरह आगे।

मुझे आपसे दिल्ली में मिलकर बहुत खुशी हुई थी।

आपका,
जवाहरलाल नहरू

मोहम्मदअली जिन्ना,
नई दिल्ली

२८०. महात्मा गांधी की ओर से

सेगांव, वर्धा
२६ अक्तूबर १९३९

प्रिय जवाहरलाल,

मैंने देख लिया है कि यद्यपि मेरे प्रति तुम्हारा स्नेह और आदर कायम है, फिर भी हमारे बीच दृष्टिकोण का अन्तर दिन-दिन तीव्र होता जा रहा है। शायद हमारे इतिहास में यह सबसे नाजुक काल है। जिन अत्यंत महत्वपूर्ण प्रश्नों पर हमारा ध्यान लगा हुआ है उनपर मेरे बहुत प्रबल विचार हैं। मैं जानता हूं कि उनपर तुम्हारे भी प्रबल विचार हैं, परन्तु वे मुझसे भिन्न हैं। प्रकट करने का तुम्हारा तरीका मुझसे अलग है। मुझे भरोसा नहीं कि जिन विचारों को मैं बहुत प्रबल रूप में रखता हूं उनमें दूसरे सदस्य मेरे साथ हैं या नहीं। मैं इधर-उधर घूम नहीं सकता। मैं आम लोगों के, कांग्रेस के कार्यकर्ताओं के भी, सीधे सम्पर्क में नहीं आ सकता। मुझे लगता है कि तुम सबको मैं अपने साथ नहीं रख सकता तो मुझे नेतृत्व नहीं करना चाहिए। कार्यसमिति के सदस्यों में अलग-अलग मत नहीं होने चाहिए। मैं महसूस करता हूं कि तुम्हें पूरी तरह काम संभालकर देश का नेतृत्व करना चाहिए और मुझे अपनी राय प्रकट करने को स्वतन्त्र छोड़ देना चाहिए। अगर तुम सबका यह खयाल हो कि मुझे पूरी तरह मौन रखना चाहिए तो मुझे आशा है कि मुझे उसीके अनुसार करने में कोई कठिनाई नहीं होगी। अगर जरूरी समझो तो आकर तुम्हें सारी चीज पर चर्चा कर लेनी चाहिए।

प्यार,

बापू

२८१. महात्मा गांधी की ओर से

रेलवे स्टेशन, दिल्ली
४ नवम्बर १९३९

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारे चले जाने के बाद ही कृपालानी ने मुझे बताया कि उत्तर प्रदेश में सविनय भंग के लिए बड़ा जोश और तैयारी है। उन्होंने यह भी कहा कि गुमनाम कागज घुमाये गए हैं और लोगों से तार काटने और रेलें उखाड़ने के लिए कहा गया है। मेरी अपनी राय यह है कि अभी सविनय भंग के लिए कोई वातावरण नहीं है। यदि लोग कानून अपने ही हाथों में ले लेते हैं तो मुझे सविनय भंग की कमान छोड़ देनी होगी। मैं चाहता हूं कि तुम इस सप्ताह का 'हरिजन' पढ़ो। उसमें इस संबंध में मेरी स्थिति बताई गई है। तुमसे इसीकी चर्चा करने का मेरा इरादा था। परन्तु वह होना नहीं था। हमारे इतिहास के इस नाजुक वक्त में हममें कोई गलतफहमी नहीं होनी चाहिए और संभव हो तो एक विचार होना चाहिए।

प्यार,

बापू

२८२. चू चिया-हुआ की ओर से

कुओमिन्तांग की सेंट्रल एक्जीक्यूटिव कमिटी
चुंगकिंग
११ नवम्बर १९३९

श्री जवाहरलाल नेहरू,
स्वराज्य भवन,
इलाहाबाद, भारत

प्रिय श्री नेहरू,

कुछ दिन हुए आपका तार पाकर बड़ी प्रसन्नता हुई थी, जिसमें आपने अपने सकुशल भारत पहुंच जाने की सूचना दी थी। युद्ध की परिस्थिति में आपका यहां आना सदा स्मरण रहेगा। आपकी इस यात्रा ने चीन की जनता पर बहुत ही गहरा और महत्वपूर्ण प्रभाव डाला है।

चीन और हिंदुस्तान के जिस पारस्परिक संबंध की आपने यहां अपनी यात्रा के समय चर्चा की थी, उसकी वृद्धि के बारे में आपके विचार बड़े व्यापक और विस्तृत हैं और उनकी मैं हृदय से सराहना करता हूं। वे विचार हमारे सुगंसाई, जनरल च्यांग काई-शेक के निर्देशों के साथ चीनी-हिंदुस्तानी सहयोग-योजना की उस रूपरेखा में सम्मिलित कर लिये गए हैं, जिसका मसविदा मैंने तैयार किया था। यह रूपरेखा अब स्वीकृत कर ली गई है और उसपर अलग से अमल किया जायगा। उसकी मुख्य बातें ये हैं—

१. चीन के प्रोफेसर हिंदुस्तान में और हिंदुस्तान के प्रोफेसर चीन में विभिन्न विश्वविद्यालयों में पदग्रहण करें।

२. दोनों देश विद्यार्थियों का चुनाव करके एक-दूसरे के यहां अध्ययन करने के लिए भेजें।

३. प्रकाशित सामग्री का आपस में विनिमय किया जाय और उनका चीनी या हिन्दुस्तानी भाषा में अनुवाद किया जाय।

४. सेन्ट्रल न्यूज एजेंसी की एक शाखा कलकत्ता में और एक उप-शाखा बम्बई में स्थापित की जाय और उनके माध्यम से एक-दूसरे देश की जानकारी प्राप्त की जाय।

५. जांच तथा यात्रा करनेवाले शिष्टमंडल एक देश से दूसरे देश में भेजे जायं अथवा जांच या मैत्रीपूर्ण सम्पर्क के लिए विशेषज्ञ भेजे जायं। इसके अन्तर्गत चीन की ओर से प्रारंभिक रूप में निम्नलिखित कामों की योजना बनाई गई है—

१. हिंदुस्तान जाने के लिए बौद्ध भिक्षुओं के एक यात्री-दल का संगठन।

२. हिंदुस्तान में कपड़े के व्यवसाय, सूती कपड़े की सहकारी समितियों और दूसरी औद्योगिक स्थितियों की जांच करने के लिए विशेषज्ञों को भेजना और हिंदुस्तान के उद्योगपतियों तथा कृषि-व्यवसायियों से मिलना एवं विचार-विनिमय करना।

३. एक ऐसे दल का संगठन करना जो हिंदुस्तान की यात्रा करके विज्ञान-संबंधी बातों की जांच तथा अध्ययन करे।

इनके अतिरिक्त इस साल जब आल इंडिया नेशनल कांग्रेस का सालाना

जलसा होगा तब हम इस महान अवसर पर अपना एक प्रतिनिधि भेजेंगे।

निजी अभिवादन-सहित,

आपका,
चू चिया-हुआ

२८३. महात्मा गांधी की ओर से

सेगांव, वर्धा
१४ नवम्बर १९३९

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारे पत्र नियमित आते रहते हैं। राजेन्द्रबाबू के नाम तुम्हारा खत मैंने देख लिया। उसे देखने से पहले उसपर मैं 'हरिजन' के लिए एक टिप्पणी लिख चुका था। मैं तुम्हारे पास पेशगी नकल भेजने की कोशिश करूंगा।

अगर इलाहाबाद में तुम्हें मेरी ज्यादा दिन जरूरत हो तो मुझे रख लेना।

हमारे यहां के बयानों के लन्दन म होनेवाले स्वार्थपूर्ण सम्पादन की मुझे चिन्ता नहीं होती। समय मिला तो 'न्यूज क्रॉनिकल' के लिए एक संक्षिप्त सन्देश लिख डालूंगा। उस पत्र की ओर से मुझे समूल्य अधिकार प्राप्त हैं।

शेष मिलने पर। प्यार,

बापू

महादेव ने मुझे अभी याद दिलाया है कि आज तुम्हें ५० वर्ष पूरे होते हैं। आशा है, तुम शेष ५० भी पूरे करोगे और वही शक्ति, स्पष्टवादिता और प्रबल प्रामाणिकता कायम रखोगे।

२८४. महादेव देसाई की ओर से

सेगांव, वर्धा होकर
१४ नवम्बर १९३९

सत्रह वर्ष पूर्व हमने तुम्हारी सालगिरह लखनऊ जिला जेल की एक बैरक में मनाई थी। मुझे मालूम नहीं कि उस दिन तुम्हें भी कोई कल्पना

होगी कि तुम इतने मशहूर हो जाओगे। लेकिन यदि आध्यात्मिक और बौद्धिक प्रगति नापने में कोई गणित संभव हो तो तुमने अंक-गणित की अपेक्षा रेखागणित के हिसाब से प्रगति की है। ईश्वर करे, तुम्हारे जीवन की दूसरी अर्द्ध शताब्दी में, जो कल शुरू होती है, तुम्हारी प्रगति इसी गति से जारी रहे और तुम्हारे वे 'मानवीय' गुण ज्यों-के-त्यों बने रहें, जिनके कारण हम-जैसे साधारण लोगों को ऐसा महसूस होता है कि जितनी ऊंची उड़ान तुम करते हो उसके बावजूद हम तुम्हारे बराबर की सतह पर हैं।

तुम अधीर होकर कह उठोगे, "ये क्या वाहियात बातें हो रही हैं ?" फिर भी राष्ट्र के इस शुभ दिन जो सच्ची भावनाएं उठ रही हैं, उन्हींको प्रकट करने का यह एक प्रयत्न है।

सस्नेह तुम्हारा,
महादेव

२८५. सरोजिनी नायडू की ओर से

हैदराबाद (दक्षिण)
दिवाली, १९३९

मेरे प्यारे जवाहर,

तुम्हारे जीवन की पहली आधी शताब्दी इतिहास, गीत और गाथा बन चुकी है। मेरी कामना है कि उत्तरार्द्ध के प्रारंभिक वर्षों में ही तुम्हारे स्वप्न और कल्पनाएं पूर्ण हों और मानव-प्रगति के इतिहास में तुम्हारा नाम महान मुक्तिदाताओं की सूची में अमर हो जाय। . . .

मैं तुम्हारे लिए रीतिसम्मत 'शुभ उपहार' की कामना नहीं कर सकती। मुझे नहीं लगता कि निजी सुख, आराम, अवकाश, धन-दौलत आदि साधारण वस्तुओं का, जिन्हें मामूली स्त्री-पुरुष बड़ी नियामत समझते हैं, तुम्हारे जीवन में अधिक महत्व होगा। . . . दुख, पीड़ा, बलिदान, कष्ट, संघर्ष—हां, तुम्हारे लिए जीवन के पूर्व-निर्धारित उपहार यही हैं। तुम किसी-न-किसी प्रकार इन्हींको चरम आनंद, विजय और स्वाधीनता का सार बना लोगे। तुम भाग्य-पुरुष हो, जो भीड़ के बीच भी अकेला रहने के लिए जन्म लेता है, जिसे लोग बेहद प्यार करते हैं, पर समझते जिसे बहुत कम हैं। . . .

तुम्हारी जिज्ञासु आत्मा को अपना लक्ष्य मिले और वह गौरव तथा सौंदर्य के साथ आत्म-दर्शन कर सके, यही मेरी कामना है। यही तुम्हारी कवयित्री और सहर्कमिणी बहन का आशीर्वाद है।

सरोजिनी नायडू

मैं १७ को आगरा और १९ को सबेरे २-३२ पर पवित्र प्रयागराज पहुंचूंगी।

२८६. आसफ अली के नाम

इलाहाबाद
१६ नवम्बर १९३९

प्रिय आसफअली,

आपका १४ ता. का खत मिला। लड़ाई में आगे होनेवाली घटनाओं के बारे में अंदाज लगाना मुश्किल है। लेकिन एक बात मुझे तयशुदा मालूम होती है। रूस के खिलाफ या दूसरी कोई गुटवन्दी बहुत दिन नहीं चलेगी। यूरोप में उनकी गाड़ी उलट गई है और उसको फिर से खड़ा करना बहुत मुश्किल होगा। हिंदुस्तान में लड़ाई से पहले के हालात फिर से नहीं आ सकते और पुरानी शर्तों पर कांग्रेस सूबों में सरकार का काम नहीं संभालेगी।

मुझे मालूम नहीं कि जिन्ना के साथ फिरकेवारान बातचीत के बारे में आपका ठीक-ठीक खयाल क्या है। मैंने जिन्ना से कह दिया कि मैं बिल्कुल तैयार हूं और उनके खत का इन्तजार कर रहा हूं। लेकिन असल में जिन्ना के और हमारे बीच में कोई फिरकेवारान अड़चन नहीं है। यह मुश्किल तो सियासी है। कांग्रेस जिस किस्म की कार्रवाई की आदी है, उसके मुताबिक वह (जिन्ना) अपने-आपको नहीं बना सकते। इसलिए फिरकेवारान मसले के निपटारे की बुनियाद पर मिली-जुली सियासी कार्रवाई की नजर से बात करना इस बुनियादी हकीकत को नजरंदाज करना है। मेरा यह मतलब नहीं कि हिन्दू और मुसलमान मिलकर कार्रवाई नहीं कर सकते। मैं समझता हूं कि वे कर सकते हैं और बहुत हद तक करेंगे। लेकिन इस

वक्त इसका किसी फिरकेवारान सवाल पर दारोमदार नहीं है।

श्री आसफअली एम. एल. ए.,
कूचा चेलान,
दिल्ली

आपका,
जवाहरलाल नेहरू

२८७. एडवर्ड टामसन की ओर से

एल्सबरी वक्स
३ दिसम्बर १९३९

प्रिय जवाहरलाल,

आपने मुझे कुछ गलत समझा। मेरे कहने का मतलब यह कभी नहीं था कि कौंसिल में काम मिल जाने को मैं एक 'मौका' समझता हूं। आपको यह जान लेना चाहिए कि मैं किसी स्थान अथवा उपाधि को कोई महत्व नहीं देता। मेरा मतलब यह था कि सेना की एकांगिता को प्रभावित करने का वह एक मौका था।

मेरा अब भी यह विचार है कि जबतक सेना की एकांगिता में सुधार नहीं होता, तबतक हिंदुस्तान को स्वाधीन राज्य घोषित नहीं किया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त मेरा वह पुराना मूर्खतापूर्ण सपना अब भी विद्यमान है कि ब्रिटिश साम्राज्य का प्रवर्तन समान राष्ट्रों के समूह में विश्व के संयुक्त राज्य (यूनाइटेड स्टेट्स ऑव दि वर्ल्ड) के रूप में हो सकता है। मैं जानता हूं, यह बात आपको मूर्खतापूर्ण लगेगी, लेकिन मैं आपको एक साथी नागरिक के रूप में देखना चाहूंगा। जो हो, मेरी राय में आप पंजाब को सेना के नियंत्रण में छोड़ नहीं सकते और उस गड़बड़ को थोड़ा सुधारना ही पड़ेगा।

परन्तु यह सब मेरे और आपके बीच की छोटी बातें हैं। अब उन बातों की चर्चा हो जो सचमुच कुछ महत्व रखती हैं।

मैंने इंदू को देखा है। वह ठीक लगती है और भली-चंगी भी है। यह बात ठीक है कि वह दुबली है और निस्संदेह उसकी अभी वही हालत है, जिसे नाजुक कहा जाता था और उसे सावधानी बरतनी पड़ेगी। वह अन्दर से बिल्कुल सूख गई है और किशोरावस्था की समाप्ति के साथ इन कठिन दिनों के बीत जाने के बाद उसे वास्तविक ताकत प्राप्त होगी। जो हो, वह

पहले से अच्छी है। हमने चाहा था कि वह हमारे यहां आ जाय, लेकिन वह कहती है कि मैं १५ दिसम्बर को स्विट्जरलैण्ड जा रही हूं। यदि कुछ हुआ— जैसे स्विटजरलैण्ड पर जर्मनी का आक्रमण —तो हम देख लेंगे, आप उसके बारे में कोई चिन्ता न करें।

जबसे मैं लौटा हूं, तबसे मुझे अपने दिन बड़े लंबे लगते रहे हैं और मुझे बड़ी बेचैनी महसूस होती रही है। यहां लौटने पर देखा कि एक भाई मर रहा है और उसके पास दो बार मुझे बुलाया गया है और कई दिन मैंने वहां बिताये हैं। डाक्टर ने कह दिया, "साफ-साफ बता दूं, मैं उसे जीवित रखने की भी कोशिश नहीं कर रहा हूं। ऐसा करना बड़ी निर्दयता होगी।" कई डाक्टरों ने ऐसा कहा है और सब इस बात पर सहमत हैं कि उसके बचने की कोई उम्मीद नहीं है। लेकिन उसमें बड़ी आत्मशक्ति है। वह कहता है, मैं मरनेवाला नहीं और मरने से इन्कार करता है। डाक्टरों में मेरा बहुत कम विश्वास है और अगर्चे मैं जानता हूं कि इस बारे में मेरी कोई जानकारी नहीं है फिर भी मेरी भावना ऐसी है कि इस खतरे को पार करने का अब भी संयोग हो सकता है। वह मुझसे छोटा है और उसका व्यक्तित्व बड़ा आकर्षक है।

कोई काम करना मेरेलिए असम्भव रहा है, और मेरे काम का मानों अन्त नहीं है। तीन दिन पहले मेरी पत्नी मेरे स्थान पर चली गई थीं। वह आज रात को लौट रही हैं।

सुनिये, वृद्ध और अधिक विवेकी लोगों की बात सुनने की आपकी आदत नहीं है। है क्या? अध्यक्ष के मंच पर आपकी हरकतों के बारे में सरोजिनी ने कई कहानियां सुनाई थीं, वे मुझे याद हैं। "ओह, वह श्रोताओं के बीच चले जाते और जिस बेचारे ने उनका खंडन किया होता उसे पकड़ लेते, उसकी मुश्कें बांधकर पंडाल में उसे इतने घूंसे लगाते कि हर किसीके मन में उस गरीब के लिए भय पैदा हो जाता।" ये आदतें आपने हैरो में सीखी थीं क्या? लेकिन, मैं इतनी दूर हूं कि आप मेरी मुश्कें बांधकर मुझे घूंसे नहीं लगा सकते (आप मुझे खिन्न बना देते हैं!) इसलिए मैं कहूंगा कि सुनिये' सिर्फ कुछ मिनट।

अपनी रोड्स रिपोर्ट तैयार करने के लिए मैं दिन-रात लगा रहा हूं।

इसके कुछ अंश इंदिरा को दिखाये थे। उनमें आपके बारे में चर्चा थी। कल मुझे ऑक्सफोर्ड जाना पड़ा। आई. सी. एस. प्रोबेशनरों से बातचीत की। आज प्रातः रोड्स ट्रस्ट के सेक्रेटरी लार्ड एल्टन से बातें हुई हैं। कल एक वार्ता के सिलसिले में लायनेल कर्टिस भी वहां थे। दो बातें हैं: १. रोड्स ट्रस्ट हिंदुस्तान पर कुछ धन व्यय करना चाहता है। मैं हिंदुस्तान के लिए पिल्ग्रिम ट्रस्ट के तरीके पर कुछ करने की सोच रहा हूं। हमारे पिल्ग्रिम ट्रस्ट को तो आप जानते हैं? इसका संचालन बड़ी दक्षतापूर्वक हो रहा है। यह ऐसे कार्यों के लिए अनुदान देता है जो करने योग्य हैं; सिर्फ अस्थायी दान नहीं, बल्कि ऐसे काम शुरू करता है अथवा उसमें सहयोग देता है, जो कुछ रचनात्मक हैं। मेरा विचार एक ऐसा कोष स्थापित करने का है, जो ऐसे हिंदुस्तानियों को अनुदान देगा, जो आर्थिक क्षेत्र में वास्तव में मूल्यवान शोध कर रहे हैं; जैसे गन्ने या फलों की किस्मों का विकास, अथवा अनुसूचित जातियों के लिए कोई काम, या बुनियादी तालीम का काम ही। २. रोड्स ट्रस्ट अपना एक पुराना प्रस्ताव मनवाने के लिए विश्वविद्यालय पर दबाव डालने जा रहा है। यह प्रस्ताव मेरी पहली रिपोर्ट का परिणाम है। इस प्रस्ताव के अन्तर्गत कुछ हिंदुस्तानी विद्वानों से भारतीय ऐतिहासिक अथवा साहित्यिक विषय पर ऑक्सफोर्ड में भाषण करने को कहा जायगा। बताइये, कौन आदमी अच्छा रहेगा? ऐसा आदमी हो जो भारतीय झंडे को ऊंचा बनाये रखे, हमारे मनोरंजन कक्षों (कामन रूम) में सबसे अच्छी तरह मिल-जुल सके, हमारे अंडर-ग्रेजुएट छात्रों से मिलजुल सके और न केवल ऑक्सफोर्ड, बल्कि बाहरी जनसमुदाय के सामने भी बोल सके।

अब कान खोलिये और फिर सुनिये। मैं बड़ी गंभीरतापूर्वक कह रहा हूं। यह प्राचीन विश्वविद्यालय जिस किसी व्यक्ति को रोड्स मेमोरियल लेक्चरार बनने का निमंत्रण देता है, तो यह उस व्यक्ति को दिया गया विश्वविद्यालय का कई दृष्टियों से सबसे बड़ा सम्मान होता है। यह एक बिल्कुल भिन्न कार्य है। यह लेक्चरार किसी मनोरंजन-कक्ष (कामन रूम) का सदस्य बनाया जाता है, सामान्यतः ऑल सोल्स का, जो शायद सर्वोत्तम है, क्योंकि यहां वह हमारे सभी प्रमुख राजनीतिज्ञों से मिल पाता है। (वैसे आपको मैं अपने कालेज ओरियल के लिए ही चाहूंगा)। वह ग्रीष्मकालीन सत्र में

आता और अपनी इच्छानुसार तीन, चार या पांच लेक्चर देता है। विश्वविद्यालय उसे अपने सिर आंखों पर रखता है और उसका उद्घाटन-भाषण अपने-आपमें एक घटना होती है। यह लेक्चरार विदेशी ही हो सकता है, अर्थात् वह इस टापू के बाहर से ही आयेगा। यह आदमी हमेशा अग्रिम पंक्ति से ही लिया जाता है। हमारे बीच आइंस्टीन, स्मट्स, फ्लेक्सनर आ चुके हैं। कुछ वर्ष पूर्व इस ट्रस्ट ने इकबाल और शास्त्री को बुलाने का प्रयत्न किया था। दोनों ही व्यक्तित्ववाले व्यक्ति थे। किसी राजनीतिज्ञ के लिए यह बड़ा मौका है। हम ऐसा आदमी चाहते हैं, जो अपनी इच्छा से अंडर-ग्रेजुएट छात्रों के समक्ष अनौपचारिक ढंग से बोल सके। इस तरह की चीज से तो आप वाकिफ ही हैं। किसी कमरे में कुछ लोगों के साथ गपशप। लेकिन यह नियुक्ति बहुत ऊंचा सम्मान मानी जाती है। यह लेक्चरार अपनी इच्छानुसार किसी भी विषय पर बोल सकता है; लेकिन हम ऐसा आदमी पसन्द करते हैं, जो महत्व की चीजों पर ही बोले और विश्वविद्यालय की उन भाषणों को प्रकाशित करने की इच्छा रहती है। यह बात हम ही तक रहे—रोड्स ट्रस्ट एक व्यक्ति को निमंत्रित करनेवाला है, जिसका नाम जवाहरलाल नेहरू है। हिंदुस्तान को स्वाधीन घोषित करना हमारे वश की बात नहीं (मैं ट्रस्टी नहीं हूं, मेरा इतना महत्व नहीं है कि यह पद मिल सके, लेकिन मेरे कहने का तात्पर्य तो आपको मालूम ही है, ट्रस्टियों पर मेरा कुछ प्रभाव है) फिर भी हम लोग कुछ दूसरे ढंग से काम कर सकते हैं; किसी व्यक्ति को चुन लें और उससे कहें—सम्पूर्ण अंग्रेजी-भाषी संसार के सामने यह कहने का हमें सम्मान दीजिये कि हम आपको हर दृष्टि से दुनिया के श्रेष्ठ व्यक्तियों में से मानते हैं और एक विश्वविद्यालय की हैसियत से हम आपको अधिक-से-अधिक निकट और व्यक्तिगत रूप से जानने का गौरव लेना चाहते हैं। इकबाल और शास्त्री ने इसे ठुकरा दिया (मेरा यही अनुभव रहा, कृपया इसे दोहराइये नहीं। मैंने ही पत्र-व्यवहार किया था)। आप इसे कभी नहीं ठुकराइये, इसपर अच्छी तरह सोच लीजिये। इससे आपको बड़े पैमाने पर राजनीति के लिए उपयुक्त काम करने का अवसर प्राप्त होगा। आप हमारे सामने अपने दिमाग और अनुभव से कुछ रचनात्मक तस्वीर रख सकते हैं, अगर चाहें तो अपना विशिष्ट

राष्ट्रीय अनुभव रख सकते हैं, हमारे एकान्त और पृथक्त्व को झटका दे सकते हैं, दुनिया के नक्शे पर अपनी जनता को प्रस्तुत कर सकते हैं (एक बार आपने मुझसे कहा था कि मैं अच्छा राजदूत हूं और आप हैं भी)। और इंगलैंड की सुहानी गर्मियों में आप हमारे नौजवानों (विश्व में सबसे अच्छे) को देखेंगे। अनेक विश्वविद्यालय-सदस्यों के सामने, जिन्होंने छात्रों के अलावा किसी हिंदुस्तानी या अन्य किसी विदेशी को नहीं देखा है, आप हिंदुस्तान की एक बिल्कुल नई तस्वीर रख सकते हैं, आप सभी राजनैतिक नेताओं से मिल सकते हैं (चाहने पर भी बच नहीं सकते), क्योंकि वे सबके सब ऑक्सफोर्ड आते हैं। आप वह काम कर सकते हैं, जिसे टैगोर ने शुरू किया था और जिसे वह अपने मन की उड़ानों का प्रकाशन करके पूरा नहीं कर पाये। यह काम बिल्कुल गैरसियासी है। इंडिया आफिस दूर से भी इसमें टांग नहीं अड़ाता।... यदि यह काम आपको दिया जाय तो स्वीकार कर लीजिये, क्योंकि यह संयोग से ही मिल रहा है। इसका मतलब यह हुआ है कि यह आपके दैव और आपके दानव का आदेश है। आप आश्वस्त रहें, कोई गड़बड़ न होगी। विश्वविद्यालय-श्रोताओं को मैं पहले ही सावधान कर दूंगा कि वे वक्ता के प्रति श्रद्धानत हों और ध्यानपूर्वक सुनें, अन्यथा यह भयंकर वक्ता उनके बीच ही प्रकट हो जायगा, उन्हें बड़ी मार लगायेगा, मानों वे किसी कांग्रेसी सभा के श्रोता हों। यदि यह काम आपने स्वीकार नहीं किया तो दूसरा नम्बर होगा सप्रू का (यह बात हमीं तक रहे)। जहां-तक तकरीर करने और मनोरंजन-कक्षों में मिलने-जुलने का सवाल है, वह इस काम को अच्छी तरह निभा लेंगे। लेकिन उनके आने में हमारे राजनीतिज्ञों की कट्टरता और भी बढ़ जायगी। मैंने आपके लिए ही सप्रू का नाम हटा दिया है। वह बाद में आ सकते हैं। इसी सिलसिले में आप इंदिरा को देख सकेंगे। आपको छः सप्ताह तक ही हिंदुस्तान से बाहर रहना पड़ेगा।

ऐसा लगता है कि रोड्स ट्रस्ट मुझे दक्षिण अफ्रीका भेजना चाहता है, वहां के विश्वविद्यालय तथा अन्य गोष्ठियों में हिंदुस्तान के इतिहास और राजनीति तथा संस्कृति के बारे में भाषण करने के लिए। ऐसा इसलिए कि मैंने ट्रस्टवालों से कह दिया है कि दक्षिण अफ्रीका के दृष्टि-

कोण से हिंदुस्तानी भावना को चोट पहुंच रही है। मैं वृद्ध हो चला हूं, बहुत थक-थका गया हूं और मेरा दिमाग भी साथ नहीं दे रहा। यदि मुझसे हिंदुस्तान की सेवा हो सकती है तो मैं जाऊंगा, हालांकि दक्षिण अफ्रीका से मुझे भय लगता है—वह दुनिया में सबसे ज्यादा बदहुकूमत का मुल्क है। लेकिन मैं तो एक सेवक-भर हूं और अब अवस्था ऐसी नहीं रही कि कोई दूसरा काम कर सकूं। यदि आप ऑक्सफोर्ड आयें तो मैं कुछ अधिक सेवा करने का प्रयत्न कर सकूंगा और उन अज्ञानियों और असभ्यों के सामने हिंदुस्तान के लिए बोल सकूंगा, और मैं भी कोई बुरा राजदूत नहीं हूं।

मुझे मालूम हुआ है कि गे विट आपके साथ हैं। मुझे इस बात का दुःख है कि उसके बारे में आपसे मैंने कुछ अप्रिय बातें कह दीं। मुझे ऐसा करना नहीं चाहिए था। वह भला आदमी है। सिर्फ वह बड़ा उलझा-उलझा और रहस्यमय लगता है। उसकी आवाज मुझे नहीं भाती। उससे मेरे मन में खिन्नता पैदा होती है। उसपर कृपा बनाये रखें, मेरी तरफ से प्रायश्चित्त के रूप में ही सही।

'मैनचेस्टर गार्जियन' और 'टाइम एण्ड टाइड' के लिए दो लेख लिखे हैं। मैंने कई राजनीतिज्ञों और हाउस के कुछ लोगों से बातचीत की है। लौटने के बाद से भूत की तरह काम किया है, इसलिए मेरे बारे में यथासम्भव दयापूर्वक सोचिये। मैं बुरा नहीं चाहता, और ऐसी बात नहीं कि कोई अंग्रेज मूर्ख नहीं हो सकता और, कोई काम करवा सकना विशेष रूप से कठिन रहा है।

मैं अपनी दो किताबें भेज रहा हूं। इन्हें पढ़कर आपको खिन्नता होगी। लेकिन आपने तो मांगी थीं। मेहरबानी करके मेरे देश के बारे में निराश न होइये। हममें से कुछ लोग हिंदुस्तान के लिए यथाशक्ति काम कर रहे हैं और अपनी त्रुटियों के बावजूद हम अन्य कुछ राष्ट्रों से अच्छे ही हैं। अब भी इंग्लैंड में बहुत-सी बातें हैं और वे अच्छी हैं।

आपका,

एडवर्ड टामसन

हरकोई हिंदुस्तान के बारे में सच्चाई जानना चाहता है। मैनचेस्टर

चैम्बर ऑव कामर्स और केम्ब्रिज विश्वविद्यालय से लेकर कामन्स-सभा और कट्टरपंथी विद्वानों की सोसाइटियां तक मुझे फोन पर और पत्रों द्वारा निमंत्रण-पर-निमंत्रण दे रहे हैं। ऐसे समय मैं हिंदुस्तान जानेवाला हूं। यह मेरी बेवकूफी ही तो है। इसी बुधवार को कुछ संसद-सदस्यों के सामने मैं फिर भाषण करनेवाला हूं।

'मैनचेस्टर गार्जियन' के लिए मैंने तीन लेख तैयार किये थे, जो अब नहीं मिल रहे। इसमें कोई शक नहीं कि आगथा हैरिसन या मेनन ने वे लेख आपके या गांधीजी के पास भेज दिये।

ए. टा.

२८८. महादेव देसाइ के नाम

९ दिसम्बर १९३९

प्रिय महादेव,

तुम्हारा ५ ता. का पत्र मिला। जाकिर हुसैन ने बापू को जो सुझाव दिया है उससे मैं बिल्कुल सहमत नहीं हूं। सवाल यह नहीं है कि हम मुस्लिम लीग को खास तरह की मान्यता दें। इसके बहुत दूर तक जानेवाले नतीजे हैं और इसमें कांग्रेस के तमाम बुनियादी सिद्धान्तों को छोड़ देने की बात है। इसका अर्थ कांग्रेस को छिन्न-भिन्न कर देना होगा।

तुमने जिन्ना का नया बयान जरूर देखा होगा। राजनैतिक झूठ और बेहयाई की भी हद होती है, लेकिन सारी मर्यादाओं का उल्लंघन कर दिया गया है। मेरी समझ में नहीं आता कि मैं अब जिन्ना से मिल भी कैसे सकता हूं। दो ही दिन हुए मैंने उन्हें लिखा था कि मैं जल्दी ही बम्बई जानेवाला हूं और तब उनसे मिलने की मुझे आशा थी। कल से मैंने इस मामले पर काफी विचार किया है और मैंने उन्हें दूसरा पत्र भेजने का निश्चय किया है, जिसकी नकल बापू की जानकारी के लिए साथ में है।

स्टैफर्ड क्रिप्स यहां आये हुए हैं और कल दिल्ली और लाहौर के लिए रवाना हो रहे हैं। वहां से वह बंबई और वर्धा जायंगे। फिलहाल वह १७ ता. की सुबह रविवार को वर्धा पहुंचेंगे। वहां दो दिन ठहरेंगे। मुझे ये तारीखें पसन्द नहीं हैं, क्योंकि ये बापू के मौन और कार्यसमिति के साथ टकराती हैं। वे वहां १८ और १९ ता. को जाते तो कहीं अच्छा रहता।

यह क्रिप्स के भी अधिक अनुकूल होता ।

क्रिप्स हेली, शुस्टर, फिनलेटर, स्टीवर्ट और जेटलैण्ड से लंबी बातचीत करते रहे हैं। मेरा खयाल है वह हैलीफैक्स से भी मिले हैं। उन्होंने इन लोगों के सामने कोई प्रस्ताव किया, जिसका उनके कथनानुसार अच्छा असर हुआ, हालांकि किसीने अपने-आपको उसके लिए बांधा नहीं। मैंने यह प्रस्ताव देखा है। उसमें कुछ वांछनीय पहलू हैं। लेकिन मेरे खयाल से उसमें दो-तीन घातक दोष हैं। मैं बापू के लिए बाद में तुम्हें शायद नकल भेजूं, लेकिन मैं चाहता हूं कि तुम उसे बिल्कुल गुप्त रखो।

मैं बता दूं कि जहां क्रिप्स बिल्कुल सीधे हैं और उनकी योग्यताएं असंदिग्ध हैं, वहां उनके निर्णय पर हमेशा भरोसा नहीं किया जा सकता।

शायद मैं १३ ता. के आसपास बंबई जाऊंगा।

श्री महादेव देसाई,
सेगांव।

सप्रेम तुम्हारा,
जवाहरलाल

२८९. मोहम्मद अली जिन्ना के नाम

इलाहाबाद
९ दिसम्बर १९३९

प्रिय जिन्ना,

दो दिन हुए मैंने आपको एक खत भेजा था और यह खबर दी थी कि मेरा बंबई जल्दी ही जाने का इरादा है और वहां आपसे मिलने की उम्मीद रखी थी। कल सुबह अखबारों में मैंने आपका बयान पढ़ा, जिसमें २२ दिसम्बर निजात का दिन मुकर्रिर किया गया है। उस दिन इस बात पर अल्लाताला का शुक्रिया अदा किया जायगा कि आखीर कांग्रेस सरकारों का कामकाज बन्द होगया। मैंने इस बयान को कई मर्तबा बहुत गौर से पढ़ा है और इस मामले पर चौबीस घंटे तक गहराई से सोचा है। इस खत में मुद्दों, खयालों या नतीजों के बारे में किसी बहस में पड़ने का मेरा काम नहीं है। आपको इनके बारे में मेरे खयाल मालूम हैं। ये मैंने पूरी ईमानदारी और सच्चाई जानने की इच्छा से बनाये हैं। मुमकिन है, मेरी गलती हो, लेकिन मैंने ज्यादा रोशनी की खोज की, पर वह अभी मिली नहीं।

मगर कल से जो चीज मुझे बुरी तरह सता रही है वह यह अहसास

है कि जिंदगी और सियासत दोनों में कीमतों और मकसदों की हमारी समझ में बहुत बड़ा फर्क है। हमारी बातचीत के बाद मैंने यह उम्मीद की थी कि वह फर्क इतना ज्यादा नहीं है, लेकिन अब तो खाई पहले से भी चौड़ी मालूम होती है। इन हालात में मैं नहीं समझता कि हमारे सामने जो मसले हैं, उनकी आपस में चर्चा करने से कोई फायदा होगा। चर्चा के फायदेमंद होने के लिए कोई ऐसी जमीन और मकसद होने चाहिए, जिनपर आम रजामंदी हो सके। मैं समझता हूं कि आपके तईं और खुद अपने तईं मेरा फर्ज है कि यह मुश्किल आपके सामने रख दूं।

आपने दिल्ली में मुझे एक खत दिखलाया था, जो आपको बिजनौर से मिला था। मैंने उस मामले की जांच की तो मुझे खबर मिली कि आपको मुद्दे जिस तरह से बताये गए वे सही नहीं हैं और बिल्कुल गुमराह करनेवाले हैं। अगर जो कुछ हुआ उसकी आप सफाई चाहें तो मैं आपके लिए बिजनौर से मंगा सकता हूं। इसके लिए मैं चाहता हूं कि आपने जो खत मुझे दिल्ली में दिखाया था, उसकी नकल मुझे भिजवा दें।

आपका,
जवाहरलाल नेहरू

मि. मोहम्मद अली जिन्ना

२९०. मोहम्मद अली जिन्ना की ओर से

बम्बई
१३ दिसम्बर १९३९

प्रिय जवाहरलाल,

मुझे आपका ९ दिसम्बर का खत मिला। अखबारों में आपके दौरों के प्रोग्राम को देखकर मैं समझ नहीं पा रहा था कि आपको अपना जवाब कहां भेजूं। हाल की खबर के मुताबिक आप १४ दिसम्बर को बम्बई पहुंच रहे हैं, इसलिए मैं आपके बम्बई के पते पर यह खत भेज रहा हूं। मैं आपसे पूरी तरह एकराय हूं कि "चर्चा के फायदेमंद होने के लिए कोई ऐसी जमीन और मकसद होने चाहिए, जिनपर आम रजामंदी हो।" इसी वजह से

दिल्ली में पिछली अक्तूबर में मि. गांधी और आपसे मेरी जो बातचीत हुई थी, उसमें मैंने दो बातें साफ कर दी थीं : पहली बात यह कि जबतक कांग्रेस मुस्लिम लीग को हिन्दुस्तान के मुसलमानों की पक्की और नुमाइंदा जमात मानने को तैयार नहीं है, तबतक हिन्दू-मुस्लिम-समझौते की बात चलाना मुमकिन नहीं है। ऑल इंडिया मुस्लिम लीग की वर्किंग कमेटी ने इस बातचीत के लिए यही बुनियादी शर्त रखी है। दूसरी बात यह है कि कांग्रेस वर्किंग कमेटी की तजवीज में, जिसपर १० अक्तूबर १९३९ को ऑल इंडिया कांग्रेस कमेटी ने भी मोहर लगाई है, जिस ऐलान की मांग की गई है, वह अव्वल तो साफ नहीं है, न अमल में आनेवाली है और फिर जबतक अकलियत के मसले में हममें आपस में कोई समझौता न हो जाय तबतक हम उस मांग की तसदीक नहीं कर सकते। मुस्लिम लीग को भी वाइसराय के ऐलान से तसकीन नहीं है। यदि खुशनसीबी से हम हिन्दू-मुस्लिम सवाल को तय कर लें तो हम ऐसी हालत में आ जायंगे कि एकराय से दरमियानी शक्ल निकाल सकें और इस बात की मांग करें कि हिज मैजिस्टी की सरकार इसका ऐसी शक्ल में ऐलान करे, जिससे हम सबको तसल्ली हो। दिल्ली में मि. गांधी को या आपको न तो मेरा पहला सुझाव मंजूरी के काबिल लगा, न दूसरा, लेकिन आपने मेहरबानी करके ख्वाहिश जाहिर की कि आप मुझसे फिर मिलना चाहेंगे और मैंने यह कहा था कि मैं हमेशा खुशी से आपसे मिलूंगा। आपके पहली दिसंबर के खत के जवाब में, जिसमें आपने मुझसे बंबई में मिलने की ख्वाहिश जाहिर की है, मैंने आपको इत्तिला दी थी कि मैं दिसम्बर के तीसरे हफ्ते तक बम्बई में रहूंगा और आपसे मिलकर मुझे खुशी होगी, और मैं सिर्फ यही कह सकता हूं कि अगर आप इस मामले की बातचीत को आगे बढ़ाना चाहते हैं तो मैं आपके अख्तियार में हूं। आपने बिजनौर के वाक़ये की तरफ़ जो इशारा किया है, उसके बारे में मुझे यक़ीन है कि आप मुझसे एकराय होंगे कि उसके बारे में किसी नतीजे पर पहुंचने से पहले उसकी पूरी-पूरी अदालती जांच होनी चाहिए। सिर्फ एक वाक़ये पर बहस करना हमारे लिए बेकार है, क्योंकि मैं जिस नतीजे पर पहुंचा हूं, उसके हिसाब से आईन के मुकम्मल अमल और कांग्रेस सरकार के खिलाफ़ हमारे इलजामों की शाही कमीशन के जरिए पूरी-पूरी

जांच होनी चाहिए ।

आपका,
एम. ए. जिन्ना

२९१. मोहम्मद अली जिन्ना के नाम

बम्बई
१४ दिसम्बर १९३९.

प्रिय जिन्ना,

आपके १३ दिसम्बर के खत के लिए शुक्रिया । वह मुझे आज दोपहर यहां पहुंचने पर दिया गया । मैंने आपको इलाहाबाद से आखिरी खत मुसलमानों की तरफ से "निजात और शुक्रिया अदा करने के दिन" को मनाये जाने के बारे में आपके बयान को पढ़ने और उसपर पूरा गौर करने के बाद भेजा था । उस बयान से मुझे बहुत तकलीफ हुई थी, क्योंकि उससे मैंने महसूस किया कि अवाम के मसलों के बारे में हमारे नजरिये में खाई बहुत बड़ी है । इस बुनियादी फर्क को देखते हुए मैंने सोचा कि चर्चा के लिए आम रजामंदी की जमीन क्या है और मैंने अपनी मुश्किल आपके सामने रक्खी । वह मुश्किल अब भी है ।

आपने अपने खत में दो और इब्तिदाई शर्तों पर जोर दिया है, जिनके बाद ही चर्चा के लिए आम रजामंदी की जमीन पैदा हो सकती है । पहली शर्त यह है कि कांग्रेस को यह समझना होगा कि मुस्लिम लीग हिंदुस्तान के मुसलमानों की पक्की और नुमाइंदा जमात है । कांग्रेस ने लीग को हमेशा मुसलमानों की बहुत असरवाली जमात समझा है और इसी वजह से हमारे बीच में जो भी फर्क हों, उन्हें निपटाने के लिए हम ख्वाहिशमंद रहे हैं । लेकिन शायद आपका कहना इससे कुछ ज्यादा है और उसमें यह बात शामिल है कि जो मुसलमान लीग में नहीं हैं उन्हें हम किसी-न-किसी तरह रद्द करदें या उनसे नाता तोड़ दें । आप जानते हैं कि कांग्रेस में मुसलमान बड़ी तादाद में हैं और वे हमारे बहुत नजदीकी साथी रहे हैं और हैं । मजदूर-संघों और किसान-सभाओं के अलावा जमीयत-उल-उलेमा, ऑल इंडिया शिया कांफ्रेंस, मजलिसे ऐहरार, ऑल इंडिया-

मोमिन कांफ्रेंस, वगैरा मुस्लिम जमाते हैं, जिनके बहुत-से मुसलमान मेंबर हैं। आम तौर पर इन जमातों और आदमियों में से बहुतों ने वही सियासती मंच अपना लिया है, जो कांग्रेस में हमने अपनाया है। हम उनसे ताल्लुक नहीं तोड़ सकते और न किसी तरह अपनापन छोड़ सकते हैं।

आपने कई मौकों पर ठीक ही बताया है कि कांग्रेस हिंदुस्तान में हरेक आदमी की नुमाइंदगी नहीं करती। बेशक, नहीं करती है। मुसलमान हों या हिन्दू, वह उन लोगों की नुमाइंदा नहीं है, जो उससे एकराय नहीं हैं। आखिरी तौर पर देखें तो वह अपने मेंबरों और हमदर्दों की ही नुमाइंदा है। यही बात मुस्लिम लीग की भी है। इसी तरह और कोई जमात भी अपने ही मेंबरों और हमदर्दों की नुमाइंदगी करती है। लेकिन एक बहुत बड़ा फर्क यह है कि जहां कांग्रेस के आईन के मुताबिक जो उसके मक़सद और तरीकों को मंजूर करते हैं उन सबके लिए उसकी मेंबरी खुली है, वहां मुस्लिम लीग का दरवाजा सिर्फ़ मुसलमानों के लिए खुला है। इस तरह आईन की रू से कांग्रेस की मुल्की बुनियाद है और वह अपनी खुदी मिटाये बगैर उस बुनियाद को नहीं छोड़ सकती। आप जानते हैं कि हिन्दू महासभा में बहुत-से हिन्दू हैं, जो हिन्दू होने के नाते इस खयाल के खिलाफ़ हैं कि कांग्रेस उनकी नुमाइंदगी करे, और फिर सिक्ख और दूसरे लोग भी हैं, जो दावा करते हैं कि फिरकेवारान मामलों पर गौर होने के वक़्त उनकी बात सुनी जानी चाहिए।

इसलिए मुझे अंदेशा है कि अगर आपकी यह मर्जी है कि और सब जमातों को छोड़कर हम मुस्लिम लीग को ही मुसलमानों की नुमाइंदा जमात समझें तो हम इसे बिल्कुल मंजूर नहीं कर सकते। इसी तरह यह भी हक़ीक़त के खिलाफ़ होगा कि हम कांग्रेस जमात के इतने बड़े होने के बावजूद कांग्रेस के लिए ऐसा ही दावा करें। लेकिन मैं यह कहूंगा कि जब दो जमातें एक-दूसरे के साथ निपटती हैं और आपसी दिलचस्पी के मसलों पर गौर करती हैं तब ऐसे सवाल नहीं उठा करते।

आपका दूसरा मुद्दा यह है कि मुस्लिम लीग ब्रिटिश सरकार की तरफ से कोई ऐलान होने की कांग्रेस की मांग की ताईद नहीं कर सकती। मुझे यह जानकर तकलीफ होता है, क्योंकि इसका मतलब यह हुआ कि फिरकेवारान सवालों के अलावा खालिस सियासी बुनियाद पर भी हमारे

नजरियों में फर्क है। कांग्रेस की मांग असल में यह है कि लड़ाई के मकसद बता दिये जायं और खास तौर पर हिंदुस्तानी आजादी का ऐलान कर दिया जाय और हिंदुस्तानियों का यह हक मान लिया जाय कि वे बाहरी दखलंदाजी के बिना खुद अपना आईन तैयार कर लें। अगर मुस्लिम लीग इसपर राजी नहीं होती तो इसका मतलब यह है कि हमारे सियासी मकसद बिल्कुल अलग-अलग हैं। कांग्रेस की मांग नई नहीं है। वह कांग्रेस के आईन की पहली कलम में मौजूद है और पिछले कई सालों से हमारी पालिसी की बुनियाद उसीपर रही है। मैं तो यह सोच भी नहीं सकता कि कांग्रेस इसे कैसे छोड़ सकती है या बदल सकती है। मैं खुद तो उसे बदलने की किसी भी कोशिश की पूरी मुखालफत करूंगा। लेकिन यह निजी मामला नहीं है। ऑल इंडिया कांग्रेस कमिटी की एक तजवीज है, जिसकी हिंदुस्तानभर में हजारों मीटिंगों ने ताईद की है और मैं उसे हर्गिज नजरन्दाज नहीं कर सकता।

इस तरह यह दिखाई देता है कि सियासी नजरिये से हमारी कोई रजामंदी की जमीन नहीं है और मकसद भी जुदा हैं। इससे भी चर्चा मुश्किल और बेकार हो जाती है। जिस वजह से मैंने आपको पिछला खत लिखा, वह अभी मौजूद है, यानी आपके सुझाव के मुताबिक मुसलमानों की तरफ से निजात का दिन मनाया जाना मुमकिन है। इससे ज्यादा अहमियत रखनेवाले और दूर तक जानेवाले सवाल पैदा होते हैं, जिनमें इस वक्त मेरे जाने की जरूरत नहीं है। लेकिन उनका असर तो हम सबपर पड़ता ही है। फिरकेवारान मसले के बारे में इस नजरिये का मेल उसे हल करने की कोशिश के साथ नहीं हो सकता।

इसलिए मेरा खयाल है कि इस मौक़े पर, इस हालत में और इस बुनियाद के साथ हमारे मिलने से कोई फायदा नहीं होगा। लेकिन मैं आपको यकीन दिलाना चाहता हूं कि कांग्रेस और लीग के बीच फिरकेवारान या दूसरे मसलों पर खुली और साफ चर्चा करने के लिए हम हमेशा तैयार हैं।

बिजनौर के वाकये के बारे में आपने जो कहा वह मेरे खयाल में है। हमारी यह बदक़िस्मती रही है कि इकतरफा ढंग से इल्जाम लगाये जाते

हैं और उनकी कभी जांच नहीं की जाती और न उन्हें निपटाया जाता है। आप समझ सकते हैं कि शिकायतें करना बहुत आसान है और मुनासिब जांच के बिना उनपर बुनियाद रखना बहुत ही खतरनाक है।

आपका,
जवाहरलाल नेहरू

मि. मोहम्मदअली जिन्ना
बम्बई

२९२. मोहम्मद अली जिन्ना की ओर से

बंबई
१५ दिसम्बर १९३९

प्रिय जवाहर,

आपका १४ दिसम्बर १९३९ का खत मुझे मिला। मुझे अफसोस है कि दूसरे मुद्दे पर आपको मेरी बात ठीक नहीं जंची। मैंने यह नहीं कहा कि ब्रिटिश सरकार के ऐलान की कांग्रेस की मांग की मुस्लिम लीग तसदीक नहीं करेगी। मैंने यह कहा था कि हम लोग ऐलान के बारे में कांग्रेस की मांग को, जो उसने वर्किंग कमिटी की तजवीज के जरिये पेश की है और जिसकी तसदीक १० अक्तूबर १९३९ को ऑल इंडिया कांग्रेस कमिटी ने की है, उन वजहों से तसदीक नहीं कर सकते, जिनका जिक्र मैं अपने खत में कर चुका हूं।

अगर कांग्रेस की इस तजवीज में किसी तरह का कोई फेर-बदल नहीं हो सकता और जैसाकि आप कहते हैं कि निजी तौर पर आप इसकी तबदीली करने की किसी भी कोशिश की पूरी तरह से मुखालफत करेंगे और आपने इस बात को साफ कर दिया है कि आप किसी तरह भी मुस्लिम लीग को हिन्दुस्तान के मुसलमानों की नुमाइंदगी करनेवाली जमात नहीं मान सकते तो ऐसी हालत में क्या मैं यह जान सकता हूं कि आप मुझसे क्या करने की उम्मीद या ख्वाहिश रखते हैं?

आपका,
एम. ए. जिन्ना

२९३. मोहम्मद अली जिन्ना के नाम

बंबई
१६ दिसम्बर १९३९

प्रिय जिन्ना

आपके १५ दिसम्बर के खत के लिए शुक्रिया। आपने जो फर्क बताया उसे मैं अच्छी तरह समझता हूं। बेशक, मुस्लिम लीग ब्रिटिश सरकार की तरफ से होनेवाले किसी ऐलान के खयाल की मुखालफत नहीं कर सकती। सवाल सिर्फ यह उठ सकता है कि ऐलान किस किस्म का होगा और उसमें क्या होगा। कांग्रेस ने तो इतनी ही मांग की थी कि लड़ाई के मकसद बता दिये जायं, हिंदुस्तान की आजादी को मान लिया जाय और अपना आईन खुद बनाने का हिंदुस्तानियों का हक़ मंजूर कर लिया जाय। वैसे तो यह हक़ आज़ादी में समाया ही हुआ है। ये सब बुनियादी उसूल हैं, जो आज़ादी के हमारे मक़सद से पैदा होते हैं और चूंकि मुस्लिम लीग का भी यही ऐलानिया मक़सद है, इसलिए उनके बारे में रायों का कोई फर्क नहीं होना चाहिए। इन उसूलों के लागू करने में बेशक कई अहम मामलों पर गौर करना पड़ेगा, लेकिन जहांतक बुनियादी मांगों का सवाल है, वे तो हिंदुस्तानी कौमियत की जान हैं। उन्हें छोड़ देना या काफी बदल देना आजादी के हमारे मामले को ही मिटा देना है।

लड़ाई के बारे में भी कांग्रेस ने पिछले ग्यारह बरसों में अपनी पालिसी का बार-बार ऐलान किया है। मौजदा ऐलान उसी पालिसी का लाजमी नतीजा है। इस पालिसी के बनाने में खुद मेरा भी कुछ हिस्सा रहा है और मैंने उसे अहमियत दी है। आप समझ जायंगे कि इतने दिनों की जमी-जमाई और बुनियादी पालिसियों को बदलना कितना मुश्किल है। यह सवाल दूसरा है कि ऐसा करना मुनासिब है या नहीं। असल में ये पालिसियां सियासी हैं और मैं तो यह भी कहूंगा कि यही पालिसियां हैं, जो हिंदुस्तानी आजादी की मांग से पैदा होती हैं। ब्यौरे की बातों पर गौर और उनकी चर्चा हो सकती है। उनके लागू करने के बारे में आपसी मदद ली जानी चाहिए और खास तौर पर जुदा-जुदा गुटों और अक़लियत के फायदों पर होशियारी से ग़ौर करना चाहिए और उनकी हिफाजत होनी चाहिए।

लेकिन उस ऐलान की बुनियाद को ही चुनौती देना यह जाहिर करना है कि सियासी नजरिये और पालिसियों में बड़ा फर्क है। इसका हिन्दू-मुस्लिम-सवाल से कोई वास्ता नहीं है। इसीकी वजह से मैं महसूस करता हूं कि हमारे सियासी मक़सदों में आम रजामंदी की बात बहुत थोड़ी है।

मैं फिर कह दूं कि जहांतक मुझे मालूम है, हमारी तरफ से कोई भी मुस्लिम लीग के हक़, असर और अहमियत को न चुनौती देता है, न उसे कम मानता है। इसी वजह से हम उसके साथ मामलों की चर्चा करने और हमारे सामने जो सवाल हैं उनका तसल्लीबख्श हल निकालने के लिए तैयार रहे हैं। बदस्किमती से हम इन सवालों की ठीक-ठीक चर्चा तक भी कभी नहीं पहुंच पाते, क्योंकि पहले से शर्तें लगाकर हम अपने रास्ते में बहुत-सी रुकावटें और अड़चनें पैदा कर लेते हैं। मैं आपको बता चुका हूं कि इन शर्तों का दूर तक जानेवाला असर होता है। मैं नहीं समझता कि क्यों उनकी वजह से हमारी सारी तरक्की रुके या हम इन मसलों पर गौर न कर सकें? इन अड़चनों को हटाकर सवाल से ही भिड़ जाना मुश्किल नहीं होना चाहिए। लेकिन चूंकि ये अड़चनें बनी रहती हैं और दूसरी उनमें जोड़ दी जाती हैं, इसलिए मजबूरन मेरा खयाल होता है कि असली दिक्कत सियासी नजरिये और मक़सदों में फर्क की है।

फिलहाल २२ दिसम्बर को सारे हिंदुस्तान में किये जानेवाले मजाहरे के फैसले ने ज़हनी रुकावट पैदा कर दी है, जिससे आपस में मिलकर चर्चा करना नामुमकिन है। इसका मुझे बहुत ही अफसोस है और मैं दिल से चाहता हूं कि आप इस रुकावट को ज़रूर दूर कर दें, क्योंकि इससे आपस में मनमुटाव ही पैदा हो रहा है और हो सकता है। मुझे अब भी उम्मीद है कि आप ऐसा कर सकेंगे।

मैं आपको यकीन दिलाना चाहता हूं कि अपनी तरफ से मैं कोई कोशिश उठा नहीं रखना चाहता, जिससे आपस में समझौता और निपटारा हो सके। लेकिन आप मुझसे नहीं चाहेंगे, जैसे कि मैं आपसे नहीं चाहूंगा कि किसी भी बात के लिए दिमागी ईमानदारी और मकसद की सचाई को छोड़ा जाय। उससे कुछ खास हाथ भी नहीं लग सकता। मेरे कुछ गहरे

सियासी खयालात हैं और मैंने कई बरसों से उनके मुताबिक कसकर काम किया है। मैं उन्हें किसी भी हालत में नहीं छोड़ सकता और इस वक्त जब दुनिया एक जबर्दस्त मुसीबत की तकलीफों में फंसी है, तब तो उन्हें हर्गिज नहीं छोड़ा जा सकता।

आपका,
जवाहरलाल नेहरू

२९४. महात्मा गांधी की ओर से

सेगांव, वर्धा
२८ दिसम्बर १९३९

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। मैं चीनी पत्र सुरक्षित रखूंगा।

मुक्ति-दिवस को 'टाइम्स ऑव इंडिया' में पूरे पृष्ठ का विज्ञापन मिला है। परन्तु सच यह है कि सब जगह उसका कोई असर नहीं हुआ दीखता।

फजलुल हक का अभियोग-पत्र तुमने पढ़ा है? इसके बारे में कुछ भी कहना या करना नहीं चाहिए?

तुमने मुझे कुमारप्पा के पत्र नहीं भेजे, जिनपर तुमने सख्त एतराज किया था। वह यहां हैं। मैंने उनसे पूछा तो वह कहते हैं कि हाल में तो उन्होंने कुछ नहीं भेजा। तुम्हारे पास जो कुछ हो, जरूर मेरे पास भेज दो।

प्यार,

बापू

२९५. एडवर्ड टामसन के नाम

इलाहाबाद
५ जनवरी १९४०

प्रिय एडवर्ड,

मुझे खबर लगी है कि आपके छोटे भाई का कुछ दिन पहले इंतकाल

हो गया। मुझे यह सुनकर बड़ा रंज हुआ, क्योंकि यह मैं समझ सकता हूं कि इससे आपपर कैसी गुजरेगी। अपने पिछले खत में आपने उनकी बीमारी का जिक्र किया था और कहा था कि उनके लिए बहुत कम आशा है। इस बुरी खबर के कारण मुझे आपके खत का जवाब देने में झिझक हो रहीं है।

कल की डाक में आपकी दो पुस्तकें 'जान आर्निसन' और 'कलेक्टेड पोयम्स' मिलीं। मुझे बहुत खुशी है कि आपने ये पुस्तकें, ख़ास तौर पर कविताएं, भेजीं। आप चक्कर तो और मैदानों में भी लगाते हैं, फिर भी जाहिर है कि आप कवि ही हैं।

अखबारों में मैं आपके कुछ पत्र और लेख भी पढ़ता रहा हूं। वे मुझे पसन्द आये। आप जब यहां आये उस समय जो स्थिति थी, उससे असल में स्थिति अब जुदा नहीं है, अलबत्ता बहुत-सी घटनाएं हो चुकी हैं। आपने जिन्ना के 'मुक्ति-दिवस' की बात सुनी होगी। उन्होंने किसी भी तरह के मुनासिब रवैये को नामुमकिन बना दिया है। लेकिन अबकी बार तो उन्होंने हद ही कर दी और मुस्लिम हल्कों में उससे काफी गुस्सा पैदा हुआ है।

लेसिन से इन्दिरा का पत्र आया है। वह वहां खुश मालूम होती है और वह जगह उसे पसन्द है। डाक्टर ने उससे कह दिया है कि वह तीन महीने के भीतर उसे खूब तन्दुरुस्त बना देना चाहते हैं। इससे उसमें खूब उत्साह आगया है।

आपने सेना की जिस कठिनाई का जिक्र किया है वह तो है ही, हालांकि मेरे खयाल से वह उतनी महत्वपूर्ण नहीं है, जितनी आप बताते हैं। पंजाब से सेना को करीब ५२ फीसदी आदमी मिलते हैं और मुझे बताया गया है कि हिन्दुस्तान-भर में मुसलमानों का अनुपात लगभग ३२ फीसदी है। मुझे पता नहीं कि ब्रिटिश साम्राज्य समान राष्ट्रों के किसी बड़े गुट में, दुनिया के संयुक्त राज्यों में, शामिल हो जायगा या नहीं, लेकिन अगर आपका पुराना सपना सही होता हो तो मुझे बड़ी खुशी होगी। यह बहुत अच्छी बात होगी कि आपके सुझाव के अनुसार यात्री-ट्रस्ट जैसी कोई चीज हिंदुस्तान के मामले में दिलचस्पी ले। आपका

दूसरा प्रस्ताव यह है कि मैं आपको किसी ऐसे हिंदुस्तानी विद्वान का नाम सुझाऊं जो किसी हिंदुस्तानी ऐतिहासिक अथवा साहित्यिक विषय पर व्याख्यानमाला दे सकें। लगे हाथों कोई नाम सुझाना तो मुश्किल है। वैसे एक नाम सूझ रहा है, डा. ताराचन्द का। पता नहीं, आप उन्हें जानते हैं या नहीं। कुछ साल हुए वह ऑक्सफोर्ड में थे और वहां से उन्होंने इतिहास के किसी विषय पर डॉक्टरेट ली थी। इस वक्त वह यहां इलाहाबाद विश्वविद्यालय में प्रोफेसर हैं। वह हिंदुस्तानी तरीख के मुगल-काल के खास जानकार हैं और खास तौर पर इस बात के कि इस्लाम और हिन्दू-धर्म का एक-दूसरे पर क्या असर और क्या प्रतिक्रिया हुई और कैसे उन्होंने एक तरह का समन्वय पैदा करने की वृत्ति रखी। कुछ दिन हुए उन्होंने इतिहास-परिषद् के सामने इस विषय पर एक बहुत अच्छा निबन्ध पढ़ा था।

प्रोफेसरों वगैरा के साथ मेरा अपना परिचय कुछ सीमित-सा है और यह बिल्कुल संभव है कि बेहतर आदमी इधर-उधर हों।

मैंने रोड्स-स्मारक-व्याख्यान के बारे में आपके सुझाव को ध्यान से सुना है। मैं आपसे सलाह लूंगा और अचानक इन्कार नहीं करूंगा। इस सम्मान और प्रतिष्ठा के बारे में जो कुछ आपने कहा है, उस सबकी मैं कद्र करता हूं और हम सबको इन दोनोंका लालच है। लेकिन आप शायद विश्वास नहीं करेंगे कि मैं जरा शर्मीला आदमी हूं और नये क्षेत्रों में घुसने का साहस करने से संकोच करता हूं। फिर भी मैं अपना दिमाग खुला रखूंगा और देखूंगा कि हालात क्या शक्ल लेते हैं। हममें से कोई अगले चन्द महीनों में क्या करनेवाला है, यह कहना कठिन है। कई कारणों से मैं इंग्लैण्ड और शायद अमरीका जाना बहुत पसन्द करूंगा। मुझे हमेशा महसूस होता है कि हिंदुस्तान के लिए हिंदुस्तान के बाहर मैं ज्यादा उपयोगी हो सकता हूं। यह भावना कि मैं यहांके लिए पूरी तरह योग्य नहीं हूं, मेरे पीछे लगी हुई है और मेरे उत्साह को मन्द करती है।

साथ में दो चित्र हैं, जिनसे आपको इलाहाबाद की याद आती रहेगी।

ऐलेन लेन चाहती हैं कि मैं हिंदुस्तान की मौजूदा परिस्थिति पर एक पैंग्विन पुस्तक लिखूं। इस तरह का काम असल में आपका है, मेरा नहीं। मुझे पूरी तरह मालूम नहीं कि इसके बारे में मुझे क्या करना चाहिए। लिखने को मेरे लिए समय निकालना बहुत कठिन है।

आपका,
जवाहरलाल नेहरू

डॉ. एडवर्ड टामसन
सॉण्डर्स क्लोज, ब्लेडलो,
एल्सवरी, इंग्लैण्ड

२९६. जे. होम्स स्मिथ के नाम

[जे. होम्स स्मिथ एक अमरीकी पादरी थे।]

मेरठ
१० जनवरी १९४०

प्रिय श्री होम्स स्मिथ,

मुझे आपका १ जनवरी का पत्र इलाहाबाद से मेरी रवानगी से थोड़ी देर पहले मिला। मुझे उत्तर में यह पत्र भेजकर खुशी हो रही है और मुझे यह आशा है कि अमरीका के मित्रों के साथ सम्पर्क करने और वहां के आपके साथियों को संदेश देने का मकसद इस पत्र से सिद्ध हो जायगा।

हिंदुस्तान की आजादी के काम के लिए आपके महान उत्साह का और अमरीका में इस काम को बढ़ाने के लिए कुछ-न-कुछ करने की आपकी इच्छा का मैंने स्वागत किया है। इसके कारण आपको लालबाग-आश्रम से सम्बन्ध-विच्छेद कर लेने में संकोच नहीं हुआ। मुझे आशा है कि अमरीका में हमारे मित्रों और हमदर्दों तक आप हमारे अभिनन्दन पहुंचा देंगे। जहां हम पूरी तरह समझते हैं कि हिंदुस्तान की आजादी की लड़ाई हिंदुस्तान में ही चलानी और जीतनी पड़ेगी, वहां हम अमरीका के लोगों की नेक राय और सहानुभूति को भी बहुत बड़ा महत्व देते हैं। संसार में आज उनका सबसे बलशाली लोकतंत्र है और वे विश्व के मामलों के पुनर्निर्माण में निस्संदेह प्रमुख भाग अदा करेंगे। चूंकि हम खुद हिंदुस्तान में एक लोकतंत्री स्वतंत्र राज्य के आदर्शों के भक्त हैं और

उसके लिए बंधे हुए हैं, इसलिए हम बहुत-सी बातों में कुदरती तौर पर अमरीका की तरफ देखते हैं। मुझे साफ मालूम होता है कि उस वक्त तक संसार की समस्याओं का उचित निपटारा नहीं हो सकता, जबतक कि उस निपटारे में हिंदुस्तान और चीन को भी शामिल नहीं किया जाता और उनके साथ स्वतंत्र राष्ट्रों का-सा बर्ताव नहीं किया जाता। कुदरती तौर पर हम अपने लिए आजादी मांगते हैं। लेकिन हमने साफ कर दिया है कि हम नई विश्व-व्यवस्था के पक्ष में हैं और संसार के मामलों को ऐसा रूप देने में हिंदुस्तान खुशी से सहयोग देगा। यह काम शान्ति, स्वतंत्रता और लोकतंत्र के आधार पर ही संतोषजनक रूप में किया जा सकता है। इसलिए यह निहायत जरूरी हो जाता है कि हिंदुस्तान और चीन में आजादी और लोकतंत्र होना चाहिए, नहीं तो कोई संतोष-जनक राजनैतिक अथवा आर्थिक निपटारा नहीं होगा और वर्तमान संतु-लन का अभाव और संघर्ष बना रहेगा। जाहिर है कि हिंदुस्तान और चीन के वास्तविक और संभावित दोनों तरह के जबरदस्त साधनों को विश्व के मामलों में महत्वपूर्ण भाग अदा करना चाहिए।

फिलहाल हमें हिंदुस्तान की आजादी पर सारी शक्ति लगानी होगी। लेकिन हम इसे संसार के व्यापक हित की दृष्टि से देखने की कोशिश करते हैं और ऐसा करने में हम अनिवार्य रूप से अमरीका का विचार करते हैं। आपको मालूम है कि यूरोप की लड़ाई के बारे में हमने क्या रवैया अख्तियार किया है। हमने फासिस्ट और नाजी सिद्धान्त का हमेशा विरोध किया है और सब तरह के हमलों की निन्दा की है। यदि हमें विश्वास हो जाता कि मौजूदा जंग एक ओर आजादी और दूसरी ओर नाजीवाद के बीच संघर्ष है तो हम खुशी से अपना वजन आजादी के पक्ष में डाल देते। लेकिन हमने ब्रिटिश सरकार से युद्ध के उद्देश्यों को बताने और हिंदुस्तान को आजाद मुल्क समझने के लिए जो अनुरोध किया उसमें हमें मुंह की खानी पड़ी और हमसे साफ तौर पर कह दिया गया कि यह लड़ाई असल में ब्रिटिश साम्राज्यवाद की रक्षा के लिए है। इस उद्देश्य के लिए हम अपने मनुष्यों और साधनों का उपयोग होने देना मंजूर नहीं कर सकते। अगर हम नाजीवाद के खिलाफ हैं तो साम्राज्यवाद के भी विरुद्ध

हैं। यह लड़ाई जिस तरह इस समय लड़ी जा रही है उससे वह हमें दो प्रतिद्वंद्वी साम्राज्यों के बीच का संघर्ष मालूम होता है और हम तबतक उसमें शरीक नहीं हो सकते जबतक यह साफ नहीं कर दिया जाय कि इसका उद्देश्य स्वतंत्रता और लोकतंत्र है। यह सफाई हिंदुस्तान के साथ होने-वाले बर्ताव से ही हो सकती है। हमारी मांग सीधी-सादी है, हालांकि उससे बुनियादी सवाल खड़े होते हैं। हम चाहते हैं कि हिंदुस्तान की आजादी की घोषणा कर दी जाय और बाहर के किसी हस्तक्षेप के बिना संविधान-सभा के द्वारा अपना संविधान तैयार करने का हिंदुस्तानियों का अधिकार मान लिया जाय। यदि ऐसा कर दिया जाय तो हमारा खयाल है कि ब्रिटिश साम्राज्यवाद और दूसरे साम्राज्यवादों की भी सारी रचना में कायापलट हो जायगी और स्वयं साम्राज्यवाद मिट जायगा।

हम चाहते हैं कि अमरीका के लोग, हमने जो रवैया अपनाया है, उसे समझें, क्योंकि हमें विश्वास है कि उसे समझ लेने के बाद एक ऐसे पक्ष के लिए, जिसमें उनका अवश्य विश्वास होगा, उनकी सहानुभूति और सद्भावना अपने-आप हो जायगी।

मैं चाहता हूं कि यह संदेश आप हमारे अमरीका मित्रों के पास ले जायं। आप जानते हैं कि हिंदुस्तान में वर्तमान स्थिति बहुत अस्थिर है और किसी भी समय गंभीर घटनाएं हो सकती हैं। घटनाएं कुछ भी हों, हम इन उद्देश्यों पर कायम रहेंगे और उनकी प्राप्ति के लिए लड़ते रहेंगे।

हमारी आजादी के रास्ते में अल्पसंख्यकों की समस्या को बाधक बताया गया है। लेकिन दरअसल ऐसा नहीं है, क्योंकि लोकतंत्र, आजादी और हिंदुस्तानी एकता की मर्यादाओं के भीतर हम हिंदुस्तान के अल्प-संख्यकों को जो भी गारन्टी सोची जा सकती है, वह देने को तैयार हैं।

आपके और आपके साथियों के लिए शुभकामनाएं।

आपका,
जवाहरलाल नेहरू

श्री. जे. होम्स स्मिथ
आश्रम लालबाग,
लखनऊ

२९७. महात्मा गांधी के नाम

२४ जनवरी १९४०

प्रिय बापू,

आपने मुझसे मोलोटोव के युद्ध-संबंधी भाषण के बारे में सेगांव में पूछा था और मैंने जवाब में कुछ कहा था, जो अस्पष्ट-सा था। मोलोटोव के भाषण के बाद बहुत-सी घटनाएं हुई हैं और स्थिति बहुत कठिन हो गई है। मेरे अपने मन में कोई शंका नहीं है कि फिनलैण्ड के मामले में रूस ने बहुत बेजा कार्रवाई की है और इसके लिए उसे भुगतना पड़ेगा। परन्तु इससे भी अधिक चिन्ता की बात हमारे लिए यह है कि इंग्लैण्ड, फ्रांस और जर्मनी की लड़ाई के पीछे वास्तव में जो कुछ हो रहा है, वह यह है कि रूस से लड़ने के लिए साम्राज्यवादी और फासिस्ट शक्ति मजबूत हो। अब यह पहले से भी अधिक स्पष्ट हो गया है कि लड़ाई दोनों तरफ से खालिस साम्राज्यवादी दुस्साहस है। १९१४ की तरह राजनीतिज्ञ सुन्दर भाषा का प्रयोग कर रहे हैं। मुझे यह बहुत महत्वपूर्ण और जरूरी मालूम होता है कि इस भाषा से और नेक बातों से हमें धोखे में नहीं आना चाहिए। इनसब बातों का हिंदुस्तान में हमारी अपनी स्थिति और ब्रिटिश सरकार के साथ की बातचीत से गहरा ताल्लुक है। सरकार का उद्देश्य उनकी लड़ाई के लिए हमारा सद्भाव प्राप्त करना है। मौजूदा हालात में हिंदुस्तान का सवाल छोड़ दें तो भी मेरी समझ में नहीं आता कि हम एक साम्राज्यवादी युद्ध को अपना नैतिक समर्थन क्यों दें? अलबत्ता, अगर ब्रिटेन हिंदुस्तान के प्रति अपना रवैया बुनियादी तौर पर बदल ले और हमारी आजादी को मान ले तो इसका ही मतलब यह हो जायगा कि उसके साम्राज्यवाद में अत्यन्त महत्वपूर्ण परिवर्तन होगया है। परन्तु अधिक संभावना यह मालूम होती है कि बुनियादी तौर पर यह साम्राज्यवाद बना रहेगा और उसकी खातिर लड़ाई जारी रहेगी, हालांकि हालात से मजबूर होकर हिंदुस्तान के बारे में कुछ अस्पष्ट घोषणाएं की जाती हैं। यह कहा जायगा कि इन घोषणाओं पर भी युद्ध के अन्त में अमल किया जायगा। मुझे हमारे लिए यह स्थिति बहुत खतरनाक दिखाई देती है, क्योंकि हम चाहें या न चाहें

हम अंग्रेजों की साम्राज्यवादी नीति का समर्थन करने के लिए फंस जायंगे और कई तरह के बुरे कामों में शरीक हो जायंगे। इसलिए मेरा खयाल है कि हमें बहुत सावधान और सतर्क रहना चाहिए और बिल्कुल साफ कर देना चाहिए कि हम युद्ध के इन साम्राज्यवादी उद्देश्यों का समर्थन नहीं करेंगे ।

जैसा मैंने ऊपर बताया है कि स्थिति जल्दी ही बहुत ज्यादा पेचीदा हो सकती है, अगर पश्चिमी शक्तियां रूस के विरुद्ध गतिमान हो जायं और इटली के साथ उनका षड्यंत्र सफल हो जाय। वे इसे साम्राज्य के विरुद्ध धर्मयुद्ध बतायेंगे और उसकी आड़ में न केवल अपने साम्राज्य को मजबूत करने की कोशिश करेंगे, बल्कि सोवियत रूस के समाजवादी राज्य को भी छिन्न-भिन्न कर देंगे। रूसी नीति के साथ हम सहमत हों या न हों, यह हर नुक्तेनिगाह से एक आफ़त होगी। मेरी आपसे प्रार्थना है कि इस बात को ध्यान में रखें और हिंदुस्तानी वार्ताओं को इस दृष्टि से देखें।

आप देखेंगे कि आपके लेखों में एक-दो आशावादी शब्दों के प्रयोग और उत्तर प्रदेश के गवर्नर के आनन्दभवन में आने जैसी छोटी घटनाओं से हर जगह यह असाधारण असर पड़ा है कि ब्रिटेन के साथ किसी-न-किसी तरह का निपटारा हो रहा है और कांग्रेसी मंत्रिमंडल जल्दी ही फिर पदारूढ़ हो जायंगे। जिन्ना हमारी आजादी का मजाक उड़ाकर इससे फायदा उठा रहे हैं। मुस्लिम लीग को अपना सर जरा उठाने का मौका मिल जाता है और हमारे पत्र-संपादक तो हमेशा की तरह गलत व्यवहार करते ही हैं। इन सब बातों से हिंदुस्तान और इंग्लैण्ड दोनों में जनता के मन पर गलत असर होता है। इससे समझौते की संभावना भी बहुत कम हो जाती है। फिर भी यही होगा कि वाइसराय शिकायत करेगा कि उसे गुमराह किया गया। 'पायनियर' ने यह शीर्षक लगाया है—"कांग्रेस मंत्रिमंडलों के त्यागपत्र एक धोखाधड़ी", इत्यादि। हर जगह पूछा जा रहा है कि पर्दे के पीछे क्या हो रहा है? हर जगह किसी बड़ी और आकस्मिक घटना की आशा लगी हुई है।

इनसब बातों का हकीकत से और वर्तमान परिस्थिति से मेल नहीं बैठता। इतना ही नहीं, किसी भी तरह की दिमागी या दूसरी तैयारियों,

के लिए गलत वातावरण पैदा होता है।

मुझे खुद को तो यकीन है कि निपटारे की कोई वास्तविक संभावना नहीं है, हालांकि ब्रिटिश सरकार बेशक उसे पसन्द करेगी। लेकिन जो हमारी कम-से-कम मांग है, उसे वे माननेवाले नहीं हैं। आज ब्रिटिश सरकार पहले से कहीं ज्यादा प्रतिक्रियावादी और साम्राज्यवादी है और उससे हमारी बात मान लेने की आशा रखना ऐसी बात की आशा रखना है, जो इस स्थिति में हो नहीं सकती। झूठी आशाएं पैदा करना इन्साफ और मसलहत दोनों के खिलाफ है और उससे हमारी स्थिति कमजोर भी हो सकती है। मेरा सुझाव है कि दूसरे पहलू पर जोर देना अधिक न्याय-पूर्ण है ताकि दूसरा पक्ष ठीक-ठीक जान सके कि क्या मामला है और वह उसके अनुसार अपनेको बना ले।

महात्मा गांधी

सप्रेम आपका,
जवाहरलाल

२९८. महात्मा गांधी के नाम

निजी

इलाहाबाद
४ फरवरी १९४०

प्रिय बापू,

आप कल दिल्ली पहुंचेंगे और ऐसा मालूम होता है कि आप एक सप्ताह या अधिक वहां ठहरनेवाले हैं। मुझे पता नहीं कि वहां क्या घटनाएं होंगी और हममें से किसीको बुलाने की आपको जरूरत हो सकती है या नहीं। मैं खुद तो नहीं समझता कि ऐसा होने की जरा भी संभावना है, क्योंकि मुझे सरकार के रवैये में रत्तीभर भी फर्क दिखाई नहीं देता। जो हो, मैं आपको खबर देना चाहता था कि अगले दो सप्ताहों में दिल्ली जाने का विचार करना मेरेलिए बहुत ही कठिन है। मेरा यह सारा समय पूरी तरह भरा हुआ है। आज रात को मैं दो दिन के लिए लखनऊ जा रहा हूं। ७ ता. को एक दिन के लिए इलाहाबाद आऊंगा और ८ ता. की सुबह बम्बई के लिए रवाना हो जाऊंगा। वहां मुझे योजना-समिति

की महत्वपूर्ण बैठकों में शरीक होना है, जो मैंने कुछ मामलों पर विचार करने के लिए खास तौर पर बुलाई हैं। अगर मैं वहां नहीं गया तो सारी बैठक का काम बिल्कुल गड़बड़ और बेकार हो जायगा। बम्बई में मैं ९ ता. की सुबह से १२ ता. की रात तक रहूंगा। १२ ता. की रात को लखनऊ के लिए रवाना हो जाऊंगा। १४, १५ और १६ ता. को प्रान्तीय कांग्रेस और प्रतिनिधियों की सभाओं के लिए लखनऊ में रहूंगा। बाद के दो दिन, मुझे आशा है, बड़ी सभाओं के लिए गोरखपुर में होऊंगा। अगले दो सप्ताह के लिए फिलहाल मेरा यह कार्यक्रम है।

पिछले महीने में जो घटनाएं हुई हैं, उन सबसे मेरा यह विश्वास पक्का हुआ है कि इस आशा के लिए ज़रा-सा भी कारण नहीं है कि ब्रिटिश सरकार हमारी स्थिति को स्वीकार कर लेगी। असल में बहुत-सी घटनाएं ऐसी हुई हैं, जिनसे साफ जाहिर होता है कि वे लोग एक बहुत निश्चित साम्राज्यवादी नीति पर चल रहे हैं। आपने देखा होगा कि ब्रिटिश संसद ने अभी एक बिल पास किया है, जिसमें 'गवर्नमेंट ऑव इंडिया एक्ट' में सुधार करके कर लगाने के बारे में प्रान्तीय सरकारों के अधिकार सीमित कर दिये है। यह खास तौर पर उत्तर प्रदेश के सम्पत्ति-कर को ध्यान में रखकर किया गया है। इस तरह वह कर उठा दिया गया। ऐसे फैसले में यह दोष तो है ही कि वह प्रान्तीय विधान-सभा के अधिकारों को कम कर देता है। इसके अलावा उसके लिए जो समय और तरीका चुना गया वह ब्रिटिश सरकार के साम्राज्यवादी दृष्टिकोण का प्रमाण है और इससे जाहिर होता है कि उस दृष्टिकोण में कोई परिवर्तन नहीं हुआ।

पता नहीं, आपका ध्यान रॉयल सैन्ट्रल एशियन सोसायटी द्वारा संगठित लंदन के हाल एक के सामाजिक समारोह की तरफ आकर्षित किया गया है या नहीं। लार्ड जेटलैंड सभापति थे और कई मंत्रिमंडल के मंत्री मौजूद थे। जाहिरा मकसद तो लंदन में मुस्लिम संस्कृति और धर्म का एक केन्द्र स्थापित करना था, पर असली मकसद इस्लामवाद के प्रचार को बढ़ावा देना और हिंदुस्तान में इस भावना का दुरुपयोग करना और इस्लामी देशों में युद्ध के मित्र-राष्ट्रों को लाभ पहुंचाना था।

यह असाधारण बात है कि किस तरह लड़ाई सच्चे साम्राज्यवादी ढंग पर बढ़ रही है और किस तरह घटनाएं दोहराई जा रही हैं।

इन सब बातों का इस धारणा के साथ मेल नहीं बैठता कि इंग्लैण्ड अपने साम्राज्य को समेटने की तैयारी कर रहा है, न यह देखकर तनिक भी प्रोत्साहन मिलता है कि वाइसराय से मुलाकात करने के लिए आपके नेतृत्व में फिर लोगों का एक जलूस बनाया जा रहा है। वही पुराना खेल फिर खेला जा रहा है, पृष्ठभूमि वही है, विविध उद्देश्य वे ही हैं, पात्र वे ही हैं और परिणाम भी वही होना चाहिए।

किन्तु कुछ दुर्भाग्यपूर्ण अप्रत्यक्ष परिणाम भी हैं। देश में आनेवाले समझौते का वातावरण फैला हुआ है, जबकि वास्तव में उसके लिए कोई कारण नहीं है। वह कमजोर करनेवाला और हिम्मत तोड़नेवाला है, क्योंकि वह ताकत से पैदा नहीं हुआ है; परन्तु कई आदमियों के मामले में तो किसी भी तरह संघर्ष से बचने और सत्ता के जो छिछड़े हमारे पास पहले थे, उन्हें फिर से प्राप्त करने की अत्यधिक लालसा से पैदा हो रहा है। संघर्ष अवांछनीय तो है, परन्तु जाहिर है कि वह हर कीमत पर नहीं टाला जा सकता, क्योंकि कभी-कभी टालना खुद ही एक निहायत मंहगा और हानिकारक मामला होता है। लेकिन अभी तो संघर्ष का कोई तात्कालिक प्रश्न नहीं है। सवाल है हमारी अपनी स्थिति को शान के साथ कायम रखने का और उसे किसी तरह कमजोर न करने का। मुझे अंदेशा है कि इंग्लैण्ड और हिंदुस्तान दोनों में यह असर व्यापक रूप में फैला हुआ है कि हम किसी भी हालत में कोई संघर्ष नहीं करेंगे और इसलिए हम जो भी शर्तें हमें प्राप्त हो जायंगी उन्हें स्वीकार कर लेंगे। इस प्रकार का खयाल हमें साहसहीन बनाता है। मैंने पिछले पखवारे में देखा है कि हमारे कांग्रेस के प्रतिनिधियों के चुनावों पर भी इसका असर पड़ा है। बहुत लोग जो संघर्ष की संभावना के डर से पीछे-पीछे रह रहे थे अब फिर आगे आ गये हैं, क्योंकि पद और सत्ता के आनंद भोगने की संभावना उन्हें फिर सामने दिखाई दे रही है। अवांछनीय लोगों को कांग्रेस से बाहर रखने का कई महीनों का प्रयत्न कुछ असफल होगया, क्योंकि हिंदुस्तान के वातावरण में इस आकस्मिक परिवर्तन के कारण

उन्हें विश्वास होगया कि समझौता होनेवाला है।

ब्रिटिश सरकार भाषा चाहे नरम काम में ले, परन्तु उसकी प्रतिक्रिया भी हमारे प्रतिकूल हो रही है। अवश्य ही वह हमारे साथ समझौता करना चाहती है, क्योंकि उसे युद्ध में हमारा समर्थन चाहिए। लेकिन यह बहुत निश्चित है कि वह जरा-सी भी वास्तविक सत्ता छोड़ना और हमसे समझौता करने के लिए अपनी बुनियादी साम्राज्यवादी नीति को बदलना नहीं चाहती। साम्प्रदायिक सवाल पर वह अपना पुराना षड्यंत्र जारी रख रही है और रखेगी, भले ही कभी-कभी वह कांग्रेस को तसल्ली देने के लिए मुस्लिम लीग के विरुद्ध कुछ आलोचना के शब्द इस्तेमाल करती है। जहांतक उसका संबंध है, वह अपनी वर्तमान स्थिति को ज्यों-की-त्यों रखते हुए हमें अपने पक्ष में करने की कोशिश करेगी। यह संभव हो तो उसके लिए बहुत अच्छा है। यह नहीं होता है, जैसाकि उसे भी दीखता है, तब वह समय-समय पर हिंदुस्तानी नेताओं से बातचीत करती रहेगी, मामले को अधिक वक्त तक खींचेगी, यह दिखायेगी कि हम समझौते के किनारे पर आ गये हैं और इस प्रकार संसार और हिंदुस्तान दोनों के लोकमत को शान्त रखेगी। उनके दृष्टिकोण से इस दूसरी नीति में यह लाभ और है कि वह हमारी शक्ति को थका देगी और हमें ठंडा कर देगी, ताकि यदि अंत में संघर्ष आ ही जाय तो उसके लिए जरूरी वातावरण न रहे। इंग्लैण्ड के सरकारी हलकों में यह आम विश्वास है कि बातचीत करने और उन्हें स्थगित कर देने की उनकी नीति का यह परिणाम हुआ है और कांग्रेस-मंत्रिमंडलों के इस्तीफे के समय हिंदुस्तान में जो स्थिति खतरनाक मालूम होती थी, वह अब बहुत आसान होगई है और खतरों का कोई अंदेशा नहीं रहा।

मुझे ऐसा मालूम होता है कि जहां हम संघर्ष को जल्दी नहीं ला सकते और नहीं लाना चाहिए और जहां हमें किसी संभव और सम्मानपूर्ण समझौते के लिए दरवाजा बंद कर देने की आवश्यकता नहीं, क्योंकि आपके तरीके में दरवाजा कभी बंद नहीं किया जाता, वहां हमें यह भी बहुत साफ कर देना चाहिए कि हमारी पहले बताई हुई शर्तों के अलावा और किसी तरह न समझौता हो सकता है, न होगा। सच तो यह है कि इन

हालात का भी लड़ाई की घटनाओं के दृष्टिकोण से थोड़ा-सा सिंहावलोकन करना पड़ेगा। जैसा हमने पहले कहा था, वैसा अब नहीं कह सकते कि हम यह जानना चाहते हैं कि यह युद्ध साम्राज्यवादी है या नहीं। हमें ब्रिटिश सरकार ने जो उत्तर दिया है वह और लड़ाई में और विदेशी मामलों में उसकी नीति बराबर पूरी साम्राज्यवादी रही है। इसलिए हमें जरूर इस माने हुए तथ्य के आधार पर चलना पड़ेगा कि यह एक साम्राज्यवादी युद्ध है, चाहे दावा इसके विरुद्ध कुछ भी किया जाय। युद्ध और ब्रिटिश-नीति दिन-दिन अधिकाधिक अपशकुनवाली होती जा रही है, और मैं हर्गिज नहीं कहूंगा कि हिंदुस्तान किसी भी तरह उस साम्राज्यवादी दुस्साहस में फंसे, क्योंकि इससे हिंदुस्तान को न केवल भौतिक बल्कि आध्यात्मिक दृष्टि से भी हानि ही हो सकती है। आज मुझे यह मुद्दा बहुत ज्यादा महत्वपूर्ण दिखाई देता है।

इस तरह मुझे मालूम होता है कि हमें सबसे महत्वपूर्ण काम यह करना है कि हम संसार के, ब्रिटिश सरकार के और हिंदुस्तानी जनता के सामने अपनी स्थिति बिल्कुल साफ कर दें। समझौते के इस मुद्दे पर बहुत ज्यादा गलतफहमी है और यह गलतफहमी बिल्कुल हमारे विपरीत और ब्रिटिश साम्राज्यवाद के अनुकूल है, क्योंकि वह हमारे साधनों का युद्ध के लिए दुरुपयोग कर रहा है और यह बहाना भी कर रहा है कि उसे हमारा बहुत सद्भाव प्राप्त है। ब्रिटिश सरकार या वाइसराय के पास हमारे जाने से वे गलतफहमियां बढ़ती हैं और ब्रिटिश सरकार सही समझौते से और भी दूर हटती है।

राजगोपालाचारी के कुछ हाल के भाषणों से मुझे दुःख हुआ है, क्योंकि उनमें औपनिवेशिक दर्जे और इसी तरह की बहुत ही समझौते की-सी बातें हैं। कांग्रेस बहुत-सी आवाजों में बोलती है और आश्चर्य नहीं कि इसका नतीजा गड़बड़ और परेशानी हो। कम-से-कम आजादी के सवाल पर तो एक ही आवाज निकलनी चाहिए।

मैंने आज आपपर दो लम्बे पत्र थोप दिये हैं, जिसके लिए मैं आपसे क्षमा चाहता हूं।

सप्रेम आपका,
जवाहरलाल

महात्मा गांधी,
नई दिल्ली

२९९. अबुल कलाम आज़ाद के नाम

इलाहाबाद
२२ फरवरी १९४०

प्रिय मौलाना,

कुछ मुद्दे हैं, जो गौर के लिए आपके सामने रखना चाहता हूं। कल स्टेशन पर हमें कोई चर्चा करने के लिए बहुत कम वक्त मिला।

१. जबसे लड़ाई शुरू हुई, ब्रिटिश सरकार की सारी पालिसी से यह साबित होता है कि वे लोग जानबूझकर और बराबर साम्राज्यशाही ढंग पर चल रहे हैं। लड़ाई से पहले चैम्बरलेन-सरकार बिल्कुल प्रतिक्रियावादी मशहूर थी और कई मौकों पर उन लोगों ने फासिस्ट और नाजी ताकतों को बढ़ावा दिया और यूरोप में जमहूरियत को कुचला। अबीसीनिया, स्पेन, आस्ट्रिया, चैकोस्लोवाकिया और अल्बानिया के मामले में यह साफ होगया। मंचूरिया में भी उनकी पालिसी इसी किस्म की थी। इंग्लैण्ड में १०० साल से ज्यादा के दौरान में मि. चैम्बरलेन की सरकार सबसे ज्यादा प्रतिक्रियावादी और साम्राज्यशाही सरकार हुई।

लेकिन जब उनकी अपनी सल्तनत को खतरा पैदा हुआ तब उन्होंने जमहूरियत की पनाह ली और लड़ाई शुरू कर दी। यह यकीन करना मुश्किल था कि वे लोग अचानक जमहूरी बन गये हैं। बाद की घटनाओं ने बता दिया है कि उनकी पुरानी पालिसी बिल्कुल नहीं बदली है और सच तो यह है कि अब और भी तेजी के साथ उसके पीछे चला जा रहा है। फर्क इतना ही है कि वे हिटलर को हटाना चाहते हैं, क्योंकि वह उनकी सल्तनत के लिए खतरा बन गया है। यह पुरानी पालिसी यूरोप और दूर पूरब और अमरीका में भी तमाम प्रतिक्रियावादी तत्वों

को बढ़ावा देने की और रूस को कमजोर बनाने की कोशिश की थी, क्योंकि रूस इन तमाम प्रतिक्रियावादी तत्वों के लिए और साम्राज्यशाही के लिए भी चुनौती के तौर पर खड़ा था। जहां एक तरफ बढ़ती हुई नाजी ताकत के डर की वजह से वे कभी-कभी मदद के लिए रूस की तरफ देखते थे, वहां रूस के लिए और बढ़ती हुई जमहूरियत के लिए उनकी नापसंदगी इतनी ज्यादा थी कि वे रूस के साथ किसी भी तरह हाथ नहीं बंटा सकते थे। इसलिए आखिरी वक्त तक उन्होंने हिटलर और मुसोलिनी के तईं खुश रखने की पालिसी बरती और इस तरह उनकी ताकत बहुत बढ़ाई। उनका मकसद यह था कि हिटलर को सोवियत रूस के खिलाफ लड़ाई में फंसाकर अपने दो खास दुश्मनों को इस तरह कमजोर बनाया जाय। वे किसी भी हालत में नहीं चाहते थे कि जर्मनी या इटली में तरक्कीपसंद हुकूमत हो।

इस तरह वे खेल खेलते रहे। आखिर में रूस ने महसूस किया कि उस हालत में उसके लिए बड़ा खतरा था और चूंकि उसे ब्रिटिश पालिसी के खिलाफ पूरा शक था, इसलिए उसने नाजी जर्मनी के साथ समझौता करके उस पालिसी को बिगाड़ने की कोशिश की। इससे इस वक्त तो ब्रिटिश तजवीजें गड़बड़ होगईं।

अंग्रेजी पालिसी बुनियाद में सोवियत के खिलाफ बनी रही और यह अजीब बात है कि आज भी जब इंग्लैण्ड की जर्मनी के साथ लड़ाई है तो ब्रिटिश सरकार जर्मनी के मुकाबले रूस के कहीं ज्यादा खिलाफ है। उनका मकसद जर्मनी में किसी-न-किसी तरह की भीतरी तबदीली कराने का है, जिससे हिटलर के बजाय जर्मनी के फौजी नेताओं के हाथ में बागडोर आ जाय और फिर उनके साथ सुलह कर ली जाय। इसके बाद इंग्लैंड, फ्रांस, जर्मनी और दूसरे मुल्कों का रूस पर मिला-जुला हमला हो। यह घटना होगी या नहीं, कहना मुश्किल है। लेकिन बात यह है कि ब्रिटिश पालिसी लड़ाई के पहले और बाद में बराबर प्रतिक्रियावादी और साम्राज्यशाही रही है, चाहे उनके ऐलान कुछ भी हों।

२. रूस ने कई भूलें की हैं और मेरे खयाल से उसका फिनलैंड पर हमला करना खास तौर से बहुत गहरी भूल थी, उसूल और मसलहत

दोनों की नजर से। यह सच है कि इंग्लैंण्ड फिनलैंड को रूस के खिलाफ साजिश की जगह और रूस पर हमला करने के लिए कूदने के मंच के तौर पर इस्तेमाल कर रहा था। रूस इस घटना की बात से डर गया और उसने फौरन हमला करके पेशवन्दी करने की कोशिश की। यह बड़ी वेवकूफी का काम था और वह इंग्लैण्ड और फ्रांस के हाथों में खेल गया और साथ ही दुनियाभर की तरक्की-पसंद राय उससे खिलाफ होगई। इससे इंग्लैण्ड को यह ढोंग करने का मौका मिल गया कि वह जमहूरियत का दोस्त है और उसके पिछले कुछ सालों के पापों को लोग भूल गये। राष्ट्र-संघ ने फासिस्ट और नाजी हमलों की तो कभी चर्चा तक नहीं की थी, लेकिन रूस की बुराई करने को वह एकदम जाग गया। अब मेरे मन में कोई शंका नहीं है कि रूस की पालिसी हाल में गलत रही है और उसकी बुराई होनी ही चाहिए, लेकिन साथ ही हमें याद रखना चाहिए कि इस पालिसी की यह शक्ल कैंसे बनी। इसकी वजह से यह हुआ कि ब्रिटिश सरकार की तरफ से रूस को घेर लेने की बराबर कोशिश होती रही। अब तो यह बात ज्यादा अहमियत की है कि हम अच्छी तरह समझ लें कि इंग्लैण्ड अपने साम्राज्यशाही फायदे के लिए और लड़ाई को रूस तक फैला देने के लिए फिनलैंड की हालत का नाजायज़ फायदा उठाने की कोशिश कर रहा है। इसमें हमारे लिए खतरा भरा है, क्योंकि अगर इंग्लैंड और रूस में लड़ाई हुई तो हमारी अपनी सरहदें उसमें फंस जाती हैं और हमारे लिए अपनी पालिसी के बारे में साफ रहना जरूरी हो जाता है। जहां हमें रूस की वहुत-सी कार्रवाइयों की नुक्ताचीनी और बुराई जरूर करनी चाहिए, वहां यह निहायत खतरनाक बात होगी कि हम ब्रिटिश साम्राज्यशाही को अपने फायदे के लिए उसका फायदा उठाने दें।

मेरे खयाल से यह बड़े दुःख की बात होगी कि रूस अपंग बना दिया जाय और लड़ाई की वजह से वह कमजोर होजाय, क्योंकि तब तो साम्राज्यशाही का फकत एक ताकतवर मुखालिफ भी नहीं रहेगा। लेकिन यह बात छोड़ दें तो भी कोई चीज जिससे ब्रिटिश साम्राज्यशाही मजबूत होती हो, हमारे लिए खतरनाक है। इसलिए यह बहुत अहम बात है कि हम अपने दिमाग में रूस के तईं ब्रिटेन की मौजूदा पालिसी के बारे में साफ रहें

और यह ऐलान कर दें कि हम उसके खिलाफ हैं और रूस के खिलाफ ब्रिटिश कार्रवाई की हम किसी भी हालत में ताईद नहीं कर सकते और न उसे पसंद कर सकते हैं। मेरे खयाल से हम पालिसी साफ जाहिर कर दें तो उसका असर पड़ेगा। अगर ब्रिटेन यह सोचता है कि जो कुछ वह करता है उसे हिंदुस्तान बहुत ऐतराज किये बिना मान लेगा तब तो यह बिल्कुल मुमकिन है कि लड़ाई फैल जाय और रूस उसमें फंस जाय। इसके नतीजे हमारी अपनी हिंदुस्तानी सरहद के लिए क्या होंगे, यह सोचने की बात है। दूसरी तरफ अगर इंग्लैंड यह महसूस करता है कि उसकी तरफ से रूस पर हमला होने के खिलाफ हिंदुस्तान में जबरदस्त ऐतराज है और ऐसी किसी भी पालिसी की हिंदुस्तान में मुखालफत होगी तो इंग्लैंड दूसरे हलकों में इस लड़ाई को फैलाने से पहले बहुत हिचकिचा सकता है। इस वक्त ब्रिटिश सरकार इस पसोपेश में है कि उसे क्या करना चाहिए। वह रूस पर हमला करना चाहती है, लेकिन नतीजों से डरती है। अगर उसे भरोसा होजाय कि हिंदुस्तान में उससे अमन हो जायगा तो वह हमला कर देगी, नहीं तो हाथ रोक लेगी। इसलिए इस मामले में हमारे रवैये की अहमियत है और उसे ज्यादा-से-ज्यादा सफाई और मजबूती के साथ जाहिर कर देना मुनासिब है।

३. इंग्लैंड और फ्रांस में जो कुछ हो रहा है, उससे साबित होता है कि ये मुल्क कितने ज्यादा प्रतिक्रयावादी होते जा रहे हैं। फ्रांस में आज फौजी तानाशाही है और लोगों की आजादी पूरी तरह दबा दी गई है। बीसों पार्लमेंट के मेंबर वहां गिरफ्तार कर लिये गए हैं,क्योंकि सरकार को उनके खयालात पसंद नहीं हैं। इसी वजह से कई सौ म्यूनिसिपैलिटियां खत्म कर दी गई हैं। इंग्लैंड में बात यहांतक तो नहीं बढ़ी है, लेकिन रवैया वही है। अमली तौर पर इंग्लैंड और फ्रांस की सरकारें ज्यादा-से-ज्यादा फासिस्ट बनती जा रही हैं, हालांकि वे बात जमहूरियत की करती हैं। वे लड़ाई के मकसदों के बारे में कोई भी बात कहने से इन्कार करती हैं और १९१४ की तरह उनका साफ मकसद है कि अपनी-अपनी सल्तनतों की जड़ मजबूत कर लें और अपने मुकाबले की सल्तनतों को और अपनी सल्तनतों के भीतर और बाहर की तमाम तरक्की-पसंद ताकतों को कमजोर कर दें। सितम्बर में कांग्रेस ने ब्रिटिश सरकार के सामने जो सवाल रखा उसका

जवाब साफ-साफ ब्रिटिश पालिसी और फ्रेंच पालिसी ने दे दिया। वह जवाब यह है कि वे साम्राज्यशाही की तरफ हैं और उसे कायम रखने के लिए लड़ रहे हैं। अब हम तो फासिस्म और नाजीशाही की बुराई करते हैं और हिटलर लड़ाई में जीत गया तो बुरा होगा। हम यह नहीं चाहते। इसके मुकाबले ब्रिटिश साम्राज्यशाही की जीत का मतलब यह है कि चैम्बर-लेनशाही जारी रहेगी और पहले से ज्यादा मजबूत हो जायगी। यह भी उतना ही बुरा है और उससे बराबर लड़ाइयां होती रहेंगी। इसलिए राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय हरेक नजरिये से हमारे लिए ऐसी जीत में किसी भी तरह मदद देना वेवकूफी होगी। इस वजह से इंग्लैंड और हिंदुस्तान के वीच के हिंदुस्तानी मसले के किसी अन्दरूनी हल की बात छोड़ दी जाय तो भी यह साफ हो जाना चाहिए कि हम ब्रिटिश सल्तनत को महफूज रखने के लिए किसी साम्राज्यशाही लड़ाई में अपनी ताकत नहीं लगायेंगे।

४. इस्लामशाही फिर किस तरह से पैदा होकर उठ रही है, यह भी आपने देखा होगा। इसकी वजह महज यहां की मुस्लिम लीग या दूसरी जमातें ही नहीं हैं। बुनियादी तौर पर इसकी वजह यह है कि ब्रिटिश सरकार उसे बढ़ावा देना चाहती है। १९१४ में और बाद में इस्लामशाही साम्राज्य की मुखालफत करनेवाली ताकत थी। उसने ब्रिटिश सरकार की लड़ाई की कोशिश को कमजोर किया और बाद में हिंदुस्तान के खिलाफत-आन्दोलन की बुनियाद को ही बदल दिया। आज भी वही खयाल ब्रिटिश साम्राज्य-शाही की हिमायत में इस्तेमाल किया जा रहा है। इससे किसी हद तक हिंदुस्तान का कौमी मोर्चा भंग होता है और नजदीकी पूरब के मुस्लिम अवाम की राय पर इंगलैंड के हक में असर पड़ता है। तुर्की का इंग्लैंड के लिए दोस्ताना ताकत होना भी इस मामले में ब्रिटिश पालिसी को मदद पहुंचाता है। मुझे मालूम नहीं कि ब्रिटिश प्रोपेगैण्डा का मुस्लिम मुल्कों में क्या असर हुआ ह, लेकिन मैं यह बताना चाहता हूं कि इस्लामशाही के नये दौर की शुरुआत पक्के तौर से साम्राज्यशाही है।

५. इन सब वातों से सावित होता है कि किस तरह हमारे अपने सब अन्दरूनी मसलों का, चाहे वह फिरकेवारान मसला हो चाहे आजादी का बड़ा मसला हो, लड़ाई के बड़े सवालों और ब्रिटेन की गैरमुल्की पालिसी

के सवालों के साथ गहरा ताल्लुक है। अगर हम हिंदुस्तान को अलग समझें तो भूल करते हैं। फिरकेवाराना मसले की खास मुश्किलें ब्रिटिश सरकार के मौजूदा रवैये की वजह से हैं। अगर मुस्लिम लीग या सिकन्दर हयात राजी हो जायं तो भी उसे हल करना हमारे लिए बहुत मुश्किल हो जाता है। जरूर ही ब्रिटिश सरकार हिंदुस्तानी मसले का हल चाहती है ताकि वह लड़ाई में अपनेको मजबूत बना सके और अपनी साम्राज्यशाही की जड़ जमा सके। सिकन्दर हयात पूरी तरह ब्रिटिश पालिसी के हक में काम कर रहा है, इसलिए वह भी वही बात करना चाहता है। लेकिन बुनियादी तौर पर इस पालिसी का दारोमदार ब्रिटिश साम्राज्यशाही की ताकत बढ़ाने पर है। दूसरी तरफ हमारी पालिसी साम्राज्यशाही को कमजोर करने पर मुनहसिर है। यह बुनियादी फर्क है जो समझौता नहीं होने देता और वाइसराय के साथ या मुस्लिम लीग के साथ कितनी ही बातचीत कर ली जाय, यह दिक्कत उस वक्त तक दूर नहीं होगी जबतक कि ब्रिटिश सरकार खुद अपनी साम्राज्यशाही छोड़ने को तैयार नहीं हो जाती। वर्किंग कमेटी के १४ सितम्बरवाले बयान में उससे इसी कुरबानी की मांग की गई थी। ऐसा करना तो बहुत दूर रहा, ब्रिटिश सरकार ने अपनी साम्राज्यशाही पर मोहर लगाई है। हिंदुस्तान के रवैये की बड़ी अहमियत है; क्योंकि उससे अमरीका और दूसरे अलग रहनेवाले मुल्कों पर असर पड़ता है। अमरीका इस वक्त बहुत जोर के साथ हिटलर के खिलाफ और उस खयाल से अंग्रेजों के हक में है। साथ ही इसमें शक नहीं कि वह ब्रिटिश साम्राज्यशाही के हक में भी नहीं है और इसलिए वह अंग्रेजों का साथ देने में हिचकिचाता है। अगर अंग्रेज अमरीका को समझा दें कि उन्होंने हिंदुस्तान के साथ समझौता कर लिया है तो इससे उन्हें जबरदस्त मदद मिलेगी।

६. पिछले चन्द महीनों में ब्रिटिश सरकार के साथ समझौते के बारे में बातचीत से इतनी गड़बड़ हुई है कि हमारे अपने लोग और दुनिया गुमराह हो गई और कोई नहीं जानता कि क्या होने वाला है। मेरे खयाल से हमें बिल्कुल साफ कर देना चाहिए कि साम्राज्यशाही को बचाने में हमारे साथ कोई समझौता नहीं हो सकता और ऐसी तमाम कोशिशें जितनी जल्दी

छोड़ दी जायं उतना अच्छा है। इस बारे में कोई आखिरी बात हो जानी चाहिए।

७. पिछले चन्द महीनों में हिंदुस्तान में ब्रिटिश पालिसी धीरे-धीरे मनमाने ढंग की हुकूमत पर लौट आने की रही है और हिंदुस्तान से बाहर के लोगों को इससे अचरज होता है कि कैसे हमने चुपचाप चैन से इसके आगे सिर झुका लिया है। न सिर्फ चुनी हुई सूबाई सरकारें उखाड़ दी गई हैं, बल्कि पार्लमेंट में तरमीमी कानूनों के जरिये सूबाई सरकार का दायरा दरअसल छोटा कर दिया गया है। इस किस्म की चीज वाइसराय के तमाम मीठे लफ्जों से ज्यादा जोर से बोलती है। मामूली तौर पर आईन के महज मुल्तवी होने से ही कड़ी जद्दोजहद हो जानी चाहिए थी, लेकिन हमने इसे चुपचाप बर्दाश्त कर लिया। हमने तरमीमी कानूनों को भी बर्दाश्त कर लिया। आईन की यह तरमीम, जहांतक हमारा ताल्लुक है, अहमियत नहीं रखती। इससे तो ब्रिटिश पालिसी का झुकाव मालूम होता है। इन सब बातों से पता चलता है कि हमारे और ब्रिटिश सरकार के बीच में कोई आम रजामंदी की चीज नहीं है और ब्रिटिश साम्राज्यशाही हमेशा की तरह मजबूत हो रही है।

८. जैसा मैंने आपको कल शाम बताया था, मुझे यह बहुत खतरनाक मालूम होता है कि मौजूदा सूबाई विधान-मंडलों की बनी हुई संविधान-सभा मान ली जाय। यह बालिग मताधिकार की हमारी बुनियादी मांग को छोड़ देना है। यह मांग हम पिछले चार साल से कर रहे हैं। इसका यह भी मतलब है कि हमारी संविधान-सभा ब्रिटिश साम्राज्यशाही के ढांचे के भीतर होगी। मौजूदा हालात में इससे फिरकेवाराना और दूसरे झगड़े पैदा होंगे और इस तरह हमारी अपनी कमजोरी का दिखावा किया जायगा और संविधान के बारे में कोई समझौता नहीं होगा। नतीजा यह होगा कि हमें कुछ छोटी-मोटी तब्दीलियों के साथ १९३५ के कानून के अंदर रहकर काम करना होगा। अगर संविधान-सभा को कामयाब होना है तो उसे इस कानून और ब्रिटिश साम्राज्यशाही दोनों के ढांचे के बिल्कुल बाहर रहना चाहिए। ब्रिटिश सरकार के साथ हमारे ताल्लुकात के सवाल पर तभी ग़ौर होना चाहिए जबकि संविधान-सभा हमारा संविधान तैयार कर

ले। बालिग मताधिकार की तकनीकी मुश्किल अप्रत्यक्ष चुनाव की बीच की कार्रवाई से दूर की जा सकती है। मुद्दा यह है कि इस संविधान-सभा को हिंदुस्तानी अवाम का एक ऐसा हिस्सा माना जाय, जो ब्रिटिश साम्राज्य-शाही और ब्रिटिश पार्लमेंट के दायरे के विल्कुल बाहर रहकर काम करता हो; नहीं तो वह ब्रिटिश पार्लमेंट के किसी कानून का पुछल्ला बनकर रह जायगी।

९. मेरे खयाल से यह भी साफ कर देना चाहिए कि नौकरी की मौजूदा शर्तों और कन्ट्रोल वगैरा के रहते हुए हमारी सूबाई सरकारें फिर से काम नहीं कर सकतीं। मुझे खुशी है कि पंतजी ने इसपर जोर दिया है। सरकार का सारा ढांचा ऊपर से नीचे तक बदलना चाहिए।

मुझे उम्मीद है कि इतना लंबा खत लिखने के लिए आप मुझे माफ करेंगे। मेरे दिमाग में और बहुत-से खयाल हैं, लेकिन अब मुझे खत्म करना चाहिए।

आपका,
जवाहरलाल

मौलाना अबुल कलाम आज़ाद,
१९ ए बालीगंज सर्कुलर रोड,
कलकत्ता।

३००. कृष्ण कृपालानी के नाम

इलाहाबाद
२६ फरवरी १९४०

श्री कृष्ण कृपालानी,
शान्तिनिकेतन, बंगाल

प्रिय कृष्ण,

तुम्हारा खत मिला। तुम सुधीर सेन के नाम मेरा पत्र विश्वभारती त्रैमासिक में छाप सकते हो। लेकिन मेरा खयाल है कि ऐल्महर्स्ट के नाम का उसमें ज़िक्र करना ठीक नहीं होगा। तुम कह सकते हो कि पत्र किसी अंग्रेज़ दोस्त के लिए लिखा गया है। साथ में तुम यह टिप्पणी भी दे सकते हो :

"यह साफ तौर से समझ लेना चाहिए कि सम्पूर्ण भारतीय स्वाधीनता

की शर्त अत्यावश्यक है और उसकी चर्चा करने या उसमें मीनमेख निकालने की गुंजाइश नहीं है। जब मैं आजादी की बात करता हूं तो यह जरूरी नहीं कि उसका अर्थ ब्रिटेन के साथ अंतिम रूप से संबंध-विच्छेद कर लेना है। मेरा विचार यह है कि ब्रिटेन साम्राज्यवादी न रहे। इसका अभी या निकट भविष्य में तो कोई लक्षण दिखाई नहीं देता। सब बातों से यही जाहिर होता है कि ब्रिटिश सरकार पूरी तरह साम्राज्यवादी सत्ता के रूप में ही काम कर रही है और वह अपने साम्राज्य की रक्षा करने और अपने साम्राज्यवाद को मजबूत बनाने पर तुली हुई है। जाहिर है कि किसी भी भावी व्यवस्था में, यदि वर्तमान व्यवस्था को जारी नहीं रखना है तो, विभिन्न राष्ट्रों में गहरा सहयोग होना चाहिए। विश्व-संघ की आजकल बड़ी चर्चाएं हैं। ऐसा कोई सच्चा संघ बने तो आजाद हिंदुस्तान कुदरती तौर पर उसका सदस्य बनेगा; लेकिन अगर प्रस्ताव यूरोपियन राज्यों के संघ का अथवा यूरोप, अमरीका और ब्रिटिश उपनिवेशों का संघ बनाने का है तो उसका नतीजा तो यही हो सकता है कि एशिया और अफ्रीका का शोषण करने के लिए साम्राज्यवादी सत्ताओं को मजबूत किया जाय। इससे हम कभी सहमत नहीं हो सकते।

"सारा मुद्दा यह है कि साम्राज्यवादी रचना के साथ किसी भी तरह बंधकर हम हिंदुस्तान के भविष्य का विचार नहीं कर सकते। अगर हम संविधान-सभा की बात कहते हैं तो वह कोई ऐसी चीज नहीं होगी जो ब्रिटिश साम्राज्यवाद के ढांचे के भीतर रहे। लेकिन वह उसके बाहर होगी। आपत्ति इंगलैंड या दूसरे देशों के साथ सहयोग करने पर नहीं है, लेकिन किसी भी ऐसी रचना के साथ, जो साम्राज्यवादी हो, सहयोग करने पर है।"

उस दिन मैंने एक लम्बा पत्र न्यूयार्क के कुछ फेडरल यूनियनवालों को लिखा था। शायद तुम्हें उस पत्र में दिलचस्पी हो, इसलिए उसकी नकल तुम्हारे लिए भेज रहा हूं। अगर तुम चाहो तो उसके अंश छाप सकते हो।

तुम्हारी पत्रिका में से लेकर छापी हुई गृह-उद्योगों पर मेरे पत्र की कई नकलें मुझे मिल गईं। नंदिता जब यहां आई थी तब मैंने उसके कुछ

चित्र लिये थे। क्या अनिल चंदा ने वे तुमको दिखाये या उनकी प्रतियां दीं ?

तुम्हारा,
जवाहरलाल नेहरू

३०१. एडवर्ड टामसन की ओर से

एलसबरी, बक्स
७ मार्च १९४०

प्रिय जवाहरलाल,

मेरे खयाल में यह पत्र शायद रनजीत को मिलना चाहिए। इसके लिए वास्तव में एक प्रखर बुद्धिवाले पाठक की जरूरत है।

जानता हूं, हिंदुस्तान में एक नदी है, जिसे बाहर के लोग गैंजेज और हिंदुस्तानी गंगा कहते हैं। टेम्स को 'तरल इतिहास' कहा जाता रहा है, गंगा भी तरल (बहुत-कुछ) और इतिहास है। मैं शायद इस अक्तूबर में फिर हिंदुस्तान आ रहा हूं। अक्तूबर से पहले भी आ सकता हूं। गंगा की फिल्म बनानी है—कैलास से लेकर सागर तक। मुझे बताइये, इसके लिए कुल मिलाकर अच्छा समय कौन-सा ठीक रहेगा। इन बातों को ध्यान में रखना पड़ेगा १. सुन्दर दृश्यावली। मेरे खयाल में वर्षा का मौसम, जो बाढ़ों के साथ इस दृश्य को उपस्थित करता है, सबसे अच्छा रहेगा २. सुविधा। वर्षा का मौसम खराब रहता है। ३. मेले, जैसे आपके इलाहाबाद का कुम्भ-मेला। लोग सौन्दर्य-गौरव-मंडित दृश्यों, मनुष्यों और उनके मेलों की झांकी लेना चाहते हैं। मेरे खयाल में किराये पर मोटरकार लेकर नदी के किनारे-किनारे चलना सबसे अच्छा रहेगा।

मैंने आपका एक पत्र देखा है जिससे मैं प्रायः पूरी तरह सहमत हूं। एल्महर्स्ट ने मुझे यह पत्र दिखाया था।

मेरा बड़ा लड़का अब सेना में सेकेण्ड लेफ्टिनेंट है और जल्द ही विदेश जाने वाला है। कहां जायगा, यह पत्र में नहीं बता सकता। ६ महीने में वह २० वर्ष का हो जायगा। छोटा लड़का स्कूल में पढ़ता है। मुझे फ्लू हो गया था और अब मेरी पत्नी इससे पीड़ित हैं, अन्यथा हम लोग ठीक-ठाक चल रहे हैं।

मुझे आशा है कि इंदिरा के समाचार से आप सन्तुष्ट हैं।

आज सुबह मैं प्रसन्नता अनुभव कर रहा हूं, अनोखी बात है। सरकार फिलस्तीन के प्रश्न पर दृढ़ है। मेरे दल के लोगों ने, वामपन्थियों ने, जो अरबों के विरुद्ध और यहूदियों के पक्ष में पागल हो रहे हैं, जैसे अनैतिकतापूर्ण तर्क पेश किये हैं, वैसे मैंने कभी नहीं सुने थे। इसके कारण मैं तेजी से 'टोरी' होता जा रहा हूं।

हिंदुस्तान आने पर मैं टैगोर के शान्तिनिकेतन की भी फिल्म बनाऊंगा। आवश्यक जानकारी देकर मेरे मित्र मेरी सहायता कर सकते हैं। मैं समझता हूं, पटना जैसे स्थानों पर होटल है। लेकिन हरिद्वार अथवा दूसरी छोटी-छोटी जगहों में भी हैं क्या? यदि हम मोटरकार से गंगा के किनारे-किनारे चलें तो हमें कई स्थानों पर ठहरना पड़ेगा।... बाद को शायद मैं रनजीत के साथ उड़ीसा के जंगलों की सैर कर सकूं। लेकिन शायद ऐसा होगा नहीं। जो हो, अगर मैं राजी कर सका तो अपनी पत्नी को भी साथ लाने का विचार है।

उनका कहना है कि यह पत्र देकर आपको कष्ट नहीं देना चाहिए। मेरा भी कुछ ऐसा ही खयाल है। इस पत्र को रनजीत तक पहुंचा भर देंगे क्या? मेरे पास उनका पता नहीं है, सिर्फ नैन का पुराना आफिस का पता है।

आपका,

ए. टा.

३०२. अबुल कलाम आजाद की ओर से

कलकत्ता

२७ मार्च १९४०

प्रिय जवाहरलाल,

जब १५ तारीख को सुबह आपने रेल में मुझे मेरी तकरीर का अंग्रेजी तर्जुमा दिया तो मैंने यह देखने के लिए उसे सरसरी तौर से उलट-पलट लिया कि वह कैसा हुआ है। अब से पहले उसे फुरसत से पढ़ने का मुझे वक्त ही नहीं मिला था। अब जबकि पहले की बनिस्बत मैं कम घिरा हूं, मैंने आपके अंग्रेजी तर्जुमे को गौर से पढ़ा। इसने मुझपर जो असर डाला, उसने मुझे मजबूर कर दिया कि मैं अपनी हस्ब-मामूल खामोशी

को तोड़कर आपके ऊंचे दिमाग और गैर-मामूली काबलियत की तहेदिल से तारीफ करूं। मैंने जितना सोचा था, उससे कहीं ज्यादा अंग्रेजी पर आपका दखल है। मुझे यह कहने में कोई हिचकिचाहट नहीं कि हमारे वक्त के चोटी के काबिल लोगों में से भी बहुत थोड़े ऐसे लोग हैं, जो कई दिनों में भी इतना बड़ा काम करने की हिम्मत नहीं कर सकते, जो आपने चन्द घंटों में, बिना किसी खास कोशिश के, कर लिया।

तर्जुमा करना एक तरह से नई चीज लिखने से कहीं ज्यादा मुश्किल है। असली मजमून की अदबी शक्ल बनाये रखना और साथ ही तर्जुमे के जरिये लेखक के अदबी तर्ज को जाहिर करना कोई आसान काम नहीं है। जिस आदमी का दोनों जबानों पर एक-सा काबू है, वही यह काम करने की हिम्मत कर सकता है। आपके तर्जुमे में असली मजमून की कोई भी खासियत बिगड़ी नहीं है और आपने अंग्रेजी तर्जुमे में मेरे उर्दू के अदबी ढंग को इतनी कामयाबी के साथ निबाहा है कि अगर पढ़नेवालों को ऐसा लगे कि असली तकरीर उर्दू में नहीं, अंग्रेजी में लिखी गई थी, तो मुझे अचरज नहीं होगा।

आपके तर्जुमे की एक दूसरी खासियत है तामीरी खयालात की गजब की बुलन्दी, जिसमें से ब्यौरे निकलते हैं। आपने पूरी तरह मेरे उस खयाल को देख लिया, जिसने मेरी तकरीर और जुमलों को यह शक्ल दी है। दर-असल आपने जब तर्जुमा शुरू किया तो जो कुछ मैंने कहा है, उसकी पूरी तस्वीर आपके सामने थी। यकीनन यह बड़ा मुश्किल काम था, खासतौर पर जबकि मेरे अपने मजमून से आपको कोई सीधी मदद नहीं मिल सकती थी।

अंग्रेजी तर्जुमे की जरूरत की नजर से कहीं-कहीं आपने तर्जुमे में कुछ घटा-बढ़ी करदी है। मैंने इन सब तब्दीलियों को बड़े गौर से देखा और मुझे यह देखकर खुशी हुई कि बाज जगह आपने तर्जुमे को मेरे मजमून से बेहतर कर दिया है। तर्जुमे में कहीं भी मेरी तकरीर की स्पिरिट और शक्ल में कोई खामी नहीं आने पाई।

वाइसराय के ऐलान पर नुक्ताचीनी करते हुए मैंने यह लिखा था:

"सफों-पर-सफे पढ़ जाने के बाद भी बमुश्किल इस कदर बताने

पर मुस्तईद होता है. . . ." अब यहां पर 'बमुश्किल' लफ्ज मैंने मिसाल के तौर पर इस्तेमाल किया था। आपने मेरी मिसाल की शक्ल को बनाये रखते हुए उसके भाव को इस तरह लिखा है :

"सफों-पर-सफे पढ़ जाने के बाद बहुत झिझक के साथ आखिर परदा उठता है। हमें एक झलक मिलती है. . . .।" जो चीज मैं 'बमुश्किल' लफ्ज के जरिये जाहिर करना चाहता था, आपने अपने फैले हुए फिकरे में उसे और जोरदार तरीके से जाहिर किया है। मैं यह मंजूर करता हूं कि आपका तर्जुमा मुझसे कहीं ज्यादा मौजूं है। इस तरह की कई खूबसूरतियों में से यह सिर्फ एक है।

मैं शायद ३० तारीख को इलाहाबाद पहुंचने की उम्मीद कर रहा हूं। मैं समझता हूं कि तबतक आप इलाहाबाद में ठहरे रहेंगे।

आपका,
अ. क. आजाद

३०३. एडवर्ड टामसन के नाम

इलाहाबाद
७ अप्रैल १९४०

प्रिय एडवर्ड,

आपका ७ मार्च का पत्र मिला। मुझे यह जानकर खुशी हुई कि आप अक्तूबर में या जल्दी ही हिंदुस्तान आ रहे हैं। उस समय आप मुझे कहां पायंगे और पा भी सकेंगे या नहीं, इसका मुझे पता नहीं। परन्तु कुछ भी हो, हिंदुस्तान वहीं होगा और गंगा भी वहीं होगी।

गंगा की फिल्म बनाने का आपका विचार दिलचस्प है। मैं इसे अपने से ज्यादा काबिल रनजीत को सौंप रहा हूं। लेकिन चूंकि मैं खुद भी जरा कल्पनाशील हूं, इसलिए उसके बारे में कुछ कहना चाहता हूं। दुर्भाग्य से रनजीत की तबीयत अच्छी नहीं है और वह बिस्तर में हैं। लेकिन मैंने इसका जिक्र उनसे किया और उन्हें इस बारे में काफी उत्साह हुआ। लेकिन उनके दिमाग में विचारों की बाढ़ आ गई और जो कुछ मैं नीचे लिख रहा हूं, वह कुछ उनकी तरफ से भी आया है।

चूंकि गंगा इतिहास है, इसलिए ऐतिहासिक पहलू प्रकट होना चाहिए। गंगा का परम्परा, पुराण, कला, संस्कृति और इतिहास के साथ गहरा संबंध है। आप उसे हर जगह सामने आती हुई पायंगे। इस विषय की काफी चर्चा करना बहुत बड़ा काम होगा। लेकिन कुछ भी हो, इतिहास और परम्परा के पहलू की उपेक्षा नहीं की जा सकती। अंध-विश्वास के पहलू पर जोर देने की जरूरत नहीं है। फिर भी हिंदुस्तान के पुराण और कला को समझने के लिए गंगा के पौराणिक उद्गम का जिक्र किया जा सकता है, यानी यह दिखाया जा सकता है कि गंगा शिव की जटाओं से गिर रही है। जटा से मतलब हिमालय पर्वत से है। मेरे खयाल से इसका सबसे अच्छा तरीका यह है कि इसको चित्रित करनेवाले कुछ प्रसिद्ध स्थापत्यों की नकल कर दी जाय। ऐसे अनेक स्थापत्य हैं।

फिर कुछ प्रसिद्ध ऐतिहासिक दृश्य दिखाये जाने चाहिए। मिसाल के तौर पर आर्यों का आना और उनका पहले-पहल गंगा पर पहुंचना और इस शानदार नदी को देखकर खुश होना। सर मुहम्मद इकबाल के मशहूर गीत "सारे जहां से अच्छा हिन्दोस्तां हमारा" की दो प्रसिद्ध पंक्तियां हैं। उनमें आर्यों के आने का उल्लेख है। चित्र में इन पंक्तियों का लाना अच्छा रहेगा। पंक्तियां ये हैं :

ऐ आबरूदे गंगा वह दिन है याद तुझको
उतरा तेरे किनारे जब कारवां हमारा।

पाकिस्तान-आन्दोलन के इन दिनों में यह ध्यान देने की बात है कि मुसलिम लीग के एक नेता ने इस बारे में क्या कहा था।

और फिर बहुत-सी लड़ाइयां भी गंगा के आसपास हुई हैं। चंद्रगुप्त मौर्य के काल में यूनानी आक्रमण गंगा के पास ही कहीं रोका गया था, शायद इलाहाबाद से दूर नहीं था। चंद्रगुप्त के समय के जीवन को दिखाने-वाला चित्र बढ़िया रहेगा। उस समय कन्नौज बड़ा शहर था। वहां की बनी हुई चीजें, खास तौर पर तलवारें और फौलाद के हथियार मशहूर थे। मेरे खयाल से सिकंदर के हमले का बयान करनेवाले शाहनामे में भी और सोहराब व रुस्तम के वर्णनों में भी कन्नौज की तलवारों का जिक्र आता है।

इससे पहले रामायण और महाभारत की कथाएं गूंथी जा सकती

हैं। बाद में अशोक के काल और उसके साथ गंगा पर स्थित उसकी विशाल राजधानी पाटलिपुत्र का जिक्र हो सकता है।

भारतीय साहित्य में गंगा का जिक्र भरा पड़ा है और आपको उसके नाम का जिक्र बर्मा, हिन्द-चीन और दूसरी जगहों पर भी मिलेगा। हर्ष के समय के चीनी यात्री ह्यूनसान ने इलाहाबाद के कुंभ-मेले का वर्णन किया है, जो उस समय भी प्राचीन उत्सव था। अवश्य ही असंख्य ऐतिहासिक घटनाएं हैं, जिनको लिया जा सकता है। गंगा की घाटी और खास तौर पर दोआबा, अर्थात् गंगा और जमुना के बीच का इलाका इतिहास और परम्परा तथा गीतों से भरा पड़ा है। अगर आप बहुत सुन्दर और शालीन नदी जमुना को लें तो आपको मथुरा और वृन्दावन के चारों ओर सारी कृष्ण-लीला और ब्रजभाषा के मधुर गीत मिल जाते हैं।

इस लेखे-जोखे के लिए कोई निश्चित समय सुझाना मुश्किल है। जाड़ों में गंगा संकरी हो जाती है और अनेक स्थानों पर देखने लायक नहीं रहती। ठीक समय वर्षा ऋतु का रहेगा। लेकिन बड़े मेले अधिकतर सरदी के दिनों में होते हैं। उनमें सबसे बड़ा इलाहाबाद का कुंभ है, जो १२ साल में एक मर्तबा होता है। आपका सौभाग्य है कि यह कुंभ अगले साल जनवरी और फरवरी में पड़ रहा है।

मुझे मालूम नहीं कि आप गंगा के उद्गम गंगोत्री तक पहुंच सकते हैं या नहीं। यह मुश्किल यात्रा है और रेल के बाद आपको उसमें एक पखवाड़ा लग सकता है। ज्यादातर यात्रा घोड़े पर करनी पड़ेगी, क्योंकि वहां गाड़ी की सड़कें नहीं हैं। आप तेज सवार हों तो शायद आप एक हफ्ते में भी पूरा कर सकें। मैं खुद भी वहां गया हूं, लेकिन दो बरस पहले। मैं काफी दूर तक गढ़वाल के पहाड़ों में गंगा के साथ-साथ गया था और बाद में हवाई जहाज से बदरीनाथ गया था और गंगा को आकाश से देखा था।

हरिद्वार, जहां गंगा पहाड़ों से निकलकर आती है, और आसपास का प्रदेश बेशक महत्त्वपूर्ण है।

ठहरने की कोई खास दिक्कत नहीं है। आम तौर पर इंस्पेक्शन हाउस अथवा डाक-बंगले हैं। मसूरी जैसे स्थान में बढ़िया दर्जे के होटल भी हैं,

लेकिन मित्रों के यहां इंतजाम कर लेना आसान है।

जमुना के पास अभी-अभी मैंने एक हफ्ते से अधिक बिताया है और मुझे इस नदी के साथ अधिकाधिक लगाव होता जा रहा है।

मुझे उम्मीद है, आप 'गैंजेज़' शब्द का प्रयोग नहीं करेंगे। मुझे वह नापसंद है। 'गंगा' कहीं भला मालूम होता है। पता नहीं, कैसे आपके पूर्वजों ने इस अच्छे नाम को बदलकर गैंजेज कर दिया। एक मित्र ने समझाया है और वह ठीक मालूम होता है कि गैंजेज गंगाजी का अपभ्रंश है।

नैन और रनजीत और मैं सब आनन्दभवन में साथ रहते हैं, इसलिए पता एक ही है। नैन अभी बम्बई में है।

इंदिरा ठीक हो रही है, लेकिन मैं चाहता हूं कि उसकी प्रगति और तेज हो। वह जल्दी ही हिंदुस्तान लौटने के लिए बहुत ज्यादा उत्सुक है और मेरा अपना विचार यह है कि वह और तीन-चार महीने के बाद लौटे। लेकिन मैं समझता हूं कि आखिर सलाह डाक्टरों की ही मानी जायगी।

आपका,
जवाहरलाल

डा. एडवर्ड टामसन
एल्सबरी,
बक्स (इंग्लैण्ड)

३०४. अबुल कलाम आजाद की ओर से

कलकत्ता
२४ अप्रैल १९४०

प्रिय जवाहरलाल,

आपके २१ अप्रैल के खत के लिए शुक्रिया। मैं आपसे एकराय हूं कि अगर कृष्ण मेनन अपने आप अमरीका जाते हैं तो यह वक्त के लिहाज से एक हद तक फायदेमंद होगा। अगर यह सवाल कांग्रेस की वर्किंग कमिटी की बैठक के पहले हमारे सामने आया होता तो यह उसी बैठक में तय हो जाता। फिर भी मैं जनरल सेक्रेटरी को लिख रहा हूं कि वह फौरन उन्हें १०० पौंड भेज दें और मुझे उम्मीद है कि आप बम्बई से उन्हें कम-से-

कम १०० पौंड भिजवाने का इंतजाम कर देंगे।

आप कहते हैं कि मैं भी उन्हें एक खत लिखूं। मैं सोचता हूं कि अगर मैं कांग्रेस के सदर की हैसियत से उन्हें लिखता हूं तो इसका लाजमी तौर पर यह मतलव होगा कि वह वहांपर कांग्रेस की तरफ से जा रहे हैं और जैसा कि आप खुद लिखते हैं, मामले को इस हद तक ले जाना मुनासिब नहीं। बेहतर यह होगा कि आप उन्हें अपने खत में लिखें—"मुझे यह सुनकर खुशी हुई कि आप अमरीका जा रहे हैं। मुझे उम्मीद है कि वहां आपकी मौजूदगी से उन लोगों को हिन्दुस्तान की मौजूदा हालत को समझने में मदद मिलेगी।" आपका खत उन्हें जिम्मेवारी की हैसियत देने में पूरी-पूरी मदद देगा। इससे वह हालत भी बच जायगी, जो सदर की तरफ से सीधा लिखने से पैदा हो सकती है।

मसूरी के दोस्तों के तीन मकान थे, वे भर गये हैं। क्या आपके दोस्तों में से कोई मसूरी में मकान का इंतजाम कर सकता है? अगर यह वैसे मुमकिन न हो तो मैं किराया देने को तैयार हूं। मकान अच्छा होना चाहिए और खुला होना चाहिए। अगर कोई आदमी आपके खयाल में हो तो मेहरबानी करके इंतजाम के लिए उसे तार दे दें। कलकत्ता का मौसम मेरी तन्दुरुस्ती पर बुरा असर डाल रहा है।

मसूरी के बाद मैंने नैनीताल और अल्मोड़ा की बावत भी सोचा। मैं इसके मुतल्लिक पन्तजी को लिख रहा हूं।

आपका,

अ. क. आजाद

पंडित जवाहरलाल नेहरू,
बम्बई।

३०५. एडवर्ड टामसन की ओर से

एलसबरी, बक्स
२८ अप्रैल १९४०

प्रिय जवाहरलाल,

आपका लम्बा खत मिला। हां, ठीक ही मैं जानता था कि रनजीत ही मेरे लिए उपयुक्त आदमी है। लेकिन रनजीत और नैन दोनों से मुझे

वड़ा डर लगता है। इसीलिए आपकी आड़ लेकर उन दोनों तक अपनी बात पहुंचानी पड़ती है।

सेंसर के कारण कहने योग्य बहुत ही कम बातें रह जाती हैं। आपको मालूम हुआ होगा कि नार्वेजियन युद्ध बड़ा ही दर्दनाक है। मैं नार्वे जाने की कोशिश में हूं। ऐसी हालत में, जवकि मेरा १९ वर्ष का लड़का कमीशन प्राप्त कर चुका है और जरूर और जल्दी ही कहीं विदेश जायगा, मेरा हाथ-पर-हाथ रक्खे बैठे रहना और मुसीवतों का मुकावला न करना वड़ा तकलीफदेह है। अगर सचमुच कयामत का दिन आ गया है तो मैं तूफ़ानों के बीच में रहना चाहूंगा, सुरक्षित कगारों पर नहीं। यदि हमारी सभ्यता और अंग्रेज कौम के नाम पर धब्बा लगनेवाला है तो मैं जीवित्त रहकर यह सब देखना नहीं चाहूंगा। यहां अंग्रेज कौम से मतलब किसी भी कदर उस अस्त-व्यस्त जाति से नहीं है, जिसकी आप कल्पना करते हैं और जिसपर स्काचों और आयरिशों की सारी नीचता आरोपित करते हैं। फिर भी मेरी उम्र के लोगों के लिए मोर्चे के निकट जाना कठिन ही है।

ठीक है, गंगा के बारे में मुझे याद रहेगा। लेकिन यह फिल्म, पत्र लिखते समय मेरा पहले जो खयाल था, उससे कहीं अधिक महत्त्वाकांक्षापूर्ण होगी। मेरा डायरेक्टर अभी कनाडा में है और शीघ्र ही वापस आयगा। हम लोगों की फिल्म दुनिया की महान फिल्मों में से एक होगी और...जो हो, यदि मैं पहले की तरह एक बार फिर बहकर हिन्दुस्तान के सुन्दर किनारों पर जा लगा तो सीधा रनजीत के पास जाकर इस बारे में बात करूंगा।

हिन्दुस्तान जाना मेरे लिए कठिन होता जा रहा है। मैं अब दक्षिण हिन्दुस्तान का सबसे ज्यादा नफरत की निगाह से देखा जानेवाला अंग्रेज होनेवाला हूं। अभी-अभी सुनने में आया है कि मद्रास विश्व विद्यालय ने 'एन इंडियन डे' को जो कि 'सिक्स पैनी पैंग्विन' माला में निकल गई है, १९४२ के लिए बी. ए. के क़ोर्स में लगा दिया है। मुझे उम्मीद है, उसपर कोई-न-कोई नोट्स तैयार करेंगे। यह याद करके मेरा सिर झुक जाता है कि इस किताब को

जब मैंने लिखा था तब मैं नौसिखिया था। मेरी इच्छा है कि आपके विश्व-विद्यालय 'एन इंडियन' के बदले, जो महज एक उपन्यास है, 'दि राइज एंड फुलफ़िलमेंट' का उपयोग करते। यह किताब अच्छी है।

आपके नाम अपने छोटे लड़के का पत्र साथ में भेज रहा हूं। इस पत्र को मुझे हिन्दुस्तान लाना चाहिए था। शायद यह आपको दिलचस्प लगेगा।

अगाथा हैरिसन से यह जानकर हम लोगों को बड़ी प्रसन्नता हुई कि इंदिरा की सेहत ठीक होती जा रही है। उसे बहुत बुरे दिन गुजारने पड़े हैं। जब वह इंगलैंड लौट आवे तो कृपया हमें सूचित कर दें। मेरी इच्छा है कि इस स्थान को आप देखें। दक्षिण-पूरबी इंग्लैंड में यह सबसे सुन्दर और प्यारा गांव है। अगर आपने इस तरह का स्थान—वनफूलों, दंतकथाओं और इतिहास से परिपूर्ण—नहीं देखा, तो इंगलैंड नहीं देखा।

हिन्दुस्तान के लिए मुझे बड़ा दुःख है। मैं कह तो कुछ नहीं सकता, पर सोचता बराबर हूं। मुझे इस बात का खेद है कि पिछले नवम्बर में आप जिन्नासाहब के साथ समझौता नहीं कर सके। इससे आपकी स्थिति बहुत मजबूत हो जाती। तार्किक दृष्टि से उसे स्थगित करना आपके लिए ठीक ही रहा, लेकिन...काश समझौता हो जाता! और उस समय मालूम हुआ था कि समझौता हो सकता है। मैं आपकी हर सेवा के लिए तैयार हूं और ऐसे मौके आ सकते हैं, जब मैं आपकी सहायता कर सकूंगा। फिर भी, एक-दो बातें गहरी पैठ चुकी हैं और उनका प्रचार भी हुआ है। अब हर कोई जानता है कि हिन्दुस्तान को बिना पूछे युद्ध में शामिल राष्ट्र घोषित करके हमने भारी भूल की है। यदि मैं वहां आपसे मिल सका तो कहने योग्य कई बातें होंगी। फिलहाल हमारी भावनाएं आपके साथ हैं और हमें बड़ी आशा है, इंदिरा जल्द ही ठीक हो जायगी।

आपका,

ए. टा.

३०६. अबुल कलाम आजाद की ओर से

नैनीताल
९ मई १९४०

प्रिय जवाहरलाल,

मसूरी के बारे में मुझे आपका तार मिला, जिसके लिए मैं आपका मशकूर हूं। नैनीताल में इन्तजाम हो जाने की वजह से मैंने मसूरी का इरादा छोड़ दिया।

मैं यहां ६ तारीख को पहुंचा। हालात ने अगर इजाजत दी तो मैं यहां जुलाई तक ठहरूंगा। आप भी गालिबन बम्बई में मई के अखीर तक ठहरेंगे और फिर इलाहाबाद के लिए रवाना होंगे। नैनीताल क्यों न आवें और कुछ वक्त तक मेरे साथ रहें! प्लानिंग कमेटी की रिपोर्ट आप यहीं रहकर तैयार कर सकते हैं। जहांतक सूबे के काम का सवाल है, इलाहाबाद और नैनीताल में कोई फर्क नहीं। इसके अलावा यहां आपकी मौजूदगी बहुत-से मामलों में फौरन सलाह-मशविरे के खयाल से मुफीद होगी।

मि० अ० पटवर्धन से वर्धा में मेरी बातें हुईं। उन्होंने मुझसे कहा कि किसी और मौके पर वह मुझसे बात करेंगे, लेकिन मुझसे मिल न सकेंगे। मेहरबानी करके उनसे वर्किंग कमेटी की मेंबरी के बारे में दरियाफ्त करें। मैं आपको इसलिए तकलीफ दे रहा हूं, क्योंकि मैं उनका पता नहीं जानता। सोशलिस्ट दोस्त भी बिल्कुल निकम्मे साबित हुए। उनमें इतनी हिम्मत नहीं कि काम कर सकें। वह मुखालफत से डरते हैं और अपने पैरों पर मजबूती से खड़े होने कीं हिम्मत नहीं करते। इस नाजुक मौके पर मुझे उम्मीद थी कि उनसे कुछ मदद मिलेगी; लेकिन मेरी उम्मीदें झूठी साबित हुईं।

अगर पटवर्धन इसके लिए तैयार नहीं हैं तो फिर जल्द किसी दूसरे आदमी को नामजद करना चाहिए। क्या आप कोई नाम सुझा सकेंगे?

इम्पीरियल टोबेको कम्पनी ने मेरे पास जो नोट भेजा है उससे मालूम होता है कि मजदूरों ने जो कुछ कहा था उसके खिलाफ हड़ताल की कुछ

और ही वजह हैं। ताहम मैं कोशिश कर रहा हूं कि इज्जत के साथ समझौते की कोई सूरत निकले।

आपका,
अ. क. आजाद

३०७. अबुल कलाम आज़ाद की ओर से

नैनीताल
२५ मई १९४०

प्रिय जवाहरलाल,

आपके १६ तारीख के खत के लिए शुक्रिया। अचरज के साथ मैंने अखबारों में राजेन्द्रबाबू का बयान पढ़ा और इसी बीच मुझे उनका खत भी मिला। इस खत से मुझे साफ-साफ पता चला कि उनके खयालों का रुझान किस तरफ है। मैंने उन्हें जो जवाब भेजा, मुझे अफसोस है, उसकी नकल मैं आपको भेजने से मजबूर हूं। मेरा जवाब उर्दू में था और इस दफ्तर में सिर्फ जाब्ते के खतों की नकल रखी जाती है। जहांतक कांग्रेस के मौजूदा रवैये का ताल्लुक है, मेरा खत करीब-करीब वैसा ही था जैसा कि आपका। मुझे यह जानकर खुशी हुई कि इस मामले में हम दोनों के खयाल एक से हैं और यह सबसे ज्यादा तसल्ली की बात है कि गांधीजी भी इससे पूरी तरह एकराय हैं।

राजेन्द्रबाबू के बयान के मुकाबले आसफअली का बयान कहीं ज्यादा ऐतराज करने लायक है। वाकई उससे मुझे चोट पहुंची। मैंने आसफ-अली को एक के बाद एक दो बहुत तेज खत लिखे। अब वह मुझे यकीन दिला रहे हैं कि आगे से ऐसे बयान नहीं देंगे।

जो कुछ आपने मुझे और राजेनबाबू को अपने खतों में लिखा है, जहां-तक कांग्रेस के रवैये का सवाल है, वह बिल्कुल दुरुस्त है। कोई वजह नहीं दिखाई देती कि इस वक्त तब्दीली का कोई सवाल उठाया जाय। लेकिन इसके साथ-साथ आपने दो बातें ऐसी लिखी हैं, जिनसे मैं मुत्तफिक नहीं हूं। मुझे ताज्जुब है कि कांग्रेस के तर्जेअमल के बारे में आपका दिमाग जो तजवीज कर रहा है उसके साथ इनका मेल कैसे बैठेगा। राजेनबाबू के खत में आप लिखते हैं: "हम अगर तैयार भी हों तब भी फौरन सत्याग्रह

का सवाल नहीं उठता; क्योंकि मेरी समझ से इस खास मौके पर, जबकि ब्रिटेन खतरे में है, यह ठीक न होगा कि हम उसका गला दबोचने दौड़ें।" आपने अपनी लखनऊ की तकरीर में भी इसी खयाल को जाहिर किया है। 'पायोनियर' ने आपके असली लफ्जों को देना जरूरी समझा : "यह बात हिन्दुस्तान की शान के खिलाफ है कि वह इंग्लैण्ड की कमजोरी से फायदा उठाकर इस वक्त सत्याग्रह शुरू कर दे।" मैं इस तरह के सोचने के तरीकों को बिल्कुल नहीं समझ सकता।

दरअसल यह तरीका ही बिल्कुल गलत है कि हम सियासी जद्दो-जहद के मामले में पहले से कुछ बुनियाद बना लें और तब अपने तर्जेअमल के मुतल्लिक गलत नतीजे निकालें। मैं नहीं जानता कि हिन्दुस्तान की 'शान' क्या है ? मैं सिर्फ यही जानना चाहता हूं कि सोच-समझकर जो फैसला किया गया है वह हमें कहां ले जायगा। हम अंधों की तरह अंधेरे में नहीं भटक सकते। हम जो भी रास्ता चुनें, वह आंख खोलकर चुनें। इससे ज्यादा बेकार की बात क्या होगी कि हम एक रास्ता तय करें और फिर उसपर चलने से इन्कार करें !

हमने ब्रिटेन को पूरा-पूरा मौका दिया कि वह हमें अपने साथ लेकर चले, मगर उसने सख्ती के साथ ऐसा करने से इन्कार कर दिया। हमने मज-बूर होकर यह फैसला किया कि हम इस साम्राज्यशाही लड़ाई में हिस्सा नहीं लेंगे। अगर हमारा मौजूदा फैसला ऐसा है कि जो ब्रिटेन को (गांधीजी के लफ्जों में) 'परेशानी' में डालता है या आपके लफ्जों में हिन्दुस्तान की 'शान' के खिलाफ है तो इसका कोई इलाज नहीं हो सकता। हम इसके लिए जिम्मेवार नहीं हैं। इसके लिए जिम्मेवार है ब्रिटिश सरकार का नासमझी-भरा गरूर।

आप कहते हैं कि इस मौके पर हमें सत्याग्रह नहीं शुरू करना चाहिए; लेकिन सत्याग्रह से आपकी मुराद क्या है ? क्या यह लड़ाई का ऐसा नया ऐलान होगा कि जिसे कांग्रेस को अभी तय करना है ? कांग्रेस की लड़ाई सिर्फ यह है कि लड़ाई में किसी तरह की भी मदद न दी जाय। अमल में अभी इस रोक को एक खास हद से आगे नहीं बढ़ाया गया, लेकिन इसे आगे बढ़ाना जरूरी है। अपने-आपको गिरफ्तार करने और लड़ाई के आर्डिनेन्सों

के मारे इसकी शक्ल अपने-आप सिविल नाफरमानी की हो जायगी ।

अगर आपके इखलाकी फलसफे को, हिन्दुस्तान की शान को खयाल में रखते हुए, दुरुस्त समझ लिया जाय तो इसका एक ही मतलब निकलेगा, यानी रामगढ़ कांग्रेस का फैसला हिंदुस्तान की शान और इज्जत के बिल्कुल खिलाफ था ।

इसी खत में आप आगे लिखते हैं कि अगर सरकार के साथ किसी शक्ल में समझौता हो गया तो हमारा आगे के लिए क्या रवैया होगा ? आप कहते हैं, "अगर ये सब बातें मान ली जायं (यानी आजादी, आत्म-निर्णय और बालिग मताधिकार के मुताबिक चुनी हुई संविधान-सभा) तब भी इससे यह नतीजा नहीं निकलता कि हम लड़ाई में अपनी खास ताकत लगा दें ।"

लेकिन अगर इससे यह नतीजा नहीं निकलता तो हम यह उम्मीद क्यों करें कि ब्रिटिश सरकार, जो कुछ हम मांग रहे हैं, वह सब हमें दे देगी । बेशक अगर वह मजबूर कर दी जाय तो वह हमें ये सब चीजें बेमन दे सकती है । लेकिन इस वक्त ताकत-आजमाइश का तो कोई सवाल ही नहीं उठता, जबकि सत्याग्रह की इखलाकी ताकत का इस्तेमाल भी हिन्दुस्तान की 'शान' के खिलाफ समझा जा रहा है ।

मैं नहीं समझता कि इतना उलझन से भरा हुआ और बेतुका खयाल आपके दिमाग में किस तरह घुस गया । कम-से-कम आपसे तो यह उम्मीद नहीं की जातीं थी कि आप इस तरह से सोचेंगे ।

मुझे उम्मीद है कि लाहौर का आपका कयाम आपके कामों में पूरी तरह मददगार हो रहा होगा ।

मुझे आज ही सिकन्दर हयात का एक तार मिला है। उसकी एक नकल शायद आपको भी भेजी गई है। मैंने तार से जवाब भेज दिया है कि मौजूदा हालात के लिए हम लोग जिम्मेवार नहीं हैं, बल्कि ब्रिटिश सरकार जिम्मेवार है ।

आपका,

अ. क. आजाद

पंडित जवाहरलाल नेहरू,
मार्फत डाक्टर खानसाहब,
भूतपूर्व प्रीमियर, पेशावर

३०८. खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खां की ओर से

दंगा गली, हजारा जिला
१३ जुलाई १९४०

प्रिय पंडितजी,

आपका तार कल यहां मुझे दंगा गली में मिला। कैम्प के लिए अभी कोई आखरी तारीख मुकर्रर नहीं हुई है। लोग मेरा इन्तजार कर रहे थे। यहां पहुंचते ही मैंने उन्हें फौरन लिख दिया है। जो तारीख तय होगी, आपको उसकी इत्तिला की जायगी। राजाजी और मौलानासाहब ने जो राय जाहिर की है वह आपने रेडियो पर सुनी होगी। इसके अलावा जिन्ना-साहब और मौलानासाहब में जो बातें हुईं उसपर भी गौर किया होगा। मौलानासाहब ने जो कुछ कहा, उसे तो मैं समझा हूं, लेकिन जिन्नासाहब का क्या मकसद है, यह मैं नहीं समझ सका।

जबतक कैम्प चलेगा तबतक मैं यहीं रहूंगा। उसके बाद काम शुरू करूंगा। यहां की आबहवा काफी अच्छी है और मेरी सेहत बहुत-कुछ बेहतर हुई है। यूनुससाहब ने भी मुझे लिखा है। वह लिखते हैं कि खास श्रीनगर में काफी गरमी है, लेकिन वह अपना ज्यादातर वक्त गांवों में खर्च करते हैं।

पूना आना मेरे लिए मुमकिन न होगा। लेकिन अगर ऑल इंडिया कांग्रेस कमेटी ने वहां भी वह तजवीज मंजूर की तब मैं ऑल इंडिया कांग्रेस कमेटी से भी अपना इस्तीफा देने के लिए आजाद हूं।

मुझे उम्मीद है, आप अच्छे होंगे। मेहरबानी करके उपाध्याय और दूसरे साहबान को मेरा सलाम कहें।

अब्दुल वली, गनी, रोशन और मेहरताज आपको बहुत-बहुत याद करते हैं और आपको अपना सलाम भेजते हैं।

आपका,
अब्दुल ग़फ़्फ़ार

३०९. अबुल कलाम आजाद की ओर से

नैनीताल
१९ जुलाई १९४०

प्रिय जवाहरलाल,

१६ तारीख के खत के लिए शुक्रिया। मेहरबानी करके मेरा बयान दोबारा पढ़ें। मैंने यह नहीं कहा कि तजवीज एकराय से मंजूर हुई थी। मैंने तजवीज के महज दिमागी पहलू की ही सफाई देते हुए कहा है कि सब लोग अपने 'दिमागों' में साफ थे कि अगर हिन्दुस्तान की मांग मंजूर की जाती है तो उसे (हिन्दुस्तान को) लड़ाई में शामिल होना चाहिए। चुनाचे 'स्टेट्समेन' और दूसरे अखबारों ने मेरे बयान से यही मतलब निकाला है।

मैं मशकूर होऊंगा अगर आप उसके बारे में उस वक्त तक कोई बयान शाया न करें जबतक हम लोग पूना में मिल न लें। इसके बारे में मैं आपसे तफसील में बातें करना चाहता हूं। अफसोस है कि हमें दिल्ली में कोई ऐसा मौका न मिल सका। मुझे चीन से खत की नकल मिल गई है।

आपका,
अ. क. आजाद

३१०. जयप्रकाशनारायण की ओर से

[जयप्रकाशनारायण ने यह पत्र हजारीबाग जेल से भेजा था, जहां वह उस समय कैद थे।]

आदमी द्वारा दिया जाय
२० जुलाई १९४०

प्रिय भाई,

आप कल्पना कर सकते हैं कि हाल की घटनाओं ने हमको कितनी चोट और दुःख पहुंचाया होगा। राजाजी ने तो हमारी पीठ में छुरा ही भोंक दिया है। यह जानकर बड़ी तसल्ली हुई कि इस भद्दी चीज का आपने और खान-साहब ने विरोध किया, लेकिन क्या इतना ही काफी है ? यहां हममें से सब आपसे आशा और प्रार्थना करते हैं कि महासमिति में और देश में आप विरोध का नेतृत्व करें। समिति से आप त्यागपत्र दे दें। एक समझौते के बाद अगर

यह हो जाय तो आप कांग्रेस को जाकर छोड़ दें और शेष राजनैतिक काम और हिंदुस्तानी क्रान्ति के सामाजिक काम के खास हिस्से को पूरा करने के लिए आप एक नया राजनैतिक दल बना लें। क्या आप यह करेंगे ? यह तो शायद आप सब जानते होंगे कि राजाजी के प्रस्ताव से कांग्रेस की मृत्यु की घंटी बजी है। कांग्रेस को बांटने का भय तो अब अवास्तविक हो गया है। गांधीजी अपने ढंग के एक शानदार आदमी हैं, परन्तु सीधे नहीं तो उलटे, उनका समर्थन देशद्रोहियों की ओर होगा। वल्लभभाई और राजाजी गांधीजी को छोड़ने में हिचकिचाये नहीं हैं। क्या आप अपने प्रत्यक्ष ऐतिहासिक कर्त्तव्य में हिचकिचायंगे ? मैं नहीं जानता कि आप क्या और कितना कुछ कर सकेंगे। परन्तु हर सूरत में अपने पीछे आनेवालों के मार्ग को तो आप आलोकित जरूर कर जायंगे।

यह पत्र आवेश या गुस्से में नहीं लिखा गया है, बल्कि बहुत ठंडे दिमाग से और सोच-समझकर।

आपका,
जयप्रकाश

फिर से—

अक्तूबर के मध्य में मेरे छूटने की संभावना है।

३११. चेंग यिन-फुन की ओर से

चीनी शाखा
इन्टरनेशनल पीस कैम्पेन.
पो. बा. १२३, चुंगकिंग, चीन
२१ अगस्त १९४०

प्रिय श्री नेहरू,

पिछला पत्र आपको इसी साल ९ जनवरी को लिखा था, जिसे काफी लम्बा अरसा बीत चुका है। यह विलम्ब हमारी किसी असावधानी के कारण नहीं हुआ है—हमें तो अक्सर आपको लिखने की इच्छा हुआ करती थी—किन्तु इतने दिनों के कठोर तथा लगातार संघर्ष ने हमें करीब-करीब पूरी तरह से मूक बना दिया है। हमें तो कार्य और सहनशीलता को ही अपना साथी समझकर धैर्यपूर्वक आगे बढ़ना है।

अबतक हम जिन विचारों और भावनाओं को अपने मन में संचित करते आये हैं, उनके सामने सर झुकाने के अलावा अब हमारे पास कोई चारा नहीं रह गया है। हिंदुस्तान के इतिहास के इस कठिन मोड़ पर भी आप अभी एक ऐसे मित्र को नहीं भूल पाये हैं जो आपके पड़ोस में आप ही जैसे ध्येय के लिए लड़ रहा है। चीन के प्रति आपकी स्नेहपूर्ण सहानुभूति का एक नया प्रमाण हमें आपके उस लेख में मिला है, जो अभी हाल ही में 'भारत, चीन और इंग्लैंड' शीर्षक से लखनऊ के 'नेशनल हेरल्ड' में प्रकाशित हुआ है। आपकी इस अटूट सहानुभूति और समर्थन के लिए हम एक बार फिर अपनी कृतज्ञता और सराहना की भावना प्रकट करते हैं और ऐसा करने में हमें विश्वास है कि हम समस्त चीनी जनता की भावना का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं। आपको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि 'भारत, चीन और इंग्लैंड' को हमने चुंगकिंग में बहुत ज्यादा प्रचारित किया है। जिस रूप में यह अंशतः 'हैंक्को हेरल्ड' के चुंगकिंग संस्करण में और चीन के सबसे प्रभावशाली पत्र 'हा कुंग पाओ (ल' इम्पारशियल) में छपा है, उसकी कतरनें हम इस पत्र के साथ भेज रहे हैं।

तुष्टीकरण की जिस नीति पर इंगलैंड लगातार चल रहा है, उसका परिणाम स्वयं-सिद्ध है और अभी से इंग्लैंड को उसके कड़वे फल चखने पड़ रहे हैं। बर्मा सड़क को बन्द करने में इंगलैंड का कोई लाभ नहीं है, इससे उसका पूर्वी सीमान्त अधिक सुरक्षित नहीं हो सकता। जिस दिन भी जापानी दक्षिण की ओर बढ़ेंगे, वे इंगलैंड की इस नीति की परवा नहीं करेंगे और इंगलैंड पैंतालीस करोड़ निवासियों के एक बहुत बड़े राष्ट्र की मित्रता को खो बैठेगा। किन्तु चीनी जनता इससे भयभीत नहीं है, बिल्कुल नहीं। जिस तरह हिंदुस्तान की जनता पूर्ण स्वतंत्रता के अतिरिक्त और किसी वस्तु से सन्तुष्ट नहीं होगी, उसी तरह जिस उद्देश्य के लिए हमने हथियार उठाये हैं वह जबतक पूर्ण नहीं हो जायगा तबतक कोई भी शक्ति हमें लड़ते रहने से नहीं रोक सकेगी, चाहे हमें कितनी ही कठिनाइयों का सामना क्यों न करना पड़े। चीन के लाखों सपूतों के प्राण और यहां की अपरिमित सम्पत्ति व्यर्थ ही बलिदान नहीं की जायगी। जिन लोगों को हमसे महान आशाएं हैं, वे निराश नहीं होंगे।

निश्चय ही यह देखकर दुःख होता है कि बार-बार मुंह की खाकर भी ब्रिटेन के कूटनीतिज्ञ यह नहीं सीख सके कि आक्रमणकारियों के प्रति अपनी सरकार की विदेश-नीति निर्धारित करने में उन्हें सावधानी से काम लेना चाहिए। किन्तु जिन देशों पर आक्रमण हुआ है, वे इन महानुभावों के चतुर संकेतों से शिक्षा लेना नहीं भूल सकते। इसलिए इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं कि इस साल के आरंभ में भारतीय कांग्रेस ने ब्रिटेन के असली युद्ध-उद्देश्यों का खण्डन किया। अदूरदर्शितापूर्ण स्वार्थ से आंखें बन्द रहने के कारण आज की स्थिति में ब्रिटिश सरकार से यह आशा नहीं की जा सकती कि जो बड़ी-बड़ी बातें खतरे में हैं, उनपर वह ध्यान दे सकेगी। फिर भी हम यह विश्वास करने के लिए तैयार नहीं हैं कि आज ब्रिटिश सरकार जिस विरोधी नीति पर चल रही है, उसमें उसे अपने देश के प्रबुद्ध व्यक्तियों का पूरा समर्थन प्राप्त है। हमें आज भी ब्रिटिश इन्टरनेशनल पीस कैम्पेन का वह स्पष्ट वक्तव्य याद है, जो उसकी ओर से वर्तमान यूरोपीय युद्ध के आरम्भ होने के कुछ ही दिनों बाद प्रकाशित हुआ था और जिसमें ब्रिटिश सरकार से अनुरोध किया गया था कि हिंदुस्तान की तीव्र मांगों को साहस-पूर्वक स्वीकार करके वह उन प्रजातंत्रीय सिद्धान्तों के प्रति अपने विश्वास का प्रमाण प्रस्तुत करे, जिनका समर्थक होने का वह दावा करती है। जहां-तक बर्मा-सड़क के मौजूदा मामले का सवाल है, लन्दन में रहनेवाले चीनी राजदूत को ब्रिटिश जनता की ओर से सहानुभूति के अनेक संदेश प्राप्त हुए थे, किन्तु जबतक ये दूरदर्शी लोग अपनी वर्तमान स्थिति में पड़े रहेंगे—एक ऐसी स्थिति, जिसपर सरकार की नीति का कोई प्रभाव नहीं है—तबतक ब्रिटेन धीरे-धीरे उस सहानुभूति को भी खोता चला जायगा, जो अब भी उसके पक्ष में है। इसके नैतिक और भौतिक परिणाम घातक होंगे।

हमें हिंदुस्तान की जनता से बड़ी हमदर्दी है। वहां जो कुछ भी होता रहा है, उसका हम यहां बड़ी दिलचस्पी के साथ अध्ययन करते रहे हैं। जीवन-मरण के संघर्ष में कण्ठ तक डूबे रहने के कारण इस समय चीन आपकी कोई सेवा करने में असमर्थ है; फिर भी हमें विश्वास है कि हमारे महान कार्य की सफल समाप्ति परोक्ष रूप में आपके लिए सहायक सिद्ध होगी। आप तो चीनी जनतंत्र के जनक डा. सनयात सेन के उद्देश्यों को

अच्छी तरह जानते ही हैं। हमारी राष्ट्रीय भावना में ये उपदेश कूट-कूटकर भरे हुए हैं।

आपके संघर्ष से हमने सदैव प्रोत्साहन और प्रेरणा प्राप्त की है। अपनी खोई हुई स्वतंत्रता के लिए हमारे हिंदुस्तानी मित्र कठिनाइयों का सामना करते हुए जिस तत्परता के साथ प्रयत्न कर रहे हैं उसने हमें अपनी स्वतन्त्रता को, जो अब भी हमारी मुट्ठी में है, और भी अधिक प्यार के साथ सुरक्षित रखने की प्रेरणा दी है। हमें विश्वास है कि महात्मा गांधी और आपके नेतृत्व में हिंदुस्तान तथा जनरल च्यांग काई शेक के नेतृत्व में चीन के प्रयत्न अन्ततः हमें हमारी राष्ट्रीय मुक्ति की ओर ले जायंगे, जो कि हमारा समान उद्देश्य है। इन दोनों देशों की जनता के संगठित संकल्प को कोई भी वस्तु डिगा नहीं सकती। हमारा यह विश्वास हमारे आक्रमण-विरोधी युद्ध के तीन साल के अनुभव पर आधारित है। पैंतालीस करोड़ जनता का यह संकल्प कि वह दासता और शोषण के सामने घुटने नहीं टेकेगी, उस शक्तिशाली शत्रु के विरुद्ध महान दीवार का काम कर रहा है, जो कि युद्ध-सामग्री और तैयारी दोनों में हमसे श्रेष्ठ है।

हिंदुस्तान और चीन के इतिहास में कभी एक-दूसरे के सीमान्त पर कोई सशस्त्र संघर्ष नहीं हुआ। इतिहास इस बात का साक्षी है कि सद्भावनापूर्ण यात्रायों के माध्यम से हमने एक-दूसरे की संस्कृति से केवल लाभ ही उठाया है। हमारे बीच चिरस्थायी मित्रता की यह एक दृढ़ नींव है। हमें विश्वास है कि राष्ट्रीय मुक्ति के लिए हमने आपस में मिलकर जो संकल्प कर रखा है वह हमारी मित्रता के बन्धन को और भी मजबूत कर देगा। हम उस दिन की बड़ी उत्सुकता के साथ प्रतीक्षा कर रहे हैं जब हिंदुस्तान और चीन के निवासी विश्व-शांति के लिए हाथ-में-हाथ डालकर और कंधे-से-कंधा मिलाकर काम करेंगे। हिंदुस्तान के संबंध में हमें यहां बहुत ही कम समाचार मिलते हैं। आप हमें जो कुछ भी जानकारी भिजवा सकेंगे उसे पाकर हमें खुशी होगी। हम समझते हैं कि यहां हम उसका अधिक-से-अधिक प्रचार कर सकेंगे और इस प्रकार आपसी सद्भावना को बढ़ाने में योग दे सकेंगे।

आपके श्रेष्ठ प्रयत्नों के लिए समस्त सद्भावनाओंसहित,

आपका,
चेंग यिग-फुन
कार्यवाहक सचिव

पंडित जवाहरलाल नेहरू,
इलाहाबाद, हिंदुस्तान

३१२. मैडम च्यांग काई शेक की ओर से

जनरलसिमो का सदर मुकाम
चुंगकिंग, जेचुआन
चीन
१० सितम्बर १९४०

प्रिय श्री नेहरू,

न जाने कितनी बार विचार आया कि पत्र लिखकर आपको उन पत्रों के लिए धन्यवाद दूं, जो आपने श्री हु लियेन चुंग के जरिये भेजे थे—साथ ही उस पत्र के लिए भी, जो आपने चीन के कौंसल जनरल के द्वारा भेजा था।

इन कष्टपूर्ण दिनों में जनरलसिमो और मैं दोनों ही हिंदुस्तान की घटनाओं को बड़ी दिलचस्पी और चिन्ता के साथ देखते रहे हैं। आपकी चीन-यात्रा से हिंदुस्तानी समस्याएं हमारे हृदय के बहुत निकट आ गई हैं, इसलिए आपके साथ-साथ हम भी यह आशा करते रहे हैं कि भारतीय नेशनल कांग्रेस के प्रति ब्रिटिश सरकार अधिक उदार नीति अपनायेगी।

कुछ महीने हुए मैंने तार भेजकर आपकी बहन श्रीमती पंडित को और हिंदुस्तान की दूसरी प्रमुख महिलाओं को अक्तूबर में चीन आने का निमंत्रण दिया था। जैसी कि मैंने अपने पत्र में आशंका प्रकट की थी, इन गर्मियों में जिस दिन भी आसमान साफ रहा, जापानी हवाई जहाजों ने चुंगकिंग पर और सच पूछिये तो आजाद चीन के हर हिस्से पर बड़ी निर्दयता के साथ बम बरसाये। अगर इन दिनों आप चुंगकिंग आयें तो आप इसे पहचान नहीं सकेंगे। जो ज़िले किसी समय चीन के सबसे समृद्धशाली व्यापारिक जिले थे, वे अब मीलों तक टूटे-फूटे पड़े हैं और जहांतक भी आंखें जाती

हैं वहांतक चारों ओर गिरे हुए मकानों के मलबे और खंडहर-ही-खंडहर दिखाई देते हैं। हममें से जो लोग अभी सही-सलामत हैं, वे मिल-जुलकर उन हजारों बेघर शरणार्थियों को राहत पहुंचाने के लिए लगातार मेहनत कर रहे हैं, जिनके पास मानव और सम्पत्ति के इस मूर्खतापूर्ण संहार के कारण पेट भरने का कोई भी साधन नहीं रह गया है। इतनी भयंकर निर्दयता की आजतक शायद ही किसी मनुष्य ने कल्पना की हो।

किन्तु मार्के की बात यह है कि हमारी जनता का नैतिक बल टूटा नहीं है। जैसा कि कुछ यूरोपीय देशों के साथ हुआ है, ठीक उसके विपरीत, हम पर जितना ही कड़ा दबाव पड़ा है, उतनी ही हमारी जनता अधिक दार्शनिक बनती गई है। हम इतना दुःख और इतनी पीड़ा उठा चुके हैं कि हमें ऐसा लगता है, मानों सारा जीवन बस एक बात में केन्द्रित हो गया है—वह यह कि हम लोग धीरज के साथ कष्ट सहते रहें और आक्रमण के विरुद्ध अपने विरोध को जारी रखने के लिए दृढ़तापूर्वक प्रयत्न करते रहें, जिससे कि चीन सदा के लिए जीवित रहे।

पिछले तीन सप्ताह से मैं इंफ्लुएंजा से पीड़ित हूं और जबर्दस्ती चारपाई पर पड़ी हूं। मेरी इस स्थिति को जिन बातों ने सहनीय बनाया है, उनमें से एक आपकी 'मेरी कहानी' को पढ़ते रहना भी है। अपने जीवन में डटकर पढ़ने के लिए समय निकाल सकना मेरे लिए कठिन है और मैंने आपकी पुस्तक को शांति और फुरसत के साथ पढ़ना चाहा, जैसा कि इसके लिए उचित था। अबतक मेरे पास इसके लिए समय नहीं था, किन्तु अब मैं सचमुच अनुभव करतीं हूं कि मैं आपको जान गई हूं, क्योंकि अपने देश की मुक्ति के लिए वीरतापूर्वक संघर्ष करते हुए आपके हृदय ने आपको जो प्रेरणाएं दी हैं, उन्हें शान्ति के साथ और ध्यानपूर्वक सुनने का अवसर मुझे अब मिला है।

आपकी पुस्तक एक महान ग्रंथ है, क्योंकि इसमें एक ऐसी मानव-आत्मा की तीर्थ-यात्रा का विवरण है, जो कि दिन-प्रति-दिन के संघर्ष के शोर-गुल से ऊपर उठकर एक ऐसे बौद्धिक और भावनामय संसार में पहुंच गई है, जिसमें भावुकता की दुर्बलता नहीं है, किन्तु जो इतना अधिक मर्मस्पर्शी है कि उसके कारण युग-युग की महानतम कृतियों में स्थान पाने योग्य हो गया है।

जनरलसिमो और मैं आपको और हिंदुस्तान को अपना स्नेहपूर्ण अभिवादन भेजते हैं और आपके लिए उज्ज्वल भविष्य की तीव्र आशा रखते हैं।

आपकी,
मेलिंग सूंग च्यांग

३१३. जी. गेस्ट लेवो की ओर से

लन्दन
२९ सितम्बर १९४०

प्रिय महोदय,

आपके जीवन से काफी लम्ब अपने जीवन में मैंने स्वभावत: बहुत-सी भाषाओं में बहुत-सी पुस्तकें पढ़ी हैं, किन्तु उनमें से किसीको भी पढ़कर उसके लेखक के प्रति मेरे मन में व्यक्तिगत आदर की इतनी तीव्र भावना उत्पन्न नहीं हुई जितनी कि आपकी पुस्तक पढ़कर। यदि आप क्षमा करें तो मैं शेक्सपियर के नीचे लिखे शब्दों को, जिन्हें मैंने करीब चालीस साल से नहीं पढ़ा है और जिन्हें मुझे उम्मीद है, मैं ठीक-ठीक लिख रहा हूं, मैं काल बदलकर उद्धृत करना चाहूंगा और शेक्सपियर के स्वर-में-स्वर मिलाकर कहना चाहूंगा—

"उसका जीवन उच्च है और उसमें पंचतत्त्वों का
ऐसा सुन्दर मिश्रण हुआ है कि प्रकृति खड़ी होकर
सारे संसार से कह सकेगी : 'यह मानव है।' "

आपका,
जी. गेस्ट लेवो
(एम. ए. मेग्डेलेन, ऑक्सफोर्ड)

३१४. ख़ान अब्दुल गफ़्फ़ार खां की ओर से

लखनऊ
१८ अक्तूबर १९४०

प्रिय जवाहरलालजी,

मैं खैरियत से कल यहां पहुंच गया। नेहरूसाहब[1] स्टेशन पर तशरीफ लाये

[1] नेहरूसाहब से मतलब मेरे भतीजे से है, जो उस समय लखनऊ में था।

थे। मैं उनके मकान पर बहुत आराम से ठहरा और आज दो बजे की गाड़ी से मैं जा रहा हूं। खाने में बेहद तकल्लुफ बरता गया—शायद उन्होंने मुझे मेहमान समझ लिया था। मैं मेहरताज से मिला और उसकी प्रिंसिपल से भी लम्बी बातचीत की। वह कहती हैं कि मेहरताज बहुत भली लड़की है, मगर जोशीली है और आसानी से दूसरी लड़कियों का असर कबूल कर लेती है। प्रिंसिपल ने मुझसे वादा किया है कि मेहरताज की तालीम के अलावा वह और बातों में भी उसका खयाल रखेंगी।

मैं चाहता हूं कि आप भी कभी-कभी मेहरताज को लिखें कि उसे अपने को और दुनिया को समझना चाहिए। उसे समझना चाहिए कि उसका मकसद क्या होना चाहिए। आप उसे यह भी लिखें कि वह अब बड़ी हो गई है और अब उसे बच्चे की तरह बर्ताव नहीं करना चाहिए। मैं इस मामले में और कुछ नहीं लिखना चाहता, क्योंकि आप ये सब बातें पूरी तरह समझते हैं।

चलते-चलते मैं मौलानासाहब से भी मिला और उन्हें कुछ बातें बताईं, जिनके बारे में उन्होंने आपसे फोन पर बातें करने का वादा किया। उन्होंने गालिबन आपसे बातें की होंगी। दरअसल सेगांव में महात्माजी ने मुझे वह बात बताई थी। उन्हें इस बात की फिक्र थी कि जवाहरलाल उनके नज़रिये से बिल्कुल एकराय नहीं है। विनोबा से बातें करने के बाद उन्होंने यह कहा। वह समझ नहीं पा रहे थे कि उन्हें क्या करना चाहिए। मैंने उन्हें इतमीनान दिलाया कि मैं पंडितजी से स्टेशन पर मिला था और उनसे जो बातें कीं वे काफी तसल्लीबख्श थीं। कुछ लोगों को (शुबहा?) था। इसलिए मैंने यहां पहुंचते ही मौलानासाहब को अपने खयाल बताये। वह मुझसे एकराय थे। यह तय हुआ कि आपको फोन से इत्तिला दी जाय। मुझे उम्मीद है कि आप महात्माजी को लिखेंगे और उन्हें इतमीनान दिलायेंगे ताकि जिस तरह महात्माजी चाहते हैं, उस तरह मामला हो जाय। मैं और मौलानासाहब दोनों यही चाहते हैं।

यहां सब खैरियत है और मैं आप सबकी खैरियत चाहता हूं।

आपका,

अब्दुल गफ्फार

३१५. जनरलसिमो च्यांग काई शेक की ओर से

१८ अक्तूबर १९४०

प्रिय श्री नेहरू,

पिछले साल चुंगकिंग में आपसे जो आनन्दपूर्ण बातें हुई थीं उनकी सुखद स्मृति अब भी मेरे मन में ताजा है। अक्सर मुझे उस आत्मिक मैत्री की याद करके बड़ा संतोष होता है, जो आपके चीन आने के फलस्वरूप हमारे बीच स्थापित हो गई है।

इस अवसर पर मैं आपको सूचना देना चाहता हूं कि आक्रमणकारी जापानियों का हमारा विरोध, जो राष्ट्र के समर्थन से और भी दृढ़ बनता जा रहा है, दिन-पर-दिन शक्ति और नैतिकता दोनों ही दृष्टि से बलवान होता जा रहा है। आज की अराजकतापूर्ण स्थिति से भविष्य में किसी विश्वव्यापी व्यवस्था का जन्म होगा कि नहीं, यह बात—मुझे पूर्ण विश्वास है—हम एशियाई देशों के सम्मिलित संघर्ष के परिणाम पर निर्भर है। जापान की बढ़ती हुई महत्त्वाकांक्षा और विश्व के महत्त्वपूर्ण परिवर्तनों को निगाह में रखते हुए हमें अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए सबसे पहले शांति को भंग करनेवाले मुख्य शत्रु से निबटना होगा।

मुझे विश्वास है कि आपके देश के नेता, जो वास्तविक विश्व-स्थिति से अच्छी तरह परिचित हैं, एक ऐसी नीति अपनायंगे, जो आज की घटनाओं की जरूरत के मुताबिक बिल्कुल आवश्यक है और वे लोग हमारे आक्रमण-विरोधी संघर्ष में हमारी भावना तथा महत्त्वाकांक्षा का पूरी तरह समर्थन करेंगे।

श्री ताई ची-ताओ आपके देश की मैत्रीपूर्ण यात्रा करने जा रहे हैं। मैंने अनुरोध किया है कि वह आपसे मिलकर आपतक मेरी हार्दिक शुभकामनाएं पहुंचा दें।

आपका,

च्यांग काई शेक

३१६. महात्मा गांधी की ओर से

[सन् १९४० में, जहां गांधीजी सविनय अवज्ञा आन्दोलन को जरूरी समझते थे, वहां वह आन्तरिक अशांति और हिंसा को भी टालना चाहते थे,

खासकर युद्ध का समय होने के कारण। इसलिए उन्होंने यह फैसला किया था कि कुछ चुने हुए लोग ही कानून भंग करें। उन्होंने इस काम के लिए आचार्य विनोबा भावे को पहला व्यक्ति चुना। सूची में मेरा नाम दूसरा था।]

वर्धा
२१ अक्तूबर १९४०

प्रिय जवाहरलाल,

तो विनोबा का निश्चय कर दिया गया। उनकी चार दिन की वजारत मेरी दृष्टि से बिल्कुल सफल रही।

मैं एक टिप्पणी जारी कर रहा हूं, जिसे तुम देखोगे। प्रोफेसर ने टेली-फोन पर कहा कि तुम तैयार हो। मैंने तुम्हारा वयान भी देख लिया। मैं अब भी तुमसे पूछना चाहूंगा कि मैं जो कुछ लिख और कर रहा हूं, उसमें तुम्हें कोई भी चीज पसन्द आ रही है या नहीं। मैं नहीं चाहता कि तुम केवल अनुशासन-प्रेमी की तरह चलो। मेरी वर्तमान कल्पना में उन लोगों की जरूरत है, जो योजना में—उसकी सब बातों में नहीं, परन्तु मुख्य वस्तु में—विश्वास रखते हों। अक्लमंद को इशारा काफी है।

संभव हो तो मुझे तार दे देना।

प्यार,

बापू

३१७. महात्मा गांधी की ओर से

वर्धा
२४ अक्तूबर १९४०

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा तार पाकर खुशी हुई। यदि मेरा बयान जाने दिया गया है तो तुमने इससे पहले देख लिया होगा।

अगर तुम तैयार हो तो अव अपना सविनय भंग वाकायदा घोषित कर सकते हो। मेरा सुझाव है कि तुम अपने श्रोताओं के लिए कोई गांव चुन लो। मैं नहीं समझता कि ये लोग तुम्हें अपना भाषण दोहराने देंगे। जहांतक विनोबा का संवंध है, वे अपनी योजनाओं के साथ तैयार नहीं थे। परन्तु तुम्हें वे आजाद रहने दें तो मेरा सुझाव है कि तुम विनोबा के लिए निश्चित की गई योजना पर चलो। परन्तु तुम्हारा और कुछ खयाल हो तो तुम अपने

ही मार्ग का अनुसरण करो। मैं इतना ही चाहता हूं कि मुझे अपना कार्यक्रम दे दो। अपनी तारीख आप ही तय कर लो, लेकिन इस तरह से कि तारीख और जगह का ऐलान करने का मुझे समय मिल जाय। संभव है, वे लोग तुम्हें अपना पहला कार्यक्रम भी पूरा न करने दें। सरकार की तरफ से ऐसे हरेक कदम के लिए मैं तैयार हूं। हमारे कार्यक्रम को प्रकाश में लानेवाले हर उचित उपाय का तो मैं उपयोग कर लूंगा, मगर मेरा आधार इसीपर रहेगा कि नियमित विचार अपना असर आप पैदा करता है। यदि यह मानना तुम्हारे लिए कठिन हो तो मैं तुमसे कहूंगा कि निर्णय स्थगित रखो और परिणाम देखते रहो। मैं जानता हूं कि तुम खुद धीरज रखोगे और अपनी तरफ के लोगों को भी धीरज रखने को कहोगे। मुझे मालूम है, मेरे प्रति वफादारी रखकर तुम कितना जोर बर्दाश्त कर रहे हो। मेरे लिए वह अमूल्य है। आशा है, वह उचित साबित होगी, क्योंकि अब तो 'करने या मरने' की बातें हैं। पीछे तो लौटना नहीं है। हमारा पक्ष अकाट्य है। झुकने का सवाल नहीं। इतना ही है कि मुझे प्रत्यक्ष रूप में यह दिखा देने के लिए कि अहिंसा जब विशुद्ध होती है तब उसमें क्या ताकत है, मुझे अपने ढंग से चलने दिया जाय।

मौलानासाहब ने फोन से कहा कि दूसरी बार सत्याग्रह के लिए मुझे दूसरा आदमी चुनना चाहिए। मैंने उन्हें बताया कि तुम जाने को राजी हो तो मैं ऐसा नहीं कर सकता। 'हरिजन' के संबंध में मैंने जो कदम उठाया है, उसपर तुम्हारी प्रतिक्रिया जानना चाहूंगा।

प्यार,

बापू

३१८. मैडम च्यांग काई शेक की ओर से

हांगकांग

१६ जनवरी १९४१

प्रिय श्री नेहरू,

श्री ताई ची-ताओ के जरिए आपने मुझे जो पत्र दिया था उसे मेरे पति ने मेरे पास भेजा है। पिछले दो महीने से मैं बीमार हूं और हांगकांग

में इलाज करवा रही हूं। युद्ध के आरंभ में जब मैं शंघाई के मोर्चे का दौरा करने गई थी तब मोटर से गिरकर बाहर जा पड़ी थी और मेरी पसली टूट गई थी। इसके एक सप्ताह बाद ही मैं फिर से काम करने लगी थी। तभी से मेरी पीठ में हमेशा तकलीफ रही है, किन्तु कार्य में अधिक व्यस्त रहने के कारण मैंने इसपर अधिक ध्यान नहीं दिया था। इन गर्मियों में पीड़ा सच-मुच असहनीय हो गई थी। इस बीच हर रोज बम गिरते रहे और मैंने ऐसा महसूस किया कि बमबारी का मौसम समाप्त होने से पहले मेरे लिए चुंग-किंग छोड़ना असंभव होगा।

जब मैं हांगकांग आई तब एक्सरे से पता चला कि मेरी रीढ़ की हड्डी बिल्कुल टेढ़ी-मेढ़ी हो गई थी। इसलिए इसमें ताज्जुब क्या कि मुझे करीब-करीब लकवा मार गया था। मैं चिकित्सा करा रही हूं और अब पहले से बहुत अच्छी हूं। उम्मीद है, कुछ हफ्तों में मैं बिल्कुल ठीक हो जाऊंगी और फिर से काम करने लगूंगी। लौटने पर मैं श्री ताई से मिलूंगी और तब मुझे आपके बारे में ठीक-ठीक खबर मिलेगी।

शायद मुझे यह बताने की जरूरत नहीं कि आपके गिरफ्तार किये जाने की खबर सुनकर मैं कितनी दुखी हुई हूं। तबसे मुझे लगातार आपका ध्यान आता रहा है और मैं चाहती रही हूं—बहुत चाहती रही हूं—कि आपके लिए और हिंदुस्तान के लिए कुछ कर सकूं। जैसा कि आपने लिखा था, समय का अन्दाजा दिनों से नहीं लगाया जा सकता। आप यहां बहुत थोड़े दिन रहे, फिर भी मुझे ऐसा लगा जैसे आप हमारे एक प्रिय पुराने मित्र हों। जनरलसिमो ने और मैंने दोनों ही ने यह अनुभव किया कि आपकी और हमारी आत्माएं एक-दूसरे से सम्पूर्ण तादात्म्य के साथ मिलीं और समान उद्देश्य तथा समान महत्वाकाक्षाएं होने के कारण आप हमारे सच्चे साथी हैं।

मैं आपके लिए बहुत ही कम या यह कहिये कि कुछ भी नहीं कर सकती, किन्तु यदि यह जानकर कि हमें आपसे स्नेह है और आपपर विश्वास है, आपके ये दिन कुछ कम नीरस बन सकते हैं, तो विश्वास रखिये कि हमें यह सोचकर बड़ी प्रसन्नता होती है कि इस संसार में आप जैसी निःस्वार्थ और साहसी आत्माएं हैं और हमें इस बारे में सन्देह नहीं कि हिंदु-

स्तान को अपने उद्देश्य में सफलता मिलेगी। आपकी विजय के लिए हमारे हृदय और हमारी प्रार्थनाएं सदा आपके साथ रहेंगी।

जिस मित्र के हाथों में ये पंक्तियां सौंप रही हूं, वह कुछ ही मिनटों में जानेवाले हैं। इसलिए इन थोड़े-से शब्दों में यह बता सकना मेरे लिए सम्भव नहीं कि आपके गिरफ्तार कर लिये जाने से यहां हमारी जनता में व्याकुलता की कैसी लहर दौड़ गई है। बहुत-से ऐसे लोग, जिन्होंने ब्रिटिश प्रजातंत्र से आशाएं बांध रखी थीं, आज अपने आपसे प्रश्न कर रहे हैं कि कहीं उन्होंने साम्राज्यवाद को भूल से उदारतावाद तो नहीं समझ लिया था। इससे अधिक और क्या कहूं!

मेरे मित्र, आपको मेरी समस्त शुभ कामनाएं हैं।

मेलिंग सूंग च्यांग

३१९. जीन फ्रॉस्ट की ओर से

न्यूयार्क
मंगलवार, १५ अप्रैल १९४१

प्रिय श्री नेहरू,

मैं आपसे बिल्कुल अपरिचित हूं, इसलिए यह मेरी धृष्टता है कि मैं आपको पत्र लिखने का साहस कर रहा हूं, किन्तु इसके लिए मैं अपने को एक प्रकार से विवश पा रहा हूं, इसलिए आपसे प्रार्थना करता हूं कि आप इसका बुरा न मानें। आपने मुझे सोचने के लिए बहुत सामग्री दी है और मैं आपका अत्यधिक कृतज्ञ हूं। मेरी समझ में नहीं आता कि अब इसके आगे मैं क्या कहूं! मेरे पास जितने भी थोड़े-बहुत शब्द हैं उनके द्वारा मैं अपने मौन हृदय की कृतज्ञता प्रकट करना चाहता हूं। मेरी समझ में नहीं आता कि मैं अपनी भावनाएं किस प्रकार व्यक्त करूं, क्योंकि जो कुछ भी मैंने गहराई के साथ अनुभव किया है उसे व्यक्त करने में मैं हमेशा डरता रहा हूं। किन्तु इस समय आवश्यकता भय से बड़ी मालूम होती है, इसलिए मैं जो कुछ भी कहना चाहता हूं उसे अच्छे-से-अच्छे ढंग से कहने की चेष्टा करूंगा।

मैं आपकी 'मेरी कहानी' पढ़ता रहा हूं। यह मेरी प्रिय पुस्तक बन गई

है। इसे पढ़कर मैं अपने प्रति वड़ी लज्जा का अनुभव करने लगा हूं। अव वह समय आ गया है जब मुझे अपने पर पूरी तरह लज्जित होना चाहिए। पिछले दिनों निराशा और भ्रम की अपनी केंचुल में पड़े-पड़े मैंने वहुत समय नष्ट किया हैं। सारी जिन्दगी मैं विद्रोही बना रहा। मेरे पास कभी कोई कार्यक्रम नहीं रहा है। फिर भी अपने सम्पर्क में आनेवाली प्राय: प्रत्येक वास्तविकता के लिए मेरे पास काफी कठोर शब्द रहे हैं। मैंने अपनेको मनुष्यों से विल्कुल अलग करके रखा और आश्चर्यपूर्वक सोचता रहा कि मैं किसलिए उदास रहता हूं। जिस समाज में मैं वड़ा हुआ था, उससे निकल भागने की मुझमें प्रवल इच्छा मालूम दी और ऐसा मैंने अपने परिवार को कष्ट में डालकर भी किया। लेकिन मेरे साथ 'गढ़े से निकले तो खाई में गिरे' वाली कहावत चरितार्थ हुई और आज मैं खाई में हूं और वह भी अपने परिवारवालों को कष्ट देकर। मेरा खयाल है कि मैं वहुत दिनों तक यह महसूस करता रहा कि मेरे परिवारवालों को विना किसी शर्त के मेरा भरण-पोषण करना चाहिए क्योंकि मैंने ऐसा कोई भी काम नहीं किया है, जिससे उनपर से मेरा वोझ, या यों कहिये कि मेरे उग्र मतों का वोझ, दूर हो जाय।

आज मैं अपनेको गन्दे-से-गन्दे कीड़े से भी हीन मानता हुं। मुझे इस बात की वहुत सख्त जरूरत है कि मैं अपना सिर ऊंचा उठा सकूं और अपनेको ईमानदार कह सकूं। आखिरकार मुझे प्रेरणा मिल गई है। अव मुझे ऐसा लगने लगा है कि जीवन का सबसे महत्त्वपूर्ण काम आदर्शों की रक्षा करना है और उनकी रक्षा हर कीमत पर और राह में कहीं अटके विना करनी चाहिए। अन्ततः मैंने यह सीख लिया है कि जो कुछ हो चुका है वह व्रदला नहीं जा सकता। फिर भी मैं ऐसा अनुभव करता हूं कि जैसा मैं कभी था, लेकिन अव नहीं हूं, उसके लिए मैं थोड़ा-वहुत प्रायश्चित कर सकता हूं या कम-से-कम प्रायश्चित्त करने का प्रयत्न कर सकता हूं। ओह, मैं कितने बुरे ढंग से ये सब बातें कह रहा हूं।

जो हो, मुझे अपने इस परिवर्तन के लिए आपको धन्यवाद देना है। इस संसार को रहने योग्य एक अच्छा स्थान बनाने में मेरा जो कुछ भी हिस्सा हो सकता है उसे मैं पूरा कर देना चाहता हूं। दूर अन्धकार में

प्रकाश देखकर मैं वियावान में खड़ा-खड़ा चिल्ला रहा हूं—"धन्यवाद है आपको।" किन्तु यह प्रकाश धीरे-धीरे, वहुत ही धीरे-धीरे, आगे बढ़ रहा है और हवा या पानी या मनुष्य-जाति के छल-कपट की पहुंच से वाहर है। शायद मेरा यह कथन आलंकारिक मालूम हो और उससे कुछ स्पष्ट न हो फिर भी मैं जो कुछ कह रहा हूं, उसे मैं अपने हृदय से करना चाहता हूं (हृदय के ऊपरी, मध्यम और पार्श्व के हिस्सों से भी।)

आपका,
जोन फ्रॉस्ट

३२०. रफ़ी अहमद किदवई की ओर से

गोरखपुर
२६ अप्रैल १९४१

प्रिय जवाहरलालजी,

श्रीमती पंडित के चीन जाने के फैसले से मुझे कुछ फिक्र हो गई है। इसलिए नहीं कि लड़ाई का खतरा है, वल्कि इसलिए कि हिन्दुस्तान की हालत नाजुक है। मैं महसूस करता हूं कि अगर हम अपने मामलों में ईमानदार हैं और हम चाहते हैं कि दूसरे भी यकीन करें कि हम ईमानदार हैं तव श्रीमती पंडित जैसे खास लोगों को ऐसे किसी काम को हाथ में नहीं लेना चाहिए, जिसका सीधा ताल्लुक हमारे कामों से न हो। इसी तरह मैं इसे भी मुनासिब नहीं समझता कि राजेन्द्रवावू की इज्जतवाला आदमी मुल्कभर में इस तरह के जल्सों में हिस्सा लेता हुआ घूमे, फिर चाहे वह दरभंगा में जनेऊ हो और चाहे दिल्ली में तालीमी संघ की वैटक।

मुझे यकीन है कि आप या श्रीमती पंडित मेरे इस तरह लिखने से वुरा न मानेंगे।

मैं अच्छा हूं और खुश हूं और मुझे लार्ड हैलीफैक्स की इस धमकी से कोई परेशानी नहीं है कि वह २० साल तक लड़ाई चलायेंगे, जिसका मतलब है जेल में हमारी लगातार नजरवंदी।

आपका,
रफ़ी

३२१. पूर्णिमा बनर्जी की ओर से

इलाहाबाद
७ मई १९४१

प्रिय जवाहरलालजी,

यह सोचा भी नहीं जा सकता कि पूरे चार साल तक मैं आपसे मिल भी न पाऊं। जब आप लखनऊ में थे, मैं जानती थी कि आपका वक्त बेहद घिरा हुआ है और शायद देहरादून में भी 'बाहरी' लोगों के लिए आपके पास समय नहीं होगा। मैं कल्पना करती हूं, मैं बाहरी ही कही जाऊंगी। लेकिन मैं आपसे मिलना चाहती हूं। इसकी कोई खास वजह नहीं है, महज मेरी निजी इच्छा है।

मुझे पप्पू के साथ मसूरी में जाना पड़गा, इसमें मैं अनिच्छा अनुभव कर रही हूं। परन्तु वह सत्याग्रह की धमकी देते हैं और अगर मैं न जाऊं तो खुद भी जाने से इन्कार करते हैं। इस तरह अड़े रहकर मुझे उनकी छुट्टी खराब करना बुरा लगता है और इसलिए लगता है कि आखिर मुझे झुकना ही पड़ेगा। यह समस्या तभी हल हो सकती है, जबकि मैं इस बीच गिरफ्तार कर ली जाऊं।[1]

....

सिर्फ आम और फौरन जरूरत की चीजों को छोड़कर मैं कभी कुछ लिखने की नहीं सोचती हूं।

मैं २५ को सुबह ७-३० बजे देहरादून में होऊंगी। वहां आपसे मिलने की मेरी बड़ी इच्छा है। अगर मेरा ऐसा सौभाग्य न हो तो २५ के बाद किसी भी दिन मुलाकात करने को तैयार हूं। मसूरी से मैं आसानी से आ सकती हूं।

मुलाकात के लिए मैं अलग से सुपरिंटेंडेंट को अर्जी दे रही हूं। अगर इससे पहले गिरफ्तार करली गई तो सुपरिंटेंडेंट को सूचना दे दूंगी, जिससे अगर दूसरे किसीकी मुलाकात आपके साथ हो सकती हो तो वह मारी न जाय।

---

[1] यहां का कुछ अंश सेंसर ने काट दिया है।

मैं तो यह भी नहीं जानती कि यह चिट्ठी पाने की आपको इजाजत मिलेगी।

थोड़ी देर के लिए इन्दू से मिली थी। अब तो लगता है कि मैं इतनी बड़ी, बूढ़ी और बुजुर्ग हो गई हूं और इतनी बीत चुकी हूं कि हाल ही में यूरोप से लौटनेवाले इन तेजस्वी लोगों से कोई चर्चा भी नहीं कर सकती। मैंने कृष्ण मेनन के बारे में पूछा। इंदू कहती है कि वह हमेशा की तरह ही 'अस्थिर' हैं।

आजकल इलाहाबाद में कोई नहीं है। इस पहलू से जेल से बाहर रहना या भीतर रहना एक-सा ही बुरा है।

कैदियों की इलाहाबाद की टोली मजे में है। मुजफ्फर पहचान में आनेवाले नहीं हैं। पिछले शनिवार को मैं उनसे मिली थी। उन्हें फायदा हुआ है।

यहां से रवाना होने से पहले मौलाना से मिलने का मेरा इरादा है। मेरा खयाल है कि गरमी और जेल एक क्षण के लिए भी उनकी शांति को भंग नहीं कर पाये होंगे और जिंदगी के प्रति उनकी हमेशा की दृष्टि में भी कोई फर्क नहीं पड़ा होगा। दर-असल जेलें बेकार की संस्थाएं हैं। ये किसीमें तब्दीली नहीं करतीं। ये न तो सुधार करने में सफल होती हैं और न दमन करने में।

आप कैसे हैं ? मुलाकातें भी बेकार की चीजें हैं और मुझे यकीन है कि आपसे मिलने के बाद मुझे अच्छा नहीं लगेगा, लेकिन फिर भी उसमें कुछ तो है ही। अच्छा न लगने पर भी किसी चीज के लिए कीमत चुकाने से बचने या भागने में मेरा विश्वास नहीं है।

इलाहाबाद-टोली की महिला सत्याग्रही तारीख ८ तक छूट जायंगी। सुचेता को फैजाबाद की अपनी लीडरी का खमियाजा भुगतना पड़ रहा है। एक साल की सजावाली सिर्फ तीन हैं—वह, लक्ष्मीदेवी और उमा भाभी। मेरा समय अच्छी तरह से कटा, सिवा कम्यूनिटी बैरकों में रहने की तकलीफ के। श्रीमती पंडित और मैं कुछ दिन इलाहाबाद में साथ-साथ थे।

मैं प्रभावती से मिली। शायद आप जानते हैं, जयप्रकाश देवली में हैं।

राममनोहर ठीक हैं, परन्तु उन्होंने दाढ़ी बढ़ा रक्खी है और सिर सफाचट करा दिया है। मेरा मतलब है, सिरके बाल। उनकी सूरत देखते ही बनती है। मेरा खयाल है उन्हें, इसकी परवा नहीं है, क्योंकि उनके आसपास वहां कहीं आइना तो है नहीं, नहीं तो वह फौरन पहले जैसी सूरत बना लेते। पिछले महीने की २८ तारीख को मैं उनसे मिली थी।

देहरादून में सुन्दरतम पक्षियों में से कुछ हैं। क्या आपके अहाते में भी कभी आ निकलते हैं? पक्षियों की देख-भाल में मैं कुछ निपुण है। अगर आप पसन्द करें तो मैं आपके लिए एक किताब ले आ सकती हूं, जिसमें आपको हिन्दुस्तान के सब पक्षी मिलेंगे। आप उनका नाम जान सकेंगे। मसूरी में मैं बहुत दूर घूमने जाती हूं और पक्षियों को देखते रहने में बड़ा आनन्द आता है।

सस्नेह आपकी,
नोरा

३२२. रिचार्ड राइत्सनेर की ओर से

सुडेटन जर्मन सोशल डेमोक्रेटिक पार्टी के
लन्दन स्थित प्रतिनिधि
लन्दन,
१३ अगस्त १९४१

प्रिय पंडित नेहरू,

बहुत सोच-संकोच के बाद हमने आपको पत्र लिखने और निर्वासित सुडेटन सोशलिस्टों की ओर से अभिनन्दन भेजने का निर्णय किया है। सन् १९३८ की भाग्य-निर्णायक गर्मियों में बोडनबाच और प्राग् में हमारी आपसे जो बातचीत हुई थी, उसकी याद अबतक ताजा है। आज भी हम आपके उस प्रोत्साहन के लिए ऋणी हैं जो आपने हिटलरशाही के विरुद्ध बिना किसी समझौते के लड़ाई जारी रखने के लिए हमें दिया था। म्यूनिख-समझौते के बाद हमें मैदान से हट जाना पड़ा था। हमारे बीस हजार अच्छे-से-अच्छे आदमी तीसरे राइक के कन्संट्रेशन कैम्पों में ठूंस दिये गए थे। उन में से बहुत-से मर गये हैं, फिर भी हमें इस बात का गर्व और विश्वास है कि हमने संघर्ष करके अपने दल की इज्जत बढ़ाई है—एक ऐसे दल की, जिसे

एक जनतंत्रीय देश में नाजीवाद के विरुद्ध अन्तिम राजनैतिक लड़ाई लड़ने का सौभाग्य प्राप्त है। हमने अपने तीन हजार दोस्तों को भाग निकलने में सहायता दी है। आज वे इंगलैण्ड, स्वीडन और कनाडा में निर्वासितों की तरह रहकर समय काट रहे हैं और भयानक-से-भयानक हत्याकांड के बावजूद हमारे मित्र स्वदेश में प्रसन्न हैं। हमें अपने उन साथियों से जो डचाउ में दो साल रहने के बाद भी आज जिन्दा हैं, चिट्ठियां और बधाइयां मिली हैं। उन्होंने हमें विश्वास दिलाया है कि अपने पुराने आदर्शों के लिए वे दृढ़तापूर्वक संघर्ष करते रहेंगे।

पंडित नेहरू, आपको यह पत्र हम एक ऐसे आन्दोलन के नाम पर लिख रहे हैं, जिसके सदस्यों की संख्या घटनाक्रम के कारण कम तो हो गई हैं, लेकिन जो यूरोपियन सोशलिज्म की अमर शक्ति के अभिन्न अंग हैं।

हम आपके और आपके दोस्तों के गिरफ्तार किये जाने से दुखी हैं। हमें इस बात का अफसोस है कि नेशनल कांग्रेस का शक्तिशाली प्रगतिवादी वर्ग इस महान संघर्ष से बाहर है। हमें ऐसा लगता है कि नेशनल कांग्रेस और ब्रिटिश सरकार के संबंधों के बीच जो गतिरोध उत्पन्न हो गया है उससे नेशनल सोशलिज्म और फासिज्म के विरुद्ध मोर्चा लेनेवाली विश्व की डेमोक्रेटिक सोशलिस्ट शक्तियों के बीच एक गहरी खाई खुद गई है। हिंदुस्तान की समस्या की ऐतिहासिक और सामाजिक पृष्ठभूमि से हम पर्याप्त रूप से परिचित नहीं हैं और हम उससे सम्बन्धित दोनों शक्तिशाली सहयोगियों में से एक को भी सलाह देने का अधिकार नहीं रखते, किन्तु हमें विश्वास है कि जबसे रूस युद्ध में आया है तबसे युद्ध ने मुक्ति-युद्ध का रूप ले लिया है। हमें यह भी विश्वास है कि हिटलर, मुसोलिनी और फ्रांस की पराजय से सारे संसार में प्रजातंत्रीकरण का एक नया युग आरम्भ होगा और इस विकास-क्रम में हिंदुस्तान को अपनी स्थिति सुधारने का अच्छा अवसर मिलेगा।

सोशलिस्ट होने के नाते हम चाहते हैं कि इस युद्ध की विभीषिका से एक स्वतंत्र और संयुक्त यूरोप का प्रादुर्भाव हो। हमारी सारी चेष्टाएं इसी उद्देश्य की प्राप्ति की ओर लगनी चाहिए। हमारे रास्ते में बहुत-सी प्रबल बाधाएं हैं. फिर भी हमें इससे प्रोत्साहन मिलता है, कि सभी राष्ट्रों

की प्रगतिशील शक्तियां इस बात को निरंतर बढ़ती हुई स्पष्टता के साथ अनुभव कर रही हैं कि शक्ति तभी दृढ़ और सुरक्षित हो सकती है जब उसके मूल में यह भावना हो कि सभी स्वतंत्र देश और उनकी जनता एक-दूसरे पर निर्भर हैं। यूरोप को स्वतंत्र हिंदुस्तान जैसे सहयोगी की आवश्यकता है, लेकिन हिंदुस्तान को भी स्वतंत्र यूरोप जैसे सहयोगी चाहिए।

इस दृष्टि से क्या हम आपको कुछ ऐसे सुझाव भेज सकते हैं, जिनका प्रभाव आपसे और हमसे समान रूप से सम्बन्ध रखनेवाले प्रश्नों पर पड़ता है ?

हो सकता है कि ब्रिटिश नीति में गलतियां हों—उदाहरण के लिए म्यूनिक के पहले शिकार हम बने—फिर भी फ्रांस के पतन और रूस पर हिटलर के आक्रमण के बीच के सालों में संसार की स्वतंत्रता का पूरा बोझ इंगलैण्ड की जनता पर ही था। १९३८ के पतझड़ में हमारे स्वप्न बड़ी कटुता के साथ छिन्न-भिन्न हो गये थे और शायद यही कारण है कि हम उस कटुता को समझ पा रहे हैं, जो आप अपने कारागृह में अनुभव करते हैं। किन्तु देश में निर्वासितों की तरह रहते हुए हमने अपनी आंखों से अंग्रेज राष्ट्र को पीड़ा भोगते और संघर्ष करते देखा है, जिसके कारण हमारी कड़वी भावनाएं प्रशंसा में बदल गई हैं। पंडित नेहरू, विश्वास कीजिये कि जिस समय लन्दन की जनता घातक बमवारियों का आश्चर्यजनक साहस के साथ सामना कर रही थी, उस समय निस्संदेह वह किसी साम्राज्यवादी उद्देश्य का प्रतिपादन नहीं कर रही थी। वह स्वतंत्रता के लिए लड़ रही थी, ठीक वैसे ही, जैसे आप अपने देश में और हमारे साहसी वीर सुडेटन क्षेत्रों में लड़ रहे हैं।

हमारा विचार है कि स्वतंत्रता, जनतंत्र और शान्ति के युग की स्थापना में योग देनेवाली समस्त शक्तियों को इस युद्ध के बाद कंधे-से-कंधा भिड़ाकर एक ही रास्ते पर चलना पड़ेगा। हमें आशा है कि हिंदुस्तान में भी स्थितियां अच्छाई की ओर मोड़ लेंगी।

यद्यपि हमारी चेक-सुडेटन-जर्मन समस्या हिन्दू-मुस्लिम एकता की समस्या से बहुत ही कम समता रखती है, फिर भी हम बड़े प्रसन्न होंगे यदि किसी दिन हम अपने स्वतंत्र देश में आपका एक स्वतंत्र अतिथि के

रूप में स्वागत कर सकें और मध्य यूरोप के संगठन की समस्याओं के बारे में आपकी राय ले सकें। इसे आप हमारा निमंत्रण समझिये और एक बार फिर प्राग् और बोडनबाच में हमारे अतिथि बनने की कृपा कीजियें।

तब हम और आप अंग्रेजी में बातचीत कर सकेंगे, क्योंकि अपने निर्वासिन के वर्षों में हमने इंगलैण्ड की भाषा, साहित्य और दर्शनशास्त्र से परिचित होने का अवसर निकाल लिया है।

अपने सभी साथियों की ओर से हम आपको अपनी गहरी-से-गहरी सहानुभूति का विश्वास दिलाते हैं।

अगर आप राजनैतिक साहित्य पढ़ने की स्थिति में हों तो हम आपको 'इंगलैण्ड और अन्तिम स्वतंत्र जर्मन' नामक पुस्तिका की और सुडेटन समस्या के भावी समझौते के बारे में अपने दल के घोषणा-पत्र की एक-एक प्रति भिजवा रहे हैं।

आपका,
रिचार्ड राइत्सनेर
वेनजल जेकश्च

३२३. एलिनोर एफ. रैथबोन की ओर से

[चूंकि उस समय मैं जेल में था, इसलिए यह पत्र यू. पी. के गवर्नर के पास भेजा गया था, जिन्होंने इसे मेरे पास देहरादून जिला-जेल में भिजवा दिया था।]

कामन्स सभा
लन्दन
२८ अगस्त १९४१

प्रिय पंडित नेहरू,

आपके लम्बे पत्र के लिए धन्यवाद। यह मुझे कई सप्ताह पहले मिल गया था, किन्तु कार्य अधिक होने के कारण मैं इस इन्तजार में थी कि पार्लमेंट की छुट्टी हो तब जवाब दूं। यह समय बरबाद नहीं गया है, क्योंकि इस बीच आपके पत्र को श्री एमेरी, बहुत-से संसद-सदस्य और भारतीय मामलों में विशेष रूप से दिलचस्पी लेनेवाले कितने ही दूसरे लोग पढ़ चुके हैं।

मैं पूरे पत्र का उत्तर देने की चेष्टा नहीं करूंगी, बल्कि केवल उन्हीं बातों को लूंगी जो मुझे अपने और आपके बीच विशेष रूप से उल्लेखनीय प्रतीत होती हैं। . . . .

मुझे अफसोस है कि आप ऐसा अनुभव करते हैं कि "हिंदुस्तान के साथ इंग्लैण्ड के सम्बन्ध पर विचार करने के लिए हमारे बीच कोई समान आधार नहीं है।" मैं समझती हूं कि इसके लिए काफी आधार इस बात में है कि हम दोनों ही न सिर्फ हिंदुस्तान की जनता के लिए, बल्कि सभी देशों की जनता के लिए स्वतंत्रता, जनतंत्र और सामाजिक उन्नति में समान रूप से विश्वास करते हैं। किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि हम दोनों इन साध्यों की व्याख्या बिल्कुल भिन्न-भिन्न रूप से करते हैं और उनकी प्राप्ति के साधनों तथा गति के सम्बन्ध में बहुत ज्यादा मतभेद रखते हैं।

गति के बारे में जो मतभेद है वह मुझे सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण मालूम देता है। पिछले बीस वर्षों में आपने थोड़ा-थोड़ा करके स्वशासन का जो अधिकार प्राप्त किया है और कुछ शर्तों पर आपको भविष्य में औपनिवेशिक स्वराज्य का जो वचन दिया गया है, उसे आप 'तिरस्कार और अपमान' मानते हैं। मेरी और करीब-करीब सभी अंग्रेजों की दृष्टि में स्वशासन और दूसरे सुधारों को थोड़ा-थोड़ा करके देने में हिंदुस्तान के साथ उसी प्रणाली को व्यवहार में लाया गया है, जिसका व्यवहार हमारी सरकारों ने स्वयं हमारे साथ किया है। यह वही प्रणाली है, जिसपर हमारी अपनी स्वतंत्रताएं धीरे-धीरे करके खड़ी की गई हैं और जिसके द्वारा हमने उन्नति की है। यही कारण है कि हमने 'क्रमिक विकास की अनिवार्यता' में विश्वास करना सीखा है—उसकी दार्शनिक नहीं, बल्कि व्यावहारिक अनिवार्यता में। इसका यह अर्थ नहीं है कि इस प्रणाली के विरुद्ध हम अक्सर चीखते-चिल्लाते नहीं हैं। इसकी गति बहुधा अनावश्यक रूप से धीमी मालूम देती है और जब सुधार अन्तिम रूप से प्राप्त हो जाता है तब यह सोचकर बड़ा बुरा लगता है कि न जाने कितने उसकी प्रतीक्षा-ही-प्रतीक्षा में मर मिटे। फिर भी कुल मिलाकर हमें यह बात स्वीकार करनी पड़ती है कि इस प्रणाली ने अच्छा काम किया है और हमें उन अनेक दुर्भाग्यों से बचा लिया है, जिनका पहाड़ हमारे देशवासियों पर पहले टूट चुका है—उदाहरण

के लिए, रक्तमय विद्रोह, हिंसात्मक प्रतिक्रियाएं, कुविचारित सुधार, जिन्हें सम्पूर्ण रूप से लागू करने पर परिणाम बुरा निकला, अच्छे सुधार, जो इतनी सरलता से मिल गये कि उनसे लाभान्वित होनेवाले लोग यह अनुभव ही नहीं करते कि उन्हें कुछ मिला है और इसलिए वे न तो उनकी कीमत समझते हैं, न उनकी रक्षा करते हैं।

गति के सिलसिले में मुझे यह बात बड़ी अजीब मालूम देती है कि आप जैसे विचारोंवाले हिंदुस्तानी जब अपने ही देश नहीं, बल्कि दूसरे देशों की भी सुरक्षा तथा हित पर प्रभाव डालनेवाले महान राजनैतिक परिवर्तनों पर वाद-विवाद करते हैं तब तो कहते हैं—'या तो पूरा लेंगे या बिल्कुल नहीं' और 'सबकुछ एक ही बार में दे दो'; किन्तु जब सामाजिक सुधारों की बात आती है, जहां तेजी कम खतरनाक होती है, तब हिंदुस्तानी भी उतने ही क्रमशःवादी दिखाई देने लगते हैं, जितने कि हम हैं। कम-से-कम बाल-विवाह और पर्दा के प्रश्नों के सिलसिले में तो मुझे ऐसा ही लगा। इन कुप्रथाओं के सम्बन्ध में ब्रिटिश अधिकारियों के धीमे और भयभीत आचरण को अधिकांश उग्र-से-उग्र हिंदुस्तानी सुधारकों ने चुपचाप स्वीकार कर लिया और मुझे इस बात का कोई संकेत दिखाई नहीं देता कि स्वतंत्र हिंदुस्तान उनके सम्बन्ध में कुछ अधिक तीव्रता से कार्य कर सकेगा, यद्यपि मैं जानती हूं कि इस बात का दावा अवश्य किया गया है। हां, अस्पृश्यता की ओर गांधीजी का रुख एक अपवाद अवश्य है। किन्तु उसका सम्बन्ध पुरुषों और स्त्रियों दोनों से है। फिर भी इन दोनों सामाजिक कुप्रथाओं ने निश्चय ही हिंदुस्तान के स्वास्थ्य, शक्ति, शिक्षा आदि की उन्नति को इतना ही रोका है, जितना कि ब्रिटिश शासन के मत्थे थोपी जा सकनेवाली किसी भी त्रुटि ने रोका होगा।

जो अंग्रेज करीब-करीब आप ही जैसा दृष्टिकोण रखते हैं, उनके प्रयत्नों को भी आप बहुत ही उपेक्षा की दृष्टि से देखते हैं। "इन नेकनीयत व्यक्तियों या समूहों का ब्रिटेन की शासन-नीति या लूटने-खसोटनेवाले साम्राज्यवादियों पर कोई प्रभाव नहीं है।" इस विषय पर ब्रिटेन का संसद्-सदस्य शायद आपसे ज्यादा अच्छा निर्णय कर सकता है और मुझे इसमें सन्देह नहीं कि आप गलत हैं—यह बात और है कि सन् १९२० से अब

तक थोड़े-थोड़े करके स्वशासन के जितने अधिकार मिले हैं, उन्हें आप न केवल नगण्य बल्कि 'तिरस्कारपूर्ण और अपमानजनक' भी मानते हैं। पार्लामेंट के भीतर और बाहर जो लोग भी हिंदुस्तान के समर्थक हैं उन्होंने इन अधिकारों को दिलवाने और शासन की नीति पर प्रभाव डालने के लिए बहुत काम किया है। शायद वे और भी अधिक दिलवा पाते, यदि उन्होंने अपने हिंदुस्तानी मित्रों की इच्छा का पालन करके अप्राप्य को मांगने की चेष्टा न की होती। मुझे याद है, सन् ३५ के कानून के बाद श्री जोशी ने मुझसे पूछा था कि महिलाओं से सम्बन्धित कानून के मूल प्रस्ताव में (खास तौर से मताधिकार की योग्यता और सीटों के संरक्षण के प्रश्न पर) मैंने किस तरह इतने सुधार करा दिये, जितने कि मजदूर-दल अपने मजदूर-संघों के लिए भी नहीं करा पाया था? मैंने जवाब दिया कि इसका कारण यह है कि मजदूर-दल के संशोधन बहुत ही उग्र थे, जबकि मेरी आदत यह है कि मैं पहले ही अपने मन में पक्का कर लेती हूं कि मुझे अधिक-से-अधिक कितना मिल सकता है और फिर उसीके अनुसार या तो ठीक उतना ही मांगती हूं या सौदेबाजी के लिए थोड़ी-सी गुंजाइश छोड़कर २० प्रतिशत ज्यादा मांग लेती हूं। "सबसे अधिक नहीं, बल्कि प्राप्त हो सकनेवाला सबसे अधिक", यही मेरा सिद्धान्त रहा है। मैं जानती हूं कि आप ऐसी अवसरवादिता से घृणा करते हैं। मैं केवल इतना कह सकती हूं कि ऐसी बात करने से काम बन जाता है।

जहांतक आपका यह कहना है कि "सिद्धान्ततः या व्यावहारिक रूप से आप हिटलर के 'गौलीटरों' और हमारे वाइसरायों तथा गवर्नरों के बीच कोई अन्तर नहीं पाते", वह तो निश्चय ही आपकी मानसिक स्थिति का परिचायक है। जो कुछ भी हो, आप मुझपर 'युद्ध-मनोवृत्तिवाले व्यक्ति के क्रोध और कटुता' का दोषारोपण करते हैं। इन शासकों में से कुछके व्यक्तित्व के चित्र मेरी आंखों के सामने घूम जाते हैं—लार्ड हेलीफैक्स, लार्ड विलिंगडन, लार्ड लिनलिथगो, लार्ड हेली, सर मान्टेगो बटलर, सर हरबर्ट इमरसन (मैं नये आदमियों को नहीं जानती)। क्या सैद्धान्तिक या व्यावहारिक रूप से कोई अन्तर नहीं है हिटलर के गौलीटरों और इन व्यक्तियों में, जो न्यायपूर्ण, निष्पक्ष और सुलहपसन्द बने रहने

तथा परस्पर-विरोधी उद्देश्यों में समझौता करने के लिए लगातार चेष्टा करते रहे हैं, भले ही उन्हें इस चेष्टा में सदा सफलता न मिली हो ?

फिर भी मैं स्वीकार करती हूं कि जब आप अपने पत्र में आम बातों से विशेष बातों की ओर जाते हैं और हिंदुस्तानी शासन पर दोषारोपण करते हैं तब अपने प्रति मुझे उतना विश्वास नहीं रह जाता। जहांतक युद्ध-उद्योग का प्रश्न है—विशेष रूप से हवाई जहाज की आयोजित फैक्टरी का, जिसकी आपने चर्चा की है और हिंदुस्तानी जहाजरानी के प्रति हमारी नीति का—इसका उत्तर श्री एमरी ने आंशिक रूप से पार्लामेंट में दे दिया है और मुझे व्यक्तिगत रूप से विश्वास दिलाया है कि आपका दोषारोपण बिल्कुल निराधार है। (इस सम्बन्ध में सर जार्ज शुस्टर की वह राय भी पढ़िये जो उन्होंने पहली अगस्त की बहस में व्यक्त की थी—मैं "हैनसर्ड" —संसद की कार्रवाई की छपी रिपोर्ट—भेज रही हूं।) अपूर्ण या पक्षपातपूर्ण जानकारी के कारण निर्णय करने और अनुमान लगाने में गलतियों की गुंजाइश हो सकती है; किन्तु यदि आप यह सोचें कि यहां का कोई अधिकारी ब्रिटेन के निहित स्वार्थ या ईर्षा से प्रभावित होकर जान-बूझकर हिंदुस्तानी युद्ध-उत्पादन को सीमित करना चाहेगा, तो इसका यह मतलब है कि आप निश्चय ही हमारे आदमियों को गलत समझते हैं। इससे पता चलता है कि आप यहां के लोगों की मानसिक प्रवृत्ति को समझने में कितने असफल हैं। उन्होंने तो युद्ध में विजय पाने के अपने मुख्य उद्देश्य पर ही अपनेको केन्द्रित कर रखा है और इसमें सन्देह नहीं कि व्हाइट हाल में या दिल्ली में जो सरकारी अधिकारी हैं, वे वास्तविकता को जानने और हिन्दुस्तान के युद्ध-उत्पादन की सम्भावनाओं का अनुमान लगाने में आपसे कहीं अच्छी स्थिति में हैं; क्योंकि परिवहन, सामग्री, औजार, कुशल व्यक्तियों की कमी आदि के कारण उत्पन्न सीमाओं को वे जानते हैं।

लेकिन जब आप दूसरी बातों की चर्चा करते हैं—उदाहरण के लिए कैदियों और नजरबन्दों के प्रति किये जानेवाले व्यवहार, भेदिया प्रणाली आदि की—तो आप जो कुछ भी कहते हैं अपने अनुभव के आधार पर कहते हैं, इसलिए मैं मन-ही-मन बड़ी व्यग्रता का अनुभव करती हूं।

आज़ से दस साल पहले जब मैं कुछ दिनों के लिए हिंदुस्तान गई थी तब और उसके बाद भी मैंने हिंदुस्तानियों और हिंदुस्तान के ब्रिटिश मित्रों के मुंह से बहुत-कुछ सुना, जिसका आशय यह है कि शान्ति के दिनों में भी हिंदुस्तान में अनावश्यक निर्दयता का बोलबाला है, जिसका स्पष्ट कारण यह है कि शासन का काम बहुत दूर से चलाया जा रहा है, वह अत्यधिक केंद्रित है और जिनके माध्यम से वह चलाया जा रहा है, वे न पूरी तरह से प्रशिक्षित हैं, न उनके काम की ठीक से देखभाल ही होती है। आतंकवाद से उत्पन्न क्रोध और भय ही उन दिनों इस निर्दयता का आम बहाना था। मुझे उम्मीद थी कि सन् १९३५ के बाद प्रान्तीय सरकारों की शक्ति बढ़ जाने से यह आतंक मिट गया होगा। किन्तु युद्ध से नृशंसता को प्रोत्साहन मिलता है, जिसका एक कारण यह है कि आतंकवाद की ही तरह युद्ध भी क्रोध और भय को प्रेरणा देता है और दूसरा यह कि उच्च अधिकारियों में से योग्यतम व्यक्ति युद्ध-कार्यों में लगा दिये जाते हैं। इन सब बातों के बारे में मैं उन लोगों से विचार-विनिमय करना चाहती हूं, जो सत्य पर कुछ प्रभाव डाल सकें और साथ-ही-साथ सम्भव उपाय भी बता सकें। . .

. . अब मैं फिर से मुख्य बात पर आती हूं। आपके पत्र में जो मूलभूत भूल मुझे शुरू से आखिर तक दिखाई देती है, वह यह है कि आप यह मान लेते हैं कि आप पूरे हिंदुस्तान और हिंदुस्तान की जनता की ओर से बोल रहे हैं। ("अगर हम एक-दूसरे से सहमत नहीं हो सकते तो फिर ब्रिटिश सरकार हमें अपनी ही युक्तियां क्यों नहीं करने देती ?") आप अपने देश के उन अनेकानेक वर्गों को भूल जाते हैं—मानों वे स्लेट पर लिखे अक्षरों की तरह स्पंज से मिटाये जा सकते हों—जो हिंदुस्तान के भविष्य के बारे में आपसे पूरी तरह से असहमत हैं और अगर हम उनसे यह कहकर अलग हो जायं कि 'लो, हम तुमसे थक गये, तुम आपस में ही लड़कर फैसला कर लो' तो हमारा ऐसा करना वे साथ छोड़कर भाग जाना तथा विश्वास-घात मानेंगे। मैं समझती हूं कि ऐसा वे ठीक ही सोचेंगे। क्या आपने एक सम्माननीय व्यक्ति की तरह अपने मन से पूछा है कि अगर आप हमारी जगह होते तो ऐसा करते ?

कांग्रेस की मांगों के औचित्य और अनौचित्य की बात को छोड़ते हुए

आप यह सोचिये कि किसी एक राजनैतिक दल की मांगों को स्वीकार करने के लिए—चाहे वह सबसे बड़ा और सबसे प्रगतिशील दल ही क्यों न हो—यदि आपको दूसरे विचारोंवाले उन सभी दलों और समुदायों को दिये गए आश्वासनों को वापस लेना पड़े, जिन्होंने आपको सहायता दी है और आपके साथ सहयोग किया है, तो क्या आप उस एक राजनैतिक दल के आगे घुटने टेक देंगे ? जिस युद्ध के भविष्य पर न केवल ग्रेट ब्रिटेन बल्कि यूरोप और स्वयं हिंदुस्तान की भी भावी सुरक्षा निर्भर है, क्या उस युद्ध के बीचोंबीच—जब इनके सहयोग की सबसे अधिक आवश्यकता है—आप ऐसा करेंगे या करने का वचन देंगे ? और, क्या आप यह सब इस भोले-भाले विश्वास के साथ करेंगे कि कांग्रेसी हिंदुस्तान के साथ किया गया उदारता का एक महान कार्य लोगों के हृदय में इतना परिवर्तन ला देगा कि उससे युद्ध में हमारा साथ देनेवाले हिंदुस्तानियों के दूसरे वर्गों में उत्पन्न शत्रुता और कटुता की क्षतिपूर्ति हो जायगी ?

मैं आपको यह याद दिलाना चाहती हूं कि आयरलैंड और ट्रीटी बन्दरगाहों के साथ हमें जो अनुभव हुआ है उससे हमें इस प्रकार के विश्वास-कार्य के लिए प्रोत्साहन नहीं मिला है। मैं तो यह कहना चाहती हूं कि ऐसा प्रोत्साहन हमें आपके पत्र के रुख, पुस्तक या आपके दल के दूसरे लोगों के वक्तव्यों से भी नहीं मिला है, बल्कि इनमें एक प्रकार की शत्रुता है जो कि शायद अपरिवर्तनीय है, क्योंकि उसकी जड़ें अपरिवर्तनशील अतीत में गड़ी हुई हैं।

हां, हम एक-दूसरे के हृदय की सच्चाई में विश्वास कर सकते हैं, जैसा कि आप कहते हैं। किन्तु आपके हृदय की सच्चाई ने मुझे जो कुछ दिखाया है वह है एक खाई, जो कि पाटी नहीं जा सकती। हो सकता है कि मैं गलती पर होऊं।

सस्नेह आपकी,
एलिनोर एफ. रैथबोन

फिर से—

अलग डाक से मैं आपको (१) हिंदुस्तान पर की गई सबसे नई बहस का "हैनसर्ड" और (२) हिंदुस्तान पर अपनी छोटी पुस्तक भेज रही

हूं। मैं आपको आपकी पुस्तक की भी एक प्रति भेजना चाहूंगी, जो कि आप कहते हैं, आपने देखी नहीं है। लेकिन मैं कह नहीं सकती कि ऐसा करने के लिए मुझे इजाजत मिलेगी या नहीं।

३२४. सर जार्ज शुस्टर की ओर से

मिडिल बार्टन, ऑक्सन,
२३ सितम्बर १९४१

प्रिय जवाहरलाल नेहरू,

मैंने मैकमिलन कम्पनी से कहा है कि जैसे ही पार्सल हिंदुस्तान पहुंचे वैसे ही वह 'इंडिया एंड डेमोक्रेसी' ('भारत और लोकतंत्र') पुस्तक की एक प्रति आपके पास भेज दें। यह पुस्तक अभी-अभी प्रकाशित हुई है और मैं इसका संयुक्त लेखक हूं। यह पुस्तक रूस पर आक्रमण होने से पहले जून के प्रारम्भ में ही समाप्त हो गई थी और उसके बाद भी आज की निरन्तर परिवर्तनशील स्थिति में अनेक परिवर्तन हुए हैं। किन्तु यह एक लम्बा पर्यवेक्षण है और इसमें जो कुछ भी लिखा गया है उसपर इन दिनों प्रतिदिन होनेवाले परिवर्तनों का कोई प्रभाव नहीं पड़ा है। पुस्तक दो भागों में है। पहले भाग को विन्ट ने लिखा है और इसमें ऐतिहासिक तथा सामाजिक पृष्ठभूमि देते हुए हिंदुस्तान की स्थिति का पर्यवेक्षण किया गया है। इसमें बहुत-कुछ ऐसा है जिससे आप असहमत होंगे; किन्तु यह ईमानदारी के साथ लिखा गया है और इसमें लेखक का दृष्टिकोण सच्चाई के साथ व्यक्त हुआ है। मैंने विन्ट के दृष्टिकोण पर कोई प्रभाव डालने की चेष्टा नहीं की है और जैसाकि मैंने भूमिका में कहा है, यदि यह भाग मैंने स्वयं लिखा होता तो मैं बहुत-सी बातें दूसरे ढंग से प्रस्तुत करता। किन्तु अपने भाग में (भाग दो में) मैंने उसकी चर्चा की है और उसकी सराहना करते हुए मैंने ये सवाल पूछे हैं—'भविष्य का क्या होगा ?', 'हमें क्या करना चाहिए ?' मुझे उम्मीद है कि आप मेरे द्वारा लिखे गए भाग को पढ़ने योग्य पायेंगे। इसके बारे में मैं केवल इतना दावा करना चाहूंगा कि मैंने सत्य को जैसा देखा है उसे वैसा ही प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है और शायद आप कम-से-कम इतना तो अनुभव करेंगे ही कि मैंने जो कुछ भी कहा है, उसमें एक ऐसा रुख छिपा हुआ है, जिसके प्रति आपकी भावना सम्पूर्णतः असहानुभूति-

पूर्ण नहीं है। जो कुछ भी मैंने लिखा है, उससे यदि सत्य को खोजने में सहायता मिलती है—चाहे वह सत्य वैसा न भी हो जैसा मैंने उसे देखा है—तो मैं समझूंगा कि मेरा उद्देश्य पूर्ण हुआ।

मुझे इस बात का पूरा आभास है कि आपको यह बात गुस्ताखी मालूम दे रही होगी कि हम विदेशियों में से कोई भी आपके देश के बारे में लिखे और इससे भी ज्यादा यह कि आपको यह उपदेश दे कि आपको क्या करना चाहिए। मैंने अक्सर महसूस किया है कि जब कभी हम एक-दूसरे के सम्पर्क में आये हैं, मैंने आपको इस मामले में विशेष रूप से उत्तेजित ही किया है—उदाहरण के लिए पिछले मौके पर जब आप चैथम हाउस में बोले थे। काश कि ऐसा न होता! मुझे आपके पिता से विशेष स्नेह था और मैं उनका बड़ा आदर करता था। जहांतक आपका सवाल है, मेरी स्मृति में आपकी उस यात्रा का चित्र सदा अंकित रहता है जब आप शिमला में मुझसे पीटरहोफ में मिले थे और मुझसे मेरे पढ़ने के कमरे में बातचीत करने के बाद आप गोल कमरे में हमारी पारिवारिक पार्टी में शामिल होने आये थे, जिसमें मेरी पत्नी और मेरे वे दो लड़के भी थे, जो ऑक्सफोर्ड से अपनी लम्बी छुट्टी बिताने मेरे पास आये थे। उस थोड़े-से समय में बन्धुत्व और एक-दूसरे को समझने की भावना की अनोखी चमक दिखाई दी थी। काश कि ऐसा फिर हो सकता! सम्भव है कि युद्ध के समाप्त होने से पहले समान खतरे हमें कुछ अधिक पास ले आयें या युद्ध-संबंधी आवश्यकताओं की भट्टी में पुराने हठपूर्ण विरोध जल जायं। जहांतक मेरा अपना सवाल है, जिन दो लड़कों से आप मिले थे उनमें से एक मारा जा चुका है और दूसरा समुद्र-पार एक खतरे की जगह काम कर रहा है। ऐसे तथ्य छोटी-छोटी नगण्य बातों को दूर हटा देते हैं और हमें मूलभूत बातों के निकट ले आते हैं। जो लोग एक-दूसरे से बुनियादी बातों में मतभेद रखते हैं, जैसेकि आप और मैं (यद्यपि मैं ऐसा विश्वास नहीं करता), वे भी यदि एक-दूसरे की सच्चाई पर विश्वास रखें तो संयुक्त हित की बातों में वे न केवल एक-दूसरे की सहानुभूति प्राप्त कर सकते हैं, बल्कि उन्नति के पथ पर भी आगे बढ़ सकते हैं। मैं समझता हूं कि आप इस बात से सहमत होंगे कि भारतीय समस्या इस अर्थ में एक संयुक्त हित की बात है कि

यदि हिंदुस्तान में पूर्ण स्वराज्य की स्थिति उत्पन्न करने के लिए जिन संक्रमणकालीन प्रयत्नों की आवश्यकता है उनमें ब्रिटेन और हिंदुस्तान मिलकर काम करें तो वे मानव के दुःख-दर्द को बहुत-कुछ रोक सकते हैं। जहां-तक हमारी सच्चाई में विश्वास स्थापित करने का प्रश्न है, मुझे उम्मीद है कि मेरी पुस्तक इस दिशा में कुछ कर सकेगी।

जो हो, कृपाकर मेरी बातों पर गम्भीरतापूर्वक विचार कीजिये और जो कुछ भी मैंने पुस्तक में लिखा है उसपर अपनी राय लिख भेजिये, चाहे वह पूर्णरूप से आलोचनात्मक ही क्यों न हो।

सस्नेह आपका,
जार्ज शुस्टर

फिर से—

इस पत्र को लिखने के बाद मिस एलिनोर रेथबौन ने मुझे वह पत्र दिखाया, जो आपने उन्हें लिखा था। जो कुछ भी आपने लिखा है, उसको पढ़ने के बाद मैं महसूस करता हूं कि न तो मेरे इस पत्र से, न जो कुछ मैंने अपनी पुस्तक में कहा है उससे ही, आपके प्रश्नों का पूरा-पूरा उत्तर मिल पाता है। बहुत-सी बातों में—सब बातों में नहीं—हमारे उद्देश्य एक-दूसरे के प्रतिकूल हैं। आपने मिस रैथबोन को अपने पत्र में जो बातें लिखी हैं, उनमें से बहुतों पर मैं सावधानी के साथ कुछ कहना चाहता हूं और मुझे उम्मीद है कि अगर मैं कुछ ही दिनों में आपको फिर से पत्र लिखूं तो आप बुरा नहीं मानेंगे।

३२५. पूर्णिमा बनर्जी की ओर से

सेण्ट्रल जेल, लखनऊ
८ नवम्बर १९४१

प्रिय जवाहरलालजी,

हालांकि मेरे मन में उत्सव मनाने की कोई बात नहीं है, लेकिन मैंने सोचा कि आज आपको पत्र लिखकर 'जवाहर-दिन' मना लूं। मुझे उम्मीद है कि मेरे इस पत्र के प्राप्त होने से जिस किसीके पत्र की आप उम्मीद कर सकते हैं, उसे आपको मिलने में कोई अड़चन नहीं होगी। अगर अड़चन पड़ी तो मुझे दुःख होगा।

मैं आपको हैवलॉक एलिस की आत्म-कथा भेजने की सोचती रही हूं।

आप उसे पसन्द करेंगे। परन्तु आप हमेशा इतने अप-टू-डेट रहते हैं और पुस्तकों की दृष्टि से इतना आगे बढ़े हुए कि मुझे कोई दूसरी कल्पना करने में संकोच होता है।

इलाहाबाद में करीब एक महीने रहने के बाद मैं यहां आ गई। सुचेता और उमा भाभी अपनी सजा का आखिरी महीना काट रही हैं। यदि जे. गंगानाथ के फैसले के फलस्वरूप अधिकारियों की कर्तृत्व-शक्ति में कुछ सुधार हुआ तो इन्हें उसका कोई लाभ नहीं मिलेगा। डा. काटजू तक के लिए भी यह 'का वर्षा जब कृषी सुखानी' जैसी बात होगी। मेरे मामले की जड़ तो स्पष्टतः बंजर भूमि में है; लेकिन मुझे इसकी कतई परवा नहीं है। मुझे न तो ज्यादा फायदा होने को है, न नुकसान, अपनी बेड़ियों का भी नहीं। मुझे जिंदगी बिना उत्तर की चिट्ठी जैसी लगती है। अगर कोई काफी समय तक उसका जवाब नहीं देता तो वह स्वयं अपने को जवाब देने लगती है या बिना उसके ही ठीक चलता रहता है।

सुचेता मुझसे बिछुड़ जायगी, लेकिन अकेला रहना मुझे अखरेगा नहीं। धीरे-धीरे यहां लोग कम हो रहे हैं और जल्दी ही हम सिर्फ चार जने रह जायंगे—दो सजा-याफ्ता और दो हम नजरबन्द।

आज सुबह के अखबार में एक्जीक्यूटिव कौंसिल की खबर है। जब हम देवली में नौजवानों पर कोड़े बरसने (?) के बारे में सोचते हैं तो हमारे दिल इतने उभड़ते हैं कि खाना भी हमारे गले नहीं उतरता। मेरी ज्यादा हमदर्दी तो उनकी औरतों से है। जहांतक जयप्रकाश का संबंध है, मेरी संरक्षक प्रवृत्ति बहुत ही उभर आती है और मुझे दुःख होता है। क्या आपने 'स्टेट्समैन' और टहलने के कानून के बारे में सबकुछ पढ़ा, भले ही यह जेल के बरामदे में टहलने के कानून के बारे में है? बतौर मजाक के यह अच्छा है और उसका हास्यास्पद पहलू है, लेकिन 'स्टेट्समैन' द्वारा ऐसा करना ठीक नहीं जो गंभीर राजनीति के साथ इसको मिला देता है।

जल्दी ही आप बिल्कुल अकेले रह जायंगे। सुन रही हूं कि श्री पंडित दिसम्बर में बाहर आ रहे हैं। आप तो सबके साथ रहते हुए भी अक्सर अकेले ही लगते हैं और आप दूसरों को ऐसा आभास कराते हैं कि आप

जब अकेले होते हैं तो उससे कम अकेले कभी नहीं रहते । इसीलिए मैं विश्वास करती हूं, आप अकेले नहीं होंगे ।

श्री पंडित और डा. रामस्वरूप और आपके मेहरबान जेलर को मेरा स्मरण ।

सादर आपकी,
नोरा

सेन्सर द्वारा पास किया गया
हस्ताक्षर
एस. आई., डी. आई. एस., लखनऊ
९-११-४१

३२६. श्यामाप्रसाद मुकर्जी की ओर से

कलकत्ता
२३ नवम्बर १९४१

प्रिय पंडितजी

आपके तुरन्त उत्तर के लिए धन्यवाद । उसका मुझपर गहरा असर हुआ है । मेरी आपसे तर्क करने की कोई इच्छा नहीं है । अगर आप मुझे कहने की अनुमति दें तो मैं कहूंगा कि मैं आपकी भावनाओं को अच्छी तरह समझता हूं । भारत में जिस स्थिति में हम हैं, जेलखाना केवल अपनी चहारदीवारी तक ही सीमित नहीं है, इस विशाल देश का संपूर्ण क्षेत्रफल जेल बना हुआ है। इसे अपने-आपको समझने के लिए अभी बहुत-सी अग्नि-परीक्षाओं में से होकर गुजरना है ।

तो भी, मैं बहुत ज्यादा इच्छुक हूं कि आप कृपया अपने निर्णय पर फिर से विचार करेंगे । विश्व-इतिहास के आपके सूक्ष्म विश्लेषण और भारतीय संघर्ष की पृष्ठभूमि ने आपको राजनैतिक विचारकों की प्रथम पंक्ति में ला खड़ा किया है । आज हम एक जबरदस्त उथल-पुथल में से गुजर रहे हैं । यद्यपि फूट और दमन के बादल हमारे दिलों में अक्सर निराशा पैदा करते रहते हैं, फिर भी हम वर्तमान स्थिति को, जो हो चुका सो हो चुका मानकर, स्वीकार नहीं कर सकते और उसके सामने चुपचाप सिर नहीं झुका सकते । परिवर्तन निश्चित आयेगा, लेकिन वह आयेगा

मानव-जाति के प्रयत्न से ही, जब वह सत्ता, संपत्ति और प्रतिष्ठा की तीन विनाशकारी शक्तियों से प्रेरित होना बंद कर देगी।

जहांतक भारत की स्थिति का सवाल है और खास करके हिन्दुओं के भविष्य का, कुछ बातों में आप और मेरे जैसे विचार के लोगों के बीच सच्चा मतभेद हो सकता है। परन्तु हम सब विश्वास करते हैं कि भारत ने युग-युग से मानव-आत्मा की स्वतन्त्रता का एक अमर सन्देश दिया है और वही सभ्यता को विनाश से बचा सकता है और उसे ज्यादा उच्च एवं उदात्त स्तर की ओर ले जा सकता है। जब आप मुक्त हों और जब आप चाहें—मैं इसके लिए समय की कोई अवधि नहीं रखता—मैं चाहूंगा कि आप हमारे लिए कमला-व्याख्यान-माला के माध्यम से भारत के घटनापूर्ण इतिहास का एक निष्पक्ष अवलोकन प्रस्तुत करें। यह भी बतावें कि उसकी शक्ति और दुर्बलता के कारण क्या हैं, तथा यह भी कि उन अमर मूल्यों की स्थापना में उसने क्या भाग लिया है, जिनको राज-नैतिक पराधीनता भी नष्ट नहीं कर सकी है। साथ ही उन शर्त्तों को भी बताइये, जो उसे पूरी करनी ही चाहिए, अगर उसे स्वाधीनता तथा आत्म-सम्मान का जीवन जीना है। इस नाजुक समय में आप उन इने-गिने आदमियों में से हैं, जो दलगत संकीर्ण विचारों से ऊपर उठ सकते हैं, भिन्न-भिन्न दृष्टि-विन्दुओं को समझ सकते हैं और इस वर्तमान सभ्यता के गिरते भवन के ढेरों में से उस भावी भारत का चित्र खींच सकते हैं, जिसमें रहना उपयुक्त है।

मेरे आग्रह के लिए कृपया 'हां' कहिये। भाषण का विषय बतावें और तय करने के लिए औपचारिक कदम उठाने की मुझे अनुमति दें।

शुभ-कामनाओं सहित,

आपका,
श्यामाप्रसाद मुकर्जी

३२७. जयप्रकाश नारायण की ओर से

देवली नजरबंद कैंप
देवली, राजपूताना
७ दिसम्बर १९४१

प्रिय भाई,

आपका हार्दिक अभिवादन !

[१]......जिस समय देश को आपके मार्ग-दर्शन की सबसे ज्यादा जरूरत है, उस समय आपकी रिहाई से मुझे हार्दिक प्रसन्नता है ।

....[२]

आपको नरेन्द्रदेव के स्वास्थ्य के बारे में पता चल गया होगा। उनमें सबसे बड़ा दोष यह है कि वह अपनी संभाल आप नहीं कर सकते और मुझे भय है कि अगर उनकी ठीक-ठीक देखभाल न की गई तो कहीं वह हमेशा के लिए रोगी न हो जायं । जिस चीज की उन्हें सबसे ज्यादा जरूरत है, वह दवाइयां नहीं, बल्कि किसी उचित जगह पर लंबा आराम है । यू. पी. या उत्तर भारत में कोई भी स्थान उनके लिए उपयुक्त नहीं होगा । महाराष्ट्र के कुछ जिले, जैसे सतारा, या उससे भी आगे दक्षिण में बेल्लारी, अनन्तपुर उनके लिए ठीक हो सकते हैं । गुजरात भी उनके लिए अनुकूल हो सकता है । उन्हींपर छोड़ा गया तो मुझे निश्चय है वह उत्तर प्रदेश में ही कहीं पड़े होंगे, या बहुत हुआ तो श्रीप्रकाश बनारस में उन्हें अपने सेवाश्रम में ले जा सकते हैं। जिसे हम संकोच कहते हैं, वह उन्हें अपने अनगिनत मित्रों में से किसीसे भी अपने लिए कुछ करने को कहने नहीं देता । इसलिए मैं आपको लिख रहा हूं कि आप इस मामले में खास रुचि लें और उन्हें किसी उपयुक्त स्थान के लिए लदवा ही दें। आप यह चीज उनकी इच्छा पर हर्गिज न छोड़ें। इस मामले में आप उनके साथ ऐसा ही व्यवहार करें, जैसा बच्चे के साथ किया जाता है । आप बापू से भी इसमें सलाह ले सकते हैं, क्योंकि वह नरेन्द्रदेव के स्वास्थ्य के बारे में गहरी दिलचस्पी रख रहे हैं ।

[१,२] यहां का कुछ भाग सेंसर ने काट दिया है।

मैं अब ठीक हूं और धीरे-धीरे ताकत आ रही है। सेठजी भी ठीक हैं और आपको अभिवादन भेज रहे हैं। गौतम मलेरिया में पड़ा है और अस्पताल में है। दूसरे सब मित्र मजे में हैं।

आपका,
जयप्रकाश

देवली नजरबंद कप
सेन्सर किया और मंजूर किया।
सुपरिंटेंडेंट

३२८. आर. अच्युतन् की ओर से

सेन्ट्रल जेल,
राजमुंद्री
८ दिसम्बर १९४१

प्रिय पंडितजी,

आपकी रिहाई की वेला में हम आपको अपनी बधाइयां और प्रेम भेजते हैं। इस प्रांत के हम सब नजरबन्द विद्यार्थी हैं और हमारे दिलों में आपको अपनी बधाइयां भेजने की तीव्र इच्छा है, क्योंकि आप हमेशा तरुणों के आदर्शों का प्रतिनिधित्व करते हैं। पंडितजी, हमारा प्रेम और आदर से भरा प्रणाम स्वीकार कीजिये। इस जेल से हम आपको सिर्फ यह पत्र ही भेज सकते हैं।

कितने उत्कट उत्साह के साथ हमने जल से छूटने के बाद के आपके वक्तव्य को पढ़ा। गहन राष्ट्रीय अंधकार और गिरती हुई संसदीय वृत्ति के बीच, जो राष्ट्रवादियों में भी बढ़ती दिखाई देती है, आपका स्वर ही एकमात्र स्पष्ट स्वर है। केवल आपकी और बापू की आवाज ही हमारे हृदयों में प्रतिध्वनित होती है और इन ईंट-पत्थरों के घेरे के बावजूद हमारे दिलों में तूफान मचा देती है।

हम प्रयत्न किये जा रहे हैं और हमारे हृदय में जो आदर्श हैं, वे हमें उत्फुल्लता देते हैं। हम आपके लिए पूरी शक्ति, साहस और दृष्टि की

कामना करते हैं, जिससे आप इस देश का अभीष्ट लक्ष्य की ओर नेतृत्व करें।

पंडित जवाहरलाल नेहरू, सादर आपका,
इलाहाबाद। आर. अच्युतन्

नोट—

सेन्सर यह ध्यान रखे कि यह कोई राजनैतिक पत्र नहीं है, लेकिन यह एक ऐसा पत्र है, जिसमें हमारे उस नेता का हार्दिक अभिवादन है, जिसे हम प्यार करते हैं, जिसका आदर करते हैं और जिसके प्रशंसक हैं।

सेन्सर किया ८।१२ आर. अच्युतन्

३२९. सरोजिनी नायडू की ओर से

हैदराबाद (दक्षिण),
९ दिसम्बर १९४१

मेरे प्यारे जवाहर,

जेल से तुम्हारा सुन्दर पत्र और उससे भी सुन्दर छूटने के बाद का तुम्हारा वक्तव्य मेरी अशांत आत्मा को बहुत ही प्रेरणाप्रद और आनंददायक लगा। मैं तुम्हें पहले नहीं लिख सकी, पर उम्मीद है, तुम्हें मेरा स्वागत का तार मिल गया होगा (क्या वह बड़े दिन की छुट्टियों के लिए है?)। मेरे जीवन में दुःख की वैसे ही कमी न थी, पर पिछले तीन महीने मैंने सबसे अधिक यातना के बिताये हैं; किंतु निजी दुःख और पीड़ा आखिर निजी और व्यक्तिगत ही हैं। यह काल उसके लिए और उसके साथ-साथ मेरे लिए तकलीफ का काल रहा है, जो सचमुच धीरे-धीरे तिल-तिलकर मौत की ओर बढ़ती रही है। फिर भी यह एक प्रकार से आध्यात्मिक विकास और प्रेरणा का काल भी रहा है—हम सबके लिए, संबंधियों तथा मित्रों के लिए, और उन अजनबियों के लिए भी, जिन्हें मृत्यु-शैया पर पड़ी बहादुर लड़की को थोड़ी देर के लिए भी देखने के लिए हमारे यहां आने का अवसर मिला है—उस लड़की को देखने का, जो कि अक्षरशः शव-मात्र रह गई है, और केवल कहने को ही जीवित है। आज मैं सोचती हूं, आशा करती हूं और प्रार्थना करती हूं कि उसकी इस तीव्र वेदना की मर्मभेदी

यात्रा का अंत आ गया है। वेवे उसका दुवला ठंडा हाथ पकड़े उसके पास बैठी है। बाबा उसके कष्ट को देखते रहने की व्यथा को न सह सकने के कारण वाहर बैठा है। मैं जो दिन-रात उसकी सेवा-सुश्रूषा करती रही हूं, तुम्हें पत्र लिख रही हूं, तुम्हें जिन्हें मैं इतना प्यार करती हूं, क्योंकि तुम्हें लिखने और उसकी अनुभूतिमात्र से ही मुझे सांत्वना मिलती है . . .मानव की आत्मा को शारीरिक कष्टों पर ऐसी सम्पूर्ण विजय प्राप्त करते मैंने पहले कभी नहीं देखा—मृत्यु की प्रक्रिया में ऐसी शालीनता और शिष्टता तथा साहस और सहनशीलता मैंने पहले कभी नहीं देखी। काश, तुम एवा से मिल पाते! अब भी अपनी तेज चलती हुई सांस पर काबू पाकर जब भी वह एकाध शब्द बोल पाती है, तो यही कहती है, "मैं चाहती हूं कि जवाहरलाल मुझे मिल पाते। वह कैसे हैं? तुम उन्हें लिखो तो उन्हें मेरा हाल-चाल पूछने के लिए धन्यवाद लिख देना।..."

शायद अध्यक्ष शीघ्र ही कार्यकारिणी और कांग्रेस महासभा की बैठकें बुलायेंगे। आशा है, मैं उनमें शामिल हो सकूंगी। महत्त्वपूर्ण समस्याओं के बारे में फैसला होना है, पर जैसा तुम जानते हो और मैं जानती हूं, फैसला केवल एक ही हो सकता है। कोई और फैसला न तो सच्चा ही होगा और न हमारे आदर्शों और देश के प्रति वफादारी का ही।

सप्रेम तुम्हारी,
सरोजिनी

२३०. फील्ड मार्शल ए. पी. वावेल की ओर से

कमाण्डर-इन-चीफ इन इंडिया
नई दिल्ली
२८ दिसम्बर १९४१

प्रिय महोदय,

हाल ही में जब मैं चुंगकिंग में था तो मैडम च्यांग काई-शेक ने मुझसे कहा था कि हिंदुस्तान लौटने पर मैं उनका अभिवादन आपको पहुंचा दूं। वह खूब स्वस्थ हैं और प्रफुल्लित दिखाई पड़ती हैं। मैं उनसे पहली बार ही मिला और बहुत ही प्रभावित हुआ।

आप कृपया इसे एक ऐसे निजी व्यक्ति की चिट्ठी ही समझें जिसने

आप तक यह सन्देश पहुंचाने का वचन दिया था। इसे हिंदुस्तान के सेनापति का पत्र न समझें।

आपका,
ए. पी. वावेल

३३१. जेड. ए. अहमद की ओर से

नजरबन्दी कैम्प,
देवली, राजपूताना
१० जनवरी १९४२

प्रिय पंडितजी,

जबसे आप जेल से छूटे हैं तबसे मैं आपको खत लिखने की सोच रहा हूं। लेकिन यह जानते हुए कि आप बहुत-से अहम मामलों में घिरे होंगे, मैं यह नहीं चाहता था कि आपको मिलनेवाले अनगिनत बेकार खतों में, जिसमें से ज्यादातर के जवाब देने की आप पूरी कोशिश करते हैं, अपना एक खत और बढ़ा दूं।

लेकिन आज जब मैं बिस्तर पर लेटा हुआ था, बीती हुई बातें मेरे दिमाग में चक्कर लगाने लगीं। मैंने यह महसूस किया कि पिछले पांच या छः बरसों में जो कुछ भी मैंने किया है उस सबके पीछे बुनियाद के तौर पर जो मुझे एक चीज दिखाई दी, वह थी आपके साथ मेरा गहरा ताल्लुक। मुझे यह महसूस करके एक खुशी-भरा अचरज हुआ कि आपने मेरे ऊपर कितना गहरा असर डाला है, न सिर्फ सियासी सवालों को सोचने के मेरे तरीके पर, बल्कि रोजमर्रा की जिंदगी में होनेवाली मामूली घटनाओं के बारे में मेरी प्रतिक्रियाओं पर भी। इस खयाल ने मुझे फौरन आपको खत लिखने के लिए बढ़ावा दिया, लेकिन मैं समझ नहीं पा रहा कि आपको लिखूं तो क्या लिखूं। और फिर इस कैम्प के कंटीले तारों के भीतर से मैं आपको लिख भी क्या सकता हूं! हमारा यह कैम्प राजपूताना के रेगिस्तान के बीचों-बीच है। यहां से नजदीक-से-नजदीक रेलवे स्टेशन भी कोई ७० मील दूर है। हम लोग इतने अलग हैं कि जिंदा मर्द-औरतों की बाहरी दुनिया और उसकी हलचलें और रफ्तार यह सब हम लोगों के लिए एक अधभूले ख्वाब की तरह हैं। मुझे बेहद खुशी है कि हम लोग अब यहां से अपने-अपने

सूबों को भेजे जा रहे हैं, क्योंकि सूबाई जेलों में हम कम-से-कम यह तो महसूस करेंगे कि हम लोग जिन्दा दुनिया के एक हिस्से हैं। यहां तो हमारी हालत जल्द ही खोई हुई कौम[1] की तरह हो जाती।

हाजरा यहां हर चन्द महीने के बाद आती है, लेकिन सफर इतना तकलीफदेह है कि अक्सर यहां आने से मैं उसे रोकता रहता हूं। सूबाई जेल में तो उससे ज्यादा मुलाकातें हो सकती हैं।

हमें अभी तक खबर नहीं मिली कि कब हमारा यहां से तबादला किया जायगा, न हमें अपनी अगली मंजिल का पता है। फिर भी मैं समझता हूं कि इस महीने के अखीर से पहले ही हम लोग यू. पी. की जेलों में से किसीमें होंगे।

मेरी सेहत काफी अच्छी है। भूख-हड़ताल के बाद के जो असर थे उनसे भी मैं पूरी तरह छुटकारा पा गया हूं।

मेहरबानी करके श्रीमती विजयलक्ष्मीजी, श्री पंडित और टण्डनजी को मेरी याद दिला दें, और दोस्तों और साथियों को, और खासतौर पर केशव और लालबहादुर को, मेरा सलाम कहें।

बहुत-बहुत प्यार के साथ,

आपका,

जेन

३३२. सैयद महमूद के नाम

इलाहाबाद

२ फरवरी १९४२

प्रिय महमूद,

आपका २५ जनवरी का खत मिला। मैंने हिन्दू-मुस्लिम मसले पर आपकी छोटी-सी किताब पढ़ ली। अच्छी लिखी गई है और अच्छी है। उसके कुछ हिस्से और कुछ नतीजे ऐसे हैं, जिनसे मैं पूरी तरह से एकराय नहीं हूं, लेकिन कुल मिलाकर मेरे खयाल से आपके नजरिये से इसमें मामले को बड़ी काबलियत से पेश किया गया है। जरूरी तौर पर मैं अलबत्ता उसे ज़रा

---

[1] यहां इशारा इजराइल की उस खोई कौम से है, जिसे असीरियनों ने गिरफ्तार करके मुल्क बदर कर दिया था।

दूसरे ही तरीके से लिखता, यानी मैं कुछ उन पहलुओं पर जोर देता जिनको आपने छुआ भी नहीं है। आपके विवरण में, कुछ हाल की घटनाएं और खास तौर पर दुनिया से ताल्लुक रखनेवाले कुछ पहलू, जिनका असर हिंदुस्तान पर पड़ता है, नजरंदाज हो गये हैं। मेरे खयाल से असल में जिन्ना और मुस्लिम लीग के रवैये में यह ख्वाहिश खास तौर पर है कि बुनियादी तब्दीलियां न होने दी जायं या हिंदुस्तान को लोकतंत्र न बनने दिया जाय, इसलिए नहीं कि उसमें हिन्दुओं की अक्सरियत है, बल्कि इसलिए कि बुनियादी तत्त्व सामन्ती हकों वगैरा का खात्मा कर देंगे। आपके खत में इसका इशारा है। संविधान-सभा का सारा खयाल यह है कि उन तत्त्वों और उनके जजबातों को आम जनता के सामने लाया जाय, जो फिरकेवाराना मसले या दूसरे मसलों को बीच के तबके के नजरिये से नहीं देखेंगे; क्योंकि इसी नजरिये ने यह रुकावट पैदा की है। खुद मुझे तो मसले का कोई हल दिखाई नहीं देता, चाहे हम कितनी ही कोशिश करें, जबतक कि तीसरी जमात (अंग्रेजों) को नहीं हटा दिया जाता। जरूरी तौर पर हम किसी हल के नजदीक तब पहुंचेंगे जब हम हालात से मजबूर होकर समझौता करेंगे। दूसरा रास्ता होगा बड़े पैमाने पर जद्दोजहद करना। यह तभी हो सकता है, जब यह साफ हो जाय कि दोनों में से कोई भी तबका अंग्रेजों की या और किसी परदेसी ताकत की मदद नहीं ले सकता।

कांग्रेस और मुस्लिम लीग दोनों के लिए (दूसरों के लिए भी) सही रास्ता यह होता कि सिर्फ एक बात को मंजूर कर लेते और बाकी सब फिरकों को, जिनमें आप चाहें तो पाकिस्तान भी शामिल किया जा सकता है, छोड़ दिया जाता। वह एक चीज यह है कि परदेसी ताकत और उनकी दखलंदाजी के खिलाफ सारी ताकतें एक हो जायं। एक बार यह परदेसी ताकत निकल जाती है तो हम अपने ही पैरों पर खड़े हो जाते हैं और या तो समझौता कर लेते हैं या लड़ लेते हैं। मुमकिन यही होगा कि तब हम लोग समझौता कर लेंगे; क्योंकि सचमुच की लड़ाई की बात किसी-को भी अच्छी नहीं लगेगी।

जिन्ना गाड़ी को घोड़े के आगे रख देते हैं। वह कहते हैं कि जबतक उनकी शर्तें न मानी जायं, कोई सियासी तरक्की नहीं हो सकती। मौजूदा

हालत में इसका मतलब है तरक्की को रोक देना। ठीक रास्ता यह कहना होगा: मैं पाकिस्तान और उसके साथ लगी हुई और सब बातों पर अटल हूं और उससे कम पर कभी संतोष नहीं करूंगा। लेकिन मैं दूसरे लोगों के साथ परदेसी ताकत को निकालने के काम में मिलने के लिए बिल्कुल तैयार हूं। जरूरी हुआ तो बाद में मैं अपने हकों के लिए लड़ लूंगा। यह साफ है कि वह मौजूदा हालात को बनाये रखना चाहते हैं और इस तरह उनकी हालत ऐसी हो जाती है कि उसका कोई बचाव नहीं हो सकता।

खुशकिस्मती से दुनिया बदल रही ह और हमारे कठिन-से-कठिन मसले एक मानी में घटनाओं से टकराकर अपने-आप हल हो रहे हैं। तह-जीवी नजरिया सही और मुनासिब तो ह, लेकिन उसमें वक्त लगता है और आजकल घटनाएं तेजी से हमें छोड़ती चली जाती हैं और अपने साथ बड़ी-बड़ी तब्दीलियां लाती हैं। मेरा खयाल है कि इन तब्दीलियों को देख लेंने में हमें बहुत अर्सा नहीं लगेगा।

मैं नहीं जानता, कांग्रेस वर्किंग कमिटी के मेम्बर की हैसियत से आपके लिए यह सुझाव देना कहांतक ठीक है कि जिन्ना और लीग के साथ आपके बताये हुए ढंग पर मेल किया जाय। इससे बेशक गड़बड़ और गलतफहमी पैदा होगी। क्या यह बेहतर नहीं होगा कि आप मौलाना आजाद से मशविरा कर लें? वह कल यहां आ रहे हैं और तीन-चार दिन ठहरेंगे। आप चाहें तो आपका टाइप किया हुआ मसाला उन्हें दे दूं।

आपका,
जवाहरलाल

३३३. महात्मा गांधी की ओर से

सेवाग्राम,
वर्धा, सी. पी.
४ मार्च १९४२

चि. जवाहरलाल,

तुम्हारा खत कल मिला। आशा है कि इस खत के अक्षर पढ़ने में मुश्किल नहीं होगी।

इंदू की शादी के बारे में मेरी तो पक्की राय है कि बाहर से किसीको न बुलाया जाय। इलाहाबाद में जो हैं उनमें से साक्षी के रूप में भले कुछ

लोगों को बुलाया जाय। लग्न पत्रिका दिल चाहे इतनी भेजो। सबसे आशीर्वाद मंगाओ। लेकिन पत्रिका में साफ लिखना कि खासकर किसीको आने की तकलीफ नहीं दी गई है। अगर एक को भी बुलावें तो किसीको छोड़ नहीं सकेंगे। इंदू इतनी सादगी तक जाना चाहती है या नहीं, यह सोचना होगा। तुम भी शायद इतनी सादगी तक जाना पसंद न करो तो मेरी राय फेंक देना। इंदु के बारे में तुम्हारा निवेदन मैंने देखा। अच्छा लगा। मेरे पर रोज खत आते हैं। कई तो बीभत्स हैं। सब फाड़ डाले। इन सबके उत्तर में मैंने एक टिप्पणी हरिजन के लिए भेजी है, उसकी नकल इसके साथ रखता हूं। टिप्पणी लिखी गई सोमवार को, कल से मुसलमानों के खत शुरू हुए हैं। उसमें हमले का मुद्दा सरूपवाला किस्सा है। ऐसा तो चलता ही रहेगा।

देशी राज्य के बारे में मैं हो सकेगा वह करूंगा। पैसे की कठिनाई बराबर पड़ेगी। जमनालालजी ने सब बोझ उठा लिया था। किस तरह, वह निश्चित नहीं हुआ था। अब मैं सोच रहा हूं कैसे पैसे पैदा किये जायं। अखबार के बारे में पट्टाभि से मशवरा कर रहा हूं। बलवंतराय नहीं आ सकेंगे। उससे बहुत फरक नहीं पड़ेगा। यहां से मदद मिलती रहेगी, यहां आओगे तब दूसरी बातें करेंगे। मेनन आज बम्बई जाते हैं—वहां का काम पूरा करने के लिए।

च्यांग काई शेक का बयान देखा था, अच्छा था। तुम्हारी इजाजत तो आई, लेकिन मैंने सोचा अब उस खत को प्रकाशित करने की आवश्यकता नहीं रही। बात पुरानी हो गई।

भागीरथी आ गई है, चंद्रसिंह को रखना कठिन तो है। बहुत तामसी है, जहन कमजोर है। थोड़ी-सी बात में लड़ बैठते हैं। किसीको पीटें तो मुझे आश्चर्य नहीं होगा। मेहनती तो हैं। देखता हूं। तुम चिंता मत करना। मेरे खत पढ़ने में कठिनाई आवे तो मैं और भी साफ अक्षर लिखने की कोशिश करूंगा। लेकिन हमारा धर्म है कि हम एक दूसरे को राष्ट्र-भाषा में लिखते ही जायं। कुछ अर्से में इस तरह लिखने में हम ज्यादा आसानी महसूस करेंगे। गरीबों को बहुत लाभ होगा।

बापू के आशीर्वाद

३३४. अबुल कलाम आज़ाद की ओर से

कलकत्ता
८ मार्च १९४२

प्रिय जवाहरलाल,

आपका दूसरा खत मिलने से पहले मैं आपके खत का जवाब दे चुका था। पहले मैंने सोचा था कि मैं दो या तीन दिन के लिए वर्धा जा सकता हूं, लेकिन बंगाल की नाजुक हालत ने मुझे रोक लिया। सत्याग्रह से ताल्लुक रखनेवाले कुछ पेचीदा सवाल भी थें, जिन्हें जाने से पहले हल करना जरूरी था। अब कांग्रेस की वर्किंग की कमेटी बैठक १७ तारीख को हो रही है। मैं ११ या १२ तारीख को वर्धा के लिए चलने का इरादा कर रहा हूं। अगर आप भी १७ तारीख से दो दिन पहले वर्धा पहुंच सकें तो फायदेमंद होगा। मैं तार से अपनी रवानगी की इत्तिला दूंगा।

बादशाह खान ने, वर्धा में जैसा वादा किया गया था, उसके मुताबिक बयान शाया करने के लिए मुझे कई खत लिखे। मामले के सब पहलुओं पर गौर करने के बाद मुझे यह कबूल करना पड़ता है कि उनकी ख्वाहिश पूरी करने के अलावा और कोई चारा नहीं था। इस लिहाज से अखबारों को एक बयान दे दिया गया है, जिसे शायद आपने देखा होगा। मैं नहीं जानता कि इस बीच उनके साथ आपकी खतो-किताबत हुई या नहीं।

चार या पांच दिन पहले बर्लिन से सुभाषबाबू का एक बयान रेडियो से ब्राडकास्ट हुआ था। दूसरे दिन इस बात का ऐलान किया गया कि यह बयान रिकार्ड कर लिया गया है और अब इसे सुभाषबाबू की ही आवाज में सुना जा सकता है। मैंने सुना था। वह सुभाषबाबू की आवाज में था। मेरे खयाल से शायद रिकार्ड नहीं था, बल्कि वह खुद बोल रहे थे। लेकिन तोकियो से उनका जो बयान ब्राडकास्ट हुआ वह वाकई रिकार्ड था। बिजली से रिकार्ड की चाल की आवाज साफ सुनाई पड़ रही थी।

यहां फारवर्ड ब्लॉक मिनिस्टर संतोष और बनर्जी बहुत परेशान हैं। वे कहते हैं कि फारवर्ड ब्लॉक से उनका बहुत दूर का भी ताल्लुक नहीं है।

आपका,
अ. क. आज़ाद

पंडित जवाहरलाल नेहरू,
इलाहाबाद।

३३५. मैडम च्यांग काई-शेक की ओर से

जनरलसिमो का सदर मुकाम,
चुंगकिंग, चीन,
१३ मार्च १९४२

प्रिय श्री नेहरू,

कुनमिंग होते हुए हमारे हिंदुस्तान से चीन लौटने के बाद जनरलसिमो ने सोमवार को पार्टी के सदर मुकाम में जो रिपोर्ट दी वह आपके पास भेज रही हूं। उस दिन, मैं समझती हूं, ९ मार्च थी। जनरलसिमो का भाषण समाचार-पत्रों में छपने के लिए नहीं भेजा जायगा, बल्कि उसे पर्चे की शक्ल में छपवाकर प्रान्तीय अध्यक्षों, सरकारी संस्थाओं इत्यादि के पास भेजा जायगा। उसका अंग्रेजी अनुवाद, जिसकी प्रति मैं आपके पास भेज रही हूं, तार द्वारा वाशिंगटन और लन्दन-स्थित दूतावासों में इस हिदायत के साथ भेजा जा रहा है कि स्वयं हमारे राजदूत उसे रूजवेल्ट और चर्चिल को दे आयें। जनरलसिमो और मैं दोनों ही यह अनुभव करते हैं कि इस बात का श्रेय हमारे हिंदुस्तानी मित्रों पर है कि हम सत्य को जैसा देखते हैं वैसा ही कहते हैं। फिर भी चूंकि हम ब्रिटिश सरकार के मेहमान थे, इसलिए नम्रता का तकाजा है कि हम उस सरकार के इस दावे की खुलकर आलोचना न करें कि हिंदुस्तान को असली शक्ति इसलिए नहीं दी जा सकती कि वहां के निवासियों में एकता की कमी है। मैंने आज के अखबारों में देखा है कि 'लन्दन क्रॉनिकल' ने तो इसे अपने पक्ष का एक पूरा तर्क बना लिया है। इसे पढ़कर मुझे बड़ा गुस्सा आया।

अखबारों से मुझे पता चलता है कि क्रिप्स बहुत-से प्रस्ताव लेकर हिंदुस्तान आ रहे हैं। इस यात्रा के बारे में जब 'रायटर्स' ने आपकी प्रतिक्रिया पूछी तब आपने जो तटस्थ उत्तर दिया, उसे भी मैंने पढ़ा है। मेरे प्रिय मित्र, कौन कहता है कि आप कूटनीतिज्ञ नहीं हैं ?

कुनमिंग पहुंचने के अगले दिन अर्थात २२ फरवरी को—जैसा कि मेरे रेकार्ड से मालूम होता है—मैंने आपको एक पत्र लिखा था। चूंकि मुझे उसका उत्तर नहीं मिला था, इसलिए मैंने कलकत्ता में चीन के कौंसल जनरल को तार देकर पूछा कि वह पत्र आप तक पहुंचा दिया गया या

नहीं और पहुंचाया गया तो कब ? उनके पास से अभी-अभी उत्तर आया है कि उन्हें वह पत्र ५ मार्च को मिला था और ६ मार्च को उन्होंने उसे विशेष दूत द्वारा आपके पास भेज दिया था। हे प्रभो, समझ में नहीं आता कि पत्रों के पहुंचने में इतनी देर क्यों लगती है ! पता नहीं, आपको यह पत्र मिलेगा या नहीं और मिलेगा तो कब ? इसे मैं एअरोनौटिकल कमीशन के जनरल माओ के जरिये भेज रही हूं और उन्हें मैंने हिदायत दी है कि वह स्वयं जाकर इसे कौंसल जनरल को दें और फौरन आप तक पहुंचाने को कहें। अभी कुछ ही क्षण हुए, मुझे मालम हुआ है कि जनरल माओ कलकत्ता जा रहे हैं।

यह पत्र मैं आपको हुयांगशान के उस मकान में बैठी हुई लिख रही हूं, जिसमें आप हमसे मिलने के लिए आये थे। आपको याद होगा कि यह मकान चुंगकिंग से नदी के पार दक्षिणी तट पर बना हुआ है। यहां हम कल रात थोड़े एकान्त में रहने के लिए आये हैं। जबसे हम स्वदेश लौटे हैं, काम और लोगों का आना-जाना बहुत बढ़ गया है। शहर में तो सब जगह मनुष्यों की हलचल-ही-हलचल का अनुभव होता है, हवा में, गलियों में यहांतक कि अपने पढ़ने के कमरे के एकान्त में भी। विचारों की अदृश्य लहरें एक-दूसरे से बार-बार टकराकर चित्त की शान्ति को भंग करती हैं और उनकी इस अस्थिरता से कोई बचाव नहीं है। मैं समझती हूं कि सार्वजनिक रूप से अभिव्यक्त होनेवाले इस तथ्य का कोई-न-कोई आत्मिक स्पष्टीकरण अवश्य होगा। जो हो, यहां पहाड़ियों के बीच अतिशय जनसंख्या के दम घोंटनेवाले वातावरण से राहत महसूस होती है। मैं हिंदुस्तान को प्यार करती हूं, किन्तु दिल्ली में सफेद मकानों की चमक ने मुझे करीब-करीब अन्धा बना दिया था। यहां चुंगकिंग में हमेशा कुहरा ही छाया रहता है। पहाड़ों के क्षितिज पर चारों ओर से आये हुए धुंधले कुहरे में सुकोमलता और करुणा का अनुभव होता है और जो लोग चमकदार धूप के अभ्यासी नहीं हैं उन्हें पहाड़ियों के पास सब्जियों के हरे-भरे खेत (याद है न आपको) बड़े प्रिय मालूम देते हैं। आपको याद होगा कि हिंदुस्तान में जब कभी मैं घर से बाहर निकलती थी तभी मेरे सिर में कितना जबर्दस्त दर्द होने लगता था। फिर भी मुझे इस यात्रा में बड़ा आनन्द आया और मैं इसे

किसी भी कीमत पर खोना पसन्द नहीं कर सकती थी।

मैं अपने सेक्रटरी को टेलीफोन करके व्यर्थ ही इस बात की चेष्टा कर रही हूं कि वह कुछ ऐसी चीजें तैयार करा दे जिन्हें मैं जनरल माओ के द्वारा नैन के लिए भेज सकूं। अगर मुझे सफलता मिल गई तब तो ठीक है, नहीं तो नैन से कह दीजियेगा कि मैं ये चीजें उसके पास अगले दूत के द्वारा भेजूंगी। मिस चाऊ शायद आनन्द मनाने गई हैं (अगर चुंग-किंग के खंडहरों में यह सम्भव हो तो!)

मेरे पत्रों के डिब्बे में संयोगवश क्रिप्स का एक पत्र है, जो उन्होंने ५ मार्च को मेरे घर लौटने के फौरन बाद भेजा था। मैं उसे आपके पास यह बताने के लिए भेज रही हूं कि जब आप जेल में थे तब हमें आपके लिए कितनी तीव्र अनुभूति होती थी। लेकिन इसके बिना भी आपको हमारी भावना का अनुमान होना ही चाहिए।

जनरलसिमो हिंदुस्तान की स्थिति के बारे में रूजवेल्ट को तार देते रहे हैं। उनके पास से जो ताजा समाचार मिला है नह यह है कि रूजवेल्ट ने शान्ति-सम्मेलन के पास तार भेजा है कि १. हिंदुस्तान का प्रतिनिधि कांग्रेस द्वारा चुना जाना चाहिए और वह सचमुच ही राष्ट्रीय हिंदुस्तान का प्रतिनिधि होना चाहिए, २. उनका यह विचार है कि हिन्दुस्तान की समस्या का हल शायद हिंदुस्तान को हिन्दू और मुस्लिम दो हिस्सों में बांटने पर मिल जाय। मैंने और जनरलसिमो ने भी मेरे भाई टी. वी. को तार दिया है कि दूसरी बात बिल्कुल गलत है और उसपर एक क्षण के लिए भी विचार नहीं किया जाना चाहिए। हिंदुस्तान भी उतना ही अविभाज्य है, जितना चीन। वहां के लोगों में धार्मिक मतभेद होने का यह मतलब नहीं है कि अगर उन्हें अपने मतभेदों को बिना किसी तीसरे दल के हस्तक्षेप या सहायता के दूर करने का अवसर दिया जाय तो वे आपस में सहमत नहीं हो सकते।

जनरलसिमो मुझसे कह रहे हैं कि मैं लिखना बन्द कर दूं, क्योंकि जनरल मेगरूडर रूजवेल्ट का संदेश लेकर परामर्श करने आये हैं। मुझे एक क्षण के लिए भी समय नहीं मिलता कि मैं आपको दिल खोलकर पत्र लिख सकूं। सदा ही मुश्किल काम लगे रहते हैं और मैं कुछ असम्बद्ध,

निष्कर्ष-विहीन बातें घसीटकर ही रह जाती हूं। लेकिन मुझसे बहुत झुंझलायं नहीं। मेरे पास सूत्रबद्ध होकर सोचने के लिए वक्त नहीं रहा है और शायद इससे कोई अन्तर भी नहीं पड़ता, क्योंकि निश्चय ही मैं गांधी-जी की तरह कोई ऐसी कार्य-प्रणाली सोचने की प्रेरणा नहीं दे सकती जो 'कठोर चिन्तन' मात्र से ग्रहण योग्य बन जाय।

मेरे दोस्त, 'आवारा' को—सलाम।

मे. सु. च्यां.

३३६. सर स्टैफर्ड क्रिप्स की ओर से

३, क्वीन विक्टोरिया रोड,

व्यक्तिगत और निजी नई दिल्ली

अप्रैल १९४२

प्रिय जवाहरलाल,

मुझे इजाजत दीजिये कि मैं आपसे अन्तिम वार अपील करूं। आपपर ही निश्चय का भारी बोझ है—एक ऐसा निश्चय, जिसका हम दोनों के राष्ट्रों के संबंधों पर वड़ा गहरा प्रभाव पड़ेगा, इतना गहरा कि उसकी कल्पना तक अद्भुत है।

मैं अपने क्षेत्र में और आप अपने में अपने-अपने देश की जनता को मैत्री तथा सहयोग की ओर ले चल सकते हैं और जरूर ले चलेंगे।

जो अवसर आज है, वह कभी नहीं आयेगा। इसके असफल होने पर दूसरी युक्तियां सामने आयेंगी तो अवश्य, किन्तु दोनों देशों की जनता की मित्रता को मजबूत बनाने का इतना अच्छा अवसर फिर कभी न आयेगा।

केवल योग्य नेतृत्व ही—ऐसा जैसा कि आपका है—सफलता प्राप्त कर सकता है। यही वह क्षण है जब एक महान नेता को उन सारे खतरों और कठिनाइयों का, जो कि मैं जानता हूं, सामना करने में अद्वितीय साहस दिखलाते हुए वांछित ध्येय तक पहुंचना है।

मैं आपके गुणों और आपकी क्षमता को जानता हूं और मैं आपसे अनु-रोध करता हूं कि अव आप उनको प्रयोग में लायें।

आपका,

स्टैफर्ड

३३७. फ्रैंकलिन डी. रूजवेल्ट के नाम

नई दिल्ली
१२ अप्रैल १९४२

प्रिय राष्ट्रपति महोदय,

मैं आपको लिखने की हिम्मत कर रहा हूं, क्योंकि मुझे मालूम है कि हिंदुस्तान की मौजूदा हालत में और युद्ध पर उसकी प्रतिक्रियाओं में आपकी गहरी दिलचस्पी है। ब्रिटिश सरकार और हिंदुस्तानी जनता के बीच समझौता कराने में सर स्टैफर्ड क्रिप्स के मिशन की नाकामयावी से आपको जरूर दुःख हुआ होगा, जैसा कि हमें भी हुआ है। आप जानते हैं कि हमने हिंदुस्तान की आजादी के लिए लम्बे अर्से से जद्दोजहद की है; लेकिन मौजूदा खतरे से हमारी सब वातों से ज्यादा इस वात की इच्छा हुई कि हमें हमलावरों के खिलाफ वास्तविक राष्ट्रीय और लोकप्रिय प्रतिकार संगठित करने का अवसर दिया जाना चाहिए। हमें पूरा यकीन था कि ऐसा करने का सही तरीका हम लोगों को आजादी देना और हमसे उसकी रक्षा करने के लिए कहना होता। इससे लाखों दिलों में एक चिनगारी पैदा हो जाती, जिससे प्रतिकार की ऐसी जवरदस्त आग उठती, जिसका कोई भी हमलावर कामयावी से मुकाबला नहीं कर सकता था।

जैसा हम चाहते थे वैसा न होता और लड़ाई के काम के लिए यह जरूरी न समझा जाता तो कम-से-कम चीज, जिसे हम वहुत जरूरी समझते हैं, यह थी कि आज एक सच्ची राष्ट्रीय सरकार बना दी जाय और उसे लोकप्रिय वुनियाद पर प्रतिकार संगठित करने के लिए सत्ता और जिम्मेदारी सौंप दी जाय। वदकिस्मती से ब्रिटिश सरकार ने इसे भी ठीक या मुनासिब नहीं समझा। इन वातचीतों में, जो वदकिस्मती से फिलहाल नाकामयाव रहीं, क्या-क्या हुआ, उसका ब्यौरा बताकर मैं आपको तकलीफ देना नहीं चाहता। वेशक आपके प्रतिनिधियों ने यहां से आपको सब खबरें दी होंगी। मैं इतना ही कहना चाहता हूं कि हिंदुस्तान की एकता के लिए भरसक कोशिश करने और आजादी और लोकतंत्र के वड़े काम के साथ संबद्ध होने के लिए हम कितने चिन्तित और उत्सुक थे और अब भी हैं। हमारे लिए यह दुःखद घटना है कि इस मामले में हम जिस ढंग से और जितनी मात्रा में करना

चाहते हैं उतना नहीं कर सकते। अपन देश की रक्षा में हर चीज की बाजी लगा देने को, अपनी पूरी ताकत और प्राणशक्ति के साथ लड़ने को और आक्रमणकारी को हटाने और स्वदेश के लिए आजादी हासिल करने के लिए किसी भी कीमत और किसी भी बलिदान को नाचीज समझने की हमारी इच्छा थी।

हमारे मौजूदा जरिये सीमित हो सकते हैं, क्योंकि हिंदुस्तान में ब्रिटिश सरकार ने पहले भी जो नीति अख्तियार की उससे हमारे देश का उद्योगीकरण रुक गया। हम बिना हथियार की प्रजा हैं। लेकिन हमारी युद्ध-शक्ति बहुत बड़ी है, हमारी जनशक्ति विशाल है और चीन की तरह हमारे बड़े-बड़े प्रदेशों से हमें मदद मिलती है। पूंजी और मजदूरी के सहयोग से हमारा उत्पादन बहुत तेज किया जा सकता है। लेकिन इस सारी युद्ध-शक्ति का उपयोग पूरी तरह तभी किया जा सकता है जब देश की सरकार का जनता के साथ गहरा संबंध हो और वह उसकी नुमाइन्दा हो। जिस सरकार का जनता से कोई संबंध न हो उसे जनता की तरफ से सहयोग नहीं मिल सकता, जो बड़ा जरूरी है; कोई परदेसी सरकार तो वह सहयोग प्राप्त कर ही नहीं सकती, क्योंकि जरूरी तौर से उसे कोई पसन्द नहीं करता और उसका कोई भरोसा नहीं करता। खतरे ने हमें घेर रखा है और कहीं हमला न हो जाय, इस डर की छाया से और उसके बाद होनेवाली भयंकरता से, जैसी कि चीन में जापानी हमले के बाद हुई थी, हमारा नजदीकी भविष्य अंधेरे से भर गया है। सर स्टैफर्ड क्रिप्स के मिशन की नाकामयाबी ने हालात की मुश्किलों को और भी बढ़ा दिया है और हमारे लोगों पर उसका उल्टा असर पड़ा है। लेकिन मुश्किलें कुछ भी हों, हम उनका सामना अपनी पूरी हिम्मत और प्रतिकार के संकल्प के साथ करेंगे। भले ही हमारी पसन्द का रास्ता हमारे लिए बन्द कर दिया जाय और हम हिंदुस्तान के ब्रिटिश अधिकारियों की प्रवृत्तियों के साथ ही अपना संबंध न रख सकें, फिर भी हम जापानी या और किसी हमले के सामने न झुकने की पूरी कोशिश करेंगे। हमने आजादी के लिए और एक पुराने हमले के खिलाफ इतने अर्से तक लड़ाई लड़ी है, इसलिए हमें किसी नये हमलावर के सामने सिर झुका देने से मरना ज्यादा पसंद होगा।

हम कई बार ऐलान कर चुके हैं कि हमारी हमदर्दी फासिज्म के खिलाफ और लोकतंत्र तथा आजादी के हक में लड़नेवाली ताकतों के साथ हैं। हमारे अपने देश में आजादी होती तो हम इस हमदर्दी को सक्रिय क्रियाशीलता के रूप में बदल सकते थे।

जिस महान देश के आप सम्मानित अध्यक्ष हैं उसे हम अभिवादन और सफलता के लिए शुभकामनाएं भेजते हैं। और राष्ट्रपति महोदय, आपपर तो सारी दुनिया में स्वतंत्रता के हक में नेतृत्व के लिए लाखों की आंखें लगी हुई हैं, इसलिए हम आपको विश्वास दिलाते हैं कि आपके प्रति हमारा बहुत आदर और लिहाज है।

आपका,
जवाहरलाल

राष्ट्रपति फ्रैंकलिन रूजवेल्ट,
वाशिंगटन,
संयुक्त राज्य अमरीका

३३८. महात्मा गांधी की ओर से

सेवाग्राम,
वर्धा; सी. पी.,
१५ अप्रैल १९४२

चि. जवाहरलाल,

प्रोफेसर यहां आये हैं। उनसे सब सुना। तुम्हारा प्रेस इन्टरव्यू भी सुना। मैं देखता हूं कि हमारे विचारों में तो भेद था ही, लेकिन अब अमल में हो रहा है। इस हालत में वल्लभभाई वगैरा क्या करें? तुम्हारी नीति को स्वीकार किया जाय तो कमिटी जैसी आज है ऐसे नहीं रहनी चाहिए।

ज्यों-ज्यों मैं सोचता हूं, मुझे लगता है कि तुम कुछ गलती कर रहे हो। अमरीकी लश्कर, चीनी लश्कर हिंदुस्तान में आवे और हम गुरिल्ला लड़ाई में पड़ें, इसमें मैं कुछ भी भला नहीं पाता हूं।

मेरा धर्म है, मैं तुम्हें सावधान करूं।

इंदु-फिरोज ठीक होंगी।

बापू के आशीर्वाद

मैंने कल सुना कि उत्कल में फारवर्ड ब्लाकवाले हथियारबंद हैं और कम्युनिस्ट गुरिल्ला लड़ाई के लिए। सत्य कितना है, मैं नहीं जानता।

३३९. तुआन-शेंग चिएन की ओर से

नेशनल पेकिंग यूनीवर्सिटी,
कुनमिंग, चीन
१८ अप्रैल १९४२

प्रिय पंडित,

इस पत्र को लिखने की धृष्टता के लिए क्षमा चाहता हूं। आपको शायद उस व्यक्ति की याद होगी जो एक शाम, जब आप अगस्त सन् १९४१ में कुनमिंग के उस बेढंगे होटल डू लैक में ठहरे हुए थे, सबसे अधिक बोलता रहा था और मैं समझता हूं कि सबसे ज्यादा उसीने सीखा भी था। वही आदमी अब आपको पत्र लिख रहा है। सच तो यह है कि अगर मुझे यह मालूम होता कि युद्ध के कारण आपको यहां की यात्रा को कम करना पड़ेगा और मैं आपसे फिर नहीं मिल सकूंगा तो उस शाम मैं आपसे और भी अधिक प्रश्न करता। उस समय मैं खुद पीपिल्स पोलिटिकल कौंसिल के अधिवेशन में भाग लेने के लिए चुंगकिंग जानेवाला था; लेकिन जब मैं वहां पहुंचा तब आप हिंदुस्तान के लिए रवाना हो चुके थे।

आपको पत्र लिखने का विचार मेरे मन में तबसे ही रहा है, लेकिन वह पूरा नहीं हो सका। इसका मुख्य कारण सेंसर का भय था। स्थिति अब पहले से कुछ भिन्न है और मुझे विश्वास है कि हमारे कौंसल जनरल आपके पास मेरा यह पत्र बिना किसी दुर्घटना के पहुंचवा सकेंगे।

अभी हाल में समझौते की बातचीत के भंग हो जाने से मुझे बड़ा दुःख हुआ है। अन्तिम विच्छेद की खबर मिलने से पहले मैंने प्रोफेसर लास्की को लिखा था—

"मैं सर स्टैफर्ड क्रिप्स की जीवनवृत्ति और हिंदुस्तानी स्थिति के विकास के समाचारों को बड़ी दिलचस्पी के साथ पढ़ता रहा हूं। एक तरह से दोनों एक-दूसरे से संबंधित हैं। भारतीय समस्या का संतोषजनक हल अवश्य निकलना चाहिए और सर स्टैफर्ड से बढ़कर इसके लिए कोई दूसरा माध्यम नहीं हो सकता। अगर ब्रिटेन इस युद्ध को सफलतापूर्वक पार कर लेना

चाहता है तो ब्रिटिश शासन में सर स्टैफर्ड को निश्चय ही एक महत्वपूर्ण हिस्सा मिलना चाहिए। सर स्टैफर्ड के प्रति ब्रिटेन के शासक दल में जो अरुचि की भावना है, उसे दूर करने का सबसे अच्छा तरीका यह है कि सर स्टैफर्ड एक बृहदाकार डरहम की भूमिका अदा करें। यह बात मुझे कुछ-कुछ मालूम थी कि कांग्रेस पूर्ण स्वतंत्रता पर जोर दे रही है; इसलिए ब्रिटिश प्रस्ताव को जिस रूप में सर स्टैफर्ड ने पहली बार सार्वजनिक रूप से घोषित किया था, उससे मुझे बड़ी निराशा हुई थी। मुझे ऐसा लगा था कि उसमें कांग्रेस और सर स्टैफर्ड दोनों के साथ अन्याय हुआ था। कांग्रेस के साथ इसलिए कि उसके कारण वह स्वतंत्र संयुक्त हिंदुस्तान प्राप्त करने से वंचित रह जाती; सर स्टैफर्ड के साथ इसलिए कि वह उनकी जीवनवृत्ति को, जो ब्रिटेन के साथ इतनी निकटता के साथ संबद्ध है, यदि बिल्कुल नष्ट-भ्रष्ट नहीं कर देता तो कम-से-कम उसमें बाधाएं अवश्य उत्पन्न कर देता। बाद के समाचारों से मुझे कुछ प्रसन्नता हुई है, लेकिन अब भी मेरा मन शंकाओं से मुक्त नहीं है। मुझे ब्रिटेन के अधिकारी-वर्ग के उस रुख से कोई हमदर्दी नहीं है जो 'रायटर' की टीका-टिप्पणी को पढ़कर बहुत ही आसानी से समझी जा सकती है। मैं अमरीकी प्रेस की टीका-टिप्पणी से भी सहमत नहीं हूं, क्योंकि वह ब्रिटिश द्वारा प्रेरित मालूम देती है। मुझे तो ऐसा लगता है कि मेरी अपनी सरकार भी संयुक्त रक्षा पर जोर देने की अपनी उत्कंठा में ब्रिटिश अधिकारियों के हाथ का खिलौना बन गई है। अगर बात ऐसी है तो मुझे उससे भी कोई सहानुभूति नहीं है। मुझे तो केवल यह आशा है कि सर स्टैफर्ड कांग्रेस की मांग के प्रति सदा सच्चे हृदय से सहानुभूति रखते आये हैं और यदि एक बार उन्होंने ब्रिटिश मंत्रिमंडल के प्रस्ताव का समर्थन किया भी था तो केवल इस निश्चित विश्वास के साथ कि कांग्रेस और भी अधिक के लिए दृढ़तापूर्वक हठ करेगी और वह उसकी मांगों को अंततः पूरी तरह से मनवाने का माध्यम बनने के लिए तैयार रहेंगे।"

समझौते के भंग होने के बाद आपने और सर स्टैफर्ड ने जो अनेक वक्तव्य दिये हैं उन्हें मैंने पढ़ा है और मुझे उन प्रस्तावनाओं पर आश्चर्य हुआ है, जो सर स्टैफर्ड के तर्कों की तह में दिखाई देती हैं। पहली तो यह कि अंग्रेज हिंदुस्तान की बहुमत की इच्छा का आदर करने से कहीं अधिक

अल्पसंख्यकों की इच्छा-पूर्ति में सहायता देना अपना नैतिक उत्तरदायित्व समझते हैं। दूसरी यह कि अंग्रेजों ने यह बात मान रखी है कि अल्पसंख्यकों के हितों का ध्यान रखने में कांग्रेस उतनी सचेष्ट नहीं है, जितने कि अंग्रेज। और तीसरी, जो समझौते के भंग होने का तात्कालिक कारण मालूम दी, यह है कि अंग्रेजों का यह भी खयाल है कि हिंदुस्तान का रक्षा मंत्री सेना के मामले में निश्चय ही इतना अधिक हस्तक्षेप करेगा कि उससे सेना के कुशल कार्य-संचालन में बाधा पड़ेगी। मुझे अधिक आश्चर्य इस कारण से है कि सर स्टैफर्ड एक सीधे-सच्चे स्वभाव के आदमी हैं और उन्हें हिंदुस्तान की स्वतंत्रता से सहानुभूति है। कहीं ऐसा तो नहीं कि जिस नई अन्तर्दृष्टि के बिना ग्रेट ब्रिटेन न युद्ध जीतने की आशा कर सकता है, न शान्ति पाने की ही, उससे ब्रिटिश सरकार अभी इतनी दूर है कि सर स्टैफर्ड के लिए अपनेको अनुदार बनाने की चेष्टा करना अनिवार्य हो गया है ताकि वह अपनी सरकार से इतने आगे न बढ़ जायं कि सन् १९३९ के जनवरी-फरवरी के अपने अनुभवों की पुनरावृत्ति कर दें ? इस प्रश्न का मेरे पास कोई उत्तर नहीं है। मैं तो केवल यह आशा करता हूं कि सबसे पहले सर स्टैफर्ड स्वयं कांग्रेस के विचारों से सहमत होने के लिए अवसर निकालेंगे और फिर अपने साथियों को इन विचारों को समझने के लिए प्रेरित करेंगे।

विवादग्रस्त मामलों के बारे में मैं अपनी सरकार के रुख को जानने का दावा नहीं करता। संभवतः वह संयुक्त रक्षा और संगठन को प्रधानता देने की आवश्यकता पर जोर देगी। साधारण रूप से चीनी लोगों में कांग्रेस-नेताओं की मर्यादा को पूरी तरह से समझने की प्रवृत्ति नहीं है। गांधीजी को लोग एक संत मानते हैं और आप एक पक्के देशभक्त समझे जाते हैं। किन्तु आप दोनों इससे कुछ अधिक भी हैं। आप लोग उसी अर्थ में राजनीतिज्ञ भी हैं, जिस अर्थ में अब्राहम लिंकन वास्तव में थे और आपको एक बड़े जनसमूह का नेतृत्व करना है। यह एक ऐसी चीज है, जिसे चीनी लोग हिंदुस्तानियों से कम राजनैतिक होने के कारण बहुत कम समझ पाते हैं।

मैं अपने देश की स्थिति से भी प्रसन्न नहीं हूं—न राजनैतिक स्थिति से, न आर्थिक स्थिति से। इनके बारे में आपको मैं किसी अगले पत्र में लिखूंगा,

जबकि मुझे आपके पास तक उस पत्र के पहुंचने का निश्चय हो जायगा।

इसलिए मेरे लिए कोई ऐसी बात कहना, जो उपदेश-जैसी मालूम हो, स्वयं में एक बहुत ही अनर्गल बात होगी। फिर भी आप मुझे क्षमा करेंगे यदि मैं यह आशा करूं कि हिंदुस्तानी नागरिक रक्षा का काम ऐसी ही भावना के साथ करेंगे मानो वे स्वयं अपने शासक थे। ऐसा करने में न केवल वे एक भयानक शत्रु को मार भगाने में सहायक होंगे, बल्कि अपनेको अन्ततः प्रान्तीय और केन्द्रीय दोनों ही प्रकार के शासन की बागडोर संभालने के लिए तैयार करेंगे। मैं जानता हूं कि यह दिन बहुत दूर नहीं है।

सादर,

आपका,
तुआन-शेंग चिएन

पंडित जवाहरलाल नेहरू,
इलाहाबाद (हिंदुस्तान)

३४०. महात्मा गांधी की ओर से

वर्धा
२४ अप्रैल, १९४२

चि. जवाहरलाल,

मीराबहन ने मान लिया कि मुझे कुछ-न-कुछ कदम उठाना होगा, और उसे कुरबानी करनी होगी। मैं इलाहाबाद न जाऊं तो भी वह जाना चाहती थी। इसलिए मैंने उसे यहां बुला लिया। उसके साथ में अपने विचार प्रस्ताव के रूप में भेजता हूं। मौलानासाहब का आग्रह था कि मैं इलाहाबाद जाऊं। मैंने लाचारी बताई। इन दिनों में मुसाफिरी करना मेरे लिए कठिन बात है, इतना ही नहीं, लेकिन मैंने उसी अरसे में तीन मीटिंगें बुलाई हैं। इसलिए मैंने मौलाना से माफी मांग ली और लिखा कि मैं अपने विचार प्रस्ताव के रूप में भेजूंगा।

प्रस्ताव के समर्थन में दलील देने की आवश्यकता मैं नहीं समझता हूं। अगर मेरा प्रस्ताव आप लोगों को अच्छा न लगे तो मेरा आग्रह हो नहीं सकता है। हमारे लिए ऐसा मौका आया है कि हरेक को अपना मार्ग

सोच लेना है।

फेनी वगैरा में सल्तनत का बर्ताव ऐसा चल रहा है कि वह बरदाश्त के काबिल नहीं है। ऐसी सल्तनत बचकर भी क्या करेगी? और आज तो वह बचने की कोशिश कर रही है। मेरा विश्वास हो गया है कि सल्तनत उठ जाने से हम जापान के साथ अच्छी तरह से हिसाब कर सकते हैं। यह दूसरी बात है कि सल्तनत उठ जाने पर हम आपस में लड़-मरेंगे। भले ऐसा भी हो। हम थोड़े सल्तनत की मेहरबानी से आपस-आपस के झगड़ों से बचना चाहते हैं?

आचार्य नरेन्द्रदेव ने प्रस्ताव देखा है और पसंद किया है।

बापू के आशीर्वाद

३४१. लुई जॉनसन की ओर से

अमरीका के राष्ट्रपति के निजी
प्रतिनिधि का दफ्तर,
नई दिल्ली
१२ मई १९४२

प्रिय जवाहरलाल,

'दी बैकग्राउंड' को मैं बड़ी रुचि के साथ पढ़ता रहा हूं। पिछले हफ्ते-डेढ़ हफ्ते के बीच यह पहली पुस्तक है जिसे मैंने पढ़ा है। अस्पताल से मैं कल निकला था और उम्मीद करता हूं कि शुक्र या शनिवार के आसपास स्ट्रेटो-लाइनर के किसी जहाज से चल दूंगा—जो भी जहाज सबसे पहले मिले। मुझे इस बात की खुशी है कि छुट्टी पर जाने से पहले आपने मुझसे मिलने के लिए समय निकाला। भगवान करे कि आपकी ये छुट्टियां आनन्दप्रद, शान्तिदायक और पूरी तरह उपयोगी सिद्ध हों। मुझे उम्मीद है कि छुट्टियों से लौटने के बाद आप मेरे बारे में शीघ्र ही कोचीन भवन के जरिये कुछ समाचार पायेंगे।

आपके संसर्ग ने मेरी भारत-यात्रा को उपयोगी बना दिया है। जहांतक मेरा सवाल है, हम उन जहाजों की तरह नहीं होंगे, जो रात को चुपचाप गुजर जाते हैं। मुझे उम्मीद है कि आपके साथ मेरी सुखदायक मित्रता वर्षों तक बनी रहेगी।

मंगल-कामनाओं-सहित

आपका,
लुई जे.

पंडित जवाहरलाल नेहरू,
नागर (कुल्लू)

फिर से—

मैं 'रिवर ऑव किंग्स' को स्वदेश जाते समय रास्ते में पढ़ूंगा। इसके लिए मैं आपका कृतज्ञ हूं।

जर्मनी ने आज अपना आक्रमण शुरू कर दिया है। अब हम उस संकट की ओर जा रहे हैं, जो यह निश्चित करेगा कि युद्ध लम्बा होगा या छोटा।

आपका,
लुई

३४२. जी. अधिकारी की ओर से

३ मई १९४२

प्रिय पंडितजी,

ए. आई. सी. सी. के अधिवेशन के नतीजों पर कुछ विचार आपके सामने रखने की दृष्टि से मैं यह पत्र आपको लिख रहा हूं। आप मुझे उतनी अच्छी तरह नहीं जानते, जितनी अच्छी तरह मेरे दोस्त को, जो दिल्ली में क्रिप्स से बातचीत के समय आपसे मिले थे। पर उससे क्या!

इस ए. आई. सी. सी. के अधिवेशन के नतीजों के बारे में हमें बड़ा क्षोभ है। हमारा खयाल है कि इन नतीजों के कारण आज देश और जनता पहले की अपेक्षा अधिक बुरी हालत में हैं। मेरा अनुमान है कि इनसे आप भी बहुत ज्यादा खुश नहीं हैं। मैं गलत हो सकता हूं, पर मुख्य अधिकृत प्रस्ताव पर बोलते हुए आपने अपने उपसंहारात्मक भाषणों में जो कहा उससे मुझपर यही असर पड़ा। इस भाषण की लंबी और आत्म-निरीक्षण से भरी—अगर मुझे ऐसा कहने की अनुमति दें तो—भूमिका ने मुझपर यह असर डाला मालूम होता है कि आपने प्रस्ताव पर कुछ संशोधन पेश किये, जिनमें से कुछ स्वीकार कर लिये गए, कुछ ठुकरा दिये गए। युद्ध के दोनों पक्षों को एक ही स्तर पर समझनेवालों को आपकी फटकार अलबत्ता अच्छे

शब्दों में थी।

असल में यही खास बात है। प्रस्ताव निःसंदेह दोनों दुश्मनों के बीच पूरी तरह से तटस्थता की भावना से किया गया था और वास्तव में यह दोनों में तनिक भी भेद नहीं करता है। संशोधन चाहे कुछ भी थे, इस भावना में उनसे कोई अंतर नहीं पड़ता। क्रिप्स-मिशन की असफलता के फौरन बाद आपने अखबारवालों को दी गई अपनी शानदार भेंट में जो कहा, उससे इस प्रस्ताव की भावना काफी अलग है। यही वह चीज है, जिसने हमें बेचैन कर दिया है। यह इस नाजुक घड़ी में हर देशभक्त को बेचैन कर देगा।

आप खुद चाहे असंतुष्ट हों, लेकिन आप हमसे यही कहेंगे—अच्छा, और क्या किया जा सकता था ? आप लोग हमारी जनता की ब्रिटिश-विरोधी भावना को महसूस नहीं करते। नहीं साथी, हम निश्चित रूप से इसे महसूस करते हैं। यह प्रस्ताव और ए.आई.सी.सी. की सारी कार्यवाही ब्रिटिश-विरोधी भावना को और उभार देते हैं। इसका नतीजा क्या होगा ? साम्राज्यवाद-विरोधी भावना और बढ़ेगी, आजादी के लिए भावना और तीव्र होगी, आत्म-विश्वास में और वृद्धि होगी ? मुझे भय है कि यह कुछ नहीं होगा। ब्रिटिश-विरोधी भावना अपने साथ तटस्थता का रुख और अहिंसात्मक असहयोग की दृष्टि को लेकर, उस समय जबकि दुश्मन हमारे घरों के भीतर घुस आये हों, जापान-पक्षपाती भावना को और पराजय-वृत्ति को जन्म देगी।

इस नाजुक घड़ी में ए. आई. सी. सी. ने हमारी जनता को कोई मार्ग-दर्शन नहीं दिया। इसने उनको आशा और विश्वास का कोई संदेश नहीं दिया। उसने काम करने का कोई रास्ता नहीं दिखाया। फिलहाल इसने ब्रिटिश-विरोधी भावना का बुखार चढ़ा दिया। जब यह बुखार उतरेगा तब पराजय की वृत्ति और जापान-पक्षपाती भावना और ज्यादा हो जायगी। मौलाना ने उन लोगों का जिक्र किया, जो चुपचाप आक्रमणकारी का स्वागत करते हैं। यह भावना मध्यम-वर्ग के कांग्रेसजनों में व्यापक रूप से फैली हुई है। कांग्रेस की मौजूदा हालत में यह भावना बढ़ेगी और वह निश्चित रूप से हमारी जनता के दिल को चूर-चूर कर देगी तथा आक्रमणकारी के खिलाफ उनके हाथों को कमजोर कर देगी, यदि मैं बहुत ही दबे शब्दों में कहूं तो।

हमने राष्ट्रीय सरकार प्राप्त नहीं की। हमारे पास जनता को देने के लिए हथियार भी नहीं, जिससे वह सम्माननीय व्यक्तियों की तरह अपनी प्रतिरक्षा को संगठित कर ले और जो वास्तव में प्रभावशाली हो। यह सही है कि इसके लिए अंग्रेज जिम्मेदार हैं। परंतु जनता से यह कहना कि बस, यह इसका अंत है, अब हम राष्ट्रीय सरकार स्थापित नहीं कर सकते, हम अब हथियार नहीं जीत सकते, अब समय नहीं है, हमारे सामने सिवाय अपना अहिंसक जौहर करने के और कोई चारा नहीं है...विनाशकारी पराजय-भावना को बताना है। अंग्रेजों ने हमें राष्ट्रीय सरकार नहीं दी। उन्होंने हमें शस्त्रास्त्र नहीं दिये...इसलिए हम अपनी जनता से कहते हैं कि जो भी हथियार उसके पास हैं, उन्हें भी डाल दो। ब्रिटिश प्रभावशाली ढंग से हमें अपने देश की रक्षा नहीं करने देंगे। इसलिए हम उन्हें मजबूर करने की सारी कोशिशें भी छोड़ देते हैं और ज्यादा बेअसर ढंग से अपनी रक्षा करने का निश्चय करते हैं ...यह होगा नतीजा तटस्थता की अवस्था का, आक्रमणकारी के साथ अहिंसात्मक असहयोग का तथा जिस क्षेत्र में ब्रिटेन की फौजें लड़ रही हैं, उस क्षेत्र में कार्रवाई करने से इन्कारी करने आदि का। मुझे लगता है कि अपने चेहरे के प्रति घृणा दिखाने के लिए हम अपनी ही नाक काट रहे हैं।

कह नहीं सकता कि मैं अपने-आपको स्पष्ट कर सका हूं या नहीं। जो बात मैं कहना चाह रहा था वह यह है कि ए. आई. सी. सी. का प्रस्ताव आपके अखबारी बयान में अंगीकृत स्थिति से कोसों दूर है। ए. आई. सी. सी. में दिये गए भाषणों से हमें यह आभास मिल गया कि कांग्रेस के प्रांतीय नेता जनता के सामने प्रस्ताव की किस प्रकार व्याख्या करेंगे। इस भावना का एक अनोखा उदाहरण एक वक्ता का जापान को ब्रिटिश सरकार का दुश्मन (हमारा नहीं) बताना था। मुझे भय है कि यह किसी एक सदस्य के मुंह से योंही नहीं निकल गया। यह तो तटस्थता की भावना की पराकाष्ठा है। बहुत-से कांग्रेसी इसी ढंग से प्रस्ताव को समझेंगे और उसकी व्याख्या करेंगे। क्या ये गुट हमारे लोगों के दिल को फौलाद और बाजुओं को ताकतवर बना सकते हैं? नहीं, यह तो पराजय-वृत्ति का बीज बोने जा रहे हैं। आप तबतक दुश्मन के खिलाफ पूरी ताकत से नहीं लड़ सकते जबतक कि आप

उनसे पूरे दिल से नफरत करना न सीख लें। यह है मई-दिवस का संदेश, जो दो दिन पहले स्टालिन ने अपनी जनता को दिया था।

स्टालिन से हम यह सबक सीख सकते हैं, खासतौर पर इस समय। आज जिस चीज की हमको सबसे अधिक आवश्यकता है वह है देश के इस छोर से उस छोर तक प्रचार-आंदोलन—एक ऐसा आंदोलन, जिसके द्वारा जापानी हमलावरों और नाजियों के खिलाफ दहकती हुई घृणा का प्रचार किया जाय। कहा जाय कि ये वे लोग हैं, जिनकी हमारे देश पर आंख है और कि ये वे हमलावर हैं, जो हमारे देशवासियों को गुलाम बनाना चाहते हैं। आप पूछेंगे कि इसका क्या परिणाम होगा ? इसका परिणाम यह होगा कि यह जनता में राष्ट्र की सुरक्षा की भावना पैदा कर देगा। इससे पी. वी. वी. (पीपुल वालंटियर बटालियन) तथा दूसरी हलचलों को एक लक्ष्य और दिशा मिलेगी। पी. वी. वी. में आप देशभक्त नौजवानों का आवाहन करते हैं। उन्हें आप नागरिक प्रतिरक्षा तथा आपातकालीन सेना के लिए संगठित और अनुशासित कर रहे हैं। उनके अन्दर जापान-विरोधी भावना भर दीजिये और यह चेतना भी कि जब यह युद्ध हमारी भूमि पर लड़ा जायगा तो वास्तव में क्या दांव पर होगा—और कल ये मददगार दस्तों और छापामारों के आधार होंगे। मुझे विश्वास है कि अंग्रेजों के न देने पर भी हमलावर से लड़ने के लिए हमारे लोगों को हथियार मिल जायंगे। लेकिन जापान-विरोधी भावना से उनके दिलों को फौलाद बना दीजिये, जैसा कि चीन ने भी १९३७ से पहले किया था। उनमें तटस्थता का विष न भरिये। इससे पराजय-भावना पैदा होती है। हमारे बालक पी. वी. वी. में हैं। लेकिन प्रवृत्ति उन्हें उसमें से निकालने की है, सिर्फ इसलिए कि ये जापान-विरोधी आंदोलन चला रहे हैं, सिर्फ इसलिए कि वे कहते हैं कि यह हमारी लड़ाई है, हमारे देश की आजादी और रक्षा की लड़ाई। यह प्रस्ताव इस प्रवृत्ति को और तेज कर देगा।

इस अधिवेशन में जो दूसरे राजनैतिक विवाद खड़े हुए थे, उन्हें मैंने जान-बूझकर छोड़ दिया है। मेरा एकमात्र उद्देश्य प्रस्ताव के एक पहलू को आपके सामने रखना था, जैसा कि वह हमें नजर आता है। ऐसा मैंने इसलिए किया, क्योंकि मैं महसूस करता था कि इसका आपपर असर पड़ सकता ह

और आप शायद इसपर विचार-विनिमय करना जरूरी समझें कि प्रस्ताव के संभावित बुरे नतीजों को कैसे सुधारा जाय। इसके अलावा हम यह भी जानना चाहेंगे कि क्या कांग्रेस अपने उन सदस्यों को बाहर निकालनेवाली है, जो देश-भक्ति से पूर्ण जापान-विरोधी प्रचार करेंगे और जो जनता को समझाते जायंगे कि कौन-कौन से बड़े मसले दांव पर हैं। कुछ कार्यकर्त्ता, किसान और विद्यार्थी तटस्थता के खिलाफ जोरदार प्रचार करते जायंगे और पराजय-वृत्ति के विरुद्ध लड़ते जायंगे। क्या काम करनेवाले कांग्रेसियों को निकाल दिया जायगा ? ये प्रश्न हैं, जो उठते हैं। मेरा विचार है कि यह अनिवार्य है कि इस प्रस्ताव की तटस्थता के रूप में व्याख्या करने से रोका जाय। यह उन लोगों के लिए बेड़ी का काम न करे जो जनता में आत्मिक बल जगाने का, और जैसा कि चीनी लोग कहते हैं, हर प्राप्त उपाय से हमलावर के राष्ट्रीय प्रतिकार के लिए उन्हें एक जगह इकट्ठा करने का काम कर रहे हैं।

कितने ही मतभेद हों, एक बात के लिए हमें एक होना है—जनता में देश-भक्तिपूर्ण, जापान-विरोधी, हमलावर-विरोधी जागृति पैदा करने के लिए तथा किसी भी कीमत पर पुरुषार्थपूर्ण राष्ट्रीय प्रतिकार की भावना उसमें उत्पन्न करने के लिए। हमारी जनता, जो भी हथियार उसे मिलें, उन्हींसे, हमलावर का मुकाबला करेगी। इस प्रतिकार को करते हुए वह ब्रिटिश सेना से सहयोग करेगी। इससे उसकी शान घटेगी नहीं, बल्कि सैकड़ों-हजारों गुनी बढ़ेगी। अगर स्थिति ऐसी ही चलती रही, जैसी कि है, तो यह सिर्फ चंद जगहों पर होगा और इसे चंद दस्ते ही करेंगे, लेकिन इन मुट्ठी भर लोगों की कुरबानी ही हमारी उस निःशस्त्र अवस्था की शर्म को धो डालने में काफी काम कर दिखायेगी, जिसपर हम लंबे अरसे से जोर से रोते रहे हैं। आप कम्युनिस्टों को शायद पसंद न करें, जब वे भरती की बात करते हैं और उस युद्ध-प्रयत्न में भी सहकार करने की जो हमलावर पर चोट करता है और जनता की रक्षा करता है। लेकिन यह एक कम्युनिस्ट की ज्वलंत देशभक्ति है, जो उसे ऐसा करने को प्रेरित करती है। ब्रिटिश-विरोधी नेतृत्व और उसके साथ मिली तटस्थता का अर्थ होता है पराजय-वृत्ति और उससे भी ज्यादा पराजय-वृत्ति जनता में। यह वह जमीन नहीं है जिसमें हम

अपनी मातृभूमि की रक्षा करनेवाले देशभक्त पैदा कर सकें। यह ऐसी जमीन है, जिसपर दुश्मन—गुलाम बनानेवाला नया साम्राज्यवादी दुश्मन अपनी घिनौनी फसल उगायेगा।

इसलिए आपसे हमारी अपील है कि आप देखें कि फासिस्ट-पक्षपाती तत्व इस प्रस्ताव का नाजायज फायदा न उठायें, बल्कि इसे आपके अखबारी बयान की भावना से और छापामारों और 'झुलसी जमीन' वाले आपके बयान की रोशनी में पेश किया और अमल में लाया जाय।

लंबे और इधर-उधर की जरूरी और गैर-जरूरी बातों से भरे इस पत्र के लिए क्षमा करें। यह एक देशभक्त की ऐसे व्यक्ति को अपील है, जिसकी हमारे महान राष्ट्रीय संगठन में बेजोड़ जगह है और जो ए. आई. सी. सी. के प्रस्ताव से निकलनेवाले संभावित विनाशकारी नतीजों का इलाज करने में काफी-कुछ कर सकता है।

आपका,
जी. अधिकारी[1]

३४३. अबुल कलाम आज़ाद की ओर से

कलकत्ता
१३ मई १९४२

प्रिय जवाहरलाल,

दिल्ली से आपने जो तार और खत मुझे भेजा उसके लिए मैं आपका शुक्रिया अदा करता हूं। मेहरबानी करके गौर करें कि मैंने लिखा है— "मैं आपका शुक्रिया अदा करता हूं।" मैंने सिर्फ "शुक्रिया" नहीं लिखा। आपने दिल्ली में बताया था कि दोनों के मायनों में फर्क है। इस तरह इस लफ्ज के दो तरह से जाहिर करने में जो पेचीदा फर्क है उसको मैंने पूरी तरह निभाया है।

मुझे किदवई का खत मिला है। पालीवाल ने भी मुझे तार दिया है कि वे बच्चों को निकालने के मामले में तैयार हैं। मैं बंगाल सरकार के साथ तफसील तय कर रहा हूं। जैसे ही वह किसी पक्के नतीजे पर पहुंचे कि मैं यू. पी. के दोस्तों को इत्तिला दूंगा।

---

[1] जी. अधिकारी भारतीय साम्यवादी दल के प्रमुख सदस्य रहे हैं।

लेकिन आज ही मुझे पता चला कि किदवई कल डिफेंस ऑव इंडिया एक्ट के मातहत अचानक गिरफ्तार कर लिये गए हैं। मेरी समझ में नहीं आ रहा कि पिछले चन्द दिनों में उन्होंने ऐसा क्या किया है कि वह यू. पी. सरकार के लिए नये सिरे से एक खतरनाक आदमी बन गये!

मैंने अपने पिछले खत में आपको लिखा था कि मैं बम्बई जा रहा हूं, लेकिन बंगाल के मामलों ने मुझे इस तरह फंसा लिया है कि मुझे अपनी रवानगी मुल्तवी करनी पड़ी। चटगांव के ऊपर जो हवाई हमला हुआ है उससे यहां एक खयाल फैल गया है कि चन्द दिनों के अन्दर कलकत्ता पर भी हमला होगा। इसके अलावा समुद्र के किनारे-किनारे रहनेवाले बंगाल के जो लोग हैं उनके बारे में एकाएक नये और मुश्किल मसले खड़े हो गये हैं। ऐसी सूरतों में मैं यहां से बाहर जाने के लिए तैयार नहीं हो सका।

मुझे यह देखकर तकलीफ होती है कि इफ्तिखार सही रास्ते से भटक रहा है। मुझे नहीं मालूम कि आपने उसे रास्ते पर लाने की कोशिश की या नहीं और अगर की तो उसके क्या नतीजे हुए।

कुल्लू में आप जितने ज्यादा दिन ठहरेंगे, मुझे उतनी ही खुशी होगी। जब मैंने इलाहाबाद में आपको थकान से मुरझाया हुआ पाया तो मुझे बहुत फिक्र हो गई थी। आपको यह मंजूर करना चाहिए कि अब आपने पचास बरस पार कर लिये हैं और आपको अपनी तन्दुरुस्ती के बारे में कुछ ज्यादा अहतियात रखना चाहिए।

आपका,

अ. क. आजाद

३४४. क्लेयर बूथ लूस की ओर से

ग्रीनविच, नेक्टिकट

४ जून १९४२

प्रिय जवाहरलाल नेहरू,

मुझे एक कहानी याद है। वह मेरे एक मित्र ने मुझे सुनाई थी, जो पहले महायुद्ध के एक कूटनीतिज्ञ थे। उन्होंने बताया कि वारसाई संधि के कुछ साल बाद वह पेदरेवस्की के साथ खाना खा रहे थे और उनसे कह उठे—"शीशोंवाले बड़े कमरे में यूरोप को बांटनेवाले पतलूनधारी महानुभावों ने यूरोप

के विश्वासी स्वभाव के राष्ट्रों पर जो बहुत-से प्रादेशिक अन्याय किये थे उनको ध्यान में रखते हुए, जनावमन, यह सचमुच बड़े मार्के की बात है कि पोलैंड जैसा राष्ट्र एक इतने बड़े स्वतंत्र और वैभवशाली देश के रूप में विकसित हुआ। युद्ध के दिनों में आप जब वाशिंगटन में थे तब आपने किस तर्क से मिस्टर विल्सन को पोलैण्ड इरेडेन्टा की आवश्यकता का विश्वास दिलाया था?" जैसा कि मेरे मित्र ने बताया, इसपर उस महान पोलैण्ड-निवासी ने उत्तर दिया—"यह सच है कि मैं कई मौकों पर व्हाइट हाउस में गया, किन्तु मैंने शायद ही कभी मिस्टर विल्सन से राजनीति की बातें की हों। सच तो यह है कि वहां मैं इसलिए जाता था कि वह मेरा पियानो सुनना पसन्द करते थे।"

यह कहानी निश्चय ही सन्देहजनक है। तब फिर मैं इसकी चर्चा क्यों कर रही हूं? इसलिए कि तब (जैसा कि अब है) और अब भी (जैसा कि तब था) वाशिंगटन और व्हाइट हाउस राष्ट्रों के प्रारब्ध का निर्णय कर रहे हैं (सदा यह मानकर कि जीत हमारी होगी—और मैं भी ऐसा ही सोचती हूं।) और तबकी तरह अब भी महान व्यक्तियों की रहस्यपूर्ण टक्कर से वह चिनगारी उत्पन्न होगी, जो प्रकाश करके राष्ट्रों को उनकी स्वतंत्रता का मार्ग दिखायेगी या ऐसी ज्वालाएं भड़का देगी, जो एक शताब्दी तक भड़कती रहेंगी।

यदि यहां आने का कोई अनुकूल अवसर आपके सामने आये तो आप-को शायद इन्कार नहीं करना चाहिए। मुझे विश्वास है कि हिंदुस्तान, इग्लैंड और अमरीका में ऐसे बहुत-से लोग हैं जिन्हें यदि एक साथ एक जगह विचार-विनिमय के लिए बुलाया जाय तो वे हिन्दुस्तान के प्रश्न का ऐसा हल निकाल लेंगे, जिससे आपके लिए, ग्रेट ब्रिटेन के लिए और हमारे लिए भी भविष्य में उत्तम जीवन बिताने में आसानी होगी। इनमें से दो आदमी तो निश्चय ही पंडित नेहरू और राष्ट्रपति रूजवेल्ट हैं। मैं नहीं जानती कि आप एक-दूसरे को पसन्द करेंगे या नहीं। पसन्द करने के लिए जानना जरूरी है, लेकिन आप लोग एक ऐसी भाषा में परस्पर बातचीत कर सकेंगे जो १९वीं शताब्दी की भाषा नहीं है। हमारे राष्ट्रपति ने अक्सर समझने में बहुत बड़ी-बड़ी भूलें की हैं (यह जानते हुए भी कि मेरी बात कितनी

अनुचित लग रही होगी, मैं इसे कहे जा रही हूं।) लेकिन वह सदा ही ठीक रास्ते पर चले हैं। अगर कभी उन्होंने सड़क पर चलने में भूल की भी है तो वह सदा ठीक सड़क पर ही रहे हैं। और यही आखिरकार सबसे महत्वपूर्ण बात है। मुझे विश्वास है कि आप दोनों एक-दूसरे को मोहित करने में चूकेंगे नहीं और बुनियादी समस्याओं पर बुद्धिमत्ता के साथ विचार-विनिमय करेंगे, जोकि सचमुच बहुत जरूरी है। लेकिन छोड़िये, कोई कुछ भी कहे, जबतक स्वयं आपको ऐसा करना बुद्धिमत्तापूर्ण नहीं मालूम होगा तबतक आप यहां आयेंगे नहीं और आपको यह बुद्धिमत्तापूर्ण तबतक नहीं मालूम होगा, जबतक हमारे राष्ट्रपति को ऐसा न मालूम हो।

इस सप्ताह और आज सवेरे हिंदुस्तान से जो खबरें आई हैं, वे बेहतर हैं। मेरा मतलब बड़े-बड़े रक्षक बेड़ों के आगमन से है; लेकिन मैं अनुमान नहीं लगा पा रही हूं कि इस सबका क्या मतलब हो सकता है, न यही समझ पा रही हूं कि चटगांव में जापानियों की जो स्थिति है उसका हिंदुस्तान के भीतर और बाहर क्या प्रभाव पड़नेवाला है।

सुखपूर्वक रहिये, इस प्रकार के अवांछित परामर्श और सुझाव देने के लिए क्षमा कीजिये। मैं फिर बेचैन होती जा रही हूं और आस्ट्रेलिया जाने की सोच रही हूं।

अभिवादन-सहित,

क्लेयर लूस

३४५. एस. एच. शेन की ओर से

नई दिल्ली

१६ जून १९४२

प्रिय पंडित नेहरू,

मुझे डाक्टर मेनन से आपका १४ जून का पत्र मिला, जिसके साथ आपने जनरलसिमो के नाम लिखा गया महात्मा गांधी का एक पत्र उनके पास पहुंचाने के लिए भेजा है।

मैंने इस पत्र को और मैडम च्यांग के नाम लिखे गए आपके खत को भी बर्मा में हमारे आक्रमणकारी दस्ते के जनरल लोत्सो यिन को सौंप दिया है। वह जनरलसिमो से चुंगकिंग में मिलने के लिए कल नई दिल्ली से जाने-

वाले हैं। मैंने यह संदेश तार से भी सांकेतिक भाषा में भेज दिया है और उसे जनरलसिमो तक पहुंचने में अधिक देर नहीं लगनी चाहिए।

इस बीच मैंने अपनेको महात्मा गांधी के पत्र के विवरण से परिचित कराने का अवसर पा लिया है और मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि जो कोई भी इस पत्र को खुले और पूर्वाग्रहरहित मस्तिष्क से पढ़ेगा वह या तो हिंदुस्तान को फौरन स्वतंत्रता देने की उनकी अकाट्य दलील से आश्वस्त हुए बिना नहीं रहेगा या उनके इस सद्भावनापूर्ण संकल्प की प्रशंसा किये बिना नहीं रहेगा कि वह कोई भी ऐसा काम नहीं करेंगे, जिससे चीन को नुकसान पहुंचे या जिससे किसी प्रकार भी हिंदुस्तान या चीन में जापानी आक्रमण को प्रोत्साहन मिले। आपके मस्तिष्क में जिस आन्दोलन की कल्पना है उसे अगर ईमानदारी और सचाई से चलाया जाय तो निश्चय ही उसे तमाम चीनी जनता की सहानुभूति और नैतिक समर्थन प्राप्त होगा और मुझे पूरी उम्मीद है कि उसके सिर पर सफलता का वह सेहरा बंधेगा, जिसका वह अधिकारी है यानी हिंदुस्तान की जो स्वतंत्रता न्यायपूर्वक और निर्विवाद रूप से आपकी है वह आपको मिलकर रहेगी। मैं आपके फिर से नई दिल्ली आने की प्रतीक्षा में हूं जबकि मैं इन रोमांचकारी और महत्त्वपूर्ण दिनों की बहुत-सी समस्याओं के बारे में आपसे जानकारी पाने का आनंद प्राप्त करूंगा।

आपका,
एस. एच. शेन

पंडित जवाहरलाल नेहरू,
बम्बई।

३४६. लैम्पटन बेरी के नाम

२३ जून १९४२

प्रिय श्री बेरी,

कर्नल जॉन्सन का संदेश देनेवाले २० जून के आपके खत के लिए धन्यवाद। मैंने संदेश का स्वागत किया। मैंने श्री वेल्स के भाषण को भी दिलचस्पी के साथ पढ़ा है। मुझे यह जानकर बहुत खुशी हुई कि कर्नल जॉन्सन की सेहत काफी सुधर रही है। उम्मीद है, वह जल्दी ही चंगे और अच्छे हो जायंगे। उम्मीद है, आप उन्हें मेरा प्रेमपूर्ण अभिवादन पहुंचा देंगे

और बता देंगे कि मैं उनके बारे में अक्सर सोचता हूं।

मैं बिल्कुल समझ सकता हूं कि गांधीजी के हाल के कुछ बयानों से अमरीका में गलतफहमी हुई है। शायद उनके बाद के बयानों से इस गलतफहमी के साफ होने में मदद मिली है। एक बात पक्की है : गांधीजी अपनी ताकत के मुताबिक सबकुछ करना चाहते हैं, जिससे हिंदुस्तान पर जापान का हमला और कब्जा न हो सके। वह देश के लोगों को प्रतिकार करने के लिए, न कि झुक जाने के लिए, जगाना चाहते हैं। उन्हें इस बात से तक़लीफ हुई है कि हिंदुस्तान में ब्रिटिश पालिसी बिल्कुल उल्टे नतीजे ला रही है और लोगों को इतना ज्यादा विरोधी बना रही है कि उनके मन में यह भावना पदा हो रही है कि मौजूदा हालत से तो कोई भी तब्दीली, चाहे वह कितनी ही खराब हो, अच्छी होगी। यह भयानक और हानिकारक वृत्ति है, जिसे वह मिटाना चाहते हैं।

मलाया और बर्मा के बाद हिंदुस्तान में यह यकीन फैल गया है कि जहांतक हिंदुस्तान में ब्रिटिश सरकार का ताल्लुक है, जापानी हमले का, खास तौर पर बंगाल में, प्रतिकार करने की न कोई गंभीर इच्छा है, न ताकत। बंगाल में अधिकारियों ने अपने अफसरों के नाम जो गोपनीय सरक्यूलर निकाले हैं उनमें देश खाली करने के तरीकों की पूरी चर्चा है। और यह भी चर्चा है कि बड़े अफसरों को अपने मातहतों के हाथ में अधिकार सौंपकर किस तरह चले जाना चाहिए। इन मातहतों को सचमुच यह कहा गया कि दुश्मन की आज्ञाओं के अनुसार वे अपना मामूली काम-काज करते रहें, क्योंकि यह अन्तर्राष्ट्रीय कानून के अनुसार मालूम होता था। ऐसी हिदायतों से प्रतिकार को प्रोत्साहन नहीं मिलता। यह तो असल में हार की भावना है। लगभग दो महीने हुए मद्रास सरकार ने जिस तरह का व्यवहार किया वह भी गैर-मामूली था। हमले की संभावना की अफवाह पर वे लोग भाग गये। (बाद में वह अफवाह झूठी निकली)।

अगर बाद में किसी वक्त डटकर मुकाबला करने का इरादा है तो भी सिर्फ इसी बात का कि बंगाल का पतन हो गया है हिन्दुस्तान भर में दूर तक असर डालनेवाले नतीजे होंगे। यह बहुत मुमकिन है कि सेना के इकट्ठे होने की बात तो दूर रही, बहुत-से देहाती इलाकों में असैनिक शासन

धीरे-धीरे खत्म हो जाय। इसका भी जरूरी तौर से फौजी हालात पर असर पड़ेगा और वह कमजोर होगी।

मुझे पता नहीं कि कहांतक अमरीकी विमानों और दूसरी किस्म की मदद ने हालत को बदला है। लेकिन दरअसल हालत जैसी दो महीने पहले थी, उससे बहुत जुदी नहीं हो सकती। कोई हिंदुस्तानी इन लक्षणों को शान्त होकर नहीं देख सकता। इसका नतीजा यह होगा कि देश के महत्वपूर्ण भागों पर जापान का अधिकार हो जायगा और बहुत-से दूसरे भागों में अव्यवस्था बढ़ जायगी। फिर भी हमारा खयाल है कि इसे रोका जा सकता है। खालिस फौजी अर्थ में हम निकट भविष्य में बहुत-कुछ नहीं कर सकते और कार्रवाइयां हिंदुस्तान में मित्र राष्ट्रों की सेना पर मुनहसिर रहेगी। लेकिन हिंदुस्तानी आजादी को मंजूर कर लेने और यहां राष्ट्रीय सरकार कायम हो जाने से वातावरण में बिजली दौड़ जायगी और दुनिया में बड़ा फर्क हो जायगा। अगर बदकिस्मती से जापानी देश के कुछ हिस्सों पर कब्जा कर लें तो भी बाकी के भाग बैठ नहीं जायंगे, बल्कि चीन की तरह हमला जारी रखेंगे। निष्क्रिय होकर भाग्य के भरोसे बैठे रहने के बजाय सक्रिय विरोध और प्रतिकार किया जायगा। इसलिए मित्रराष्ट्रों की सेना की मदद से और चीन को मदद देने के लिए भी हिंदुस्तान की रक्षा के लिए हिंदुस्तान की आजादी की बड़ी अहमियत हो जाती है। इसलिए आज के मसले का विचार इसी बात को खयाल में रखकर करना पड़ेगा।

हममें से उन लोगों के लिए, जिन्हें कुछ जिम्मेदारी उठानी पड़ती है, व्यक्तिगत रूप में काम करना काफी नहीं है। हमें दूसरों से भी सही दिशा में काम कराना पड़ता है। और आम तौर पर लोकमत को प्रभावित करना पड़ता है। मैं यह कोशिश करता रहा हूं। मैं किसी भी हालत में यह नहीं चाहता कि हिंदुस्तान किसी हमले के आगे झुके। मैं उसका सक्रिय और लगातार प्रतिकार चाहता हूं। लेकिन अगर इसे कुछ भी कारगर बनाना हो तो हिंदुस्तान में ब्रिटिश सरकार के बजाय स्वतंत्र राष्ट्रीय सरकार कायम करनी होगी। इससे फौजी कार्रवाइयों या हिफाजत की व्यवस्था में कोई खलल नहीं पड़ेगा।

अपने पिछले खत में मैंने आपको बताया था कि चीनी प्रधान सेनापति

के नाम की गांधीजी की चिट्ठी २१ जून को 'हरिजन' में निकलेगी। करीब-करीब अन्तिम क्षण हमें संदेशा मिला कि सेनापति चाहते हैं कि उसे छापना रोक दिया जाय। हमने ऐसा ही कर तो दिया, लेकिन इसके लिए १० हजार प्रतियां नष्ट कर देनी पड़ीं।

आपका,
जवाहरलाल नेहरू

श्री लैम्पटन बेरी,
संयुक्तराज्य अमरीका के राष्ट्रपति के निजी प्रतिनिधि
का कार्यालय, नई दिल्ली।

३४७. एस. एच. शेन की ओर से

नई दिल्ली
२५ जून १९४२

प्रिय पंडित नेहरू,

श्री रघुनन्दन शरण लखनऊ जानेवाले हैं और इस अवसर से लाभ उठाकर मैं उन्हें यह पत्र आपके २३ जून के पत्र के उत्तर में दे रहा हूं, जो कि मुझे अभी-अभी प्राप्त हुआ है।

जैसा कि मैंने डाक्टर मेनन के द्वारा भेजे गये अपने पिछले पत्र में लिखा था, मैं आपके पुनः दिल्ली आने की राह देख रहा हूं जबकि मुझे आपसे आजकल की बहुत-सी महत्त्वपूर्ण समस्याओं के बारे में जानकारी प्राप्त करने का अवसर मिलेगा। किन्तु मेरी यह इच्छा कदापि नहीं है कि मैं आपको दिल्ली आने के लिए किसी ऐसे समय में निमंत्रित करूं जबकि दिल्ली से बाहर हो रही आवश्यक सभाओं के कारण आपका वहां से आना उचित नहीं होगा। इस प्रकार का निमंत्रण विवेकहीन और अदूरदर्शितापूर्ण होगा। श्रीमती नेहरू ने आपके पास मेरा जो सन्देश पहुंचाया ह, वह निश्चय ही किसी और कारण से नहीं, बल्कि भ्रमवश पहुंचाया गया है। इससे बचने के लिए मैं भविष्य में केवल अपने हस्ताक्षरों सहित निजी पत्रों द्वारा ही सूचना भेजा करूंगा। मुझे विश्वास है कि इस व्यवस्था से आप सहमत होंगे।

मुझे यह जानकर दुःख हुआ है कि जनरलिसिमो को लिखे गये महात्मा

गांधी के पत्र के न छाप सकने के कारण 'हरिजन' के अंक के प्रकाशन में असुविधा तथा देर हुई। जहांतक मेरा सवाल है, मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि मैंने उस पत्र की वातों को जनरलसिमो के पास तार द्वारा पहुंचाने में जरा भी देर नहीं की और जनरलसिमो ने भी उसे न छापने की प्रार्थना भेजने में उतनी ही तत्परता दिखाई। जो हो, अव जवकि वह पत्र छपने से रोक दिया गया है, मैं आपको जनरलसिमो की प्रार्थना को स्वीकार करने के लिए धन्यवाद देता हूं। मुझे उम्मीद है कि इस मामले में आप द्वारा की गई सहायता को वह भी पसन्द करेंगे।

वर्धा में कांग्रेस कार्यकारिणी की आगामी वैठक में मैं आपके लिए सौभाग्य की कामना करता हूं और मुझे उम्मीद है कि यदि समय मिल सका तो आप इस महत्त्वपूर्ण सभा के महत्त्वपूर्ण निर्णयों के वारे में मुझे कुछ पंक्तियां लिखने की कृपा करेंगे।

आपका,
एस. एच. शेन

पंडित जवाहरलाल नेहरू,
लखनऊ

३४८. मैडम च्यांग काई-शेक की ओर से

जनरलसिमो का सदर मुकाम, चीन,
चुंगकिंग, जेचुआन,
२६ जून १९४२

यह पत्र आपको गोपनीय सूचना के लिए है।
पत्र-संख्या ८

प्रिय श्री नेहरू,

आपका पत्र-संख्या ९, जो कि वास्तव में पत्र-संख्या १० है, मुझे मिल गया है। मुझे अफसोस है कि मैं इससे पहले उत्तर न दे सकी। किन्तु आवश्यक समस्याओं ने, जिनपर फौरन ध्यान देने की जरूरत थी, मुझे करीब-करीब पागल बना दिया है और वह भी ऐसे समय में जब मैं बिल्कुल भी स्वस्थ नहीं हूं। कुछ समय के लिए मैं जनरलसिमो के साथ चुंगकिंग से बाहर चेंगटू चली गई थी और वहां से अभी-अभी लौटी हूं। मेरी इन सारी समस्याओं

और बीमारी के बावजूद मुझे सदा आपका और हिंदुस्तान का ध्यान रहा है।

जब जनरलसिमो को गांधीजी का पत्र मिला तब उन्होंने फौरन वाशिंगटन तार भेजा और इस बात पर जोर दिया कि अमरीका और चीन को मिलकर काम करना चाहिए। जनरलसिमो अब गांधीजी के पत्र का उत्तर दे रहे हैं, किन्तु वह चाहते हैं कि मैं आपको यह बात समझा दूं कि वाशिंगटन के साथ उनके पत्र-व्यवहार का परिणाम जबतक निश्चित रूप से न मालूम हो जाय तबतक कुछ भी नहीं किया जाना चाहिए। इसका मतलब यह है कि निश्चित सूचना मिले बिना इस समय गांधीजी या कांग्रेस द्वारा किसी भी आन्दोलन का प्रारंभ किया जाना नितान्त अनुचित होगा।

इस बारे में अभी तो जनरलसिमो कुछ नहीं कह सकते, लेकिन जैसे ही उन्हें कोई निश्चित सूचना मिलेगी, वह आपको फौरन लिखेंगे। एक बार प्रारंभ कर देने के बाद कोई भी आन्दोलन बिना घातक परिणामों के बन्द नहीं किया जा सकता। हिंदुस्तान के लिए जनरलसिमो जो कुछ भी कर सकते हैं, कर रहे हैं। तार इधर-से-उधर भेजे जा रहे हैं, चीन से वाशिंगटन और वाशिंगटन से चीन को और हम शायद वाशिंगटन में श्री चर्चिल की उपस्थिति का फायदा उठा सकें।

इस बीच विश्वास रखिये कि जनरलसिमो और मेरे दोनों के हृदय में हिंदुस्तान के लिए जो कुछ भी किया जा सकता है करने की हार्दिक इच्छा है और यदि कोई सफल निकल सकता है तो हमारी किसी चेष्टा की कमी के कारण उसमें विलम्ब नहीं होने पायेगा।

सद्भावनाओं-सहित,

सस्नेह आपकी,
मेलिंग सुंग च्यांग

फिर से—

मैं जानती हूं कि गांधीजी ने जो कुछ भी लिखा है उस सीमा तक वचन देने के लिए उन्हें तैयार करने में आपको कितनी चेष्टा करनी पड़ी होगी; क्योंकि आपको याद होगा कि जब हम उनसे कलकत्ता में मिले थे तब जापान के संभावित आक्रमण के प्रति उनका सारा दृष्टिकोण अहिंसा और असहयोग का था। उनका अब यह कहना कि हिंदुस्तान द्वारा

जापान के विरोध को वह ठीक समझते हैं, निश्चय ही एक बहुत बड़ा आगे का कदम है।

मुझे अभी यह नहीं मालूम कि मैं अमरीका कब जा सकूंगी। अभी मुझे यहां की बातों पर ध्यान देना है और इसके अलावा पुराने गैस्ट्रिक फोड़े के बार-बार उभर आने के कारण मुझे ऐसा नहीं लगता कि मैं गर्मियां बर्दाश्त कर सकूंगी और कौन जाने पतझड़ के आते-आते आज का हवाई रास्ता ही बन्द हो जाय, जोकि यदि मिस्र तोब्रुक की ओर बढ़ा तो होकर रहेगा। उस हालत में मैं समझती हूं कि मुझे रूस के रास्ते जाना पड़ेगा; लेकिन आप तो जानते ही हैं कि यदि सम्भव हो सका तो मैं हिंदुस्तान के रास्ते जाना चाहती हूं, ताकि मैं आपकी एक झलक ले सकूं।

शुभकामनाओं सहित,

आपकी,

मे. सु. च्यां.

श्री जवाहरलाल नेहरू, हिंदुस्तान

३४९. एस. एच. शेन की ओर से

नई दिल्ली

८ जुलाई १९४२

प्रिय पंडित नेहरू,

मुझे जनरलसिमो का निम्नलिखित तार (चीनी भाषा में) मिला है—

"कृपा करके पंडित नेहरू के जरिए महात्मा गांधी को सूचित कर दीजिये कि अमरीका से रवाना होने से पहले लार्ड हेलीफैक्स ने, जो अब छुट्टी पर इंगलैंड गए हुए हैं, मेरे वार्शिगटन-स्थित प्रतिनिधि को बताया था कि भारतीय समस्या को सुलझाने के लिए वह अपनी सरकार के सामने कुछ ठोस सुझाव रखेंगे और मेरे प्रतिनिधि को स्थिति की सूचना देते रहेंगे। निजी तौर पर मेरी अपनी राय यह है कि लीबिया में संयुक्त राष्ट्र को अभी हाल में ही जिस पराजय का सामना करना पड़ा है उसको निगाह में रखते हुए कांग्रेस के लिए यही अच्छा होगा कि वह अधिक-से-अधिक सहिष्णुता से काम ले, कोई उग्र कार्रवाई न करे और संयुक्त राष्ट्रों के समान हित से संबंध रखनेवाले किसी भी सैनिक आंदोलन में बाधा डालने से अपनेको अलग रखे, जिससे कि हिंदुस्तान के प्रति उन देशों की सहानुभूति बढ़ जाय

और भारतीय समस्या का हल आसान हो जाय।—च्यांग काई-शेक"

बड़ी ही कृपा हो यदि आप इस तार को मेरे अभिवादनसहित महात्मा गांधी के सामने रख दें, जिनसे मिलने का सौभाग्य मुझे नवम्बर १९४० में प्राप्त हुआ था।

इस अवसर पर मैं आपकी आजकल हो रही बैठक में सफलता की कामना करता हूं।

आपका,
एस. एच. शेन

पंडित जवाहरलाल नेहरू,
वर्धा

३५०. लैम्पटन बैरी की ओर से

अमरीका के राष्ट्रपति के निजी प्रतिनिधि
का दफ्तर,
नई दिल्ली
४ अगस्त १९४२

प्रिय पंडित नेहरू,

मैं आपके पास कर्नल जॉनसन का हवाई डाक से आया हुआ एक पत्र फौरन भेज रहा हूं, जो अभी-अभी सुरक्षित हाथों से मेरे पास पहुंचा है।

मुझे उम्मीद है कि आपको मेरा यह सन्देश मिल गया है कि अमरीकी समाचारपत्रों की जो भी टीका-टिप्पणियां मेरे पास हैं, वे सब स्थानीय पत्रों में छप चुकी हैं। जहांतक मैं निश्चित रूप से मालूम कर सका हूं, ये टिप्पणियां अमरीकी समाचारपत्रों की सर्वसम्मत प्रतिक्रिया का प्रतिनिधित्व करती हैं।

उम्मीद है कि ऐन मौके पर कोई-न-कोई ऐसी बात अवश्य होगी, जिससे आन्दोलन को आरम्भ करने की आवश्यकता से बचा जा सकेगा। मुझे विश्वास है, आप भी यही चाहते हैं कि आन्दोलन की आवश्यकता न पड़े।

आपका,
लैम्पटन बेरी

पंडित जवाहरलाल नेहरू
बम्बई

फिर से—

इस पत्र के वाहक को इसमें लिखी गई बातों की जानकारी नहीं है।

एल. बी.

३५१. क्लेयर बूथ लूस की ओर से

[यह पत्र मूलतः श्री वेन्डल विल्की को सौंपा गया था। उस समय मैं अहमदनगर किले की जेल में था। बहुत समय बाद यह पत्र मेरे पास निम्न-लिखित टिप्पणी के साथ भेजा गया—

"२ नवम्बर १९४२। यह पत्र एक बार सारे संसार की सैर कर चुका है। इसे श्रीमती लूस ने श्री विल्की को तब दिया था जब वह अमरीका से रवाना हुए थे। अब यह आपके पास श्री कू की कृपा से पहुंचाया जा रहा है।]

ग्रीनविच, कोनेक्टिकट
२५ अगस्त १९४२

प्रिय जवाहरलाल नेहरू,

यदि यह पत्र महान सन्देशवाहक श्री वेन्डल विल्की द्वारा, जिन्हें यह सौंपा गया है, अन्ततः आपके हाथों तक पहुंचा दिया जाता है, तो सचमुच ही विश्वास किया जा सकता है कि हम युद्ध को जीतने जा रहे हैं। इस पत्र का वेन्डल विल्की द्वारा हिंदुस्तान में पहुंचा दिया जाना हमारे लिए, संयुक्त राष्ट्र के लिए और आप हिंदुस्तानियों के लिए, एक बड़े महत्त्व की बात होगी। इसका मतलब यह होगा कि हमारे युद्ध-लक्ष्य के बारे में सत्य की खोज अन्ततः आरम्भ हो गई है, क्योंकि श्री विल्की अपने व्यक्तित्व, अपने मस्तिष्क और अपने हृदय द्वारा एक अल्पसंख्यक पार्टी के राजनैतिक लक्ष्यों का नहीं, बल्कि अमरीकी जनता के बहुमत की सत्यतम महत्त्वाकांक्षाओं और आदर्शों का प्रतिनिधित्व करते हैं।

मुझे कई सूत्रों से मालूम हुआ है कि अमरीका की तथा अमरीका के वास्तविक युद्ध-उद्देश्य की सच्ची जानकारी अपने असली रूप में आज हिंदु-स्तान में कितनी कम पहुंच पाती है। इसी तरह हमें भी यहाँ हिंदुस्तान

की स्थिति की सच्ची जानकारी नहीं मिल पाती। हमारे और संसार की १/५वीं जनसंख्या के बीच सेंसर की कठोर और दुःखदायी दीवार खड़ी हो जाने से यह स्वाभाविक है कि दोनों ओर अज्ञान, घृणा तथा गलतफहमी की वृद्धि हो। श्री विल्की की उपस्थिति उस दीवार में पहली बड़ी दरार होगी। उसके जरिये सत्य की लहरें अन्ततः फूट निकलेंगी। लेकिन जबतक वह आपसे मुंह-दर-मुंह और एकान्त में बातें नहीं कर सकेंगे तबतक उनका वहां जाना एक दूसरा भ्रम-मात्र होगा। हममें से बहुतों को यह बात मालूम है कि सारे एशिया में प्रजातंत्र तथा संयुक्त राष्ट्र के हितों के आप ही सबसे बड़े और सबसे सच्चे मित्र हैं। किन्तु आपमें से कितनों को पता है कि इधर पश्चिम में इनके (प्रजातंत्र तथा संयुक्त राष्ट्र के हितों के) सबसे बड़े और सबसे सच्चे मित्र श्री विल्की हैं ? निश्चय ही आप दोनों का मिलन फलदायक होगा। केवल सनकी लोग इसमें शंका करेंगे। मुझे कोई शंका नहीं है।

और अब वह अपने बमवर्षक वायुयान में अपनी लम्बी यात्रा पर रवाना हो रहे हैं। अगर यह पत्र आपके पास पहुंचा भी तो कई महीनों के बाद पहुंच पायेगा। मैं हार्दिक प्रार्थना करती हूं कि यह पत्र आपको सकुशल और स्वस्थ पाये।

इस पत्र में जो आशा भरी हुई है वह शब्दों द्वारा व्यक्त की जा सकनेवाली किसी भी आशा से इतनी अधिक बड़ी है कि मैं उसे शब्दों में बांधने की चेष्टा करते समय अपनेको अज्ञानी और अयोग्य समझ रही हूं। आप तो जानते ही हैं कि सद्भावनापूर्ण स्त्री-पुरुष सभी जगह हैं—अमरीका में, हिंदुस्तान और ग्रेट ब्रिटेन में भी—और वे सभी इस बात की चेष्टा कर रहे हैं कि आपस में मिल-जुलकर युद्ध और शान्ति पर विजय पा सकें।

जल्दी में और गहरे आदरसहित,

आपकी,

क्लेयर बूथ लूस

३५२. आसफ़ अली की ओर से

[भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की वर्किंग कमेटी के मेंबर अगस्त सन् १९४२ में गिरफ्तार किये गए और अहमदनगर किले की जेल में २८ मार्च सन् १९४५ तक एक साथ रखे गये। उसके बाद उन्हें धीरे-धीरे अलग

करके अपने-अपने सूबों में भेज दिया गया। २८ मार्च को मुझे और नरेन्द्रदेव को यू. पी. में एक के बाद दूसरे कई जेलों में भेजा गया। दूसरे लोग अहमदनगर किले से अप्रैल में बाद की तारीखों में गये। आसफ अली को पंजाब की एक जेल में भेजा गया, जहां से उन्होंने नीचे लिखी चिट्ठी भेजी। अपने इस खत में उन्होंने मेरे अहमदनगर किले की जेल से चलने का हवाला दिया है।]

सब-जेल,
गुरुदासपुर (पंजाब)
३० अप्रैल १९४५

प्यारे जवाहर,

तुम्हारी रवानगी मेरे और मौलाना के लिए जुदाई का एक बहुत बड़ा सदमा थी। दूसरे दिन सुबह हम लोगों ने तुम्हारी जुदाई को महसूस किया। जब मेरी रवानगी का वक्त आया तो मौलाना के चेहरे पर उदासी छा गई।

मेरे पास इतनी खबरें हैं कि दिल में समा नहीं रही हैं, और जो सिफर की हद तक अहम हैं। सिफर से मेरा मतलब उस रूहानी सिफर से है, जिससे सारे लोग पैदा होते हैं यानी खुदावंद ताला से। खबरें ये हैं :

१. बोतल में तुमने जो 'लिआना' की बेल लगाई थी उसे मय उसकी हवाई जड़ों और सूखी पत्तियों के मैंने अपनी उदार वसीयत के तौर पर माली-चौकीदार पिराजी के पास छोड़ दिया। वह आखिरी वक्त तक सचमुच बड़ी भलमनसाहत के साथ पेश आया। जब मरचेण्ट मेरी रवानगी के वक्त मुझे रुखसत करने आया तो मैं उस जिम्मेवरी से भी बरी हो गया जो तुमने मेरे सुपुर्द की थी। शाखों के गमलों (?) में जो गुलाब के पौधे थे उन्हें मैंने मरचेण्ट के सुपुर्द कर दिया और उसे कह दिया कि वह उनका जो चाहे करे। अखीर में सन्दक ने खुशी से उन्हें यहां से उखाड़कर मरचेण्ट के बगीचे में लगाने की जिम्मेवरी ले ली। जो बाकी लोग रह गये उन्होंने कॉफी-क्लब को फिर से चलाने की हल्की-सी कोशिश की, लेकिन वह चल न सका, हालांकि यह कोशिश महज जुबानी कोशिश थी। हम लोग बहुत थोड़े-से आदमी रह गये थे और सब-कुछ उखड़ा-उखड़ा-सा था। ऐसी सूरत

में कोई नई चीज शुरू नहीं की जा सकती थी। लेकिन फूलों की मुरझाती हुई क्यारियों के पास अपना हस्ब-मामूल चक्कर लगाने का रोज का प्रोग्राम मैंने बन्द नहीं किया। बैडमिंटन खेलने का कोर्ट तो खुले हुए जख्म की तरह बन गया। लेकिन वालीबाल टीमों ने अखीर तक अपना जोश कायम रखा। चलते-चलते राशन में मिली हुई १५ दिनों की चीनी का जखीरा मेरे पास पड़ा हुआ था। उसे फराकदिली से बटवाने के लिए मुझे अपनी आखिरी वसीयत और करार में शामिल करना पड़ा। वसीयत की तामील के लिए मैंने सिर्फ मौलाना को मुकर्रर किया। हां, एक नई और प्यारी-सी बिल्ली आ गई (असली कछुए के खालवाली) और मैं उसके लिए दो तश्तरी दूध अलग रखनेवाला था कि मुझे खयाल हुआ कि यदि राशन जारी रहना बन्द हो गया (साफ है वह जारी नहीं रह सकता) तब इसके साथ बेरहमी होगी और तब मैंने जज़बात को दबा दिया। जो लोग यहां से चले गये उनकी कमी के अलावा बाकी सब चीजें जैसी-की-तैसी हैं। (यूनान के एक पुराने किस्से के मुताबिक) चारॉन ने मेरी भी नाव खेकर मुझे अब स्टिक्स नदी के दूसरे किनारे पर पार लगा दिया है।

२. सपने में मुझे खयाल न था कि यह सफर मेरे लिए घटनाओं से इतना भरा साबित होगा। शुरू में जिस्मानी थकावट बराबर बढ़ती गई और सेहत गिरती चली गई। रास्ते में नींद बिल्कुल उड़ गई और मैंने अपने लिए सोच-समझकर जो रोजमर्रा का काम लिया था, वह बिल्कुल बेतरतीब हो गया। इन दोनों बातों का नतीजा दिल्ली पहुंचते-पहुंचते यह हुआ कि मेरे जिस्म और दिमाग, दोनों की हालत हद-दरजे नाजुक हो गई। इतने में अचानक मैंने यह महसूस किया कि मैं फिर कैदखानों के सींखचों के पीछे बन्द कर दिया गया हूं। मेरी याददाश्त पर इस सारे सफर का एक निशान बाकी रह गया है।

३. हस्ब-मामूल अखबारों में जो कुछ छपा, सब गलत। एक खबर तो यह थी कि मैं 'कुछ रिश्तेदारों' से 'आंसू-भरी खामोशी' के साथ मिला। यह खबर तो मैं समझता हूं कि अखबारों की रंगसाजी थी। दूसरी खबर यह छपी कि भूलाभाई के नाम मेरा एक 'गैर-सियासी पैगाम' सरकार ने रोक लिया। यह खबर भी एक अच्छी दिमागी उड़ान थी। तीसरी और

आखिरी खबर यह छपी कि, 'शक किया जाता है कि मुझे दिल की बीमारी हो गई है।' यह हमदर्दी से भरा हुआ एक अंदाज था। निशाना यहां भी जरा गलत ही लगा। लेकिन अखबारों का कोई कर क्या सकता है! वे तो खबरों के लिए भूखे रहते हैं। सरकारी तौर पर इन खबरों को गलत कहने में करीब-करीब डेढ़ हफ्ता या इससे भी कुछ ज्यादा लग गया। लेकिन अखबारों की चक्की अल्लामियां की चक्की की तरह धीरे-धीरे कुछ-न-कुछ पीसती और निकालती ही रहती है।

४. (कानूनी दस्तावेज के तर्ज पर या पुराने अच्छे 'सेक्रेटरीज'[1]—हिज्जे पर ध्यान न दें—की तरह मैंने पैराग्राफों पर नम्बर डाल दिये हैं, इससे चिढ़ें नहीं)। किस्सा-कोताह जब मैं यहां पहुंचा तो मेरा वजन १००-१०१ पौंड निकला। रास्ते में ४-५ पौंड वजन कम हो गया। यहां जब आया तो दर्द के मारे सर फटा जा रहा था। जो जिस्मानी शिकायतें, खामोश पड़ी हुई थीं वे जागकर उभर आई थीं। तब 'कुरेद-कुरेदकर उन्हें निकालने' और जमकर रहने की कार्रवाई शुरू हुई। यहां तो बिल्कुल नई हालतें थीं और साथ-ही-साथ यहां के कानून-कायदे भी दूसरे थे। उनके साथ अपनी निजी जरूरतों की नजर से हर घंटे मेल बैठाने का काम शुरू हुआ। यहां के इंतजाम को देखते हुए कामचलाऊ सूरत निकालने और यहां अपनी जिन्दगी की किश्ती के लिए लंगर खोजने में मुझे और १५ दिन लग गये।

५. अब मैंने 'सेहत बहाल करने की तरफ' अपने दिमाग को लगाया है। हर तरह का दिमागी काम मैंने बन्द कर दिया है। खुशकिस्मती से जो काम मैंने हाथ में ले रखा था उसे खत्म कर दिया, क्योंकि इस वक्त शायरी भी मुझसे रुखसत हो चुकी है। तुम जानते हो, बाज मरतबा छोटी-छोटी अड़चनें दिमाग से शायरी का रुझान खत्म कर देती हैं। मैंने महज मजाक में एक छोटी-सी चीज लिखनी शुरू की थी और नतीजा बहुत हौसला बढ़ाने-वाला था। जबकि अभी मैंने दीवाचा के तौर पर नज्म की सौ के करीब सतरें लिखी थीं कि यह तब्दीली आ गई। इसको अपनी पूरी कोशिश करके भी मैं आगे नहीं बढ़ा सका। इसलिए मैंने उस मनसूबे को छोड़ दिया। अगर दिमाग की शायराना कैफियत फिर लौट आई तो अधूरे काम

[1] अंग्रेजी में 'Secretarese' लिखा गया है।

को मैं फिर से शुरू कर सकता हूं। इस वक्त तो मैं फिर से अपनेको मुआफिक करने के दर्द में मुब्तिला हूं।

६. यह इलाका पहाड़ी दामन का इलाका है। यहां से जो बरफीली चोटियां दिखाई देती हैं उनके नीचे कहीं रोरिक का आश्रम है। मैं केवल अन्दाज लगा रहा हूं। वह पठानकोट से चन्द मील के फासले पर है। इस इलाके में फैली हुई हिमालय की पूरी कतारें यहां से दिखाई देती हैं। वह बर्फ से ढकी हुई हैं। बिल्कुल ऐसा महसूस होता है, जैसे तुम्हारे सामने गुलमर्ग और खिलनमर्ग हों। लेकिन यहां का मौसम बदलता हुआ है और कभी-कभी इतनी गरमी पड़ती है कि दम घुटता महसूस होता है। मुझे उम्मीद है कि जल्द ही पंखा मिलेगा। मेरे रहने का इन्तजाम अस्पताल के एक हिस्से में किया गया है। पहले वहां गोदाम था। मेरे यहां पहुंचने पर उसे खाली किया गया। मैं यहां अकेला रखा गया हूं। और सब चीजों को देखते हुए मैं इसे राहत समझता हूं। यह एक बहुत छोटा-सा जेल है। अहमदनगर के किले में जो येलदीज्र कोशक था करीब उतना ही बड़ा यह जेल है। नहीं, यह कुछ थोड़ा बड़ा है। लेकिन यह जेल है। जेल के सब लवाजमात यहां हैं—सींखचे, रोकथाम, तालाबन्दी वगैरह। इस कमरे में मरीजों के कपड़ों के लिए एक अलमारी थी। अब वह अलमारी मेरे लिए सिंगारमेज, नाश्ताखाना, कबाड़खाना, खाने के बरतन रखने, डोली और गोदाम सब तरह का काम दे रही है। बेशक वह मच्छरों का पनाहघर भी है। इस लिहाज से यहां कुछ तब्दीली है। मैं शर्त लगा सकता हूं कि तुम्हारे यहां इससे ज्यादा मच्छर होंगे। मक्खियों और जाने और अनजाने किस्म के खटमलों का जहांतक ताल्लुक है, मैं बाजी ले जाऊंगा। हम लोग (हमसे मुराद जेल से है) खुद अपने लिए आम, जामुन और शहतूत पैदा कर लेते हैं। फलों की भी बहुतायत है—हालांकि बहुत बढ़िया किस्म के नहीं। चार हफ्तों की जुदाई को क्या यह खत पूरा नहीं करता?

तुमको और नरेन्द्रदेव को प्यार,

तुम्हारा,
आसफ

फिर से—
किताबों के बारे में हमारा जो करार है उसे मेहरबानी करके

भूलियेगा नहीं। हफ्तेवार और महावारी अखबार दिल्ली से मंगाने का इंतजाम कर रहा हूं। अभी तक यहां हर चीज उखड़ी-उखड़ी-सी है—अभी तक ऐसा नहीं मालूम होता कि यहीं रहना है। रूजवेल्ट की खबर कितनी दर्दनाक है। सान फ्रांसिसको में सरूप का हाल-चाल मैं गौर से पढ़ता रहता हूं। लेकिन यहां के अखबारों में बहुत कम खबरें छपती हैं। मैंने सरूप को लिखा है।

३५३. तेजबहादुर सप्रू की ओर से

मसूरी
१५ जून १९४५

प्रिय जवाहरलालजी,

मैं दावे से कह सकता हूं कि एक-दो दिन में आप इलाहाबाद में होंगे। यह खत तो महज आपको यह बताने के लिए है कि पिछली रात एक दोस्त से, जिसने रेडियो पर वाइसराय की तकरीर सुनी थी, यह जानकर कि आप छोड़ दिये गए हैं, मुझे बहुत तसल्ली हुई है। आपकी रिहाई का मैं दिल से स्वागत करता हूं और विश्वास करता हूं कि आप जिस किसी भी फैसले पर पहुंचें, वह मुल्क के सबसे ज्यादा फायदे का हो।

अखबारों में था कि आपको कुछ हरारत रहा करती है। मुझे उम्मीद है कि आपने उससे छुटकारा पा लिया होगा। यह बहुत जरूरी है कि किसी शोर-शराबे से दूर जगह पर आप थोड़ा आराम करें, लेकिन मुझे डर है कि अगले कुछ हफ्तों में आपपर बहुत बोझ रहेगा।

मैं यहां १३ जून को आया हूं, सिर्फ आनन्द को देखने, जिसकी सेहत में अच्छा सुधार हो रहा है और अब वह इस लायक है कि धीरे-धीरे टहल सके। २५ जून तक मैं यहां रहूंगा। उसके बाद इलाहाबाद चला जाऊंगा।

शुभ कामनाओं-सहित

आपका,
तेजबहादुर सप्रू

पण्डित जवाहरलाल नेहरू,
इलाहाबाद

३५४. मेघनाद साहा की ओर से

यूनिवर्सिटी कॉलेज ऑव साइन्स,
डिपार्टमेंट ऑव फिजिक्स,
कलकत्ता
१२ अगस्त १९४५

प्रिय पण्डितजी,

श्रीनगर से लिखे २८ जुलाई के आपके पत्र को पाकर मुझे प्रसन्नता हुई। मैं आशा करता हूं कि काश्मीर के स्वास्थ्यप्रद वातावरण में कुछ हफ्ते रहने से आप अपनी सेहत सुधार सके होंगे, हालांकि अखबारों से तो मालूम होता है कि आप बहुत कम विश्राम कर सके हैं।

मैं कभी भी इलाहाबाद आने को तैयार रहूंगा, बशर्ते कि समय रहते मुझे पता चल जाय कि आप वहां कब होंगे और सफर की सहूलियत मिल जाय, जो इन दिनों मुश्किल है। अगर ४८ घंटे पहले मुझे सूचना मिल जाय तो संभवतः यह लिखने की जरूरत नहीं है कि मैं आपसे मिलने के लिए और ब्रिटेन, संयुक्त राज्य अमरीका और सोवियत रूस के अपने सारे अनुभव आपको सुनाने को उत्सुक हूं।

कलकत्ता विश्वविद्यालय ने कमला-व्याख्यान-माला के लिए आपको और मौलाना आजाद को नियुक्त किया है, बावजूद मुस्लिम-लीगियों के जोरदार विरोध के। उनका कहना था कि मौलाना अंग्रेजी में अपने विचारों को प्रकट नहीं कर सकते हैं। हमें खुशी होगी, अगर आपको अगस्त में इन व्याख्यानों को देने का समय मिल सके। विषय पूरी तरह आपपर छोड़ दिया गया है। हां, अगर आपने विषय का निश्चय नहीं कर लिया हो तो मैं 'राष्ट्रीय योजना' का विषय सुझाऊंगा।

मेरा विश्वास है कि अब समय आ गया है जब कांग्रेस को, अगर वह सत्तारूढ़ हो जाय तो, अपने कार्यक्रम की बाजाब्ता घोषणा कर देनी चाहिए। उसका वर्तमान कार्यक्रम तो पुरानी दुनिया की विचार-धाराओं से बंधा हुआ है, जैसे चर्खा, हाथबुनाई और मध्ययुगीन आधार पर सत्ता का विभाजन, आदि-आदि। 'हिंदुस्तान की जनता को शानदार जिंदगी' के लिए काम करने के विचार पर आधारित नये नारे हमें देश को देने चाहिए। इसका

आधार हो विज्ञान का पूरा-पूरा उपयोग, शक्ति-स्रोतों, रासायनिक, खनिज और कृषि-उद्योगों का विकास, जल और जमीन का सामूहिक और बहु-उद्देशीय प्रयोग, काम के नये आधारों पर समाज का पुनर्निर्माण। मैं आपके लिए दो लेख भेज रहा हूं, जिनमें से एक 'नेचर' में प्रकाशित हुआ था और दूसरा 'हिंदुस्तान स्टैंडर्ड' में। इनमें मेरे विचार प्रकट किये गए हैं।

सादर आपका,
मे. ना. साहा

पण्डित जवाहरलाल नेहरू,
इलाहाबाद।

३५५. एस. एच. शेन की ओर से

चीनी जनतंत्र के कमिश्नर का आफिस,
नई दिल्ली
१५ अगस्त १९४५

प्रिय पंडित नेहरू,

आपको शायद याद होगा कि सन् १९४० के पतझड़ में परीक्षा-विभाग (एग्जामिनेशन यू यान) के अध्यक्ष हिज एक्सेलेंसी डा. ताई ची-ताओ हिंदुस्तान की यात्रा करने आये थे। वह एक शिष्टमंडल के प्रधान थे, जिसका सदस्य होने का मुझे भी सौभाग्य प्राप्त था। यह शिष्टमंडल मुख्य रूप से आपकी एक साल पहले की गई चीन-यात्रा के बदले में आया था। दुर्भाग्य से हिंदुस्तान पहुंचने पर हमारे लिए आपसे मिलना नामुमकिन हो गया था।

अपनी निराशा को व्यक्त करने के लिए डा. ताई ने एक कविता लिखी थी। उसे आपके पास भेजने के लिए उन्होंने श्रीमती पंडित को दे दिया था, जिन्होंने इलाहाबाद में उनका हार्दिक स्वागत किया था।

नई घटनाओं को निगाह में रखते हुए डा. ताई ने मुझसे कहा है कि मैं उनकी शुभ कामनाएं आपके और मौलाना आजाद के पास पहुंचा दूं। उन्होंने इस कविता की एक प्रति भी स्वयं अपने सुन्दर अक्षरों में लिखकर भेजी है। वह अपनी सुन्दर लिखावट के लिए प्रसिद्ध हैं।

मैंने इसका अंग्रेजी में तर्जुमा करने की कोशिश की है, लेकिन निश्चय ही आप इस बात को स्वीकार करेंगे कि कोई भी कविता —खास तौर से चीनी—जब किसी विदेशी भाषा में अनूदित होती है तब उसकी मौलिक सुन्दरता बिल्कुल नष्ट हो जाती है।

शुभ कामनाओं सहित

आपका सस्नेह,
एस. एच. शेन

पंडित जवाहरलाल नेहरू

पंडित जवाहरलाल नेहरू के प्रति

ढूंढ़ता आया हूं मैं आपको बहुत दूर व्यर्थ ही
स्मरण करता हुआ आपको एकान्त स्वर-लहरी में,
भाग्यशाली है वह जो सहेगा मानव-हित पीड़ा को,
हृदय लिये बुद्ध का और मस्तिष्क एक वीर का।

—ताई ची-ताओ

३५६. गोविन्दवल्लभ पन्त की ओर से

नैनीताल
१५ अगस्त १९४५

प्रिय जवाहरलालजी,

इस पत्र के साथ मैं गगनबिहारी का पत्र अपने जवाब के साथ भेजता हूं, क्योंकि मैंने स्वयं इस प्रस्ताव पर मंजूरी नहीं दी थी, इसलिए मैंने पहले इसे आपके पास नहीं भेजा। तो भी बाद में मैंने अखबारों में छपी खबरें देख लीं कि इस समय मामले ने आपका ध्यान आकृष्ट कर रखा है। 'सिविल एंड मिलिटरी गैजेट' के संवाददाता ने सचमुच इस आशय का एक निश्चित वक्तव्य दिया है। इसलिए गगनबिहारी का सुझाव मैं आपके पास भेज रहा हूं। इस मामले में मुझे अपने स्वयं के विचारों को दुहराने की जरूरत नहीं है, क्योंकि उनको लिखे मेरे पत्र की जो नकल नत्थी है, उसमें वे पूरी तरह से लिखे गए हैं। इंग्लैंड के मजदूर-दल से मुझे कोई खास लगाव नहीं है और मैं उस उत्साह और आशावादिता में हिस्सेदार नहीं हूं, जिसके साथ कुछ साथियों ने मजदूर सरकार के आने का स्वागत किया है। लेकिन शायद यह

आशा करना भी जरूरत से ज्यादा होगा कि वर्तमान परिस्थितियों में एटली भी संतोषजनक रूप से शांति बनाये रखने में अपनेको मुश्किल में पायेंगे। मैं लास्की तथा मजदूर-दल की कार्य-समिति के खास सदस्यों की ओर से किसी भी दिन आपके लिए निमंत्रण आने की आतुरता से प्रतीक्षा कर रहा हूं। क्रिप्स के रुख के बारे में भी मेरा दिमाग साफ नहीं है। शिमला-सम्मेलन के असफल हो जाने के बाद उन्होंने जो बयान दिया वह अस्पष्ट है और कुछ पहलुओं से बेचैनी पैदा करनेवाला भी। अपनी बातचीत के दौरान और अपने १९४२ के अभागे प्रस्तावों से संबंधित कार्रवाइयों के बीच उन्होंने जैसा व्यवहार किया उससे उन्होंने अपनी साख और इज्जत नहीं बढ़ाई है। आपके और मि. जिन्ना के स्तर में संतुलन कायम रखने की उनकी जरूरत से ज्यादा परवा करना न सिर्फ सावधानी की हद को पार कर गया, बल्कि बेवकूफी की हदतक पहुंच गया। मि. जिन्ना के लिए यह नरम सावधानी चर्चिल, एमरी और लिनलिथगो की वजह से कितनी थी और जिन्ना को खुश करने और अपनी ओर करने की उनकी स्वयं की चिंता की वजह से कितनी थी, यह कोई नहीं कह सकता है। किसीको भी आज इसकी फिक्र करने की जरूरत नहीं है। परन्तु असल बात तो यह है कि आज उनका रुख क्या होगा ? क्योंकि हिंदुस्तान से संबंध रखनेवाले हर मामले में उनकी बात का निश्चय ही असर होगा। मैं केवल यही उम्मीद करता हूं कि वर्तमान परिस्थितियों में, जबकि कामन्स-सभा में मजदूर-दल के पीछे अत्यधिक बहुमत है, व्यक्तियों तथा संस्थाओं की समानता के इस तरह के ऊल-जलूल विचार की खपत वह अपने सिर पर सवार नहीं होने देंगे। तो भी मैं पूरी तरह संदेहों से मुक्त नहीं हूं। वह आदत से सनकी नहीं हैं, परन्तु पहेली पैदा करनेवाले जरूर हैं।

काश्मीर से वापस होने तक आप करीब एक महीना वहा बिता चुके होंगे। आशा है, स्वास्थ्यकर वातावरण और शक्ति देनेवाली आबोहवा और साथ ही अपेक्षाकृत विश्राम—इन सबने आप पर अच्छा असर डाला होगा। अहमदनगर में रहने के अपने आखिरी दिनों में मैं इस खयाल को दूर नहीं कर सका कि अनजान में आपका स्वास्थ्य दिन-ब-दिन बराबर गिरता जा रहा है और मुझे अपनी बेबसी और अशक्ति पर भीतर-ही-भीतर झुंझलाहट होती रहती थी कि मैं आपकी कोई सेवा नहीं कर पा रहा हूं।

मैं आशा करता हूं कि अब इस कमी की आपने पूर्ति कर ली होगी और अपनी सामान्य शक्ति और उत्साह प्राप्त कर लिया होगा।

मैं आज अल्मोड़ा जा रहा हूं और वहां लगभग पंद्रह दिन रहने का विचार है।

आपका,
गोविन्दवल्लभ पन्त

३५७. सिह शिन हेन्फ की ओर से

चीनी जनतंत्रीय कमिश्नर का दफ्तर,
नई दिल्ली,

संदर्भ-संख्या—५६६६ २२ अगस्त १९४५

प्रिय पंडित नेहरू,

कुछ दिनों के लिए कमिश्नर के चुंगकिंग चले जाने के कारण मैं आपको जनरलसिमो के आदेशानुसार निम्नलिखित तार भेज रहा हूं—

"जापान के आत्मसमर्पण पर आपने जो बधाइयां भेजी हैं, उसके लिए मेरा हार्दिक धन्यवाद। विजय के इस दिन चीनी जनता एक बार फिर अपने को संयुक्त राष्ट्र के ऊंचे आदर्शों और उन शांति-प्रयत्नों के प्रति, जो अभी करने को बाकी हैं, अपनी सेवाएं समर्पित करती है। मुझे विश्वास है कि मित्रता के जिस बंधन ने चीन और भारत को एकता के सूत्र में बांधा है वह भविष्य में और भी मजबूत बनेगा और हमारे देशों की जनता नई विश्व-व्यवस्था की स्थापना में बहुत अधिक योग दे सकेगी—च्यांग काई-शेक।"

आशा है, आप इसके अनुसार कार्य करेंगे।

सस्नेह आपका,
सिह शिन हेन्फ

पंडित जवाहरलाल नेहरू

३५८. महात्मा गांधी की ओर से

५ अक्तूबर १९४५

चि. जवाहरलाल,

तुमको लिखनें का तो कई दिनों से इरादा किया था, लेकिन आज ही उसका अमल कर सकता हूं। अंग्रेजी में लिखूं या हिंदुस्तानी में, यह भी

मेरे सामने सवाल रहा था। आखर में मैंने हिंदुस्तानी में ही लिखने का पसंद किया।

पहली बात तो हमारे बीच में जो बड़ा मतभेद हुआ है, उसकी है। अगर वह भेद सचमुच है तो लोगों को भी जानना चाहिए, क्योंकि उनको अंधेरे में रखने से हमारा स्वराज का काम रुकता है। मैंने कहा है कि 'हिंद स्वराज' में मैंने लिखा है, उस राज्य-पद्धति पर मैं बिल्कुल कायम हूं। यह सिर्फ कहने की बात नहीं है, लेकिन जो चीज मैंने १९०८ साल में लिखी है उसी चीज का सत्य मैंने अनुभव से आज तक पाया है। आखर में मैं एक ही उसे माननेवाला रह जाऊं, उसका मुझको ज़रा-सा भी दुःख न होगा, क्योंकि मैं जैसे सत्य पाता हूं, उसका मैं साक्षी बन सकता हूं। 'हिंद स्वराज' मेरे सामने नहीं है। अच्छा है कि मैं उसी चित्रको आज अपनी भाषा में खींचूं। पीछे वह चित्र सन् १९०८ जैसा ही है या नहीं, उसकी मुझे दरकार न रहेगी, न तुम्हें रहनी चाहिए। आखर में तो मैंने पहले क्या कहा था, उसे सिद्ध करना नहीं है। आज मैं क्या कहता हूं, वही जानना आवश्यक है। मैं यह मानता हूं कि अगर हिंदुस्तान को सच्ची आजादी पानी है और हिंदुस्तान के मारफत दुनिया को भी, तब आज नहीं तो कल देहातों में ही रहना होगा, झोपड़ियों में, महलों में नहीं। कई अरब आदमी शहरों में और महलों में सुख से और शांति से कभी रह नहीं सकते, न एक दूसरों का खून करके मायने—हिंसा से, न झूठ से—यानी असत्य से। सिवाय इस जोड़ी के (याने सत्य और अहिंसा) मनुष्य-जाति का नाश ही है, उसमें मुझे ज़रा-सा भी शक नहीं है। उस सत्य और अहिंसा का दर्शन हम देहातों की सादगी में ही कर सकते हैं। वह सादगी चर्खा में और चर्खा में जो चीज भरी है उसीपर निर्भर है। मुझे कोई डर नहीं है कि दुनिया उल्टी ओर ही जा रही दिखती है। यों तो पतंगा जब अपने नाश की ओर जाता है तब सबसे ज्यादा चक्कर खाता है और चक्कर खाते-खाते जल जाता है। हो सकता है कि हिंदोस्तान इस पतंगे के चक्कर में से न बच सके। मेरा फर्ज है कि आखर दम तक उसमें से उसे और उसके मारफत जगत को बचाने की कोशिश करूं। मेरे कहने का निचोड़ यह है कि मनुष्य-जीवन के लिए जितनी जरूरत की चीज है, उसपर निजी काबू रहना ही चाहिए—अगर न रहे तो व्यक्ति बच ही नहीं सकता है। आखर तो जगत

व्यक्तियों का ही बना है। बिंदु नहीं है तो समुद्र नहीं है। यह तो मैंने मोटी बात ही कही—कोई नई बात नहीं की।

लेकिन 'हिंद स्वराज' में भी मैंने यह बात नहीं की है। आधुनिक शास्त्र की कदर करते हुए पुरानी बात को मैं आधुनिक शास्त्र की निगाह से देखता हूं तो पुरानी बात इस नये लिवास में मुझे वहुत मीठी लगती है। अगर ऐसा समझोगे कि मैं आज की देहातों की बात करता हूं तो मेरी वात नहीं समझोगे। मेरी देहात आज मेरी कल्पना में ही है। आखर में तो हरएक मनुष्य अपनी कल्पना की दुनिया में ही रहता है। इस काल्पनिक देहात में देहाती जड़ नहीं होगा—शुद्ध चैतन्य होगा। वह गंदगी में, अंधेरे कमरे में जानवर की जिंदगी बसर नहीं करेगा, मरद और औरत दोनों आजादी से रहेंगे और सारे जगत् के साथ मुकावला करने को तैयार रहेंगे। वहां न हैजा होगा, न मरकी होगी, न चेचक होगी। कोई आलस्य में रह नहीं सकता है, न कोई ऐश-आराम में रहेगा। सबको शारीरिक मेहनत करनी होगी। इतनी चीज होते हुए मैं ऐसी बहुत-सी चीज का ख्याल कर सकता हूं जो बड़े पैमानें पर बनेगी। शायद रेल्वे भी होगी, डाक-घर भी होंगे। क्या होगा, क्या नहीं, उसका मुझे पता नहीं। न मुझको उसकी फिकर है। असली वात को मैं कायम कर सकूं तो बाकी आने की और रहने की खूवी रहेगी। और असली बात को छोड़ दूं तो सव छोड़ देता हूं।

उस रोज जव हम आखर के दिन वर्किंग कमेटी में वैठे थे तो ऐसा कुछ फैसला हुआ था कि इसी चीज को साफ करने के लिए वर्किंग कमेटी २-३ दिन के लिए बैठेगी। वैठेगी तो मुझको अच्छा लगेगा। लेकिन न बैठे तब भी मैं चाहता हूं कि हम दोनों एक दूसरे को अच्छी तरह समझ लें। उसके दो सबब हैं। हमारा संबंध सिर्फ राजकारण का ही नहीं है। उससे कई दरजे गहरा है। उस गहराई का मेरे पास कोई नाप नहीं है। वह संबंध टूट भी नहीं सकता। इसलिए मैं चाहूंगा कि हम एक दूसरे को राजकारण में भी भली-भांति समझें। दूसरा कारण यह है कि हम दोनों में से एक भी अपनेको निकम्मा नहीं समझते हैं। हम दोनों हिंदुस्तान की आजादी के लिए हीं जिंदा रहते हैं और उसी आजादी के लिए हमको मरना भी अच्छा लगेगा। हमें किसीकी तारीफ की दरकार नहीं है। तारीफ हो या गालियां—एक ही चीज है। खिदमत

में उसे कोई जगा ही नहीं है। अगरचे मैं १२५ वर्ष तक सेवा करते-करते जिंदा रहने की इच्छा करता हूं तब भी मैं आखर में बूढ़ा हूं और तुम मुकाबले में जवान हो। इसी कारण मैंने कहा है कि मेरे वारस तुम हो। कम-से-कम उस वारस को मैं समझ तो लूं और मैं क्या हूं, वह भी वारस समझ ले तो अच्छा ही है और मुझे चैन रहेगा।

और एक बात। मैंने तुमको कस्तूरबा ट्रस्ट के बारे में और हिंदुस्तानी के बारे में लिखा था। तुमने सोचकर लिखने का कहा था। मैं पाता हूं कि हिंदुस्तानी सभा में तो तुम्हारा नाम है ही। नाणावटी ने मुझको याद दिलाया कि तुम्हारे पास और मौलानासाहब के पास वह पहुंच गया था और तुमनें अपने दस्तखत दे दिये हैं। वह तो सन् १९४२ में था। वह जमाना गुजर गया। आज हिंदुस्तानी कहां है, उसे जानते हो। उसी दस्तखत पर कायम हो तो मैं उस बारे में तुमसे काम लेना चाहता हूं। दौड़-धूप की जरूरत नहीं रहेगी। लेकिन थोड़ा काम करने की जरूरत रहेगी।

कस्तूरबा स्मारक का काम पेचीला है। ऊपर जो मैंने लिखा है,वह अगर तुमको चुभेगा या चुभता है तो कस्तूरबा स्मारक में भी आकर तुमको चैन नहीं रह सकेगा, यह मैं समझता हूं।

आखर की बात शरत्‌बाबू के साथ कुछ चिनगारियां फूटी हैं, वह है। इससे मुझे दर्द हुआ है। उसकी जड़ मैं नहीं समझ सका। तुमने जो कहा है, इतना ही है और बाकी कुछ नहीं रहा है तो मुझे कुछ पूछना नहीं है। लेकिन कुछ समझने जैसा है तो मुझको समझने की दरकार है।

इस खत के बारे में अगर हमें मिलना ही चाहिए तो हमारे मिलने का वक्त निकालना चाहिए।

तुम काम बहुत कर रहे हो, तबीयत अच्छी रहती होगी। इन्दू ठीक होगी।

आनंद भवन बापू के आशीर्वाद
इलाहाबाद।

३५९. महात्मा गांधी के नाम

आनंद भवन,
इलाहाबाद
९ अक्तूबर १९४५

प्रिय बापू,

लखनऊ से लौटने पर आज आपका ५ अक्तूबर का पत्र मिला। मुझे इस बात की खुशी है कि आपने इतने खुलासे से लिखा और मैं कुछ विस्तार से ही इसका जवाब देने की कोशिश करूंगा। लेकिन मैं उम्मीद करता हूं कि अगर इसमें कुछ देर हुई तो आप मुझे क्षमा करेंगे, क्योंकि इस वक्त मैं बहुत जरूरी कामों में फंसा हुआ हूं। मैं अभी यहां सिर्फ डेढ़ दिन के लिए आया हूं। दरअसल यह कहीं अच्छा होगा कि हम अनौपचारिक रूप से बात करलें, लेकिन फिलहाल मैं नहीं जानता कि ऐसा कब हो सकेगा। मैं कोशिश करूंगा।

संक्षेप में, मेरा खयाल है कि हमारे सामने सवाल सत्य बनाम असत्य या अहिंसा बनाम हिंसा का नहीं है। लोग मानते हैं, जैसा कि उन्हें मानना चाहिए कि हमारा मकसद सच्चा सहकार और शांतिपूर्ण पद्धति होनी चाहिए और जो सोसाइटी इनको बढ़ावा देती है, उसीको हासिल करना हमारा लक्ष्य है। सारा सवाल यह है कि ऐसी सोसाइटी कैसे हासिल हो और उसमें क्या-क्या बातें हों? मेरी समझ में नहीं आता कि देहात जरूरी तौर पर सत्य और अहिंसा के मूर्त रूप क्यों हों! आम तौर पर हम कह सकते हैं कि देहात बौद्धिक और सांस्कृतिक रूप से बहुत पिछड़े हुए हैं और पिछड़े हुए वायुमंडल में रहकर तरक्की नहीं की जा सकती। तंग दिमाग के लोगों के कहीं अधिक असत्य-भाषी और हिंसक होने की संभावना होती है।

इसके अलावा हमें कुछ मकसद अपने सामने रखने होंगे, जैसे खाने, कपड़े, मकान, शिक्षा, सफाई, वगैरा में पूर्णता। मुल्क के लिए और हरेक के लिए कम-से-कम इतना तो जरूरी होना चाहिए। इन मकसदों को सामने रखकर हमें इस बात को खास तौर पर देखना चाहिए कि इन चीजों को हम जल्दी-से-जल्दी कैसे हासिल कर सकते हैं। फिर मुझे यह भी लगता है कि आवश्यक यातायात के मौजूदा साधनों और आधुनिक सुविधाओं को चालू रखना और उनका विकास होना जरूरी है।

उनको स्वीकार किये विना और कोई चारा ही नहीं। अगर ऐसा है तो जरूरी तौर पर बड़े-बड़े उद्योग एक हदतक रखने ही होंगे। शुद्ध देहाती सोसाइटी के साथ इनका ताल-मेल कहांतक बैठेगा? निजी तौर पर मेरी उम्मीद है कि बड़े या छोटे दोनों तरह के उद्योग, जहांतक मुमकिन है, विकेन्द्रित होने चाहिए, और अब बिजली के विकास के कारण ऐसा संभव है। अगर देश में दो तरह की अर्थ-व्यवस्थाएं रहें तो या तो उनके दोनों के बीच कशमकश होगी या एक दूसरी पर छा जायगी।

इस संदर्भ में बाहरी हमले से राजनैतिक और आर्थिक स्वतन्त्रता और संरक्षण के सवाल पर भी विचार करना होगा। मेरे खयाल में यह हिन्दुस्तान के लिए मुमकिन नहीं है कि जबतक उसकी तकनीकी तरक्की न हो, वह असली तौर पर आज़ाद होगा। फिलहाल मैं महज फौजों के खयाल से नहीं सोच रहा हूं, बल्कि वैज्ञानिक उन्नति की बात मेरे सामने है। आजकल की दुनिया जिस ढंग से चल रही है, हम सांस्कृतिक दृष्टि से भी तरक्की नहीं कर सकते, अगर हर क्षेत्र में हमारी वैज्ञानिक खोज की मजबूत बुनियाद न हो। आज दुनिया में ज्यादा-से-ज्यादा हथियाने की प्रवृत्ति अलग-अलग लोगों में, दलों में, और मुल्कों में वहुत जोर पर है और इससे झगड़े और लड़ाइयां होती हैं। हमारी पूरी सोसाइटी कम-ज्यादा इसीपर आधारित है। यह आधार खत्म होना ही चाहिए और उसकी जगह सहकार, न कि अलगाव, होना चाहिए। अलगाव आज नामुमकिन है। अगर यह मान लिया जाता है और संभव लगता है तो हमें इसे हासिल करने की कोशिश करनी चाहिए, ऐसी अर्थ-व्यवस्था को ध्यान में रखकर नहीं, जो बाकी दुनिया से कटी हुई है, बल्कि ऐसी अर्थ-व्यवस्था को ध्यान में रखकर, जो बाकी दुनिया से मेल रखती है। आर्थिक या राजनैतिक दृष्टि से बाकी दुनिया से अलग होकर हिन्दुस्तान एक तरह का ऐसा शून्य क्षेत्र होगा, जो दूसरों की हथियानेवाली प्रवृत्तियों को बढ़ावा देगा और इस तरह उससे झगड़े बढ़ेंगे।

करोड़ों लोगों के लिए महलों का तो सवाल ही नहीं उठता। लेकिन इसकी भी कोई वजह नहीं कि क्यों न करोड़ों लोग आरामदेह मकानों में रहकर सभ्यों जैसी जिंदगी बितायें। आज के बहुत-से अति उन्नत शहरों में बुराइयां पनपी हैं, जो निंदनीय हैं। शायद हमें इस प्रकार की जरूरत से

ज्यादा तरक्की को हतोत्साहित करना पड़े और साथ ही हमें देहातों को इतना बढ़ावा देना पड़ेगा कि वे शहर की सभ्यता के मुकाबले आ सकें।

'हिन्द स्वराज्य' को पढ़े बहुत साल हो गये और मेरे दिमाग में सिर्फ धुंधली-सी तस्वीर है। लेकिन जब मैंने २० साल या उससे पहले इसे पढ़ा था तब भी वह मुझे असलियत से एकदम परे लगा था। उसके बाद के आपके भाषणों और लेखों में मुझे बहुत-कुछ ऐसा मिला है, जिससे पता चलता है कि आप पुरानी हालत से आगे बढ़े हैं और आधुनिक धाराओं की पसंदगी भी उनमें दिखाई देती हैं। इसलिए मुझे ताज्जुब हुआ जब आपने हमें बताया कि अब भी पुरानी तस्वीर आपके दिमाग में ज्यों-की-त्यों कायम है। जैसा कि आप जानते हैं, कांग्रेस ने इस तस्वीर पर कभी गौर नहीं किया, उसे मंजूर करने की तो बात ही अलग है। आपने स्वयं भी सिवा इसके कुछ छोट-मोटे पहलुओं के कभी इसे मंजूर करने को नहीं कहा।। अब आप ही फैसला करें कि कांग्रेस के लिए यह कहांतक ठीक है कि वह उन बुनियादी सवालों पर गौर करे, जिनका जीवन के विभिन्न दर्शनों से संबंध आता है। मेरा खयाल है कि कांग्रेस जैसी संस्था को ऐसे मामलों के तर्क-वितर्क में अपने को नहीं उलझाना चाहिए, जो लोगों के दिमागों में भारी भ्रम पैदा करें, जिससे वे वर्तमान में काम न कर सकें। इसका नतीजा यह भी हो सकता है कि देश में कांग्रेस और दूसरों के बीच दीवार खड़ी हो जाय। बेशक, आखिरकार इस और दूसरे सवालों को आजाद हिन्दुस्तान के नुमाइंदों को तय करना होगा। मुझे लगता है कि बहुत पुराने जमाने की नजर से इन सवालों पर विचार किया गया है और चर्चा हुई है और उन बड़ी-बड़ी तब्दीलियों पर कोई ध्यान नहीं दिया गया है, जो पिछली पीढ़ी या उससे भी ज्यादा वक्त में दुनिया भर में हुई हैं। ३८ साल हो गये जब 'हिन्द स्वराज्य' लिखा गया था। तबसे दुनिया पूरी तरह बदल गई है, मुमकिन है कि उसकी दिशा गलत हो। जो हो, अगर हम इन सवालों पर गौर करें तो हमें मौजूदा असलियतें, शक्तियां और मानवीय उपकरणों को, जो आज हमारे पास हैं, सामने रखना चाहिए, नहीं तो हम असलियत से दूर जा पड़ेंगे। आपका यह कहना ठीक है कि दुनिया या उसका बड़ा हिस्सा अपना खात्मा करने पर तुला दिखाई देता है। हो सकता है कि जिस सभ्यता का विकास हुआ है, उसके

दूषित बीज का यह अनिवार्य परिणाम हो। मेरे खयाल से ऐसा ही है। हमारे सामने समस्या यह है कि इस बुराई से छुटकारा कैसे मिले और उसके साथ ही वर्तमान में अच्छाई को कैसे कायम रक्खा जाय, जैसी कि वह पहले थी। जाहिर है कि वर्तमान में भी अच्छाई मौजूद है।

ये कुछ बिखरे विचार हैं, जो जल्दी में लिख दिये गए हैं और मुझे डर है कि ये प्रस्तुत प्रश्नों के गंभीर महत्त्व के प्रति न्याय नहीं करते। मुझे उम्मीद है कि आप मुझे बेतरतीबी से विचारों को रखने के लिए माफ करेंगे। बाद में मैं इस विषय पर ज्यादा सफाई से लिखने की कोशिश करूंगा।

हिन्दुस्तानी प्रचार सभा और कस्तूरबा निधि के संबंध में, जाहिर है कि, दोनों के प्रति मेरी सहानुभूति है और मेरे विचार में वे अच्छा काम कर रही हैं। लेकिन वे जिस ढंग से काम करती हैं, उसके बारे में मैं पूरी तरह आश्वस्त नहीं हूं और मेरा खयाल है कि वह तरीका हमेशा मेरी पसंद का नहीं होता। दरअसल मैं उनके बारे में इतना नहीं जानता हूं कि पक्के तौर पर कुछ कह सकूं। लेकिन आजकल अपने ऊपर जिम्मेदारियों का बोझ बढ़ाने में मेरी अरुचि पैदा हो गई है, जबकि मैं महसूस करता हूं कि वक्त की कमी के कारण शायद मैं उन्हें अपने ऊपर नहीं ले सकता। अगले महीने और उससे भी कुछ ज्यादा समय मेरे और दूसरे लोगों के लिए गरमागरमी के होंगे, ऐसी संभावना है। इसलिए मुझे यह मुनासिब नहीं लगता कि मैं नाममात्र के लिए किसी जिम्मेदारी की कमेटी का सदस्य बनूं।

शरत् बोस के बारे में मैं पूरी तरह अंधेरे में हूं कि वह मुझसे क्यों इतने नाराज हो गये हैं। हो सकता है कि इसके पीछे विदेशी संबंधों को लेकर मेरे आम नजरिये के प्रति उनकी कोई पुरानी शिकायत हो। मैं आया सही था या गलत, पर मुझे लगता है कि शरत् ने बच्चों का-सा और गैर-जिम्मेदारान ढंग का काम किया है। शायद आपको याद होगा कि पुराने दिनों में सुभाष ने स्पेन, चेकोस्लोवेकिया, म्यूनिख और चीन के प्रति कांग्रेस के रुख को पसंद नहीं किया था। शायद यह विचारों के पुराने भेद का असर है। मुझे नहीं पता कि इसके अलावा और क्या हुआ?

अच्छा, आप नवम्बर के शुरू में बंगाल जा रहे हैं? हो सकता है कि उन्हीं दिनों मैं भी तीन या चार दिन के लिए कलकत्ता जाऊं। अगर ऐसा

हुआ तो मुझे उम्मीद है कि आपसे भेंट होगी ।

आपने अखबारों में देखा होगा कि इंडोनेशिया के नये बने गणराज्य के राष्ट्रपति ने मुझे और कुछ दूसरे लोगों को जावा आने के लिए निमंत्रित किया है । विशेष परिस्थितियों को नजर में रखकर मैंने उस निमंत्रण को फौरन मंजूर कर लेने का निश्चय किया, बशर्ते कि वहां जाने की मुझे जरूरी सहूलियतें मिल जायं । सहूलियतें मिलने में मुझे पूरा शक है । इसलिए शायद मैं नहीं जाऊंगा । हवाई जहाज से जावा का दो दिन का रास्ता है अथवा कलकत्ता से एक ही दिन का । इंडोनेशिया गणतंत्र के उप-राष्ट्रपति श्री मोहम्मद हट्टा मेरे बहुत पुराने दोस्त हैं । मेरा अंदाज है कि आपको मालूम होगा कि जावा की करीब-करीब पूरी आबादी मुस्लिम है ।

मैं उम्मीद करता हूं कि आप स्वस्थ होंगे और इंफ्लुएंजा का जो हमला हुआ था, उससे पूरी तरह ठीक हो गये होंगे ।

महात्मा गांधी,
नेचर क्योर क्लिनिक,
६, टोडीवाला रोड,
पूना

सस्नेह आपका,
जवाहरलाल

३६०. अरुणा आसफ अली की ओर से

९ नवम्बर १९४५

प्रिय जवाहरलालजी,

आपने मेरे बारे में जो मेहरबानी की बातें कहीं, उनके लिए मैंने आपका शुक्रिया अदा करना जरूरी नहीं समझा; क्योंकि मैं जानती थी कि वह मेरी निजी तारीफ नहीं थी । वह तो उन कम जाने-पहचाने सिपाहियों के तईं अपनी इज्जत जाहिर करने का आपका तरीका था, जिन्होंने पिछले तीन बरसों में बगावत का झंडा ऊंचा रक्खा था ।

मैं उम्मीद कर रही थी कि आप जब पिछली मरतबा बंबई आये थे तो मुझे याद करेंगे । आप काम में कितने घिरे हैं, यह जानकर मैंने अपने-आपको आपपर लादने की खास कोशिश नहीं की ।

हमारी कल की बातचीत के लिए आपको कुछ बुनियाद देने की मुझे एक तरकीब सूझी है । मेहरबानी करके इन खतों को पढ़ लीजिये । शायद

मेरी सियासत को समझने में आपको इनसे मदद मिले।

आपकी,
अरुणा

३६१. महात्मा गांधी की ओर से

पूना
१३ नवंबर १९४५

चि. जवाहरलाल,

हमारी कल की बात से मुझे तो बड़ा आनंद हुआ। उससे अधिक बात कल तो कर नहीं सकते थे और मेरा खयाल ऐसा है कि हम एक ही वक्त मिलकर सब काम पूरा नहीं कर सकेंगे। समय-समय पर हमें अवश्य मिलना चाहिए। मैं तो ऐसे बना हूं कि अगर आज मेरी शक्ति इधर-उधर जाने की रहे तो मैं ही तुमको ढूंढ़ लूं, एक-दो दिन साथ रह लूं, कुछ वार्तालाप कर लूं और भाग जाऊं। ऐसी मेरी स्थिति आज नहीं रही है, लेकिन ऐसे मैंने किया है इतना समझो। मैं चाहता हूं कि हम एक-दूसरे को समझें, ऐसे ही लोग भी हमको समझ लें। अन्त में ऐसा हो सकता है कि हमारा मार्ग ही अलग है तो अलग सही। हमारा हृदय तो एक ही रहेगा, क्योंकि एक है। कल की बात से यह समझा हूं कि हम दोनों में विचार-श्रेणी में या वस्तु समझने में बड़ा अंतर नहीं है। तुमको किस तरह से समझा हूं वह बताना चाहता हूं, जिससे अगर फरक है तो मुझे बता दोगे।

१. तुम्हारी दृष्टि से हरेक इन्सान की बौद्धिक, आर्थिक, राजकीय और नैतिक शक्ति कैसे बढ़ें, वो ही सच्चा प्रश्न है। मेरा भी वही है।

२. और उसमें भी हरेक इन्सान को ऊंचे चढ़ने का एक-सा हक और मौका होना चाहिए।

३. इस दृष्टि से देखते हुए देहात की और शहर की एक ही हालत होनी चाहिए। इसलिए खाना, पीना, रहना, पहनना और रमत-गमत, एक-सी होनी चाहिए। आज तो यह स्थिति पैदा करने के लिए अपने कपड़े, खुराक और मकान अपने-आप पैदा करना और बनाना चाहिए और ऐसे ही अपना पानी या बत्ती भी अपने-आप पैदा करना चाहिए।

४. इन्सान जंगल में रहने के लिए पैदा नहीं हुआ है, लेकिन समाज में

रहने के लिए पैदा हुआ है। एक पर दूसरा सवारी न कर सके, यह विचार करते हुए पता चलता है कि यूनिट एक काल्पनिक देहात या ग्रुप होना चाहिए, जो स्वावलंबी रह सके और उस ग्रुप में एक-दूसरे पर अवलंबन तो होना ही होगा। इस तरह सोचने से सारी दुनिया के इन्सानों के संबंध का नकशा बन जाता है।

यहांतक मैं अगर ठीक समझा हूं तो दूसरा हिस्सा मैं शुरू करूंगा। जो खत मैंने तुमको पहले लिखा था, उसका अंग्रेजी रा. कु. से करवा लिया था, वह मेरे पास पड़ा है। इसकी अंग्रेजी भी करवा लेता हूं और उसे साथ में ही भेजता हूं। अंग्रेजी करवाकर मैं दो काम कर लेता हूं। एक तो मैं अपना कहना तुमको अंग्रेजी में ज्यादा समझा सकता हूं तो समझाऊं, और दूसरा मैं तुम्हारी बात पूरी-पूरी समझा हूं कि नहीं, उसका भी अंग्रेजी करने से मुझे ज्यादा पता चलेगा।

इंदू को आशीर्वाद।

बापू के आशीर्वाद

३६२. सर फ्रांसिस वाइली की ओर से

गवर्नर्स कैम्प

गवर्नर, संयुक्त प्रांत संयुक्तप्रान्त,

२२ फरवरी १९४६

प्रिय पंडितजी,

हम आपस में कभी नहीं मिले, पर वस्तुत: इसमें मेरा ही नुकसान हुआ हैं। फिर भी ऐसे बहुत-से दोस्त हैं जो आपके भी हैं और मेरे भी, और आपकी किताबों की मार्फत मेरा आपसे बरसों से ताल्लुक रहा है। जब पिछले महीने मैं इलाहाबाद गया था तो मेरे दिमाग में मुख्य उद्देश्य आपसे यह पूछना था कि क्या हम लोग मिल सकते हैं। मामूली-सी बातों—जिनमें पार्लमेंटरी शिष्टमण्डल भी शामिल है—के कारण वैसा नहीं हो सका। जब मेरे यहां अगाथा हैरिसन आईं तो उन्होंने लखनऊ तक की तीर्थयात्रा अपने-आप. सिर्फ ये सुझाव देने के लिए की कि जितनी जल्दी हो सके मैं आपसे मिलूं। मुझे किसी और को तैयार करने की जरूरत नहीं थी, हालांकि यहां की

पूर्व-घटनाओं की वजह से आपसे मिलने का विचार मेरे दिमाग में कुछ हल्का पड़ गया था। अगाथा के जाने के बाद मैंने इसके बारे में फौरन कुछ कर डालने की सोची और इलाहाबाद में वैंकटाचार से फोन पर बात की। मैंने उन्हें आपसे फौरन ही सम्पर्क स्थापित कर यह पूछने का सुझाव दिया कि क्या आप उनके मकान पर मुझसे मिल सकेंगे और जब मैं और मेरा लड़का इस उद्देश्य से इलाहाबाद आयेंगे तो वह हमें अपने पास ही ठहरा सकेंगे। कुछ ही घण्टों में मुझे यह निराशाजनक जवाब मिला कि आप इलाहाबाद से जा चुके हैं और २३ से पहले नहीं लौटेंगे और उसके फौरन बाद ही फिर चुनाव के दौरे पर रवाना हो जायंगे।

मेरे दिमाग में यह चीज साफ हो गई है कि जहांतक मुमकिन हो हमें मिलना चाहिए। मेरी धारणा है कि अगर हम कोई बात कर सकेंगे तो बहुत बात बनेगी। मैं रहस्यपूर्ण ढंग से मिलना मुनासिब नहीं समझता, क्योंकि पहले ही से बहुत-सी रहस्यमयी बातें फैल रही हैं। मैं यह भी नहीं चाहूंगा कि लोग इधर-उधर की बातें करें। फिर भी अगर आप अपने दौरे में कुछ घण्टों के लिए भी लखनऊ आ सकें तो मैं किसी भी जगह, जो आपको सुविधाजनक हो, आने को तैयार हूं।

मैं यह खत आपको एक विशेष दूत के हाथ भेज रहा हूं। शायद आप उसीके द्वारा उत्तर भेजने की कृपा करेंगे।

आपका,
एफ. वी. वाइली

३६३. महात्मा गांधी की ओर से

[नीचे गांधीजी का वह पत्र दिया जा रहा है, जो उन्होंने मुझे उस दिन लिखा था, जिस दिन उन्होंने उपवास तोड़ा था। उनका उपवास कई दिन चला। उपवास उन्होंने दिल्ली में सांप्रदायिक झगड़ों के लिए अपना दुःख जाहिर करने के लिए किया था।

दिल्ली में जो घटनाएं हो रही थीं, उनकी और गांधीजी के उपवास की वजह से मैं बड़ा बेचैन था और एक या दो दिन तक मैंने कुछ भी नहीं खाया। यह बाकायदा उपवास नहीं था, बल्कि घटनाओं के प्रति मेरी निजी प्रतिक्रिया थी, जिसे कोई नहीं जानता था। गांधीजी को किसी तरह पता चल

गया और इसलिए उन्होंने मुझे सलाह दी कि मैं उसे खत्म कर दूं।

यह आखिरी खत था, जो उन्होंने मुझे लिखा था। बारह दिन बाद, ३० जनवरी १९४८ को, एक हत्यारे के हाथों उनकी मौत हो गई।]

चि. जवाहरलाल,

उपवास छोड़ो.

[illegible]

बहुत वर्ष जीयो

और हिंद के जवाहर

बने रहो.

बापुके आशीर्वाद

१२-१-४८

पश्चिमी पंजाब लेजिस्लेटिव असेंबली के स्पीकर का तार :

"आपके अहम फाके के बेलाग और ऊंचे मकसद के बारे में १३ जनवरी को इस असेम्बली में जो तकरीरें हुई थीं, उनके कुछ मौजूं हिस्से मैं बड़ी खुशी से आपको भेज रहा हूं। इनमें जो जज़बात जाहिर किये गए हैं उनमें मैं और यह असेम्बली पूरी तरह से शरीक है।"

मलिक मुहम्मद फिरोज खां नून—"दुनिया के किसी भी मुल्क ने, मजहब चलानेवालों को छोड़कर, महात्मा गांधी से ज्यादा बड़ा इंसान पैदा नहीं किया।"

ऑनरेबल मियां मुहम्मद मुमताज खां दौलताना, माली वजीर—"यह हमारा सबसे बड़ा फर्ज है कि हम महात्मा गांधी के फाके से मुसलमानों के तईं जो जज़बात जाहिर होते हैं उनको समझें और उनकी तारीफ करें। इससे जाहिर होता है कि हिंदुस्तान में कम-से-कम एक आदमी तो ऐसा है, जो हिन्दू-मुस्लिम-एके के लिए अपनी जिंदगी तक कुरबान करने को तैयार है। हम खुदाबंद ताला से दुआ मांगते हैं कि उनके फाके को जारी रखने की और आगे जरूरत न पड़े। मैं इस असेम्बली की तरफ से महात्मा गांधी को यकीन दिलाता हूं कि अकलियत की हिफाजत के लिए उनके जज़बातों में हम पूरी तरह शामिल हैं।"

ऑनरेबल खान इफ्तिखार हुसैन खां, वजीरे-आजम—"मैं अपनी तरफ से और अपने साथियों की तरफ से महात्मा गांधी के एक पाक मकसद को आगे बढ़ाने के ऊंचे दर्जे के काम की फिक्र के साथ तहेदिल से कद्र और तारीफ करता हूं। उनकी कीमती ज़िंदगी को बचाने के लिए इस सूबे में कोई कसर नहीं उठा रखी जायगी।

स्पीकर,
पश्चिमी पंजाब लेजिस्लेटिव असेंबली

३६४. जॉर्ज बर्नार्ड शॉ के नाम

नई दिल्ली
४ सितम्बर १९४८

प्रिय श्री शॉ,

मुझे ठीक-ठीक नहीं मालूम कि मैं यह खत आपको क्यों लिख रहा हूं, क्योंकि हम दोनों ही बहुत व्यस्त आदमी हैं और मुझे आपके काम को बढ़ाने

की कोई इच्छा नहीं है। लेकिन देवदास गांधी ने मेरे पास आपके उस खत की एक नकल भेजी है, जो आपने उन्हें १६ जुलाई को लिखा था और उसने मेरे अंदर आपको लिखने की ख्वाहिश पैदा की।

आज से चालीस साल पहले जब मैं १८ साल का था और कैम्ब्रिज में एक अन्डर ग्रेजुएट था तब मैंने आपको एक सभा में भाषण करते सुना था। उसके बाद से मैंने आपको फिर नहीं देखा है, न कभी पत्र ही लिखा है। लेकिन मेरी पीढ़ी के बहुत-से लोग आपके लेखों और आपकी किताबों के साथ-साथ उम्र में आगे बढ़े हैं। मैं समझता हूं कि मेरा एक हिस्सा भी, जैसा कि मैं आज हूं, उसी पढ़ाई के सांचे में ढला है। मैं कह नहीं सकता कि इससे आपको कोई श्रेय मिलेगा या नहीं।

चूंकि एक मानी में आप मेरे नजदीक रहे हैं या यों कहिये कि मेरे विचारों के पास रहे हैं, इसलिए मेरी अक्सर आपके और ज्यादा पास आने और मिलने की चाह रही है। लेकिन मौके नहीं मिले। और तब मैंने महसूस किया है कि आपसे मिलने का सबसे अच्छा तरीका आपकी लिखी हुई चीजों को पढ़ना है।

देवदास ने आपसे जाहिरा तौर पर पूछा था कि हमें गांधी के हत्यारे के साथ क्या करना चाहिए। मैं समझता हूं कि उसे फांसी दे दी जायगी और निश्चय ही मैं उसे मौत की सजा से बचाने के लिए कोई कोशिश नहीं करूंगा। हालांकि पिछले कई बरसों से मैं मौत की सजा के कानून को खत्म करने के हक में अपनी राय जाहिर करता रहा हूं। मौजूदा मामले में कोई दूसरा रास्ता नहीं है। फिर भी मुझे इस बात पर शंका होने लगी है कि आम हालत में किसी आदमी को मौत की सजा देने के बदले १५-२० साल तक जेल में रखना क्या ज्यादा अच्छा है?

जिंदगी इतनी सस्ती हो गई है कि कुछ हत्यारों को मौत की सजा देने या न देने से कोई बहुत बड़ा फर्क नहीं पड़ता। कभी-कभी यह सोचना पड़ता है कि क्या जिन्दा रहने का दण्ड सबसे कड़ा दण्ड नहीं है।

मैं आपसे अपने उन देशवासियों की ओर से क्षमा मांग लेना चाहता हूं जो हिंदुस्तान के बारे में आपके विचार जानने के लिए आपको परेशान

करते रहते हैं। हममें से बहुत-से लोग दूसरों से प्रमाणपत्र मांगने की अपनी पुरानी आदत को अभी छोड़ नहीं सके हैं। शायद इसकी वजह यह है कि हममें अपने-आपमें विश्वास की कमी है। घटनाओं ने हमें बुरी तरह से झकझोर दिया है और भविष्य उतना उजला दिखाई नहीं देता जितना कि हमने सोचा था।

अगले अक्तूबर में दो या तीन हफ्तों के लिए मेरी इंगलैंड आने की सम्भावना है। मैं आपसे मिलना बहुत ही पसन्द करूंगा, लेकिन अगर इससे आपके रोजमर्रा के काम में कोई अड़चन पड़े तो मैं ऐसा हर्गिज नहीं चाहूंगा। मैं आपको किन्हीं सवालों से परेशान करने नहीं आऊंगा। दिमाग में बहुत-से सवाल उठते हैं, जिनके पर्याप्त उत्तर दिखाई नहीं देते या अगर उत्तर हैं भी तो हालत कुछ ऐसी है कि माकूल आदमियों की कमी की वजह से उन्हें अमल में नहीं लाया जा सकता। अगर मुझे आपसे कुछ क्षणों के लिए मिलने का सौभाग्य मिला तो मैं उसका इस्तेमाल एक ऐसी याद को सदा बनाये रखने के लिए करूंगा, जो कि मुझे अबसे कुछ अधिक खुशहाल बना देगी।

आपका,
जवाहरलाल नेहरू

जॉर्ज बर्नार्ड शॉ,
आयोट सेंट लारेंस,
वेलविन, हर्ट्स, इंगलैंड

३६५. जॉर्ज बर्नार्ड शॉ की ओर से

लंदन
१८ सितम्बर १९४८

प्रिय श्री नेहरू,

मुझे यह जानकर बड़ा संतोष हुआ है कि आप मेरे राजनैतिक लेखों से परिचित हैं। मुझे इससे अधिक और कुछ नहीं कहना है कि आपके यहां आने से मैं अपनेको सम्मानित अनुभव करूंगा, हालांकि मैं अपनेको इस भ्रम में नहीं रखना चाहता कि अपने बहुमूल्य समय की एक दोपहरी मेरे साथ बिताने के लिए आपका इस दूर के गांव के लिए सफर करना उचित होगा,

जहां कि बर्नार्ड शॉ का कुछ भी शेष नहीं बचा है, सिवा पुरानी हड्डियों के एक जर्जर ढांचे के, जिसे वर्षों पहले खत्म हो जाना चाहिए था।

एक बार मैं एक सप्ताह के लिए बम्बई में रहा था और एक सप्ताह के लिए श्रीलंका में। हिंदुस्तान के बारे में मैं प्रत्यक्ष रूप से बस इतना ही जानता हूं। श्रीलंका को देखकर मुझे यह विश्वास हो गया था कि वह मानव-जाति का पालना है; क्योंकि वहां प्रत्येक व्यक्ति मौलिक दिखाई देता है, जबकि दूसरे सभी राष्ट्र स्पष्टतः सामान्य ढंग के हैं।

हलांकि मैं हिंदुस्तान के बारे में सिर्फ उतना ही जानता हूं, जितना अखबारों में छपता है, तो भी मैं उसपर अवैयक्तिक दृष्टि से ही विचार करता हूं, क्योंकि मैं अंग्रेज नहीं बल्कि आयरिश हूं। मैंने अपनी आंखों से उस लम्बे संघर्ष को देखा है, जो अंग्रेजी शासन से मुक्ति के लिए आयरलैण्ड ने किया है। बाद में मैंने उसे दो हिस्सों—आयर और उत्तरी आयरलैंड—में बंटते भी देखा है, जो कि हिन्दुस्तान और पाकिस्तान का पश्चिमी समानान्तर है। इंगलैंड के लिए मैं वैसा ही विदेशी हूं जैसे कि आप केम्ब्रिज में थे।

मैं सोच नहीं पा रहा हूं कि जिन्ना की मृत्यु से आपका इंगलैंड आना रुक तो नहीं जायगा। अगर उनका कोई कुशल उत्तराधिकारी नहीं है तो आपको सारे प्रायद्वीप पर शासन करना होगा।

आपका,
जा. बर्नार्ड शॉ

हिज एक्सेलेंसी प्रधान मंत्री,
नई दिल्ली, भारत

३६६. जॉर्ज बर्नार्ड शॉ के नाम

जार्ज होटल
पेरिस
२८ अक्तूबर १९४८

प्रिय श्री शॉ,

आपका १८ सितम्बर का नई दिल्ली भेजा हुआ खत मेरे पास आज यहां पेरिस में पहुंचा है। इसके लिए बहुत-बहुत धन्यवाद। मालूम नहीं, इसे दिल्ली पहुंचने में और फिर वापस यहां आने में इतना अर्सा क्यों लगा? मालूम होता

है, वह १५ अक्तूबर को दिल्ली पहुंच गया था। मुझे बहुत ही दुःख है कि मुझे वह पहले नहीं मिला।

मैंने आपको लिखा था कि अपनी इंगलैंड-यात्रा के दौरान में मुझे आपसे मिलकर बड़ी खुशी होती। यह सही है कि जिन्होंने मेरे कार्यक्रम की जिम्मेवारी ले ली थी उन्होंने उसे इतना भर दिया कि बहुत-सी बातों के लिए, जो मैं सचमुच करना चाहता था, वक्त निकालना मेरे लिए मुश्किल था। फिर भी मैं बेशक आपके पास आने के लिए वक्त निकालता, लेकिन चूंकि मेरे खत का जवाब आपकी तरफ से मुझे नहीं मिला, इसलिए मुझे पूरा यकीन नहीं हुआ कि मेरा आना आपके लिए सुभीते का होगा या नहीं और इसलिए आपको दुबारा लिखने में मुझे हिचकिचाहट रही। मैं हिन्दुस्तान वापस जा रहा हूं। मेरे लिए यह गहरे अफसोस की बात है कि मैं आपको प्रणाम करने का यह अवसर चूक गया। फिर भी मुझे आशा है कि किसी और मौके पर यह लाभ मिलेगा।

सादर आपका,
जवाहरलाल नेहरू

जॉर्ज बर्नार्ड शॉ,
आयोट सेंट लॉरेंस,
वेलविन, हर्ट्स, इंगलैंड
इंग्लैंड

३६७. जॉर्ज बर्नार्ड शॉ की ओर से

४ ह्वाइटहॉल कोर्ट (१३०)
लन्दन, एस. डब्ल्यू. १,
१२ नवम्बर १९४८

प्रिय पंडित नेहरू,

मुझे निराशा नहीं हुई। जब मैंने आपको पत्र लिखा था तब मुझे खूब अच्छी तरह मालूम था कि लन्दन में आने पर आपकी इतनी अधिक मांग होगी कि आपके पास एक पूरी दोपहरी का वक्त भी इस गांव में बिताने के लिए खाली नहीं मिल पायेगा। फिर भी मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि अगर आप आ सकते तो मैं आपका हृदय से स्वागत करता।

सम्मेलन में आपका भाग लेना आपके लिए व्यक्तिगत रूप से एक महान सफलता थी। दूसरों की अनर्गल बातों की तुलना में आपका रेडियो-भाषण बहुत ही उल्लेखनीय था और बाद में आपने जो भाषण दिये, उनसे यह सिद्ध हो गया है कि एशिया में अकेले आप ही वह व्यक्ति हैं, जो स्टालिन के बराबर हैं। आपका यह आश्वासन देना कि लड़ाई की कोई तात्कालिक सम्भावना नहीं है, ठीक समय पर कही गई एक ठीक बात है। हमारे मंत्रि-मंडल के मंत्री मूर्ख नहीं हैं; लेकिन उन्हें यह पता नहीं कि वे क्या कह रहे हैं।

जा. बर्नार्ड शॉ

राइट ऑनरेवल जवाहरलाल नेहरू,
नई दिल्ली,
हिंदुस्तान।

३६८. तेजबहादुर सप्रू की ओर से

इलाहाबाद
२ दिसम्बर १९४८

प्रिय जवाहरलालजी,

आप जो कुछ कहते रहते हैं, वह मैं अखबारों में पढ़ता रहता हूं और दिन-ब-दिन आपके लिए मेरी इज्जत बढ़ती जा रही है। आपकी सालगिरह पर मेरी आपको लिखने की मंशा थी, मगर मैं नहीं लिख सका, क्योंकि उस वक्त मेरी हालत बहुत खराब थी। मैं अब लिख रहा हूं और गालिब के हमेशा जिन्दा रहनेवाले लफ्जों में मैं आपको अपनी शुभ कामनाएं भेजता हूं—

"तुम सलामत रहो हजार बरस, हर बरस के दिन हों पचास हजार।"

यू. पी. के कुछ कांग्रेसी लीडरों का जबान के सवाल पर जो रुख है, उससे मैं जरा भी खुश नहीं हूं। खुशी से हिंदी सीखो, पर यह न भूलो कि उर्दू मुसलमानों की जबान नहीं है। हिन्दुओं ने उसको खासी अच्छी देन दी है और रुहेलखण्ड और इस सूबे के पच्छिमी हिस्से के लोग उस हिंदी को नहीं समझ पाते, जो पूरबी हिस्से में बोली जाती है। मैं इस सच्चाई को जानता हूं कि दूसरे हिस्सों के लोगों में भी बहुत ज्यादा बेचैनी है और ऊंचे दर्जे की हिंदी को समझना उन्हें मुश्किल लगता है। मेरा यकीन है कि कुछ अंग्रेजी

लफ्जों का हिंदी में हुआ तर्जुमा आप नहीं समझ सकेंगे। जब मैं सारे सवाल को बिना किसी लगाव के देखता हूं तो लगता है कि यह हमें मुसीबत की तरफ ले जा रहा है। मैं इतना कमजोर हूं कि लंबा खत नहीं लिखवा सकता।

मेरी हालत ज़रा भी नहीं सुधरी है। लकवे और ब्लेडर की खराबी के अलावा मुझपर गैस्ट्राइटिस का भी जोर से हमला हुआ है। दिन में पांच-छः बार कैथेटर लगाना पड़ता है। इस सबका सिर्फ एक ही नतीजा हो सकता है और वह यह कि आखिरी वक्त के लिए मुझे तैयार रहना चाहिए। मुझे अपने ग्रहों का शुक्रगुजार होना चाहिए कि मैं हिंदुस्तान की आजादी को देख सका और आपको उसके सरगना के तौर पर।

सप्रेम आपका,
तेजबहादुर सप्रू

माननीय पण्डित जवाहरलाल नेहरू,
प्रधान मन्त्री, हिन्दुस्तान,
नई दिल्ली।

अनुक्रमणिका

१. यह अनुक्रमणिका सिर्फ इस पुस्तक में प्रकाशित पत्रों के लिखनेवालों तथा पत्र पानेवालों के नामों की बनाई गई है।

२. मुख्य पंक्तियों में दी गई पृष्ठ-संख्याएं जवाहरलाल नेहरू की ओर से तथा उनके नाम लिखे पत्रों की हैं।

३. मुख्य पंक्तियों के नीचे जगह छोड़कर दिये हुए नाम तथा पृष्ठ-संख्याएं उन लोगों के पत्रों की हैं जिन्होंने मुख्य पंक्ति में दिये व्यक्ति के साथ पत्र-व्यवहार किया।